सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

६६

(१ अगस्त, १९३७ से ३१ मार्च, १९३८)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

भूमिका

इस खण्डमें १ अगस्त, १९३७ से ३१ मार्च, १९३८ तककी सामग्री दी गई है। इस अवधिमें गांधीजी का स्वास्थ्य खराब रहा। उनका रक्तचाप बराबर ऊँचा रहता था, जिससे "लम्बा मानसिक आराम" उनके लिए जरूरी बन गया। नवम्बरमें वे सीमा-प्रान्त जानेवाले थे और उन्हें आशा थी कि इस प्रवासमें उन्हें यह आवश्यक विश्राम मिल सकेगा (पृ० २३०), लेकिन अक्तूबरके अन्तिम सप्ताहमें कलकत्तामें उनकी तबीयत अचानक बहुत बिगड़ गई, और फलतः १७ नवम्बर तक उन्हें वहीं रुकना पड़ा। ६ दिसम्बर, १९३७ से ७ जनवरी, १९३८ तक उन्होंने बम्बईमें जुहू-तटपर विश्राम किया। ९ जनवरीको अमृतकौरको पत्र लिखते हुए उन्होंने सूचना दी, "रक्तचाप गिरते-गिरते बिलकुल सामान्य हो जाता है, लेकिन फिर जरा-सी वजहसे ही चढ़ जाता है। मैं बातचीत नहीं कर सकता, गम्भीर बातचीत सुन भी नहीं सकता" (पृ० ३७०)। सेगाँवमें उनके स्वास्थ्यमें सुधार आया और फरवरीमें कांग्रेसके वार्षिक अधिवेशनमें भी वे भाग ले सके। लेकिन जब मार्चके अन्तिम सप्ताहमें उड़ीसाके डेलांग नामक स्थानमें गांधी सेवा संघकी बैठकमें भाग लेते हुए उन्होंने सुना कि कस्तूरबा तथा आश्रमकी दो अन्य महिलाएँ पुरी मन्दिरमें, जिसके द्वार हरिजनोंके लिए बन्द थे, दर्शनार्थ गई तो वे इतने उत्तेजित हो उठे कि उनका रक्तचाप चिन्ताजनक रूपसे बढ़ गया।

अपने रक्तचापका कारण गांधीजी ने यह बताया कि वे 'गीता' की शिक्षाको अपने जीवनमें आचरित कर पानेमें असमर्थ रहे। उन्होंने रामदास गांधीको समझाया, "'गीता' की अनासक्ति का जो अर्थ है, उसमें मेरी अनासक्ति कम है, — मैं भावनाओंसे भरा हुआ हूँ। मुझे हर किसीके दुःखसे दुःख होता है।" हरएकके दुःखसे दुःखी होना वे एक स्पृहणीय गुण मानते थे, किन्तु उनका विचार था कि इस तरह दुःखी होकर भी मनुष्यको अलिप्त रहना चाहिए, किन्तु उन्होंने पाया कि "मैं इस कलामें अभी पारंगत नहीं हुआ हूँ" (पृ० ३६१)। जब राजगोपालाचारीने उनसे पूछा कि "आप बोलते-बोलते इतने आवेशमें क्यों आ जाते हैं" तो उन्होंने उत्तर दिया, "क्योंकि 'गीता' का वीतराग होनेका पाठ सीखना अभी शेष है" (पृ० ३६९)। उन्हें मालूम था कि "मेरा प्रेम . . . बहुत-सी परीक्षाओंको झेल सकता है" (पृ० ६९) लेकिन कभी-कभी वह उन्हें बहुत दुःख भी देता था। ऐसा ही एक प्रसंग तब उपस्थित हुआ जब एक आश्रमवासिनी, जो उनके लिए पुत्रीके समान बन गई थी, आवेशमें आश्रम छोड़कर चली गई। उसके व्यवहार पर जब उन्हें अपनी प्रतिक्रियाका ध्यान आया तो उन्हें स्वयं "अपनी अहिंसाकी वास्तविकतामें सन्देह" होने लगा और वे सोचने लगे कि "मैं अपने क्रोधका स्थायी

रूपसे दमन क्यों नहीं कर पाता हूँ?" (पृ० १२८) दादाभाई नौरोजीकी पौत्रीको, जो वर्षोंतक उनकी सुयोग्य सहकर्मिणी रही थीं, उत्तर देते हुए उन्होंने लिखा: "तुम मुझे भूल जाओ, अस्वीकार कर दो, किन्तु मेरे लिए तुमको भूलना बिलकुल असम्भव है, भला मैं क्या करूँ?" (पृ० २३२) जब उनके विश्वस्त निजी सहायक प्यारेलाल क्षणिक आवेशमें आकर उन्हें छोड़कर चले गये और महादेव देसाईने भी छोड़ देनेकी धमकी दी तब भी उनके हृदयमें ऐसे ही व्यथा-भरे शब्द फूट पड़े: "मैं हजारों भूलोंको सहन करूँगा; लेकिन तुम्हें त्याग तो सकता नहीं। भक्तके हाथों मरना श्रेयस्कर है और अभक्तके हाथों तरना भी डूबने के समान है" (पृ० ४३८)।

अपनी रुग्णता और मानसिक तनावके बावजूद गांधीजी कांग्रेस और देशका मार्गदर्शन करते रहे। ब्रिटिश संसद् द्वारा भारतके शासनके लिए बनाये गये १९३५ के अधिनियमके अन्तर्गत कांग्रेसका पद-ग्रहण ब्रिटेनके साथ सहयोग करने का एक प्रयोग था। एक मुलाकातीको समझाते हुए गांधीजी ने बताया, "बहुत-से लोग ऐसा महसूस करते हैं कि किसी भी प्रकारका सहयोग एक भूल है। अन्य लोग इससे सहमत नहीं हैं। उन्हें लगता है कि अपने उद्देश्योंकी प्राप्तिके लिए शायद यह उचित है कि हम कभी-कभी अपने प्रतिपक्षीकी बात मान लें" (पृ० १११)। यद्यपि १९३५ का अधिनियम "अंग्रेजी हुकूमतको चिरस्थायी बनाने की इच्छा" से तैयार किया गया था, किन्तु साथ ही गांधीजी की रायमें "इसके निर्माताओंने जनताको अंग्रेजोंके पक्षमें लानेके लिए एक साहसपूर्ण प्रयोग किया" था और "इसमें इस बातकी गुंजाइश रखी गई" थी कि "अगर सफल न हुए तो जनता की ब्रिटिश प्रभुत्वकी समाप्तिकी इच्छाको दार्शनिक भावसे स्वीकार कर लेंगे।" कांग्रेस अपनी सरकारी और सार्वजनिक कार्रवाइयों द्वारा १९२० में अपनाये अपने रचनात्मक कार्यक्रमको लागू करके ब्रिटेनके इरादोंको नाकाम कर सकती थी। इस कार्यक्रमका आधार "राष्ट्रकी सुसंगठित अहिंसा थी" और गांधीजी मानते थे कि इस कार्यक्रमके सफल कार्यान्वयनके फलस्वरूप कांग्रेसकी शक्ति "ऐसी दुर्निवार हो जायेगी कि उसके मार्गमें कोई खड़ा नहीं हो सकेगा" (पृ० ११३-१५)।

लोकतान्त्रिक पद्धतिसे नैतिक और सामाजिक क्रान्ति सम्पन्न करने के इस कार्यक्रमके लिए आवश्यक था जन-मानसका शिक्षण और गांधीजी 'हरिजन' में लिखे अपने लेखोंके माध्यमसे लोकशिक्षणके कार्यमें जुट गये। उन्होंने कहा कि "मन्त्रिपद कोई पुरस्कार नहीं", बल्कि "सेवाके द्वार हैं" और इसलिए उनसे "हमें चिपट नहीं जाना है, बल्कि उन्हें हलके हाथों पकड़ना चाहिए" (पृ० १७-१८)। गांधीजी कांग्रेससे "पुलिसके जरिये, जिसकी पीठ पर सेना है, . . . नहीं . . . बल्कि उस नैतिक अधिकारके जरिये शासन" करने की अपेक्षा रखते थे "जो जनसाधारणके ज्यादासे-ज्यादा सद्भावपर आधारित है" — सद्भाव, जो उस "जनताकी सेवाके बलपर" प्राप्त होता है "जिसका कि वह अपने सभी कार्योंमें प्रतिनिधित्व करने की कोशिश करती है" (पृ० ६८)। मन्त्रियोंके आलोचकोंसे भी वे इसी तरहकी सच्ची सार्वजनिक भावनाकी अपेक्षा रखते थे। वे मानते थे कि "किसी भी कांग्रेसीको न केवल यह अधिकार है,

बल्कि यह उसका कर्त्तव्य है कि वह बड़ेसे-बड़े कांग्रेसी पदाधिकारियोंके कार्योंकी खुले आम आलोचना करे", लेकिन साथ ही उनका यह भी आग्रह था कि "आलोचना शिष्ट और पूर्ण तथ्योंपर आधारित होनी चाहिए" (पृ० १७३)। "पूरी जानकारी पर आधारित स्वस्थ और सन्तुलित आलोचना" को वे "सार्वजनिक जीवनका प्राण" मानते थे (पृ० ३२७-२८)। मन्त्रियोंको उन्होंने पुलिसके जरिये शासन नहीं करने की सलाह दी थी, किन्तु इसका मतलब यह नहीं था कि उन्हें हिंसाको बरदाश्त करना चाहिए। उन्होंने स्पष्ट शब्दोंमें कहा कि "नागरिक स्वतन्त्रताका अर्थ अपराध करने की आजादी नहीं है।" यह चेतावनी देना आवश्यक हो गया था, क्योंकि जान पड़ता था, नागरिक स्वतन्त्रताका अर्थ कुछ लोगोंने यह लगा लिया था कि कांग्रेस-शासित "प्रान्तोंमें तो आदमी जो चाहे सो कह और कर सकता है।" उन्होंने बताया कि "राजनीतिके क्षेत्रमें अहिंसा एक नया अस्त्र है, जिसका अभी विकास हो रहा है।" गांधीजी चाहते थे कि कांग्रेसी मन्त्रियोंको अहिंसाकी सम्भावनाओंके "अन्वेषण-कार्यको आगे बढ़कर अपने हाथोंमें" ले लेना चाहिए, लेकिन यदि आवश्यकता आ पड़े तो उन्हें हिंसात्मक कार्रवाइयोंके खिलाफ पुलिसका प्रयोग करने में भी संकोच नहीं करना चाहिए, यद्यपि ऐसा वे प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी या कांग्रेस कार्य-समितिकी सलाह लेकर ही करें (पृ० ३००-१)।

कानून बनाकर सुधार और पुनर्निर्माणका कार्य सम्पन्न करने के कार्यक्रममें गांधीजी ने सर्वोच्च प्राथमिकता शिक्षा तथा मद्य-निषेधको दी। ये दोनों चीजें एक-दूसरेसे जुड़ी हुई थीं, क्योंकि आबकारी करसे प्राप्त होनेवाले राजस्वसे शिक्षाका खर्च चलाया जाता था। गांधीजी को यह सोचना "लज्जास्पद और अपमानजनक" लगता था कि "शराबसे प्राप्त होनेवाले राजस्वके बिना हमारे बच्चे शिक्षासे वंचित रह जायेंगे।" लेकिन शिक्षाकी "इस जटिल समस्या" का समाधान गांधीजी के सामने "एकाएक बिजलीकी तरह कौंध" गया। इसका समाधान बच्चोंको एक विदेशी भाषाके माध्यमसे सारे विषय पढ़ाने के दुर्वह भारसे मुक्त करने और उन्हें अपने हाथ-पैरोंके लाभदायक उपयोगका प्रशिक्षण देनेमें निहित था। उनकी राय थी कि जहाँ शिक्षाके माध्यम-सम्बन्धी सुधारके फलस्वरूप बच्चे मैट्रिकुलेशन तकका पाठ्यक्रम ग्यारहके बदले सात वर्षोंमें पूरा कर सकेंगे, दूसरे सुधारके परिणामस्वरूप वे कोई उत्पादक दस्तकारी सीख लेंगे, जिससे शिक्षा बहुत हदतक स्वावलम्बी बन जायेगी (पृ० ६४, १३०, और २१४)।

गांधीजी का कहना था कि चौदह सालका बच्चा जब सात सालकी शिक्षा समाप्त करके शालासे निकले तबतक उसे अपने परिवारका एक कमाऊ सदस्य बन चुकना चाहिए। सम्भव था, यह योजना आरम्भके कुछ वर्षोंमें पूर्ण स्वावलम्बी न हो पाये, किन्तु गांधीजी का विश्वास था कि सात सालके अन्तमें कुल व्यय और आयके बीच शायद सन्तुलन कायम हो जाये (पृ० १५२ और १६८)। स्वावलम्बी शिक्षा भारतीय गाँवोंके लिए केवल एक आर्थिक आवश्कता ही नहीं थी, बल्कि वह शहरों और गाँवोंको एक-दूसरेके निकट लाकर भुखमरी और अमीरीके बीचकी खाई पाटकर

बिना किसी विग्रह तथा खून-खराबीके मूक सामाजिक क्रान्ति सम्पन्न करने का साधन भी थी (पृ० १८८)। शिक्षासे शारीरिक प्रशिक्षणका सम्बन्ध विच्छिन्न हो जानेका परिणाम यह हुआ था कि लोग शारीरिक श्रमको निम्न कोटिका कार्य मानने लगे थे। गांधीजी को आशा थी कि नयी शिक्षा-पद्धति विद्यार्थियोंमें शोध-बुद्धिका विकास कर तथा कारीगरोंको एक स्वतन्त्र दर्जा प्रदान कर इस दोषको दूर करेगी (पृ० १५८)।

गांधीजी की इस शिक्षा-योजनाके पीछे इस तरहकी व्यावहारिक चीजोंकी प्रेरणा तो थी ही, लेकिन उसका मुख्य आधार उनकी यह मान्यता थी कि विभिन्न शारीरिक क्षमताओंके सही प्रयोगसे बच्चेके व्यक्तित्वका सर्वतोमुखी विकास किया जा सकता है। उनका दावा था कि "पूरा प्रशिक्षण बहुत स्वाभाविक रीतिसे और विद्यार्थीकी ग्रहणशीलताके आधारपर दिया जायेगा और इसलिए वह देश-भरमें सबसे सस्ती और सबसे कम समयमें मिलनेवाली शिक्षा-पद्धति होगी" (पृ० ८८)। दस्तकारीके प्रशिक्षणका मतलब बच्चोंको यन्त्रवत् एक उद्योगमें लगा देना नहीं था, बल्कि गांधीजी की कल्पना थी कि "उसकी शिक्षा इस तरह दी जानी चाहिए" जिससे "ज्ञानकी तमाम शाखाओंमें लड़के-लड़कियोंका आवश्यक मानसिक विकास हो सके" (पृ० २१४), उनकी बुद्धिको प्रशिक्षण मिल सके, उनका शरीर सुगठित हो सके, उनकी लिखावट सुन्दर हो सके, उनकी कलाकी भावना जाग्रत हो सके (पृ० १५३)।

गांधीजी ने लोगोंके सम्भावित भ्रमका निवारण करते हुए समझाया कि "मैंने जो लिखा है वह इस विषयकी चर्चामें मेरा निजी योगदान है" और कांग्रेसको अधिकृत तौरपर उससे अभी कोई सरोकार नहीं है। लेकिन साथ ही उन्होंने यह भी स्पष्ट कहा कि "वर्तमान शिक्षा-प्रणालीने देशके युवावर्गको और भारतकी भाषाओं तथा सामान्य संस्कृतिको जो भयंकर क्षति पहुँचाई है उसके बारेमें सोचकर मेरा मन बहुत क्षुब्ध होता है" (पृ० ८८)। उनकी नयी पद्धतिका उद्देश्य विद्यार्थियोंको "अपनी संस्कृति, अपनी सभ्यता और अपने देशकी सच्ची प्रतिभाका प्रतिनिधि बनाना" था (पृ० २९७)।

कांग्रेस-शासित प्रान्तोंमें तीन सालके अन्दर पूर्ण मद्य-निषेध लागू करने का सुझाव देते हुए कांग्रेस कार्य-समितिने जो प्रस्ताव पास किया उसका स्वागत गांधीजी ने कांग्रेसके "सबसे बड़े काम" के रूपमें किया और इस महान् कार्यमें "न केवल भारत-स्थित यूरोपीयों-सहित सभी पक्षों और दलोंसे, बल्कि समस्त संसारके विचारशील लोगोंसे सहानुभूति और सहयोग" देनेका अनुरोध किया (पृ० ९०)। लेकिन उन्होंने यह स्वीकार किया कि यह कार्य केवल राज्यके प्रयत्नोंसे सम्पन्न नहीं हो सकता। इसके लिए कानून बनाना आवश्यक था, लेकिन यह भी इस दिशामें प्रारम्भ-मात्र होता। कानूनके साथ-साथ लोगोंको इस विषयमें शिक्षित करना, जगाना जरूरी था। गांधीजी ने शिक्षकों, डाक्टरों तथा अन्य लोगोंसे इस लोकशिक्षणके कार्यमें सहयोग देनेका अनुरोध किया। कानून बनाकर मद्य-निषेध लागू करने को अव्यावहारिक बतानेवालों की यही चिरपरिचित दलील थी कि "लोग निश्चय ही गैर-कानूनी ढंगसे शराब बनायेंगे और छिपकर पियेंगे भी।" इसका उत्तर देते हुए गांधीजी ने कहा,

"चोरी अनन्त कालतक चलती रहेगी। तो क्या इसलिए उसे हम कानून द्वारा मंजूरी दे दें?" उनकी दलील यह थी कि "जबतक राज्य शराबीको शराब पीनेकी इजाजत ही नहीं, बल्कि सुविधाएँ भी देता रहेगा, तबतक सुधारकोंको सफलता मिलना लगभग असम्भव है" (पृ० १७९-९०)।

राजनीति के प्रति गांधीजी के रचनात्मक रवैयेको विभिन्न प्रकारके आन्दोलनोंकी उस "तूफानी हवा" (पृ० २३५) का भी मुकाबला करना पड़ा जो प्रान्तीय स्वायत्तताके आरम्भ से ही बहने लगी थी। कांग्रेस संसदीय दलके नेताके चुनावके प्रश्नको लेकर बम्बईमें एक अत्यन्त विषाक्त और कटुतापूर्ण विवाद उठ खड़ा हुआ था और यद्यपि गांधीजी ने कहा कि वे वल्लभभाई पटेल पर के० एफ० नरीमान द्वारा लगाये आरोपोंकी जाँच करेंगे और नरीमानको यह आश्वासन भी दिया कि "यदि मुझे इस बातका विश्वास हो गया कि सरदारने आपके साथ अन्याय किया है, तो मैं निःसंकोच ऐसा कहूँगा और उस दुष्कृत्यके प्रतिकारके लिए जो भी सम्भव है, करूँगा" (पृ० १), तथापि यह विवाद निर्बाध रूपसे चलता रहा, जिससे उन्हें "गहरी व्यथा पहुँची" (पृ० ४२)। जब गांधीजी और डी० एन० बहादुरजी ने आरोपोंकी जाँच करने पर सरदार पटेलको निर्दोष पाया तब गांधीजी की सलाहपर नरीमानने निर्णयको स्वीकार करते हुए एक वक्तव्य जारी किया, जिसमें उन्होंने खेद प्रकट किया। गांधीजी ने यह आशा व्यक्त की कि बम्बईके समाचार-पत्र और लोग "उस अप्रिय और अशोभनीय विवादको भूल जायेंगे जिसने बम्बईकी सार्वजनिक प्रवृत्तियोंको, सामान्यतया उनमें जो उत्साह और आनन्द देखने को मिलता है, उससे रिक्त कर दिया था" (पृ० २७६)। लेकिन बादमें नरीमानने अपनी ही स्वीकारोक्तिका खण्डन करते हुए एक दूसरा वक्तव्य जारी किया (पृ० ३१९), और इस प्रकार जिस समझौते और मेलजोलके लिए गांधीजी चार महीने तक श्रम करते रहे, वह सम्पन्न नहीं हो पाया।

जब कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल पदारूढ़ होकर काम करने लगे तब उनपर — विशेषकर च० राजगोपालाचारीके नेतृत्वमें काम करनेवाले मद्रास-मन्त्रिमण्डलपर — कुछ कांग्रेसियोंने तीव्र प्रहार किये। अ० भा० कां० कमेटीकी जिस बैठकमें मन्त्रिमण्डलोंकी आलोचना की गई थी उसपर टिप्पणी करते हुए गांधीजी ने लिखा, "प्रस्ताव . . . और उससे भी अधिक उसपर दिये गये भाषण सीमासे बाहर थे। . . . आलोचकोंने अपनी आलोचनाओंमें सत्य और अहिंसाका त्याग कर दिया था।" मैसूर राज्यकी कथित दमनात्मक कार्रवाइयोंके खिलाफ पास किये गये एक अन्य प्रस्तावको गांधीजी ने और भी दोषपूर्ण बताकर उसकी आलोचना की (पृ० ३२८)। ऐसे प्रश्नोंपर होनेवाले मतभेदोंके परिणामस्वरूप कांग्रेस कार्य-समितिमें संकटकी स्थिति उत्पन्न हो गई, और गांधीजी ने वल्लभभाई पटेल तथा कार्य-समितिके अन्य सदस्योंको त्यागपत्र देनेकी सलाह दी, ताकि कांग्रेस-अध्यक्ष जवाहरलाल नेहरू अपनी पसन्दकी समिति चुन सकें। इस स्थितिको लेकर होनेवाली चर्चाएँ इतनी थकानेवाली थीं कि गांधीजी को लग रहा था, मैं "मुश्किलसे टिका हुआ हूँ," और उसी दिन उनका

रक्तचाप चिन्ताजनक रूपसे बढ़ गया (पृ० ३२१-२२)। वातावरणमें हिंसाके तत्त्व विद्यमान थे, इसके अन्य लक्षण भी प्रकट हो रहे थे। शोलापुरके निकट तथाकथित 'जरायमपेशा' कबीलोंकी एक बस्तीमे उपद्रव हुआ और अहमदाबाद तथा कानपुरके श्रमिकोंके बीच भी अशान्ति फैली। गांधीजी ने इन घटनाओंको "तूफानके आसार" कहा, और उनके मनमें इस तरहके प्रश्न उठने लगे कि कहीं ये परिस्थितियाँ स्वयं कांग्रेसकी पकड़की कमजोरीके लक्षण तो नहीं हैं। कांग्रेसको कमजोर क्यों होना चाहिए था? गांधीजी के विचारमें अगर कांग्रेसमें ऐसी कमजोरी सचमुच थी तो उसका कारण "सत्य और अहिंसामें, सतत कार्य और अनुशासनमें और चतुर्विध रचनात्मक कार्यक्रमकी शक्तिमें" विश्वासका अभाव ही हो सकता था। स्वभावतः उन्होंने कांग्रेसियोंको चेतावनी देते हुए कहा कि अगर उनमें "साधनके सम्बन्धमें यह राजनीतिक श्रद्धा नहीं है, तो सम्भव है कि पदग्रहण एक जाल साबित हो" (पृ० ३३७-३८)।

इधर कांग्रेस अपने आन्तरिक अनुशासनकी समस्यामे जूझ रही थी और उधर क्षितिजपर एक दूसरे प्रकारके संकटके बादल मँडराने लगे थे, जो पहलेसे कहीं अधिक खतरनाक थे। लखनऊमें मुस्लिम लीगके वार्षिक अधिवेशनकी अध्यक्षता करते हुए १५ अक्तूबरको मुहम्मद अली जिन्नाने एक भाषण दिया, जो गांधीजी को "युद्धकी घोषणा" जैसा लगा। जो पत्र गांधीजी ने परम व्यथित मनसे लिखा (पृ० २८६) उसका उत्तर देते हुए जिन्नाने लिखा कि मैंने जो-कुछ कहा, आत्मरक्षार्थ कहा (देखिए परिशिष्ट ७)। लेकिन गांधीजी के मनमें जो शंका उठी थी वह जिन्नाकी बादकी उक्तियोंसे विश्वासमें परिणत हो गई। उन्होंने जिन्नाको लिखा, "आपके भाषणोंमें मैं उस पुराने राष्ट्रवादीका अभाव महसूस करता हूं। . . . मैं घुटने टेककर आपसे यही विनती करूँगा कि मैं आपको जैसा समझता था, आप वैसे ही बन जायें" (पृ० ३९१-९२)। जिन्नाके हृदयको छूनेके लिए की गई इस अपीलके उत्तरमें उन्होंने गांधीजी को लिखा कि जाहिर है, कांग्रेसी अखबारोंमें क्या-कुछ हो रहा है, मुझे कितना बदनाम किया जा रहा है, मुझे कितने गलत रूपमें पेश किया जा रहा है, इस सबका इल्म आपको नहीं है (देखिए परिशिष्ट १२)। हिंसाकी इस बढ़ती हुई भावना और पारस्परिक अविश्वासका विस्फोट मार्च महीनेमें इलाहाबादके साम्प्रदायिक दंगोंके रूपमें हुआ। दंगोंको शान्त करनेके लिए सरकारको सेनाकी सहायता लेनी पड़ी। गांधीजी के लिए "यह शर्मकी बात" थी कि "कांग्रेसी मन्त्रियोंको पुलिस और सेनाकी सहायता लेनी पड़ी।" अपने साथी कार्यकर्त्ताओंसे उन्होंने कहा, "मुझे ऐसा लगता है मानों कांग्रेसकी हार और ब्रिटेनकी जीत हो गई है" (पृ० ४५५)। 'हरिजन' में "हमारी असफलता" शीर्षक लेखमें उन्होंने कांग्रेसियोंसे इस "नग्न सत्य" को स्वीकार करनेको कहा कि "कांग्रेस अभी इस योग्य नहीं हुई है कि ब्रिटिश सत्ताका स्थान ले सके।" उनके विचारमें, कांग्रेस अबतक सबलकी अहिंसा विकसित नहीं कर पाई थी और इसीलिए वह अपने इस दावेको सही सिद्ध नहीं कर पाई थी कि वह सम्पूर्ण भारतका

प्रतिनिधित्व करती है। गांधीजी ने कांग्रेसको "कुछ हजार नहीं, बल्कि लाखों ऐसे स्वयंसेवकोंकी अहिंसक सेना खड़ी" करने की सलाह दी जो अपने "प्राणोंकी बलि" देकर भी "हर प्रकारकी आपात् स्थितिका सामना" करनेको तैयार रहेंगे और जो शान्ति-कालमें "बराबर ऐसी रचनात्मक प्रवृत्तियोंमें लगे रहेंगे जो ऐसे दंगोंकी सम्भावना सहज ही समाप्त कर देती हैं" (पृ० ४५०-५१)। फिर मार्चके अन्तिम सप्ताहमें गांधी सेवा संघकी बैठकमें इसपर अपने हृदयकी व्यथाको उँडेलते हुए उन्होंने साथी कार्यकर्त्ताओंसे यह सोचने का अनुरोध किया कि किस प्रकार अहिंसाके द्वारा साम्प्रदायिक शान्तिकी रक्षा की जा सकती है।

एक और प्रश्न भी इस अवधिमें गांधीजी की चिन्ताका कारण बना रहा। वह था हिंसात्मक कार्रवाईके कारण जेलोंमें भेजे गये राजनीतिक कैदियों या नजरबन्दोंकी रिहाईका प्रश्न। गांधीजी ने विश्वासका ऐसा वातावरण तैयार करने का प्रयत्न किया जिससे सभी कैदियोंकी रिहाईका मार्ग प्रशस्त हो सके। इसी उद्देश्यसे उन्होंने अण्डमान के कैदियोंसे, जो २४ जुलाईसे भूख-हड़ताल कर रहे थे, हड़ताल तोड़ने का अनुरोध किया और यह आश्वासन देनेको कहा कि अब आतंकवादी तरीकोंमें उनका विश्वास नहीं रह गया है। उन्होंने जनतासे भी अनुरोध किया कि इन कैदियोंकी रिहाईपर वह कोई प्रदर्शन आदि न करे (पृ० ८१-८२, ११०-११ और ३४०-४१)। कैदियों द्वारा आश्वासन दिये जानेपर (पृ० ९९) गांधीजी ने उनके कल्याणको अपना एक मुख्य उद्देश्य बना लिया और जब वे अलीपुर जेलके कैदियोंसे मिलने गये तो उन्होंने उन्हें वचन दिया कि मैं आपको अपनी मृत्युके पूर्व मुक्त देखना चाहता हूँ (पृ० ३१५)। बंगाल सरकारके साथ उनकी लम्बी वार्ता चली, जो उनके बुरे स्वास्थ्यको देखते हुए उनके लिए बहुत कठिन साबित हो रही थी, किन्तु अन्तमें उन्होंने मन्त्रियोंको इस आशयकी घोषणा करने पर राजी कर लिया कि क्रमिक रूपसे सभी कैदियोंको रिहा कर दिया जायेगा (पृ० ३४०-४२)। बिहार और संयुक्त प्रान्तमें कैदियोंकी रिहाईके प्रश्नपर जब राजनीतिक संकट उपस्थित हुआ और मन्त्रियोंने त्यागपत्र दे दिये तब भी गांधीजी ने अपनी सुलह-समझौतेकी भावनासे काम लेते हुए इस समस्याका समाधान ढूँढ़ निकाला (पृ० ४२७-२८)।

गांधीजी को सृष्टिके मानवेतर प्राणियोंसे भी उतना ही प्रेम था जितना मानवसे। जानवरोंकी चीर-फाड़ करनेवाली कुछ पश्चिमी संस्थाओंके समर्थनमें 'हरिजन' के एक लेखमें उन्होंने लिखा, "मनुष्य-मात्रके दुःखको कम करने का ध्येय कोई ऐसा ध्येय नहीं है जिसके लिए मनुष्येतर प्राणियोंको चीर-फाड़में निहित अमानुषिकताको उचित कहा जा सके।" गांधीजी का विचार था कि मनुष्यको कोमलता और दयाका भाव कभी नहीं छोड़ना चाहिए। कारण, "दूसरे मनुष्यों अथवा मनुष्येतर प्राणियोंके प्रति दयाधर्म रखने से हमारा दुःख और पीड़ा कम होती है क्योंकि इससे हमें उस पीड़ाको सहने की शक्ति मिलती है" (पृ० १५५)।

गांधीजी को स्वयं अपने जीने-मरने की भी कोई चिन्ता नहीं थी। वे जीवन-मृत्युको सिरजनहारके हाथकी बात मानते थे। कलकत्तामें बीमार पड़ने के बाद

उन्होंने निर्मला गांधी को लिखा: "मेरी नैया किधर जा रही है, इसकी मुझे खबर नहीं है। . . . खेवनहार भगवान् है, तब वह किधर जाती है, भला इसकी चिन्ता मैं क्यों करूँ? किसी-न-किसी दिन तो नावको डूबना ही है। इस दिनका हिसाब रखकर क्या करना है?" (पृ० ३३४)

सहिष्णुता गांधीजी के समग्र चिन्तन और व्यवहारकी आधारशिला थी। एक पत्र-लेखकने जब यह जिज्ञासा की कि किसीके दोषोंको स्पष्ट देखते हुए उसके प्रति सहिष्णुता कैसे बरती जाये तो गांधीजी ने उत्तरमें अपने [illegible] ढंगसे लिखा: "मैं अपने ढेरों दोष रोज देखता हूँ, लेकिन अपने प्रति मेरी सहिष्णुताका तो कोई अन्त ही नहीं है।" इसीसे "मैंने दूसरोंके दोष देखकर भी उनके प्रति सहिष्णु रहने की शिक्षा ली है" (पृ० १९८)। यह स्वाभाविक आत्म-प्रेम [illegible] मातृ-पितृ-प्रेमके माध्यमसे विकसित होते हुए परिवार और फिर मानव-मात्र और अन्तमें सृष्टि-मात्रको अपनी परिधिमें समेट लेनेवाली सहिष्णुता था। ऐसे ही स्वरमें गांधीजी ने अमृतकौरको लिखा: "जैसे हम यह चाहते हैं कि हमारे पड़ोसी हमसे प्रेम करें वैसे ही अगर हम भी उनसे प्रेम करना चाहते हैं तो हमें उनके व्यवहार की विचित्रताओंको सहना पड़ेगा। भला ऐसा कौन-सा स्त्री या पुरुष है जिसके व्यवहारमें विचित्रता न हो? जो इनसे मुक्त हो वही [illegible]। क्या तुम हो या ऐसे किसीको जानती हो? मैं तो नहीं जानता, और मैं छोटा या बड़ा जैसा भी हूँ, अपनेको भी इसका अपवाद नहीं मानता" (पृ० [illegible])।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम निम्नलिखित संस्थाओं, व्यक्तियों, पुस्तकोंके प्रकाशकों तथा पत्र-पत्रिकाओंके आभारी हैं:

संथाएँ: साबरमती आश्रम संरक्षक तथा स्मारक न्यास और संग्रहालय, नवजीवन न्यास तथा गुजरात विद्यापीठ पुस्तकालय, अहमदाबाद; गांधी स्मारक निधि तथा संग्रहालय, राष्ट्रीय अभिलेखागार, नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली एवं कर्नाटक सरकार।

व्यक्ति: श्रीमती अमृतकौर; श्री आनन्द तो० हिंगोरानी, इलाहाबाद; श्री ए० के० सेन, कलकत्ता; श्री कान्तिलाल ह० गांधी, बम्बई; श्रीमती गोमतीबहन कि० मशरूवाला, बारडोली; श्री घनश्यामदास बिड़ला, कलकत्ता; श्रीमती तहमीना खम्भाता, बम्बई; श्री नारणदास गांधी; श्री नारायण एम० देसाई, बनारस; श्री नारायण जे० सम्पत, अहमदाबाद; श्री प्यारेलाल, नई दिल्ली; श्रीमती प्रेमाबहन कंटक, सासवड; श्री मंगलदास पकवासा; श्री महेश पट्टणी, भावनगर; श्रीमती मीराबहन, गॉडेन, आस्ट्रिया; श्री मुन्नालाल जी० शाह, सेवाग्राम; श्री मूलशंकर नौतमलाल; श्रीमती मेडेलिन रोलाँ; डॉ० राजेन्द्रप्रसाद; श्रीमती लीलावती आसर, बम्बई; श्रीमती विजयाबहन एम० पंचोली, आमला; डॉ० विलियम एच० टैंडी, ग्लुसेस्टरशायर; श्रीमती शारदा जी० चोखावाला, अहमदाबाद; श्री शिवाभाई जी० पटेल, बोचासण तथा श्री सतीश द० कालेलकर, नई दिल्ली।

पुस्तकें: 'आचार्य कृपालानीना लेखो'; 'पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद'; 'ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स'; 'बापुना पत्रो-२: सरदार वल्लभभाईने; 'बापुना पत्रो-४: मणिबहेन पटेलने'; 'बापुना पत्रो-६: गं० स्व० गंगाबहेनने'; 'बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष'; 'महात्मा: लाइफ ऑफ मोहनदास करमचन्द गांधी', खण्ड-४'; 'मोटाना मान'; 'द लाइफ ऑफ महात्मा गांधी'; 'सरदार वल्लभभाई पटेल', खण्ड-२ एवं 'द सेइंग्स ऑफ मुहम्मद'।

पत्र-पत्रिकाएँ: 'अमृतबाजार पत्रिका', 'गांधी सेवा संघके चतुर्थ वार्षिक अधिवेशन (डेलांग, उड़ीसा) का विवरण', 'बॉम्बे क्रॉनिकल', 'स्टेट्समैन', 'हरिजन', 'हरिजनबन्धु', 'हरिजनसेवक', 'हितवाद', 'हिन्दुस्तान टाइम्स' और 'हिन्दू'।

अनुसंधान और सन्दर्भ-सम्बन्धी सुविधाओंके लिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी पुस्तकालय, द इंडियन काउन्सिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय, सूचना और प्रसारण मन्त्रालयका अनुसन्धान और सन्दर्भ-विभाग तथा श्री प्यारेलाल नैयर, नई दिल्ली; एवं कागज-पत्रोंकी फोटो-नकल तैयार करने में सहायता देनेके लिए हम सूचना और प्रसारण-मन्त्रालय, नई दिल्लीके फोटो-विभागके आभारी हैं।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमें गांधीजी के स्वाक्षरोमें मिली है, उसे अविकल रूपमें दिया गया है। किन्तु दूसरों द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमें हिज्जों की स्पष्ट भूलोंको सुधारकर दिया गया है।

अंग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करने में अनुवादको मूलके समीप रखने का पूरा प्रयत्न किया गया है, किन्तु साथ ही भाषाको सुपाठ्य बनाने का भी पूरा ध्यान रखा गया है। छापेकी स्पष्ट भूलें सुधारने के बाद अनुवाद किया गया है। और मूलमें प्रयुक्त शब्दोंके संक्षिप्त रूप यथासम्भव पूरे करके दिये गये हैं। नामोंको सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखने की नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोंके उच्चारणमें संशय था उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा गांधीजी ने अपने गुजराती लेखोंमें लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोंमें दी गई सामग्री सम्पादकीय है। गांधीजी ने किसी लेख, भाषण आदिका जो अंश मूल रूपमें उद्धृत किया है, वह हाशिया छोड़कर गहरी स्याहीमें छापा गया है, लेकिन यदि कोई ऐसा अंश उन्होंने अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी अनुवाद हाशिया छोड़कर साधारण टाइपमे छापा गया है। भाषणकी परोक्ष रिपोर्ट तया वे शब्द जो गांधीजी के कहे हुए नहीं हैं, बिना हाशिया छोड़े गहरी स्याहीमें छापे गये हैं। भाषण और भेंटकी रिपोर्टके उन अंशोंमें, जो गांधीजी के नहीं हैं, कुछ परिवर्तन किया गया है और कहीं-कहीं कुछ छोड़ दिया गया है।

शीर्षककी लेखन-तिथि जहाँ उपलब्ध है, वहाँ दायें कोनेमें ऊपर दे दी गई है। परन्तु जहाँ वह उपलब्ध नहीं है वहाँ उसकी पूर्ति अनुमानसे चौकोर कोष्ठकोंमें की गई है, और आवश्यक होनेपर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोंमें केवल मास या वर्षका उल्लेख है, उन्हें आवश्यकतानुसार मास या वर्षके अन्तमें रखा गया है। शीर्षकके अन्तमें साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशन की है। गांधीजी की सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख, जहाँ उनकी लेखन-तिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी दृढ़ आधारपर उसका अनुमान लगाया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नहीं हुआ, वहाँ उनकी प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये हैं।

इस ग्रंथमालामें प्रकाशित प्रथम खण्डका जहाँ-जहाँ उल्लेख किया गया है, वह जून १९७० का संस्करण है।

साधन-सूत्रोंमें 'एस० एन०' संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमें उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध कागज-पत्रोंका, 'एम० एम० यू०' मोबाइल माइक्रोफिल्म यूनिटका, 'एस० जी०' सेवाग्राममें सुरक्षित सामग्रीका और 'सी० डब्ल्यू०' सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी) द्वारा संगृहीत पत्रोंका सूचक है।

अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित तारीखवार घटनाएँ दी गई हैं।

विषय-सूची

१. तार : अमृतकौरको

वर्धा
१ अगस्त, १९३७

राजकुमारी अमृतकौर
शिमला वेस्ट

यदि गोली चलाने के लिए खेद प्रकट कर दिया गया है और तुम्हारे द्वारा उल्लिखित अन्य राहत दे दी गई है, तो किसी जाँचकी जरूरत नहीं है।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७९८) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९५४ से भी।

२. पत्र : के० एफ० नरीमानको

१ अगस्त, १९३७

आपका रुख बिलकुल समझमें नहीं आता। अपना वक्तव्य जारी करने से पहले मैं आपके आगे यह प्रस्ताव रखता हूँ। आपके सभी आरोपोंपर मैं विचार करने को तैयार हूँ और यदि मुझे इस बातका विश्वास हो गया कि सरदारने आपके साथ अन्याय किया है, तो मैं निःसंकोच ऐसा कहूँगा और उस दुष्कृत्यके प्रतिकारके लिए जो भी सम्भव है, करूँगा। किन्तु दूसरी ओर यदि कोई बात आपके विरुद्ध मिली और आप मेरे निष्कर्षोंसे सन्तुष्ट नहीं हुए, तो मैं बहादुरजी या सर गोविन्दराव माडगाँवकरसे प्रार्थना करूँगा कि वे अभिलिखित साक्ष्यकी जाँच करें और मेरे निष्कर्षों पर पुनः विचार करें। जहाँतक मेरा सवाल है, मैं नहीं चाहता कि ये सब कार्य-वाहियाँ जनताके सामने आयें। यदि निष्कर्ष आपके विरुद्ध निकले तो आपको क्षमा माँगने का और अपनी कमजोरीका तथा जनता, सरदार और अन्य सहयोगियोंके प्रति किये गये अन्यायको पूरी तरह और निःसंकोच स्वीकार करने का अवसर मिलना चाहिए। परन्तु यदि आप चाहते हैं कि ये कार्यवाहियाँ जनताके सामने आयें, तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। आपको यह जानने की भी कोई जरूरत नहीं है कि इस सिलसिलेमें क्या किया जा रहा है। मैं इस मामलेमें कतई आना नहीं चाहता था। पर आप चाहते थे कि मैं हस्तक्षेप करूँ। और बहुत-से मित्र, जिनमें श्री भरूचा

भी है, ऐसा करने के लिए मुझ पर जोर डाल रहा है। अब मेरे लिए आगे बढ़ना शायद ठीक न होगा। आशा है, आप यह समझ जायेंगे कि मुझे इस बातकी बड़ी चिन्ता है कि आपके साथ पूरी तरह न्याय हो और जिससे आपको अकारण हानि पहुँच सकती हो, ऐसी हर चीज टाली जाये। यदि आप चाहते हैं कि मैं आगे बढ़ूँ तो कृपया मुझे अपने आरोप और अपने साक्ष्यका सार भेज दें। मैं इसे सरदार और उन अन्य सहयोगियोंके पास भेज दूँगा जिनसे आपको शिकायत है, और उनका उत्तर मिलने पर मैं आवश्यक साक्ष्यकी, यदि वह आवश्यक हुआ तो, माँग करूँगा। इन कार्यवाहियोंमे एक सप्ताहसे अधिक समय नहीं लगना चाहिए।

आपको इस बातकी कोई चिन्ता करने की जरूरत नहीं है कि कार्य-समिति या आपके मित्र इस सम्बन्धमें क्या सोचेंगे। उन्हें इस कार्यवाहीकी जानकारी देने की जरूरत नही है।

यहाँ आपको इतना और बता दूँ कि अबतक जो जानकारी मुझे मिली है उससे आपकी बात सही सिद्ध नहीं होती।[2]

[अंग्रेजीसे]

सरदार वल्लभभाई पटेल, खण्ड २, पृ० [illegible], और **हिन्दू**, १०-८-१९३७

१. यह पत्र मिलने पर नरीमानने गांधीजीको एक तार भेजा, जिसमें कहा गया था: "एकपक्षीय धारणाके प्रकाशनपर मुझे तीव्र आपत्ति है। दूसरा पक्ष रखना चाहता हूँ। पत्र भेज रहा हूँ।" इसके बाद जो पत्र आया उसमें उन्होंने कहा था: "मैं देख रहा हूँ कि पिछले कुछ पत्रोंमें आप मुझे बराबर अपने निष्कर्षोंको प्रकाशित करने की धमकी दे रहे हैं। इससे पहले कि आप उन्हें जनताके सामने रखें, क्या मुझे यह जाननेका अधिकार नहीं है कि आपका विचार क्या है? . . . मुझे विश्वास है कि यदि मुझे मौका दिया जाये तो मैं आपको सभी मुद्दों पर सन्तुष्ट कर सकूँगा और यदि कोई गलतफहमी हुई तो उसे भी दूर कर सकूँगा। मेरी इस प्रार्थनाके बाद भी यदि आप इस मामलेके बारेमें अपने विचारोंको प्रकाशित करने का फैसला करते हैं तो मैं भी अपना स्पष्टीकरण जनताके सामने रखने के लिए अपनेको स्वतन्त्र समझूँगा। . . ." इस पत्रके मिलने से पहले ही गांधीजी ने ३ तारीखको नरीमानको सूचना दी थी कि मैं और बहादुरजी १९३४ के चुनाव और १९३७ में बम्बई विधानमण्डलके कांग्रेस दलके नेताके चुनावसे सम्बन्धित दोनों मसलोंपर पंच-निर्णय देनेको तैयार हैं, और कहा कि यदि यह प्रस्ताव आपको स्वीकार हो तो आप तारसे मुझे सूचित करें। इसके उत्तरमें ४ अगस्तको नरीमानने यह तार दिया: "दोनों मसलोंपर आपका और बहादुरजीका निर्णय स्वीकार है।" परन्तु ८ अगस्तको नरीमानने गांधीजीसे कुछ मुद्दोंपर सहायता मांगी। उन्होंने यह सुझाव रखा कि कार्य-समितिके फैसलेके खिलाफ इस पंच-न्यायाधिकरणपर नरीमानकी स्वीकृतिका अर्थ कहीं यह न लगाया जाये कि वे उसके प्रति वफादार नहीं हैं, इसलिए गांधीजीको प्रस्तावित कार्यवाहीके लिए कांग्रेस-अध्यक्षकी स्वीकृति ले लेनी चाहिए। उन्होंने यह भी माँग की कि मेरे सभी साक्षियोंको किसी भी तरह परेशान न किया जाये; क्योंकि इस तरहके आश्वासनके बिना स्वतन्त्र जाँच और सचाई मालूम करने का काम असम्भव होगा।

२. गांधीजीके उत्तरके लिए देखिए "पत्र: के० एफ० नरीमानको", पृ० २७ तथा "वक्तव्य: समाचारपत्रोंको", पृ० ४२-३।

३. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेगाँव
१ अगस्त, १९३७

भाई वल्लभभाई,

अब तार तो तुमको कल ही किया जा सकता है न? हो सकेगा तो महादेव करेंगे। मेरा बयान[1] एकदम तो नहीं निकल सकता। उचित समयपर ही निकलेगा। मेरा कलका पत्र देख लो। सारा पत्रव्यवहार प्रकाशित किया जाये या नहीं, इसका निर्णय मुझसे नहीं हो सकता। इजाजतका सवाल नहीं; सवाल यह है कि हमारी दृष्टिसे यह शोभनीय होगा या नहीं।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
डॉ० कानूगाका बँगला
एलिसब्रिज, अहमदाबाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २०९

४. पत्र : महादेव देसाईको

१ अगस्त, १९३७

चि० महादेव,

तुमने और शिमला-निवासिनीने फाउण्टेन पेन और टाइपराइटरका उपयोग करके सरकंडेकी कलमकी तारीफ की है! मैंने तुम्हारे लेखमें एक अनुच्छेद और जोड़ दिया है।

यदि शान्ता[2] स्वयंको हमारे ढाँचेके अनुकूल बना ले और तुम छोटेलालसे भी काम ले सको तो मुझे नहीं लगता कि हमें देवराजकी जरूरत होगी। लेकिन इस सबके बारेमें तो हम मंगलवारको गाड़ीमें ही विचार-विमर्श कर लेंगे न?

अब कनु आज वहाँ नहीं आयेगा। कल आयेगा।

बापूके आशीर्वाद

१. नरीमान-विवादके विषयमें; देखिए "वक्तव्य : समाचारपत्रोंको", पृ० ४२-३।
२. एक अंग्रेज महिला।

पुनश्च :

वल्लभभाईको इस तरहका तार भेज सकते हो [illegible] नहीं, पत्र-व्यवहारको प्रकाशित करने के औचित्यके बारेमें विचार कर रहा हूँ।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० [illegible]) से।

५. पत्र : चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको

सेगाँव
[illegible] अगस्त, १९३७

प्रिय सी० आर०,[1]

साथमें आपके लिए एक दिलचस्प कतरन है।

'हरिजन' कांग्रेसी मन्त्रियोंके लिए एक साप्ताहिक निर्देशिका रूप लेता जा रहा है। इसलिए आपको रामनाथनसे[2] कहना चाहिए कि वह आपके सामने वे चीजें रखें जो आपको पढ़नी चाहिए। आपको अपने-आपको थका नहीं डालना चाहिए।

मैं आशा करता हूँ कि आप सदस्योंको बारहों महीने कार्ड भत्ता नहीं देंगे। जब विधान-सभाका अधिवेशन चल रहा हो, उस समय २ रुपये रोज और तीसरे दर्जेका किराया तथा कुली और तांगा आदिका वास्तविक खर्च, जो दो रुपये से अधिक न हो, इतना मैं ठीक समझता हूँ। लेकिन इस विषयमें क्या होना चाहिए, यह तो सबसे ज्यादा आप ही जानते हैं।

इस सप्ताहके 'हरिजन'का अग्रलेख[4] जरूर पढ़िए।

लक्ष्मीको[5] आप अपनी ओरसे लिखने दीजिए। मैं यह आशा नहीं करता कि आप स्वयं मुझे लिखें।

वाइसरायके निमन्त्रणपर उनसे मिलने जा रहा हूँ। काम [illegible] है।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०६५) से।

१. यह प्रारूप अंग्रेजीमें है।
२. चक्रवर्ती राजगोपालाचारी उन दिनों मद्रास प्रान्तके प्रधान मंत्री थे।
३. मद्रास सरकारमें सार्वजनिक सूचना-मंत्री।
४. देखिए खण्ड ६५, पृ० ४८४-९०।
५. राजगोपालाचारीकी बेटी और देवदास गांधीकी पत्नी।

६. पत्र : महादेव देसाईको

२ अगस्त, १९३७

चि० महादेव,

आज तो तुम आ जाओ, यही ठीक होगा। दास्ताने[1] तो मोटरसे आयेगा न? और राजकुमारी भी आयेगी। डाक आते ही शान्ता इनमें से किसीके भी साथ तुरन्त भेज दे। साथमें तार है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

क्या सम्मुदयाठमें, उसके खर्चकी जिम्मेदारी किसपर है, आदि बातोंकी चर्चा की?

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५४३) से।

७. पत्र : महादेव देसाईको

२ अगस्त, १९३७

चि० महादेव,

आजकल तो थोड़े-बहुत पत्र लिखने में ही अपना सारा समय लगाता हूँ। एक लेख भेज रहा हूँ। दूसरा शुरू किया है, वह शायद कल मिले। अगर शामको कोई वहाँ जायेगा, तो उसके साथ भेजूँगा नहीं तो सवेरे अपने साथ लाऊँगा। कोई शामकी डाक लाये और आज ही लौटे, तो लेख ले जाये। डॉक्टर तो वहाँ हैं, वे शामको वापस आयेंगे। वे डाक ला सकते हैं। वे मोटरसे आयेंगे। गाड़ीके साथ ही लेख भेज दूँगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

इस पत्रके साथ नरीमानको लिखे मेरे पत्र [पत्रोंकी प्रतिलिपियाँ] हैं। एक प्रतिलिपि जवाहरलालको भेजना।

१. वासुदेव विट्ठल दास्ताने।

यह एक तार करना है:

"बेगम रास मसूद, भोपाल। आपकी अपूरणीय क्षतिमें[1] मेरी हार्दिक सहानुभूति। गांधी।"

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११०४४)से।

८. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

२ अगस्त, १९३७

चि० नरहरि,

स्वामीके साथ बातचीत हुई थी। वेणीलालके मामलेमें हिसाबके खाते देखकर तथा वेणीलाल उसके अतिरिक्त जो प्रमाण दे उसकी जाँच करके, तुम जो निर्णय दोगे, क्या उसे वह मंजूर होगा? विचारार्थ विषयोंका मसौदा तैयार करके दोनोंकी सही ले लेना। फिर अर्जी-दावा और गवाही लिखित रूपमें लेना, और फिर यदि सुनवाई आवश्यक जान पड़े तो करना। इस प्रकार समय बचेगा और काम करनेमें आसानी होगी।

शिक्षाके सम्बन्धमें मेरा लेख[2] पढ़कर जो विचार मनमें आयें, लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९१०८)से।

९. पत्र : अमतुस्सलामको

२ अगस्त, १९३७

प्यारी बेटी अमतुल सलाम,[3]

अभी अखबार में पढ़ा कि रास मसूद भोपालमें मर गये। मैंने तार दिया है।[4] वही रास मसूद न? तुमारे हाल कैसे होंगे मैं समज सकता हूं। खुदापर भरोसा करो, हिम्मत रखो। वही मौत हमारे सामने भी है। कोई आज कोई काल। सब गये, सब जायंगे।

१. रास मसूदका देहान्त हो गया था; देखिए "पत्र : अमतुस्सलामको", २-८-१९३७।
२. देखिए खण्ड ६५, पृ० ४८४-९०।
३. मूलमें सम्बोधन उर्दूमें है।
४. देखिए पिछले शीर्षक से पहले आनेवाला शीर्षक

सरस्वतीको[1] पद्मम्माको[2] आशीर्वाद।

बापूकी दुआ, आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८९) से।

१०. प्राक्कथन : 'द क्वेश्चन ऑफ लैंग्वेजेज़' के लिए

३ अगस्त, १९३७

हिन्दी-उर्दू प्रश्नपर जवाहरलाल नेहरूका निबन्ध[3] मैंने बहुत गौरसे पढ़ा है। पिछले कुछ दिनोंसे यह प्रश्न एक दुर्भाग्यपूर्ण विवादका विषय बन गया है। आजकल उसने जो अशोभन रूप ले लिया है उसके लिए कोई तर्कसंगत कारण नहीं है। जो भी हो, जवाहरलाल नेहरूका लेख इस विषयके उचित स्पष्टीकरणमें मूल्यवान योगदान है। उन्होंने उसपर राष्ट्रीय और विशुद्ध शैक्षणिक दृष्टिसे विचार किया है। उनके रचनात्मक सुझाव यदि सम्बन्धित व्यक्तियों द्वारा व्यापक रूपसे स्वीकार कर लिये जायें तो यह बहस, जिसने अब साम्प्रदायिक रूप ले लिया है, समाप्त हो सकती है। सुझाव सारगर्भित तथा अत्यन्त तर्कसम्मत हैं।[4]

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३७; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय। **ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स**, पृ० २३९-४० से भी।

१. जी० रामचन्द्रनकी भानजी, कान्ति गांधीकी मंगेतर।
२. जी० रामचन्द्रनकी बहन।
३. निबन्धके सम्बन्धमें दिये गये सुझावोंके लिए देखिए परिशिष्ट १; "हिन्दी-उर्दू", २१-९-१९३७।
४. देखिए अगला शीर्षक।

११. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

रेलगाड़ीमें
[illegible] अगस्त, १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

यह मैं दिल्ली ले जानेवाली रेलगाड़ीमें लिख रहा हूँ। मेरा आशीर्वाद, या जो-कुछ भी इसे कहो, साथमें है। मैं तुम्हें कोई लम्बी-चौड़ी चीज नहीं दे सकता।

तुमने पश्तो और पंजाबीके पहले 'शायद'[1] रखा है। मेरा सुझाव है कि तुम यह क्रिया-विशेषण हटा दो। मिसालके लिए, खानसाहब पश्तोको कभी नहीं छोड़ेंगे। मेरा खयाल है वह किसी लिपिमें लिखी जाती है; किसमें लिखी जाती है, यह मैं भूल गया हूँ। और पजाबी? गुरुमुखीमें लिखी हुई पंजाबीके लिए सिख तो मर मिटेंगे। उस लिपिमें कोई सुन्दरता नहीं है। लेकिन मुझे बताया गया है कि सिन्धीकी तरह वह भी सिखोंको हिन्दुओंसे अलग करनेके लिए खास तौर पर ईजाद की गई थी। यह बात हो या न हो, फिलहाल तो सिखोंको गुरुमुखी छोड़नेको राजी करना मुझे असम्भव लगता है।

तुमने चारों दक्षिणी भाषाओंमें से कोई एक सामान्य लिपि तैयार करने का सुझाव दिया है। मुझे उनके लिए देवनागरी भी उतनी ही आसान मालूम होती है जितनी कि चारोंको मिला-जुलाकर तैयार की गई लिपि। व्यावहारिक दृष्टिसे देखें तो उन चारोंमें से मिली-जुली लिपिका आविष्कार नहीं हो सकता। इसलिए मेरा सुझाव है कि तुम सिर्फ इतनी ही सामान्य सिफारिश करो कि जहाँ-कहीं सम्भव हो उन भाषाओंको, जो यदि संस्कृतकी शाखाएँ नहीं हैं तो कम-से-कम जिनका संस्कृतसे महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध तो है ही, संशोधित देवनागरी अपना लेनी चाहिए। तुम्हें मालूम होगा कि इस सम्बन्धमें प्रचार हो रहा है।

और, अगर तुम मेरी तरह सोचते हो तो तुम्हें यह आशा प्रकट करनेमें संकोच नहीं होना चाहिए कि चूँकि किसी-न-किसी दिन हिन्दुओं और मुसलमानोंको दिलसे एक होना ही है, इसलिए हिन्दुस्तानी बोलनेवाले हिन्दू और मुसलमान दोनों एक दिन एक ही लिपि भी अपना लेंगे, और यह लिपि होगी देवनागरी, क्योंकि वह अधिक वैज्ञानिक है और संस्कृतसे निकली हुई भाषाओंकी महान् प्रान्तीय लिपियोंके निकट है।

अगर तुम मेरे सुझाव आंशिक या पूर्ण रूपसे स्वीकार कर लेते हो तो तुम्हें उन स्थानोंको खोज निकालने में कोई कठिनाई नहीं होगी जहाँ परिवर्तन करना

१. इसे बदलकर "कुछ हद तक" कर दिया गया था; देखिए परिशिष्ट-१, अनुच्छेद १।

आवश्यक है। तुम्हारा समय बचाने की खातिर मैंने स्वयं ही ऐसा करने का इरादा किया था, परन्तु अभी मुझे अपने पर उतना भार नहीं डालना चाहिए।

मैं यह मान लेता हूं कि तुम्हारे सुझावोंपर मेरी सहमतिका यह अर्थ नही है कि मैं हिन्दी सम्मेलनवालोंसे हिन्दी शब्दका प्रयोग छोड़ देनेको कहूं। मुझे विश्वास है कि तुम्हारा यह मतलब नहीं हो सकता। मेरा खयाल है कि मैं इस मामलेमें जहांतक जा सकता था वहांतक जा चुका हूं।

अगर तुम मेरे सुझावोंको स्वीकार नहीं कर सकते तो ठीक-ठीक बात बताने की खातिर 'प्राक्कथन'में यह वाक्य जोड़ देना बेहतर होगा: "बहरलाल, मुझे उनका सामान्य ढंगपर समर्थन करने में कोई संकोच नहीं है।"

आशा है, इन्दुका[1] ऑपरेशन सकुशल हो जायेगा।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३७; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय। **ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स**, पृ० २३८-३९ में भी।

१२. पत्र : अतुलानन्द चक्रवर्तीको

३ अगस्त, १९३७

प्रिय अतुलानन्द,

मैं आशा करता हूं कि अब आपकी बेटी ठीक होगी और पूरी तरहसे खतरेके बाहर होगी। मैंने आपके लेखोंको ध्यानसे पढ़ा है। अब भी मुझे कोई स्पष्ट मार्ग नहीं दिखाई दे रहा है। मुझे ऐसा लगता है कि जो उद्देश्य आपके और मेरे मनमें है, उसकी पूर्ति कोई भी सांस्कृतिक संघ नहीं करेगा।[2] यह कार्य उन व्यक्तियोंको करना पड़ेगा जिनका उस आदर्शमें जीता-जागता विश्वास हो और जो उसकी प्राप्तिके लिए धार्मिक निष्ठासे काम करेंगे। आप अपने प्रस्तावमें जो देखते हैं, यदि उसे मैं नहीं देख पाया हूँ तो [मुझे समझाने] की फिरसे कोशिश करें। मैं आपकी बात

१. जवाहरलाल नेहरू की कन्या।

२. अतुलानन्द चक्रवर्ती ने "हिन्दुओं और मुसलमानों में घनिष्ठता स्थापित करने के लिए" एक सांस्कृतिक संघ स्थापित करने का सुझाव दिया था।

धैर्यपूर्वक और ध्यानसे सुनूँगा। मैं सहायता तो करना चाहता हूँ, बशर्ते कि मुझे अपना रास्ता साफ-साफ सूझ पड़े।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
द लाइफ ऑफ महात्मा गांधी, पृष्ठ ३६६

१३. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

रेलगाड़ीमें
२ अगस्त, १९३७

चि० गंगाबहन,

मैं वाइसरायके निमन्त्रणपर दिल्ली जा रहा हूँ। यह पत्र रेलगाड़ीमें लिख रहा हूँ। तुम लिखती हो कि मंजुको दूसरी जातिमें देने को तैयार हो। क्या मंजु तैयार है? क्या हिन्दुस्तानके किसी भी अंचलका योग्य पति मिले तो स्वीकार कर लोगी? ऐसा करने की जरूरत तो है ही। दीवारें टूटनी चाहिए। जब पूरा देश हमारा है, तो एक जातिमें, एक प्रान्तमें अथवा एक अंचलमें ही क्यों पड़े रहें। विवाहमें स्वच्छन्दता नहीं होनी चाहिए; पवित्रता होनी चाहिए और वह धर्म समझकर किया जाना चाहिए। दूसरे सभी प्रतिबन्ध गलत माने जाने चाहिए।

कुसुम तो व्यवस्थित हो जाये, तब जानूँ। विचार तो अनेक करती है, किन्तु उनपर तत्परतासे अमल नहीं कर पाती। तुमसे जितना मार्गदर्शन करते बने, करना। अपने पास खींच सको, तो जरूर खींचना।

मंजुसे मुझे लिखने को कहना। बचुका[1] तो, कहना चाहिए, नया जन्म ही हुआ है।

मैं तो अधिकाधिक गायें जुटाता जा रहा हूँ।

कभी खास तौरपर आनेका मन हो तो खुशीसे आ जाना। बरसातके बादका मौसम अच्छा होता है।

तुम्हारा काम तो निखर ही रहा होगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ६ : गं० स्व० गंगाबहेनने, पृ० ९६

१. बचुभाई भीमजी रामदास, गंगाबहन वैद्यका भतीजा।

१४. पत्र : नारणदास गांधीको

रेलगाड़ीमें
३ अगस्त, १९३७

चि० नारणदास,

जिसे कपासकी बुवाईसे लगाकर बुनाई तककी सारी प्रक्रियाओंका ज्ञान है, वह 'खादीशास्त्र-प्रवेशिका'[1] दो दिनमें या अधिकसे-अधिक सात दिनमें लिख दे सकता है।

१. कपासको बोना, उसके प्रकार, कहाँ-कहाँ कितनी उत्पन्न होती और उसके सभी प्रकारोंके अलग-अलग उपयोग

२. कपासकी सफाई, चुनाई, ओटाई

३. पींजना, पूनी बनाना

४. कताई

५. बुनाई

इस पुस्तिकामें यन्त्रोंका वर्णन होगा, यन्त्रोंके चित्र होंगे, गणितकी विभिन्न गणनाएँ होंगी तथा आजतक के सुधारों आदिका विवरण होगा। तुम जो नाम सुझा रहे हो, उनमें से महादेव अथवा मीराबहन यह काम कर सकते हैं। लेकिन रामेश्वरी देवीको[2] कोई नहीं पा सकता। रामेश्वरीदेवी प्रभावशाली महिला हैं। हिन्दी अच्छी जानती हैं। हमारी सारी प्रवृत्तियोंको समझनेवाली हैं। पतिपक्ष और पितापक्ष, दोनों ओरसे श्रेष्ठ घरकी हैं। राजकोटमें उनका उपयोग कर लो, फिर उन्हें काठियावाड़में थोड़ा घुमा देना। खादी तथा हरिजन-सम्बन्धी काम वे बहुत अच्छा कर देंगी। इससे अच्छा व्यक्ति मैं नहीं भेज सकता। ऐसा होते हुए भी अगर तुम्हारी इच्छा कुछ और हो, तो मैं वैसा करूँगा। जिसमें तुम्हें श्रद्धा न हो, उसे तो कदापि नहीं भेजूँगा। वे हालमें ही मेरे साथ एक महीना रहीं और अभी मेरे साथ ही तीसरे दर्जेमें यात्रा कर रही हैं। घर दिल्लीमें है, लाहौरमें भी है। आज दिल्ली जा रही हैं, जहाँ मैं भी एक दिनके लिए जा रहा हूँ। वहाँ वाइसरायसे यों ही मिलना है, उनके आमन्त्रणपर। मैंने हरिजन-कार्यके लिए इन्हींको त्रावणकोर भेजा था। 'हरिजन' में शिक्षाके विषयमें मेरा लेख पढ़ा होगा। तुम्हें उसे कार्यान्वित करके दिखाना है।

यदि तुम्हें लगता है कि तुम्हारा अच्छेसे-अच्छा उपयोग प्राथमिक विभागमें ही हो सकता है तो तुम्हें वहाँसे नहीं हटाया जायेगा। काठियावाड़में खादीको व्यापक

१. देखिए खण्ड ६५, पृ० ४४७।
२. रामेश्वरी नेहरू।

बना दो और वहाँसे अस्पृश्यताको निकाल बाहर करो, तो मैं समझूँगा, बड़ा काम हो गया। इतना तुम वहाँ कर सको, तो सारे हिन्दुस्तानके सामने एक उदाहरण प्रस्तुत करोगे। तुम्हारे लिए [काठियावाड़से] बाहर कोई स्थान मानसमें नहीं रखा है। लेकिन जरूरत आ पड़े तो तुम्हें बुलाया जा सकता है या नहीं, इतना ही जानने के लिए पूछा था।

मैं ठीक हूँ। जरा आराम चाहिए, सो ले रहा हूँ। कनुकी चिन्ता कर रहा हूँ। यह उसका विषम काल चल रहा है। इस उम्रमें हमें भी ऐसा ही हुआ होगा। लेकिन वह आज्ञाकारी है, इसलिए स्थिर हो जायेगा। बहुत सम्भव है, मेरे ही पास सेगाँवमें व्यवस्थित हो जायेगा। जितना बनता है, उसके अनुकूल बन रहनेका प्रयत्न करता हूँ।

लीलावतीने तुम्हारा पत्र मुझे पढ़ने को दिया था। मैंने तो उसे अनुमति दे दी है, लेकिन मुझे नहीं लगता कि वह जायेगी। वह मेरे पाससे खिसकना नहीं चाहती। फिर भी कभी-कभी बेचैन हो उठती है। उसकी स्थिति भी कुछ-कुछ कन्हैयासे मिलती-जुलती है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

५ या ६ को वर्धा पहुँच जाऊँगा।

कमलाने अपनी माँके लिए ५ रुपयेकी जो माँग की है, वह तुमने भेजी होगी। तुम क्या कहते हो?

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५२३ में भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१५. पत्र : मीराबहनको

रेलगाड़ीमें
८ अगस्त, १९३७

चि० मीरा,

मैं दिल्लीके पास पहुँच रहा हूँ। महादेव और प्यारेलाल मेरे साथ हैं। उम्मीद है कि मैं आज ही वापसी गाड़ी पकड़ूँगा और यदि आज ऐसा न हो सका तो कल तो निश्चित ही है।

आशा है, आकाश तुम्हारे लिए उतना ही ठीक रहेगा।

मुझे बिलकुल मालूम नहीं था कि दोनों धर्मवीर कताई करते हैं।

१. नारणदास गांधीके पुत्र।

क्या मैंने तुम्हें बताया था कि शान्ता इंग्लैंड नहीं गई क्योंकि उसकी माताने उसे एक तरहसे मना कर दिया। वह महादेवके साथ बहुत प्रसन्न है और उसके लिए बहुत उपयोगी भी है।

बलवन्तसिंह दो गायें और लाया है। हमें अभी और चाहिए।

बालकृष्ण[1] सेगाँवमें फल-फूल रहा है। डॉक्टर बत्रा के समझाने पर वह निस्संकोच होकर खाता है। उसे केप्लरका माल्ट कॉड-लिवर आइल[2] दिया जा रहा है। मैंने सोचा कि मछलीके तेलके बारेमें नियममें ढील दे दूँ, क्योंकि यहाँ और बहुत-से प्रतिबन्ध हैं। उसका जो इतना ज्यादा वजन गिर गया था, उसकी वह शीघ्रतासे पूर्ति कर रहा है।

रामेश्वरी देवी मेरे साथ ही तीसरे दर्जेमें दिल्ली लौट रही हैं। मुझे आशा है कि तुमपर मलेरियाका असर नहीं होगा और तुम बिलकुल ठीक-ठाक वापस लौटोगी। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, यदि तुम स्वस्थ रहो और अपने शरीरमें नई ताजगी भरो तो मुझे इस बातकी कोई चिन्ता नहीं कि तुम वहाँ कबतक रहती हो।

सुभाषके बारेमें मुझे खेद है। संलग्न पत्र उसके लिए है।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३९५) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९३६१ से भी।

१६. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

रेलगाड़ीमें
४ अगस्त, १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

मैं मूर्ख हूँ। तुम्हारा पत्र मिलने पर मैंने अपनी फाइल देखी, तो मेहरअलीके भाषणवाली कतरन मिल गई। मैंने मसानी के भाषणका नहीं, उसीके भाषणका हवाला दिया था।[3]

यह पत्र मैं वर्धा वापस जाते हुए गाड़ीमें लिख रहा हूँ और गाड़ी बहुत ज्यादा हिल रही है। अब रातके १०.३० बज गये हैं। मैं नींद से जाग उठा, भाषणका खयाल आया और ढूंढ़ने लगा। कलवाला डिब्बा ज्यादा अच्छा था।

१. बालकृष्ण भावे।
२. एक प्रकारकी मछलीका तेल।
३. देखिए खण्ड ६५, पृ० ४८२।

मैं वाइसरायसे मिला। तुमने सरकारी विज्ञप्ति¹ देखी होगी। उसमें मुलाकातका सही-सही सार दिया गया है। कुछ और प्रासंगिक बातें भी थीं, जिनका जिक्र कृपलानी तुमसे मिलने पर करेंगे। एक बातका उल्लेख यहाँ कर दूँ। मेरे मनमें कल्पना थी कि शायद वे तुम्हें भी बुलायें। मैंने उनसे कहा कि अगर निमंत्रण भेजा जायेगा तो शायद तुम इनकार नहीं करोगे। क्या मैंने ठीक कहा?

मुझे अफसोस है कि मैंने रायके भाषण तुमपर थोपे।² लेकिन मैं समझता हूँ, तुम उन्हें पढ़ते तो जरूर ही; लेकिन मुझे उनके बारेमें तुम्हारी राय जानने की जल्दी नहीं है। अगर अबतक पढ़ नहीं चुके हो तो सुविधासे पढ़ लेना।

तुम इन्दुका ऑपरेशन बम्बईमें करा रहे हो, समझ गया।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३७; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय। **ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स**, पृ० २४० में भी।

१७. पत्र : चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको

६ अगस्त, १९३७

प्रिय सी० आर०,

कैसी मूर्खताकी बात है! वेतनके सम्बन्धमें मेरे अपने कुछ विचार हैं³, इसलिए आपको दुःखी तथा निराश क्यों होना चाहिए? आप उनपर अमल नहीं कर रहे हैं, इसका मैं कतई बुरा नहीं मानता। मैंने कहा ही है कि यदि ऐसा महसूस हो कि मेरे विचार अमलमें लाने लायक नहीं हैं, तो उन्हें स्वीकार करने की कोई आवश्यकता नहीं है। आप वहाँ समस्याओंसे जिस तरह निपट रहे हैं, उससे हम सब [illegible] है। अपना काम आपने आस्था तथा धार्मिक उत्साहके साथ करना शुरू किया है। आपको थोड़ी भी निराशा नहीं होनी चाहिए। मेरी हृदयगत भावनाओंको तो आप जानते ही हैं। फिर आपको चिन्ता क्यों होनी चाहिए? मैं आशा करता हूँ कि

१. ४ अगस्तकी मुलाकातके बाद विज्ञप्ति जारी की गई थी। उसमें कहा गया था: "... वाइसरायने सम्बद्ध सवालोंके बारेमें गांधीजी की बात ध्यानपूर्वक सुनी और कहा कि वे उनके विचार सीमान्त प्रदेशके गवर्नर तक पहुँचा देंगे। बातचीत सर्वथा सामान्य और व्यक्तिगत प्रकार की थी, और चर्चाका मुख्य विषय गाँवोंका उत्थान तथा किसानोंकी दशामें सुधार था।"

२. देखिए खण्ड ६५, पृ० ४८१-८२।

३. देखिए खण्ड ६५, पृ० ४३८-४१।

१७को[1] आप वहाँ अपने कामसे छुट्टी ले सकेंगे। मेरी दुआएँ तथा शुभकामनाएँ सदा आपके साथ हैं।

वाइसरायके साथ हुई बातचीत मैत्रीपूर्ण तो थी, पर थी औपचारिक ही।

देवदास अच्छा दिखता था।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०६६) से।

१८. पत्र : अमतुस्सलामको

६ अगस्त, १९३७

चि० अमतुल सलाम,

तुमारा खत मिला। अमतुलको[2] मैंने तुर्त भोपाल तार भेजा था। कांतिके[3] बारेमें म लिख चुका हूं। तुमारा महिना खतम हुआ है इसलिये यहाँ आ जाना ही शायद अच्छा होगा। रामचंद्रनका खत है वे नहि चाहते कि सरस्वति तीन बरस तक कहीं भी जाय, वे चाहते हैं वह अपना अभ्यास पूरा करे। ऐसी हालतमें सरस्वतीको वहीं छोड़ना अच्छा होगा। बारी या बकीके कोई खत मुझे नहीं मिले हैं।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मेरी तबीयत अच्छी है। कल ही दिल्लीसे आ गया।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९०) से।

१. कांग्रेस कार्यसमितिकी बैठकके लिए, जो वर्धामें १४ अगस्तसे १७ तक होनेवाली थी।
२. अमतुस्सलामकी भतीजी, रास मसूदकी विधवा पत्नी।
३. हरिलाल गांधीके पुत्र।

१९. खादीका और भी गहरा अर्थ

जबसे खादीका लक्ष्य उसे सस्तेसे-सस्ते दामोंपर सुलभ करानेके बजाय उसके उत्पादनमें लगे हुए कारीगरोंकी स्थितिमें उत्तरोत्तर सुधार करना निश्चित हुआ है तबसे खादी-सेवकोंके विचार-जगत्में एक क्रान्ति हो गई है। मजदूरीकी दरमें की गई वृद्धिका खरीदारोंपर कोई असर पड़ा भी है तो वह कोई ज्यादा नहीं है। इस तथ्यने खादी-सेवकोंके मनमें आत्म-विश्वास पैदा किया है। खादी-नीतिमें जब परिवर्तन किया गया तब उनमें यह श्रद्धा नहीं थी। अब वे सेवक यह समझने लगे हैं कि उन्हें कारीगरोंके जीवनके हरएक अंगका स्पर्श करना है और उनकी स्थितिमें सभी ओरसे सुधार करने का प्रयत्न करना है। अतः 'महाराष्ट्र खादी-पत्रिकामें'—जिसके सम्बन्धमें इस पत्रमें कुछ दिन पहले एक टिप्पणी दी गई थी[1]—नीचे लिखा विवरण पढ़ते हुए हर्ष होता है:

> कोरुतला गाँवके कार्यकर्त्ता स्थानीय लोगों द्वारा हाथसे बनाये कागजका उपयोग कर रहे हैं और स्थानीय कारीगरोंको मन की सुतली बनानेकी भी प्रेरणा दे रहे हैं। इसमें उसी क्षेत्रमें पैदा किये गये सनका उपयोग किया जाता है।
>
> बहुत-से कारीगरों को जहाँ वे बैठते हैं बहुधा वहीं थूकते रहने की गन्दी आदत है। बयासी कारीगरों को मिट्टी के छोटे-छोटे पीकदान इस प्रयोजन के लिए दिये गये हैं।
>
> मेटपल्ली-जागीरके प्रबन्धकको समझा-बुझाकर बेगार न लेने के लिए राजी कर लिया गया है।
>
> तांडूरमें बुनकरोंको ऐसे उपाय करने को प्रेरित किया गया है जिससे वे कर्ज लेना बन्द कर सकें। अब वे शादी-विवाह पर तीस रुपयेसे अधिक खर्च नहीं करते; मुंडनके अवसरपर भोज आदि देना बन्द कर दिया है और अब वे त्योहारों पर न तो शराब पीते हैं और न श्राद्ध-भोज ही करते हैं। स्त्रियोंको खादीकी साड़ियाँ पहनने के लिए प्रेरित करने के लिए भी उपाय किये गये हैं (इस प्रयोजन के लिए सस्ते किस्मकी साड़ियाँ निकाली गई हैं), ताकि कारीगरोंकी आयमें जो वृद्धि हो उसे वे मुश्किलके दिनों के लिए बचाकर रख सकें।

१. देखिए खण्ड ६५, पृ० ४६८-६९।

सावलीमें यह निश्चय किया गया है कि जो लोग कर्ज न लेंगे तथा महीनेमें ८० प्रतिशत मजदूरीका समान और २० या उससे ऊपरके नम्बरका कमसे-कम १ भर सूत कातेंगे उन्हें बढ़े भावोंसे मजदूरी दी जायेगी निम्नलिखित आँकड़ों से स्वतः स्थिति का पता चल जाता है :

नम्बर	चालू दरें	बढ़ी हुई दरें
	रु० आ० पा०	रु० आ० पा०
२२	२ – ८ – ०	३ – ४ – ०
२४	२ – १४ – ०	३ – १२ – ०
२६	३ – ४ – ०	४ – ४ – ०
२८	३ – १० – ०	४ – १२ – ०
३०	४ – ० – ०	५ – ४ – ०
३२	४ – ८ – ०	६ – ० – ०

हिसाब करके यह देख लिया गया है कि रोज औसतन ८ घंटे कातनेवाला इस दरसे ४ आने कमा लेगा।

सिंदेवाहीमें वे एक सहकारी भण्डार खोलने पर राजी हो गये हैं।

यह तो मैंने मूल हिन्दीका संक्षिप्त सार ही दिया है। जो यह जानना चाहते हों कि इस नये ध्येयपर अमल किस तरह हो रहा है, उन उद्यमी अध्येताओंसे तो मैं पत्रिकामें से पूरा अंश पढ़ने की सिफारिश करूँगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ७-८-१९३७

२०. मन्त्रिपद कोई पुरस्कार नहीं है

विभिन्न प्रान्तोंसे मेरे पास कई ऐसे पत्र आ रहे हैं, जिनमें खुदका या अपने किसी मित्रको मन्त्रिपद न देनेकी शिकायतके साथ-साथ इस सम्बन्धमें मुझसे बीचमें पड़ने के लिए कहा जाता है। मेरे खयालमें ऐसा एक भी प्रान्त न होगा जहाँसे मेरे पास ऐसी शिकायतें न आई हों। इनमें से कई पत्रोंमें तो यह भय भी व्यक्त किया गया है कि अगर अमुक व्यक्तिके दावोंपर ध्यान नहीं दिया गया, तो साम्प्रदायिक दंगे आदि भयंकर परिणाम उपस्थित होंगे।

इस सम्बन्धमें पहली बात तो मैं यह कहूँगा कि मन्त्रियोंके चुनावके किसी भी मामलेमें मैंने कोई दखल नहीं दिया है। अव्वल तो मेरी ऐसी कोई इच्छा ही नहीं है; फिर अगर इच्छा भी हो तो कांग्रेससे बिलकुल अलग हो जाने के कारण मुझे ऐसे मामलोंमें दखल देने का कोई हक नहीं है। कांग्रेसके मामलोंमें मैं इसी हदतक पड़ता हूँ कि पद-ग्रहणके सिलसिलेमें खड़े होनेवाले प्रश्नोंके बारेमें या पूर्ण

स्वाधीनताके अपने लक्ष्यको पाने के लिए अख्तियार की जानेवाली नीतियोंके बारेमें जब भी मेरी सलाहकी जरूरत होती है, मैं देता हूँ।

लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि मेरे पास जो लोग लम्बे पत्र भेज रहे हैं, उनके खयालमें मन्त्रिपद मानों पुरानी सेवाओंके बदलेमें मिलनेवाले पुरस्कार हैं, जिनके लिए कुछ कांग्रेसी अपने दावे पेश कर सकते हैं। मैं उन्हें यह सुझाने का साहस करता हूँ कि मन्त्रिपद तो सेवाके द्वार हैं; जिन लोगोंको वे सुपुर्द किये जायें, उन्हें प्रसन्नता और पूरी योग्यताके साथ सेवा करनी चाहिए। इसलिए इन पदोंके लिए आपसमें छीना-झपटी होनी ही नहीं चाहिए। विभिन्न हितोंको सन्तुष्ट करने के लिए मन्त्रिपदोंका निर्माण करना निश्चय ही गलत होगा। अगर मैं किसी प्रान्तका मुख्य मन्त्री होता और मेरे सामने ऐसे दावे पेश किये जाते, तो मैं अपने निर्वाचकोंसे कह देता कि वे किसी और आदमीको अपना नेता चुन लें। इन पदोंसे हमें लिपट नहीं जाना है, बल्कि उन्हें हलके हाथों पकड़ना चाहिए। ये तो काँटोंके ताज हैं या होने चाहिए। ये प्रसिद्धिके लिए थोड़े ही हैं। पद तो यह देखने के लिए ग्रहण किये गये हैं कि अपने लक्ष्यकी ओर हम जिस गतिसे बढ़ रहे हैं, उसमें इनसे कुछ तेजी आती है या नहीं। ऐसी सूरतमें अगर स्वार्थी या गुमराह लोगोंको मुख्य मन्त्रियों पर हावी होकर प्रगतिमें बाधा डालने दी गई, तो यह बड़ी दुःखद बात होगी। जिन लोगोंसे अन्तमें जाकर मन्त्रियोंको सत्ता हासिल होती है, उनका आश्वासन पाना यदि जरूरी था, तो यह आश्वासन तो और भी ज्यादा जरूरी है कि नेतागण आपसमें एक-दूसरेको समझेंगे, असन्दिग्ध वफादारीका परिचय देंगे और अनुशासनका स्वेच्छापूर्वक पालन करेंगे। कांग्रेस-जनोंने अगर अपने व्यवहारमें काफी निःस्वार्थता, अनुशासन और लक्ष्य-प्राप्तिके लिए कांग्रेस द्वारा प्रतिपादित साधनोंमें अपना विश्वास जाहिर नहीं किया, तो जिस विकट लड़ाईमें हमारा देश जुटा हुआ है, उसमें हमें विजय नहीं मिल सकती।

भला हो कराचीके प्रस्तावका[1], जिसके कारण कांग्रेसके मातहत ग्रहण किये जानेवाले मन्त्रिपदोंके लिए आर्थिक आकर्षण नहीं हो सकता। यहाँ मैं यह जरूर कहूँगा कि ५०० रु० तनख्वाह को ज्यादासे-ज्यादा समझने के बजाय कमसे-कम समझना गलती है। ५०० रु० तो आखिरी हद है। हमारे देशपर बहुत भारी तनख्वाहोंका जो बोझ लदा हुआ है, उसके हम अगर आदी न हो गये होते तो ५०० रु० को हमने बहुत ज्यादा समझा होता। कांग्रेसमें तो कमसे-कम पिछले १७ सालोंसे आम तौरपर तनख्वाहकी दर ७५ रु० रही है। राष्ट्रीय शिक्षा, खादी और ग्रामोद्योग, उसके जो तीन बड़े-बड़े रचनात्मक अखिल भारतीय विभाग हैं, उनमें तनख्वाहकी स्वीकृत दर ७५ रु० माहवार रही है। और इन विभागोंमें ऐसे व्यक्ति मौजूद हैं जो, जहाँतक योग्यताका सम्बन्ध है, इतने योग्य हैं कि वे किसी भी दिन मन्त्रिपदकी जिम्मेदारी सँभाल सकते हैं। उनमें ख्यातिप्राप्त शिक्षाशास्त्री, वकील, रसायनशास्त्री और व्यापारी

१. देखिए खण्ड ४५५, पृ० ३९२-९३।

हैं, जो अगर चाहें तो आसानीसे ५०० रु० माहवारसे ज्यादा कमा सकते हैं। भला मन्त्री बनने पर ऐसा फर्क क्यों आ जाना चाहिए जैसा कि हम देख रहे हैं? लेकिन अब तो शायद जो-कुछ होना था वह हो चुका है। मैंने जो बातें कहीं उनसे तो मेरी व्यक्तिगत राय ही प्रकट होती है। मुख्य मन्त्रियोंके लिए मेरे मनमें इतना ज्यादा आदर है कि उनके निर्णय और उनकी बुद्धिमत्तापर मैं शंका कर ही नहीं सकता। उनके सामने जो परिस्थिति उपस्थित थी, उसमें उनके खयालसे निःसन्देह वही सर्वोत्तम था जो उन्होंने किया। पत्र भेजनेवालों को जवाबमें जो बात मैं बताना चाहता हूँ, वह यह है कि इन पदोंको इनमें मिलनेवाली तनख्वाह और भत्तेकी रकमकी खातिर ग्रहण नहीं किया गया है।

और फिर दलमें से उन्हीं लोगोंको ये पद दिये जाते हैं जो इनपर आसीन होकर अपेक्षित कर्त्तव्यका पालन करने के लिए सबसे अधिक योग्य हों।

और अन्तमें असली कसौटी तो यह है कि इन पदोंके लिए जिनका चुनाव किया जाये वे उस दलके सदस्योंको भी तो पसन्द आने चाहिए, जिसकी वजहसे मुख्यमन्त्रियोंको अपना पद प्राप्त हुआ है। कोई भी मुख्य मन्त्री अपने दलके ऊपर अपनी मर्जीके किसी पुरुष या स्त्रीको एक क्षणके लिए भी नहीं थोप सकता। वह तो इसीलिए प्रमुख है कि उसकी योग्यता, व्यक्तियोंकी पहचान तथा नेतृत्वके लिए आवश्यक अन्य गुणोंपर उसके दलको पूरा विश्वास है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ७-८-१९३७

२१. अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघ बुलेटिन

अ० भा० ग्रामोद्योग संघने अपना पहला बुलेटिन जारी किया है। संघके वर्धा-स्थित मुख्यालय, मगनवाड़ीमें चलनेवाली विविध गतिविधियोंका विवरण देने के बाद अन्तमें कहा गया है:[1]

> **सदस्य और एजेंट अपनी रिपोर्टें भेजने में बहुत ढील कर रहे हैं। सदस्यों-को हम याद दिला दें कि हमारे नियमोंके अनुसार यदि किसी सदस्यसे लगातार तीन तिमाहियों तक रिपोर्ट न मिले तो उसकी सदस्यता खत्म हो जायेगी। हमें खेदके साथ कहना पड़ता है कि इस नियमके अनुसार कई सदस्योंकी सदस्यता खत्म हो गई है। इस ढीलका कारण शायद यह है कि सदस्य यह सोचते हैं कि जबतक कोई उल्लेखनीय चीज न हो, रिपोर्ट भेजने से कोई फायदा नहीं है। . . . उनका कार्य बँधे-बँधाये ढंगका है और एक बार रिपोर्ट दे देने के बाद वे यह समझते हैं कि जबतक वे कोई नया काम न करें, रिपोर्ट देना**

१. यहाँ इसके कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।

जरूरी नहीं है। यह भी गलत है। संघको ठीक तरह चलाने और इस बुलेटिनके माध्यमसे अनुभवोंका आदान-प्रदान करने के लिए यह बहुत ही जरूरी है कि सदस्य और एजेंट केन्द्रीय कार्यालयसे घनिष्ठ सम्पर्क रखते हुए अपना कार्य करें और पूर्ण व नियमित रिपोर्टों द्वारा उसे अपनी गतिविधियोंकी ठीक तरह सूचना देते रहें। . . .

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ७-८-१९३७

२२. मन्दिर-प्रवेश

ऐसा दीखता है मानों अस्पृश्यताका गढ़ माना जानेवाला मलाबार मन्दिर-प्रवेशके सम्बन्धमें त्रावणकोरकी ही तरह देशको रास्ता दिखाने जा रहा है। नीचे दिये गये दो संक्षिप्त वक्तव्योंकी[1] ओर मैं पाठकोंका ध्यान आकर्षित करता हूँ। एक तो कालीकटकी मन्दिर-प्रवेश समितिका और दूसरा मलाबार हरिजन सेवक संघका है। दोनोंमें तमाम सार्वजनिक मन्दिरोंको, जिन शर्तोंपर वे तथाकथित सवर्णोंके लिए खुले हुए हैं, ठीक-ठीक उन्हीं शर्तोंपर तथाकथित अवर्णोंके लिए भी खुलवा देनेके पक्षमें सवर्णों और अवर्णोंका लोकमत संगठित करने के लिए जबर्दस्त प्रचार-कार्य करने का निश्चय किया गया है। अगर मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें जनता ऐसा निर्दोष मत जाहिर कर दे तो फिर कोई भी राज्य या कोई भी ट्रस्टी इस प्रकारके लोकमतकी अधिक दिन अवहेलना नही कर सकता। मलाबारकी इस समितिने ऐसे कानूनकी आवश्यकतापर ठीक ही जोर दिया है जिससे अवर्णोंके लिए अपने प्रबन्धाधीन मन्दिरोंको खोल देने के ट्रस्टियोंके अधिकारके सम्बन्धमें हर प्रकारके सन्देहको दूर किया जा सके, खासकर तब जबकि यह साबित किया जा सके कि इस तरह मन्दिरोंको खोलनेके पक्षमें सवर्णोंका काफी बड़ा बहुमत है। हम आशा करते हैं कि समिति तथा संघको जनताकी तरफसे इस महान् कार्यके लिए सोत्साह समर्थन मिलेगा। कहने की आवश्यकता नहीं कि यह कार्य ऐसे समर्थनका मुस्तहक है और वह उसकी माँग कर रहा है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ७-८-१९३७

१. वक्तव्य यहाँ नहीं दिये जा रहे हैं।

२३. तार : अमतुस्सलामको

वर्धागंज
७ अगस्त, १९३७

अमतुस्सलाम
हरिजन सेवक संघ
त्रिवेन्द्रम

बेहतर है अब यहाँ आ जाओ। रामचन्द्रन् सरस्वतीको उसकी पढ़ाई पूरी होने से पहले भेजने को राजी नहीं।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०४) से।

२४. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

सेगाँव
७ अगस्त, १९३७

प्रिय कुमारप्पा,

सीताके ही हितकी दृष्टिसे मेरा खयाल है कि अभी इतनी जल्दी सम्पादकके रूपमें हम उसे न रखें। हमारे अपने लोगोंके बीच उसे, अभी जितनी है, उससे ज्यादा परिचित हो जाने दो। केवल साहित्यिक योग्यता हमारे उद्देश्यके लिए काफी नहीं है। हमारे पाठकोंको उसे सह-कार्यकर्त्ताके रूपमें जानना चाहिए। मेरे इस विचारसे क्या तुम सहमत नहीं हो?

मंगलवारको मध्य प्रदेशके शिक्षा-मन्त्री[1] आ रहे हैं और ढाई बजे मुझसे मिलेंगे, तथा आबकारी-विभागके मन्त्री[2] पांच बजे मिलेंगे। मेरा खयाल है कि तुम्हें, भारतन्, सीता — यदि अच्छी हो गो — जाजूजी,[3] नायकम्[4] और काकाको उपस्थित रहना चाहिए। क्या तुम सबको सूचित कर दोगे?

१. रविशंकर शुक्ल।
२. पी० बी० गोले।
३. श्रीकृष्णदास जाजू।
४. ई० डब्ल्यू० आर्यनायकम्।

तुम तीनोंको स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१२७) से।

२५. पत्र : कंचन एम० शाहको

सेगाँव
७ अगस्त, १९३७

चि० कंचन,

तू कल (रविवारको) सवेरे जरूर आना और यहीं भोजन करना। जल्दी न आ सके, तो दोपहरको एक बजेके बाद आना। लेकिन आना जरूर।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८२९३) से। सी० डब्ल्यू० ७०२० से भी; सौजन्य : मुन्नालाल जी० शाह

२६. पत्र : जमुभाई दाणीको

[८ अगस्त, १९३७ से पूर्व]

श्री दाणी,

तुम्हारा पत्र मिला। भंगियोंसे सम्बन्धित रिपोर्ट मेरे पास नहीं आई। किन्तु अगर मिली तो मैं उसे पढ़ जाऊँगा, और कुछ लिखने लायक हुआ तो लिखूँगा।[1]

जब मैं कहता हूँ कि काठियावाड़का सार्वजनिक जीवन छिन्न-भिन्न हो गया है, तो उसका अर्थ केवल इतना ही होता है कि लोग तो जैसे थे वैसे ही हैं, किन्तु लोकसेवक अथवा लोकनायक निकम्मे अथवा स्वार्थी हैं अथवा चारित्र्यशून्य हैं, या उनमें एक साथ ये सब बातें हैं। कहीं-कहीं ऐसा भी देखने में आता है कि जीवनका प्रवाह विभिन्न क्षेत्रोंमें प्रवाहित तो होता रहता है, किन्तु कुछ मूक सेवक अलक्षित ढंगसे अपना काम किये जाते हैं। क्या काठियावाड़में ऐसे कुछ सेवक हैं? इस सबकी ईमानदारी तथा सेवाकी दृष्टिसे खोज करो। ऐसा तुम चाहे संघके [सदस्यके] रूपमें करो, चाहे व्यक्तिगत रूपसे, लेकिन इस तरह करो कि वह तुम्हें शोभा दे।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ८-८-१९३७

१. देखिए अगला शीर्षक।

२७. काठियावाड़के कार्यकर्त्ता

कुछ दिन पहले भावनगरमें काठियावाड़के कुछ कार्यकर्त्ताओंका सम्मेलन हुआ था। उसमें काफी विचार-विमर्शके बाद श्री नानाभाईकी प्रेरणासे ऐसा प्रस्ताव पारित हुआ था कि उन्हें मेरी सलाहके अनुसार सेवा-कार्य करना चाहिए और जो मर्यादाएँ मैं निर्धारित करूँ, वे उनका पालन करें। इनमें से कुछ भाई मेरे पास इस सम्बन्धमें चर्चा करने के लिए आनेवाले थे। उनका पत्र पाने के बाद मैंने उन्हें यह लिखकर रोकने का प्रयत्न किया कि जिसे मैं रचनात्मक कार्यक्रम मानता हूँ, उसीके बारेमें उन्हें सुनने को मिलेगा, इसलिए सम्भव है कि उनका आना व्यर्थ हो जाये। लेकिन यह बात उन लोगोंके गले नहीं उतरी, और श्री जगजीवनदास, बलवन्तराय,[1] फूलचन्द,[2] ढेबरभाई[3] और वजुभाई[4] आये। दो घंटेकी चर्चाके बाद यह तय हुआ कि मैंने जो सलाह दी है उसका सारांश मुझे 'हरिजनबन्धु' में देना चाहिए। मैंने उनकी यह माँग स्वीकार कर ली।

पहली चर्चा, मैंने श्री दाणीको जो पत्र[5] लिखा था, उसपर हुई। मुझे ऐसा बताया गया था कि उस पत्रमें मैंने काठियावाड़ी कार्यकर्त्ताओंको निकम्मा, स्वार्थी, अथवा सिद्धान्तहीन अथवा यह सब कहकर उनकी निन्दा की थी, और इस प्रकार मैंने घोर अन्याय किया था। मैंने जवाबमें लिखा कि ऐसे भौंड़े पत्र लिखना मेरे स्वभावमें नहीं है, और मैंने उस पत्रकी नकल माँगी। उस पत्रके जवाबमें तो उपर्युक्त भाई ही आ गये और मेरा मूल पत्र लेते आये, जो इस प्रकार है:[6]

मैंने कहा कि जो इस पत्रको निन्दात्मक मानते हैं, उनके बारेमें ऐसा कहा जा सकता है कि वे गुजराती नहीं जानते। इस पत्रका अर्थ तो स्पष्ट है, और वह यह है कि श्री दाणीके लिखे अनुसार यदि काठियावाड़का सार्वजनिक जीवन सचमुच ही छिन्न-भिन्न हो गया हो, तो वहाँके कार्यकर्त्ताओंमें इनमें से एक अथवा तीनों दोष होने चाहिए। इन भाइयोंने स्वीकार किया कि इसके सिवा और कोई अर्थ मेरे पत्रका किया ही नहीं जा सकता।

इसपर उन्होंने यह जानना चाहा कि क्या किसीने मेरे पास ऐसा आचरण करनेवालों के नाम भेजे हैं जो काठियावाड़के निवासियोंको शोभा न दें। मैंने जवाब

१. बलवन्तराय मेहता।
२. फूलचन्द कस्तूरचन्द शाह।
३. उ० न० ढेबर।
४. वजुभाई शुक्ल।
५ और ६. पत्रके पाठके लिए देखिए पिछला शीर्षक।

दिया कि जिनके नाम मेरे पास आये थे, उनमें से जिन लोगोंके प्रति लगाये गये आरोपोंको मैंने सच माना था उनके नाम मैंने प्रकाशित कर दिये थे।

इसके बाद निम्न प्रश्नोंपर चर्चा हुई :

१. गांधीजी मार्गदर्शन करें
२. [काठियावाड़] राजनीतिक परिषद्
३. प्रजामण्डल और परिषद्
४. रियासतोंमें लगाये गये प्रतिबन्ध और अन्याय
५. मजदूरोंकी स्थिति सुधारनेके लिए उनका संगठन
६. रचनात्मक कार्य, जैसे खादी, हरिजन-सेवा आदि।
७. ये सब काम स्वतन्त्र रूपमें किये जायें अथवा एक संस्थाकी देखरेखमें।

अपने मार्गदर्शनके बारेमें मैंने मत व्यक्त किया कि मैं यह बोझ नहीं उठा सकूँगा। दूर बैठकर किसीका मार्गदर्शन करने की न तो मुझमें इच्छा है, न शक्ति, इसलिए मेरा नाम उन लोगोंको अपने मनसे निकाल ही देना चाहिए। किसी विषयमें यदि मेरी राय पूछी जाये, तो ऐसी राय तो मैं देता ही आया हूँ, क्योंकि ऐसा करना मैं अपना कर्त्तव्य मानता हूँ। मेरी सलाह है कि काठियावाड़ियोंको काठियावाड़के निवासी किसी भाईको ही अपना नेता नियुक्त करना चाहिए, और इसी प्रकार नया नेता नियुक्त करते ही रहना चाहिए। इस प्रकार आत्मविश्वास उत्पन्न होगा और स्वावलम्बी भी बना जा सकेगा। काठियावाड़ी अपनेमें से किसीको नेताके रूपमें स्वीकार नहीं कर सकते, यह मान्यता भी — चाहे वह सच हो या झूठ — बदल जायेगी।

अन्य प्रवृत्तियोंकी चर्चा करते हुए मैंने यह राय जाहिर की कि मेरा बस चले तो मैं सबको खादी, हरिजन-सेवा, ग्रामोद्योग आदि कार्योंमें ही लगा दूँ। इस प्रकार सबको काममें लगा देने के बावजूद और भी बहुत-से कार्यकर्त्ताओंकी आवश्यकता होगी। लेकिन जिन्हें इस प्रकारकी सेवा न रुचे, वे अपनी पसन्दका क्षेत्र चुन लें, और उसमें जी-जानसे जुट जायें। लेकिन एक क्षेत्र चुन लेने के बाद, फिर उसे छोड़कर दूसरेमें और दूसरा छोड़कर तीसरेमें जाना, यह नहीं होना चाहिए। राजनीतिक परिषद् बुलाई ही जाये, तो वह भावनगरमें बुलाई जाये, और मेरे द्वारा निर्धारित प्रतिबन्धोंकी सीमामें, तथा पोरबन्दरमें जो परम्परा बन गई है, उसके अनुसार बुलाई जाये। उसका अधिवेशन देशी रियासतोंकी सीमाके बाहर नहीं होना चाहिए। यदि किसी एक ही रियासतमें अनुमति मिले तो वह प्रतिवर्ष वहीं होनी चाहिए। अमरेलीमें हो सकती है, लेकिन यदि काठियावाड़की ही कोई रियासत हो, तो ज्यादा अच्छा होगा।

प्रजामण्डल तो प्रत्येक रियासतमें होना चाहिए। प्रत्येक व्यक्तिको यथाशक्ति उसमें जो सेवा करते बने, सो करते रहना चाहिए।

मैंने जो मर्यादा निर्धारित की है उसके अनुसार राजनीतिक परिषद् तो भिन्न-भिन्न रियासतोंके अन्याय इत्यादिके प्रश्नोंकी चर्चा स्वतन्त्रतापूर्वक नहीं कर सकती। इसका अर्थ यह नहीं है कि उनकी चर्चा कहीं भी नहीं की जा सकती। भिन्न-भिन्न रियासतोंकी जनता अपने-अपने प्रश्नोंकी चर्चा अवश्य करे, और उनके सम्बन्धमें न्याय

प्राप्त करने का प्रयत्न करे और ऐसा करना उसका कर्त्तव्य है। अतः जिन रियासतोंमें निषेधात्मक आज्ञाएँ जारी की गई हों अथवा अन्याय हो रहे हों, वहाँ उनकी चर्चा आजादीसे की जा सकती है। उसमें मर्यादा केवल सत्य और अहिंसाकी होती है। जो भी कहा जाये, वह शत-प्रति-शत सत्य हो, अतिशयोक्ति तथा अविनयसे रहित हो। हममें जो करने की सामर्थ्य न हो, वैसा करने की धमकी कभी न दी जाये। इस संसारमें अनेक बातें हमें असमर्थताके कारण सहन करनी पड़ती हैं।

मजदूरोंकी स्थिति सुधारने के लिए उनका संगठन अवश्य करना चाहिए। सब जानते हैं कि अहमदाबादमें श्रीमती अनसूयाबहनने[1] जो नीति अपनाई है, वही मुझे पसन्द है। राजनीतिके लिए मजदूरोंको संगठित करने का सिद्धान्त मैंने स्वीकार नहीं किया है। राजनीतिमें तो सभी नागरिक रुचि रखते हैं, और उन्हें रखनी भी चाहिए। लेकिन संगठन बनाने के मूलमें किसीका हेतु राजनीतिक नहीं होना चाहिए। मनुष्योंका संगठन उनके व्यवसायके हितमें, उनकी विशेष स्थितिके हितमें होना चाहिए। संस्थाके रूपमें राजनीतिक समस्याओंको हल करने तथा इस कामके लिए लोगोंको तैयार करने के लिए कांग्रेस तो है ही। उसे मजदूरोंके राजनीतिक अधिकारों और अन्य लोगोंके अधिकारोंकी रक्षा समान रूपसे करनी ही है। सचमुच देखा जाये तो मजदूरोंके राजनीतिक अधिकार दूसरोंके अधिकारोंके विरोधमें नहीं होते और न होने ही चाहिए। अतः कांग्रेसके कार्य-क्षेत्रमें सबकी रक्षा और सबका समावेश हो जाता है। मेरा अनुभव है कि मजदूरोंके संगठनोंमें राजनीतिक उद्देश्यका समावेश कर देने से कार्यकर्त्ताओंके बीच झूठी प्रतियोगिताकी भावना उत्पन्न हो जाती है और मजदूर उनके हाथके मोहरे बन जाते हैं, जिससे मजदूरोंका नुकसान होता है और संगठनका नाम बदनाम होता है। मजदूर भी शायद मित्रताका दावा करके आनेवालों को सन्देहकी दृष्टिसे देखते हैं। जो मजदूरोंकी स्थिति सुधारने के लिए उनका संगठन करते हैं, उन्हें उसकी कला भी आनी चाहिए। बिना योग्यताके, इच्छा-मात्रके बल-पर यदि कोई व्यक्ति संगठन करने चले, तो वह हो ही नहीं सकता।

इन सारी प्रवृत्तियोंमें मैं तो खादी, अस्पृश्यता-निवारण, हरिजन-सेवा, ग्रामोद्योग तथा मद्यपान-निषेधको पहला स्थान दूँगा। मैं ऐसा मानता हूँ कि यदि ये न हों, तो दूसरी प्रवृत्तियाँ बेकार हैं। इस मान्यताको मैं अज्ञानजन्य मानता हूँ कि रचनात्मक कार्य अन्य प्रवृत्तियोंके आश्रयमें ही चल सकते हैं। मेरा मत है कि रचनात्मक कार्यमें दृढ़ता तथा धैर्यपूर्वक जुटे रहने से, उसमें से जो शक्ति उत्पन्न हो सकती है, उसकी बराबरी कोई दूसरी प्रवृत्ति नहीं कर सकती। मैं जानता हूँ कि आम तौरपर इन रचनात्मक कार्योंमें कोई रुचि नहीं लेता। इसके मुझे दो कारण प्रतीत हुए हैं। एक तो यह कि इन कामोंमें गाँवोंसे सम्पर्क करना होता है। हमारे कार्यकर्त्ता शहरोंमें पले-बढ़े होते हैं, अंग्रेजी स्कूलों-कॉलेजोंमें शिक्षा पाये हुए होते हैं, अतः उन्हें गाँव-वालों के जीवनमें कम ही रुचि होती है, वे अपनेको गाँवमें रहने लायक नहीं समझते,

१. अनसूयाबहन साराभाई।

तथा उन्हें गाँववालों के सम्पर्कमें आने की कला नहीं आती। दूसरा कारण है — हमारा आलस्य, और उससे उत्पन्न अज्ञान। खादी आदि रचनात्मक कार्य सतत जागृति, परिश्रम, अध्ययन तथा उद्यम माँगते हैं। इतना देने की हमारी तैयारी नहीं होती; और जब इन महान् कार्योंके प्रति हममें रुचि उत्पन्न नहीं होती, तब अपना दोष देखनेके बदले हम यह मान बैठते हैं कि ये काम ही नीरस हैं। इसको मैं बड़ा भारी दोष मानता हूँ, और इसलिए मेरी यह धारणा बन गई है कि जबतक हम इन कामोंको उचित महत्त्व नही देंगे, तबतक हमारे दूसरे काम पूरी तरह कदापि सफल नही होंगे। और इसीलिए मैं इतने बरसोंके बाद भी इन कार्योंको ही सर्वाधिक महत्त्व देता हूँ।

अब अन्तिम प्रश्न : यदि सारे काम एक ही संस्थाके अधीन चल रहे हों, तो चलते रहें। सारे काम स्वतन्त्र रीतिसे किये जायें, इसमें भी मुझे कोई हानि नजर नही आती। यदि सारे काम एक ही संस्थाके अधीन रहकर किये जायें तो भी प्रत्येक को स्वावलम्बी बनाना चाहिए; और जो कार्यकर्त्ता जिस क्षेत्रको पसन्द करें, उन्हें उस क्षेत्रमें जुटे रहने देना चाहिए।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ८-८-१९३७

२८. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

सेगांव, वर्धा
८ अगस्त, १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

मेहरअलीके भाषण-सम्बन्धी तुम्हारे पत्रके एक मुद्देपर लिखना मैं भूल गया था। मेरा मतलब ग्रीष्म-विद्यालयके कैदियोंकी रिहाईसे सम्बन्धित राजाजी की विज्ञप्ति से है। तुम्हारा पत्र प्राप्त होनेसे पहले मैं उसे पढ़ चुका था, परन्तु उसमें ऐसा कुछ नहीं था जो मुझे बुरा लगे। मैं मानता हूँ कि चूँकि तुमने तो ग्रीष्म-विद्यालयके छात्रोंकी कार्रवाईको पसन्द किया था और मैं किसी भी तरहसे उसका समर्थन नहीं कर सकता था,[1] इसलिए मेरे विचारसे इस बातकी ओर ध्यान दिलाना आवश्यक था कि रिहाईका अर्थ इस कानून-भंगका समर्थन करना नहीं है, और कानून-भंग तो वह था ही। मुझे लगता है कि जब कांग्रेस सत्तामें होगी तब वह भी अक्सर वही भाषा काममें लायेगी जो उसके पहलेके शासक लाया करते थे, फिर भी उसका हेतु दूसरा ही होगा।

१. कोट्टापटम ग्रीष्म-विद्यालय के बारे में जवाहरलाल नेहरूके वक्तव्यके लिए देखिए परिशिष्ट २।

आशा है, बम्बईमें ऑपरेशनके सिलसिलेमें तुम्हारी अच्छी गुजर रही होगी। जब वह हो जाये तो तार देना।

स्नेह।

बापू

[पुनश्च :]

यदि नरीमान तुम्हारे पास आये तो उन्हें जाँच करने की आज्ञा दे देना। मुझे खेद है कि बम्बईमें तुम्हें इस मामलेकी झंझट रहेगी। महादेव तुम्हें बतायेगा कि मैं क्या करता रहा हूँ।

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३७; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय।

२९. पत्र : के० एफ० नरीमानको

वर्धा
८ अगस्त, १९३७

प्रिय नरीमान,

आपका पत्र आज ही मिला। जबतक आपका पूरा साक्ष्य मुझे प्राप्त नहीं हो जाता, मैं श्री ब०[1] को कष्ट नहीं दूंगा। उनसे परामर्श मैं तभी करूँगा जब मेरा निष्कर्ष आपके विरुद्ध होगा और आप उसे स्वीकार नहीं करेंगे। इसमें देर नहीं होनी चाहिए। निश्चय ही आपका पूरा साक्ष्य तैयार ही होगा। १९३४ के चुनावके बारेमें आपके विरुद्ध जो आरोप हैं, उनकी मैं निस्सन्देह जाँच करूँगा। क्या यह बात मैंने स्पष्ट नहीं की थी? जहाँतक गवाहोंके नाम गुप्त रखने का सवाल है, वह आपको मुझपर छोड़ देना चाहिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क० फाइल सं० ७४७-ए, १९३७; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. डी० एन० बहादुरजी।

३०. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

८ अगस्त, १९३७

प्रिय कुमारप्पा,

सभी बीमारियाँ आचरणकी ऐसी गलती मानी जानी चाहिए जो भारतीय दण्ड संहिताके अनुसार दण्डनीय हो! आशा है, तुम जल्दी ही ठीक हो जाओगे। यदि तुम नहीं आ सकते तो मैं बहसमें तुम्हारे विपुल योगदानके अभावके लिए अपना मन तैयार कर लूँगा।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१२८)से।

३१. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

सेगाँव
८ अगस्त, १९३७

चि० कान्ति,

मैंने तुझे जालिम कहा सो कुछ गलत नहीं कहा। एक दिन तू अमतुस्सलामकी पूजा करता था, तब भी यह उसपर जुल्म करना ही था। अब पूजाका भाव नहीं है और एक प्रकारका तिरस्कार मनमें उत्पन्न हो गया है, तो यह भी जुल्म है। रामचन्द्रनके विशेष आग्रहके कारण उसने तार किया था; पापम्मा और सरस्वतीका भी आग्रह था, इसीलिए तो वह वहाँ गई है। वहाँ उसे कुछ शान्ति मिल रही है। और अब तू चाहता है कि मैं उसे वहाँसे बुला लूँ। इसलिए मैंने उसे आ जाने के लिए पत्र[1] और तार[2] भी दिया है। इसका कारण तू है, यह मैंने उसे नहीं बताया। मैंने कोई कारण ही नहीं बताया। उसके यहाँ लौट आने पर यदि आवश्यकता महसूस हुई तो कह दूँगा। मैंने यह उलाहने के रूपमें नहीं लिखा, बल्कि तेरा ध्यान तेरी ज्यादतीकी ओर आकर्षित करने के लिए लिखा है। मैंने तो उसे प्रसन्न होकर बुला लिया है। सरस्वतीका क्या हाल है? वह यहाँ आने के लिए व्याकुल हो रही है। रामचन्द्रनकी इच्छा है कि वह तीन वर्षतक न आये। खुद तेरी क्या इच्छा है?

१. देखिए पृ० १५।
२. देखिए पृ० २१।

हिसाबका कागज वापस भेज रहा हूँ; अच्छा है। लोभमें पड़कर अपने स्वास्थ्यको खतरेमें बिलकुल मत डालना।

मैं एक दिनके लिए दिल्ली हो आया। जिस दिन गया, उसी दिन वापस लौट आया। वाइसरायको विशेष बात नहीं करनी थी। केवल परिचय कर लेना चाहते थे। मुझे तो खान साहेबके बारेमें बात करनी थी, और वह मैंने की।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मेरी तबीयत अच्छी है। तू पास होकर प्रवीण हो जाये, और शादी कर ले, तबतक जीने की इच्छा तो करता हूँ, लेकिन जीवन-मरणकी डोरी अपने हाथमें है ही कहाँ ?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३२९)से; सौजन्य : कान्तिलाल गांधी

३२. पत्र : महादेव देसाईको

८ अगस्त, १९३७

चि० महादेव,

मुझे लगता है कि तुम्हें एक दिनके लिए धूलिया भेजना पड़ेगा। झटपट तैयार हो जाना। इस पत्रके साथ मैं तुम्हारा लेख भेज रहा हूँ। खादी-सम्बन्धी अनुच्छेद निकाल दिया है। कारण तुम समझ लोगे। न समझ पाओ तो फुरसतके वक्त पूछ लेना।

पत्रोंके जवाब तो न जाने कब लिखे जायेंगे। नरीमान-सम्बन्धी पत्र-व्यवहार जवाहरको भेज देना। या फिर संक्षेपमें सार लिख देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५४५)से।

३३. पत्र : मीराबहनको

सेगांव, वर्धा
९ अगस्त, १९३७

चि० मीरा,

तुम्हारा चिन्ताजनक पत्र मिला। अगर तुम्हारा मन वहाँ नहीं लग रहा है तो २४ तारीख तक भी तुम्हें वहाँ रुकने की जरूरत नहीं है। अगर वहाँ सुखी न रहने पर भी सिर्फ इसलिए वहाँ रुकी रहती हो कि यह दूसरोंके द्वारा थोपा गया तुम्हारा कर्त्तव्य है तो यह चीज निश्चित रूपसे तुम्हारे लिए नुकसानदेह है। तुमने बार-बार कोशिश करके देख ली है और हर बार नाकामयाब रही हो। इसलिए तुम्हारी मर्जी तुम्हें चाहे जहाँ ले जाये, तुम्हें तो उसीके मुताबिक ही चलना है। और अगर तुम्हारे अपनी मर्जीके मुताबिक चलने से गलतियाँ होनी ही हैं तो तुम ऐसी गलतियाँ करके ही कुछ सीखोगी। मद्यपानसे सम्बन्धित एक कहावतमें कुछ फेर-बदल करके कहूँ तो कहूँगा कि तुम सिर्फ मजबूरीमें ही सही काम करो, इसके बजाय मैं यह चाहूँगा कि तुम हमेशा गलती ही करती रहो। गलतियाँ करके तो अपना विकास कर सकती हो, लेकिन मजबूरीमें रहकर कभी नहीं। इसलिए तुम चाहो तो अपनी तय की हुई तारीख (२४ अगस्त) से पहले भी आ सकती हो। और मेरी ओरसे तो तुम्हें यह पत्र पाते ही आ जाने की भी छूट है। मुझे खराब नहीं लगेगा। बल्कि यह सोचकर मुझे अच्छा ही लगेगा कि तुमने पूरी स्वतन्त्रताके साथ फैसला किया।[१]

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३९६) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९८६२ से भी।

१. बापूज लेटर्स टु मीरा में मीराबहनने स्थिति को स्पष्ट करते हुए कहा है : "मैं फिर उसी अन्तर्द्वन्द्वसे ग्रस्त हो गई थी, फलतः सेवाग्राम लौट आई।"

३४. पत्र : महादेव देसाईको

९ अगस्त, १९३७

चि० महादेव,

इस पत्रके साथ किशोरलालके लेख[1] को संक्षिप्त करवाकर भेज रहा हूँ। इसे राजकुमारीने संक्षिप्त किया है। लगता है, ठीक किया है। फिर भी तुम एक नजर डाल लेना। यदि ऐसा लगे कि महत्त्वकी कोई बात छूट गई है तो जोड़ देना। मैं समझता हूँ, मूल लेख किशोरलालको भेज देना अच्छा होगा। मूल लेखमें से एक उद्धरणकी नकल उतारना रह गया है, सो देख लेना। यानी इसके लिए भी वहाँ मूलकी जरूरत होगी। मैं अपना लेख जानबाके साथ या जो आयेगा, उसके साथ भेजूंगा। मैं दो बजे तैयार हो जाऊँगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

आशा है, फोड़ा अब बेहतर होगा।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५४६) से।

३५. पत्र : महादेव देसाईको

सेगाँव
९ अगस्त, १९३७

चि० महादेव,

यह रहा मेरा लेख। इसकी एक साफ नकल साथमें है, और मूल तो है ही। साफ नकल तुम आज ही पूना भेज सकते हो। और तो शायद अब तुम्हें कुछ नहीं चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५४७) से।

१. "द प्रॉब्लेम ऑफ नेशनल फण्ड्स" (राष्ट्रीय निधिकी समस्या), जो **हरिजन**, १४-८-१९३७ के अंक में प्रकाशित हुआ था।

३६. पत्र : जयन्ती एन० पारेखको

सेगाँव, वर्धा
९ अगस्त, १९३७

चि० जयन्ती,

तेरा पत्र मिला। यदि दिनकर अच्छा हो तो उसे साथका पत्र[1] दे देना। जन-सेवकोंको बीमार पड़ना ही नहीं चाहिए।

प्रान्तीय समितिके सुधारके बारेमें तू क्या कहना चाहता है, मेरी समझमें नहीं आया। मुझे नियमोंकी एक प्रति तो भेज देना। यों मैं पूछताछ तो कर ही रहा हूँ।

तुम तीनों भाई[2] मिल गये हो, यह मुझे बहुत अच्छा लगा।

इन्दु किसी काममें लग जाये तो कितना अच्छा हो?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२६४) से।

३७. पत्र : छगनलाल जोशीको

सेगाँव, वर्धा
१० अगस्त, १९३७

चि० छगनलाल,

तुम्हारा लम्बा पत्र मिला। देखूंगा कि समस्या कैसे सुलझाई जा सकती है। जब समयका अभाव हो, स्थानका अभाव हो, ऐसी स्थितिमें कुछ बातोंको महत्त्वकी होते हुए भी, एक ओर छोड़ देना पड़ता है।

विमुसे[3] कहना कि मुझे लिखे अपने पत्रमें उसने सूत्र-यज्ञमें २५,००० तार सूतका वचन देनेमें आगा-पीछा किया था और मेरी सलाह पूछी थी। किन्तु मेरे पास छपे हुए नामोंकी सूची है। उसमें मैं ५१,००० तार उसके नामके आगे लिखा देखता हूँ। कहीं १५ का ५१ तो नहीं छप गया? यदि ऐसा नहीं है, तो २५ हजारका दूना कर देने की हिम्मत उसमें कहाँसे आ गई? अथवा खुद अपने तय किये हुए १७ हजारका तिगुन करने की हिम्मत कैसे हुई? और अगर इतनी हिम्मत आई तो

१. यह उपलब्ध नहीं है।
२. जयन्ती पारेख, इन्दु और कान्ति।
३. विमला; छगनलाल जोशीकी पुत्री।

१७ का चौगुना करके ६८ हजार तक क्यों नहीं पहुँची? यदि ऐसा करने पर भी निन्दक बाबा-गण उसे मूर्तिपूजक मानें, तो भले माना करें। उसे तो इसे आशीर्वादके रूपमें स्वीकार करना चाहिए। ६८ दिनमें ६८,००० तार कातना विमु-जैसी लड़कीके लिए कोई बड़ी कठिन चीज नहीं है। हमारे यहाँके हिसाबसे रोज १,००० तार कातने में ३ घंटेसे कम लगेंगे, क्योंकि प्रति घंटा ४०० तारकी गति यहाँ सामान्य मानी गई है। लेकिन मान लो कि ४ घंटे लगें, तो भी मैं उसे कोई बड़ी मेहनतका काम नहीं मानूँगा। फिर, यदि कोई यह काम उल्लासपूर्वक करे, तो उसमें अपने काममें तन्मय हो जाने की शक्ति और अनेक काम निबटाने की योग्यता अपने-आप आ जायेगी।

[खादी-शास्त्र] प्रवेशिकाका काम हाथमें लेते हुए नारणदासको संकोच हो रहा है; मुझे इस संकोचका कोई कारण नहीं मालूम होता। फिर भी मैं सोचता हूँ कि यदि तुम इस काममें उसके साथ हो जाओ, तो यह काम जल्दी ही हो जायेगा। जिसका अधिकतर प्रक्रियाओंपर अधिकार हो उसके लिए प्रक्रियाओंका तथा उनमें प्रयुक्त होनेवाले आवश्यक औजारोंका यथारीति वर्णन करना आसान है। यदि तुमने विषयका ऐतिहासिक पहलू न पढ़ा हो, तो पढ़ लेना चाहिए। सभी पहलुओंका समावेश करके यदि विधिवत् एक भी पुस्तिका लिख जाये, तो उसके आधारपर भविष्यमें आगेका और काम भी सहज ही हो सकेगा। देखना . . .[1]।

तुम, थोड़े दिनोंके लिए ही सही, यहाँ रह गये, यह अच्छा हुआ। रामेश्वरी-देवीका कार्यक्रम दससे पन्द्रह दिनतक का बनाया जा सकेगा। जिस तारीखको वे वहाँ पहुचे, उस तारीखसे गिना जाये तो इतना काफी होगा। उनसे हरिजन-सम्बन्धी तथा खादी-सम्बन्धी बहुत काम लिया जा सकेगा। वह बड़ी कुशल, गम्भीर, विचार-शील तथा अनुभवी महिला है। फिर, शुभ भावनाओंसे भरी हुई है। तुमने तो उसे यहाँ देखा ही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५४३) से।

१. साधन-सूत्रके अनुसार।

३८. पत्र : नारणदास गांधीको

सेगांव, वर्धा
१० अगस्त, १९३७

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। कन्हैयाके बारेमें चिन्ताका तो कोई कारण हो ही नहीं सकता। जरूरी यह है कि उसकी देखभाल की जाये, उसका मार्गदर्शन किया जाये, तथा उसके मनमे उठनेवाली हजारों विचार-तरंगोंको समझकर उसे शान्त किया जाये। इसके सिवा इस सम्बन्धमें और कुछ करने की जरूरत नही है, क्योंकि उसका मन टेढ़ा-मेढ़ा नही चलता। उसके मनमें चोर नहीं है, कुछ छिपाने की इच्छा बिल्कुल नहीं है। साथ ही जिन्हें वह बड़ा मानता है, उनके प्रति वह श्रद्धा रखता है, इसलिए उसका मार्गदर्शन करने में भी कोई अड़चन नहीं होती। हाँ, यह सच है कि यदि उसे ऐसा काम दिया जाये जो उसकी समझमें न आता हो, और कोई उसकी परवाह न करे तो जरूर वह खोया-खोया-सा हो जाता है। लेकिन इस समय तो मेरे पास ढेरों काम पड़ा हुआ है। टाइप और नकल करने का इतना अधिक काम करने को पड़ा है कि वह टाइप करते-करते ही थक जाता है, नकल करते-करते उसकी उंगलियां अकड़ जाती हैं। फिर कताईका काम तो है ही। मैंने उससे हिन्दी और अंग्रेजीका अध्ययन करने को कहा है। सिखाने के लिए प्यारेलाल-जैसे उस्ताद हैं। नानाबटीका मधुर संगीत जी-भरकर सुनता ही रहता है, और ऐसा करते हुए जितना कुछ ग्रहण कर सकता है उतना करता है। इसके अतिरिक्त मेरे पास अनेक लोग आते रहते हैं। उनकी वाते सुनकर भी जितना ज्ञान वह प्राप्त कर सकता है, करता है। इसलिए वह विना कामके जंग खा रहा है, अथवा कोई उसकी परवाह नहीं करता, ऐसा तो उसे कभी नहीं लग सकता। इसलिए तुम निश्चिन्त रहना और जबतक उसकी खुदकी इच्छा न हो, तबतक तुम या जमना[1] उसे वहांसे मत बुलाना। इतना हुआ तो फिर कोई अड़चन नहीं होगी।

लीलावती अपनी ही लापरवाहीके कारण पसलियोंका दर्द भोग रही है। उसका तकिया बनाकर मै यह पत्र लिखा रहा हूँ। वह सुन रही है और कह रही है कि राजकोट अथवा कहीं भी जाने की न तो उसकी इच्छा होती है और न हिम्मत है। इसलिए फिलहाल तो उसे भूल ही जाओ। जब उसकी खुद की इच्छा वहाँ आने की होगी तब मै उसे रोकूँगा नहीं। नरोत्तमकी[2] मत्यु जितनी दुःखद है, उतनी ही आनन्द-

१. नारणदास गांधीकी पत्नी।

२. राष्ट्रीय शालाका एक छात्र, जिसका मोतीझरा से देहान्त हो गया था। उसने एक लाख तार कातने का संकल्प किया था।

प्रद भी है। ऐसी मृत्यु तो किसी भी नवयुवकको शोभान्वित कर सकती है। क्योंकि इतनी नन्हीं उम्रमें भी अनेक शुभ संकल्पोंके साथ जो मृत्युके मुखमें प्रवेश करते हैं, उनकी सद्गति ही होती है और वे मरकर भी अपने उदाहरणके माध्यमसे जीवित ही रहते हैं। उसके पिताको मेरी ओरसे सहानुभूति जताना और उन्हें यह पत्र पढ़ने को भी दे देना। साथ ही ऐसा पुत्र पाने के लिए उन्हें मेरी ओरसे बधाई भी देना।

तुम्हारा भेजा हुआ लेख[1] थोड़ा परिवर्तन करके 'हरिजनबन्धु' के लिए भिजवाया है।

छगनलालका पत्र पढ़कर उसे दे देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५३५ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

३९. पत्र : नारणदास गांधीको

१० अगस्त, १९३७

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला।

यदि तुम्हारे लिए 'खादी-शास्त्र प्रवेशिका' लिखना सम्भव न हो, तो उसका विचार छोड़ देना। किन्तु इस काममें यदि तुम्हारा दिमाग न चलता हो तो हो सकता है, यह तद्विषयक किसी कमी का सूचक हो।

जयन्तीलालने जो दो लकीरें लिखकर भेजी हैं, वे मुझे सन्तोषजनक नहीं लगीं। मेरे मनपर कुछ ऐसी छाप पड़ी है कि शायद वह उसने बाध्य होकर लिखी है। तुम्हारे साथ उसका जो विचार-विमर्श हुआ था, उससे उसकी बुद्धिको प्रकाश मिला हो, ऐसा नहीं लगता। यानी, वह समझता है कि वहाँ हो रहे कताई आदि कामोंका उपयोग, बौद्धिक विकासके साधनके रूपमें नहीं किया जाता; बल्कि बौद्धिक प्रशिक्षण के साथ-साथ औद्योगिक प्रशिक्षणके रूपमें किया जाता है। इन दो में जो भेद है, आया है, उसे तुम समझते हो। एक बढ़ई मुझे बढ़ईका काम सिखाये और मैं वह काम यन्त्रवत् सीख लूँ तो उससे मेरा हाथ बढ़ईगिरीके औजारोंपर बैठ जायेगा; लेकिन उससे मेरा बौद्धिक विकास नहींके बराबर होगा। लेकिन यदि बढ़ईगिरीका कोई विशेषज्ञ मुझे वह काम सिखाये, तो उसके द्वारा मेरी बुद्धिका पूरा-पूरा विकास होगा। यानी मैं उम्दा बढ़ई तो हो ही जाऊँगा, साथ ही सामान्य यन्त्र-शास्त्र भी समझने लगूँगा; क्योंकि बढ़ईका काम सिखाते हुए वह मेरी भाषाका परिष्कार भी करेगा, उसे सजायेगा-सँवारेगा। मुझे लकड़ीका इतिहास बतायेगा। मुझे इस बातकी

१. **हरिजनबन्धु**, १५-८-१९३७ में प्रकाशित "राजकोट राष्ट्रीय शालामां रेंटिया बारस"।

जानकारी देगा कि लकड़ी कहाँ पैदा होती है और किस प्रकार पैदा होती है। और यह बताते हुए वह मुझे भूगोलका ज्ञान भी दे पायेगा। थोड़ा-बहुत खेतीका ज्ञान भी करा देगा। मुझे अपने औजारोंके चित्र बनाना सिखायेगा। और बढ़ईगिरीका अर्थशास्त्र सिखाते हुए अंकगणित तथा ज्यामितिका ज्ञान भी करायेगा। यह सब तो एक वर्षसे लगाकर सात वर्षतक का अभ्यास-क्रम बन सकता है। यह सम्भव है कि तुम जो कताई आदि का काम सिखाते हो, उसका सम्बन्ध बौद्धिक विकासके साथ नहीं जोड़ते। तुम शायद अक्षर-ज्ञान, वाचन आदिको ही बौद्धिक विकासका साधन मानते हो। यदि ऐसा न होता तो 'प्रवेशिका'-जैसी पुस्तिका लिखना तुम्हारे लिए बायें हाथका खेल होना चाहिए। ये सारे विचार जो मैं इस पत्रमें व्यक्त कर रहा हूँ, इस रूपमें मैंने पहले के पत्रोंमें व्यक्त नहीं किये, यह मैं जानता हूँ। लेकिन आजकल जो विचार मेरे मनमें उठ रहे हैं, उन्हें मैं 'हरिजन'के द्वारा व्यक्त कर रहा हूँ, और उनमें इस विचार का स्थान पहला है। मैंने स्वयं भी अभीतक यही कहा था कि बौद्धिक शिक्षणके साथ औद्योगिक शिक्षण भी होना चाहिए, तथा राष्ट्रीय शिक्षणमें इसका प्रमुख स्थान होना चाहिए; जबकि अब मैं यह कह रहा हूँ कि औद्योगिक शिक्षणको बौद्धिक विकासका जबर्दस्त साधन बनाना चाहिए। बुद्धिका अपव्यय हो रहा है, और इस कारण स्कूलोंसे निकलनेवाले हजारों नवयुवक मुंशीगिरीके सिवा और कुछ नहीं कर पाते। मेरे विचारसे यह बुद्धिके विकासका सूचक नहीं, बल्कि बुद्धिके अपव्ययका सूचक हैं। सच्ची शिक्षा वही होती है जो आध्यात्मिक, बौद्धिक तथा आर्थिक तीनों शक्तियों का एक साथ विकास करे। स्कूलसे निकलनेवाले युवककी 'अब मैं क्या करूँ,' ऐसी स्थिति नहीं होनी चाहिए। उसकी शिक्षा तो उसकी जीविकाका एक प्रकारका बीमा होना चाहिए। यह सब तुम्हारे विचार करने के लिए लिखा गया है। यदि मेरी बात तुम्हारी समझमें आ गई हो, तो अब तुम्हें कातने की कलाकी परीक्षा एक नये दृष्टिकोणसे करनी पड़ेगी, और उसे सिखाने के लिए भी नई पद्धतिका आविष्कार करना होगा। अभी-अभी 'हरिजन'में मैंने जो-कुछ लिखा है,[1] उसे इस दृष्टिसे फिर पढ़ जाना।

शंकरनका किस्सा दुःखद है। मैं उसे पत्र तो लिख ही रहा हूँ। तुम्हें तो फिलहाल कुछ नहीं करना है।

कमलाकी माँके लिए मैं यहाँसे प्रबन्ध करूँगा।

कुसुमीका कामकाज कैसा चल रहा है?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

इसके किसी भी अंशको मैं फिरसे देख नहीं पाया हूँ।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५३४ से भी; सौजन्य : नारणदास गाधी

१. देखिए खण्ड ६५, पृ० ३७४-७५ और ४८४-९०।

४०. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेगाँव, वर्धा
१० अगस्त, १९३७

भाई वल्लभभाई,

यह पुर्जा 'सियासत'वाले सैयद साहब तुमको देंगे। इनके पास डॉ० नत्यगालकी[1] चार चिट्ठियाँ थीं। उनमें से एक तुम्हारे लिए है। मैंने उनसे कह दिया कि मुझसे तो कुछ हो नहीं सकेगा, आप सरदारके पास जाइए, वे आपकी बात ध्यानसे सुनेंगे; और उनको बात जँच गई तो शायद मदद भी दिला सकें। सबकुछ सुनकर जो उचित हो सो करना।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
पुरुषोत्तम बिल्डिंग
ऑपेरा हाउसके सामने
बम्बई ४

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २०९

४१. पत्र : महादेव देसाईको

[१० अगस्त, १९३७ के आसपास][2]

चि० महादेव,

उस जर्मन को कड़ा पत्र लिखना। उससे सार्वजनिक रूपसे माफीकी माँग की जानी चाहिए। वह अपना कथन दुरुस्त कर ले तो काफी होगा।

तुम्हें धूलिया बुधवार तक तो नहीं ही भेजना है, और भेजूंगा तभी जब तुम राजी हो जाओगे। कल मिलेंगे, तब दो मिनट इसकी भी चर्चा कर लेंगे।

भरूचाको तार करना :

१. पंजाब के प्रसिद्ध नेता।
२. एस० एन० रजिस्टर से।

"भरूचा, महेन्द्र मैन्शन, फोर्ट, बम्बई। बुधवारको सवेरे नौ बजे आधे घंटेके लिए आओ। बाकी पूरे दिन अन्यथा व्यस्त। गांधी।"

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

आज 'हरिजन' के लिए अभी तो जो सामग्री तैयार है, वही भेज सकता हूँ। दो-एक कालमकी सामग्री कल भेज सकता हूँ न?

गुजराती की फोटो-नकल (एस० एन० ११५४८) से।

४२. तार : अमतुस्सलामको

वर्धागंज
११ अगस्त, १९३७

अमतुस्सलाम
मार्फत 'हरिजन'
त्रिवेन्द्रम

जबतक अच्छा लगे और इलाज कराती रहो, वहीं रहो।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०५) से।

४३. पत्र : महादेव देसाईको

[११ अगस्त, १९३७][1]

चि० महादेव,

जानबा अभी नहीं आया। लेकिन जो तैयार है, सो भेज रहा हूँ। साथ में मोहनलालका चेक भी है। यह पैसा हरिजन-कार्यके खातेमें जमा करना।

भणसाली[2] वहाँ पहुँचे होंगे। उनके साथ भी सामग्री भेजी है।

[साथका कागज] अ[मतुस]स[लाम]को भेज देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५४९) से।

१. अमतुस्सलाम को भेजे जानेवाले उस तार के उल्लेखसे जो इस पत्र के साथ नत्थी था; देखिए पिछला शीर्षक।

२. जयकृष्णदास प्रभुदास भणसाली।

४४. पत्र : ग० वा० मावलंकरको

सेगाँव, वर्धा
११ अगस्त, १९३७

भाईश्री मावलंकर,

आपका पत्र मिला। आपके ऊपर सचमुच बड़ी जिम्मेदारी[1] आ गई है। लेकिन मुझे विश्वास है कि आप उसे ठीक निबाह सकेंगे और अपने पदकी शोभा बढ़ायेंगे।

अभी तो हरिजन आश्रमके ट्रस्टी बने ही रहिए। इससे शायद भिक्षा माँगने की आपकी शक्ति बढ़ेगी। मुझे जो ठीक लगे, वह मैं लिखता रहूँ, यही ठीक माना जायेगा न? लेकिन उसमें से जितना आप सब ग्रहण कर सकें, करें; इससे अधिकको आशा मैं क्यों करूँ?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२४७) से।

४५. बातचीत : डी० के० मेहता[2] और पी० बी० गोलेसे

सेगाँव
११/१२ अगस्त, १९३७

ऐसा समझा जाता है कि बातचीतका विषय भूमिकर और आबकारी-सम्बन्धी नीतियाँ थीं। गांधीजी को बताया गया कि भूमिकरमें एक-सी कमी करने की नीति अवांछनीय है, क्योंकि कुछ ऐसे क्षेत्र हैं जहाँ बहुत कड़ा लगान लगाया गया है और स्वभावतः इन्हें तत्काल राहतकी जरूरत है, लेकिन कुछ ऐसे इलाके हैं जहाँ लगान इतना कम है कि और कमी करना उचित नहीं होगा।

समझा जाता है, आबकारी-नीतिके सम्बन्धमें गांधीजी ने मन्त्रियोंको यह समझाया कि कांग्रेस-शासित छहों प्रान्तोंमें इस विषयमें एक-सी नीति होनी चाहिए और सम्पूर्ण मद्य-निषेध कांग्रेस मन्त्रिमण्डलोंका लक्ष्य होना चाहिए। यह लक्ष्य वर्त्तमान मन्त्रि-मण्डलोंके कार्यकालमें ही प्राप्त किया जाना चाहिए। इससे राजस्वमें जो कमी हो सकती है वह खर्चेमें भारी किफायत करके पूरी की जा सकती है और अगर जरूरत

१. आशय बम्बई विधान सभा की अध्यक्षता से है।
२. मध्यप्रान्त के वित्त-मन्त्री।

पड़े तो कांग्रेसी मन्त्रियोंको नये कर लगाने की स्थितिका सामना करने के लिए भी तैयार रहना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हितवाद, १३-८-१९३७

४६. वक्तव्य : वाइसरायसे भेंटके[1] बारेमें

१२ अगस्त, १९३७

मैंने 'बॉम्बे सेंटिनल'में[2] प्रकाशित वह विवरण पढ़ लिया है जिसे दिल्लीवाली भेंटके चौंकानेवाले तथ्योंका उद्घाटन कहा गया है। वह शुरूसे आखिर तक विशुद्ध मनगढ़न्त चीज है।

जैसाकि वाइसरायके पत्रमें बताया गया है, भेंटका उद्देश्य इसके सिवा और कुछ नहीं था कि वे मेरे साथ सज्जनोचित सम्पर्क स्थापित करना चाहते थे। इसलिए खान साहबके अपने ही प्रान्तमें प्रवेश करने पर लगे हुए प्रतिबन्धके उठाये जाने का जिक्र करने और उस प्रान्तका दौरा करने की अपनी इच्छाके विषयमें सरकारके मंशाको समझने की कोशिश करने के अतिरिक्त और किसी मामले की चर्चा करने में मैं प्रयत्नपूर्वक बचता रहा।

बाकी सारी बातचीत लगभग सामान्य किस्मकी थी। 'संघ' शब्दका तो भेंटमें उल्लेख तक नहीं हुआ।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १३-८-१९३७

४७. पत्र : नारणदास गांधीको

सेगाँव, वर्धा
१२ अगस्त, १९३७

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। परसों ही मैंने तुम्हें पत्र लिखा है, इसलिए यह पत्र लिखने का कोई विशेष प्रयोजन तो नहीं है। हाँ, एक बात है: तुम कमलाबाईके लिए पाँच-दस रुपये भेजने की बात लिखते हो, लेकिन उसकी माँग पाँच रुपयेकी ही है। इसलिए हमें उसे पाँच रुपये ही भेजने हैं। ये रुपये कैसे भेजे जायेंगे, इसका विचार तुम कर लेना। पैसे भेजने में खर्च नहीं होना चाहिए। जीवनलालकी पेढ़ी तो

१. गांधीजी वाइसरायसे ४ अगस्त को मिले थे; देखिए पृ० १४।
२. तारीख १०-८-१९३७ का।

मद्रासमें है ही। उसके साथ व्यवस्था करके तुम पैसा राजकोटमें जमा कर सकते हो। यदि ऐसी कोई व्यवस्था न कर सको तो मुझे लिखना। पैसे कहाँ देने हैं, यह कमलाबाईसे पूछना।

कन्हैया तो मेरे पास ही सुव्यवस्थित हो गया है। वह कहता है, "अब मैं निश्चिन्त हूँ।" इसलिए उसके बारेमें चिन्ता करने की कोई जरूरत नहीं है।

लीलावती की तबीयत तो ऐसी ही चलेगी, धीरे-धीरे रास्तेपर आयेगी।

मीराबहनका आखिरी पैसा कब आया था? अब शायद नियमसे नहीं आता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५३६ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

४८. पत्र : भगवानजी अनूपचन्द मेहताको

सेगाँव, वर्धा
१२ अगस्त, १९३७

भाई भगवानजी,

तुमने अपने कुटुम्बकी स्थितिका कितना दुःखद वर्णन किया है? बावजूद इसके तुम अगर खुद अकेले ही पूर्ण त्यागके आचरणका उदाहरण प्रस्तुत कर सको, तो मुझे विश्वास है कि इस टूटती हुई नावको जोड़ सकोगे।

मुझसे माफी माँगने की कोई जरूरत ही नहीं है। मेरी सदा यही इच्छा रहेगी कि तुम्हारा यानी करसनजीके पूरे कुटुम्बका कल्याण हो; और इस परिवारका नाम फिरसे पहलेके समान उज्ज्वल हो जाये और तुम इसमें निमित्त बनो।

मो० क० गांधीके वन्देमातरम्

भगवानजी अनूपचन्द, वकील, बी० ए०, एल-एल० बी०
राजकोट सदर
काठियावाड़

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८३६) से। सी० डब्ल्यू० ३०५९ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

४९. पत्र : आर० एस० निम्बकरको[1]

[१३ अगस्त, १९३७ के पूर्व][2]

जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मैं गतिरोध पैदा नहीं करूँगा, बल्कि जब वे मुझपर लादे जायेंगे तब उत्साहके साथ उनका सामना करूँगा। यदि मैं अधिनियमको समाप्त करने की कोशिश करूँ तो यह नहीं कहा जा सकता कि मैं उसे कार्यान्वित कर रहा हूँ। विधान-सभामें जाकर उससे जो भी लाभ उठा सकता हूँ वह यदि न उठाऊँ और अपनी स्थितिकी जड़ें जमाकर उसे मजबूत न करूँ तो यह मेरी मूर्खता होगी।

श्री गांधीने श्री निम्बकरको सूचित किया है कि उनके द्वारा उठाये मुद्दोंका निपटारा कार्य-समितिका काम है; और उनका [श्री गांधीका] खयाल है कि ये मुद्दे समितिके समक्ष विचारके लिए जा चुके हैं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १३-८-१९३७

५०. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

वर्धा

१३ अगस्त, १९३७

नरीमान-काण्डमें अपनी भूमिकाका मैंने एक ऐसा विवरण देखा है जो तोड़-मरोड़कर पेश किया गया लगता है। इसको लेकर जो विषैला आन्दोलन चल रहा है उससे मुझे गहरी व्यथा पहुँची है। मेरे लिए सबसे अच्छा यही है कि मैं यहाँ श्री नरीमानके नाम अपने १ अगस्तके पत्रके कुछ उद्धरण रखूँ :[3]

तबसे उनके और मेरे बीच कुछ और पत्र-व्यवहार हुआ है। आज ही मिले उनके एक तारमें बताया गया है कि दोनों मामलोंमें वे अपना साक्ष्य पाँच दिनमें तैयार कर रखेंगे। जो कार्य मैंने अपने जिम्मे लिया है, उसमें अपनेको लगाने में मैं

१. एक मजदूर नेता, जिन्होंने गांधीजी को एक पत्र लिखा था, जिसमें उन्होंने उनका ध्यान "राजनीतिक कैदियों के रिहा न किये जाने की ओर तथा श्रमिकोंसे सम्बन्धित कानून बनाने और कुछ समय बाद गतिरोध पैदा करने की आवश्यकता की ओर" खींचा था।

२. यह पत्र "बम्बई, १३ अगस्त" की तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

३. उद्धरण यहाँ नहीं दिये जा रहे हैं; पाठके लिए देखिए पृ० १-२।

जरा भी देर नहीं करूँगा। इस मामलेमें मैंने बहादुरजीको अभीतक कोई कष्ट नहीं दिया है। परन्तु यदि मेरे निष्कर्ष श्री नरीमानके विरुद्ध रहे और वे उससे सन्तुष्ट नहीं हुए, तो मैं तुरन्त ही बहादुरजीसे प्रार्थना करूँगा कि वे मेरे सामने रखे गये साक्ष्य और मेरे निष्कर्षोंपर पुनर्विचार करें।

यह सुझाया गया है कि जो-कुछ मैंने अब किया है, वह तभी किया जा सकता था जब यह दुर्भाग्यपूर्ण विवाद खड़ा हुआ था। उनके और मेरे बीच जो पत्र-व्यवहार हुआ है, उस सबको प्रकाशित करने को तो मैं अभी स्वतन्त्र नहीं हूँ। पर इतना मैं कह सकता हूँ और उसे उन्होंने खुद स्वीकार किया है कि मैं सदा इस बातके लिए तैयार था कि यदि उनकी वैसी इच्छा हो तो इसकी स्वतन्त्र रूपसे जाँच होनी चाहिए। इसलिए जो-कुछ हुआ उसका कारण यह नहीं था कि मैं उदासीन था या सहायता करने को तैयार नहीं था। यदि मैं अभीतक चुप रहा हूँ, तो मेरी चुप्पी केवल श्री नरीमानके ही हितको ध्यानमें रखते हुए थी। यह बात उस पत्र-व्यवहारसे अच्छी तरह सिद्ध हो सकती है जिसका ऊपर जिक्र किया गया है।

बम्बईके समाचार-पत्रोंसे मेरी यह अपील है कि वे इस आन्दोलनको बिलकुल बन्द कर दें और सर्वसाधारणसे यह अनुरोध है कि जबतक उनके सामने निष्कर्ष न आ जायें, वे इस सम्बन्धमें अपनी कोई धारणा न बनायें।[1]

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १४-८-१९३७

५१. पत्र : विट्ठलदास वी० जेराजाणीको

सेगाँव, वर्धा
१३ अगस्त, १९३७

भाई विट्ठलदास,

तुम्हारे तीन पत्र मिले। लेसके बारेमें जैसी तुम लिख रहे हो, वैसी आलोचना राजकुमारीने मुझसे की हो, इस बातकी मुझे याद नहीं है। अभी तो सवेरेके चार बजे हैं। वह सो रही है। बादमें उससे पूछूंगा। वह तो हमेशा मुझसे पंजाबके

१. **सरदार वल्लभभाई पटेल,** खण्ड–२, पृ० २४२-४३ पर नरहरि परीख इसके स्पष्टीकरण में लिखते हैं : "१४ अगस्तको श्री नरीमानने तार भेजकर गांधीजी से प्रार्थना की कि मुझे इसके जवाबमें वक्तव्य देने की अनुमति दी जाये। गांधीजी को निश्चय ही इसमें कोई आपत्ति नहीं थी, पर नरीमानके ही हितको ध्यान में रखते हुए उन्होंने उन्हें [नरीमानको] ऐसा न करने की सलाह दी। नरीमानने गांधीजी के नाम १५ अगस्तके अपने लम्बे पत्रमें लिखा कि यह आश्चर्यकी बात है कि आपने मुझसे सरदार और जनता आदिसे क्षमा माँगने की माँग की है, क्योंकि वह मुझे असंगत और अनावश्यक लगती है। उन्होंने कहा, मैं जानता हूँ कि मेरे क्षमा माँगने और अपराध स्वीकार करने का कोई कारण नहीं है।"

खादी-विभागकी शिकायत करती है। यानी उसने तुम्हारे विभागकी शिकायत मुझसे नहीं की है।

गोसीबहनको[1] मैंने छूट दे दी है, और यह मुझे अब भी ठीक ही लगता है। कशीदेके कामकी बात कपड़े सीनेके लिए विदेशी धागा काममें लाने-जैसी ही है। जब वह आठ आनेकी खादीका, उसपर काम करने के बाद, ढाई रुपया लेती है, तब वे अतिरिक्त दो रुपये विदेशी धागेके नहीं दिये जाते, बल्कि बहनोंकी कलाके दिये जाते हैं, और इसीलिए मैंने गोसीबहनको छूट दी है। जो प्रतिबन्ध हमने निश्चित किये हैं, उनमें कहीं भी इस मुक्तिके कारण हर्ज नहीं होता; क्योंकि यह तो तुम भी स्वीकार करते हो कि जो धागा ये बहनें काममें लाती हैं, ठीक वैसा धागा हम उन्हें नहीं दे सकते। इसलिए मुझे तो लगता है कि यह छूट न दें तो हम खादीको नुकसान पहुँचाते हैं। जिन विदेशी वस्तुओंका उपयोग करके हम किसीको नुकसान नहीं पहुँचाते तथा जिनके उपयोगसे देशका लाभ ही होता है, ऐसी वस्तुओंका विरोध तो हमें करना ही नहीं चाहिए।

तुम्हें स्वदेशी स्टोर्सका काम स्वीकार नहीं करना चाहिए; हाँ, बाहर रहकर उसकी जो मदद कर सको, सो कर सकते हो। यदि उन्हें तुम्हारी योग्यतापर विश्वास हो, तो तुम्हारी बात मानकर उन्हें कपड़ोंमें केवल खादी ही रखनी चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७९४) से।

५२. पत्र : फ्रिट्स माइकेलिसको

सेगाँव, वर्धा
१३ अगस्त, १९३७

प्रिय मित्र,

पत्रके लिए धन्यवाद। आपके प्रश्नोंके उत्तर ये रहे। प्रश्नोंकी नकल तो, मैं समझता हूँ, आपने कर ही रखी होगी।

दस्तकारी विशेषज्ञोंसे हमारे साथ हमारी ही तरह रहने और हमारे साथ-साथ काम करते हुए हमें अपने श्रम और अनुभवका लाभ देने की अपेक्षा की जायेगी।

हम अपनी गरीबीका खयाल रखते हुए ऐसे यूरोपीय तरीकों और औजारोंका भी इस्तेमाल करेंगे जिनकी हमें जरूरत होगी।

स्वतन्त्र रूपसे कारखाना खोलने का प्रश्न ही नहीं उठता। हमलोग ग्रामवासी हैं—ऐसे ग्रामके निवासी जिसमें कुल मिलाकर हजारसे ज्यादा लोग नहीं हैं।

जो पूँजीके बिना काम नहीं कर सकते ऐसे विशेषज्ञोंकी कोई जरूरत नहीं है।

१. गोसीबहन कैप्टेन, दादाभाई नौरोजी की पोती।

भारतके गाँवोंमें पुनर्जीवनके संचारकी जरूरत है। जमीन छोटी-छोटी जोतोंमें ——अकसर एक एकड़से भी छोटी जोतोंमें——बँटी हुई है। अतः विचार, जो-कुछ बेकार पड़ा हुआ है, उसे सम्पत्तिका रूप देने का है। इसलिए जो प्रतिभाएँ व्यय-साध्य हैं या जिनका निखार विशालताके दायरेमें ही हो सकता है उनसे हमारा काम नहीं चल सकता। मैं ऐसी प्रतिभाका उपयोग करना चाहता हूँ जो परमाणुमें ब्रह्माण्डको देख सके और इसलिए जो इस मिट्टीसे सम्बन्धित है और जिसकी जड़ें उस मिट्टीमें जमी हुई हैं जिससे हम सब पैदा हुए हैं, जिसपर हम रह रहे हैं और जिस मिट्टीमें अन्तमें हमें मिल जाना है। इसलिए पश्चिमसे आनेवाले हर व्यक्तिको गरीबकी जिन्दगी बिताने लायक होना चाहिए। अतएव उसे शरीरसे सक्षम होना चाहिए और इस देशके गरीबसे-गरीब आदमीकी जिन्दगी जीने के लिए तैयार रहना चाहिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

डॉ० फ्रिट्स माइकेलिस
पो० ऑ० बॉक्स नं० १३४५
हैफा

अंग्रेजीकी नकलसे। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

५३. पत्र : ई० के० पलियाको

सेगाँव, वर्धा
१३ अगस्त, १९३७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिल गया है। जमीनके सौदेके बारेमें मैं कुछ भी नहीं जानता, इसलिए आपकी योजनामें मेरी कोई रुचि नहीं हो सकती।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री ई० के० पलिया
६/७ कबन रोड
बंगलोर

अंग्रेजीकी नकलसे। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

५४. पत्र : एम० मार्गराइट वाईको

सेगाँव, वर्धा
१३ अगस्त, १९३७

प्रिय मार्गराइट,

तुम्हारा पत्र पाकर खुशी हुई। साथमें मारिया सेवेनिखके लिए एक पत्र भेज रहा हूँ। यह उसे भेज देना।

स्नेह।

बापू

एम० मार्गराइट वाई
लैजर ओश्खिनेन्सी बी०
स्विट्जरलैंड

अंग्रेजी की नकल से। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

५५. पत्र : मारिया सेवेनिखको

सेगाँव, वर्धा
[१३ अगस्त, १९३७][1]

प्रिय मित्र,

तुम्हारे पत्रका मार्गराइट द्वारा किया हुआ अनुवाद मिला। तुमने बहुत खुले मनसे लिखा है, यह मुझे अच्छा लगा। तुम्हारी एक रायको मैं सुधारना चाहूँगा। तुमने लिखा है कि मुझे सफल न होने का अनुभव हो चुका है और मैं कुछ समयके लिए राजनीतिक कार्यसे अलग हो गया हूँ। सत्य-शोधकके शब्दकोशमें "सफल न होने"-जैसा कोई शब्द नहीं होता। वह तो अदम्य आशावादी होता है या उसे ऐसा होना चाहिए, क्योंकि सत्य — जो ईश्वरका ही दूसरा नाम है — की विजयमें उसकी अडिग आस्था होती है। और मैं राजनीतिक कार्यसे स्थायी अथवा अस्थायी रूपसे अलग नहीं हो गया हूँ, क्योंकि मैं जीवनकी विभिन्न प्रवृत्तियोंको एक-दूसरेसे बिलकुल अलग खानोंमें बँटा हुआ नहीं मानता। सच तो यह है कि मैं कांग्रेस और कांग्रेसकी राजनीतिसे अलग हो गया हूँ। ऐसा मैंने कांग्रेस और देशकी राजनीतिकी पहलेसे अधिक सेवा

१. यह पत्र और मार्गराइट वाईको लिखा पत्र एक ही कागज पर हैं; देखिए पिछला शीर्षक।

करने के खयालसे किया है। बाकी बातोंके बारेमें तो तुमने जो पत्र भेजने का वादा किया है वह मिलने के बाद।

स्नेह।

बापू
मो० क० गांधी

अंग्रेजी की नकलसे। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

५६. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

सेगाँव, वर्धा
[१३ अगस्त, १९३७][1]

प्रिय कुमारप्पा,

तुम्हारी राय[2] तुम्हारी कीर्तिमें एक नई वृद्धि है। इसका मतलब यह नहीं है कि मैं, तुमने उसके पक्षमें जो तर्क दिये हैं, उन्हें भी स्वीकार करता हूँ। लेकिन तबतक तो तुम्हारी राय मान्य होगी ही जबतक किसी वरिष्ठ व्यक्तिसे कोई दूसरी राय नहीं मिलती। मेरे लिए तो यह अनावश्यक है। मैं मंगलदासकी व्याख्याको स्वीकार करता हूँ। राय सदस्योंके बीच जरूर प्रचारित कर दी जाये [और तुम्हें कहना चाहिए][3] कि वह मेरे ही कहने पर प्राप्त की गई और मेरे ही कहने से सदस्योंके बीच प्रचारित की जा रही है।

मुझे खुशी है कि तुम ज्वरसे मुक्त हो गये हो। कार्य-समितिकी बैठकके सिलसिलेमें कल मैं वर्धामें रहूँगा। यह पत्र तुम्हें कल मिल जायेगा। इसलिए 'कल' तुम्हारे लिए 'आज' हो जायेगा।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१२९) से।

१. मूलमें तारीख कुछ धुँधली पड़ गई है, लेकिन "कार्य-समिति" के उल्लेखसे इस तारीखकी पुष्टि होती है, क्योंकि कार्य-समितिकी बैठक वर्धामें १४ से १७ अगस्त तक हुई थी।

२. अध्यक्षका प्रावधान करनेकी दृष्टिसे अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघके संविधानमें संशोधन करने के लिए।

३. साधनसूत्रमें यहाँ कुछ शब्द धुँधले पड़ गये हैं।

५७. पत्र : गोकुलदासको

वर्धा
१३ अगस्त, १९३७

भाई गोकुलदास,

कच्छमें चीतों और बनैले सूअरोंके कारण जो आतंक दिखाई पड़ता है उसके विरुद्ध रियासतसे यथारीति शिकायत करने का जनताको अधिकार है और यह उसका कर्त्तव्य भी है। जो-कुछ भी किया जाये, उसमें विनय और विवेक अवश्य होना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकलसे। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

५८. पत्र : सरलाको

१३ अगस्त, १९३७

चि० सरला,

तेरा पत्र मिला। तू बड़ी सयानी लड़की है। समझ गई है कि मैं तुझे अपने पास क्यों नहीं बुलाता। धीरज रखकर नयी तालीम पूरी कर लेना, और उसमें खूब प्रवीण हो जाना। यहाँके समाचार तो अखबारमें पढ़ती होगी। इस समय बड़ी व्यस्ततामें इतना लिख सका हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८७६९) से। सी० डब्ल्यू० १०४२ से भी; सौजन्य : चम्पाबहन आर० मेहता

५९. पत्र : मणिबहन पटेलको

सेगाँव
१३ अगस्त, १९३७

चि० मणि,

कल सवेरे साढ़े सात बजे रेलवे क्रॉसिंगके पास गाड़ी खड़ी मिल जाये। मैं उस समयके आसपास वहाँ पहुँचने की आशा करता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

साथ की चिट्ठी[1] छोटेलालको अभी या सवेरे भेज देना। महादेवको खबर कर देना, जिससे जब मैं आऊँ, तब मुझसे जो काम लेने हों, लिये जा सकें।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५५०) से।

६०. टिप्पणियाँ

अशोभन व्यवहार अनुशासनहीनता है

'डेली प्रेस' में खबर छपी है कि मध्य प्रान्त विधान-सभाके अधिवेशनके उद्घाटनके अवसरपर लोगोंसे खचाखच भरी दर्शक-दीर्घामें श्री राघवेन्द्ररावके[2] विरुद्ध अशोभन प्रदर्शन किया गया। दीर्घामें शायद कांग्रेसी या कांग्रेससे सहानुभूति रखनेवाले लोग भरे हुए थे। जब हमें हमारा मनोनुकूल पूर्ण स्वराज्य प्राप्त हो जायेगा तब भी, मैं समझता हूँ, राजनीतिक दल तो रहेंगे ही। तब अगर ये दल परस्पर एक-दूसरेके प्रति सहिष्णुता का व्यवहार नहीं करेंगे और सामान्य शिष्टाचार नहीं बरतेंगे तो हमपर सचमुच बहुत कठिन गुजरेगा। और पूरे राष्ट्रका प्रतिनिधित्व करने का दावा करनेवाली कांग्रेसके सामने तो इस बातकी कतई कोई गुंजाइश नहीं है कि वह अपने विरोधियों या अन्य लोगोंके प्रति असहिष्णु रवैया अपनाये। यदि वह एक-मात्र अखिल भारतीय संस्था है——और वास्तवमें है भी——तो वह सभी हितोंकी प्रतिनिधि है। वह श्री राघवेन्द्रराव की भी प्रतिनिधि है। वे तो स्वयं ही किसी समय उसके प्रतिष्ठित सदस्य थे। जिस निर्वाचन-क्षेत्रसे वे खड़े हुए, सम्भव है, उसमें

१. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।
२. भूतपूर्व मुख्य मन्त्री।

मतदानमें बेईमानी हुई हो। अगर ऐसा है तो उसका निबटारा कानून करेगा। लेकिन जबतक वे दोषी नहीं सिद्ध कर दिये जाते तबतक तो उन्हें ईमानदार मानकर ही चलना चाहिए। और यदि वे दोषी सिद्ध हो भी जाते हैं तो भी उनका दोष उनके विरुद्ध ऐसे अशोभन प्रदर्शनका कारण नहीं हो सकता।

असहिष्णुता, अशिष्टता, कठोरता ये सब न केवल कांग्रेसके अनुशासन और प्रामाणिकताके नियमके विरुद्ध हैं, बल्कि सभी अच्छे समाजमें वर्जित हैं और निस्सन्देह लोकतन्त्रकी भावनाके खिलाफ तो हैं ही।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १४-८-१९३७

६१. सत्य और अहिंसाके विरुद्ध ?

एक मित्र लिखते हैं:[१]

आपके "आलोचनाओंका जवाब" (३१ जुलाई) शीर्षक लेखका[२] निम्नलिखित वाक्य सत्य और अहिंसाकी भावना तथा सही तर्कके भी विरुद्ध जान पड़ता है:

"जो यूरोपीय शराबके बिना नहीं रह सकते अथवा रहना नहीं चाहते, सिर्फ उनके लिए विदेशी शराबें परिमित मात्रामें मँगाई जा सकती हैं।"

कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंको अपने-अपने प्रान्तोंके यूरोपीय समुदायोंके कल्याणकी उतनी ही चिन्ता होनी चाहिए जितनी कि भारतीय समुदायोंके कल्याणकी। मैं मानता हूँ कि मद्य-निषेधवादी होनेके नाते कांग्रेसी इस बातसे सहमत होंगे कि शराब यूरोपीयोंके लिए भी उतनी ही हानिप्रद है जितनी कि भारतीयोंके लिए। अगर ऐसी बात है तो किसी शराबीकी सनकके कारण ही कोई छूट नहीं दी जा सकती। यूरोपीयोंके लिए भी शराब उतनी ही बुरी है जितनी कि औरोंके लिए। फिर भी अगर यह कहकर कि "इसके बिना उनका काम नहीं चल सकता या वे नहीं चलायेंगे", उन्हें इसकी छूट दी जाती है तो जापानी, अमेरिकी और बहुत-से अन्य विदेशी भी अपने लिए ऐसी इजाजत माँग सकते हैं। और अगर उन्हें सिर्फ इसी कारण अपनी बुरी लत कायम रखने दी जाती है तब फिर भारतीयोंको भी भारतमें अपने-आपको इसी तरह बरबाद करनेकी छूट क्यों न दी जाये? . . .

१. यहाँ पत्रके कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।
२. देखिए खण्ड ६५, पृ० ४८४-९०।

अगर किसीको शराब पीनेकी (न कि उसमें अपने-आपको गर्क कर देनेकी) इजाजत दी जाये तो वह सिर्फ चिकित्सा-सम्बन्धी कारणोंसे या ऐसे किसी अन्य कारणसे जो सबपर समान रूपसे लागू हो सके। कांग्रेसके शासनमें किसी भी जातिके पक्ष अथवा विपक्षमें कोई भेदभावपूर्ण कानून नहीं बनाया जा सकता। . . .

कुछ कालके लिए ही भारतमें रहनेवाले विदेशीको भी इस दायित्वसे मुक्त नहीं करना चाहिए। उदाहरणके लिए, जो लोग ऐसा मानते हैं कि शराबसे पूरा परहेज सर्वथा आवश्यक नहीं उनके लिए भी यह लाजिम होना चाहिए कि अगर इस राष्ट्रने शराबके खिलाफ कानून बना दिया है तो शराब न पियें। उनके बारेमें ऐसा मानना चाहिए कि वे भारतमें इसी शर्तपर रह रहे हैं कि यहाँके लोगोंके कानूनों, रीति-रिवाजों और सदाचरणके नियमोंका पालन करेंगे।

इन मित्रने जो-कुछ लिखा है, आम तौरपर, उसे समझने और प्रायः स्वीकार करने में मुझे कोई कठिनाई नहीं हुई है। लेकिन, मुझे यह स्वीकार करना ही पड़ेगा कि इस पत्रको तीन बार पढ़ने पर भी मैं इसमें दी हुई दलीलको नहीं समझ सका हूँ।

प्रस्तावित छूट सत्य या अहिंसाकी भावनाके विरुद्ध भला क्यों है? मुझे तो इसमें ऐसी कोई बात दिखाई नहीं पड़ती जिसे लेखकने बुरी दलील बताया है। जीवित प्राणियोंके बारेमें विचार करते हुए कोरा तार्किक चिन्तन बुरा ही नहीं, बल्कि कभी-कभी घातक भी हो सकता है। क्योंकि अगर आप किसी बहुत छोटी चीजको भी छोड़ जायें——और यह तय है कि मनुष्यके साथ बरतने के प्रसंग म जितनी सारी चीजोंका समावेश हो जाता है उन सबपर आप कभी नियन्त्रण नहीं रख सकते——तो आपका निष्कर्ष गलत हो जाने की सम्भावना रहती है। इसलिए अन्तिम सत्यपर आप कभी नहीं पहुँचते; आप तो सिर्फ उसके आसपास ही पहुँचते हैं, और वह भी तभी जबकि आप अपने व्यवहारमें असाधारण रूपसे सावधान रहें।

वस्तुतः सत्य और अहिंसाकी खातिर ही मैंने यूरोपीयोंके लिए छूट रखने का खयाल किया है। क्योंकि सब आदमियों और सब जगहकी आबोहवाके लिए मैं इस तरहका एक नियम निर्धारित नहीं कर सकता कि शराब पीना पाप है। अत्यन्त शीत-प्रधान देशोंके लिए मैं इसे जरूरी मान सकता हूँ। इसलिए जो यूरोपीय अपने भोजनके साथ हर बार परिमित मात्रामें शराब पीना बुराई नहीं बल्कि जरूरी समझते हैं, उनपर शराबबन्दी न थोपने का ध्यान मैं जरूर रखूँगा। यह खयाल रखने की बात है कि हिन्दुस्तानमें जिस तरह आम तौरपर मद्यपानको बुरा माना जाता है, यूरोपीय समाजमें नहीं माना जाता। इसलिए भलमनसाहतके खयालसे भी (जो कि अहिंसाकी ही एक अवस्था है) मैं यह बात उन्हींके ऊपर छोड़ देना चाहूँगा कि जिस देशको उन्होंने अपनाया है, वहाँके आचारका वे खयाल रखें।

यूरोपीयोंके लिए जो छूट रखी जायेगी, वही दूसरे राष्ट्रवालों के लिए रखने के तर्कको भी मैं खुशीके साथ मंजूर करूँगा, बशर्ते कि उसकी आवश्यकता सिद्ध कर दी जाये। सच तो यह है कि शायद बहुत-से हिन्दुस्तानियोंको भी डाक्टरी परवानेवाली उस धाराके मातहत शराब पीने की इजाजत देनी पड़े।

मेरे लिए तो शराबका सवाल एक बढ़ती हुई सामाजिक बुराईको रोकने का सवाल है, जिसके लिए जब सरकारको अवसर मिला है तो उसे कुछ-न-कुछ करना ही चाहिए। उद्देश्य हमारा स्पष्ट है। हम मजदूरों और हरिजनोंको इस बुराईसे बचाना चाहते हैं। यह एक बहुत बड़ी समस्या है और शराबखोरी बन्द करने के लिए हमें सभी [illegible], खासकर स्त्रियोंकी, तमाम शक्ति लगा देनी पड़ेगी। शराबबन्दीकी जो रूपरेखा मैंने बताई है वह तो तत्सम्बन्धी सुधारकी सिर्फ शुरुआत (निःसन्देह अनिवार्य शुरुआत) है। शराब पीनेवाले को लुभाने के लिए उसके दरवाजेके पास ही शराबकी दुकान मिल जाये, तब तो हमें उसके पास पहुँचने का, उसे समझाने-बुझाने का अवसर ही नही मिल सकता। यह तो उसी तरह निष्फल होगा जैसे कि किसी बीमार बच्चेके सामने, बल्कि बीमार आदमीके भी सामने, खुली हुई मिठाई रखी रहे और उसे वहाँसे हटा देने के बजाय उससे कहा जाये कि इसे छूना मत।

और जब मैं इस विषयकी चर्चा कर ही रहा हूँ तो यहाँ कृपालु मित्रगण मुझे जो अखबारोंकी कतरनें भेजते रहते हैं, उनमें से एकमें उठाई गई दलीलका जवाब भी दे ही दूँ। उसमें कहा गया है कि इस सुधारके जोशमें श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारीने ताड़का रस उतारनेवालों की, जिन्हें शराबबन्दीके कारण अपना काम बन्द करना पड़ेगा, बेकारीकी समस्याका भी कोई खयाल नहीं किया है। राजाजीने उनके लिए क्या सोचा है, यह तो मुझे मालूम नहीं; लेकिन श्री गजाननने, जो कि ताड़के रसका गुड़ बनाने में विशेषज्ञ बनते जा रहे हैं, मुझे बताया है कि दक्षिणके इस प्रान्तमें ताड़से रस उतारनेवाले लोग (ताड़ी बनाने के) गन्दे व्यापारमें लगे हुए हैं। उनका यह भी कहना है कि रस उतारना बन्द करने की कोई जरूरत नहीं है। शराबबन्दीके अधीन फर्क सिर्फ इतना होगा कि वे जो रस उतारेंगे वह नीरा होगा, जिसका नशीले पेय पदार्थके बजाय गुड़ बनाया जायेगा। आन्ध्र प्रदेशके बारेमें तो मुझे यह मालूम हुआ है कि रस उतारनेवाले खजूरका रस नहीं बेचते हैं, बल्कि उसका गुड़ बनाकर 'अर्क' बनानेवालों को बेचते हैं, जो गुड़से 'अर्क' बनाते हैं। ऐसे मामलोंमें राज्यको इसके सिवा और कुछ करने की जरूरत नहीं है कि वह आपसम तय किये गये वाजिब दामोंपर इस गुड़को खरीद ले। रस उतारनेवालों के बारेमें मैं जो-कुछ जानता हूँ उसके आधारपर यह कह सकता हूँ कि आसन्न शराबबन्दीसे उनको कोई नुकसान होने की सम्भावना नहीं है, और दूसरी ओर गरीबोंके शरीर और आत्मा दोनोंको हानि पहुँचनेवाली शराबके बदले, शुद्ध गुड़के रूपमें एक पोषक और सस्ता खाद्य पदार्थ मिलने लगेगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १४-८-१९३७

६२. पत्र: नरहरि द्वा० परीखको

सेगाँव, वर्धा
१४ अगस्त, १९३७

चि० नरहरि,

इस पत्रके साथ नीमुका पत्र है। उसके प्रश्नोंके उत्तर तो तुम और मगनभाई[1] ही दे सकते हो। आश्रममें रहने की बातका उत्तर तुम दोगे, और विद्यापीठ-सम्बन्धी प्रश्नका उत्तर फिलहाल तो मगनभाईको देना पड़ेगा न? मगनभाई यहाँ हुए तो उन्हें यह पत्र दिखाऊँगा और फिर तुम्हें भेजूँगा। जिसमें अड़चन मालूम हो, ऐसी कोई बात तुम्हें नहीं करनी है। मगनभाईको भी नहीं करनी है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९१०९) से।

६३. चरखा द्वादशी

अपनी जयन्तीके बारेमें लिखते हुए मुझे संकोच होता है; न होता हो, तो होना चाहिए। पाठक यह ध्यान रखें कि अगर हिन्दुस्तानमें मेरी जन्म-तिथिका स्मरण करानेवाले न होते, तो मैं तो उसे बिलकुल भूल ही जाता। मुझे तो जो अपनी जन्म-तिथि याद आई वह सिर्फ स्कूलमें भर्ती होने के लिए, और वह भी खास कर तब जब कि मैं बैरिस्टर बनने के लिए गया था। लेकिन मेरे माता-पिताने मेरी या हममें से किसी भी भाईकी जन्म-तिथि विधिपूर्वक मनाई हो, ऐसा मुझे याद नहीं पड़ता। और मैंने तो न अपने माता-पिताकी जन्म-तिथि मनाई, न अपने बालकोंकी। एक समय उनकी जन्म-तिथिका लेखा मैं जरूर रखता था, लेकिन वह लेखा भी बिल्लीकी तरह सातसे भी अधिक बार घरोंकी अदला-बदली करने मे खो गया। कौन जाने क्यों, पर जन्म-तिथियोंके बारेमें मेरे मनमें कभी दिलचस्पी पैदा नहीं हो सकी। लेकिन जब हिन्दुस्तानमें पहले-पहल आडम्बरके साथ मेरी जन्म-तिथि मनाई गई तभीसे मैंने उसे "चरखा द्वादशी"का नाम दे दिया है। ऐसी चरखा द्वादशी इस साल भी राजकोटकी राष्ट्रीय शालाकी तरफसे मनाई जानेवाली है, जिसके सिलसिलेमें श्री छगनलाल जोशी निम्न प्रकार लिखते हैं:[2]

१. मगनभाई प्रभुभाई देसाई।

२. पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है। पत्र-लेखकने गांधीजी से चरखा द्वादशी मनाने की नारणदास गांधीकी योजनापर *हरिजनबन्धु* में लिखने का अनुरोध किया था।

क्या ऐसे दस्तावेज वास्तवमें होते हैं, या ऐसा केवल मौखिक रूपसे तय हो जाता है? ऐसा धन्धा करनेवाले कितने लोग हैं और वे कहाँ रहते हैं? ऐसे कितने मामले निगाहमें आये हैं?

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १५-८-१९३७

६५. पत्र : मणिबहन पटेलको

[१५][1] अगस्त, १९३७

चि० मणि,

केवलरामका पत्र तो उन्हीं [पत्रों] में था जो तूने लौटाये थे। मैं यह जानता था कि तारका प्रथमार्द्ध नहीं था। अब मैं वे दोनों इसके साथ भेज रहा हूँ। आज मीराबहन दिल्लीसे आनेवाली गाड़ीसे ६ और ८ के बीच आ रही है। राजकुमारी कल सुबह बम्बईसे आ रही है।

बापूके आशीर्वाद

मणिबहन पटेल
पुरुषोत्तम बिल्डिंग
ऑपेरा हाउसके सामने, बम्बई

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने, पृ० ११९

१. साधन-सूत्रमें '२६' तारीख दी गई है। मीराबहनके उसी दिन पहुँचने की सम्भावनाके उल्लेखसे स्पष्ट है कि यह पत्र १५ अगस्तको लिखा गया था; देखिए "पत्र : अमतुस्सलामको", पृ० ५७। इसके अतिरिक्त २३ अगस्तको तो अमृतकौर गांधीजी के साथ ही थीं; देखिए "पत्र : महादेव देसाईको", २३-८-१९३७।

६६. पत्र : एम० विश्वेश्वरय्याको[1]

[१५ अगस्त, १९३७ के पश्चात्][2]

प्रिय सर विश्वेश्वरय्या,

उड़ीसामें बाढ़से जो तबाही हुई है उसके बारेमें आपको मालूम ही है। मैंने मुख्य मन्त्री श्री विश्वनाथ दासको सलाह दी है कि वे इस सिलसिलेमें आपसे सलाह और मार्ग-दर्शन माँगें। मुझे पूरा विश्वास है कि आप अपनी सामर्थ्यानुसार उनकी सहायता करेंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९८३६) से; सौजन्य : मैसूर सरकार

६७. पत्र : वाइसरायको

सेगाँव, वर्धा
१६ अगस्त, १९३७

प्रिय मित्र,

उड़ीसामें बाढ़के कारण हाल ही में जो विनाश हुआ है उसके बारे में आप जानते ही हैं। उड़ीसाके मुख्य मन्त्री मुझे कल ही क्षतिग्रस्त इलाकोंका हाल बता रहे थे। मैं बहुत पहलेसे ही यह मानता आया हूँ कि यदि बाढ़के पानीके बहावको अनुकूल दिशामें मोड़ा जा सके तो इस तरह हर साल होनेवाली तबाहीको रोका जा सकता है। बाढ़-नियन्त्रणका सबसे अच्छा उपाय क्या है, इसके सम्बन्धमें उड़ीसा सरकारको सलाह देने के लिए क्या आप किसी इंजीनियर मित्रको भेज पायेंगे ?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

परमश्रेष्ठ वाइसराय

अंग्रेजीकी नकलसे। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१. यह पत्र १९६९-७० में दिल्लीमें हुई गांधी-दर्शन प्रदर्शनीके मैसूर पण्डालमें प्रदर्शित किया गया था।

२. जान पड़ता है, यह पत्र १५ अगस्त, १९३७ को गांधीजी के उड़ीसाके मुख्य मन्त्रीसे मिलने के बाद ही लिखा गया था; देखिए अगला शीर्षक।

६८. पत्र : महादेव देसाईको

१६ अगस्त, १९३७

चि० महादेव,

इस पत्रके साथ दो लेख तो भेज रहा हूँ। हिन्दीवाला कनुने टाइप किया है। एक और तैयार हो रहा है।

तुम खासे नाजुकमिजाज मालूम होते हो। मैंने तो जो देखा, वही तुम्हें लिखा था। और कल जो हुआ था, वह देखने लायक था। तुम्हारा वहाँ रहना मुझे अच्छा न लगे, यह कैसे हो सकता है? लेकिन मैंने वातावरण को समझ लिया। कल नहीं आये, यह तो ठीक हुआ। बाकी मिलने पर।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५५१) से।

६९. पत्र : अमतुस्सलामको

१६ अगस्त, १९३७

चि० अमतुल सलाम,

तुमारा खत मिला। मेरा तार मिल गया होगा। मैंने कह दिया है जहां तक रहना चाहिये वहां तक रहो। तबीयत अच्छी हो जाय वह मेरे लिये बहूत हि बड़ी बात है। मैंने तो अमतुल मसूदकी फिकर की थी और अम्माकी। बाकी तो जो रामचंद्रन्को लिखा है वही कायम समजो। जब वह इजाजत देवे तब ही आओ।

मिराबहन कल आ गई। बहूत अच्छी तो नहीं हुई है।

कांति लिखता है जबतक अ० स० मेरे बारेमें आसक्ति रखती है तबतक मैं उनसे कोई संबंध नही रखुंगा। जब अनासक्त हो जायगी तब तो बात ही क्या?

तुमारा और खत आज मिला। आने में जल्दी न की जाय। यदि अच्छा हो रहा है तो और ठहरो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९१) से।

७०. तार : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको[1]

[१६ अगस्त, १९३७ या उसके पश्चात्][2]

विश्वास रखिए अण्डमानके संकटको[3] समाप्त करने के लिए मुझसे जो-कुछ भी बन पड़ेगा करूँगा। स्नेह।

गांधी

मूल अंग्रेजीसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

७१. पत्र : सरस्वतीको

१७ अगस्त, १९३७

चि० सरस्वती,

तुमारा खत मिला। कांति नहीं चाहता कि तुमारी आखरी परीक्षा होने के पहले मेरे पास आना। रामचंद्रन भी वही चाहते हैं। इसलिये अब तो जल्दी परीक्षा में उत्तीर्ण हो और बादमें मेरे पास आओ।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१६३)से। सी० डब्ल्यू० ३४३६ से भी; सौजन्य : कन्तिलाल गांधी

१ और २. यह तार रवीन्द्रनाथ ठाकुरके १६ अगस्त, १९३७ के तार के उत्तरमें भेजा गया था। उन्होंने लिखा था : "अण्डमानके कैदियोंको भूख-हड़ताल समाप्त करने के लिए तार दिया है। उनके जीवनकी रक्षा होनी ही चाहिए। आशा है आप और जवाहरलाल भी अपने प्रभावका उपयोग करेंगे।"

३. २४ जुलाई, १९३७ से अण्डमानके लगभग २२५ कैदी भूख-हड़ताल पर थे। उनकी एक माँग यह थी कि सभी राजनीतिक कैदियोंकी सामूहिक रिहाई हो और सारे दमनकारी कानूनोंको रद किया जाये। लेकिन भारत सरकारने उनकी किसी भी माँगपर तबतक विचार करने से इनकार कर दिया था जबतक कि वे भूख-हड़ताल समाप्त नहीं करते। देखिए "तार : वाइसरायको", २७-८-१९३७ और "तार : अण्डमानके कैदियों को", ३०-८-१९३७ भी।

७२. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

सेगाँव, वर्धा
१८ अगस्त, १९३७

भाई घनश्यामदास,

आपका पत्र मिला। मैं ध्यानसे पढ़ गया हूं। मुझे प्रतीत होता है कि इस बारेमें कांग्रेसकी तरफसे या मेरी तरफसे कुछ भी नहीं कहा जा सकता है, अर्थात् मेरी पसंदगी अथवा नापसंदगी पर आप लोगोंको कोई कदम उठाना नही चाहिये। क्योंकि आप लोगोंकी दृष्टि एक है, मेरी दूसरी है। ऐसा कोई भी आर्थिक समझौता को मैं राज्यप्रकरणसे भिन्न नहीं समझ सकता हूं — जैसे मैंने राउण्ड टेबलके[1] समय लंकेशीअरमें [भी] किया था। आप लोग पैक्ट कमेटीमें हैं। इसका अर्थ यह है कि राज्य-प्रकरणका प्रश्न उठाने का आप लोगोंको कुछ भी अधिकार नहीं रहा है। इसलिये आप इस चीजको पृथक समझकर, गुण-दोषपर ही विचार करें। और गुण-दोष पर मैं क्या कहूँ? उस बारेमें जो आपका खयाल होगा वही शायद मेरा होगा। इसी तरहसे करने का आप लोगोंका धर्म भी हो जाता है। यदि हो सकता है तो आप इतना आपके अभिप्रायमें कहें कि अगरचे गुण-दोषपर आपका अभिप्राय अमुक होते हुए भी उसकी ज्यादी किम्मत न मानी जाय। क्योंकि लोकप्रिय संस्था कांग्रेस ही है इसलिये जो-कुछ भी समझौता किया जाय उसपर कांग्रेसकी महोर होनी ही चाहिये। और वही समझौता कायम माना जाय। इसमें आप लोगोंकी प्रामाणिकता और न्यायबुद्धि होंगी।

यह पत्र प्रातःकालकी प्रार्थनाके बाद लिखवा रहा हूँ। ज्युरिकमें फायदा हुआ होगा।

बापुके आशीर्वाद

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ७९९०) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१. १९३१ में; देखिए खण्ड ४८, पृ० ७५-७६, ८४-८६ और ८७-८८।

७०. तार : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको[1]

[१६ अगस्त, १९३७ या उसके पश्चात्][2]

विश्वास रखिए अण्डमानके संकटको[3] समाप्त करने के लिए मुझसे जो-कुछ भी बन पड़ेगा करूँगा। स्नेह।

गांधी

मूल अंग्रेजीसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

७१. पत्र : सरस्वतीको

१७ अगस्त, १९३७

चि० सरस्वती,

तुमारा खत मिला। कांति नहीं चाहता कि तुमारी आखरी परीक्षा होने के पहले मेरे पास आना। रामचंद्रन भी वही चाहते हैं। इसलिये अब तो जल्दी परीक्षा में उत्तीर्ण हो और बादमें मेरे पास आओ।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१६३)से। सी० डब्ल्यू० ३४३६ से भी; सौजन्य : कन्तिलाल गांधी

१ और २. यह तार रवीन्द्रनाथ ठाकुरके १६ अगस्त, १९३७ के तार के उत्तरमें भेजा गया था। उन्होंने लिखा था : "अण्डमानके कैदियोंको भूख-हड़ताल समाप्त करने के लिए तार दिया है। उनके जीवनकी रक्षा होनी ही चाहिए। आशा है आप और जवाहरलाल भी अपने प्रभावका उपयोग करेंगे।"

३. २४ जुलाई, १९३७ से अण्डमानके लगभग २२५ कैदी भूख-हड़ताल पर थे। उनकी एक माँग यह थी कि सभी राजनीतिक कैदियोंकी सामूहिक रिहाई हो और सारे दमनकारी कानूनोंका रद किया जाये। लेकिन भारत सरकारने उनकी किसी भी माँगपर तबतक विचार करने से इनकार कर दिया था जबतक कि वे भूख-हड़ताल समाप्त नहीं करते। देखिए "तार : वाइसरायको", २७-८-१९३७ और "तार : अण्डमानके कैदियों को", ३०-८-१९३७ भी।

७२. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

सेगाँव, वर्धा
१८ अगस्त, १९३७

भाई घनश्यामदास,

आपका पत्र मिला। मैं ध्यानसे पढ़ गया हूं। मुझे प्रतीत होता है कि इस बारेमें कांग्रेसकी तरफसे या मेरी तरफसे कुछ भी नहीं कहा जा सकता है, अर्थात् मेरी पसंदगी अथवा नापसंदगी पर आप लोगोंको कोई कदम उठाना नहीं चाहिये। क्योंकि आप लोगोंकी दृष्टि एक है, मेरी दूसरी है। ऐसा कोई भी आर्थिक समझौता को मैं राज्यप्रकरणसे भिन्न नहीं समझ सकता हूं —— जैसे मैंने राउण्ड टेबलके[1] समय लंकेशीअरमें [भी] किया था। आप लोग पैक्ट कमेटीमें हैं। इसका अर्थ यह है कि राज्य-प्रकरणका प्रश्न उठाने का आप लोगोंको कुछ भी अधिकार नहीं रहा है। इसलिये आप इस चीजको पृथक समझकर, गुण-दोषपर ही विचार करें। और गुण-दोष पर मैं क्या कहूँ? उस बारेमें जो आपका खयाल होगा वही शायद मेरा होगा। इसी तरहसे करने का आप लोगोंका धर्म भी हो जाता है। यदि हो सकता है तो आप इतना आपके अभिप्रायमें कहें कि अगरचे गुण-दोषपर आपका अभिप्राय अमुक होते हुए भी उसकी ज्यादी किम्मत न मानी जाय। क्योंकि लोकप्रिय संस्था कांग्रेस ही है इसलिये जो-कुछ भी समझौता किया जाय उसपर कांग्रेसकी महोर होनी ही चाहिये। और वही समझौता कायम माना जाय। इसमें आप लोगोंकी प्रामाणिकता और न्यायबुद्धि होगी।

यह पत्र प्रातःकालकी प्रार्थनाके बाद लिखवा रहा हूँ। ज्युरिकमें फायदा हुआ होगा।

बापुके आशीर्वाद

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ७९९०)से; सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

१. १९३१ में; देखिए खण्ड ४८, पृ० ७५-७६, ८४-८६ और ८७-८८।

७३. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

सेगाँव
१९ अगस्त, १९३७

प्रिय सी० आर०,

हम लोग दिल खोलकर आपसे बातें नहीं कर पाये, इससे मुझे अपने-आप पर बहुत खीज आई। किन्तु यह कोई महत्त्वकी बात नहीं थी। मुझे चिन्ता तो इस बात की है कि दिनमें आप जरा भी आराम नहीं करते। ऐसा करना पाप चाहे न हो पर गलत अवश्य है। किसी भी कामको अपनी सीमाके बाहर जाकर करने में कोई पुण्य नही है। यदि आप दिनमें एक घंटा आराम कर लिया करें तो दुनियाका उससे कुछ बिगड़ेगा नहीं। जल्दी ही बुरी तरह बीमार पड़ना चाहते हों तो बात अलग है, अन्यथा आपको मेरी राय अवश्य ही माननी चाहिए। एक घंटेका आराम तो बहुत आसान चीज है। यदि राज्यकी सुरक्षा को खतरेमें डाले बिना आप इतना भी नहीं कर सकते तो कहीं कुछ गड़बड़ जरूर है। तो, मेरी सलाहपर ध्यान दीजिए।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०६०) से।

७४. पत्र : भारतन कुमारप्पाको

१९ अगस्त, १९३७

प्रिय भारतन,

रावके बारेमें तुम्हारा पुर्जा मेरे सामने है।[1] यह मुझे सवेरे ७ बजे सैर करते समय मिला। जवाब तो तभी जायेगा जब छोटेलाल रवाना होगा। तुम आज दोपहर बाद १ बजे या ४ बजे आ सकते हो। २ और ४ के बीच मैं किसीको समय दे चुका हूँ। आशा है, तुमने रावसे सब कागजात और रोकड़ ले ली होगी। यदि उसे आने को राजी किया जा सके तो मैं उससे मिलना चाहता हूँ।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५९३) से।

१. देखिए खण्ड ६५, पृ० ४२२।

७५. पत्र : लक्ष्मी गांधीको

सेगाँव, वर्धा
१९ अगस्त, १९३७

चि० लक्ष्मी,

बहुत दिनोंके बाद अथवा कहो हप्तोंके बाद मैं यह पत्र लिखता हूं। तुम्हारे और बच्चों के बारेमें खबर मिलती ही रहती है। यह खत लिखने का कारण तो अण्णा[1] है। कारण उनके व्यवसायके बारेमें मैं पूछ रहा था तो पता चला सवेरेसे रात्री के ११ बजे तक अविश्रांत काम करते रहते हैं। यह सुनकर मैं बहुत ही चिन्तीत हो गया हूं। मैंने उनसे भी थोडा सुनाया है।[2] इस तरह काम करने का कोई धर्म नहीं है। मैं तो इसे दोष समझता हूं। इस तरह काम कहां तक चल सकता है? वह भी खुद बिमार हो जायेंगे फिर क्या करेंगे? बिमारीका सामान तैयार करना और बिमार न होने की आशा रखना यह तो आकाश-कुसुम पाने [का] प्रयत्न [करने] जैसी बात हुई। इसलिये तुमसे मैं यह आशा करता हूँ कि इतना काम करने से तुम भाई-बहिन मिलकर उनको रुको और हरगीज इस तरह काम करने मत दो। सब भाई-बहिन इतना निश्चय करोगे तो सफलता प्राप्त होगी।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २०१४) से।

१. च० राजगोपालाचारी, लक्ष्मी गांधीके पिता।
२. देखिए पृ० ६०।

७३. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

सेगाँव
१९ अगस्त, १९३७

प्रिय सी० आर०,

हम लोग दिल खोलकर आपसे बातें नहीं कर पाये, इससे मुझे अपने-आप पर बहुत खीज आई। किन्तु यह कोई महत्त्वकी बात नहीं थी। मुझे चिन्ता तो इस बात की है कि दिनमें आप जरा भी आराम नहीं करते। ऐसा करना पाप चाहे न हो पर गलत अवश्य है। किसी भी कामको अपनी सीमाके बाहर जाकर करने में कोई पुण्य नहीं है। यदि आप दिनमें एक घंटा आराम कर लिया करें तो दुनियाका उससे कुछ बिगड़ेगा नहीं। जल्दी ही बुरी तरह बीमार पड़ना चाहते हों तो बात अलग है, अन्यथा आपको मेरी राय अवश्य ही माननी चाहिए। एक घंटेका आराम तो बहुत आसान चीज है। यदि राज्यकी सुरक्षा को खतरेमें डाले बिना आप इतना भी नहीं कर सकते तो कहीं कुछ गड़बड़ जरूर है। तो, मेरी सलाहपर ध्यान दीजिए।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०६०) से।

७४. पत्र : भारतन कुमारप्पाको

१९ अगस्त, १९३७

प्रिय भारतन,

रावके बारेमें तुम्हारा पुर्जा मेरे सामने है।[1] यह मुझे सवेरे ७ बजे सैर करते समय मिला। जवाब तो तभी जायेगा जब छोटेलाल रवाना होगा। तुम आज दोपहर बाद १ बजे या ४ बजे आ सकते हो। २ और ४ के बीच मैं किसीको समय दे चुका हूँ। आशा है, तुमने रावसे सब कागजात और रोकड़ ले ली होगी। यदि उसे आने को राजी किया जा सके तो मैं उससे मिलना चाहता हूँ।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५९३) से।

१. देखिए खण्ड ६५, पृ० ४२२।

७५. पत्र : लक्ष्मी गांधीको

सेगाँव, वर्धा
१९ अगस्त, १९३७

चि० लक्ष्मी,

बहुत दिनोंके बाद अथवा कहो हप्तोंके बाद मैं यह पत्र लिखता हूं। तुम्हारे और बच्चों के बारेमें खबर मिलती ही रहती है। यह खत लिखने का कारण तो अण्णा[1] है। कारण उनके व्यवसायके बारेमें मैं पूछ रहा था तो पता चला सवेरेसे रात्री के ११ बजे तक अविश्रांत काम करते रहते हैं। यह सुनकर मैं बहुत ही चिन्तीत हो गया हूं। मैंने उनसे भी थोडा सुनाया है।[2] इस तरह काम करने का कोई धर्म नहीं है। मैं तो इसे दोष समझता हूं। इस तरह काम कहां तक चल सकता है? वह भी खुद बिमार हो जायेंगे फिर क्या करेंगे? बिमारीका सामान तैयार करना और बिमार न होने की आशा रखना यह तो आकाश-कुसुम पाने [का] प्रयत्न [करने] जैसी बात हुई। इसलिये तुमसे मैं यह आशा करता हूँ कि इतना काम करने से तुम भाई-बहिन मिलकर उनको रुको और हरगीज इस तरह काम करने मत दो। सब भाई-बहिन इतना निश्चय करोगे तो सफलता प्राप्त होगी।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २०१४) से।

१. च० राजगोपालाचारी, लक्ष्मी गांधीके पिता।
२. देखिए पृ० ६०।

७६. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

वर्धा
२० अगस्त, १९३७

श्री के० एफ० नरीमानने मुझे एक निवेदन भेजा है, जिसमें उन्होंने सरदार वल्लभभाई पटेल और अन्य लोगोंके खिलाफ अपना पक्ष पेश किया है। वे चाहते हैं कि मैं साक्षियोंको आमन्त्रित करूँ और उन्हें कुछ आश्वासन दूँ।[1] इस वक्तव्य द्वारा उनकी यह माँग मैं सहर्ष पूरी कर रहा हूँ।

मैं चाहूँगा कि विधानसभा और विधान-परिषद्के जिन सदस्योंने कांग्रेस दलके नेताके चुनावमें भाग लिया था, और मतदानके सम्बन्धमें लोगोंको प्रभावित करने की कोशिश की थी, वे जो-कुछ भी जानते हों, उसके बारेमें मुझे अपने बयान भेजें। अपने बयानमें वे खासकर यह बतायें कि जिस ढंगसे उन्होंने मतदान किया, क्या वह सरदार वल्लभभाईके प्रत्यक्ष या परोक्ष उकसावेपर किया था, और साथ ही मतदानके अपने कारण भी लिखें। यह कहा गया है कि चुनाव क्योंकि सर्वसम्मति से हुआ था, इसलिए मतदान हुआ ही नहीं था। फिर भी मैं चाहूँगा कि जो सदस्य चुनावके समय उपस्थित थे, वे यदि चाहें तो मुझे लिखें कि उन्होंने अपनी असहमति क्यों प्रकट नहीं की। मैं यह भी चाहूँगा कि जिन्होंने निर्वाचकोंके निर्णयोंको प्रभावित करने में भाग लिया था, वे मुझे लिखें कि क्या वे सरदारके उकसावे या उनकी सलाह पर वैसा कर रहे थे और क्या वस्तुत: निर्वाचकोंसे बात करते हुए उन्होंने उनके नामका उपयोग किया था और यदि किया था तो क्या सरदारको उसकी जानकारी थी और उसमें उनकी अनुमति थी।

१९३४ में केन्द्रीय विधानसभाके लिए बम्बईसे सदस्योंका जो चुनाव हुआ, उसमें श्री नरीमानकी भूमिकाके बारेमें एक अन्य प्रकारके साक्षियोंका वर्ग भी है। श्री नरीमानके विरुद्ध विश्वासघात या अनुचित आचरणका जो आरोप है, उसपर जो लोग प्रकाश डाल सकते हैं, उनसे मैं कहूँगा कि वे प्रकाश डालें।

१. **सरदार वल्लभभाई पटेल,** खण्ड–२ में नरहरि परीख इसके स्पष्टीकरणमें लिखते हैं : "नरीमानने . . . १७ अगस्तको एक वक्तव्य जारी किया। उसमें उन्होंने कहा था कि मैं क्षमा माँगने को तैयार नहीं हूँ और सभी साक्षियोंको सुरक्षाका आश्वासन मिलना चाहिए। उस सार्वजनिक वक्तव्यके बाद उन्होंने गांधीजी को एक पत्र लिखा कि संसदीय समितिके प्रधानकी हैसियतसे सरदार पटेलको बहुत बड़े और निरंकुश अधिकार प्राप्त हैं और बहुत-से साक्षी, जो विधानसभाके सदस्य हैं, इस बातसे डरते हैं कि उन्हें उनका कोपभाजन बनना होगा। इसलिए सचाईके हितमें यह आवश्यक है कि साक्षियोंको पूर्ण सुरक्षाका आश्वासन दिया जाये।"

मुझसे यह कहा गया है कि सरदार उन व्यक्तियोंको तंग करेंगे, इस डरसे सचाई दबाई जा सकती है। सरदार उन्हें कैसे तंग कर सकते हैं, यह मेरी समझमें नहीं आता। परन्तु मैं यह आश्वासन दे सकता हूँ कि यदि सरदार इस तरहके आचरणके दोषी पाये गये तो उनके साथ मेरा जो घनिष्ठ सम्बन्ध है, वह मैं तोड़ लूँगा। यदि कुछ ऐसे साक्षी हैं जो मुझे गुप्त रूपसे लिखना चाहते हैं, तो मैं उनके रहस्यको प्रकट नहीं करूँगा। परन्तु उन्हें यह समझ लेना चाहिए कि यदि उनके बयान ऐसे हैं जिनका सरदार द्वारा या जिन अन्य लोगोंका उनमें जिक्र है उनके द्वारा सम्पोषण या निराकरण जरूरी है, तो यदि मैं ये बयान –– जरूरी नहीं कि नाम भी –– सम्बन्धित पक्षोंको दिखा न सकूँ, तो मेरे लिए उनका कोई मूल्य नहीं होगा।

उपर्युक्त दो मामलोंमें यदि कोई भी व्यक्ति कोई साक्ष्य देना चाहे तो वह मेरे पास इस महीनेकी ३१ तारीख तक मगनवाड़ी, वर्धाके पतेपर पहुँच जाना चाहिए, और उसपर "गोपनीय : श्री नरीमानके सम्बन्धमें" लिखा होना चाहिए। बयान साफ लिखावटमें बिना किसी दलीलके या किसी तरहसे नमक-मिर्च लगाये बगैर लिखे होने चाहिए और जिन मामलोंका मैंने जिक्र किया है उनसे सम्बद्ध होने चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २१-८-१९३७

७७. पत्र : महादेव देसाईको

२० अगस्त, १९३७

चि० महादेव,

इतना ढेर-सा काम मैंने खुद ही अपने सिर ले लिया है न? नरीमान और शिक्षापर ये लेख कब पढ़ूँ? साथका यह वक्तव्य[1] एसोसिएटेड प्रेसको तारसे भेजना ठीक होगा न? जैसा तुम्हें ठीक लगे, वैसा करना। फलोंकी बात समझा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५५२) से।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

७८. पत्र : हरिहर शर्माको

२० अगस्त, १९३७

० अण्णा,

तुम्हारा पत्र मिला। दुःख मानने की कोई आवश्यकता नहीं थी। मेरे दिलपर चोट स्टेशनपर लगी उसे बताना ही चाहिये था। न बताने से मित्रद्रोह लगता। उससे पहले यदि शंकित बन जाता तो अवश्य कराता। जब तुमने मेरी संमति ने पर जाने का इरादा कर लिया था तब तुम्हारे अपने कामको किसी-न-किसी सुपुर्द कर जाना चाहिये था। मानो कि मैं संमति न देता तो कोई आपत्ति होनेवाली थी, क्योंकि सुपुर्द नहीं किया उसमें मुझे जो-कुछ हुआ और यकायक ा पड़ा वह भी तुमने देख लिया। और मेरे स्टेशनपर उतरते ही।

पत्रकी नकलसे; प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

७९. चर्चा : नशाबन्दीके बारेमें[1]

[२१ अगस्त, १९३७ के पूर्व]

गांधीजी : नये सुधारोंकी सबसे क्रूर विडम्बना यह है कि हमारे पास अपने की शिक्षाके लिए शराबसे प्राप्त होनेवाले राजस्वके सिवा कोई और सहारा है। शिक्षाके मामलेमें यह जटिल समस्या है, पर हमें इससे किंकर्त्तव्यविमूढ़ नहीं चाहिए। हमें इसका समाधान निकालना है और उस समाधानमें हमें मद्यनिषेधके आदर्शको नहीं छोड़ना है, चाहे उसकी कुछ भी कीमत क्यों न देनी पड़े। यह ा लज्जास्पद और अपमानजनक होना चाहिए कि शराबसे प्राप्त होनेवाले राजस्व ना हमारे बच्चे शिक्षासे वंचित रह जायेंगे। किन्तु यदि यही होना है, तो त छोटी बुराई मानकर हमें इसीको स्वीकार करना चाहिए। यदि हम केवल : हौए को अपने दिमागपर हावी न होने दें और हमारे बच्चोंको जिस शिक्षा आज मिल रही है उन्हें ठीक वैसी ही शिक्षा देनेकी कल्पित आव- मनको परेशान न होने दें तो यह समस्या हमें किंकर्त्तव्यविमूढ़ नहीं कर

[1] महादेव देसाईके "द एजुकेशन पज़ल" (शिक्षाकी जटिल समस्या) शीर्षक लेखसे उद्धृत।

प्रश्नकर्त्ता : तो आप आज जो माध्यमिक शिक्षा कहलाती है उसे सचमुच बन्द कर देंगे और मैट्रिकुलेशन तककी पूरी शिक्षा ग्राम-शालाओंमें ही देंगे?

उ० : बेशक। आपकी माध्यमिक शिक्षा इसके सिवा और है ही क्या कि बेचारे बालकोंको एक विदेशी भाषामें सात सालतक वह सब सीखने के लिए बाध्य किया जाता है जो वे अपनी मातृभाषामें केवल दो सालमें सीख सकते हैं? यदि आप केवल यह निश्चय कर लें कि बच्चोंको पाठ्य विषय एक विदेशी भाषामें सीखने के दुःस्वप्नसे मुक्त करना है, और यदि आप उन्हें अपने हाथ-पैरोंका सदुपयोग करना सिखायें, तो शिक्षाकी समस्या सुलझ जाती है। फिर तो मद्यसे प्राप्त होनेवाले पूरे राजस्वको आप बिना किसी पश्चात्तापके त्याग सकते हैं। परन्तु आपको इस राजस्वके त्यागका निश्चय पहले करना चाहिए, और शिक्षाके उपायों और साधनोंके बारेमें बादमें सोचना चाहिए। श्रीगणेश बड़े कदमसे कीजिए।

प्र० : लेकिन क्या मद्यनिषेधकी घोषणा-मात्रसे ही मद्यनिषेध हो जायेगा? क्या यह आशंका नहीं है कि मद्यपानके अभिशापको समाप्त करना तो दूर रहा कहीं हम उसे छुए बिना ही उसके राजस्वसे हाथ न धो बैठें?

उ० : घोषणाका अर्थ यह नहीं है कि आप उसके बाद हाथपर-हाथ धर कर बैठे रहें। इसके विपरीत, आप हर किसीको अपने इस कार्यमें लगायेंगे। दर-असल, कर्मचारियोंका पूरा दल — आबकारी इंस्पेक्टरोंका दल, उनसे ऊपर के अधि-कारियोंका दल और उनके तमाम मातहत कर्मचारियोंका दल — मौजूद है। आप उन्हें बतायेंगे कि उनकी सेवाकी शर्तें इसके सिवा और कुछ नहीं होंगी कि वे पूर्ण मद्य-निषेधके लिए काम करें। प्रत्येक मद्यशालाको आप मनोरंजन-केन्द्रमें परिवर्तित करेंगे। जिन जगहोंपर मद्यपानके अवसर सबसे ज्यादा हैं, वहाँ आप अपना ध्यान केन्द्रित करेंगे। मिलों और कारखानोंके मालिकोंसे आप कहेंगे कि वे उपाहार-गृहोंकी व्यवस्था करें, वहाँ श्रमिकोंके लिए गन्नेके रस-जैसे ताज़गी देनेवाले पेय पदार्थों और खेलोंका प्रबन्ध करेंगे, उनके लिए लैन्टर्न शो आयोजित करेंगे, और उन्हें यह महसूस करायेंगे कि वे भी आप-जैसे ही हैं। बिना किसी अपवादके, हर किसीको अपने इस कार्यमें लगायें। गाँवका स्कूल-मास्टर और अन्य अधिकारी, सबको मद्यनिषेधके कार्यकर्त्ता बनना चाहिए।

प्र० : बहुत ठीक। पर बहुत-से स्थानोंपर आप गाँवके पटेल और अन्य लोगोंको शराबियोंके साथ उनकी रंगरेलियोंमें भाग लेते पायेंगे। उनका क्या होगा?

उ० : आपके स्कूलके बच्चोंमें से हरएक मद्यनिषेधका कार्यकर्त्ता होगा। मंत्री देहातोंका दौरा करेंगे और मनोरंजन-केन्द्रोंमें परिवर्तित मद्यशालाओंमें जायेंगे, वहाँ सर्व-साधारणके साथ बैठकर ताजगी देनेवाले पेय पियेंगे, और इस तरह इन स्थानोंको लोकप्रिय बनायेंगे।

आप यह सोचकर हतोत्साह न हों कि मद्यनिषेध अमेरिकामें असफल रहा है। यह बात याद रखिए कि यह विराट् प्रयोग वहाँ करके देखा गया था जहाँ मद्यपान

कोई बुराई नहीं मानी जाती है, जहाँ करोड़ों लोग आमतौरपर शराब पीते हैं। यहाँ मद्यपान सभी धर्मोंमें निन्दनीय माना जाता है और यहाँ करोड़ों लोग नहीं, बल्कि कुछ व्यक्ति शराब पीते हैं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २१-८-१९३७

८०. हिन्दी-उर्दू

श्री जवाहरलाल नेहरूके बहुमूल्य निबन्धसे,[1] जो कांग्रेस राजनीतिक एवं आर्थिक अनुशीलन-मालाका छठा पुष्प है, मैं उनके निम्नलिखित सत्रह मुख्य सुझाव उद्धृत कर रहा हूँ।[2]

वस्तुतः पाठकोंको चाहिए कि वे इस पुस्तिकाको प्राप्त करके स्वयं इसका उचित मनोयोगसे अध्ययन करें। यह अ० भा० कां० क० कार्यालय, स्वराज्य भवन, इलाहाबादसे चार आना मूल्य और एक आना डाक-खर्च देकर प्राप्त की जा सकती है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २१-८-१९३७

८१. टिप्पणियाँ

निर्देश-पत्र नहीं

कांग्रेसी मन्त्रियोंके सामने जो रचनात्मक कार्यक्रम है उसके सम्बन्धमें हालके मेरे लेखोंको कुछ समाचार-पत्रोंमें "निर्देश-पत्र" की संज्ञा दी गई है। कांग्रेसी मन्त्रियोंके लिए निर्देश जारी करने का अधिकार कांग्रेस-अध्यक्ष और कार्य-समितिके अतिरिक्त और किसीको नहीं है। मैंने जो-कुछ लिखा है वह तो अति विनम्र टिप्पणी है। मैं तो ऐसे विषयोंपर सिर्फ सलाह ही दे सकता हूँ जिनके बारेमें विशेष ज्ञान या अनुभव रखने का दावा कर सकता होऊँ। मेरे लेखोंका केवल उसी हदतक मूल्य है जिस हद-तक उन लोगोंकी बुद्धिको जँचे जिनके लिए वे लिखे गये हैं। यद्यपि मुझे कार्य-समितिका विश्वास प्राप्त है, फिर भी मेरे द्वारा व्यक्त किये गये विचारोंको उसके विचारों या उसके किसी एक गुटके भी विचारोंका प्रतिबिम्ब नहीं मानना चाहिए। वस्तुतः लोगोंको यह जान लेना चाहिए कि कई मामलोंमें मेरे विचार बहुत-से सदस्योंके

१. गांधीजी के प्राक्कथनके लिए देखिए पृ० ७।
२. देखिए परिशिष्ट १।

विचारोंसे मेल नहीं खाते। इसलिए इन स्तम्भोंमें मैं जो-कुछ कहूँ उसे कार्य-नमितिका नहीं, बल्कि पूर्णतया मेरा वैयक्तिक विचार ही समझना चाहिए।

परन्तु जहाँतक अहिंसात्मक कार्रवाइयों द्वारा स्वराज्य-प्राप्तिके संघर्षका सम्बन्ध है, बेशक मैं विशेष योग्यताओंका दावा करता हूँ। मेरे लिए, कांग्रेस घोषणा-पत्र और कांग्रेस-प्रस्तावोंके अनुसार भी, मन्त्रीपद स्वीकार करने का एक विशेष अर्थ है। मन्त्रीपद स्वीकार करने के अपने उस अर्थको यदि मैं मन्त्रियों और जनताके आगे न रखूँ, तो वह गलत होगा। पर यह जरूरी नहीं है कि वह सदा कांग्रेसका अधिकृत दृष्टिकोण या आम कांग्रेसजनोंका दृष्टिकोण ही हो। अपनी स्थिति और सीमाएँ मैंने स्पष्ट कर दी हैं, इसलिए मन्त्रियोंको और मुझे अब कोई उलझन महसूस नहीं होनी चाहिए। मेरे लेखोंको यदि अधिकृत या अनधिकृत कांग्रेसी दृष्टिकोणकी स्वीकृति माना गया, तो मैं अपनेको एक शिकंजेमें कसा महसूस करूँगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २१-८-१९३७

८२. तात्पर्य यह है

मैंने अपनी यह राय बेझिझक जाहिर की है कि कांग्रेसी मन्त्रियोंने अपने लिए जो वेतन तय किये हैं, वे उस स्तरसे बहुत अधिक हैं जो संसारके इस सबसे गरीब देशमें होने चाहिए। प्रोफेसर के० टी० शाहने बहुत ही जल्दीमें जो नोट मुझे भेजा है और जो पाठकोंको इसी अंकमें अन्यत्र मिलेगा, उसमें वे देखेंगे कि भारतकी प्रति-व्यक्ति वार्षिक आय ४ पौंड है जबकि ग्रेट ब्रिटेनकी ५० पौंड है। दुर्भाग्यसे ब्रिटिश विरासतका भार हमें अभी कुछ समय और वहन करना है और अपनी पूरी कोशिशों के बावजूद हम आदर्श स्तरपर नहीं पहुँच सके हैं। वेतन और भत्ते तो निश्चित हो चुके हैं। अब सवाल यह रहता है कि मन्त्री, उनके सचिव और विधायक जो परिलब्धियाँ लेंगे, क्या उनके मुताबिक वे कड़ा श्रम करके उनका औचित्य सिद्ध करेंगे? क्या सदस्य राष्ट्रकी सेवामें अपना पूरा समय लगायेंगे और अपनी सेवाओंका सही ब्योरा देंगे? हमें यह मान लेनेकी गलती नहीं करनी चाहिए कि हालात जैसे हम चाहते हैं या जैसे होने चाहिए वैसे ही हैं।

मन्त्री सादा जीवन बितायें और कड़ा श्रम करें इतना ही काफी नहीं है। उन्हें इस बातकी भी कोशिश करनी है कि उनके अधीन जो विभाग हैं वे भी ऐसा ही करें। उदाहरणके लिए न्याय सस्ता और शीघ्र मिले, ऐसी व्यवस्था की जानी चाहिए। आज तो वह धनिकोंके लिए विलास और जुआरियोंके लिए उल्लासका एक साधन है। पुलिसको लोगोंके लिए आतंकका कारण न होकर उनका मित्र होना चाहिए। शिक्षामें इतनी क्रान्ति लानी चाहिए कि वह साम्राज्यी शोषकोंकी जरूरतें पूरी करने की बजाय गाँवके सबसे गरीब लोगोंकी जरूरतें पूरी करे।

जो लोग राजनीतिक अपराधोंके कारण, चाहे उनका स्वरूप हिंसात्मक ही क्यों न हो, जेलोंमें बन्द हैं, वे सब, यदि मन्त्री उन्हें रिहा कर सकें तो, शीघ्र ही रिहा हो जायेंगे। यह एक ऐसी चीज है जिसे हमें नगण्य नही समझना चाहिए। क्या इसका अर्थ हिंसाकी छूट देना है? कांग्रेसके अहिंसाके सिद्धान्तके अनुसार तो ऐसा हर्गिज नहीं है। कांग्रेसको वैयक्तिक हिंसासे जितनी सच्ची अरुचि है उतनी तो उस सरकारको भी नहीं है जिसका स्थान अब वह ले रही है। वैयक्तिक हिंसाका सामना वह दण्ड कहलानेवाली संगठित हिंसासे नही, बल्कि अहिंसासे इस रूपमें करना चाहती है कि गलती करनेवाले व्यक्तियोंके प्रति उसका रवैया मैत्रीपूर्ण होगा और हर प्रकारकी हिंसाके विरुद्ध वह स्वस्थ जनमत तैयार करेगी। उसके तरीके दण्डात्मक नहीं, निरोधात्मक होंगे। दूसरे शब्दोंमें, कांग्रेस पुलिसके जरिये, जिसकी पीठपर सेना है, शासन नहीं करेगी, बल्कि अपने उस नैतिक अधिकारके जरिये शासन करेगी जो जन-साधारणके ज्यादासे-ज्यादा सद्भावपर आधारित है। वह श्रेष्ठतर सैनिक शक्तिसे प्राप्त अधिकारके बलपर शासन नहीं करेगी, बल्कि उस जनताकी सेवाके बलपर शासन करेगी, जिसका कि वह अपने सभी कार्योंमें प्रतिनिधित्व करने की कोशिश करती है।

सभी तरहके जब्त साहित्यपर से प्रतिबन्ध हटाया जा रहा है। मैं समझता हूँ कि जब्त पुस्तकोमें से कुछ ऐसी निकलेंगी जो हिंसाका प्रतिपादन करती होंगी, अश्लीलताका प्रचार करती होंगी, या विभिन्न वर्गों या सम्प्रदायोंमें द्वेष फैलाती होंगी। कांग्रेस-शासनका अर्थ हिंसा या अश्लीलताको छूट देना या द्वेषको बढ़ावा देना नहीं है। आपत्तिजनक साहित्यके मामलेमें भी कांग्रेस प्रबुद्ध जनमतके असीम समर्थनपर ही भरोसा करेगी। मन्त्री यदि अपने प्रान्तोंमें हिंसा, द्वेष या अश्लीलताको फैलते देखें, तो वे, फौजदारी कानून और उससे सम्बन्धित प्रक्रियाओंका सहारा लेने से पहले, कांग्रेस-संगठनों और अन्ततः कार्यसमितिसे सक्रिय और प्रभावी सहायताकी आशा करें। वस्तुतः कांग्रेसकी विजय इस चीजसे आँकी जायेगी कि वह पुलिस और सेनाको लगभग व्यर्थ बना देनेमें कहाँतक सफल होती है। और यदि उसे ऐसे संकटोंका सामना करना पड़ा जिसमें पुलिस और सेनाका उपयोग अनिवार्य हो, तो वह उसकी पूर्ण असफलता होगी। मौजूदा संविधानको नष्ट करने का सबसे अच्छा और कारगर तरीका कांग्रेसके लिए यही है कि वह निर्णायक रूपसे यह सिद्ध कर दे कि वह सेनाकी सहायताके बिना और पुलिसकी यथासम्भव कमसे-कम सहायतासे शासन कर सकती है। पुलिस संगठनमें, जैसाकि एक पत्र-लेखकने सुझाया है, कुछ नये और मैत्रीपूर्ण पद-नाम दाखिल किये जा सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २१-८-१९३७

८३. पत्र : वेरियर एलविनको

दुबारा नहीं पढ़ा

सेगाँव, वर्धा
२१ अगस्त, १९३७

प्रिय वेरियर,

जमनालालजी के नाम लिखे तुम्हारे पत्र और अब बापाको लिखे अपेक्षाकृत विस्तृत पत्रको पढ़कर दुःख हुआ। ईश्वरने तुम्हें और भी बड़ी सेवा करने के लिए बचा लिया है। तुम्हें हताश नहीं होना चाहिए। हताशा मनुष्यकी आस्थाके अभावका मापदण्ड है। बापाके पत्रमें तुमने कहा है: "ईसाई होनेके नाते मुझमें जैसी श्रद्धा होनी चाहिए उसका या धार्मिक श्रद्धाका अधिकांश मैं खो बैठा हूँ। न्यायप्रिय और नेक ईश्वर गरीबोंका ऐसा दुःख कैसे सह सकता है?" यहाँ क्या तुम ईश्वरके सम्बन्ध में फतवा नहीं दे रहे हो। हम यह कहनेवाले कौन होते हैं कि वह अमुक चीजोंको क्यों सहता है, क्यों होने देता है? अगर हम ईश्वरके हर कार्यको बुद्धिकी कसौटी पर परख सकें तो फिर श्रद्धाकी गुंजाइश ही कहाँ रह जायेगी। फिर तो हम ईश्वरके समकक्ष बन जायेंगे। तुमपर जो अत्याचार हुआ है उसे मैं समझता हूँ,[1] लेकिन यही तो परीक्षाकी घड़ी होती है। तुम्हारी श्रद्धा हिमालयकी तरह अविचल होनी चाहिए। सच तो यह है कि क्षय हिमालयका भी होगा, लेकिन अगर तुम्हारी श्रद्धा किसी योग्य है तो उसका क्षय कभी नहीं हो सकता। नहीं, ऐसा नहीं चल सकता। तुम्हें प्रसन्न होना है। बेकारकी चिन्ता और दुःख अब और नहीं!

ठक्कर बापाने महादेवको लिखे अपने संलग्न पत्रमें कहा है कि तुम ऐसा मानते हो कि मैं तुमसे नाराज हूँ। उसके द्वारा तुमपर या तुम्हारे द्वारा मुझपर लगाया गया यह कैसा आरोप है? मेरा तुमसे मतभेद हुआ है। यह तुम्हें मालूम है। लेकिन तुमने ऐसा कुछ तो कभी नहीं किया जिससे मैं तुमपर नाराज होऊँ। मेरा प्रेम ऐसी बहुत-सी परीक्षाओंको झेल सकता है। लेकिन तुमने तो उसकी कोई परीक्षा ही नहीं ली है। वह आज भी उतना ही जाज्वल्यमान है जितना कि कभी रहा है। तो उसी विपुल भण्डारमें से ढेर-सा स्नेह ग्रहण करो और उसे शामराव[2] आदिके बीच बाँट दो।

बापू

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

१. सम्भवतः तात्पर्य एलविन और चर्चके अधिकारियों में मतभेद से है।
२. शामराव हिवले, वेरियर एलविनके सहयोगी।

८४. पत्र : महादेव देसाईको

२१ अगस्त, १९३७

चि० महादेव,

प्रेमा जिस पुस्तकके[1] बारेमें लिख रही है, वह कहाँ है? मेरी समझमें तो वह मुझे नहीं मिली है। आज शामको छह बजेसे मौन शुरू किया है, और मौन तो मुझे माफिक आता ही है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

वेरियरका पत्र भेज देना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५५३) से।

८५. पत्र : जयन्ती एन० पारेखको

सेगाँव, वर्धा
२२ अगस्त, १९३७

चि० जयन्ती,

तेरा पत्र मिला। छोटे हों या बड़े, सबके बरस बीतते जा रहे हैं। कालचक्र की गति एक क्षणके, लिए भी नहीं रोकी जा सकती।

कल तुम सब बिलकुल बच्चे थे। अब बच्चे नहीं रहे। मुझे तो यह प्रयत्न-पूर्वक याद रखना पड़ता है। तेरी शुभकामनाएँ सफल हों, और तेरा जीवन सदा भुखमरी आदि अनेक कष्टोंसे पीड़ित लोगोंके कष्ट-निवारणमें बीते। जिन अवांछनीय परिवर्तनोंके बारेमें तू मुझे लिख रहा है, उनकी ओर सीधे सरदारका ध्यान क्यों नहीं आकर्षित करता? तुझे यह डर तो नहीं है न कि वे तेरी बात नहीं सुनेंगे? अगर हाँ, तो इस डरको निकाल बाहर करना। आशा है, दिनकरकी शक्ति लौट रही होगी।

इन्दुका मन स्थिर हो जाये तो बड़ा काम हो जाये।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२६५) से।

१. ब्रह्मचर्यके बारेमें प्रेमाबहन कंटक द्वारा लिखित; देखिए "पत्र: प्रेमाबहन कंटकको", २५-८-१९३७ भी।

८६. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेगाँव, वर्धा
२२ अगस्त, १९३७

भाई वल्लभभाई,

आज मेरे नाम जयन्तीका पत्र आया है, वह साथ भेज रहा हूँ। मैंने उसे लिखा है[1] कि मुझे लिखने के बजाय सीधे तुमको लिखना अधिक अच्छा होगा। यदि साथके पत्रका उत्तर तुम ही दो तो ठीक होगा।

नरीमानकी तरफसे पत्र आ रहे हैं। उनकी नकलें तुम्हें नहीं भेज रहा हूँ। जिनकी नकल भेजना उचित होगा उनकी तो भेजूँगा ही।

मेरे स्वास्थ्यके बारेमें चिन्ता मत करना। मैं आराम कर रहा हूँ, और अब उसका समय और बढ़ा लूँगा।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
पूना

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २१०

८७. पत्र : मूलशंकर नौतमलालको

सेगाँव, वर्धा
२३ अगस्त, १९३७

चि० मूलशंकर,

मुझे नहीं लगता कि तुम्हारा १९ मार्चका पत्र मुझे मिला है।

तुम मन लगाकर काम कर रहे हो, यह अच्छा है। ऐसे ही करते रहना।

विवाहके सम्बन्धम मैं जिसे धर्म मानता हूँ, वह यह है : माता-पिता विवाह करने को, अथवा अपने ही मनके किसी व्यक्तिसे विवाह करनेको, बाध्य नहीं कर सकते। अपने साथीका चुनाव करने में पुत्र अथवा पुत्री अपने माता-पिताकी बात अत्यंत

१. देखिए पिछला शीर्षक।

आदरपूर्वक सुनें; किन्तु जहाँ उनका मन न माने, वहाँ वे विवाह न करें। इसी प्रकार जिस सम्बन्धसे माता-पिता प्रसन्न न हों, वह सम्बन्ध भी न करें।

जबतक संयमका पालन करने की शक्ति हो, तबतक विवाहकी इच्छाका दमन करने मे मैं कोई हर्ज नहीं मानता। अलबत्ता, अपनेको किसी प्रकारके धोखेमें नहीं रखना चाहिए।

फिरसे जेल जानेका मौका आ जाये, तो जिनमें आत्म-बलिदानकी भावना तीव्र हो, उन्हें जेल जाने का अधिकार है। इसमें बड़े-बूढ़ोंके आशीर्वाद प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिए। किन्तु मैं ऐसी स्थितिकी सम्भावनाकी कल्पना कर सकता हूँ जिसमें इस प्रकारका आशीर्वाद न मिले और तब भी आत्म-बलिदान करना कर्त्तव्य हो। प्रत्येक मामलेमें परिस्थितिकी जाँच करके ही निर्णय किया जा सकता है।

मुझे लगता है, इसमें तुम्हारे सभी सवालोंका जवाब आ जाता है। कुछ रह गया हो तो फिर पूछना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २५८५) से। सी० डब्ल्यू० ९४६४ से भी; सौजन्य: मूलशंकर नौतमलाल

८८. पत्र : महादेव देसाईको

सेगाँव
२३ अगस्त, १९३७

चि० महादेव,

महत्त्वके पत्र छोड़कर 'हरिजन' के लिए लिखता रहा हूँ। अभी तीन बजकर पच्चीस मिनट हुए हैं और अन्तिम लेख पूरा किया है। एक भी फिरसे नहीं पढ़ा। राजकुमारीने इन्हें दोहराया है। तुम देख लेना। जितने टाइप हो सके, उतने कराये हैं; लेकिन जो दो बजेके बाद लिखे गये वे कैसे टाइप होते? मेरी सलाह है कि समय न हो, तो ज्यों-के-त्यों भेज देना। समय हो, और नकल कराओ तो एक-एक नकल मुझे भेजना। जो टाइप किये गये हैं, उनकी भी सभी नकलें तुम्हारे पास आ रही हैं। अगर सम्भव हो तो [सबकी एक-]एक नकल मुझे भेजना। आज तो अब और कुछ नहीं भेज पाऊँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५५४) से।

८९. सन्देश : त्रावणकोर महिला सम्मेलनको[1]

[२४ अगस्त, १९३७ के पूर्व][2]

मेरी हार्दिक इच्छा है कि त्रावणकोरकी महिलाएँ अपने हृदयसे अस्पृश्यता और उसके सभी भावोंको मिटाकर तथा जो शराबबन्दी आन्दोलन अभी शुरू हुआ है उसमें यथेष्ट भाग लेकर धर्मको शुद्ध बनाने में अपनी भूमिका अदा करें।[3]

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २५-८-१९३७

९०. पत्र : जी० ए० नटेसनको

सेगाँव, वर्धा
२४ अगस्त, १९३७

प्रिय नटेसन,

आपके पत्र तथा कतरनके लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। जो-कुछ आपने किया है, वह सब आपके अनुरूप है। आपने अपना मतभेद [illegible] व्यक्त किया और अपने विचारको खुले तौरपर सुधार लिया है।

शिक्षाके बारेमें 'हरिजन' के[4] आगामी अंकमें आप देखेंगे कि मैंने आपके पत्रका उपयोग किस प्रकार किया है।

मुझे सख्त आदेश दिया गया है कि यदि मैं गम्भीर परिणामोंसे बचना चाहता हूँ तो मुझे आराम करना चाहिए। इसलिए मैं आपके किये हुए संस्कृत-ग्रन्थोंके सार-संक्षेपको[5] पढ़ना शुरू करूँ, इसके लिए तो अभी आप कृपया प्रतीक्षा करें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २२३७) से।

१. यह सम्मेलन क्विलोन में हुआ था।

२ और ३. सम्मेलन २४ अगस्त को समाप्त हो गया था, जिसमें "महाराजा और महारानी के प्रति मन्दिर-प्रवेश घोषणा जारी करने के लिए हार्दिक कृतज्ञता प्रकट की गई थी और एक अखिल केरल हिन्दू महिला परिषद् स्थापित करने का निश्चय किया गया था।"

४. देखिए "टिप्पणियाँ", २८-८-१९३७ का उप-शीर्षक "अनावश्यक भय"।

५. **रामायण, महाभारत** आदि का।

९१. पत्र : जी० कनिंघमको

सेगाँव, वर्धा
२४ अगस्त, १९३७

प्रिय मित्र,

इस महीनेकी १७ तारीखके आपके पत्रके[1] लिए धन्यवाद। जाहिर है कि परम-श्रेष्ठ वाइसरायने सीमा-पारके बारेमें मुझसे जो कहा, वह मेरी समझमें नहीं आया। उनका अभिप्राय मुझे यह जान पड़ा कि मुझे सीमा पार करने की आज्ञा देने की बात वे नहीं सोच सकते। और मैंने वाइसरायके निर्णयको जिस रूपमें समझा उस रूपमें मान लिया। साथ ही मैंने यह भी लिखा कि मैं इस आशाको नहीं छोड़ रहा हूँ कि जब मेरी ईमानदारी और योग्यताके विषयमें वे पर्याप्त आश्वस्त हो जायेंगे तब मुझे सीमा पार करने की अनुमति देने में कोई झिझक नहीं रह जायेगी। लेकिन यह बात इस पत्रके लिए अप्रासंगिक है। मैं इन शब्दोंके फलितार्थको जानना चाहूँगा कि मैं वहाँ जाऊँ तो "कबीलोंसे सम्बन्धित किसी भी मामलेमें किसी तरहका दखल न दूं।" ऐसी बात नहीं कि मुझे सीमा-पारके मामलोंमें दखल देने की कोई इच्छा है। जब मैंने लॉर्ड हैलीफैक्स, जो तब लॉर्ड इर्विन थे, के सामने पहले-पहल इस विषयको छेड़ा था[2] उस समय मेरा जो इरादा था वही आज भी है—अर्थात् यह कि मैं सीमा-स्थित पठानोंको स्वयं उनके घरमें देखना-जानना चाहता हूँ, खुदाई खिदमत-गारोंका परिचय पाना चाहता हूँ और खुद इस बातका पता लगाना चाहता हूँ कि उनका सर्वथा अहिंसक होने का दावा कहाँतक सही है और कैसे पठानोंके कल्याणके लिए, जिसकी खान साहब अब्दुल गफ्फार खाँको इतनी ज्यादा लगन है, कार्य कर सकता हूँ। जिस तरह मैं उन्हें सर्वथा निश्छल और विश्वसनीय व्यक्ति मानता हूँ उसी तरह वे भी मुझपर आँख मूंदकर भरोसा करते हैं। लेकिन मैं मानता हूँ, यह अवश्यम्भावी है कि लोग सीमा-पारकी समस्याओंकी चर्चा करने मेरे पास आयेंगे। क्या मुझे उनकी समस्याओंकी गाथा नहीं सुननी चाहिए, बल्कि यदि वे उनपर मेरी राय माँगें और उनकी बातोंको सुनकर मैं कोई राय कायम कर पाऊँ तो क्या मुझे उनको वह राय भी नहीं देनी चाहिए?

आपके दिल्लीमें रहते हम दोनोंका पहला परिचय हुआ था और अगर सीमा-प्रान्त जाने का अवसर मिलने पर भी मुझे आपके साथ उस परिचयको फिरसे ताजा किये बिना वहाँसे लौट आना पड़ा तो निश्चय ही मुझे बहुत दुःख होगा।

१. देखिए परिशिष्ट ३।

२. मार्च, १९३१ में; देखिए खण्ड ४५, पृ० २७४-७५।

खान साहबके मामलेके बारेमें आप फिर पत्र लिखेंगे, ऐसी आशा कर रहा हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्च :]

अभी-अभी अखबारोंमें पढ़ा है कि प्रतिबन्ध हटा लिया गया है। मैं आभारी हूँ।

परमश्रेष्ठ गवर्नर
पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्त

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७९९१) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

९२. पत्र : मंगलदास पकवासाको

सेगाँव, वर्धा
२४ अगस्त, १९३७

भाई मंगलदास,

कुमारप्पाने खबर दी है कि तुमने कमाईका रास्ता हमेशाके लिए छोड़ दिया है, और अपना शेष जीवन केवल सेवार्थ बिताना चाहते हो। तुम्हारा शुभ निश्चय कायम रहे! ऐसे त्यागकी जरूरत तो है ही। हमारे पूर्वज जब वानप्रस्थ आश्रममें प्रवेश करते थे तो उसका ध्येय भी कुछ ऐसा ही होता होगा न?

नरीमानके प्रकरणमें तुम्हारी ओरसे परिपूर्ण समीक्षात्मक विवरणकी आशा रखता हूँ। आखिर तुम तो अध्यक्ष थे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४६७८) से; सौजन्य : मंगलदास पकवासा

९३. पत्र: प्रेमाबहन कंटकको

सेगाँव, वर्धा
२५ अगस्त, १९३७

चि० प्रेमा,

मेरे स्वास्थ्यके बारेमें तो तूने सुना ही होगा। कमसे-कम मानसिक परिश्रम और अधिकसे-अधिक आराम, यह हुक्म है। मस्तिष्क और दाहिना हाथ पूरा आराम चाहते हैं, इसलिए तुझे अभी जितना चाहिए उतना ही कहकर निपटा देता हूँ।

तेरी राखी बाँध ली। समयपर मिल गई थी।

तेरे प्रश्नोंका उत्तर नये सिरे से ही लिख डाला है।[1] पुराने उत्तर गलत नहीं हैं। अपूर्ण होनेके कारण उनका अनर्थ हो सकता है। पुराना लौटाता हूँ। इसे रद्द कर देना। यह छपना तो कदापि नहीं चाहिए। नया उपयोगी हो तो छाप देना। तेरे पत्र सुरक्षित रखे हैं। तबीयत अच्छी होने पर उत्तर दूँगा। अगर पत्र लिखाने की इजाजत मिल जाये तो हो सकता है जवाब बहुत जल्दी भी भेज दूँ।

मेरे बारेमें चिन्ताका कोई कारण नहीं। परन्तु मुझे बहुत सावधान रहकर चलना है।

बापूके आशीर्वाद

प्रश्न: एक प्रोफेसर हैं। वे विवाहित हैं। प्रोफेसर ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहते हैं। पत्नीको यह मंजूर नहीं है। ऐसी परिस्थितिमें उक्त भाईका कर्त्तव्य क्या है?

उत्तर: यदि विवाहके बाद पतिके मनमें यह विचार आया हो, तभी यह प्रश्न उत्पन्न होता है। धार्मिक विवाहसे मेरा तात्पर्य यह है कि स्त्री-पुरुष संसर्ग केवल सन्ततिके लिए ही हो, विकार-तृप्तिके लिए कदापि नहीं। जो विवाहका ऐसा अर्थ नहीं करते वे एक-दूसरेकी सुविधाका विचार रखेंगे। सहमति न हो तो उसे बलात्कार ही कहा जायेगा।

अब उपर्युक्त प्रश्नको लें। जहाँ ब्रह्मचर्य-पालनकी इच्छा केवल पतिको है, पत्नीको नहीं, वहाँ यदि पति बिलकुल ही निर्विकार हो गया हो, अर्थात 'गीता' के श्लोक

१. ब्रह्मचर्य के पालन की आकांक्षा रखनेवाले एक विवाहित प्रोफेसर के साथ हुई गांधीजी की चर्चाके आधारपर प्रेमाबहन कंटकने एक उपन्यास लिखा था। प्रेमाबहन ने गांधीजी के उत्तर को अपने उपन्यास में सम्मिलित कर लिया। इस उपन्यासका गुजराती अनुवाद **काम अने कामिनी** शीर्षक से प्रकाशित हुआ था।

२/५९ के शब्दोंमें उसे पर-दर्शन हो चुका हो तो सम्भोग असम्भव है। पत्नी पतिकी दशाको समझकर स्वयं निर्विकार हो जायेगी। किन्तु प्रस्तुत प्रश्नमें तो बात प्रयत्न की ही है। जिस प्रयत्नकी कल्पना विवाहके अवसरपर नहीं थी, उस प्रयत्नकी दिशामें तो दोनोंकी सम्मतिसे ही बढ़ा जा सकता है। अर्थात् पत्नीकी सहमतिके बिना पति ब्रह्मचर्यका व्रत नहीं ले सकता। सामान्य संयमका प्रयत्न तो सभी करते हैं। एककी भी इच्छा संग करने की होने पर दूसरेकी भी काफी हदतक स्वीकृति होती है। अथवा थोड़े अनुरोधके बाद हो जाती है। जहाँ ऐसा न हो वहाँ कटुता उत्पन्न हो जाती है। लोगोंके पर्याप्त अनुभवों और उनपर किये गये विचारके आधारपर मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि संयम-पालन एक-दूसरेपर ही निर्भर है। इस तरह प्रश्न सदोष है, यह कहना ठीक होगा। जहाँ ब्रह्मचर्य स्वयंसिद्ध है, वहाँ तो प्रश्न ही नहीं उठता। जहाँ विकार होते हुए भी बात प्रयत्न की है, वहाँ प्रश्न करने योग्य कुछ नहीं है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३९३) से। सी० डब्ल्यू० ६८३२ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

९४. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

सेगाँव, वर्धा
२५ अगस्त, १९३७

भाई घनश्यामदास,

मैं क्या लिखूं? मेरी बुद्धि एक ही तरह काम कर सकती है। मुझे मालूम नहीं कि मैं कैसे मदद दे सकूं? जिस बातमें मैं अनजान हूं उसमें क्या अभिप्राय कायम करूं? इसलिए मैं तो इतना ही कहूंगा कि जो भारतवर्षके लिये हितावह समझा जाय, उसे करो। भले कांग्रेसवालों·का अभिप्राय कैसे भी हो। इतना विश्वास रखो कि जो हितावह होगा उसे कांग्रेसने कबूल करना ही होगी। यदि कबूल नहीं होगा तो कांग्रेसकी प्रतिष्ठा घट जायगी। कांग्रेसके पास प्रतिष्ठाके सिवाय कोई धन नहीं। हां, उसकी प्रतिष्ठा करोड़ों गरीबोंकी सम्मतिपर निर्भर है। इसलिये भारत-वर्षका हितका अर्थ एक ही होता है — करोड़ोंका आर्थिक, बौद्धिक और नैतिक हित। यह मैंने कोई नई बात नहीं लिखी। कोई वक्त ऐसी सिद्धांतिक बातें किसी मित्रसे सुनते हैं तब असर होता है।

मेरी तबियत खासी है ऐसा माना जाय। थोड़ी दुर्बलता है वह निकल जायगी। स्थानांतर करने की आवश्यकता नहीं है। सरहद जाना होगा तो स्थानांतर हो ही जायगा। वहांकी आबोहवा तो अच्छी है ही। फलादि काफी मिलते हैं।

तुम्हारा शरीर अच्छा बन रहा होगा। आपरेशनने खासी मदद दी होगी।

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ७९८३ से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

९५. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

सेगाँव, वर्धा
२६ अगस्त, १९३७

प्रिय च० रा०,

पता नहीं आपके पास हिन्दी प्रचार सभाके बारेमें सोचने के लिए कुछ भी समय है या नहीं। उसकी आर्थिक स्थितिके बारेमें राघवन बहुत चिन्तित है। वह उत्तर भारतमें रहनेवालों से पैसोंकी आशा करता है, लगता है इस सम्बन्धमें दक्षिण भारतमें रहनेवालों पर उसका विश्वास नहीं है। और यहाँ उत्तरवालों का भी भरोसा नहीं किया जा सकता। जमनालालजी का खयाल है कि दूसरे प्रान्तोंकी उपेक्षा की गई है। क्या आपको ऐसा लगता है कि आप वहाँ कुछ इकट्ठा कर सकेंगे? मैं यह आशा नही करता कि आप इस काममें कुछ ज्यादा समय लगायें; मैं तो इस बातकी ओर आपका ध्यान-भर दिला रहा हूँ।

आशा करता हूँ कि दिनमें आपने एक घंटा आराम करना शुरू कर दिया होगा। वह एक कर्त्तव्य है जिसकी आप उपेक्षा नहीं कर सकते।

सस्नेह,

बापू[1]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०६७) से।

१. महादेव देसाई ने पत्र के अन्त में जोड़ी हुई अपनी पंक्तियों में लिखा था : "स्वयं बापूकी स्थिति हमारे लिए बड़ी चिन्ता का कारण बन गई है। डॉ० गिल्डरकी जाँचके अनुसार रक्तचाप २००/१२० था और बाहरी लक्षण भी सुखद नहीं हैं। वे स्वयं आराम करने की कोशिश कर रहे हैं, किन्तु उनके लिए आराम कहाँ?"

९६. पत्र : एडिथ हंटरको

सेगाँव, वर्धा, म० प्रा०
२६ अगस्त, १९३७

प्रिय बहन,

यह रहा मेरा सन्देश। इसका आप जैसा उपयोग करना चाहें, कर सकती हैं।

सच्ची विश्व-शान्तिकी प्राप्ति तबतक असम्भव है जबतक कि आपसी संहार के साधनोंके आविष्कारके लिए और उनका संगठन करके उन्हें अधिक सक्षम बनाने के लिए जितनी चाहिए उससे ज्यादा वैज्ञानिक बारीकी, आत्माकी ज्यादा गहरी व्याकुलता, ज्यादा धैर्य तथा ज्यादा साधन-सम्पत्ति सुलभ नहीं हो जाती। वह शान्ति चाहनेवाले लाखों मनुष्योंके एक बहुत लम्बी-चौड़ी नामावलीपर हस्ताक्षर करने मात्रसे प्राप्त नहीं की जा सकती। लेकिन यदि शान्तिका कोई विज्ञान है और मैं मानता हूँ कि है तो उसे प्राप्त किया जा सकता है और उसका रास्ता यह है कि चंद लोग इस शान्तिके साधनोंकी खोजमें प्राणपणसे जुट जायें। उनके प्रयत्न अन्दरसे होंगे, इसलिए उनमें कोई बाहरी आकर्षण नहीं होगा किन्तु तब उनमें एक धेलेके भी खर्चकी जरूरत नहीं पड़ेगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीमती एडिथ हंटर
सेक्रेटरी, फ्रेन्ड्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी
४७, विक्टोरिया स्ट्रीट
लन्दन एस० डब्ल्यू० १

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १५३४) से। प्यारेलाल पेपर्स से भी; सौजन्य : प्यारेलाल

९७. पत्र : चन्दन पारेखको

सेगाँव
२६ अगस्त, १९३७

चि० चन्दन,

तेरा स्पष्ट पत्र मिला। अब मुझे और कुछ पूछने को नहीं रह जाता। तू लिखती है कि मैं यह पत्र शंकरको[1] भेज दूँ और काका साहबके सिवाय किसीको न दिखाऊँ, ऐसा क्यों? हमसे कोई अपराध हो गया हो किन्तु फिर यदि हमने अपने अपराधका मार्जन कर लिया तो उसे भले सारा संसार भी जान ले। इसमें शरमाने की भी क्या बात है? फिर, तुझे तो स्त्री-जातिकी सेवा करनी है। तू तो लड़कियोंको . . . के[2] पाशसे बचाना चाहती है, क्योंकि तेरी मान्यताके अनुसार उनका सम्पर्क लड़कियोंके लिए अत्यन्त हानिकारक है। तो जबतक तू अपने साथ हुई उनकी चेष्टाओं का पर्दाफाश नहीं करेगी, तबतक मुझे अपने कार्यमें सफलता कैसे मिलेगी? इसलिए तेरा पत्र चाहे जो व्यक्ति पढ़े, इसमें तुझे किसी भी दृष्टिसे कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। इसका अर्थ यह भी नहीं है कि यह पत्र चाहे जिसको दिखाया जाये। फिर भी जहाँ-कहीं जरूरत हो, वहाँ बिना संकोचके इस पत्रको दिखाने की छूट होनी चाहिए। तेरे पत्रका यथोचित उपयोग किये बिना मेरी जाँच भी आगे नहीं बढ़ सकती। इसलिए इस पत्रकी नकल अपने पास रखकर मूल पत्र शंकरको भेजूँगा।

तुझे यदि इस मामलेसे निबटने के लिए शक्ति की जरूरत हो, तो तुझे अपने हृदयकी शक्ति बढ़ानी होगी। जो बहनें इस सम्बन्धमें कुछ जानती हों, उनसे विवरण प्राप्त करना होगा। उनमें से कोई ऐसी हो जो मुझे पत्र लिख सके तो उसे प्रोत्साहित करना। जैसा तू लिखती है, यदि इसी प्रकार सचमुच सब-कुछ हुआ हो तो इसमें तेरे शरमाने की तो कोई बात ही नहीं है। सारा दोष . . .का ही माना जायेगा; क्योंकि तेरे पत्रके अनुसार तुझमें विकार उत्पन्न करनेवाले भी तो वे ही थे, और अपने विकारोंकी तृप्तिमें उन्होंने तुझे ऐसा विवश कर दिया कि तूने भी उनकी चेष्टाओं में रस लिया। मेरा ऐसा समझना ठीक है न? मुझे बिना संकोच के पत्र लिखती रहना। तेरे पत्रकी नकल नानाभाईको[3] तो भेज ही रहा हूँ। इससे तू नाराज तो नहीं हो जायेगी? इतना भी न करूँ तो मेरी जाँच आगे नहीं बढ़ सकती।

१. शंकर उर्फ सतीश कालेलकर, चन्दन पारेखका मँगेतर।
२. नाम छोड़ दिया गया है।
३. नृसिंहप्रसाद कालिदास भट्ट।

आशा है, तेरा अध्ययन ठीक चल रहा होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९४३) से; सौजन्य: सतीश द० कालेलकर

९८. पत्र: महादेव देसाईको

२६ अगस्त, १९३७

चि० महादेव,

डाक अभी आई है। आज तो सारी सामग्री यहीं टाइप हो गई, इसलिए तुम्हें कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। डाकमें डाले जानेवाले पत्रोंकी बात तुमपर छोड़ता हूँ। शिवप्रसाद तो हद करता है। काले कौन है और श्रीधर कौन है? मैं कुछ समझ नहीं पाया। शिवप्रसादको ठीक खोज-बीन करनी चाहिए। कु[सुम] और छोटेलाल में से कोई जानता हो तो पूछना। उसे ये जवाब कैसे मिले?

सवेरेकी डाक मिल गई होगी। फल बराबर लेते ही रहना। नरीमानका तो अब जो होना हो सो हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५५५) से।

९९. तार: वाइसरायको

२७ अगस्त, १९३७

यदि अंडमानमें अभी तक भूख-हड़ताल चल रही हो तो क्या हड़-तालियोंको निम्नलिखित तार भेजने की कृपा करेंगे? उद्धरण आरम्भ। गुरुदेव टैगोरकी[1] और कार्य-समितिकी[2] सलाहके साथ मैं भी यह सलाह देना चाहता हूँ कि हड़ताल तोड़ दीजिए और भरोसा रखिए कि हम सब आपको राहत दिलाने की ज्यादासे-ज्यादा कोशिश कर रहे हैं। इस राष्ट्रव्यापी प्रार्थनाको मान लेना आपको शोभा देगा। यदि मुझे यह आश्वासन मिल सके कि जिन लोगोंका आतंकवादी तरीकोंमें विश्वास था, वे अब उनमें विश्वास नहीं रखते और

१. देखिए "तार: रवीन्द्रनाथ ठाकुरको", पृ० ५८।

२. देखिए परिशिष्ट ४।

अहिंसाको ही सबसे अच्छा तरीका मानने लगे हैं, तो इससे खुद मुझे बड़ी मदद मिलेगी। मेरी इस प्रार्थनाका आधार कुछ नेताओंका यह कहना है कि नजरबन्दोंने आतंकवादको तिलांजलि दे दी है; लेकिन इसके प्रतिकूल राय भी व्यक्त की गई है। गांधी। उद्धरण समाप्त। यदि आप इसका उत्तर तारसे माँगने की कृपा करें तो मैं आभारी होऊँगा।[1]

गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७७९३)से; सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

१००. पत्र : आर० गंगाधरनको

सेगाँव, वर्धा
२७ अगस्त, १९३७

प्रिय मित्र,

इसी महीनेकी १० तारीखके पत्रके लिए धन्यवाद।

विवाह कोई ऐसा काम नहीं है जिसमें कोई व्यक्ति अपनी लड़की या लड़केको उसकी इच्छाके विरुद्ध जहाँ चाहे वहाँ बाँध दे। मेरे बेटेने श्री राजगोपालाचारीकी बेटीसे विवाह किया, क्योंकि वे दोनों एक-दूसरेसे सच्चा प्रेम करते थे। दोनोंको हम लोगोंका आशीर्वाद भी प्राप्त हुआ। यदि आपका विवाह भी इसी तरह हो सके तो मुझे प्रसन्नता होगी। मेरे मनमें इस बारेमें कोई पूर्वग्रह नहीं है, लेकिन कोई तीसरा पक्ष ऐसे विवाह-सम्बन्ध तय नहीं करवा सकता।

मूँछें या शिखा रखना या दोनों रखना मैं अस्वास्थ्यकर नहीं मानता। युगों पुरानी इस रीतिके कारणके बारेमें मैं कुछ नहीं कह सकता, लेकिन जिस रिवाजको बन्द करने का मैं कोई ठोस कारण नहीं बता सकता और साथ ही जो रिवाज

१. वाइसरायने उसी दिन इसका यह उत्तर दिया था: "आपके सन्देशके लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। मैं इसे भूख-हड़तालियोंको भेजते हुए सूचित कर रहा हूँ कि वे आपको इसका उत्तर तारसे भेजें।" अंडमानसे मिले २८ अगस्तके तारमें कहा गया था: "आपका सन्देश मैंने खुद आज २८ अगस्तकी सुबह भूख-हड़तालियोंको दे दिया था। हड़तालको खत्म करने के प्रश्नपर विचार-विमर्श करने के लिए उन्होंने समय माँगा है और अभी सायं ७ बजे तक भी वे उसपर विचार कर रहे हैं। आशा है, कल और समाचार भेज सकूँगा।" २९ अगस्तको गांधीजी को निम्नलिखित तार मिला: "कल बहुत रात गये बहुत बड़ी संख्यामें लोगोंने भूख-हड़ताल स्थगित कर दी और उपवास तोड़ दिया। केवल सात व्यक्ति अब भी भूख-हड़तालपर हैं।" गांधीजी के उत्तरके लिए देखिए "तार: अंडमानके कैदियोंको", पृ० ९९।

नैतिकता या स्वच्छताकी भावनाकी दृष्टिसे अरुचिकर नहीं है उसे समाप्त करने में मेरा विश्वास नहीं है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

आर० गंगाधरन
तोप्पिक्काविलकम
वक्कम, डाकखाना – अंजुतेंगु, त्रावणकोर

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१०१. पत्र : जाकिर हुसैनको

सेगाँव
२७ अगस्त, १९३७

प्रिय जाकिर,

आपका पत्र कल मिला। तदनुसार मैंने राजेन्द्र बाबूको कान्फरेन्समें शामिल होने और मौलवी अब्दुल हक साहबका पता लगाने के लिए तार कर दिया है। यह बड़े दुःखकी बात है कि नागपुर उनके लिए परेशानीका कारण बना। किस वजहसे वे असन्तुष्ट हैं, यह मैं अभी मालूम नहीं कर पाया हूँ। आपने मुजीबको[1] पटना भेजकर ठीक किया। वहाँ जो-कुछ हो उसकी खबर मुझे दीजिएगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

जाकिर हुसैन
जामिया मिलिया
दिल्ली

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१. प्रो० मुहम्मद मुजीब, जामिया मिलिया इस्लामिया, दिल्लीके उप-कुलपति।

१०२. पत्र : एम० सुब्रह्मण्य राजूको

सेगाँव, वर्धा
२७ अगस्त, १९३७

प्रिय मित्र,

आपके १२ अगस्तके पत्रके लिए धन्यवाद। निश्चय ही शान्तिपूर्वक धरना देने का कार्यक्रम फिरसे जारी किया जा सकता है और जिला मद्यनिषेध समितियोंका दुबारा संगठन किया जा सकता है। मुझे विश्वास है कि जरूरत पड़ने पर ये दोनों बातें अवश्य होंगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत एम० एस० राजू
मन्त्री, ग्राम कांग्रेस समिति
कारवेटनगर
चित्तूर

मूल अंग्रेजी (जी० एन० ११५१८) से।

१०३. पत्र : राघवदासको

सेगाँव
२७ अगस्त, १९३७

भाई राघवदास,

कलकी बात विचारणीय है। मैं देखता हूं कि हाथ-चक्कियां यों भी मिट रही हैं। हाथ-चक्की भी मिलना मुश्किल होता है। तब भी इस बारेमें गौर करके मुझको लिखो। यू० पी० में और गोरखपुरमें कितनी कल चलती हैं। कल बंद होने से चाहिये उतना आटा मिल सकता है या नहीं यह सब देख लो। इतना भी ख्याल कर लो कि छोटी कल बंद होने से मंबई इत्यादिमें हजारों टन सफेद आटा तैयार होता है वह तो देहातोंमें नहीं घूस जायगा? क्योंकि उससे छोटी कलोंका आटा अच्छा रहता है।

पत्रकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१०४. पत्र : रामदास गुलाटीको

२७ अगस्त, १९३७

भाई रामदास,[1]

तुम्हारा खत मिला। काम बढ़ा . . .।[2] यहांके बारेमें ॐ[ओम्]को कह दिया है। प्रदर्शनीके लिये मैं शंकरलाल बेंकरको लिखता हूं। शायद वो ही आ जायेंगे और सब देख लेंगे। मेरी दृष्टिसे खर्च इतना बड़ा लगता है कि देहाती लोग इस तरह कांग्रेस भूला नहीं सकते हैं। यह कांग्रेस देहाती नहीं बनेगी। देहाती कांग्रेसकी कल्पना ही ऐसी है कि दो-चार हजारके खर्चसे ही काम निपट जाय। पानीका जो खर्च होगा वह भी कांग्रेस हो जानेके बाद निरर्थक होगा न? क्या कोई ऐसी कल्पना नहीं है कि जिससे इतने खर्च से हम लोग बच जाय? मुझे कुछ ऐसा प्रतीत होता है कि इतने लोगोंके लिए कांग्रेस शायद शहरमें कम दामसे बने। यदि यह सच है तो कहीं भी कुछ दोष है।

पत्रकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

१०५. बातचीत: नशाबन्दीके बारेमें[3]

[२८ अगस्त, १९३७ के पूर्व]

गांधीजी: यदि हम अगले तीन वर्षोंमें मद्यनिषेध कर सकें, और यदि हम दुनियाको यह दिखा सकें कि हम प्रान्तोंमें सेनाके बिना काम चला सकते हैं, तो भारत एक ऐसे ख्याति-शिखरपर पहुँच जायेगा जहाँतक वह पहले कभी नहीं पहुँचा था और जहाँ कोई अन्य राष्ट्र भी अभीतक नहीं पहुँचा है। लोगोंको मद्यत्यागी बनाना सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य है और उसमें जितनी भी शक्ति लगाई जायेगी, कभी बेकार नहीं जायेगी। वह एक प्रकारकी सच्ची प्रौढ़ शिक्षा होगी और साथ ही उससे नागरिकोंकी कर देने की क्षमतामें वृद्धि होगी।

[प्रश्न]: **भारतको मद्यत्यागी बनाने के सबसे कारगर माध्यम क्या हो सकते हैं?**

१. हरिपुरा कांग्रेसके लिए जो निर्माण-कार्य हो रहा था उसकी देखरेखके लिए जिम्मेदार वास्तुकार; देखिए "पत्र: वल्लभभाई पटेलको", २६-९-१९३७।

२. साधन-सूत्रमें कुछ शब्द अस्पष्ट हैं।

३. महादेव देसाईके लिखे "ए स्टुपेंडस टास्क" (एक जबर्दस्त काम) से उद्धृत।

गां० : मैं पहले ही कह चुका हूँ कि मौजूदा आबकारी विभागकी शक्तिका
[उ]पयोग किया जा सकता है। अबतक तो आबकारी विभागको यही विश्वास नहीं
कि सरकारका सुदूर भविष्यमें भी मद्यनिषेध करनेका सचमुच कोई इरादा है।
[पर]न्तु अब वह यह अच्छी तरह जान गया है कि जबतक मद्यनिषेध नहीं होगा,
[कां]ग्रेस न तो खुद चैनसे बैठेगी और न दूसरोंको चैनसे बैठने देगी। इसलिए यह
[वि]भाग नवीन नीति और कार्यक्रममें खुशीसे सहयोग करेगा। परन्तु शुद्ध सेवा-भावसे
[का]म करनेवाले गैर-सरकारी संगठन इसमें ज्यादा कारगर रहेंगे। देशमें प्रोफेसर और
[शि]क्षक हैं, विद्यार्थी और कालेज हैं। उनसे इस कार्यमें प्रतिदिन दो घंटे देने की
[अपी]ल की जा सकती है। जहाँ शराबी रहते हैं उन इलाकोंमें जाकर उन्हें उन लोगोंसे
[मि]लना-जुलना चाहिए, बातचीत करनी चाहिए, उनको समझाना चाहिए और वहाँ
[शिक्षा]प्रद ढंगसे शान्तिपूर्ण धरना देना चाहिए। चिकित्सकोंसे मैं यह आशा करता
[हूँ कि] वे मिलकर यह सोचें कि लोग शराब क्यों पीते हैं, उनकी शराबकी लत
[कैसे] छुड़ाई जा सकती है; वे शराबके कारगर, हितकर और स्वास्थ्यप्रद विकल्प
खोजें। फिर हमारी बहनें हैं। असहयोगके दिनोंमें उन्होंने बहुत काम किया था।
[उस] कामको अब और भी बेहतर परिस्थितियोंमें फिरसे शुरू करने के लिए उन्हें
संगठित किया जाना चाहिए। उनको उपस्थित देखकर निश्चय ही लोग अपने-
[आप] [दुकानपर जाते हुए] हिचकेंगे; साथ ही उन्हें [पिछली] कठिनाइयोंका
[साम]ना भी नहीं करना पड़ेगा। पहले पुलिस तटस्थकी तरह देखती रहती थी; यही
[नहीं] वह उन दिनों बदमाशोंकी मदद तक करती थी। अब महिलाएँ अपने इस पवित्र
[यु]द्धमें उससे सहायताकी आशा कर सकती हैं। फिर, कितने ही नशाबन्दी संगठन
[हैं;] उनमें से ज्यादातर अभी तक जड़ और निष्क्रिय रहे हैं। हमें अब उनसे मिलकर
[काम] करने और इस धर्मयुद्धमें सक्रिय रूपसे भाग लेने का अनुरोध करना चाहिए।
[हम] एक मद्यनिषेध संघ भी बना सकते हैं; ये सब उसके अधीन नियमित और
[व्यव]स्थित ढंगसे काम कर सकते हैं। आबकारीसे मिलनेवाले राजस्वका उपयोग
[मद्यनि]षेध आन्दोलनके लिए हो सकता है, और वह न्यायोचित भी होगा। कलंकित
[धनका] यह उपयोग वर्ज्य नहीं माना जायेगा; वह तो गन्दे पानीके एक नालेको
[...] बदलन और पवित्र बनाने-जैसी बात होगी।

और सबसे मुख्य बात यही है कि इस [...] केन्द्रोंका पता लगाइए और
[अपनी] सारी शक्ति वहाँ लगा दीजिए। शराबके ठेकेदारों और दुकानदारोंकी सभाएँ
[आयो]जित कीजिए और उन्हें यह समझाइए कि वे अपने शराबके अड्डोंको मनो-
[रंजनके के]न्द्रोंमें परिवर्तित करके किस तरह ईमानका पैसा कमा सकते हैं। ये स्थान
[किस] तरह निर्दोष मनोरंजन, बल्कि शिक्षाप्रद मनोरंजनके केन्द्रोंमें परिवर्तित किये जा
[सकते] हैं, यह मैं पहले ही बता चुका हूँ।[१]

[अं]ग्रेजीसे [

[हरि]जन, २८-८-१९३७

[१.] देखिए "चर्चा: नशाबन्दीके बारेमें", पृ० ६४-६५।

१०६. टिप्पणियाँ

शीत-प्रधान देशोंमें भी खतरनाक

मेरी इस उक्तिपर[1] कि शीत-प्रधान देशोंमें शायद शराबकी जरूरत हो, एक मित्रने 'लिकर कंट्रोल' में से जी० ई० जी० कैटलिनका एक दिलचस्प अनुच्छेद मेरे पास भेजा है, जिसमें शराबके गर्मी पैदा करनेवाले असरपर विचार करते हुए कहा गया है :

> **लेकिन तनिक-सा विचार करने पर ही हमें यह मालूम हो जायेगा कि इन परिणामोंका गलत अर्थ भी लगाया जा सकता है। शरीरका तापमान नहीं बदलता, बल्कि उष्ण रक्त शरीरकी सतहपर आ जाता है, जहाँ यदि वह शीतल हो जाये तो वापस आकर सारे शरीरका तापमान घटा देता है। जहाँ ठंडसे बचावकी विशेष आवश्यकता हो वहाँ मद्य न केवल व्यर्थ है बल्कि खतरनाक भी है। फ्रिटजोफ नैनसनने[2] कहा है कि "मुझे जो अनुभव हुए हैं उनसे" शीत-प्रधान उत्तरी ध्रुव-क्षेत्रोंकी यात्रामें "किसी भी तरहके उत्तेजक और नशीले पदार्थका सेवन करने का मैं निश्चित रूपसे विरोधी बन गया हूँ" — शराबके विरुद्ध इसलिए कि उसे पीनेसे ठण्ड खाकर मर जाने का भय है।**

लेकिन हिन्दुस्तानमें तो हमें ऐसे प्रमाणोंकी जरूरत नहीं है। यहाँ तो हमें जितनी उष्णताकी जरूरत है वह सब सूर्य ही दे देता है, इसलिए इस तापमानमें शराब पीने की कोई प्रत्यक्ष और वास्तविक वजह ही नहीं रह जाती है।

व्यर्थकी आशंका

एक उदार मित्रने[3] तीन सालके दौरान कांग्रेसके मद्यनिषेध कार्यक्रमकी सफलता की काफी सराहना करने के बाद शिक्षाके बारेमें आशंका व्यक्त की है :

> **कांग्रेसका शिक्षणका कार्यक्रम कुछ उलझन पैदा कर रहा है। आशंका है कि उच्चतर शिक्षामें गतिरोध उत्पन्न हो जायेगा। मैं आशा करता हूँ कि जबतक कोई सुविचारित योजना तैयार नहीं कर ली जाती और प्रस्तावित परिवर्तनोंकी सूचना काफी पहलेसे नहीं दे दी जाती तबतक जल्दबाजी में कोई कदम नहीं उठाया जायेगा और जनताको कांग्रेसके प्रस्तावोंपर ठीकसे चर्चा करने का मौका दिया जायेगा।**

१. देखिए "सत्य और अहिंसाके विरुद्ध", पृ० ५०-५२।

२. (१८६१-१९३०); नार्वेका उत्तरी ध्रुव-क्षेत्रान्वेषक, जिसे १९२२ में नोबेल पुरस्कार मिला था।

३. जी० ए० नटेसन; देखिए "पत्र : जी० ए० नटेसनको", पृ० ७३।

यह आशंका बिलकुल बेकार है। कार्य-समितिने कोई सामान्य नीति नहीं निर्धारित की है। कांग्रेस काशी विद्यापीठ, जामिया मिलिया, तिलक विद्यापीठ, बिहार विद्यापीठ, गुजरात विद्यापीठ आदि कई राष्ट्रीय शिक्षण-संस्थाओंके अस्तित्वके लिए पूर्णतः उत्तरदायी है; लेकिन इसके अलावा उसने कोई सामान्य घोषणा नहीं की है। मैंने जो लिखा है वह इस विषयकी चर्चामें मेरा निजी योगदान है। वास्तवमें वर्तमान शिक्षा-प्रणालीने देशके युवावर्गको और भारतकी भाषाओं तथा सामान्य संस्कृतिको जो भयंकर क्षति पहुँचाई है उसके बारेमें सोचकर मेरा मन बहुत क्षुब्ध होता है। मैं अपने विचारोंपर दृढ़तासे कायम हूँ। लेकिन मैं यह दावा नहीं करता कि मैंने आम तौरपर [illegible] अपने विचारोंका कायल बना लिया है। तब उन शिक्षा-शास्त्रियोंको कायल करने का तो सवाल ही नहीं उठता जो कांग्रेस-वातावरणके बाहर हैं और जो भारतके विश्वविद्यालयोंमें छाये हुए हैं। उनके विचार बदलना आसान काम नहीं है। मेरे ये मित्र तथा अन्य जो लोग ऐसी आशंका रखते हैं, उन्हें आश्वस्त रहना चाहिए कि सम्बन्धित लोग श्री शास्त्रियरकी दी हुई सलाहका पूरा खयाल रखेंगे और उन लोगोंसे समुचित विचार-विमर्श किये बिना कोई गम्भीर कदम नहीं उठाया जायेगा जिनकी राय शिक्षाके मामलोंमें मूल्यवान है। मैं यह भी बता दूँ कि कई शिक्षा-शास्त्रियोंसे मेरा पत्र-व्यवहार चल रहा है और मुझे उनकी मूल्यवान रायें भी मिल रही हैं तथा मुझे बताने में खुशी है कि उनमें मेरी योजनासे सामान्य तौरपर सहमति व्यक्त की गई है।

साक्षरताके बारेमें क्या है?

शिक्षापर इन स्तम्भोंमें मैं जो विचार व्यक्त करता हूँ उनपर मुझे बहुत-सी रायें मिली हैं। उनमें से कुछ बहुत महत्त्वपूर्ण रायें शायद इन स्तम्भोंमें उद्धृत भी कर सकूँ। फिलहाल तो मैं एक विद्वान् पत्र-लेखककी शिकायतका जवाब देना चाहता हूँ। शिकायतका सम्बन्ध साक्षरताकी [illegible] है और उसके लिए दोषी मुझे माना गया है। मैंने जो-कुछ लिखा है, उसमें ऐसा मानने लायक कुछ भी नहीं है। क्योंकि मैंने क्या यह विचार नहीं रखा है कि मेरी अवधारणाके स्कूलोंमें बच्चों को हर तरहकी शिक्षा, उन्हें जो उद्योग सिखाये जायेंगे, उनके जरिये मिलेगी? उसमें साक्षरता भी शामिल है। मेरी योजनाके अन्तर्गत, हाथ लिखने या कोई आकृति बनाने से पहले औजार उठाना-चलाना सीखेंगे। आँखें जीवनकी अन्य वस्तुओंकी जानकारी हासिल करने के साथ-साथ अक्षरों और शब्दोंकी आकृतियाँ पढ़ना सीख लेंगी और उसी तरह कान भी सहज ही चीजोंके नाम और वाक्योंके अर्थ ग्रहण करते जायेंगे। पूरा प्रशिक्षण बहुत स्वाभाविक रीतिसे और शिक्षार्थीकी सहज ग्रहणशीलताके आधारपर दिया जायेगा और इसलिए वह देश-भरमें सबसे सस्ती और सबसे कम समय लेनेवाली शिक्षा-पद्धति होगी। इसलिए मेरे स्कूलके बच्चे लिखने से कहीं जल्दी पढ़ेंगे। और जब वे लिखेंगे तो उस तरह भद्दा नहीं लिखेंगे जैसा मैं आज भी लिखता हूँ, और जिसके लिए मैं अपने शिक्षकोंका शुक्रगुजार हूँ। वे तो जिस प्रकार अपनी देखी चीजोंकी सही आकृतियाँ बना लेंगे उसी प्रकार सुन्दर अक्षर भी लिखेंगे। यदि

मेरी अवधारणाके स्कूल कभी कायम हुए तो मैं यह कहने की धृष्टता करता हूँ कि जहाँतक कमसे-कम समयमें पढ़ना सिखाने का सम्बन्ध है, वे अत्यन्त उन्नत स्कूलोंसे भी सफलतापूर्वक होड़ लेंगे और यदि यह मान लिया जाये कि लिखने का मतलब आज अधिकांश मामलोंमें जैसा देखा जाता है, उस तरह गलत ढंगसे लिखना नहीं, बल्कि सही और सुन्दर अक्षरोंमें लिखना है तो इसके सम्बन्धमें भी यही बात लागू होगी। पारम्परिक दृष्टिसे देखा जाये तो भले ही यह कहा जा सकता है कि सेगाँवके विद्यार्थी लिखते भी हैं, लेकिन मेरी दृष्टिमें तो वे कागज और स्लेट बरबाद ही करते हैं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २८-८-१९३७

१०७. सबसे बड़ा काम

चूँकि सन् १९२० यानी असहयोगके प्रारम्भसे ही शराब और मादक पदार्थोंका सम्पूर्ण निषेध कांग्रेसके कार्यक्रमका एक खास अंग रहा है, और हजारों स्त्री-पुरुषोंको इसके लिए जेल तथा शारीरिक कष्ट सहने पड़े हैं, कार्य-समितिकी राय है कि अब कांग्रेसी मन्त्रियोंको इस उद्देश्यकी पूर्तिके लिए यत्न करना चाहिए। कार्य-समिति अपेक्षा करती है कि वे अपने-अपने प्रान्तोंमें तीन वर्षमें शराब और मादक पदार्थोंका पूरा निषेध लागू कर दें। कार्य-समिति अन्य प्रान्तोंके मन्त्रियोंसे और देशी राज्योंसे भी अपील करती है कि वे भी नैतिक और सामाजिक कल्याणके इस कार्यक्रमको हाथमें ले लें।

कार्य-समितिके इस प्रस्तावको[1] मैं उसके अबतक के उतार-चढ़ाव-भरे जीवनका सबसे बड़ा काम समझता हूँ। यों शराबबन्दीकी आवाज उठाने का फैशन तो हमेशा रहा है। पर सन् १९२० में उसे कांग्रेसके रचनात्मक कार्यका एक मुख्य अंग बनाया गया। इसलिए देशके किसी भी हिस्सेमें सत्ता प्राप्त करते ही शराब आदिका पूरा निषेध करने का प्रयत्न करना कांग्रेसके लिए स्वाभाविक ही था। छह प्रान्तोंमें मन्त्रियों को ग्यारह करोड़ रुपयेकी हानि सहने की हिम्मत दिखानी थी। पर कार्य-समितिने अपने वचनकी पूर्ति तथा शराब और अन्य नशीली चीजोंके आदी बने हुए लोगोंके नैतिक और भौतिक कल्याणकी दृष्टिसे यह खतरा भी उठाने का साहस किया है। मुझे पूरी आशा है कि अन्य पाँच प्रान्त भी, जिनमें गैर-कांग्रेसी लोगोंका बहुमत है, इन छह प्रान्तोंका अनुकरण करेंगे। उनके लिए शराब आदिका पूरा निषेध करना इन छह प्रान्तोंके मुकाबले कम मुश्किल है। और क्या देशी राज्योंसे यह आशा करना कि वे भी ब्रिटिश भारतके साथ सहयोग करें, बहुत अधिक होगा?

१. यह प्रस्ताव कांग्रेस कार्य-समितिकी वर्धामें १४ से १७ अगस्त तक हुई बैठकमें पारित हुआ था।

मैं जानता हूँ कि बहुत-से लोग ऐसा सोचते हैं कि शराबका पूरा निषेध भला कैसे होगा। उनका खयाल है कि सरकारके लिए आयके लोभको रोकना बड़ा कठिन होगा। उनकी दलील यह है कि नशेबाज तो किसी भी तरह शराब या मादक चीजें प्राप्त कर ही लेंगे, और जब मन्त्रिगण देखेंगे कि इस निषेधका अर्थ तो केवल सरकारी आयकी क्षति है और इससे मादक वस्तुओंके उपयोगमें — चाहे वह गैर-कानूनी ही क्यों न हो — कोई उल्लेखनीय कमी नहीं हुई है तब तो वे फिर पापकी कमाई करने के मोहमें फँस जायेंगे और वह हालत आजसे भी बुरी होगी।

पर मुझे ऐसा कोई भय नहीं है। मुझे तो विश्वास है कि हमारे राष्ट्रमें इस महान् उद्देश्यकी पूर्तिके लिए आवश्यक नैतिक बल जरूर है। अगर शराबबन्दी सचमुच लागू होनी है तो तीन सालके अन्तमें नहीं, बल्कि केवल छह महीनेमें ही हमें शराब वगैरहका अन्त दिखाई देने लगेगा। और जब देश उस वास्तविकताको अपनी आँखों देख लेगा तब शेष प्रान्त और देशी राज्योंको भी उस अटल होनहारके सामने सिर झुकाना होगा।

इसलिए हमें हक है कि हम इस प्रयत्नमें, जो शायद इस शताब्दीका सबसे बड़ा नैतिक आन्दोलन है, न केवल भारत-स्थित यूरोपीयों-सहित हिन्दुस्तानके सभी पक्षों और दलोंसे, बल्कि समस्त संसारके विचारशील लोगोंसे महानुभूति और सहयोग-की अपेक्षा करें।

इसलिए अगर मद्य-निषेधका मतलब भारतमें महान् नैतिक जागृति है तब तो शराबकी दुकानोंके बन्द होने का अर्थ उस महान् आन्दोलनका अनिवार्य प्रारम्भ-मात्र होना चाहिए जिसके अन्तमें उन तमाम गरीबों और कुछ अमीरोंको भी, जिनके शरीर और आत्मा दोनोंको इन नशीली चीजोंकी लतने तबाह कर दिया है, इससे पूरी तरह विमुख कर देना है। यह कार्य केवल राज्यके प्रयत्नसे सम्पन्न नहीं हो सकता। महादेव देसाई अपनी टिप्पणियोंमें जो-कुछ कह चुके हैं उसके दोहराये जाने का खतरा उठाकर भी यहाँ संक्षेपमें बता देता हूँ कि मेरी रायमें इस सम्बन्धमें हमारा विस्तृत कार्यक्रम क्या होना चाहिए :

१. हर प्रान्तका एक नक्शा बनाया जाये, जिसमें वे स्थान या गाँव दिखाये जायें जहाँ शराब वगैरह नशीली चीजोंकी दुकानें हों।

२. इनके लाइसेंसोंकी मीयाद खत्म होते ही ये शराबकी दुकानोंके रूपमें बन्द कर दी जायें।

३. शराबकी आय, जबतक वह होती रहे, शराबबन्दीके लिए ही पूर्णतः सुरक्षित रख दी जाये।

४. जहाँ-जहाँ सम्भव हो, शराब वगैरहकी दुकानोंकी जगह, इस आशासे कि पुराने ग्राहक इनका उपयोग करते रहेंगे, उपाहार-गृह और क्रीड़ागार बना दिये जायें। अगर शराबके ठेकेदार चाहें तो वे खुद ही यह काम उठा लें।

५. आबकारी विभागके तमाम वर्त्तमान कर्मचारी यह पता लगाने के काममें लगा दिये जायें कि कानूनके खिलाफ कहीं कोई शराबकी भट्टी तो नहीं लगा रहा है, या शराब तो नहीं पी रहा है।

६. शिक्षा-संस्थाओंसे हम प्रार्थना करें कि वे अपने शिक्षकों तथा विद्यार्थियोंका कुछ समय इन कार्योंके लिए दें।

७. बहनोंसे प्रार्थना करें कि वे दल बनाकर उन लोगोंको जाकर समझायें जिन्हें शराब आदि नशीली चीजोंकी लत है।

८. पड़ोसके देशी राज्योंसे बातचीत चलायें कि वे भी हमारे साथ-साथ अपने इलाकेमें शराबबन्दीका काम शुरू कर दें।

९. डाक्टरों, वैद्यों और हकीमोंसे इस सम्बन्धमें निःशुल्क या जरूरी हो तो सशुल्क सलाह लें कि नशेबाजोंका नशा किस तरह छुड़ाया जाये, और उनके लिए कौन से गैर-नशीले पेय या अन्य विकल्प ठीक होंगे।

१०. नशाखोरीके खिलाफ चलाई जानेवाली इस मुहिमके समर्थनमें मद्य-निषेधवादी संस्थाओंकी प्रवृत्तियोंका फिरसे आरम्भ किया जाना।

११. मालिकोंसे अपने मजदूरोंके लिए उपाहार-गृह, क्रीड़ागार और शिक्षा-गृह खुलवाये जायें और इस बातका ध्यान रखा जाये कि इन सबका प्रबन्ध उत्तम हो।

१२. ताड़ी निकालनेवालों से पीने और गुड़ बनाने के लिए ताड़का मीठा रस निकालने का काम लिया जाये। मुझे पता लगा है कि शराबके लिए जो रस निकाला जाता है उससे इस प्रकारका रस निकालने की क्रिया भिन्न है।

यह तो हुआ शराब और मादक द्रव्योंके खिलाफ आन्दोलनके बारेम।

अब सवाल यह है कि इससे राजस्वकी जो हानि होगी — और कुछ प्रान्तोंको तो इस वजहसे एक तिहाई आयसे वंचित होना पड़ेगा — उसकी पूर्ति कैसे की जाये? मैंने तो बगैर किसी हिचकिचाहटके यह सुझाया है कि हम शिक्षापर किये जानेवाले खर्चमें कमी कर दें, क्योंकि प्रायः आबकारीकी आयसे ही इसकी पूर्ति होती है। मैं अब भी यही कहता हूँ कि शिक्षा स्वावलम्बी बनाई जा सकती है। पर इसपर मैं अन्यत्र विचार करूँगा।[1] यह जरूर है कि यदि हम यह मान लें कि वह स्वावलम्बी बनाई जा सकती है, तो भी ऐसा एक दिनमें नहीं हो जायेगा। मौजूदा भार और जिम्मेदारियोंको तो निबाहना ही होगा। इसलिए आयके नये रास्ते ढूँढ़ने पड़ेंगे। मृत्यु, तम्बाकू — जिसमें बीड़ी भी शामिल है — आदि पर कर लगाने की बात कुछ लोगोंने सुझाई ही है। अगर इनपर तत्काल अमल करना असम्भव समझा जाये तो तात्कालिक खर्चकी पूर्तिके लिए थोड़ी मीयादवाले कर्ज लिये जा सकते हैं। पर अगर यह भी सम्भव न हो तो केन्द्रीय सरकारसे प्रार्थना की जा सकती है कि वह अपने फौजी खर्चमें कमी करके उस बचतमें से हर प्रान्तको अनुपातके अनुसार सहायता दे। और केन्द्रीय सरकार इस प्रार्थनाको कभी अस्वीकार नहीं कर सकेगी — खास तौरपर यदि प्रान्तीय सरकारें यह सिद्ध कर दें कि कमसे-कम आन्तरिक शान्ति-सुव्यवस्थाके लिए उन्हें फौजकी जरूरत नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २८-८-१९३७

१. देखिए "**स्वावलम्बी शिक्षा**", पृ० १३६-३८।

१०८. "काफी जानकारी"

एक प्रोफेसर लिखते हैं:

आपने सुझाव दिया है कि विधान-सभाका कोई सदस्य अंग्रेजीमें अपनेको व्यक्त कर सकता हो तो भी यह घोषित करने का अधिकार रखता है कि उसे उस भाषाकी "काफी" जानकारी नहीं है, और इस तरह अध्यक्ष, जिससे निस्सन्देह सदस्यकी ईमानदारीपर शंका करने की अपेक्षा नहीं की जाती है, उसे हिन्दुस्तानीमें बोलने की अनुमति दे सकता है। आपकी टिप्पणियोंको[1] मैंने बहुत ही ध्यानसे पढ़ा है, पर मैं यह समझ नहीं सका कि सत्यमें पूरी निष्ठा रखने-वाला कोई भी व्यक्ति यह मार्ग कैसे अपना सकता है, और आप ऐसा सुझाव दें, यह बात तो और भी समझमें नहीं आती। अनुच्छेद ८५ स्पष्ट रूपसे ऐसे व्यक्तियोंके बारेमें है जो अपना आशय अंग्रेजीमें इतनी अच्छी तरह व्यक्त करने में अपने को असमर्थ पाते हैं जिससे अंग्रेजी जाननेवाले उसे समझ सकें; अंग्रेजी न जाननेवालों के समझ सकने की बात उसमें नहीं है। इन दूसरे लोगोंको अपना आशय समझा सकने के लिए अंग्रेजीकी 'काफी' जानकारीका कोई सवाल ही पैदा नहीं होता। उसके शब्द इतने साफ हैं कि कोई और अर्थ हो ही नहीं सकता। ऐसी हालतमें किसी व्यक्तिका, केवल इसलिए कि कुछ सदस्य ऐसे हैं जो अंग्रेजी नहीं समझते हैं, यह घोषित करना कि उसे अंग्रेजीकी काफी जानकारी नहीं है, केवल वाक्छल ही लगता है। संयुक्त प्रान्तमें उन्होंने इस कठिनाईसे बचने के लिए 'अंग्रेजी भाषाकी जानकारी होने या काफी जानकारी न होने' का अर्थ हिन्दीकी अपेक्षा अंग्रेजी भाषाकी कम जानकारी किया है। परन्तु मेरा यह खयाल है कि इस सन्दर्भमें आपेक्षिक जानकारीका भी सवाल पैदा नहीं होता। मैं इस बातसे सहमत हूँ कि यह अनुच्छेद बहुत ही अप्रीतिकर है और अवश्य हटना चाहिए। यदि आप यह सुझाव दें कि इसकी जान-बूझकर अवज्ञा की जानी चाहिए, तो वह एक बिलकुल सीधा मार्ग होगा और कमसे-कम अन्तरात्माके धरातलपर उसके खिलाफ कोई आपत्ति नहीं हो सकेगी। पर, आपने जिस मार्गका सुझाव दिया है उसके लिए आपके पास कुछ-न-कुछ औचित्य जरूर रहा होगा, जिसे मैं समझ नहीं सका हूँ। ऐसे और भी लोग

१. तात्पर्य १९३५ के भारत सरकार अधिनियमके खण्ड ८५ की महादेव देसाई द्वारा की गई व्याख्यासे है; देखिए परिशिष्ट ५।

होंगे जो इसी स्थितिमें हों। इसलिए यदि आप इस मुद्देपर 'हरिजन' में प्रकाश डालें तो हम सबको लाभ होगा।

"काफी" का आपेक्षिक अर्थ ही हो सकता है, निरपेक्ष नहीं। एक एम० ए० पास व्यक्ति तक में, उसके सामने जो कार्य है उसके लिए, अंग्रेजीकी जानकारी नाकाफी हो सकती है। उदाहरणके लिए, संयुक्त प्रान्तके एक एम० ए० पास आदमीको निश्चय ही अंग्रेजीका इतना ज्ञान नहीं होगा कि वह अपनी बात हिन्दुस्तानी बोलनेवाले मैट्रिक पास व्यक्तियोंको समझा सके। मेरे अध्यापकोंको अक्सर जिस क्लासको वे पढ़ाते थे अपनी बात समझाने के लिए उससे गुजरातीमें बोलना पड़ता था। कारण यह था कि उन्हें, जिनमें से अधिकतर ग्रेजुएट थे, क्लासको अपनी बात समझाने के लिए अंग्रेजीमें बहुत प्रयत्न करने पड़ते थे। गुजरातीमें बोलते हुए उनकी वाणी धारा-प्रवाह चलती थी, और तब जो ज्ञान हमारे भीतर रिस-रिसकर पहुँचता था उसका पान करते हुए हमारी आँखें चमक उठती थीं। अगर मैं किसी विधान-सभाका अध्यक्ष होऊँ, तो अंग्रेजीके सबसे मँजे हुए वक्ता तक को, यदि उसका यह विश्वास हो कि वह अपने श्रोताओंके लायक अंग्रेजीकी जानकारी नहीं रखता है, निश्चय ही, हिन्दुस्तानीमें बोलने की अनुमति दे दूँ। यह कोई व्याकरण या भाषाके प्रवाहका सवाल नहीं है। यह तो बोधगम्यताका प्रश्न है। उस अनुच्छेदको कोई और अर्थ देना उसके उद्देश्यको ही विफल करना होगा। यदि श्रोता केवल अंग्रेजी ही समझते हैं, कोई और भाषा नहीं समझते, तो अशुद्ध अंग्रेजीमें दिया जानेवाला भाषण भी अंग्रेजीकी काफी जानकारीका सूचक माना जायेगा। भारतके मेरे बहुत-से दौरोंमें इस तरहकी घटनाएँ अक्सर हुई हैं। इन स्तम्भोंमें जो अर्थ दिया गया है वह एक कठिन परिस्थितिसे निबटने का निश्छल प्रयास है। भारतके लिए भारतीय भाषाओंके प्रति मेरे सुविदित पक्षपातका इस व्याख्यासे कोई सम्बन्ध नहीं है। यदि मैं इस व्याख्यासे, जो महादेव देसाईके मेधावी मस्तिष्ककी उपज थी, ईमानदारीसे सहमत न होता तो निश्चय ही उसे इन स्तम्भोंमें जाने नहीं देता और खुशीसे "काफी जानकारी" शब्दोंकी एक न्यायोचित और व्यावहारिक व्याख्याके लिए सरकारके साथ संघर्ष करने की सलाह देता। निस्सन्देह, सही मार्ग तो यही है कि इस अनुच्छेदमें संशोधन किया जाये; पंजाबके मुख्य मन्त्रीने ऐसा सुझाव भी रखा है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २८-८-१९३७

अर्थ यह बनता है कि आप अपने सन्देशका प्रचार अपनी पुस्तकके द्वारा तथा अन्यान्य रचनाओं और भाषणोंके द्वारा करेंगे। यह बिलकुल उचित भी है। आपकी पुस्तककी बिक्री तो आपके कार्यका गौण फल होगी और प्रसंगवशात् शायद इससे आपको अपने भरण-पोषणके लिए पैसा भी मिल जायेगा। आप एक ऐसे व्यक्ति मालूम होते हैं जिसके सामने एक विशिष्ट ध्येय है और जो उस ध्येयकी पूर्तिमें निष्ठापूर्वक जुटा हुआ है। आपकी कल्पनामें जिस "लीग" (संघ) का चित्र है वह बादमें, जब लोग आपके स्वीकृत ध्येयको मान्यता देने लगेंगे तब, अस्तित्वमें आ सकती है। यदि आप अभी "लीग" बना लें तो आपको विफलता ही हाथ लगेगी। आप एक नीरस काममें फँस जायेंगे तथा अपने-आपको कामके बोझसे दबा हुआ पायेंगे और तब अपने ही बनाये हुए जालसे मुक्ति पाने के लिए छटपटायेंगे। जो-कुछ मैं आपको बता रहा हूँ उससे आप देख सकते हैं कि जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, आपमें मेरी दिलचस्पी अवश्य है। इतना ही है कि अभी मैं आपसे पूरी तरह एकमत नहीं हो सकता। हो सकता है, कुछ ऐसी बात हो जो मैं अभी समझ नहीं पाया होऊँ। यदि ऐसा हो तो आप मुझे समझाने का तबतक प्रयत्न करते रहें जबतक कि मैं कायल न हो जाऊँ। मैं जानता हूँ कि कभी-कभी मेरी बुद्धि बहुत जड़ हो जाती है। आपको मेरे साथ धीरजसे काम लेना होगा। आपने जो पुस्तक मुझे दी थी, उसको मैं ढूँढ़ रहा हूँ। यदि उसे खोज पाया तो पढ़ने की कोशिश करूँगा। इसके पहले मैंने उसके पृष्ठोंपर मात्र सरसरी निगाह ही डाली थी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १४७७) से; सौजन्य: ए० के० सेन

१११. पत्र : द० बा० कालेलकरको

सेगाँव
२८ अगस्त, १९३७

चि० काका,

नीमु (रामदासकी) यहाँ आई है। मैंने उसे हिन्दी सीखने को प्रोत्साहित किया है — इस उद्देश्यसे कि यह हिन्दी-प्रचारका काम करने के योग्य हो जाये, और उस कामसे, सीमित रूपमें, अपनी जीविका भी अर्जित करे। उसके लिए थोड़े-बहुत अंग्रेजीके ज्ञानकी भी आवश्यकता है; क्योंकि मेरा विचार है कि वह दक्षिण जाये। अब वह जल्दीसे-जल्दी हिन्दी सीख लेना चाहती है। इस दृष्टिसे मैंने उसे इलाहाबादका भी सुझाव दिया था, क्योंकि वहाँ तो हिन्दीके सिवाय और कुछ बोला ही नहीं जाता। लेकिन जब वह इलाहाबाद जाने को तैयार हो गई, तो मैं असमंजसमें पड़ गया।

इलाहाबाद ठीक है, लेकिन इलाहाबादमें कहाँ? इसलिए फिर मैंने तो उसे देहरादूनके कन्या-गुरुकुलमें विद्यावतीके पास भेजने का विचार किया। लेकिन फिर रातमें विचार करने लगा कि तुम्हारी राय भी जान लूँ। क्या तुम्हारी रायमें उसे यहाँ सिखाया जा सकता है? या तुम कोई और योजना ज्यादा पसन्द करोगे? विचार करके लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७७०४) से।

११२. बर्बरताका बोलबाला[1]

खेड़ा जिलेके हरिजनोंकी स्थितिके विषयमें श्री नरहरि परीख लिखते हैं:[2]

यदि ऊपरकी बातें सही हों और ये आम हो गई हों तो खेड़ा जिलेकी कांग्रेस कमेटीमें इसका मुकाबला करने की शक्ति आनी चाहिए।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २९-८-१९३७

११३. एक अन्धविश्वास

काठियावाड़में अन्धविश्वासोंकी कोई सीमा नहीं है। उनमें से एक बछड़ोंको बधिया न करने के बारेमें है। काठियावाड़में यह खास तौरपर देखने में आता है। किसान बैलके बिना तो अपना जीवन-निर्वाह कर ही नहीं सकते। इसलिए वे बैल तो खरीदते हैं, और अपने बछड़ेको भटकने देते हैं या मरने देते हैं, या कसाईके घर जाने देते हैं, और इसको धर्म मानते हैं। इस प्रकारके अन्धविश्वास तभी मिट सकते हैं जब राजा तथा प्रजामें से समझदार लोग जी लगाकर मेहनत करें। दण्डनीतिका उपयोग यदि कहीं क्षम्य माना जा सकता हो, तो शायद ऐसे ही प्रसंगोंमें माना जा सकता है। इस

१. इसका अंग्रेजी अनुवाद **हरिजन**, ४-९-१९३७ के अंक में प्रकाशित हुआ था।

२. पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है। इसमें बताया गया था कि यद्यपि स्थानीय बोर्डकी शालाओंमें हरिजनोंके प्रवेशपर कोई प्रतिबन्ध नहीं था बल्कि इसके विपरीत ऐसी व्यवस्था थी कि जो शालाएँ हरिजन बच्चोंको प्रवेश न दें उनकी मान्यता छीन ली जाये तथापि हरिजन अपने बच्चोंको शालाओंमें नहीं भेजते थे। पत्रके अनुसार इसका कारण यह बर्बरतापूर्ण प्रथा थी कि कमजोर वर्गके जो लोग सशक्त वर्गोंके लोगोंकी इच्छाके विरुद्ध कोई काम करते थे तो उन्हें तरह-तरहसे तबाह किया जाता था; उन्हें बाजाब्ता धमकी दी जाती थी और अगर उससे वे नहीं डरते थे तो उनके घर उजाड़ दिये जाते थे। पुलिस भी इस सम्बन्धमें कोई कारगर कार्रवाई नहीं कर पाती थी।

नीतिका उपयोग जब सिर्फ सजा देने के लिए नहीं बल्कि लोगोंकी भलाईके लिए किया जाता है तो उसकी योजना बड़ी सावधानीसे करनी पड़ती है। यहाँ जो लोग अपने बछड़ेको बधिया नहीं करने देते, उन लोगोंसे उनके बछड़े छीन लेना शायद अच्छेसे-अच्छा दण्ड होगा। इसके साथ ऐसी शर्त रखी जा सकती है कि जिसे अपना बछड़ा वापस लेना हो, वह बधिया करने तथा बछड़ेको रखने का खर्च देकर वापस ले जा सकता है। अगर बधिया करने का खर्च और बछड़ेको रखने का प्रतिदिनका खर्च भी पहलेसे निश्चित कर दिया जाये तो प्रजाको कष्ट नहीं होगा; और अन्धविश्वासी लोगोंको भी यह सन्तोष रहेगा कि बधिया करने का पाप स्वयं उन्होंने नहीं किया, राज्यने किया है। राज्यकी ओरसे ऐसे मामलेके लिए प्रचारक तो होने ही चाहिए, जिनका काम इस प्रकारके अन्धविश्वासोंको मिटाना हो। ऐसी बातोंको मैं तो शिक्षाका एक अंग मानता हूँ; क्योंकि जिस ज्ञानका उपयोग लोगोंकी गलत धारणाओंको दूर करने में नहीं होगा, उस ज्ञानकी क्या कीमत हो सकती है?

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २९-८-१९३७

११४. पत्र : नारणदास गांधीको

सेगाँव, वर्धा
२९ अगस्त, १९३७

चि० नारणदास,

रामेश्वरीदेवीका कार्यक्रम बना लिया हो तो भेजना। उन्हें किस रोज वहाँ पहुँचना चाहिए, किस गाड़ीसे? कितने दिन वहाँ रहना पड़ेगा?

जयन्तीलालकी लिखी दो लकीरें मैंने पढ़ लीं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५३७ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

११५. पत्र : जेठालाल जी० सम्पतको

सेगाँव, वर्धा
२९ अगस्त, १९३७

भाई जेठालाल,

तुम्हारे दो पत्र मिले हैं। गायके बारेमें मैं कुछ-न-कुछ लिखता तो रहता ही हूँ। तुम्हारे पास गायके दूधका घी बिक्रीके लिए तैयार हो जाये, तब मुझे लिखना। तुम्हारा घी बिकवा देना मुश्किल नहीं होगा; लेकिन ऐसे दो-तीन हुनर हैं जो बहुत आसानीसे सीखे जा सकते हैं और जिन्हें तुम्हें हस्तगत कर लेना चाहिए। अभी सेगाँव आ जाओ, तो ये बातें तुम्हें यहाँ भी सिखाई जा सकती हैं। तुम्हें दो-तीन जगह जाना चाहिए और सीख लेना चाहिए। मशीन तो सेगाँवमें भी है और रोज चलती है। वहाँ घी बनाने के लिए पहले तुम्हें दूध इकट्ठा करना चाहिए। जो गायें दूध देनेवाली होती हैं, उनकी तुम्हें पहचान होनी चाहिए, साथ ही अच्छे साँड़की पहचान भी होनी चाहिए। इन सब बातोंका थोड़ा-बहुत ज्ञान तो तुम्हें जरूर होना चाहिए। पारनेरकरसे[1] कुछ लिखवाकर भेजूँगा; वह यहीं है। मशीन तो तुम्हें लेनी ही पड़ेगी। बेगार वगैरह जिन बातोंके बारेमें तुमने लिखा है उस सम्बन्धमें मैं कुछ कर सकूँगा, ऐसी मेरी धारणा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९८६३) से। सौजन्य : नारायण जेठालाल सम्पत

१. यशवन्त महादेव पारनेरकर।

११६. तार : अण्डमानके कैदियोंको

३० अगस्त, १९३७

तारके लिए धन्यवाद। खुशी है कि सातको छोड़कर शेष सबने उपवास तोड़ दिया। क्या वे सातों लोग उपवास जारी रखने के कारण बताते हैं? मेरा उनसे अनुरोध है कि वे इस बातपर अड़े न रहें और देशको राहत पाने की कोशिश करने का अवसर दे। क्या नजरबन्द अहिंसासे सम्बन्धित मेरे प्रश्नका उत्तर नही देंगे?[1]

गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७७९६) से; सौजन्य: घ० दा० बिड़ला। कांग्रेस बुलेटिन, सं० ६, सितम्बर १९३७; फाइल सं० ४/१५/३७, होम, पॉलिटिकल से भी; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार

११७. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

[३१ अगस्त, १९३७][2]

मेरे और अंडमानके कैदियोंके बीच सन्देशोंका[3] जो आदान-प्रदान हुआ सो मैं प्रसन्नतासे प्रकट कर रहा हूँ। आतंकवादी तरीकोंकी और उनके वर्तमान रुखकी घोषणाके सम्बन्धमें मेरे अनुरोधपर कैदियोंकी जो समुचित प्रतिक्रिया हुई, उसे देखते हुए हम यह आशा कर सकते हैं कि उन सबको बिना शर्त रिहा कर दिया जायेगा।

१. उसी दिन शामके ७ बजे गांधीजी को कैदियों की ओर से निम्नलिखित उत्तर मिला: "सारे राष्ट्रकी अपील एवं आपके सन्देशसे हम बहुत प्रभावित हैं। हमने भूख-हड़ताल इस आश्वासनपर स्थगित कर दी है कि सारे देशने हमारी माँगोंको उठाया है और हमें पूरी आशा है कि आप हमारी माँगें उचित अवधिके भीतर पूरी करा सकने में सफल हो जायेंगे। हमें प्रसन्नता है कि आपने हमें यह अवसर दिया है कि हम आतंकवादपर अपना दृढ़ मत अभिव्यक्त कर सकें। आपको और राष्ट्रको यह सूचित करते हुए हम गौरव अनुभव करते है कि हममें से जो लोग आतंकवादमें विश्वास करते थे अब उनकी उस पर आस्था नहीं रह गई है और उन्हें यह विश्वास हो गया है कि राजनीतिक अस्त्र या सिद्धान्त के रूपमें उसकी कोई उपयोगिता नहीं है। हम घोषणा करते है कि उससे हमारे देशका हित होने की अपेक्षा हानि ही होती है।"

२. महादेव देसाईने इसी तारीखको पत्र-व्यवहारकी सामग्री अखबारोंको प्रकाशनार्थ दी थी।

३. देखिए "तार: वाइसरायको", पृ० ८१-२ और पिछला शीर्षक।

उनकी रिहाईके लिए मैंने उचित लोगोंसे अपील की है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि सम्पूर्ण देश इस मामलेमें मेरा साथ देगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १-९-१९३७

११८. पत्र : प्रभाशंकर पट्टणीको

सेगाँव, वर्धा
३१ अगस्त, १९३७

सुज्ञ भाईश्री,

आपका पत्र आज शामको मिला। आपके यहाँ आने अथवा नृसिंहप्रसादको भेजने के बारेमें आज तार[1] भेज रहा हूँ। यदि आ सकें तो जरूर आ जाइए। इतना घूम आये, फिर भी लगता है, कोई फायदा नहीं हुआ। मेरे बारेमें चिन्ता करने-जैसी कोई बात नहीं है। हाथको और दिमागको खूब आराम देने की जरूरत है, सो दे रहा हूँ। लेकिन आपके आनेसे, या आप जिसे भी भेजें उसके आने से क्या अड़चन होगी? स्नेहीके आने से कहीं तकलीफ होती है? आपके तार मिलते रहे हैं। उनके जवाब तो देने नहीं थे।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९५२) से। सी० डब्ल्यू० ३२६९ से भी; सौजन्य : महेश पट्टणी

११९. तार : प्रभाशंकर पट्टणीको

वर्धागंज
३१ अगस्त, १९३७

सर प्रभाशंकर
भावनगर

आपका पत्र मिला। नृसिंहप्रसादको भेज दें। खुद आ जायें तो और भी अच्छा रहे।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९५३) से। सी० डब्ल्यू० ३२७० से भी; सौजन्य : महेश पट्टणी

१. देखिए अगला शीर्षक।

१२०. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

सेगाँव
१ सितम्बर, १९३७

प्रिय कु०,

हाँ, संघकी बैठकसे पहले अध्यक्षके विषयमें कुछ भी करने की आवश्यकता नहीं है।[1]

शंकरलालके इस सुझावपर क्या तुमने कुछ सोचा है कि बैठक इस १६ तारीखके बदले २३ तारीखको की जाये?

रावके विषयमें तुम जो कहते हो वह मैं समझता हूँ। यह पत्र पहुँचने तक यदि लापता छोटेलालका कुछ पता न मिले तो अपनी सूझबूझसे काम लो और देखो कि उसे ढूँढ़ने का कोई तरीका निकाल सकते हो या नहीं।

अगर तुमने अभी तक ऐसा न किया हो तो मेरे विचारमें तुम्हें भारतमें हाथसे बननेवाले सभी प्रकारके कागजोंके नमूने उनकी वर्त्तमान मूल्य-दरों-सहित इकट्ठा कर लेने चाहिए।

यदि जोशी यहाँ शनिवारको दिनमें ३ बजे आ सके तो मुझे सुविधा रहेगी, किन्तु यदि सुबह आना अधिक सुविधाजनक हो तो उसे ८ बजे ले आना।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१३२) से।

१२१. पत्र : महादेव देसाईको

१ सितम्बर, १९३७

चि० महादेव,

"सुख-दुःख मनमां न आणीए घट साथे रे घड़ीआ" (सुख-दुःखको मनमें न लाओ, इनकी रचना तो शरीरके साथ ही हुई है)। सब बातोंपर विचार करने के बाद मुझे लगता है कि छोटेलालने आत्महत्या नहीं की है, बल्कि कहीं भाग गया है; लेकिन कौन कह सकता है कि क्या हुआ है? तुम मोटरमें मेरे वहाँ आने की उम्मीद करते हो? खोये हुए व्यक्तिकी तलाशके लिए मैं वहाँ आकर क्या करूँगा? बीमारकी खातिर तो मैं अवश्य आ सकता हूँ। यदि छोटेलाल मिल जाये तो उसके

१. श्रीकृष्णदास जाजूने अ० भा० ग्रामोद्योग संघके अध्यक्ष-पदसे त्यागपत्र दे दिया था।

कान खींचने के लिए भी आ सकता हूँ। इसलिए यदि किसी बातपर चर्चा करना जरूरी हो तो तुम्हीं आना। यदि बातचीत करना जरूरी न हो तो तुम भी समय-की बचत कर लेना। इस पत्रके मिलने तक यदि छोटेलाल न आया हो अथवा उसकी कोई खबर न मिली हो तो पुलिस चौकीमें खबर देना। भैयाके यहाँ तलाश करना। छोटेलाल यदि यहाँ आ जाये तो मुझे आश्चर्य नहीं होगा। उसका शरीर किसी कुएँमें तो नहीं पड़ा है, यह अच्छी तरहसे देख लेना।

विशेष खोज-बीन करने की जरूरत नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५६८) से।

१२२. पत्र : पी० जी० मैथ्यूको

सेगाँव, वर्धा
१ सितम्बर, १९३७

प्रिय मैथ्यू,

मैं पत्रोंमें "सस्नेह" लिखूँ या न लिखूँ, उससे तुम्हारे प्रति मेरे रुखमें कोई फर्क नहीं पड़ता। यह तो इस बातपर निर्भर करता है कि मैं पत्र किस स्थितिमें लिख रहा हूँ। ऐसा कोई बना-बनाया प्रशस्त मार्ग नहीं है जिसपर चलकर मनुष्य नैतिक बन सकता है। नैतिक तो मनुष्य प्रार्थना और तपश्चर्याके द्वारा और मानव-सेवाके लिए जीकर ही बन सकता है। जब वह ऐसा करता है तब उसके पास अनैतिक बनने का समय ही नहीं रहता। बेशक, विवाह तो सबके लिए एक सामान्य वस्तु है। इस प्रवृत्तिपर मैं जिस सीमातक नियन्त्रण कर पाया हूँ वह सिर्फ इसी कारणसे कि मेरी सेवाकी प्रवृत्ति यौन प्रवृत्तिसे बड़ी थी। मैं नहीं कह सकता कि मुझसे जुड़े हुए कितने लोग शुद्ध हैं। इसके अलावा उनके जीवनमें ताक-झाँक करने की भी मेरी कोई इच्छा नहीं है। जबतक उनकी अशुद्धता मेरी आँखोंके सामने बरबस नहीं आ जाती तबतक मैं उनको शुद्ध मानकर ही चलता हूँ। ब्रह्मचारीका विवाह तो उस कार्यसे होता है जिसपर वह प्रेमासक्त हो जाता है। अगर तुम्हें दोनों स्थितियोंमें कोई अन्तर दिखाई देता हो तो मैं अपनी हार स्वीकार करता हूँ।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१२३. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

सेगाँव, वर्धा
१ सितम्बर, १९३७

चि० अम्बुजम्,[1]

साथमें कमलाकी माँका नाम और पता भेज रहा हूँ। मैं चाहूँगा कि तुम उसे मेरी ओरसे १० रुपये भेज दो या अदा कर दो, जिसमें से ५ रुपये प्रतिमास उसकी बेटीकी ओरसे होगा। यानी ये १० रुपये दो महीनोंके हुए। हर महीने मनीआर्डर करने की झंझटसे बचने के खयालसे तुमसे यह काम करने को कह रहा हूँ। तुम्हारे जरिये भेजने से कुछ खर्च भी बच जायेगा। लेकिन यह राशि तुम्हें मुझसे लेने को तैयार रहना पड़ेगा। सारी राशि मैं तुम्हें एकमुश्त भेजना चाहता हूँ। चूँकि तुम कमलाकी माँसे किसी तरहका सम्बन्ध नहीं रखना चाहती हो, इसलिए तुम्हें यदि यह रुपया भेजने का काम जरा भी अटपटा लगता हो तो मुझे निःसंकोच बता देना। उस हालतमें कोई और व्यवस्था करूँगा। वैसे जल्दी नहीं है।

फलोंकी टोकरी नियमानुसार मिल गई है। फल भेजते समय महँगे और दक्षिणमें न होनेवाले फलोंको न भेजने का ध्यान रखना। क्योंकि ऐसे फल दिल्लीसे मँगवाने में सस्ते पड़ते हैं।

आशा है, पिताजी[2] स्वस्थ होंगे और तुम भी स्वस्थ और प्रसन्न होगी।

स्नेह।

बापू

[पुनश्च :]

पता यह है : श्री लक्ष्मी अम्माल, २९ एम० पी० कोइल स्ट्रीट, मइलापुर, मद्रास

मूल अंग्रेजीसे : अम्बुजम्माल पेपर्स। सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. सम्बोधन हिन्दीमें है।
२. एस० श्रीनिवास अय्यंगार।

१२४. पत्र : जेठालाल जी० सम्पतको

सेगाँव, वर्धा
१ सितम्बर, १९३७

भाई जेठालाल,

साथके पत्र उसी दिन लिखवाये थे जिस दिन मैंने [तुम्हारे नाम] पोस्ट कार्ड लिखवाया था; लेकिन चूंकि पोस्ट कार्ड तैयार था और इन्हें मैं पढ़ नहीं सका था इसलिए इन्हें दो दिन बाद भेजा जा रहा है।

भाई पारनेरकरने जिन विषयोंकी सूची बनाई है वे सब तुम एक महीनेमें सीख लेना। इससे तुम्हारा काम आसान हो जायेगा। अर्थात् मेरी सलाह है कि इसके लिए तुम एक महीना रख लो। सम्भव है कि तुम इतनेमें सन्तुष्ट हो जाओ। एक महीना तो मैंने ज्यादासे-ज्यादा बताया है।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९८६४) से; सौजन्य : नारायण जे० सम्पत

१२५. एक मूक साथीका देहान्त[1]

[१ सितम्बर, १९३७]

साबरमती सत्याग्रहाश्रमके निवासी और सम्बन्धी कुछ इस तरह बिखरे पड़े हैं कि उन्हें एक-दूसरेकी प्रवृत्तिका पता तक नहीं रहता। विशेष रूपसे सम्बन्ध स्थापित करने या उसे यत्नपूर्वक बनाये रखने की प्रथा नहीं डाली गई। सम्बन्ध केवल सेवाका रहा है। कहने का यह आशय नहीं कि सब ऐसा ही करते हैं। किन्तु मूक सेवामें स्व० मगनलाल गांधीके साथ स्पर्धा करनेवाले आश्रमवासी श्री छोटेलाल जैनका आत्मघात इन शब्दोंको लिखते हुए मुझे भीतर-ही-भीतर साल रहा है। छोटेलालकी मूक सेवाको शब्दोंमें नहीं बाँधा जा सकता। ऐसा करना मेरी शक्तिसे बाहर है। जहाँ कोई व्यक्ति छोटेलालका नाम लेता था, वे भाग खड़े होते थे। उनकी मृत्युका समाचार हरएक आश्रमवासी और उनके सगे-सम्बन्धी भी जानना चाहेंगे। मुझे याद नहीं पड़ता कि आश्रममें आने के बाद छोटेलाल कभी किसी सम्बन्धीके पास गये हों और न यही याद आता है कि कोई व्यक्ति उनसे मिलने आश्रममें आया हो। उन लोगोंके नाम-

१. प्यारेलाल द्वारा किया गया इसका अंग्रेजी रूपान्तर **हरिजन**, ११-९-१९३७ के अंकमें छपा था।

ठिकाने भी मुझे मालूम नहीं; तथापि मेरा यह कर्त्तव्य हो जाता है कि मैं उनतक यह खबर पहुँचाऊँ। उनकी खातिर भी मेरे लिए यह टिप्पणी लिखना उचित है, और फिर यदि मैं छोटेलालकी दु:खद मृत्युपर टिप्पणी लिखता हूँ तो भला उससे किसीको ईर्ष्या क्यों होने लगी?

यह मेरा सौभाग्य है कि मुझे कुछ ऐसे योग्य साथी मिले हैं कि उनके बिना मैं अपंग ही हूँ। छोटेलाल मेरे ऐसे ही साथी थे। उनकी बुद्धि तीव्र थी। उन्हें कोई भी काम सौंपते हुए मुझे संकोच नहीं होता था। वे भाषा-शास्त्री भी थे। राजपूतानाके निवासी होनेके कारण उनकी मातृभाषा हिन्दी थी, लेकिन वे गुजराती, मराठी, बंगला, तमिल, संस्कृत और अंग्रेजी भी जानते थे। नई भाषा या नया काम तुरंत हाथमें लेने की उनकी-जैसी शक्ति मैंने और किसीमें नहीं देखी। आश्रमकी स्थापना होने के बाद ही छोटेलाल आश्रममें आकर रहने लगे थे।

रसोई बनाना, पाखाना साफ करना, कातना, बुनना, हिसाब-किताब रखना, अनुवाद करना, चिट्ठी-पत्री लिखना आदि सब कामोंको वे स्वाभाविक ढंगसे करते थे और फबते थे। कहा जा सकता है कि 'वणाटशास्त्र' लिखने में मगनलालका जितना योगदान था उतना ही छोटेलालका भी था। उन्हें कितनी ही जोखिमका काम क्यों न दिया जाये, वे खुशीके साथ उसे करते थे, और जबतक उसे पूरा नहीं कर लेते थे तबतक उन्हें शान्ति नहीं मिलती थी। अविश्रान्त काम करते हुए भी छोटेलाल दूसरा काम हाथमें लेने को हमेशा तैयार रहते थे। उनके शब्दकोशमें 'थकान' के लिए स्थान नहीं था। सेवा करना और दूसरोंसे सेवा-कार्य लेना, उनका मन्त्र था। जब ग्रामोद्योग संघकी स्थापना हुई तब घानीका काम शुरू करनेवाले छोटेलाल, धान दलनेवाले छोटेलाल, और मधुमक्खियाँ पालनेवाले भी छोटेलाल थे। जिस तरह छोटेलालके बिना मैं अपंग-जैसा हो गया हूँ ऐसी ही स्थिति आज उनकी मधुमक्खियोंकी भी होगी। क्योंकि यह टिप्पणी लिखते समय मुझे पता नहीं कि उनके इस परिवारकी अब इतनी सार-सँभाल कौन रखेगा।

छोटेलाल मधुमक्खियोंके पीछे जैसे दीवाने हो गये थे। उनकी शोधमें उन्हें पैराटाईफाइड बुखार हो गया जो प्राण-लेवा सिद्ध हुआ। मालूम होता है, उन्हें छह-सात दिन अपनी सेवा कराना भी असह्य लगा। इसलिए ३१ अगस्त, मंगलवारकी रातको ग्यारह और दो बजेके बीच सबको सोता हुआ छोड़कर वे मगनवाड़ीके कुएँमें कूद पड़े। आज पहली तारीखको शामके चार बजे लाश हाथमें आई। मैं सेगाँवमें बैठा हुआ रातके आठ बजे यह लिख रहा हूँ। छोटेलालकी देहका इस समय वर्धामें अग्निदाह हो रहा होगा।

इस आत्मघातके लिए छोटेलालकी भर्त्सना करने की मुझमें हिम्मत नहीं। छोटेलाल तो वीर पुरुष थे। उनका नाम १९१५ के दिल्ली-षड्यन्त्र केसमें आया था, लेकिन उसमें वे बरी हो गये थे। वे उन दिनों किसी अधिकारीकी हत्या कर स्वयं फाँसीके तख्ते पर चढ़ने का स्वप्न देखते थे। इसी दरमियान वे मेरे लेख पढ़कर उनके पाशमें फँस चुके थे; दक्षिण आफ्रिकाके मेरे जीवनके बारेमें उन्होंने जानकारी प्राप्त कर

ली थी। अपनी तीव्र हिंसक बुद्धिको उन्होंने बदल दिया, और अहिंसाके पुजारी बन गये। जिस तरह साँप केंचुल उतार देता है उसी तरह उन्होंने अपने हिंसक जीवनकी खोल उतारकर फेंक दी थी, तथापि वे अपने मनपर विजय नहीं पा सके थे। उन्हें इस बीमारीमें अपनी सेवा लेना असह्य लगा, और गहरी पैठी हुई हिंसापर उन्होंने अपनी बलि चढ़ा दी। इस आत्मघातका मैं इसके अलावा और कोई अर्थ नहीं लगा सकता।

छोटेलाल मुझे अपना देनदार बनाकर ४५[1] वर्षकी उम्रमें चल बसे। मुझे उनसे बहुत आशाएँ थीं। उनकी अपूर्णता मैं सहन नहीं कर सकता था, इसलिए छोटेलालने मेरे जितने वाग्बाण सहन किये उतने तो शायद मैंने एक-दोको ही कराये होंगे। पर छोटेलालने उन्हें सदैव सहन किया। परन्तु ऐसे वचन सुनाने का मुझे क्या अधिकार था? मुझे तो उन्हें हिन्दू-मुसलमानोंकी लड़ाईमें, या हिन्दू-धर्मसे अस्पृश्यता-रूपी कचरा निकाल बाहर करने में या गोमाताकी सेवामें होम कर उनका कर्ज चुकाना था। ऐसा करने की शक्ति रखनेवाले साथियोंमें छोटेलाल एक ऊँचा स्थान रखते थे। मेरे लिए तो ये सब स्वराज्यकी वेदियाँ हैं।

पर छोटेलालकी मृत्युका रोना रोकर अब क्या करूँ? ऐसे अनेक मूक योद्धाओंकी आवश्यकता होगी। रामराज्य-रूपी स्वराज्य प्राप्त करना आसान नहीं है। छोटेलालके जीवनके इस छोटे-से टुकड़ेका परिचय पाकर दूसरे मूक सेवक आगे आयें।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ५-९-१९३७

१२६. पत्र : अमृतकौरको[2]

३ सितम्बर, १९३७

दायाँ हाथ अभी भी आराम कर रहा है। तुम्हारा अच्छा-सा तार आया है। मैं पहलेसे ठीक हूँ।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७९९) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६९५५ से भी

१. **हरिजन** में '४२' वर्ष दी गई है।
२. यह पत्र अमृतकौरके नाम मीराबहनके पत्रके पादलेखके रूपमें लिखा गया था।

१२७. पत्र : महादेव देसाईको

सेगाँव
३ सितम्बर, १९३७

चि० महादेव,

आज तो हम सबने आँखें फाड़-फाड़कर मोटरकी राह देखी; 'अब आई, अब आई' कहते रहे, लेकिन वह नहीं आई। अन्ततः मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा कि तुम जिस समय यहाँसे रवाना होनेवाले थे मैंने उसी समय तुमसे यह कहा था, इसलिए कदाचित् तुम उस बातको भूल ही गये; खैर कोई हर्ज नहीं। अब कल मोटर या बैलगाड़ी भेजना अथवा लाना। यदि बैलगाड़ी आनेवाली हो तो बेहतर होगा कि खाली ही आये।

गोसीबहन आज दोपहरको दो बजे वर्धा पहुँचना चाहती है। इसलिए उसके लिए मोटर भेजी जानी चाहिए। अभी तो बैलगाड़ीमें चिमनलाल और डाक्टर आये हैं। बैलगाड़ीमें डाक्टर वापस वर्धा जानेवाले हैं। इसलिए यदि दोपहरको बैलगाड़ी फिर आती है तो इससे बैलोंपर जुल्म होगा। उसके बारेमें मैं दामोदरको लिख रहा हूँ, जिससे वह आजके लिए बन्दोबस्त करेगा। इस बारेमें तुम्हें आज कुछ भी नहीं करना है। यह तो मैंने इसलिए लिखा है कि तुम्हें अथवा किसीको यहाँ आना हो तो तुम बँगलेसे गाड़ीके आने का समय जानकर उसमें आ सकते हो।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :][1]

१०-३० बजे हैं। मैं स्नान करने जा रहा हूँ। मैं तुम्हारे आदमी[2] रोक रहा हूँ। भोजनके बाद जवाब लिखकर भेजूँगा।[3]

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५६९) से।

१. यह अंश गांधीजी ने कनु गांधीको बोलकर लिखवाया था।

२. शाहजो।

३. देखिए "पत्र : महादेव देसाईको", पृ० १०९।

१२८. तार : भारत सरकारके गृह-सचिवको

वर्धा
३ सितम्बर, १९३७

गृह सचिव
शिमला

आपके कल ढाई बजे भेजे हुए और यहाँ आज सात बजेके बाद प्राप्त तारके[1] लिए धन्यवाद। कृपया सात कैदियोंको तार भेजिए। उद्धरण। आपके सन्देशकी बहुत कद्र करता हूँ जिससे मुझे समान ध्येयकी प्राप्तिमें भारी सहायता मिल रही है। आपकी 'राहत'की व्याख्याको व्यक्तिगत रूपसे मानता हूँ और वादा करता हूँ कि बन्दी मित्रोंके सक्रिय सहयोगसे उसके पूर्ण फलनके लिए कार्य करूंगा। इस कारण आपसे आग्रह है कि उपवास छोड़ें और शुभ समाचार भेजें। उद्धरण समाप्त।

गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७७९७ ए०) से; सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

१. तारीख २-९-१९३७ का तार इस प्रकार था: "उन सात कैदियोंकी भूख-हड़ताल जारी है और वे आपको यह सन्देश भेजते हैं। आरम्भ: आतंकवाद-विषयक आपके तारके लिए धन्यवाद। हमने घोषणा कर दी कि इससे देशका हित नहीं बल्कि अहित होगा। यदि अभी भी जेलों और नजरबन्दी कैम्पोंमें सजा भोग रहे कुछ कैदी और संगठन ऐसे हैं जो आतंकवाद द्वारा भारतकी स्वतन्त्रता-प्राप्तिमें विश्वास रखते हैं तो इस अवसरका लाभ उठाते हुए हम आपके जरिये उनसे अपील करते हैं कि वे हमेशाके लिए इस विचारको छोड़ दें। हम आपसे यह भी प्रार्थना करते हैं कि 'राहत'का स्पष्टीकरण करें। हमारे विचारसे सरकार द्वारा प्रान्तोंमें स्वायत्त शासन लागू करनेके बाद 'राहत'का अर्थ यही है कि सब राजनीतिक कैदियों, नजरबन्दों, सरकारी कैदियों, स्थानबन्धित नजरबन्दोंको रिहा कर दिया जायेगा, निष्कासितोंपर से प्रतिबन्ध हटा लिया जायेगा और सब दमनात्मक कानूनोंको रद कर दिया जायेगा। यदि हमें आपसे इन मामलोंमें आश्वासन मिले तो भूख-हड़ताल तोड़नेको राजी हैं। समाप्त। इसमें उल्लिखित तार आपका २७ अगस्तका सन्देश है। आपका ३० अगस्तका सन्देश तबतक पहुँचाया नहीं गया था।" गांधीजी के २७ और ३० अगस्तके तारोंके लिए देखिए पृ० ८१-२ और ९९। ८ और ११ सितम्बरके तारोंके, लिए देखिए पृ० १२१ और १३८।

१२९. पत्र : महादेव देसाईको

सेगाँव
३ सितम्बर, १९३७

चि० महादेव,

जिस समय तुम्हारा पत्र आया उस समय मेरा स्नान करने का समय था, इसलिए मैं अब नित्यकर्म आदिसे निवृत्त होकर यह पत्र लिख रहा हूँ। शाहजीने आज भोजन यहीं किया है।

मोटरको लेकर आज जो भूल हुई है वह अक्सर हो सकती है। यह तो अच्छा हुआ कि आजका चक्कर इतना महत्त्वपूर्ण न था। मैं यह माने लेता हूँ कि कल मोटर अवश्य आयेगी। जब नीमु[1] रवाना हो जाये तब देवदासको तार कर देना।

गृह[-सचिव]को जो तार[2] भेजा जानेवाला है उसका मसौदा उनके तारके पीछे लिखा हुआ है। चूँकि सब तार तुम्हारे पास हैं इसलिए इसे भी अपने पास सँभालकर रख लेना। इस पत्र-व्यवहारकी एक प्रति मुझे भेज देना।

छोटेलालकी अस्थियाँ अभी तो एक डिब्बेमें रख दो। गंगा तक पहुँचाने की मेरी तनिक भी इच्छा नहीं है; पवनारकी नदीमें भी मैं उन्हें प्रवाहित नहीं करना चाहता और उन्हें फेंकने भी नहीं दूँगा। बा का कहना है, कदाचित् छोटेलालके पिता उसकी अस्थियाँ प्रवाहित करना चाहें; यह सम्भव है। इस दृष्टिसे भी उन्हें डिब्बेमें रखना ठीक होगा।

रामेश्वर[3] तो अत्यन्त सरल व्यक्ति है। धूलियाके दो व्यक्तियोंके बारेमें वह क्या कहता है? गंगाको तो वर्धा ही बुलाना।

खानचन्दके पत्रसे मुझे तो सन्तोष नहीं हुआ। तुमने जो सुना है, वह किशोरलालके[4] सामने रखना।

बाबलोने[5] एनीमा लिया, यह तो एक अच्छी खबर है। भयसे भी अँतड़ियाँ शिथिल हो जाती हैं।

१. रामदास गांधीकी पत्नी निर्मला।
२. देखिए पिछला शीर्षक।
३. रामेश्वरदास पोद्दार।
४. किशोरलाल मशरूवाला।
५. महादेव देसाईके पुत्र नारायण।

तुमने पत्र मोहरबन्द करके भेजे, यह अच्छा ही किया।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५६३) से।

१३० पत्र : बहरामजी खम्भाताको

सेगाँव, वर्धा
३ सितम्बर, १९३७

भाई बहरामजी,

तुम्हारे दोनों पत्र और एक हजार रुपयेके नोट भी मिले हैं। उसमें ५०० रुपये बहन दीनबाई खानकी ओरसे तथा ५०० रुपये तुम्हारी ओरसे हैं। बहन दीन-बाईकी रकम मैंने भाई वेरियर एलविनको गोंड लोगोंके लिए कुएँ बनवाने को भेज दी है और तुम्हारी रकमका उपयोग मैं हरिजन भाई-बहनोंके लिए करूँगा। तुम्हारा अथवा दीनबाईका नाम मैं प्रकाशित नहीं करूँगा। दीनबाईको मेरी ओरसे धन्यवाद देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५६०) से। सी० डब्ल्यू० ५०३५ से भी; सौजन्य : तहमीना खम्भाता

१३१. टिप्पणियाँ

रिहाशुदा कैदियोंसे अपील

राजनीतिक हेतुसे की गई हिंसाके लिए गुनहगार साबित होकर जिन्होंने सजा पाई थी उन कैदियोंको रिहा करनेवाले कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंको तथा मुक्त हुए कैदियों-को भी मैं बधाई देता हूँ। मैं खुद तो निजी हेतु अथवा राजनीतिक हेतुसे की गई हिंसामें कोई फर्क नहीं देखता। हिंसा करनेवाले के हेतुमें फर्क होने से उस मनुष्यपर पड़नेवाले असरमें कोई फर्क नहीं आता जिसके प्रति हिंसा की जाती है। पर अहिंसापर पूरी-पूरी आस्था रखनेवाले की हैसियतसे, खानगी या सार्वजनिक अपराधके लिए सजा देने की पद्धतिपर मेरा विश्वास नहीं है। इसलिए मन्त्री लोग जिस सिद्धान्त का अनुसरण करके कैदियोंको छोड़ रहे हैं उस सिद्धान्तके अधिक विस्तृत क्षेत्रमें लागू होने का मैं स्वागत करता हूँ। पर मुझे इस बातका पता है कि अहिंसाके सम्बन्ध-में मेरे-जैसे चरम विचार वे नहीं रखते। इसलिए हिंसात्मक अपराधोंके लिए सजा पाये हुए कैदियोंको छोड़ने में जो कारण मैं लागू करना चाहूँगा वह कारण उन्होंने

लागू नहीं किया। उनका हेतु शुद्ध राजनीतिक था; और यह स्वाभाविक और उचित ही था। मन्त्रियोंका हेतु था उन लोगोंके साथ सम्पर्क स्थापित करना जो भारतकी स्वतन्त्रता हासिल करने के लिए अबतक यह मानते आये हैं कि अमुक प्रकारकी हिंसाका उपयोग करने से काम बनेगा। वे चाहते हैं कि ये लोग हिंसाका मार्ग छोड़ दें और उनकी शक्तिको कांग्रेसके अहिंसा-मार्गमें लगाया जाये। कांग्रेसकी कार्य-पद्धतिका जो अर्थ मैं लगाता हूँ वह अगर सही है, तो 'काकोरी काण्ड' के कैदियोंके छोड़े जाने के समय जो भारी प्रदर्शन लोगोंने किया वह — कमसे-कम कहें तो — एक राजनीतिक भूल थी। उन कामोंको, जो कि कैदियों द्वारा (मैं आशा करता हूँ कि गलत जोशमें) किये कहे जाते हैं, क्या इन प्रदर्शनोंमें शरीक होनेवाले हजारों लोग सही मानते थे? अगर वे सही मानते थे तो यही कहा जायेगा कि उन्होंने कांग्रेसकी कार्य-पद्धति समझी नहीं; इतना ही नहीं, बल्कि उन्होंने मन्त्रिमण्डलको अटपटी स्थितिमें डाल दिया है, और अपने प्रान्तके लोगोंको पूरी-पूरी स्वतन्त्रता देने के मुश्किल कामको और ज्यादा मुश्किल बना दिया है। मन्त्रियोंके ऐसे कामोंको हमें स्वाभाविक काम समझकर शान्तिके साथ देखते रहना चाहिए। काकोरी काण्डके कैदी कुछ बेवकूफ नहीं हैं। वे योग्य और समझदार आदमी हैं, और स्वदेश-प्रेममें वे किसीसे पीछे नहीं हैं। वे और उनके-जैसे दूसरे तमाम कैदी अगर अनुकरणीय बरताव रखकर, और मूक और निःस्वार्थ सेवा द्वारा कांग्रेसके संगठनको मजबूत बनाने के काममें पूरा योग देकर अपनेको सच्चा कांग्रेसी साबित करेंगे, और इस तरह कांग्रेसी मन्त्रियोंको मदद पहुँचाने में अपनी इस स्वतन्त्रताका उपयोग करेंगे, तो वे दूसरोंकी मुक्तिके लिए भी रास्ता खोल देंगे। कारण, उन्हें यह जानना चाहिए कि बहुत-से मामलोंमें जो यह दिखाई देता है कि कांग्रेसी मन्त्री अपनी इच्छाके अनुसार काम कर सकते हैं उसका कारण यह है कि उन्होंने अपने-अपने प्रान्तके गवर्नरोंके मनमें ऐसा विश्वास पैदा कर दिया है कि उनके हाथमें सौंपे हुए सभी विभागोंको, खासकर कानून और व्यवस्थाके कामको, पुलिस और फौजकी दस्तन्दाजीके बगैर चलाने की शक्ति इन मन्त्रियोंमें है। इस विषयमें जिस क्षण वे अपनी साख गँवा बैठेंगे और उन्हें कानूनके इन दो तथाकथित अंगोंका सहारा लेनेके लिए मजबूर हो जाना पड़ेगा उसी क्षण उनके ऊपर जो विश्वास जमा हुआ है वह ढीला पड़ जायेगा, और उनकी सत्ता करीब-करीब चली जायेगी। जबरदस्ती ऊपरसे थोपी हुई सत्ताको हमेशा पुलिस और फौजकी जरूरत पड़ती है; किन्तु जिस सत्ताका जन्म प्रजाके अन्दरसे होता है उसे इनके उपयोगकी नगण्य अथवा तनिक भी जरूरत नहीं होनी चाहिए।

जुआ और दुराचार

जिन प्रान्तोंमें कांग्रेसका बहुमत है वहाँ लोगोंके अन्दर तरह-तरहकी आशाएँ पैदा हो गई हैं। कुछ आशाएँ उचित हैं और निस्सन्देह पूरी की जायेंगी। कुछ अन्य आशाएँ हैं, जिन्हें पूरा नहीं किया जा सकता। उदाहरणार्थ जो लोग जुएबाजी करते हैं — और दुर्भाग्यवश इसकी आदत बम्बई प्रान्तमें बढ़ रही है — वे सोचते हैं कि जुएबाजीको वैध करार दे दिया जायेगा और बम्बई-भरमें चोरी-छिपे चल रहे जुएके

अड्डोंकी कोई जरूरत नहीं रह जायेगी। मुझे इस बातका भरोसा नहीं है कि जुएको, जो कि एक सीमित रूपमें अभी भी वैध है, यदि सार्वत्रिक रूपसे वैध करार दे दिया जायेगा तो गैरकानूनी अड्डे नहीं रह जायेंगे। उदाहरणके लिए यह सुझाव दिया गया है कि टर्फ क्लबको, जिसको घुड़दौड़के जुएपर एकाधिकार प्राप्त है, एक अतिरिक्त प्रवेश-द्वार खोलने की अनुमति दे दी जाये, ताकि गरीब लोगोंके लिए जुआ खेलना और सरल हो जाये। लालच यह दिया गया है कि इससे सरकारको और अधिक राजस्वकी प्राप्ति होगी। इसी प्रकारका दूसरा सुझाव है कि वेश्यालयोंका नियमन किया जाये और उनको लाइसेंस दिया जाये। इस प्रकारके सभी मामलोंकी भाँति ही इस मामलेमें भी तर्क यह दिया गया है कि वैध किया जाये या नहीं, ये दुराचार और दुर्व्यसन तो जारी ही रहेंगे, और इसलिए यही बेहतर है कि वेश्या-वृत्तिको वैध करार दे दिया जाये और वेश्यालयोंमें जानेवालों के लिए उन्हें सुरक्षित बना दिया जाये। मैं आशा करता हूँ कि मन्त्रिगण इस जालमें नहीं फँसेंगे। वेश्यालयोंसे निपटने का सही तरीका यह है कि औरतें दोतरफा प्रचार-कार्य करें : (क) उन स्त्रियोंमें प्रचारका काम करें जो जीविकोपार्जनके लिए अपना सम्मान बेचती हैं, और (ख) पुरुषोंके बीच प्रचार-कार्य करें और उन्हें शर्मिन्दा करें, ताकि वे अपनी बहनोंके साथ बेहतर व्यवहार करें, उन बहनोंके साथ जिन्हें वे मूढ़तावश या ढिठाईके कारण अबला कहते हैं। मुझे याद है कि बरसों पहले, १९ वीं सदीके अन्तिम दशकके प्रारम्भमें मुक्ति सेना (साल्वेशन आर्मी) के कार्यकर्त्ता अपनी जानको जोखिममें डालकर बम्बईकी उन बदनाम सड़कोंके कोनोंपर धरना दिया करते थे जिनमें वेश्यालयोंकी भरमार थी। कोई कारण नहीं कि ऐसी ही कोई चीज एक बड़े पैमानेपर क्यों नहीं संगठित की जा सकती। घुड़दौड़के मैदानोंमें जुआ खेलने के रिवाजके बारेमें मेरा खयाल है कि अन्य अनेक चीजोंकी तरह यह भी पश्चिमसे आई हुई एक बुराई है और अगर मेरा बस चलता तो घुड़दौड़के जुएको जो-कुछ कानूनी संरक्षण प्राप्त है उसको भी मैं वापस ले लेता। कांग्रेसका कार्यक्रम आत्मशुद्धिका कार्यक्रम है, जैसा कि १९२० के प्रस्तावमें[1] स्पष्ट शब्दोंमें कहा गया है। इसलिए दुर्व्यसनोंसे प्राप्त आयसे कांग्रेसका कोई वास्ता नहीं हो सकता। इसलिए मन्त्रियोंको चाहिए कि उन्हें जो सत्ता प्राप्त हुई है उसका उपयोग वे जनताको सही दिशामें प्रशिक्षित करने के लिए करें और ऊँचे वर्गमें जुएबाजीको रोकें। यह आशा करना निरर्थक है कि अविवेकी जनता तथाकथित ऊँचे लोगोंकी बुरी आदतोंकी नकल नहीं करेगी। मैंने लोगोंको यह तर्क देते हुए सुना है कि घोड़ोंकी अच्छी नस्ल तैयार करने के लिए घुड़दौड़ खेलना जरूरी है। इसमें सचाई हो सकती है। क्या बिना जुएके घुड़दौड़ खेलना सम्भव नहीं है? या घोड़ोंकी अच्छी नस्ल तैयार करने में जुएसे भी मदद मिलती है?

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ४-९-१९३७

१. देखिए खण्ड १९, परिशिष्ट १।

१३२. पदग्रहणसे मेरा आशय

श्री शंकरराव देव[1] लिखते हैं :

> 'हरिजन' के पिछले अंकमे "निर्देश-पत्र नहीं"[2] शीर्षकसे प्रकाशित टिप्पणीके दूसरे अनुच्छेदमें आपने लिखा है: "मेरे लिए, कांग्रेस घोषणा-पत्र और कांग्रेस प्रस्तावोंके अनुसार भी, मन्त्रिपद स्वीकार करने का एक विशेष अर्थ है। मन्त्रिपद स्वीकार करने के अपने उस अर्थको यदि मै मन्त्रियों और जनताके आगे न रखूँ, तो वह गलत होगा।" मैंने आपका आशय यह समझा है कि पद-ग्रहणके पक्षमें आप इसलिए हैं कि इससे जनताकी सेवा करने तथा रचनात्मक कार्यक्रमके जरिये कांग्रेसकी शक्ति बढ़ाने का मौका मिलेगा। लेकिन मैं समझता हूँ कि इस सम्बन्धमे अगर आप अपना आशय जरा विस्तारसे समझा दें तो ज्यादा अच्छा होगा।

ठीक हो या गलत, लेकिन १९२० से कांग्रेसके-से विचार रखनेवाले लाखों-करोड़ों हिन्दुस्तानियोंका यह दृढ़ मत रहा है कि अंग्रेजी हुकूमत हिन्दुस्तानके लिए कुल मिलाकर अभिशाप-रूप ही सिद्ध हुई है। और इस हुकूमतके टिके रहने का कारण अंग्रेजी फौजें तो हैं ही, पर साथ ही इसके लिए विधानमण्डल, उपाधियाँ, अदालतें, शिक्षा-संस्थाएँ और वित्त-नीति इत्यादि भी उतने ही जिम्मेदार हैं। कांग्रेस आखिर इस नतीजेपर पहुँची कि हमे बन्दूकोंसे डरना नही चाहिए; बल्कि जनताको उस सुसंगठित हिंसाका — जिसकी कि अंग्रेजी बन्दूकें एक नग्न प्रतीक है, प्रतिकार अपनी सुसंगठित अहिंसा द्वारा करना चाहिए; और इन विधानमण्डलों आदि अन्य चीजोंका प्रतिकार उनके प्रति असहयोग द्वारा करना चाहिए। असहयोगकी उपर्युक्त योजनाका एक मजबूत और प्रभावकारी क्रियात्मक पहलू भी था, जिसे लोग रचनात्मक कार्य कहते थे। राष्ट्र जिस हदतक १९२० मे निर्धारित कार्यक्रमको अंजाम देने में सफल हुआ, उसी हदतक वह अपने मुख्य ध्येयकी प्राप्तिमे भी सफल हुआ।

यह नीति कभी बदली नहीं है। इसकी शर्तें भी कांग्रेसने उठाई नहीं हैं। मेरे विचारमें, तबसे जितने भी प्रस्ताव कांग्रेसने मंजूर किये हैं, उनके पीछे यदि १९२० वाली मनोवृत्ति ही कायम रही है तो वे इस मूलभूत नीतिके वर्जक नही बल्कि साधक हैं।

१९२० की नीतिका मुख्य आधार राष्ट्रकी सुसंगठित अहिंसा थी। हमने देखा कि अंग्रेजी शासन-प्रणाली पत्थरकी तरह जड़ ही नहीं, बल्कि राक्षसी भी है; परन्तु उसके पीछे काम करनेवाले स्त्री-पुरुष ऐसे नहीं हैं। इसलिए हमारी अहिंसाका उद्देश्य

१. अध्यक्ष, महाराष्ट्र प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी।
२. देखिए पृ० ६६-७।

इस प्रणालीको चलानेवालों का नाश करना नहीं, बल्कि उनके दिलको बदलना था — चाहे वे अपना दिल खुशीसे बदलें या मजबूर होकर। अगर न चाहते हुए भी उन्हें यह देखना पड़ा कि हमारी अहिंसाके कारण उनकी बन्दूकें, तोपें और वे तमाम चीजें, जिनका उन्होंने अपनी सत्ताको मजबूत करने के लिए निर्माण किया है, बेकार हो गई हैं, तो वे सिवा इसके कर ही क्या सकेंगे कि अटल नियतिके सामने अपना सिर झुकाकर या तो यहाँसे चले जायें, या अगर रहना ही पसन्द करें तो हमारी शर्तोंपर, यानी हमपर अपनी इच्छाएँ थोपने के लिए हमारे शासकोंकी तरह नहीं, बल्कि हमसे सहयोग करने के लिए मित्रोंकी तरह रहें।

कांग्रेसी अगर इस मनोवृत्तिको लेकर विधानमण्डलोंमें गये हैं और पद-ग्रहण किया है, और अगर अंग्रेज शासक भी कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंको अनिश्चित कालतक बरदाश्त करते रहें, तो समझना चाहिए कि कांग्रेस इस अधिनियमको[1] तोड़ने और सम्पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त करने के मार्गमें काफी हदतक सफल हो जायेगी। क्योंकि अगर मेरी बताई शर्तोंपर काफी अरसेतक मन्त्रिमण्डल कायम रहे, तो निश्चय ही कांग्रेसकी शक्ति दिन-दिन बढ़ती ही जायेगी और अन्तम वह ऐसी दुर्निवार हो जायेगी कि उसके मार्गमें कोई खड़ा नहीं हो सकेगा। पर इस परिणतिकी सबसे पहली और अनिवार्य शर्त होगी सम्पूर्ण जनता द्वारा अहिंसाका स्वेच्छापूर्वक पालन। इसके मानी हैं समस्त जातियोंके बीच सम्पूर्ण मित्रता और सहयोग; अस्पृश्यताका सम्पूर्ण नाश; नशेबाजों द्वारा अफीम और शराबका खुद-ब-खुद परित्याग; स्त्रियोंको उनके समस्त सामाजिक अधिकारोंका दिया जाना; गाँवोंमें रहनेवाले करोड़ों श्रम-जीवियोंका उत्तरोत्तर कष्ट-निवारण; निःशुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा — आजकलकी तरह नाममात्रकी शिक्षा नहीं, बल्कि वैसी सच्ची शिक्षा जैसी कि मैंने बताने का साहस किया है; प्रौढ़ शिक्षा द्वारा ऐसे अन्धविश्वासोंका क्रमशः निर्मूलन जो निश्चित रूपसे हानिकर सिद्ध हो चुके हैं; माध्यमिक शिक्षामें इस दृष्टिसे आमूल परिवर्तन कि वह मुट्ठी-भर मध्यम वर्गकी नहीं, बल्कि करोड़ों ग्रामवासियोंकी जरूरतोंकी पूर्ति कर सके; न्याय-विभागमें भी ऐसा मौलिक परिवर्तन जिससे कम खर्चमें शुद्ध न्याय मिल सके; और जेलोंका भी सुधार-गृहमें परिवर्तन, और वहाँ सजाके लिए नहीं बल्कि सम्पूर्ण शिक्षा पाने के लिए उन लोगोंका भेजा जाना जिनको अबतक हम गलतीसे अपराधी कहते आये हैं, परन्तु दरअसल जिनके दिमागमें अस्थायी तौर पर खराबी पैदा हो जाती है।

इस लम्बी-चौड़ी कार्य-योजनाको देखकर कोई डरे नहीं। अगर हम निश्चय कर लें तो मेरी बताई इस योजनाके हरएक हिस्सेपर बगैर किसी रुकावटके हम आज ही से अमल शुरू कर सकते हैं।

पद-ग्रहणकी सलाह देते समय तक मैंने अधिनियमको ध्यानसे पढ़ा नहीं था। लेकिन उसके बादसे प्रोफेसर के० टी० शाहकी लिखी हुई 'प्रॉविंशियल ऑटोनामी'

१. १९३५ का गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट।

(प्रान्तीय स्वायत्त शासन) पुस्तकका मैं ध्यानपूर्वक अध्ययन कर रहा हूँ। इस पुस्तकमें यथार्थवादी दृष्टिसे नये विधानकी जोरदार निन्दा की गई है, जो सही है। मगर कांग्रेसके इस तीन महीनेके संयमने सारे वातावरणको बदल दिया है। मुझे ऐसी एक भी बात इस कानूनमें नजर नहीं आती जो मन्त्रियों द्वारा मेरा सुझाया कार्यक्रम शुरू करने में बाधक हो। कानूनमें जिन विशेष अधिकारों और संरक्षणोंका जिक्र है उनपर अमल करने का मौका तभी आ सकता है जबकि देशमें हिंसा हो, या अल्पसंख्यकों और तथाकथित बहुसंख्यक जातिके बीच संघर्ष पैदा हो, जो हिंसाका दूसरा नाम है।

इस कानूनकी हरएक धारामें मुझे यह दिखाई देता है कि इसके बनानेवालों के दिलोंमें हिन्दुस्तानकी अपना शासन खुद करने की योग्यता मे घोर अविश्वास और अंग्रेजी हुकूमतको चिरस्थायी बनाने की इच्छा है। मगर साथ ही इसके निर्माताओंने जनताको अंग्रेजोंके पक्षमें लाने के लिए एक साहसपूर्ण प्रयोग किया है, और इसमें इस बातकी गुंजाइश रखी है कि अगर सफल न हुए तो जनताकी ब्रिटिश प्रभुत्वकी समाप्तिकी इच्छाको दार्शनिक भावसे भी स्वीकार कर लेंगे। इन लोगोंका दिल बदलने की दृष्टिसे ही कांग्रेसने विधानमण्डलोंमें जाना स्वीकार किया है; और अगर वह अहिंसा, असहयोग और आत्मशुद्धिकी सच्ची भावनासे काम करती रही तो मुझे निश्चय है कि वह जरूर कामयाब होगी।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ४-९-१९३७

१३३. राष्ट्रीय तिरंगा[1]

तिरंगे राष्ट्रीय झंडेके बारेमें कानपुरसे एक सज्जन लिखते हैं :

राष्ट्रपति पण्डित जवाहरलालजी की आज्ञानुसार हमारे नगरमें भी पहली अगस्तको राष्ट्रीय झंडा फहराया गया था। उस दिन तथा उसके बाद कुछ दुःखद दृश्य देखने में आये। इसीसे मैं आपको यह पत्र लिख रहा हूँ।

जो झंडा उस दिन फहराया गया था उसे लोगोंने चाहे जिस तरहका अपनी पसन्दके माफिक बना लिया था। आकार-प्रकार या रंग एक-सरीखे थे ही नहीं। कुछ झंडे चौरस थे तो कुछ लम्बे आकारके। कुछ झंडोंका रंग हलका था, तो कुछका खूब गहरा। कुछमें चरखेका निशान था और कुछमें नहीं।

आज पन्द्रह दिन ही हुए हैं, पर इन झंडोंकी बहुत बुरी दशा हो गई है। रंग कच्चा होनेसे सफेद हिस्सा तो उनका दीखता ही नहीं; वह कुछ

१. यह मूल हिन्दी लेख कुछ मामूली हेर-फेरके साथ **हरिजन,** ४-९-१९३७ के अंकमें प्रकाशित हुआ था।

> **हरा और कुछ पीला हो गया है। कुछ झंडे तो मैले चीथड़े-से लगते हैं। खादी-भण्डारसे लाये हुए झंडोंकी भी यही दशा हुई है।**
>
> **झंडेका प्रश्न दिन-दिन महत्त्वपूर्ण होता जा रहा है, इसलिए प्रबन्ध ऐसा होना चाहिए कि एक-से आकार और रंगके झंडोंका ही उपयोग किया जाये। रंग पक्का होना चाहिए, ताकि सब ऋतुओंमें वह एक-सा बना रह सके।**
>
> **मुझे तो ऐसा लगता है कि झंडे एक ही केन्द्रसे तैयार कराये जायें और वहींसे बेचे जायें। राष्ट्रीय झंडे खानगी रीतिसे न बन सकें, ऐसा प्रचार करना चाहिए।**

इस पत्रमें जैसा लिखा है यदि वैसा हुआ हो तो यह शोचनीय बात है। यह झंडा आज सत्रह सालसे काममें लाया जाता है। किसी भी राष्ट्रके झंडेका मूल्य तभी है जब वह एक निश्चित नियमके अनुसार तैयार किया गया हो। यह नियम प्रत्येक वस्तुके साथ लागू होता है। बाजारमें हम कोई भी चीज खरीदने जाते हैं तो उसका रंग, रूप और आकार देखकर उसे खरीदते हैं, और जैसी चीज हमें चाहिए वैसी मिलने पर ही उसके ऊपर हम लोग पैसा खर्च करते हैं। तो फिर जिस राष्ट्रीय झंडेकी खातिर लोग प्राण तक अर्पण कर देते हैं, उसकी कितनी अधिक कीमत होगी?[1] राष्ट्रीय झंडा राष्ट्रके आत्म-सम्मान और गौरवका, उसके आदर्शों और आकांक्षाओंका प्रतीक है। अतः उसे ऐसा होना चाहिए कि सिक्कोंकी तरह उसे भी सरलतासे पहचाना जा सके। उसको उचित पवित्रता प्रदान करने के लिए यह जरूरी है कि उसे निश्चित मापदण्डके अनुरूप बनाया जाये। यदि उसकी इतनी अधिक कीमत है तो उसे हम चीथड़ोंका या अपनी मरजीके माफिक न बनायें। ऐसा करके तो हम अपने झंडेका अपमान करते हैं। परन्तु एक-सरीखे झंडे मिलेंगे कहांसे? कानपुरके इन सज्जनने जो तजवीज सुझाई है वह ठीक है। किसी एक ही जगह बनवाने से झंडे एक-सरीखे बन सकेंगे। जैसे टकसालमें सिक्के बनते हैं अथवा जैसे कारखानोंमें अनेक चीजें बनती हैं उसी तरह अगर ये झंडे लाखोंकी संख्यामें बनवाये जायें, तभी सस्ते और एकसमान बन सकते हैं। यह काम चरखा संघ और कांग्रेस कार्यालयकी मारफत ही हो सकता है, क्योंकि शुद्ध नमूना और रंग वगैराका वर्ण वहींसे निकल सकता है।

हरिजनसेवक, ११-९-१९३७, और **हरिजन**, ४-९-१९३७

१. इसके आगेके तीन वाक्य **हरिजन**से लिये गये हैं।

१३४. पत्र : सरस्वतीको

सेगाँव, वर्धा
४ सितम्बर, १९३७

चि० सरस्वती,

तुम्हारा खत मिला। अमतुल सलाम बहिन आ गई हैं। सब खबरें सुनी। अब तो तुम्हारे एकध्यान होकर अभ्यास पूर्ण करना है। उसके बाद आरामसे यहां आ सकेगी। लेकिन यह बात हुई दो वर्षके बाद की। देखें ईश्वरकी क्या इच्छा है? मुझको बरोबर खत लिखा करो। यह कितनी आश्चर्य की बात है कि जो यहां बिमार पडते है वह त्रावणकोर जाय, लेकिन त्रावणकोरमें इतने बिमार रहते हैं उनका क्या? अगर त्रावणकोरमें ऐसे चतुर वैद्य रहते है कि जो महारोग भी मिटा सकते है, फिर भी त्रावणकोरमें रोगी क्यों होने चाहिये? ऐसे प्रश्नोंका उत्तर तुमारी शालामें सीखाए जाते है क्या?

अमतुल सलाम बहिन पूछती है कि मैंने तुम्हारी जन्मतिथिके आशीर्वाद भेजे थे या नहीं? मुझे ठीक स्मरण तो नही है। अगर नहीं भेजे है तो अब चोगुना सूदके साथ ले लो। सूद का अर्थ है व्याज। दोनों में से एक शब्द तो जानोगी, या दोनों जानोगी।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१६४) से। सी० डब्ल्यू० ३४३७ से भी; सौजन्य : कान्तिलाल गांधी

१३५. पत्र : हीरालाल शर्माको

सेगाँव, वर्धा
४ सितम्बर, १९३७

चि० शर्मा,

तुमारा खत मिला। अम्तुल सलाम यहां पहुंच गई है। रामदासके साथ तुमारा जाना असम्भवित-सा था क्योंकि रामदास ही मि० केलनबैक के साथ गया। देखें अभी क्या होता है? . . .[1] मुझे बताओ कि किस तरहके दर्दी [मरीज़] रखते हो? वहां फल मिलते हैं? सब्जी मिलती है? गायका दूध मिलता है?

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २६४

१३६. टिप्पणियाँ

हरिपुरा कांग्रेस स्वागत-समिति

दरबार साहबका[2] अध्यक्ष चुना जाना और तीन बहनोंका उपाध्यक्ष तथा एक बहनका [illegible] सेनापति नियुक्त किया जाना, ये सब बातें शुभ संकेत हैं। स्वागत-समितिमें सदस्य भी काफी हैं। काम ठीक समयपर शुरू हुआ है। यदि सभी सदस्योंकी नियुक्ति केवल कामके लिए ही हुई हो, नामके लिए नहीं तो आगामी कांग्रेस सबसे अच्छी और अत्यन्त सादगीपूर्ण होनी चाहिए। बहुत बार ऐसा होता है कि सब काम ठीक तरहसे सम्पन्न होता है और वह भी अनायास ही — किसी विशेष व्यवस्थाके कारण नहीं। कांग्रेस-अधिवेशन-जैसे महान् कार्यमें ईश्वरका हाथ रहता ही है और मनुष्यसे जिस कार्यके बिगड़ने की आशंका होती है वह भी सुधर जाता है। आगामी कांग्रेसकी व्यवस्था भी इस तरह की जानी चाहिए कि अपने वश-भर कोई दुर्घटना न होने पाये और सब-कुछ अच्छी तरहसे और पूर्व-निर्धारित कार्यक्रमके मुताबिक सम्पन्न हो।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ५-९-१९३७

१. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ अंश छूटा हुआ है।
२. दरबार गोपालदास, ढसाके भूतपूर्व शासक, जिन्हें असहयोग आन्दोलनके दिनोंमें गद्दीसे उतार दिया गया था।

१३७. पत्र : ग्लेडिस ओवेनको

सेगाँव, वर्धा
५ सितम्बर, १९३७

प्रिय ग्लेडिस,

चीनी-आन्दोलनमें जी-जानसे जुट जाने का तुम्हारा विचार मुझे पसन्द आया। परन्तु मेरी समझमें नहीं आता कि मैं कैसे मार्ग-दर्शन कर सकता हूँ। कोई बाह्य शक्ति तुम्हारा मार्ग-दर्शन नहीं कर सकती। मार्ग-दर्शन और उस मार्गपर चलने की शक्ति तो तुम्हें अपने अन्तरसे ही मिल सकती है।

मुझे अभी म्यूरियलका[1] पत्र मिला है। वह भी चाहती है कि मैं चीनके लिए कुछ करूँ। किन्तु मुझे कबूलना पड़ेगा कि मैं तो मानों अन्धकारमें टटोल रहा हूँ। चीन जापानके साथ उसीके तरीकेसे युद्ध करना चाहता है। और ऐसे मामलेमें मैं अपनेको बिलकुल किंकर्त्तव्यविमूढ़ पाता हूँ। मेरी समझमें नहीं आता कि चीन तक किस प्रकार अहिंसाका सन्देश सफलतापूर्वक पहुँच सकता है और ठीक यही बात स्पेनके लिए भी लागू होती है। अतएव मेरा कर्मक्षेत्र केवल भारत है। यदि भारत इस सन्देशको पूर्णरूपेण हृदयंगम कर ले तो पूरे संसारके लिए भी कुछ आशा है। परन्तु मुझे तो यही दीखता है कि यदि भारत इसे ग्रहण न करे तो फिर विश्व-व्यापी संकटको टाला नहीं जा सकता।

स्नेह।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०५७१) से।

१. म्यूरियल लेस्टर।

१३८. पत्र : अमृतकौरको

सेगांव, वर्धा
६ सितम्बर, १९३७

मूर्खा रानी,

दो-चार शब्दोंसे अधिक नहीं लिखूंगा। तुम्हारे तार यथासमय मिले और उसी तरह पत्र भी। पत्र तो पढ़कर तत्काल नष्ट कर दिया।

मैं ठीक हूँ, रक्तचाप १६०/१०५ है। हाँ, कमजोरी तो है ही। शरीरको खूब आराम दे रहा हूँ।

स्नेह।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८००) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९५६ से भी

१३९. पत्र : अमृतकौरको[1]

सेगाँव
७ सितम्बर, १९३७

कोई २ समय मैं भी हिन्दीमें लिखुं न? दिन-प्रति-दिन अच्छा होता जाता हूं, खूब सोता हूं।

बापु

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ३८०१) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९५७ से भी

१. यह मीराबहन द्वारा अमृतकौरको लिखे गये पत्रके पादलेख रूपमें है।

१४०. तार : देशबन्धु गुप्ताको[1]

[८ सितम्बर, १९३७ के पूर्व][2]

मैं निश्चय ही लाहौरके बूचड़खानेके[3] विरुद्ध हूँ; बल्कि सभी बूचड़खानोंके विरुद्ध हूँ। यदि मुसलमान भी सहयोग दें तो लाहौरमें बूचड़खाना नहीं बन सकेगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, ८-९-१९३७

१४१. एक तार[4]

८ सितम्बर, १९३७

सात बन्दियोंके लिए भेजे गये अपने सन्देशके[5] सिलसिलेमें उनके उत्तरकी बेचैनीसे प्रतीक्षा कर रहा हूँ। क्या भूख-हड़ताल अब भी जारी है? यदि जारी है, तो कृपया उनको बताइए कि जबतक वे अनशन नहीं छोड़ते मेरे प्रयास व्यर्थ होंगे।[6]

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १६-९-१९३७

१. पंजाब विधानसभाके सदस्य।

२. रिपोर्ट पर "नई दिल्ली, बुधवार" लिखा था। बुधवार ८ सितम्बरको पड़ा था।

३. लाहौर छावनीमें एक बहुत बड़ा बूचड़खाना बननेवाला था।

४. यह तार पोर्ट ब्लेयरमें अंडमानके अधिकारियोंके पास भेजा गया था।

५. ३ सितम्बर, १९३७ का; देखिए पृ० १०८।

६. उत्तरमें अधिकारियोंका यह तार आया था: "आपका तार कल अनशन करनेवालोंको दे दिया गया। वे 'राहत' की अपनी व्याख्या की आपकी स्वीकृति की कद्र तो करते हैं, परन्तु अनशन तोड़ने से इनकार करते हैं।"

१४२. तार : अमृतकौरको

वर्धागंज
८ सितम्बर, १९३७

राजकुमारी अमृतकौर
समर हिल

अखबारोंको दिये जमनालालजी के वक्तव्यमें अतिरंजना है।[१] तुम जब यहाँ थी उसकी अपेक्षा अब सचमुच बहुत अच्छा हूँ। रक्तचाप १६०/१०५। स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८०३) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९५९ से भी

१४३. पत्र : वाइसरायको

सेगाँव, वर्धा
८ सितम्बर, १९३७

प्रिय मित्र,

तार द्वारा की गई मेरी प्रार्थनाका आपने स्पष्ट और विस्तृत उत्तर दिया, इसके लिए धन्यवाद। आपने जो स्थिति अख्तियार की है, उसे मैं समझता हूँ और उसके बारेमें विवाद करने का प्रयत्न नहीं करूँगा।

बन्दियोंको सम्बोधित मेरे अनुरोधका उन्होंने जो उत्तर[२] दिया उसकी जो अपूर्णता आपके ध्यानमें आई वह मेरी भी दृष्टिसे चूकी नहीं थी, परन्तु जहाँतक आतंकवादी पद्धतियोंका सवाल है, उन्होंने जिन स्पष्ट और असन्दिग्ध शब्दोंमें विचार प्रकट किये हैं, उससे मैं सन्तुष्ट और प्रभावित हुआ हूँ। अंडमानवाले मित्र जिस कोटिके देशभक्त हैं, उस कोटिके देशभक्तोंके साथ-साथ स्थायी और सम्मानयुक्त

१. देखिए पृ० १२६ पर की पाद-टिप्पणी १।
२. देखिए पृ० १०८ पर की पाद-टिप्पणी १।

समझौता करने के अपने उद्देश्यकी पूर्तिमें आपका सक्रिय सहयोग पाने की मैं आपसे सदा आशा रखूँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

परमश्रेष्ठ वाइसराय

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७७९८) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१४४. पत्र : जी० कनिंघमको

सेगाँव, वर्धा
८ सितम्बर, १९३७

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके[1] लिए धन्यवाद। मैं समझ गया कि आप मुझसे क्या अपेक्षा रखते हैं। आशा है, आपको निराश नहीं करूँगा; इसका सीधा-सादा कारण यह है कि जो शक्तिवान् हैं उनके सम्मुख अपनी साखमें वृद्धि करना चाहता हूँ, ताकि उसके बलपर मैं उनके साथ और बढ़िया सौदा कर सकूँ।

इस समय तो मैं डाक्टरोंकी आज्ञासे आराम करने का प्रयास कर रहा हूँ, और मैंने अपने मित्र खान साहबसे कह दिया है कि मुझे सीमा-प्रान्त बुलाने में उतावली न करें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

परमश्रेष्ठ गवर्नर महोदय
पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्त

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७७९८ ए) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१. सम्भवतः गांधीजी के २४ अगस्त के पत्र के उत्तर में; देखिए पृ० ७४-७५।

१४५. पत्र : एम० वी० श्रीनिवासनको[1]

सेगाँव, वर्धा
८ सितम्बर, १९३७

प्रिय मित्र,

आशा है, आपका सम्मेलन सफलतापूर्वक सम्पन्न होगा, और उसमें पूर्ण नशाबन्दीके कार्यक्रमका हार्दिक रूपसे समर्थन किया जायेगा। मुझे यह भी आशा है कि इस सम्मेलनके फलस्वरूप बहुत बड़ी संख्यामें ऐसे स्वयंसेवक मिल सकेंगे जो शराबियोंकी प्रेममय मनोयोगसे सेवा करके उनकी शराबकी आदत छुड़ाने के कार्यक्रममें योग देने को तत्पर हों।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अध्यक्ष
स्वागत समिति
द्वितीय राजनीतिक परिषद्
तिरूचेनगोडु तालुका
पल्लीपालयम्, (बरास्ता) एरोड

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९९) से।

१४६. पत्र : डी० बी० बर्वेको[1]

सेगाँव, वर्धा
८ सितम्बर, १९३७

आपके पत्र और सुझावोंके लिए धन्यवाद।[2] ग्रामोद्योग मन्त्रीसे बातचीतके समय मैं इन सब सुझावोंका ध्यान रखूँगा।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे। बी० जी० खेर पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. संयुक्त प्रान्त सरकारके कला तथा दस्तकारी वाणिज्य केन्द्र, लखनऊके व्यवसाय-प्रबन्धक।

२. डी० बी० बर्वे मानते थे कि भारतीय दस्तकारी विदेशी बाजारमें खपने की महती सम्भावनाओं से आपूरित है। इसलिए उन्होंने नीचे लिखे अनुसार सुसम्बद्ध प्रयत्न करने का सुझाव दिया था.

१४७. पत्र : लीलावती आसरको

सेगाँव
८ सितम्बर, १९३७

चि० लीलावती,

भला लीला न रहकर लीलावती तो बनी। इसका अर्थ यदि समझमें न आया हो तो महादेवसे पूछना। यदि मेरी अनुमति लिये बिना जायेगी तो यह तुझे अनुकूल नहीं आयेगा। यदि तू जाना चाहती है तो खुशीसे जा लेकिन इस तरह क्रोधमें नहीं। मैं तो शामतक तेरे यहाँ पहुँचने की आशा करता हूँ। आधा मन अथवा एक मन खजूर लेकर आना। मेरे साथ अच्छी तरहसे बातचीत करने के बाद जो उचित लगे सो करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३६७) से। सी० डब्ल्यू० ६६४२ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

१४८. पत्र : जे० पी० भणसालीको

सेगाँव
८ सितम्बर, १९३७

चि० भणसाली,

सपनेमें भी यहाँसे जाने की बात मत सोचना। तुम जा ही नहीं सकते। तुम्हारी गुफा भी यहीं है और श्मशान भी यहीं है। लीलावती तो सम्भवतः आज ही

"कारीगरोंके लिए कच्चा माल तैयार रखनेके निमित्त अपूर्ति केन्द्रोंका संगठन करना; विभिन्न विदेशी बाजरोंमें जिन डिजाइनोंकी माँग है उनकी आपूर्ति करना; ग्राहकोंके पास जाकर उन्हें माल खरीदनेके लिए राजी करनेवाले एजेंटोंके माध्यमसे मालका भारत तथा विदेशोंमें वितरण करना; इन उद्योगोंकी सहायताके लिए राज्यसे धन प्राप्त करना; सभी प्रान्त इस प्रयत्नमें शामिल हों; विभिन्न राज्यों तथा प्रान्तोंके मालका विनिमय करके नये बाजारकी तलाश करना; मालका उत्पादन बड़े पैमानेपर करना और जो सुविधाएँ विदेशोंके अपने मालके सम्बन्धमें भारतमें प्राप्त हैं उन सुविधाओंको भारतके लिए विदेशोंसे प्राप्त करना।"

पहुँचेगी। यदि आज नहीं तो थोड़े दिनोंमें अवश्य आ जायेगी। तुम उसके नामसे एक चिट्ठी लिखकर मुझे दे देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८३५७) से। सी० डब्ल्यू० ७०२१ से भी; सौजन्य : मुन्नालाल जी० शाह

१४९. पुर्जा : अमृतकौरको[1]

८ सितम्बर, १९३७

आज तो केवल प्यार जताने-भरका समय है।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८०२) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९५८ से भी

१५०. पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव
८ सितम्बर, १९३७

मूर्खा रानी,

यह पत्र शामकी सैरसे वापस आकर लिख रहा हूँ। मेरे बारेमें चिन्ताका कोई कारण नहीं है। यह सुनकर तुम्हें धक्का तो नहीं पहुँचेगा कि मैं उस विशेषज्ञ की दवा ले रहा हूँ। उसने मुझे उसके बारेमें पूरा ब्योरा दिया है। वह एक साधारण-सी बूटी है, जिसे धूपसे सेका गया है। वह कहता है कि स्थायी आराम देनेमें यह हमेशा अचूक सिद्ध हुई है। खैर, उससे कोई हानि नहीं हो सकती। केवल उसे लेनेके कारण

१. ये पंक्तियाँ मीराबहन द्वारा अमृतकौरको लिखे पत्रके अन्तमें लिखवाई हैं। मीराबहनने और बातोंके अलावा यह भी लिखा था : "बापूने आज सुबह तुम्हें एक आश्वासनपूर्ण तार भेजा था, और यह पत्र उसी सिलसिलेमें कुछ और बताने के लिए है। आज वे सचमुच पहले से बहुत ठीक हैं। जमनालालजी ने समाचारपत्रोंको दिये अपने वक्तव्यमें जिस थकानकी चर्चा की है वह वही थकान है जिसका आरम्भ तुमने देखा था और अब उसका अन्त हो रहा है। थकानका कारण थीं एक-के-बाद-एक होनेवाली वे भेंट-मुलाकातें और छोटेलालकी मृत्यु। अब तो विश्राम और भरपूर नींदसे स्थितिमें अद्भुत अन्तर आ गया है।"

मेरे भोजनमें एक वस्तु कम हो जायेगी।[1] किन्तु इसकी कोई परवाह नही। इस औषधिको न आजमाना अनुचित होता।

खान साहबका पत्र उनके अनुरूप ही है।

मुझे खुशी है कि तुम बर्फ और भापका प्रयोग कर रही हो। अब मिट्टीकी पट्टी भी शामिल कर लो। शम्मीने[2] तुम्हारे स्वास्थ्यके विषयमें क्या कहा? मै उनका मत जानना चाहता हूँ। उन्हें मेरा प्यार कहने के साथ ही यह भी कह देना।

चार्लीके[3] बारेमें एस० और जे० का विचार मै समझता हूँ। जबतक वे [एन्ड्रयूज], तुम्हारे पास हैं, उनका भोजन भी संतुलित और नियमित रखो और उन्हें उनकी दुर्बलताका भी बोध कराओ।

शिक्षापर वह टिप्पणी मै देख रहा था। क्या तुम अब भी चाहती हो कि मै उसका अध्ययन करके अपना मत दूँ?

मीराका हाल ठीक ही है। कुछ लेखन-कार्य कर रही है। अमतुस्सलाम आज-कल तो काफी प्रसन्न है। शारदाकी[4] भी खूब प्रगति है। लीलावती रूठकर चली गई है, क्योंकि मैंने उसपर क्रोध किया था। मैं भी कभी-कभी गधापन कर बैठता हूँ। कई बार मुझे अपनी अहिंसाकी वास्तविकतापर सन्देह होता है। मैं अपने क्रोध-का स्थायी रूपसे दमन क्यों नही कर पाता? यदि मेरी अहिंसाका कुछ भी मूल्य है तो उसे सब प्रलोभनों और क्रोधके सब अवसरोंको जीत लेना चाहिए। मेरा बचाव मत करो, बल्कि खरी-खरी सुनाओ। यदि मैं लीलावतीको खो बैठा तो इसका दोष बहुत अंशोंमें मेरा ही होगा। किन्तु वह इतनी भली है कि वापस आ जायेगी। और यदि आ गई तो इसमें श्रेय उसीका होगा।

स्नेह।

तानाशाह

[पुनश्च:]

जे० कल यहाँ आनेवाले हैं।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८०५) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६९६१ से भी

१. गांधीजी १९१५ से ही खानेमें केवल पाँच वस्तुएँ लेने के व्रतका पालन कर रहे थे; देखिए खण्ड ३९, पृ० २९७।

२. अमृतकौरके भाई कुँवर शमशेर सिंह, जो एक अवकाश-प्राप्त सर्जन थे।

३. सी० एफ० एण्ड्रयूज लम्बी बीमारीके बाद शिमलामें स्वास्थ्य-लाभ कर रहे थे।

४. चिमनलाल एन० शाहकी लड़की।

१५१. पत्र : महादेव देसाईको

[८ सितम्बर, १९३७][1]

चि० महादेव,

किसीके भी साथ आधा मन, या फिर एक मनतक, खजूर भिजवाना। यहाँ हमें रोज तीन दर्जन मुसम्बी मिलनी चाहिए, और दो दर्जन केले।

इस पत्रके साथ राजकुमारीको भेजनेके लिए तार है। एन्ड्रयूजको भेज दिया गया होगा।

सात कैदियोंका तार आया था। लगता है, वह प्रेसमें नहीं दिया गया। यदि वह तार और मेरा जवाब अभी भी प्रेसमें दे सको, तो दे देना। थोड़ी देर तो हो गई है। तारोंकी नकलें मैंने रख ली हैं। इन सात कैदियोंका तार और मेरा जवाब क्या प्रेसको दिये ही नहीं थे?

सवेरे एक कष्टप्रद किस्सा हो गया। लीलावती आलसी तो है ही। वह लापरवाह है, उसके अभिमानका पार नहीं है और सहनशक्ति तो उसमें बिलकुल नहीं है। बात कुछ नहीं थी। नानावटीने उसकी लापरवाहीकी तरफ उसका ध्यान आकर्षित किया, जो उससे सहन नहीं हुआ। तब नानावटीने उसके व्यवहारकी ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया। मैं तो अपने काममें व्यस्त था, और बातको टाल जाना चाहता था। मैंने यों ही हँसीमें कुछ कहा कि बाई साहेबा पधारीं। एक-एक वाक्य जोर दे-देकर बोलती जाती थी, सो भी गरजकर। मैंने उससे शान्तिसे बोलनेको कहा, लेकिन कौन सुनता है? और फिर तो बकवास करने लगी। तब तो मैंने आवाज ऊँची करके कहा, "यहाँ और कोई दरवाजा नहीं है। बस एक है, और वह खुला हुआ है। तुझसे सहन नहीं होता, तो चली जा।" मैं खुद भी यह कहते हुए होश-हवास खो बैठा था, इसलिए उससे भी अधिक गला फाड़कर चिल्ला उठा। वह अब चली गई है। लेकिन जायेगी तो महादेव-मन्दिरमें ही न? इसलिए तुम्हारे पास पहुँची होगी। मुझपर उसने जो निर्दयता की है, यदि उसे इसका भान हो जाये, तो उसे लज्जित करके यहाँ रवाना कर देना। लेकिन यदि उसे अपने अपराधकी गुरुताका भान न हो, तो उसे जो अच्छा लगे, करे। हरिजन आश्रममें उसको रखना सम्भव नहीं है। वहाँ उसे नहीं भेजना चाहिए। तुम सँभालो तो ठीक है। . . .[2]

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५६७) से।

१. "राजकुमारीको भेजनेके लिए तार" देखिए "तार : अमृतकौरको", ८-९-१९३७, तथा "रूठकर चली गई" देखिए "पत्र : अमृत कौरको", ८-९-१९३७ के उल्लेखसे देखिए "पत्र : लीलावती आसरको", ८-९-१९३७ भी।

२. पत्र अधूरा है।

१५२. पत्र : महादेव देसाईको

[८ सितम्बर, १९३७ के पश्चात्][1]

चि० महादेव,

लीलावतीको तो अवश्य भेज देना। आज वह डाक्टरके पास गई होगी; आज जाने का दिन था।

यहाँ मुझे तुमसे निजी बातचीत तो कोई नहीं करनी थी। लेकिन तुमने अपना समय बचाकर ठीक ही किया। तुम्हें लीलावतीको कुछ समय देना पड़ा, इसमें दोष उसका नहीं, मेरा था। यदि मैं खामोश रहता तो उसे यहाँसे जाना ही न पड़ता। तुमने अपनी नींद खराब की, यह तुम्हारा दोष है। क्योंकि ऐसे मामलोंमें तुम्हें अपने मनकी शान्ति नहीं खोनी चाहिए।

आज बहुत दिनों बाद छोटा कनु[2] बीमार पड़ा है।

मैं हस्ताक्षर भेज रहा हूँ।

ईश्वरदास आना चाहे तो आये, लेकिन फिलहाल वह यहाँ ठहर नहीं सकेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५६५) से।

१५३. बातचीत : शिक्षा-शास्त्रियोंके साथ[3]

[११ सितम्बर, १९३७ के पूर्व]

[गांधीजी :] मैं शिक्षाको स्वावलम्बी इस तरह बनाना चाहता हूँ कि बच्चे राज्यसे जो शिक्षा प्राप्त करते हैं उसका आंशिक मुआबजा वे खुद ही काम करके चुका दें। आज आप जिसे प्राथमिक और माध्यमिक अथवा हाईस्कूलकी शिक्षा कहते हैं, मैं उन दोनोंको मिला देना चाहता हूँ। मेरा यह निश्चित मत है कि बच्चोंको हाई स्कूलोंमें अंग्रेजीका अधकचरा ज्ञान होने के अलावा गणित, इतिहास और भूगोलकी

१. पत्रसे स्पष्ट है कि यह पिछले शीर्षकके बाद लिखा गया होगा।

२. कानम, रामदास गांधीके पुत्र।

३. यह लेख महादेव देसाईके "द मीनिंग ऑफ़ मैन्युअल वर्क" (शारीरिक श्रमका अभिप्राय) शीर्षक लेखसे लिया गया है। मध्य प्रान्तके शिक्षा-मन्त्री रविशंकर शुक्लने अपने शिक्षा-शास्त्रियोंके साथ, जिनमें शिक्षा-निदेशक श्री ओवेन और श्री डी'सिल्वा भी शामिल थे, गांधीजी से मुलाकात की। वर्तमान शिक्षा-पद्धतिमें गांधीजी जो क्रान्तिकारी परिवर्तन करना चाहते थे उसके बारे में वे गांधीजीके विचार सुनना और समझना चाहते थे।

थोड़ी-सी शिक्षाके सिवा और कुछ नहीं मिलता। इन विषयोंको तो वे कुछ-कुछ प्राथमिक पाठशालाओंमें ही अपनी मातृ-भाषा द्वारा सीख लेते हैं। आप जो विषय पढ़ाते हैं उन्हें हटाये बिना यदि आप पाठ्यक्रमसे अंग्रेजी बिलकुल उड़ा दें तो आप बच्चोंसे सारा पाठ्यक्रम ग्यारहके बजाय सात वर्षमें ही पूरा करवा सकते हैं। और इसके अलावा आप उन्हें जो शारीरिक श्रम करने के लिए देंगे उससे राज्यको ठीक-ठीक आय होगी। शारीरिक श्रम इस सबका केन्द्र-बिन्दु होगा। मुझे बताया गया है कि सर्वश्री एबट[1] और वुडने ग्रामीण शिक्षाके एक महत्वपूर्ण अंगके रूपमें शारीरिक श्रमकी उपयोगिताको स्वीकार किया है। मुझे ऐसे प्रतिष्ठित शिक्षा-शास्त्रियोंका समर्थन प्राप्त है, यह जानकर मुझे प्रसन्नता होती है। लेकिन मैं समझता हूँ कि जिस दृष्टिसे मैं शारीरिक श्रम पर जोर देता हूँ, उनकी दृष्टि शायद वैसी नहीं है। क्योंकि मेरा कहना है कि शारीरिक श्रमके द्वारा ही बच्चोंका मानसिक विकास होना चाहिए और शारीरिक श्रमकी शिक्षा महज इसलिए नहीं दी जायेगी कि बच्चे स्कूलके संग्रहालयोंके लिए चीजें तैयार कर सकें अथवा ऐसे खिलौने बना सकें जिनकी कोई कीमत न हो। शारीरिक श्रमके द्वारा ऐसी चीजोंका उत्पादन होना चाहिए जो बाजारमें बिक सकती हों। पुराने जमानेके कारखानोंमें जिस तरह मारके भयसे बच्चे काम करते थे उस तरह हमारे बच्चे यह काम नहीं करेंगे। वे इसलिए करेंगे कि इससे उनका मनोरंजन होता है और उनकी बुद्धिको उत्तेजन मिलता है।

[डी' सिल्वा :] हाँ, मैं आपके इस प्रस्तावसे तो सहमत हूँ कि हमें बच्चोंको सृजनात्मक कार्य द्वारा शिक्षा देनी चाहिए, किन्तु हम कोमल बालकसे किसी प्रौढ़ व्यक्तिसे स्पर्धा करने की अपेक्षा कैसे कर सकते हैं?

बच्चे बड़े कारीगरोंके साथ स्पर्धा नहीं करेंगे। राज्य इन बच्चोंकी बनाई चीजें खरीद कर उनके लिए बाजार ढूँढ़ लेगा। उन्हें ऐसी चीजें सिखाई जायें जो सचमुच उपयोगी हों। उदाहरणके लिए, चटाई लीजिए। जिस कामको करने में घर पर बच्चोंका दिल नहीं लगेगा, उसे वे यहाँ मन लगाकर बुद्धिपूर्वक करेंगे। इस तरह जब आपकी शिक्षा स्वयं-प्रेरित और स्वाश्रयी बन जायेगी तो यह जबरदस्त समस्या खुद ही सरल हो जायेगी।

लेकिन बच्चोंको इस तरहकी शिक्षा देने से पहले हमें शिक्षकोंकी वर्तमान पीढ़ीका सफाया कर देना होगा।

नहीं, इसके लिए बीचकी स्थिति है ही नहीं। आपको इस कामकी शुरुआत कर देनी चाहिए और इसके साथ-साथ शिक्षकोंको तैयार करना चाहिए।[2]

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ११-९-१९३७

१. क्लॉड कूलीर एबट, अंक अंग्रेज शिक्षा-शास्त्री।

२. बादमें गांधीजी ने उनसे अनुरोध किया कि वे इस सिलसिलेमें आर्यनायकम्, भारतन कुमारप्पा, और द० बा० कालेलकरसे बातचीत करें।

१५४. क्या ईसाई शराब-बन्दीके विरुद्ध हैं ?

मेरे पास कुछ ईसाइयोंके ऐसे पत्र आये थे जिनमें शराब बन्दीके प्रति विरोध प्रकट किया गया है। मैंने महादेव देसाईसे कहा कि वे ईसाई जातिके प्रतिनिधि समझे जानेवाले कुछ मित्रोंकी राय जानने के लिए उन्हें लिखें। उनके उत्तरमें दो पत्र आये हैं, जिनको मैं यहाँ दे रहा हूँ। नेशनल क्रिश्चियन कौंसिल ऑफ इंडियाके भारतीय मन्त्री श्री पी० ओ० फिलिप लिखते हैं:[1]

मुझे यह जानकर कोई आश्चर्य नहीं हुआ कि कुछ ईसाई मित्र आपको इस आशयके पत्र लिख रहे हैं कि "शराब बन्दीकी नीति हमारे मद्यपानके अधिकार पर कुठाराघात है। और मेरा यह सोचना शायद बहुत गलत नहीं होगा कि इस तरहके पत्र लिखनेवालोंमें अधिकतर रोमन कैथलिक अथवा ऐंग्लो कैथलिक वातावरणमें पले हुए ईसाई हैं। . . . हिन्दुस्तानमें परिमित मात्रामें भी शराब पीने के बारेमें मुसलमानों और ऊँचे वर्णके हिन्दुओंमें जिस तरहका सामाजिक और धार्मिक निषेध है, वैसा रोमन कैथलिक ईसाइयोंमें नहीं है। लेकिन प्रोटेस्टेंटोंका शराबके प्रति एक भिन्न दृष्टिकोण है।

. . . प्रोटेस्टेंट ईसाई जातिमें परिमित मात्रामें भी मद्यपान करना सामाजिक तथा धार्मिक दृष्टिसे हलका समझा जाता है।

रोमन कैथलिकोंमें भी इधर मद्यपानके दुष्परिणामोंके विषयमें लोकमत जागृत होता जा रहा है। कैथलिक सम्प्रदायके धर्माधिकारी आधिकारिक रूपसे भले ही यह कहें कि परिमित मात्रामें शराब पीने में कोई बुराई नहीं है, लेकिन उनके अनुयायियोंका शराबकी वजहसे जो नैतिक और आर्थिक ह्रास हो रहा है उसकी ओरसे वे आँख बन्द नहीं कर सकते . . .।

एक भारतीय ईसाईके रूपमें मुझे यह देखकर बहुत खुशी होती है कि कांग्रेस मन्त्रिमण्डलोंने शराब बन्दीको अपने कार्यक्रममें सबसे पहला स्थान दिया है। भूतकालमें, बहुत ही कम अंग्रेज और अमेरिकी पादरियोंने कांग्रेस द्वारा चलाये हुए मद्य-निषेधके आन्दोलनमें साथ दिया था, क्योंकि उनके दिलमें यह गलत धारणा थी कि कांग्रेसने इस कार्यक्रमको सुधार करने की सच्ची नीयतसे नहीं, बल्कि ब्रिटिश सरकारको परेशान करने के लिए ही आरम्भ किया है। दुर्भाग्यसे भारतीय ईसाइयोंने भी पादरियोंके इस विचारका अनुसरण किया

१. यहाँ केवल कुछ अंश ही उद्धृत किये गये हैं।

और साधारणतया इस आन्दोलनसे अपनेको अलग ही रखा। लेकिन शराब-बन्दीका आन्दोलन करने में कांग्रेसकी नीयत बिलकुल साफ है, इस बारेमें कतई कोई शंकाकी गुंजाइश नहीं है। . . .

. . . गाँवोंमें जिन वर्गोंके आगे — जिनमें ईसाई भी हैं — आज शराबका प्रलोभन रखा जाता है, उनकी उससे रक्षा करने की जितनी जरूरत है उतनी दूसरे वर्गोंको नहीं है। जिस दिन यहाँसे शराबका नाम-निशान उठ जायेगा उस दिन भारतके गाँवोंमें नई चेतना और नई समृद्धि देखने में आयेगी। पूर्ण शराबबन्दीसे अन्य जातियोंके साथ-साथ भारतीय ईसाई कौम को भी अपार लाभ होगा।

. . . भारतीय ईसाइयोंको, जो भारतको हृदयसे चाहते हैं और जिन्हें ग्रामीण जन-समुदायके सच्चे कल्याणकी चिन्ता रहती है, यह जानकर खुशी होगी कि छः प्रान्तोंमें[1] शराबबन्दी लागू होनेवाली है। शराबबन्दीको पूरी तरह सफल बनाने के लिए अपने दूसरे देशभाइयोंको पूरे दिलसे सहयोग देने में उन्हें कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए।

भारत, बर्मा और सीलोनके स्टुडेंट क्रिश्चियन मूवमेंटके महामन्त्री रेवरेंड ए० रलाराम लिखते हैं :

देशमें पूर्ण शराबबन्दी लागू करने का कांग्रेसका जो ध्येय है उसका मैं पूरी तरहसे समर्थन करता हूँ और जो लोग यह कहते हैं कि हमें परिमित मात्रामें शराब पीने देनी चाहिए, उनकी बात नहीं सुननी चाहिए। मेरी राय यह है कि जो यूरोपीय इस देशमें आते हैं उन्हें हमारी अभिलाषाओंमें हमारा साथ देना चाहिए; और मुझे ऐसी आशंका है कि अगर हम इस विषयमें उनकी भावनाओंका आदर करेंगे तो इससे अन्य अनेक लोगोंके लिए द्वार खुल जायेगा।

जैसा कि मैं पहले कह चुका हूँ,[2] इसमें यूरोपीयोंको ही यह तय करना होगा कि उन्हें क्या करना है। जो आदत सारी जिन्दगीसे पड़ी हुई है और जो प्रतिष्ठित मानी जाती है उसका परित्याग कर देना उनके लिए कितना मुश्किल है, यह मैं जानता हूँ। पर अगर वे इस महान् राष्ट्रीय सुधारमें योग देना चाहेंगे, तो उनकी यह इच्छा इतनी प्रबल साबित होगी कि वह उनकी इस आदतको छुड़ा देगी। चाहे जो हो, अन्तमें अगर हमें उचित मर्यादाके अन्दर शराबबन्दीमें छूट देनी ही पड़े तब भी हमें आशा है कि वे अपने प्रीतिभोजों और पारिवारिक समारोहोंमें शराबका

१. बम्बई, मद्रास, संयुक्त प्रान्त, बिहार, मध्य प्रान्त, और उड़ीसामें कांग्रेस मन्त्रिमण्डल बनाये गये थे।

२. देखिए "अहिंसा और सत्यके विरुद्ध?", पृ० ५०-२ तथा खण्ड ६५, पृ० ४८४-८५ भी।

उपयोग नहीं करेंगे। छूट उनकी सारी जिन्दगीकी आदतका खयाल करके दी जायेगी, उनकी कमजोरी या फिजूलखर्चीकी वजहसे नही।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ११-९-१९३७

१५५. टिप्पणियाँ

अभिनन्दनीय

मौलवी अब्दुल हक साहब और श्री राजेन्द्रप्रसादने हिन्दी-उर्दू विवादके बारेमें जो संयुक्त वक्तव्य निकाला है उससे यह आशा की जा सकती है कि यह विवाद अब खत्म हो जायेगा, और जो अन्तर्प्रान्तीय भाषाके विकासमें दिलचस्पी रखते हैं वे इसके गुण-दोष पर विचार कर सकेंगे, तथा कुछ मिलाकर किसी अच्छी व्यावहारिक योजनापर भी पहुँच सकेंगे। वक्तव्य यह है :

> **पटनामें २८ अगस्तको बिहार उर्दू कमेटीकी जो बैठक हुई थी, उस अवसरपर हमें हिन्दुस्तानी भाषाके सवालके बारेमें एक-दूसरेके साथ, और दूसरे भी कुछ दोस्तोंके साथ बातचीत करने का मौका मिला। उर्दू-हिन्दी-हिन्दुस्तानीके विवादके बारेमें जो गलतफहमियाँ दुर्भाग्यसे पैदा हो गई हैं उनको दूर करने के लिए हम उत्सुक थे। हमें यह कहते हुए खुशी होती है कि इस समस्याके विभिन्न पहलुओंपर हमने बातचीत की, और इसके परिणामस्वरूप हमने देखा कि अनेक प्रश्नोंके बारेमें हम लोगोंमें काफी मतैक्य है। हम परस्पर इस बातसे सहमत हैं कि हिन्दुस्तानीको हिन्दुस्तानकी राष्ट्रभाषा होना चाहिए, और वह उर्दू व नागरी दोनों लिपियोंमें लिखी जानी चाहिए तथा सरकारी कार्यालयों और शिक्षाके क्षेत्रमें इन दोनोंको मान्यता दी जानी चाहिए। "हिन्दुस्तानी" हम उस जबानको कहते हैं, जिसे उत्तर हिन्दुस्तानमें बहुत बड़ा जनसमुदाय बोलता है; और हमारा विश्वास है कि जो शब्द आम व्यवहारमें इस्तेमाल होते हों उन्हें चुनकर हिन्दुस्तानी शब्द-भण्डारमें दाखिल कर लेना चाहिए। और हम यह भी मानते हैं कि उर्दू और हिन्दी तथा साहित्यक भाषाओंके विकासके लिए भरपूर मौका दिया जाना चाहिए। हमारा यह सुझाव है कि उर्दू और हिन्दीके विद्वानोंके सहयोगसे हिन्दुस्तानी शब्दोंका एक बुनियादी कोष तैयार करने का प्रयत्न किया जाना चाहिए।**
>
> **हमारा सुझाव है कि ऐसे कोषको तैयार करने के लिए क्या व्यावहारिक कदम उठाये जाने चाहिए, इस बातपर विचार करने तथा पारिभाषिक शब्दावलीके चुनाव-सम्बन्धी समस्याओं तथा ऐसी ही विभिन्न प्रमुख समस्याओंके**

समाधानके लिए जल्द ही एक छोटी प्रातिनिधिक समिति नियुक्त की जानी चाहिए। इस समितिमें उर्दू और हिन्दीके ऐसे प्रतिष्ठित हिमायती होने चाहिए जो इन दोनों भाषाओंको अधिक समीप लाने और हिन्दुस्तानी भाषाको प्रोत्साहन देने के कार्यमें विश्वास रखते हों और जो इस तरह दोनों भाषाओंके बोलनेवालोंमें सद्भाव पैदा करना इष्ट समझते हों।

हम आशा है कि इस वक्तव्यके प्रकाशक सभी पक्षोंको स्वीकार्य हिन्दुस्तानी शब्दोंका बुनियादी कोष तैयार करने के लिए जल्दी ही काम शुरू करेंगे, और इस कामके लिए तथा "विभिन्न समस्याओंके समाधान"के लिए उन्होंने जिस छोटी-सी कमेटीको नियुक्त करने का निश्चय किया है, उसे फौरन ही नियुक्त करेंगे। और यदि ये लोग इस कामको मुस्तैदीसे करना चाहते हैं तो मैं इस बातपर जरूर जोर दूँगा कि कमेटी, जहाँतक हो सके, छोटी होनी चाहिए।

स्कूलोंमें संगीत

गन्धर्व महाविद्यालयके पंडित खरेने[1], जिनका जीवन लड़के-लड़कियोंमें शुद्ध संगीतका प्रचार करने के कार्यको समर्पित है, गुजरात और विशेषकर अहमदाबादमें इस दिशामें हो रही भारी प्रगतिका विवरण लिख भेजा है। उन्होंने इस बातपर दुःख प्रकट किया है कि शिक्षा-विभागके अधिकारी संगीतको पढ़ाईमें शामिल करने की बातपर अपनी मंजूरी नहीं देते हैं। पण्डितजीकी अपने अनुभवपर कायम की हुई राय यह है कि प्रारम्भिक शिक्षाके पाठ्यक्रममें संगीतको अवश्य स्थान दिया जाना चाहिए। मैं इस प्रस्तावका हृदयसे समर्थन करता हूँ। बच्चेके हाथको शिक्षा देने की जितनी जरूरत है, उतनी ही जरूरत उसके गलेको शिक्षा देने की है। लड़के-लड़कियोंके भीतर जो अच्छाइयाँ भरी रहती हैं, उन्हें बाहर लाने और पढ़ाईमें भी उनकी सच्ची दिलचस्पी पैदा करने के लिए कवायद, उद्योग, चित्रकारी और संगीत साथ-साथ सिखाये जाने चाहिए।

और मैं स्वीकार करता हूँ कि इसका अर्थ शिक्षाकी पद्धतिमें क्रान्ति लाना है। राष्ट्रके भावी नागरिकोंके जीवन-कार्यकी पक्की बुनियाद डालनी हो, तो ये चार चीजें जरूरी हैं। किसी भी प्राथमिक शालामें जाकर देख लीजिए, वहाँ मैलापन दिखेगा, व्यवस्थाका नाम न होगा और कई बेसुरी आवाजें निकलती होंगी। इसलिए मुझे तो कोई शंका नहीं कि जब कई प्रान्तोंके शिक्षा-मन्त्री शिक्षा-पद्धतिका नये सिरेसे गठन करेंगे और उसे देशकी जरूरतके मुताबिक बनायेंगे, तब जिन जरूरी बातोंकी तरफ मैंने ऊपर ध्यान खींचा है, उन्हें वे छोड़ नहीं देंगे। मेरी प्राथमिक शिक्षाकी योजनामें ये चीजें शामिल ही हैं और ये चीजें उसी क्षण आसान बन जायेंगी जिस क्षण बच्चोंके सिरसे एक कठिन विदेशी भाषा सीखने का बोझ उतार दिया जायेगा।

१. नारायण मोरेश्वर खरे।

बेशक, हमारे पास इस नई पद्धतिसे शिक्षा दे सकनेवाले शिक्षक नहीं हैं। परन्तु यह कठिनाई तो हर नये उपक्रममें आने ही वाली है। यदि आज का शिक्षक-वर्ग उपर्युक्त शिक्षा-पद्धतिको सीखने को राजी हो, तो उसे सीखने का मौका दिया जाना चाहिए; और वे यदि इन जरूरी विषयोंको सीख लेते हैं तो उनकी तनख्वाहें तुरन्त बढ़ाने की तजवीज भी की जानी चाहिए। यह अकल्पनीय है कि जिन नये विषयोंको प्राथमिक शिक्षामें शामिल किया जायेगा उन सबके लिए अलग-अलग शिक्षक रखे जायेंगे। इससे तो खर्च बहुत बढ़ जायेगा और इसलिए यह बिलकुल अनावश्यक है। यह हो सकता है कि प्राथमिक स्कूलोंके कितने ही शिक्षक इतने कच्चे हों कि वे इन नये विषयोंको थोड़े समयमें न सीख सकें। परन्तु जो लड़का मैट्रिकतक पढ़ा हो, उसे संगीत, चित्रकारी, कवायद और हस्तकला-उद्योगकी बुनियादी बातें सीखने में तीन महीनेसे ज्यादा समय नहीं लगना चाहिए। यदि वह इनकी कामचलाऊ जानकारी प्राप्त कर ले, तो फिर वह पढ़ाते-पढ़ाते इस ज्ञानको हमेशा बढ़ाता रह सकता है। बेशक, यह काम तभी हो सकता है जब शिक्षकोंमें राष्ट्रके पुनरुत्थानके लिए दिन-ब-दिन अपनी योग्यता बढ़ाते रहने की लगन और उत्साह हो।

सूदखोरीका राक्षसी तरीका

अभी हालमें ही 'हरिजनबन्धु' में छपी एक टिप्पणीमें[1] मैंने एक पत्र-लेखकका पत्र उद्धृत किया था, जिसमें कहा गया था कि गायकवाड़ इलाकेमें सिद्धपुर और उसके आसपास ऐसे सूदखोर हैं जो सूदकी बहुत कड़ी दरपर रकम देते हैं और मूलधन तथा सूदकी अदायगीके लिए जमानतें लेते हैं। ऋणदाताओंका ऋणी व्यक्तियोंकी अन्य चीजोंके साथ-साथ उनकी लड़कियोंपर भी हक होता है। इस शर्मनाक सूदखोरीके परिणामस्वरूप जब माता-पिता सूद — जो कि १०० प्रतिशतसे भी ऊपर होता है — की अदायगी नहीं कर पाते तब उन्हें विवश होकर अपनी लड़कियोंको बेचना पड़ता है। मैं समझता हूँ, कुछ कार्यकर्त्ताओंने सिद्धपुरके जिला अधिकारियोंका ध्यान इस ओर खींचा है। उक्त पत्र-लेखकने जो तथ्य पेश किये हैं, यदि वे सही हैं — और उनपर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है — तो इसका तुरन्त उपाय किया जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ११-९-१९३७

१. देखिए पृ० ५४-५५।

१५६. स्वावलम्बी शिक्षा

डॉ० ए० लक्ष्मीपति लिखते हैं:

मैंने मिशनरियों द्वारा संचालित कुछ संस्थाएँ देखी हैं, जहाँ स्कूल केवल सवेरे लगते हैं और शामको विद्यार्थियोंसे या तो खेतीका या किसी गृह-उद्योगका काम लिया जाता है। और जो विद्यार्थी जैसा तथा जितना काम करता है, उसके अनुसार उसे कुछ मजदूरी भी दी जाती है। इस तरह संस्था को न्यूनाधिक परिमाणमें स्वावलम्बी बनाया जाता है, और चूँकि विद्यार्थी भी कमसे-कम अपनी आजीविका प्राप्त करने लायक कुछ-न-कुछ काम सीख लेते हैं, इसलिए पढ़ाई खत्म होने पर वे अपने-आपको असहाय महसूस नहीं करते हैं। मैंने यह भी देखा है कि इन पाठशालाओंका वातावरण सरकारी शिक्षा-विभाग द्वारा संचालित एक ही ढर्रेकी पाठशालाओंके नीरस कार्यक्रमसे कहीं भिन्न होता है। बच्चे अधिक स्वस्थ दिखाई देते हैं और यह सोचकर कि उन्होंने कुछ उपयोगी काम किया है, वे आनन्दका अनुभव करते हैं। उनके शरीरका गठन भी मजबूत होता है। खेतीके मौसममें ये पाठशालाएँ कुछ दिनों के लिए बन्द भी रहती हैं, क्योंकि उन दिनों लड़कोंको सारे दिन खेतोंपर काम करना पड़ता है। शहरोंमें भी जिन विद्यार्थियोंकी व्यापार और धन्धोंमें दिलचस्पी हो, उन्हें तरह-तरहके व्यापार या धन्धोंमें लगाया जा सकता है, जिससे उन्हें विविधता मिल सके। सुबहकी कक्षाओंमें आधे घंटेकी छुट्टीके समय जिन विद्यार्थियोंको जरूरत हो अथवा जो चाहें, उन विद्यार्थियोंके लिए एक बारके भोजनका प्रबन्ध भी किया जा सकता है। इस तरह गरीब लड़के तो खुद-ब-खुद खुशीसे दौड़ते हुए पाठशालाओंमें आने लग ही सकते हैं और माता-पिता भी अपने बच्चोंको नियमित रूपसे पढ़ने को भेजने के लिए प्रोत्साहित कर सकते हैं।

और यदि आधे दिनकी पाठशालाओंकी इस योजनाको स्वीकार कर लिया जाता है तो इनमें से कुछ अध्यापकोंको गाँवोंमें प्रौढ़-शिक्षाके काममें भी लगाया जा सकता है। और इसके लिए उन्हें अलगसे मेहनताना देने की भी जरूरत नहीं रहेगी। इसी तरह इमारतका और पढ़ने की अन्य सामग्रीका भी उपयोग किया जा सकता है।

मैंने इस सिलसिलेमें मद्रासके शिक्षा-मन्त्रीसे मुलाकात की है और उन्हें पत्र भी लिखा है, जिसमें मैंने बताया है कि वर्तमान पीढ़ीकी शारीरिक दुर्बलता

का एक खास कारण पाठशालाओंका यह असुविधाजनक समय ही है। मेरी यह राय है कि तमाम पाठशालाएँ और कॉलेज केवल सवेरे ही, अर्थात् ६ बजे से ११ बजे तक लगा करें। ४ घंटेका अभ्यास-क्रम काफी होना चाहिए। दोपहरको लड़के घरपर रहें और शामको खेलें-कूदें तथा अपने शरीरके विकास की ओर ध्यान दें। कुछ लड़के दोपहरमें अपनी आजीविका कमाने में लग सकते हैं और कुछ अपने माता-पिताके व्यापार-व्यवसायमें भी मदद कर सकते हैं। इस तरह विद्यार्थी अपने माता-पिताके सम्पर्कमें अधिक रह सकेंगे, जो किसी भी पेशे या परम्परागत व्यवसायमें कुशलता प्राप्त करने के लिए जरूरी है।

यदि हम यह अनुभव कर लें कि सुगठित शरीर सुगठित राष्ट्रका द्योतक है तो पाठशालाके सम्बन्धमें मैंने जो परिवर्तन सुझाया है वह देखने में भले ही क्रान्तिकारी लगे तथापि वह भारतीय रिवाज और आबोहवाके अनुकूल है और अधिकांश लोग इसका स्वागत भी करेंगे।

विद्यालयोंका समय केवल सुबहका ही रखने के सम्बन्धमें डॉ० ए० लक्ष्मीपतिके सुझावके बारेमें मैं विशेष कुछ नहीं कहना चाहता, सिवा इसके कि शिक्षा-विभागके अधिकारियोंसे मैं इसकी सिफारिश कर दूँ। और न्यूनाधिक परिमाणमें स्वाश्रयी संस्थाओंके बारेमें तो यही कहना होगा कि यदि वे उनसे अपना सारा या कुछ खर्च निकालना चाहती हैं और विद्यार्थियोंको भी किसी योग्य बनाना चाहती हैं तो वे इसके सिवा कुछ कर ही नही सकतीं। तथापि मेरे सुझावोंसे कई शिक्षा-शास्त्रियोंको जबरदस्त आघात पहुँचा है, महज इसलिए कि उन्हें शिक्षा देने का और कोई तरीका मालूम ही नहीं है। शिक्षाको स्वावलम्बी बनाने की बात सुनकर ही उन्हें ऐसा लगता है, मानों उसका सारा महत्त्व चला गया है। इस सुझावके पीछे उन्हें पैसा प्राप्त करने का मंशा दिखाई देता है। लेकिन आजकल मैं शिक्षाके सम्बन्धमें यहूदियोंके एक प्रयत्नपर लिखा गया एक प्रबन्ध पढ़ रहा हूँ। यहूदी पाठशालाओंमें उद्योग-धन्धोंकी जो शिक्षा दी जाती है, उसके सम्बन्धमें लेखकने लिखा है :

इस तरह लड़के अपने हाथसे जो काम करते हैं, वह खुद भी बड़ा कीमती होता है। चूँकि शारीरिक श्रमके साथ-साथ बच्चोंको सोचना भी पड़ता है, इसलिए काम हल्का हो जाता है और उसके मूलमें देशहितकी भावना होने के कारण इस शरीरश्रमको एक प्रकारका गौरव प्राप्त हो जाता है।

यदि हमें योग्य शिक्षक मिल जायें तो हमारे बच्चे शारीरिक श्रमके गौरवको समझने लगेंगे और उसको अपने बौद्धिक विकासका अविभाज्य अंग और साधन भी मानने लगेंगे। साथ ही, वे यह भी अनुभव करने लगेंगे कि वे जो शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं, उसका मूल्य श्रमके रूपमें चुकाना भी एक प्रकारकी देश-सेवा ही है। मेरे सुझावका सार तो यह है कि हम बच्चोंको दस्तकारियोंकी शिक्षा महज इसलिए न दें कि वे कुछ उत्पादक काम करना सीखें, बल्कि इसलिए दें कि उसके द्वारा उनकी बुद्धिका विकास हो। अगर राज्य ७ से १४ वर्षकी उम्रके अन्दरके बच्चोंको अपने हाथमें ले ले तथा उत्पादक श्रम द्वारा उनके मन और शरीरको विकसित करने की

कोशिश करे तो सरकारी स्कूल निश्चय ही स्वावलम्बी हो सकते हैं। और अगर वे ऐसे नहीं बनते हैं तो मानना होगा कि वे स्कूल मात्र एक फरेब हैं और उनके शिक्षक निरे बेवकूफ।

मान लीजिए कि एक लड़का या लड़की यन्त्रकी तरह नहीं, बल्कि अक्लमन्दीके साथ काम करने लग जाये और एक विशेषज्ञके मार्गदर्शनमें होनेवाले सामूहिक कार्यमें दिलचस्पी भी लेने लगे, तो एक वर्षकी शिक्षाके बाद हरएक विद्यार्थीको फी घंटा एक आना कमाने योग्य हो जाना चाहिए। इस तरह अगर महीनेमें २६ दिन स्कूल लगे और बच्चे रोज ४ घंटे काम करें, तो हरएक विद्यार्थी साढ़े छः रुपये महीना कमा लेगा। अब सवाल सिर्फ यही है कि क्या हम इस तरह लाखों बच्चोंके श्रमका लाभदायक उपयोग कर सकेंगे? एक बरसकी तालीमके बाद भी अगर हम बच्चोंकी शक्ति और बुद्धिको इस लायक न बना सकें कि उनकी बनाई चीजें बाजारमें भेजने पर उनसे इतनी कीमत आ सके जिससे लड़कोंकी फी घंटा एक आनेके हिसाबसे मजदूरी पड़ जाये, तो समझना चाहिए कि हमारी बुद्धिका दिवाला ही निकल गया है। मैं जानता हूँ कि हिन्दुस्तानमें आज कहीं भी गाँवोंके लोग इतना नहीं कमा सकते, जिससे कि फी घंटा एक आनेकी मजदूरी पड़ जाये। पर इसका कारण तो यह है कि आज हमें गरीबों और अमीरोंके बीच जो गहरी विषमता है वह खलती नहीं है, और दूसरे यह भी कि शहरके निवासी गाँवोंको लूटने में शायद अनजाने ही अंग्रेजोंके साथ शामिल हो गये हैं।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ११-९-१९३७

१५७. एक तार[1]

११ सितम्बर, १९३७

तारके[2] लिए धन्यवाद। कृपया भूख-हड़तालियोंसे कहिए: आपके भूख-हड़ताल स्थगित करनेसे इनकारसे गहरा दुःख हुआ। आपका तार[3] मुझे ऐसा आश्वासन देता लगा था कि यदि मैं "राहत" शब्दकी आपकी व्याख्या स्वीकार कर लूं तो आप भूख-हड़ताल स्थगित कर देंगे। कृपया भूख-हड़ताल स्थगित करके देश-भरकी चिन्ता दूर कीजिए और मेरे जैसे कार्यकर्त्ताओंको राहत दिलवाने का अवसर दीजिए।[4]

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १६-९-१९३७

१. इसे अण्डमान अधिकारियोंके नाम पोर्ट ब्लेयर भेजा गया था।
२. देखिए पा० १२१ पर पा० टि० ६।
३. देखिए पा० १०८ पर पा० टि० १।
४. इस तार के बाद भी हड़ताली बन्दियोंने हड़ताल स्थगित करने से इनकार कर दिया था।

१५८. पत्र : अतुलानन्द चक्रवर्तीको

सेगाँव, वर्धा
११ सितम्बर, १९३७

प्रिय अतुलानन्द,

मुझे खुशी है कि आप, आंशिक रूपसे ही सही, मेरे सुझावको[१] युक्तियुक्त समझते हैं। यदि संघ बनना ही है तो वह समयानुसार बन ही जायेगा।

कुछ समय पूर्व यदि आप महिलाओंकी समस्यापर अपनी पुस्तिका भेज भी चुके हों, तो भी कृपया उसकी एक और प्रति भेज दें ताकि मैं पढ़ सकूँ। मुझे यह भी बताइए कि आपका मासिक खर्च कमसे-कम कितना है। यदि आप अपने आत्म-निर्धारित लक्ष्यको पूरा करना चाहते हों तो आपको अपनी आयके भीतर ही खर्च पूरा करने की कला सीखनी होगी। और इसे सम्पादित करने के दो शाही रास्ते हैं। एक तो अपनी आवश्यकताओंको कमसे-कम कर देना, और दूसरा, अपना काम-धन्धा इस विधिसे चलाना कि कभी सिर पर ऋण न चढ़े। इन्हें छोड़कर और कोई तीसरा रास्ता नहीं है जो सीधा भी हो और जिसमें स्वाभिमानकी भी रक्षा हो सके। और जो रास्ता सम्मानरहित हो, वह शाही हो ही नहीं सकता।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी[२]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १४७८) से; सौजन्य : ए० के० सेन

१५९. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

सेगाँव, वर्धा
१२ सितम्बर, १९३७

चि० कान्ति,

इस समय मैं स्वयं तुझे पत्र नहीं लिख सकता। यह तू क्या कर रहा है? तू बेकार ही परेशान होता है। मुझे तो कोई कारण समझमें ही नहीं आता। यदि तेरी

१. देखिए "पत्र : अतुलानन्द चक्रवर्तीको", ९४-९५।

२. इसके बाद अधोलेखके रूपमें महादेव देसाईकी लिखावटमें निम्न प्रकार लिखा गया है : "कृपया अपनी पुस्तक की भी एक प्रति भेजिएगा। लगता है, आपने गांधीजी को जो प्रति दी थी वह विद्यापीठके पुस्तकालय को दे दी गई है।"

कोशिश करे तो सरकारी स्कूल निश्चय ही स्वावलम्बी हो सकते हैं। और अगर वे ऐसे नहीं बनते हैं तो मानना होगा कि वे स्कूल मात्र एक फरेब हैं और उनके शिक्षक निरे बेवकूफ।

मान लीजिए कि एक लड़का या लड़की यन्त्रकी तरह नहीं, बल्कि अक्लमन्दीके साथ काम करने लग जाये और एक विशेषज्ञके मार्गदर्शनमें होनेवाले सामूहिक कार्यमें दिलचस्पी भी लेने लगे, तो एक वर्षकी शिक्षाके बाद हरएक विद्यार्थीको फी घंटा एक आना कमाने योग्य हो जाना चाहिए। इस तरह अगर महीनेमें २६ दिन स्कूल लगे और बच्चे रोज ४ घंटे काम करें, तो हरएक विद्यार्थी साढ़े छः रुपये महीना कमा लेगा। अब सवाल सिर्फ यही है कि क्या हम इस तरह लाखों बच्चोंके श्रमका लाभदायक उपयोग कर सकेंगे? एक बरसकी तालीमके बाद भी अगर हम बच्चोंकी शक्ति और बुद्धिको इस लायक न बना सकें कि उनकी बनाई चीजें बाजारमें भेजने पर उनसे इतनी कीमत आ सके जिससे लड़कोंकी फी घंटा एक आनेके हिसाबसे मजदूरी पड़ जाये, तो समझना चाहिए कि हमारी बुद्धिका दिवाला ही निकल गया है। मैं जानता हूँ कि हिन्दुस्तानमें आज कहीं भी गाँवोंके लोग इतना नहीं कमा सकते, जिससे कि फी घंटा एक आनेकी मजदूरी पड़ जाये। पर इसका कारण तो यह है कि आज हमें गरीबों और अमीरोंके बीच जो गहरी विषमता है वह खलती नहीं है, और दूसरे यह भी कि शहरके निवासी गाँवोंको लूटने में शायद अनजाने ही अंग्रेजोंके साथ शामिल हो गये हैं।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ११-९-१९३७

१५७. एक तार[1]

११ सितम्बर, १९३७

तारके[2] लिए धन्यवाद। कृपया भूख-हड़तालियोंसे कहिए: आपके भूख-हड़ताल स्थगित करनेसे इनकारसे गहरा दुःख हुआ। आपका तार[3] मुझे ऐसा आश्वासन देता लगा था कि यदि मैं "राहत" शब्दकी आपकी व्याख्या स्वीकार कर लूं तो आप भूख-हड़ताल स्थगित कर देंगे। कृपया भूख-हड़ताल स्थगित करके देश-भरकी चिन्ता दूर कीजिए और मेरे जैसे कार्यकर्त्ताओंको राहत दिलवाने का अवसर दीजिए।[4]

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १६-९-१९३७

१. इसे अण्डमान अधिकारियोंके नाम पोर्ट ब्लेयर भेजा गया था।
२. देखिए पा० १२१ पर पा० टि० ६।
३. देखिए पा० १०८ पर पा० टि० १।
४. इस तार के बाद भी हड़ताली बन्दियोंने हड़ताल स्थगित करने से इनकार कर दिया था।

१५८. पत्र : अतुलानन्द चक्रवर्तीको

सेगाँव, वर्धा
११ सितम्बर, १९३७

प्रिय अतुलानन्द,

मुझे खुशी है कि आप, आंशिक रूपसे ही सही, मेरे सुझावको[१] युक्तियुक्त समझते हैं। यदि संघ बनना ही है तो वह समयानुसार बन ही जायेगा।

कुछ समय पूर्व यदि आप महिलाओंकी समस्यापर अपनी पुस्तिका भेज भी चुके हों, तो भी कृपया उसकी एक और प्रति भेज दें ताकि मैं पढ़ सकूँ। मुझे यह भी बताइए कि आपका मासिक खर्च कमसे-कम कितना है। यदि आप अपने आत्म-निर्धारित लक्ष्यको पूरा करना चाहते हों तो आपको अपनी आयके भीतर ही खर्च पूरा करने की कला सीखनी होगी। और इसे सम्पादित करने के दो शाही रास्ते हैं। एक तो अपनी आवश्यकताओंको कमसे-कम कर देना, और दूसरा, अपना काम-धन्धा इस विधिसे चलाना कि कभी सिर पर ऋण न चढ़े। इन्हें छोड़कर और कोई तीसरा रास्ता नहीं है जो सीधा भी हो और जिसमें स्वाभिमानकी भी रक्षा हो सके। और जो रास्ता सम्मानरहित हो, वह शाही हो ही नहीं सकता।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी[२]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १४७८) से; सौजन्य : ए० के० सेन

१५९. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

सेगाँव, वर्धा
१२ सितम्बर, १९३७

चि० कान्ति,

इस समय मैं स्वयं तुझे पत्र नहीं लिख सकता। यह तू क्या कर रहा है? तू बेकार ही परेशान होता है। मुझे तो कोई कारण समझमें ही नहीं आता। यदि तेरी

१. देखिए "पत्र : अतुलानन्द चक्रवर्तीको", ९४-९५।

२. इसके बाद अधोलेखके रूपमें महादेव देसाईकी लिखावटमें निम्न प्रकार लिखा गया है : "कृपया अपनी पुस्तक की भी एक प्रति भेजिएगा। लगता है, आपने गांधीजी को जो प्रति दी थी वह विद्यापीठके पुस्तकालय को दे दी गई है।"

मनाही होती तो अमतुस्सलाम कभी त्रिवेन्द्रम न जाती। तूने उसे बुलाने के लिए कहा तो मैंने तुरन्त उस पर अमल किया। लेकिन रामचन्द्रन्,[1] सरस्वती और पपारम्मा, इन सबको नाराज करके तथा जब उसकी तबीयत सुधर रही थी तब उसमें खलल डालकर मैंने उसे बुलाना उचित नहीं समझा। यदि मुझे मालूम होता कि तू अभीतक इतना तुनुकमिजाज बना हुआ है — मैंने यह अब जाना — तो सारी जोखिम उठाकर भी मैं उसे बुला लेता। लेकिन मैं क्या जानता था कि बहुत ज्यादा बहादुरी जतानेवाले लड़केका दिल इतना कमजोर होगा कि कल्पना-मात्रसे बीमार पड़ जायेगा और बिस्तरसे नहीं उठ सकेगा। मैंने तो जब उससे किसी और बहानेसे बात की तो वह एकदम इस बातके लिए राजी हो गई कि वह तुझे कभी नहीं लिखेगी, न सरस्वतीको लिखेगी और न किसी औरको ही लिखेगी तथा त्रिवेन्द्रम जाने का नाम भी नहीं लेगी। इससे अधिक वह और क्या कर सकती है? इतना ज्यादा तिरस्कार किसलिए? मुझे तो उसमें कोई दोष दिखाई नहीं देता। वह किसीसे सेवा नहीं करवाती, चुपचाप सेवा करती रहती है। तू उससे इतनी ज्यादा घृणा करता है, सो किसलिए? तू जाग और तनकर खड़ा हो जा। इस घोर अन्धकारसे उजालेमें आ जा। जिस दुःखका कोई आधार नहीं उसका निवारण भी भला कैसे किया जाये? तुझे मैंने तार तो दिया ही है। उसके उत्तरकी प्रतीक्षामें हूँ।

मेरी तबीयत सुधरती जा रही है। मुझे आरामकी जरूरत है।

इस पत्रके साथ हिसाबका कागज वापस भेज रहा हूँ।

अभी-अभी रामचन्द्रन्‌का तार मिला है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३३०) से; सौजन्य : कान्तिलाल गांधी

१६०. पत्र : प्रभावतीको

सेगाँव, वर्धा
१२ सितम्बर, १९३७

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। जिस तरह बड़े आदमियोंके पतोंमें परिवर्तन होता रहता है उसी तरह तेरे पते भी बदलते रहते हैं। एक दिन तू सिताब दियारामें होती है तो दूसरे दिन सीवान, पटना और तीसरे दिन न जाने कहाँ-की-कहाँ। कहीं भी चार दिन टिककर नहीं रहती। ऐसी हालतमें तुझे कहाँ लिखूँ? तू जो पता बताती है वहीं मैं पत्र लिखता हूँ; लेकिन पत्रके पहुँचने तक तू वहाँ नहीं रहती और इस तरह मेरा पत्र तुझ तक नहीं पहुँच पाता। इसका क्या उपाय है?

१. जी० रामचन्द्रन्।

मेरी तबीयत अच्छी है। कमजोरी तो है ही। बहुत ज्यादा मानसिक आरामकी जरूरत है। साथमें शरीरको भी आराम मिलना चाहिए; लेकिन शारीरिक आराम तो मिल ही जाता है। मानसिक-विश्राममें तनिक विघ्न पड़ता है। किस व्यक्तिके साथ कैसा व्यवहार किया जाये, यह प्रश्न मेरे सामने रहता है। तथापि मैं सबसे ठीक-ठीक व्यवहार कर पाता हूँ।

ऐसा नहीं कहा जा सकता कि बा का पैर बिलकुल ठीक हो गया है।

शेष सब सामान्य है। तेरे पत्रसे मैं यही मान लूँ न कि तू फिलहाल तुरन्त इधर आनेवाली नहीं है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५०५) से।

१६१. भेंट: विलियम बी० बेंटनको[1]

[१३ सितम्बर, १९३७ के पूर्व]

गांधीजी ने अपने सामने ६ फुटकी दूरीपर रखी हुई संतरोंकी पेटीसे आधे आकारकी एक वार्निशदार पेटीकी तरफ इशारा करते हुए कहा:

आप वहाँ बैठ जायें तो अच्छा हो।

मैंने उनसे भारतीय राजनीति और विजयी कांग्रेस पार्टीकी नीतियोंके बारेमें कुछ प्रश्न पूछे।

ऐसे प्रश्नोंके लिए यह उपयुक्त समय नहीं है। मुझे यहाँ काम करना है, और ऐसे प्रश्नोंका उत्तर देनेके लिए मैं समय नहीं निकाल सकता। आपको ये प्रश्न भारत-के राजनीतिक नेताओंसे पूछने चाहिए। बेशक, मैं यह नहीं कहता कि मैं राजनीतिके बारेमें कुछ नहीं जानता। लेकिन ऐसे प्रश्नोंके लिए इस समय मुझे फुरसत नहीं है।

बहुत-से लोग ऐसा महसूस करते हैं कि किसी भी प्रकारका सहयोग एक भूल है। अन्य लोग इससे सहमत नहीं हैं; उन्हें लगता है कि अपने उद्देश्योंकी प्राप्तिके लिए शायद यह उचित है कि हम कभी-कभी अपने प्रतिपक्षीकी बात मान लें। दोनों ही तरहके लोग ईमानदार हैं।

हमने अभी-अभी एक बहुत बड़ी विजय प्राप्त की है और इससे हमारी जिम्मे-दारी और भी बढ़ गई है। हमारा लगभग कोई विरोध नहीं हुआ। यही बात महत्वपूर्ण है। मुझे इस परिणामपर आश्चर्य नहीं हुआ, लेकिन यह दूसरोंके देखने की एक अच्छी चीज है। इससे दुनियाको हमारी ताकतका पता चलता है।

१. एक अमेरिकी पत्रकार।

तब हमने अमेरिकी लोकमत और भारतके प्रति उसके रुखके बारेमें बात की।

अमेरिकी जनमत हमारे लिए बहुत महत्त्व रखता है और हमें आशा है कि हम अपने कार्यों द्वारा उसे अपने पक्षमें कर लेंगे।

गांधीजी ने इस बातको स्वीकार किया कि ब्रिटेनकी विदेश-नीति अक्सर अमेरिकी जनमतसे प्रभावित होती है। उन्हें यह भी मालूम है कि इंग्लैण्ड अनेक कुटिल तरीकों से अमेरिकी लोकमतको अपने अनुकूल ढालने की कोशिश करता है।

हम लोग अमेरिकी जनमतको अपने पक्षमें करनेके लिए उन तरीकोंका प्रयोग नहीं कर सकते जो इंग्लैण्ड अपनाता है। हम उसके साथ इस मामलेमें कोई होड़ नहीं करते। हमारे तरीके भिन्न होने चाहिए। अमेरिकी जनमतको प्रभावित करने का हम कोई प्रयास नहीं करते। अमेरिकी लोग भावनात्मक रूपसे हमारे उद्देश्यके साथ सहानुभूति रखते हैं, लेकिन वे लोग सही तथ्योंसे और हमारी असली समस्यासे बहुत अनभिज्ञ हैं। उचित समय आने पर अमेरिकी लोग हमारे कार्योंके माध्यमसे सत्यको जान जायेंगे।

अमेरिकामें लोगोंकी आम धारणा है कि भारतको अपनी रक्षाके लिए इंग्लैण्डकी जरूरत है। अंग्रेजोंके न रहने पर क्या भारतमें नागरिक और धार्मिक उपद्रव शुरू हो जायेंगे? कांग्रेस पार्टी अंग्रेजोंको भारतसे बाहर निकालने के अपने प्रयत्नमें सफल हो गई तो क्या भारत किसी अन्य ताकतका शिकार हो जायेगा? कांग्रेस देशी नरेशोंसे किस तरह निबटेगी?

ये भ्रामक धारणाएँ हैं। वर्षोंसे इनका प्रचार किया जाता रहा है। इस तरहके खतरोंके बारेमें जो कहानियाँ गढ़ी गई हैं अथवा जो बातें कही जाती हैं, वे बहुत अतिरंजित होती हैं। मैं जानता हूँ कि कई अंग्रेज ईमानदारीसे इनपर विश्वास करते हैं; अतः आप स्वयं देख सकते हैं कि प्रचारमें कितनी शक्ति है।

जहाँतक देशी रियासतोंका सवाल है, जब भारत अपने सच्चे स्वरूपको प्राप्त कर लेगा, तब वे भी रास्ते पर आ जायेंगी।

गांधीजी को जो विषय अत्यन्त प्रिय है और जिसपर वे दिल खोलकर बात कर सकते हैं वह है भारतके गाँववालों या किसानोंके उत्थान के लिए चलाया गया उनका आन्दोलन। . . . ग्रामीणोंकी हालतमें सुधार करने के नये-नये तरीके ढूंढ़ने के लिए निरन्तर प्रयोग किये जा रहे हैं। महात्मा गांधीने मुझे बताया:

हमारी तरक्कीकी रफ्तार धीमी है, लेकिन आपको याद रखना होगा कि हमारा आन्दोलन नया है। हमने अपना आन्दोलन केवल आस्थाके बलपर शुरू किया था —केवल आस्था। आज इस आस्थाके साथ ही हमारे पास ज्ञान भी है।

और फिर उनके पोपले मुखपर वही चिरपरिचित मुस्कान खेल गई। [वे बोले:]

आप इसमें तीसरी बात और जोड़ सकते हैं—आपको अपनी इस भेंटकी कहानी बेचने पर जो पैसा मिलेगा उसमें से कुछ हमें दे दीजिएगा।

यदि आप समझते हैं कि आस्था और ज्ञानके संयोगमें बड़ी ताकत है, तब तो आस्था, ज्ञान और धनका संयोग और भी ज्यादा ताकतवर चीजें हैं।

हाँ, हाँ।

वे खिलखिला कर हँस पड़े।

क्या आपने कभी अमेरिकी फिल्म देखी है अथवा अमेरिकी जाज संगीत सुना है। ये हमारे यहाँसे निर्यात होनेवाली दो अत्यधिक प्रसिद्ध वस्तुएँ हैं।

नहीं, नहीं, मैंने नहीं देखी हैं और न जाज संगीत ही सुना है।

वे फिर हँसे [और बोले:]

यह आपके लिए एक अच्छी कहानी है। आप इसका चाहे जो उपयोग कर सकते हैं। मैंने कभी कोई चल-चित्र नहीं देखा है।

मैंने पूछा कि क्या आपके पास कभी कोई फिल्म नहीं लाई गई। वे फिर हँसे [और कहा:]

नहीं, मैंने कभी कोई फिल्म नहीं देखी है।

गांधीजी से विदा लेते हुए . . . मैंने वर्धामें बना कागजका एक टुकड़ा निकाला, जिसे मैंने एक आनेमें खरीदा था। मैंने उनसे पूछा कि क्या वे उसपर हस्ताक्षर कर देंगे।

नहीं, उन्होंने लजीली मुस्कानके साथ कहा और सिर घुमा लिया। तभी उन्होंने उस कागजको देखा और प्रसन्न-भावसे हँस पड़े और बोले:

नहीं, यह देखकर भी मुझे लोभ नहीं होता।[1]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १३-९-१९३७

१६२. पत्र : अमृतकौरको[2]

सेगाँव

१३ सितम्बर, १९३७

आज तो केवल प्यार ही भेज सकता हूँ, इससे अधिक कुछ नहीं।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८०६) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६९६२ से भी

१. यह रिपोर्ट सर्वप्रथम **न्यूयॉर्क टाइम्स**में प्रकाशित हुई थी।

२. ये पंक्तियाँ मीराबहन द्वारा अमृतकौरको लिखे पत्रके अन्तमें लिखी गई हैं।

१६३. तार : सुरेन्द्रनाथ मैत्रको[1]

[१४ सितम्बर, १९३७ के पूर्व][2]

अधिकारियों और बन्दियोंके साथ तार द्वारा मेरा सतत सम्पर्क जारी है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १५-९-१९३७

१६४. तार : नीलरतन सरकारको

वर्धा
१४ सितम्बर, १९३७

डॉ० नीलरतन सरकार
शान्तिनिकेतन

भगवान्को धन्यवाद है। गुरुदेवके शीघ्र स्वास्थ्य-लाभके लिए कितने ही लोग हृदयसे मौन प्रार्थना कर रहे हैं। प्रतिदिन तार द्वारा खबर अपेक्षित है।

गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९८७७) से।

१६५. पत्र : नारणदास गांधीको

सेगाँव, वर्धा
१४ सितम्बर, १९३७

चि० नारणदास,

इसके साथ गोकीबहनकी[3] ओरसे मनुका[4] लिखा हुआ पत्र भेज रहा हूँ। इससे मैं यह समझा हूँ कि बिजलीके नामपर एक रुपया किराया बढ़ाये जाने की बात

१. यह श्री मैत्रके उस तारके उत्तरमें था जिसमें गांधीजी से आग्रह किया गया था कि वे अण्डमानके शेष सात बन्दियोंका अनशन तुड़वाने के लिए फिरसे हस्तक्षेप करें।

२. यह रिपोर्ट दिनांक "कलकत्ता, १४ सितम्बर" के अन्तर्गत छपी थी।

३. रलियातबहन, गांधीजी की बहन।

४. हरिलाल गांधीकी पुत्री।

कही गई है। मैं समझता हूँ कि जितना पैसा मिलता है वह भाई बेचरलाल डाक्टरकी ओरसे अथवा उनकी स्मृतिमें दिया जाता है। इस व्यवस्थामें मैंने कोई दखल नही दिया है। अब तुम जाँच करना। यदि एक रुपया ज्यादा देना ठीक लगता हो तो उसके अनुसार तुम बेचरलालसे कहना। मैं जो समझता हूँ यदि वह ठीक नही है तो गोकी-बहनका मासिक खर्च कैसे चलता है, यह विस्तारसे बताना। उनसे कहना कि पत्र आनेके तुरन्त बाद मैंने उसपर कार्रवाई की है। तुम उन्हें मेरी तबीयतके बारेमें सूचित कर देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५३८ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१६६. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

१५ सितम्बर, १९३७

ये तार[1] मैंने इस आशासे रोक रखे थे कि उन सात बन्दियोंकी "राहत" शब्दकी व्याख्याको मेरे स्वीकार कर लेने के फलस्वरूप उनके अनशन तोड़ने का सुखद समाचार मैं घोषित कर सकूँगा। मुझे दुःख है कि मैं अपने प्रयासमें असफल रहा। अब तो मैं केवल यही आशा कर सकता हूँ कि बन्दियोंके कोई विशेष मित्र उन्हें समझा-बुझाकर अनशन तोड़ने के लिए राजी कर सकेंगे। कारण, जिस राहतके लिए वे अपने प्राणोंका बलिदान कर रहे हैं वह राहत दिलाने के लिए जनताको सुसंगठित प्रयत्न करने का समय केवल तभी मिल सकता है।

अधिकारियोंसे भी, वे जो कोई भी हों, मेरी प्रार्थना है कि वे नरमी से काम लें और यदि बन्दी लोग उपवास नहीं छोड़ते, तो उन्हें उसी तरह रिहा कर दें, जिस तरह १९३३ में मेरे उपवास न छोड़ने पर मुझे रिहा करके अपने ही हालपर छोड़ दिया गया था।[2]

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १६-९-१९३७

१. देखिए "तार : गृह-सचिवको", पृ० १०७ पृ० १२० और पृ० १३८।
२. मई, १९३३ में; देखिए खण्ड ५५।

१६७. पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
१५ सितम्बर, १९३७

प्रिय अमृत,

बापूने आज मुझे तुम्हारे लिए अनेक सन्देश दिये हैं।

१. उनकी इच्छा है कि तुम सिखोंके उच्च वर्गमें मिलो-जुलो और नशाबन्दी आन्दोलनमें उनकी रुचि जाग्रत करो। जो लोग शराब पीते हैं उनका यह व्यसन छुड़वाना चाहिए और विशेष रूपसे स्त्रियोंमें जागृति पैदा करनी चाहिए ताकि वे एक प्रस्ताव तैयार करें।

मैं चाहूँगा कि गण्यमान्य सिख नशाबन्दीके सम्बन्धमें एक घोषणा करें।[1]

२. एन्ड्रयूजको डाक्टरकी बताई हुई खुराक ही खानी चाहिए। शायद उनकी शारीरिक दशा ऐसी है कि फल इत्यादिसे उन्हें सचमुच हानि पहुँचती हो। परन्तु अबतक तो अवश्य ही वे उस स्थितिको पार कर चुके होंगे। यह सब तो डाक्टरके मतपर ही निर्भर है। एन्ड्रयूज माँस खाते हैं, यह बात बापू अच्छी तरह जानते हैं।

३. बापू तुमसे बिलकुल सहमत हैं कि एन्ड्रयूजको मिस मेयोकी पुस्तकका जवाब देने का विचार छोड़ देना चाहिए। ऐसे उत्तरकी आवश्यकता न भारतमें है न पश्चिम में। इस विषयकी चर्चा एक बिलकुल स्वतन्त्र पुस्तक लिखकर ही हो सकती है।[2]

४. अक्तूबरसे पहले बापूके सीमा-प्रान्त जाने की कोई सम्भावना नहीं है। उनका जाना इस बातपर निर्भर करता है कि खान साहब[3] कब और कैसा पत्र लिखते हैं।

५. यह तो बड़ी अच्छी खबर है कि शिमला का खादी-भण्डार अब आत्मनिर्भर हो गया है।

६. बापू तुम्हारी पीतलकी बाल्टीको देख लेंगे, और यदि जँची तो अपने उपयोग में लायेंगे।

७. तुम्हारा पंखा सहेजकर रख दिया गया है। यहाँ और बहुतेरे पंखे हैं। जब तुम लौटोगी तब तुम्हारे उपयोगके लिए उसे अलग रख दिया गया है।

१. यह पंक्ति और हस्ताक्षर गांधीजी ने अपने हाथसे जोड़ दिये थे।

२. सी० एफ० एन्ड्रयूजने कैथरिन मेयोकी पुस्तक **मदर इंडिया** का जवाब **द टू इंडिया** नाम की पुस्तक १९३८ के ग्रीष्म-कालमें लिखकर पूरा किया था।

३. अब्दुल गफ्फार खाँ।

८. बापूका दायाँ हाथ अब काम करने लायक तो हो गया है, परन्तु उन्हें लगता है कि उसे अभी जितना आराम दिया जा सके उतना ही अच्छा होगा। उनका कहना है कि इसका एक लाभ यह भी है कि इस मजबूरी के कारण वे ज्यादा नहीं लिखेंगे और इस प्रकार उन्हें जबर्दस्ती आराम मिल जायेगा।

९. बापूके विचारमें तुम्हारे हिन्दी अक्षर काफी सुधर गये हैं और अब वे बड़े-बड़े भी नहीं होते।

१०. बालकोबाकी[1] दशामें धीरे-धीरे सुधार हो रहा है। वे अपनी पूरी खुराक ले पाते हैं और वजन भी एक पौंड बढ़ा है।

बापूके स्वास्थ्यमें सचमुच उन्नति हुई है। वे दवाई अधिक मात्रामें ले रहे हैं क्योंकि वह उन्हें माफिक आई है और रक्तचाप घटाने में लाभदायक है। यहाँ मौसम खूब अच्छा है।

बहुत-सा प्यार

मीरा

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८०७) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९६३ से भी

१६८. पत्र : मनहरराम मेहताको

१५ सितम्बर, १९३७

भाई मनहरराम,

स्वाँगी, भाट और चारणों आदिसे तो ठेठ बचपनसे मैं परिचित हूँ और तभीसे उनपर मुग्ध रहा हूँ। किन्तु इन बेचारोंको हमने ओछा मानकर निम्न कोटिके लोगोंमें धकेल दिया है। समय बीतने के साथ वे भी स्वयंको [वैसा ही][2] मानने लग गये। यह विचार मुझे तो बहुत अच्छा लगता है, किन्तु इसपर किस प्रकार अमल किया जा सकता है, यह तो तुम-जैसे लोगोंके सोचने की बात है।

गुजरातीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१. बालकृष्ण, विनोबा भावेके छोटे भाई।
२. यहाँ कुछ शब्द पढ़े नहीं जा सके।

१६९. पत्र : चन्द्रशंकरको

१५ सितम्बर, १९३७

भाई चन्द्रशंकर,

मैं भी निश्चय ही कताईपर जोर देता हूँ और सो भी तकली-कताई पर। अनुभवके आधारपर मेरा यह विश्वास दृढ़ होता जाता है कि हिन्दुस्तानमें इतनी छोटी किन्तु व्यापक, इतनी सस्ती, इतनी कलात्मक, इतनी उपयोगी, इतनी सुन्दर अन्य कोई भी वस्तु या . . .[1] नहीं है।

मेरा यह भी दावा है कि अंग्रेजीके अतिरिक्त अन्य विषयोंकी जो शिक्षा आज दी जाती है उतनी शिक्षा उद्योगोंके द्वारा उतने ही समयमें दी जा सकती है। तुम्हारे इतना आश्वासन देने के बावजूद यदि माता-पिता उद्योगका नाम सुनते ही घबरा जाते हैं, तकलीका नाम सुनते ही घबरा जाते हैं, तकलीका नाम सुनते ही उन्हें . . .[2] आ जाता है और यदि तुम डेढ़ रुपयेकी बजाय आठ आने या चार आने वजीफ़ा देते हो किन्तु इसके बावजूद वे बच्चोंको न भेजते हों तो यदि तुम्हारी जगह मैं होऊँ तो पाठशालाको बन्द करके कोई अन्य काम करूँ। सच्चा शिक्षक अपनी ही शर्तपर पढ़ायेगा। माता-पिता या . . .[3] शिक्षाके बारेमें जिन्हें कोई जानकारी नहीं है, उनकी शर्त पर कदापि नहीं।

गुजरातीकी नकलसे। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१७०. पत्र : नरसिंहभाईको

१५ सितम्बर, १९३७

भाई नरसिंहभाई,

कमला स्मारक-कोषमें बहुत कम पैसा आया है। सबसे बड़ी रकम जवाहरलालके प्रवासके दौरान ही मिली है। यह भी बेचारी कमलाके नामपर नहीं, बल्कि उसके पतिके नामपर आई ही समझिए। जिस प्रकार योगिनी स्त्रियाँ किसीपर कोई बोझ डाले बिना चिर-निद्रामें लीन हो जाती हैं, ऐसा ही कमलाके साथ हुआ है। इस स्मारककी अवधारणाके मूलमें यही भावना है। प्रयागके कांग्रेस अस्पतालके कामको उन्होंने अपने जिम्मे ले लिया था। उसके लिए वे जीवन-पर्यन्त पैसा इकट्ठा करती रहीं। केवल उन्हींके प्रयत्नसे यह अस्पताल चलता था। उनके देहान्तके बाद उसमें

१ से ३. उक्त अंश साधन-सूत्रमें अस्पष्ट हैं।

ताला डाल देनेकी स्थिति आ गई थी। इसलिए मुझ-जैसे दो-तीन लोगोंने —— जो उन्हें अच्छी तरह जानते थे —— विचार किया कि यह अस्पताल कायम रहना चाहिए। इसका सबसे सरल उपाय यह था कि उसे कमलाके स्मारकका रूप दे दिया जाये। जवाहरलालने उसमें अपनी छोटी-सी जायदादका आधा हिस्सा दे दिया। अब इस दो-ढाई लाखकी रकमका उपयोग नीति-भंग किये बिना कैसे किया जाये? इसके अलावा जिन लोगोंने पैसा दिया है, इस बातसे अभिज्ञ होते हुए दिया है। इसलिए इस पैसेका उपयोग प्रयागके अस्पतालके लिए हो, इसीको हमें अपना कर्त्तव्य मानना चाहिए। और अगर हम ऐसा नहीं मानते कि प्रयागकी बहनें जो-कुछ पाती हैं वह वास्तवमें हम सब भी प्राप्त कर रहे हैं तो इसका मतलब यह होगा कि हम भारतवासी न होकर, अपने-अपने प्रान्तके ही निवासी हैं। हमें तो 'गीता'के इस वचनका अनुसरण करना चाहिए कि कृष्णार्पण करके जो-कुछ सेवा-भावसे दिया जाता है वह कृष्णके ही पास पहुँचता है। और यह कृष्णार्पण भारतके लिए है —— और उसका माध्यम है कमला-स्मारक। इसलिए अन्य सभी विचार लोग अपने मनसे निकाल दें।

गुजरातीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१७१. पत्र : डॉ० धनजी शाहको

१५ सितम्बर, १९३७

भाई धनजी शाह,

आपके पत्रके लिए आभार मानता हूँ। आपने जो लिखा है उससे यह प्रकट होता है कि खादी-सेवकोंका अभाव है। आप-जैसे खादी पहननेवाले बहुत हैं। खादी-सेवक तो उसीको कहा जायेगा जो खादी तैयार करता हो, खुद पहनता हो और दूसरोंको भी पहनने को राजी करता हो। अगर सब पहननेवाले ही हों और तैयार करानेवाला कोई नहीं तो खादी एक दिन भी नहीं चल सकती, वैसे ही जैसे 'अवेस्ता'को पढ़नेवाले तो बहुत-से लोग हों और उसके अनुसार आचरण करनेवाला कोई न हो तो जरथुस्तका फरमान नहीं चल सकता। इसलिए आपको मेरा सुझाव तो यह है कि जहाँ लोग आपको खादी पहनते न दिखें वहाँ कोशिश करके उन्हें पहनने के लिए राजी कीजिए।

डॉ० एम० धनजी शाह, तान्त्रिक
एडियूर
डाकघर-मंड्या (मैसूर)

गुजरातीकी नकलसे। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१७२. पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
१५ सितम्बर, १९३७

मूर्खा रानी,

आजकल तो मैं मीराके माध्यमसे ही तुमसे बातचीत करने को विवश हूँ।[1]

तुम्हारा उत्तर मैं पढ़ गया। काफी ठीक है और काफी दृढ़तापूर्ण भी, ठीक तुम्हारे समान। तुम्हारी दुर्बलता तो केवल मित्रोंके लिए है। इसका क्या उत्तर मिलता है, इसे जानने की उत्सुकता रहेगी। नाम बदलने का क्या कारण है? क्या इसमें धन स्मारक-कोषमें से लगेगा, इस कारण? आशा है, तुमने इस बातका अच्छी तरह निश्चय कर लिया होगा कि तुम्हारा एतराज उचित कारणोंपर आधारित है।

नबीबख्श[2] तो अब आता ही होगा। उससे मेरा प्यार कहना।

विचित्र बात है कि तुम्हें वहाँ अच्छी मिट्टी नहीं मिलती।

तुम पूरी नींद लेती हो या नहीं? अब तो पाबन्दीका समय हो रहा है, इसलिए शुभ-रात्रि और प्यार।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८०८) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९६४ से भी

१७३. तार : नीलरतन सरकारको

[१७ सितम्बर, १९३७ या उसके पूर्व][3]

ईश्वर बड़ा महान् और दयालु है। आप गुरुदेवकी रोग-शय्याके पास ही हैं इससे मन बहुत आश्वस्त है। कृपया जबतक पूर्ण स्वास्थ्य-लाभ न हो तबतक प्रतिदिन तार देते रहिए।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १७-९-१९३७

१. देखिए "पत्र : अमृतकौरको", पृ० १४६।

२. अमृतकौरका नौकर।

३. यह रिपोर्ट दिनांक "शान्तिनिकेतन, १७ सितम्बर", के अन्तर्गत हुई थी।

१७४. पत्र : अमृतकौरको[1]

सेगाँव
१७ सितम्बर, १९३७

आज अधिक नहीं।
स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८०९) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९६५ से भी

१७५. पत्र : जमनालाल बजाजको

सेगाँव, वर्धा
१७ सितम्बर, १९३७

चि० जमनालाल,

यह देखकर कि [ग्राम] उद्योग संघके इतने सारे सदस्य यहाँ आये हैं, मुझे शर्म आई और दुःख हुआ। ऐसे कामके लिए मुझे वहाँ जाना चाहिए था। इससे खर्च वगैरह भी बच जाता। मेरे शरीरको तो इस तरह घूमने-फिरने से कोई नुकसान नहीं होता; बल्कि वहाँ न जाकर सबको यहाँ घसीटने पर मुझे तो बहुत दुःख होता है। इसलिए तुम मुझे मोटर अथवा घोड़ागाड़ी समयपर पहुँचा देना, जिससे कि मैं ज्यादासे-ज्यादा पौने दो बजे तक वहाँ पहुँच सकूँ। सबको अपने बँगलेपर ही बुलाना। और यदि बँगलेमें [बैठक बुलाना] सम्भव न हो तो खुशीसे मगनवाड़ी ले जाना। चरखा संघके जितने सरल अथवा जटिल कार्योंको भी तुम अपने हाथमें ले सकते हो, ले लेना ताकि हम अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मामलोंपर बातचीत कर सकें।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९८८) से।

१. ये पंक्तियाँ मीराबहन द्वारा अमृतकौरको लिखे पत्रके अन्तमें लिखी हुई हैं।

१७६. बातचीत : एक शिक्षा-शास्त्रीके साथ[1]

[१८ सितम्बर, १९३७ के पूर्व]

[गांधीजी ने] इस विचारके विरुद्ध चेतावनी दी कि स्वावलम्बी शिक्षाका विचार शराबबन्दीको जल्दीसे-जल्दी लागू करने की आवश्यकताके कारण पैदा हुआ है।

दोनों एक-दूसरेसे स्वतन्त्र आवश्यकताएँ हैं। आपको इस विश्वासको लेकर चलना होगा कि सरकारी आय हो या नहीं, शिक्षा दी जा सके या न दी जा सके, पूर्ण शराबबन्दी करनी ही होगी। इसी तरह आपको इस विश्वासको लेकर चलना होगा कि हिन्दुस्तानके गाँवोंकी आवश्यकताओंको देखते हुए यदि हम शिक्षाको अनिवार्य बनाना चाहते हैं, तो हमें अपनी ग्राम-शिक्षाको स्वावलम्बी बनाना होगा।

[शिक्षा-शास्त्री :] पहला विश्वास तो मेरे मनमें गहरा पैठा हुआ है। मेरे लिए शराबबन्दी स्वयंमें एक लक्ष्य है, और मैं इसको अपने-आपमें एक बड़ी भारी शिक्षा मानता हूँ। इसलिए शराबबन्दीको सफल बनाने के लिए मैं शिक्षाका सर्वथा बलिदान करने के लिए तैयार हूँ। लेकिन दूसरे विश्वासका मुझमें अभाव है। मैं अभी तक इस बातपर विश्वास नहीं कर सका हूँ कि शिक्षा स्वावलम्बी बनाई जा सकती है।

यहाँ भी मैं यह चाहता हूँ कि आप विश्वासको लेकर चलें। ज्यों ही आप उसपर अमल करना शुरू करेंगे, आपको उसके उपाय और साधन सूझते चले जायेंगे। मुझे खेद है कि इस बातकी ओर मेरा ध्यान इतनी उम्र बीत जाने पर गया है, अन्यथा मैं खुद ही यह परीक्षण करता। अब भी, यदि ईश्वरने चाहा तो यह दिखाने के लिए कि शिक्षा स्वावलम्बी हो सकती है, मुझसे जो-कुछ हो सकेगा, करूँगा। लेकिन इन वर्षोंके दौरान मेरा समय अन्य बातोंमें चला गया, जो शायद इतनी ही महत्त्वपूर्ण थीं, लेकिन मेरे सेगाँव-निवासके कारण मुझे इसके बारेमें पक्का विश्वास हो गया है। अभीतक हमने अपने बच्चोंके दिमागमें हर तरहकी जानकारीको ठूँसकर भरने की ही कोशिश की है और उनकी बुद्धिको जाग्रत करने व उसका विकास करने की ओर कभी ध्यान नहीं दिया है। अब हमें अपना पुराना ढंग रोक देना चाहिए और एक गौण प्रवृत्तिके रूपमें नहीं, बल्कि बौद्धिक शिक्षाके एक प्रमुख साधनके रूपमें हमें शारीरिक श्रम द्वारा बच्चोंको उचित रूपसे शिक्षा देने में अपनी शक्ति लगानी चाहिए।

१. महादेव देसाईके "टॉक्स ऑन सेल्फ-सपोर्टिंग एजुकेशन" (स्वावलम्बी शिक्षापर बातचीत) शीर्षक लेखसे उद्धृत।

यह भी मैं समझता हूँ, लेकिन यह क्यों जरूरी है कि वह शिक्षा स्कूलको भी सहारा दे ?

यह उसकी उपयोगिताकी कसौटी होगी। चौदह वर्षकी उम्र होने, अर्थात् सात वर्षका शिक्षा-क्रम समाप्त करने के बाद, जब विद्यार्थी स्कूल छोड़कर जाये तब उसे कुछ कमा सकने योग्य होना चाहिए। अब भी गरीब लोगोंके बच्चे अपने माता-पिताको अपने-आप सहारा देते हैं, इसके पीछे उनके मनम यही भाव होता है कि अगर वे उनके साथ काम न करेंगे तो उनके माता-पिता क्या खायेंगे और क्या उन्हें खाने को देंगे। यह स्वयं ही एक शिक्षा है। इसी तरह राज्य सात वर्षकी उम्रमें बच्चेको अपनी देख-रेखमें ले लेता है और फिर उसके कुटुम्बको एक कमाऊ इकाईके रूपमें सौंप देता है। आप शिक्षा भी देते हैं, और साथ-ही-साथ बेकारीकी जड़ भी काटते जाते हैं। आपको बच्चोंको किसी-न-किसी धन्धेके लिए तैयार करना होगा। आप इस खास धन्धेके साथ ही उसकी बुद्धिको प्रशिक्षित करते हैं, शरीरको सुगठित करते हैं, हाथकी लिखावटको सुधारते हैं, उसकी कलाकी भावनाको जाग्रत करते हैं, आदि-आदि। इस तरह उसे जो दस्तकारी सिखाई जायेगी उसमें वह निपुण हो जायेगा।

लेकिन मान लीजिए कि लड़का खादी बनाने की कला और विज्ञान लेता है, तो क्या आप समझते हैं कि खादी बनाने की कलाको हस्तगत करने के लिए उसे सात वर्ष लगने चाहिए ?

हाँ? अगर वह उसे यन्त्रवत् नहीं सीखता है तो उसे सात वर्ष लगने चाहिए। इतिहास अथवा भाषाके अध्ययनमें हम वर्षों क्यों लगाते हैं? आजतक इन विषयोंको जो कृत्रिम महत्त्व प्रदान किया गया है, उनकी अपेक्षा इस उद्योगका महत्त्व क्या कम है?

लेकिन आप चूँकि मुख्यतः कताई और बुनाई के बारेमें सोचते रहते हैं, इसलिए जाहिर है कि आप इन स्कूलोंको बुनाई के स्कूलोंमें परिवर्तित करने की बात सोच रहे हैं। हो सकता है कि बालककी रुचि बुनाई के काममें न होकर किसी दूसरे काममें हो।

तब हम उसे कोई दूसरा उद्योग सिखायेंगे। लेकिन आपको यह जान लेना चाहिए कि एक ही स्कूलमें बहुत सारे उद्योगोंकी शिक्षा नहीं दी जायेगी। धारणा यह है कि हमें २५ लड़कोंके पीछे एक शिक्षक रखना चाहिए, और आपको जितने शिक्षक मिल सकें, आप हरएक २५ लड़कोंके लिए एक वर्ग या स्कूल खोल सकते हैं, और इनमें से हरएक स्कूलके लिए अलग-अलग उद्योग, जैसे बढ़ईगिरी, लुहारी या जूता वगैरह बनाने का धन्धा नियत कर सकते हैं। आपको सिर्फ यह बात ध्यानमें रखनी होगी कि इन उद्योगोंके द्वारा आपको बच्चोंकी बुद्धिका विकास करना है। साथ ही, मैं एक बातपर और जोर दूँगा। आप शहरोंको भूल जाइए और गाँवोंपर अपनी शक्ति केन्द्रित कीजिए। वे समुद्र हैं। शहर तो इस सिन्धुमें बूँदके समान हैं। यही वजह है कि आप ईंट बनाने-जैसे विषयकी कल्पना भी नहीं कर सकते। अगर

वे सिविल और मेकेनिकल इंजीनियर ही होना चाहेंगे, तो वे सात वर्षकी शिक्षा खत्म करने के बाद इन उच्च और खास विषयोंके लिए बने हुए खास कॉलिजोंमें चले जायेंगे।

साथ ही, मैं एक बातपर और जोर दूँगा। शारीरिक श्रमको शिक्षासे दूर रखने के कारण हम ग्रामीण उद्योग-धन्धोंको हलका समझने के अभ्यस्त हो गये हैं। शारीरिक श्रमको कुछ नीचे दर्जेका काम समझा जाने लगा, और वर्णाश्रमकी भीषण विकृतिके कारण हम लोग कतैयों, जुलाहों, बढ़ई और मोचियोंको नीची जातिका और सर्वहारा समझने लगे। दस्तकारियोंको कौशलसे रहित नीचे दर्जेकी कोई चीज समझने के बुरे रिवाजके कारण ही हमारे यहाँ क्रॉम्पटन[1] और हारग्रीव्ज[2]-जैसे आविष्कारक पैदा न हो सके। विद्याको जैसा दर्जा मिला हुआ है, अगर पेशे या हुनरको भी स्वतन्त्र रूपसे वैसा ही दर्जा मिला होता, तो हमारे कारीगरोंमें से कई आविष्कारक हो गये होते। बेशक, कातने की मशीनके फलस्वरूप जल-शक्ति और दूसरी चीजोंका आविष्कार हुआ, जिससे मिलोंने हजारों मजदूरोंका स्थान ले लिया। मेरे विचारमें यह आसुरी चीज थी। गाँवोंको अपने ध्यानका केन्द्र बनाकर हम इस बातका खयाल रखेंगे कि हुनरकी गहन शिक्षाके कारण विद्यार्थियों में शोधबुद्धिका विकास हो और वह सारे गाँवकी जरूरतें पूरी करनेवाली हो।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १८-९-१९३७

१७७. बन्दरोंके विषयमें

मेरे सामने अमेरिकासे आये लगभग पचास पत्र पड़े हुए हैं। उनमें मुझसे कहा गया है कि जीवित प्राणियोंकी चीरफाड़के प्रयोगके प्रयोजनसे हिन्दुस्तानसे बन्दरोंके निर्यातका जो सिलसिला चल रहा है उसे बन्द कराने के लिए मैं जो-कुछ कर सकता हूँ वह करूँ। इनमें से कुछ तो जीवदया-मण्डलोंके और जीवित जानवरोंकी चीरफाड़का विरोध करनेवाली संस्थाओंके हैं। उन्होंने इससे सम्बन्धित कुछ मनोरंजक साहित्य भी भेजा है, जिसमें इस चीरफाड़की भयंकर तसवीरें और तफसीलें दी हुई हैं। प्रख्यात डाक्टरोंकी रायें भी उन्होंने भेजी हैं, जिनमें उन्होंने इस क्रियाकी उपयोगिताके खिलाफ अपना मत व्यक्त किया है। इसी तरहके एक पत्रमें असीसीके सन्त फ्रान्सिसका चित्र भी है, जो पशु-पक्षियोंको अपने भाई-बहनोंकी तरह प्यार करते थे। सन्त फ्रान्सिसकी नीचे लिखी एक प्रार्थना पाठकोंको अवश्य पसन्द आयेगी :

१. स्पिनिंग म्यूलके आविष्कारक सैम्युअल क्रॉम्पटन, तथा अधिक परिष्कृत बुनाई की खड्डीके आविष्कर्त्ता विलियम क्रॉम्पटन और उनके पुत्र जॉर्ज क्रॉम्पटन।

२. स्पिनिंग जेनीके आविष्कारक जेम्स हारग्रीव्ज।

> **प्रभो, मुझे अपनी शान्तिका साधन बना। द्वेषकी जगह मुझे प्रेमके बीज बोने दे; अत्याचारके बदले क्षमा, शक और सन्देहके बदले विश्वास, निराशा के स्थानपर आशा, अन्धकार की जगह प्रकाश, और विषादकी भूमिमें आनन्दका संचार करने दे।**
>
> **भगवन्, मुझे यह वरदान दे कि किसीको मुझे सान्त्वना देनेकी जरूरत ही न पड़े, बल्कि मैं लोगोंको सान्त्वना दूँ; लोग मुझे समझें, इसके बजाय मैं ही उन्हें समझूँ; लोग मुझे प्यार करें, इसके बजाय मैं ही उनसे प्यार करना सीखूँ; क्योंकि देने से ही हमें प्राप्त होता है; क्षमा करने से ही हम क्षमाके पात्र बनते हैं और मरकर ही हम शाश्वत जीवन प्राप्त करते हैं।**

इन पत्र-लेखकोंके साथ मेरी पूरी सहानुभूति है। मेरा बस चले तो हत्या या चीरफाड़के लिए मैं एक भी बन्दरको बाहर न जाने दूँ। इन पत्र-लेखकोंको मेरी यही सलाह है कि भारत सरकारको उन्हें इस सम्बन्धमें प्रार्थनापत्र भेजने चाहिए और यदि उनके प्रार्थनापत्रोंको लोगोंका पर्याप्त समर्थन प्राप्त होगा तो सरकार उस पर अवश्य ध्यान देगी। दूसरा उपाय स्पष्ट ही यह है कि बन्दरोंको बाहर भेजने के खिलाफ देशमें जोरदार आन्दोलन किया जाये। लेकिन जहाँतक मैं समझता हूँ, यहाँ इस प्रवृत्तिकी बहुत कम सम्भावना है। क्योंकि जनसाधारणको शायद इस बातका पता भी न हो कि बन्दरोंको बाहर भेजा जाता है, और मेरी समझमें नहीं आता कि मैं उन लोगोंको बन्दरोंको विदेश भेजने से कैसे रोक सकता हूँ जिनके लिए निजी तौरपर यह व्यापार बहुत फायदेमन्द है। इसलिए इस सम्बन्धमें मैं तो केवल यही इच्छा व्यक्त कर सकता हूँ कि हिन्दुस्तान इस अमानुषिक व्यापारसे दूर ही रहे। अगर यह सिद्ध भी हो जाये कि इस तरहकी चीरफाड़से हम मनुष्य-जातिकी पीड़ाको कम कर सकते हैं, तो भी निम्न श्रेणीके प्राणियोंपर ऐसा अत्याचार करना सरासर अन्याय है। मनुष्य-मात्रके दुःखको कम करनेका ध्येय कोई ऐसा ध्येय नहीं है जिसके लिए मनुष्येतर प्राणियोंकी चीरफाड़में निहित अमानुषिकताको उचित कहा जा सके। इसके विपरीत, मनुष्य-जातिका उद्देश्य तो यह होना चाहिए कि वह कोमलता और दयाको कभी न छोड़े। इसके परिणामस्वरूप अगर उसके कष्टोंका सिलसिला कायम रहता है तो रहे, उसके कष्ट और भी बढ़ जाते हैं तो बढ़ें। मेरा तो यह कहना है कि दूसरे मनुष्यों अथवा मनुष्येतर प्राणियोंके प्रति दया-धर्म रखने से हमारा दुःख और पीड़ा कम होती है, क्योंकि इससे हमें उस पीड़ाको सहने की शक्ति मिलती है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १८-९-१९३७

१७८. मद्यनिषेधका सामाजिक पक्ष

मद्यनिषेधकी नीतिको सफल बनाने की इच्छा रखनेवाले हरएक आबकारी मन्त्रीको यह उत्कृष्ट लेख[1] अवश्य पढ़ना चाहिए। शराबकी प्रत्येक दुकानको मनोरंजन केन्द्रमें परिवर्तित कर देना चाहिए। पैसा तो है ही — नई व्यवस्था लागू होने से पहले आबकारीसे मिलनेवाला पैसा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १८-९-१९३७

१७९. शिक्षा-मन्त्रियोंके लिए

दक्षिण भारतके एक उच्च विद्यालयके अध्यापकने विद्यार्थियोंपर सरकारकी ओरसे लगाये गये कुछ प्रतिबन्धोंकी झलक देनेवाले कतिपय नियम उद्धृत करके भेजे हैं, जो निम्न प्रकार हैं:[2]

> **नियम ९९. सरकारके विरुद्ध किसी भी आन्दोलनमें हिस्सा लेने के जुर्ममें जिस विद्यार्थीको अदालतसे सजा हुई है, उसे पहले से सरकारकी अनुमति लिये बिना किसी स्कूलमें दाखिल न किया जाये। स्कूलके किसी अधिकारी या नौकरको सरकारकी सत्ताके विरुद्ध किसी भी राजनीतिक आन्दोलनमें भाग न लेने दिया जाये, या उसे ऐसी कोई राय जाहिर न करने दी जाये जिससे कि सरकारके विरुद्ध अराजभक्ति और अप्रीतिके भावोंको बढ़ावा मिलता हो। विद्यार्थियोंको राजनीतिक सभाओंमें या किसी प्रकारके राजनीतिक आन्दोलनमें भाग न लेने दिया जाये।**
>
> **१००. अध्यापक या संचालकगण अगर ऐसा व्यवहार करना जारी रखते हैं या विद्यार्थियोंके इस तरहके व्यवहारको प्रोत्साहन देते हैं अथवा वैसा करने की इजाजत देते हैं तो उन्हें उचित चेतावनी देने के बाद शिक्षा-विभागका निदेशक उस स्कूलको अमान्य करार दे सकता है अथवा उक्त स्कूलको**

१. लेख यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें जॉन बारनाबासने उन विभिन्न सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियोंकी चर्चाकी थी जिनसे विवश हो एक आम आदमी शराबकी शरण जाता है। अत: उन्होंने सुझाव दिया था कि मजदूरोंके लिए शराबकी दुकानोंके स्थानपर मनोरंजन और जलपान गृहकी व्यवस्था कर शराबबन्दीको विवेकपूर्ण ढंगसे लागू किया जा सकता है।

२. यहाँ कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।

सरकारकी ओरसे दी जानेवाली सहायता बन्द कर सकता है, अथवा उस स्कूलके विद्यार्थियोंको सरकारी छात्रवृत्तियोंसे सम्बन्धित परीक्षाओंमें बैठने से और सरकारी छात्रवृत्ति पानेवाले विद्यार्थियोंको ऐसे स्कूलमें दाखिल होने से रोक सकता है।

१०१. यदि किसी शिक्षकके सार्वजनिक भाषण इस ढंगके हैं कि उनसे उसकी देख-रेखमें विद्याध्ययन करनेवाले विद्यार्थियोंके अपरिपक्व मस्तिष्क में सत्ता के प्रति आदर-भावका ह्रास करनेवाले सिद्धान्तोंका प्रवेश होता है और इस तरह उनसे लड़कोंके व्यवस्थित विकासमें बाधा पड़ती है और यदि वे भाषण ऐसे हैं जिनसे भावी नागरिकोंके रूपमें लड़कोंकी उपयोगिता कम होती है या बादके जीवनमें उनकी तरक्कीमें बाधा पड़ सकती है, या यदि यह पाया जाता है कि वह शिक्षक स्वयं ही विद्यार्थियोंको किसी राजनीतिक सभामें ले जा रहा है अथवा उसने जान-बूझकर उन्हें वहाँ जाने के लिए प्रोत्साहित किया है तो उसके इस आचरणको कर्त्तव्य-विमुखता माना जायेगा और उसके विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्रवाई की जायेगी।

७९. स्कूलमें (धार्मिक शिक्षा देनेवाली पुस्तकोंके अतिरिक्त) ऐसी किसी भी पुस्तकका कतई उपयोग नहीं किया जाना चाहिए जिसपर सरकारने अपनी स्वीकृति न दी हो। स्कूलोंमें किसी पुस्तक या पुस्तकोंका उपयोग करने या करने देने का अधिकार सरकारने अपने हाथमें रखा है।

८०. (इस धाराके अनुसार सभी बालकोंको टीका लगना चाहिए। यद्यपि इसपर अमल नहीं होता, फिर भी इस धाराको निकाल ही दिया जाना चाहिए।)

सरकार द्वारा स्वीकृत स्कूलोंके ऊपर राष्ट्रीय झंडा न फहराया जाये, वर्गोंमें राष्ट्रीय नेताओंके चित्र न लटकाये जायें, किसी स्कूलके विद्यार्थी परीक्षामें प्रश्नोंके उत्तरोंमें राष्ट्रीय विचार जाहिर करें तो उन्हें सजा दी जाये। . . .

इनमें से अधिकांश प्रतिबन्ध तो तत्काल हटा दिये जाने चाहिए। विद्यार्थियों अथवा शिक्षकोंके दिलको पिंजरेमें बन्द नहीं करना चाहिए। शिक्षक तो विद्यार्थियोंको वही रास्ता बता सकते हैं जिस रास्तेको वे या राज्य सबसे अच्छा समझते हों। ऐसा करने के बाद उन्हें अपने विद्यार्थियोंके विचारों और भावनाओंको दबाने का कोई अधिकार नहीं है। इसका अर्थ यह नहीं कि विद्यार्थियोंपर किसी प्रकारका अनुशासन नहीं होना चाहिए। अनुशासनके बिना कोई स्कूल चल ही नहीं सकता। किन्तु विद्यार्थियोंके सर्वांगीण विकासपर लगाये गये कृत्रिम अंकुशको अनुशासन नहीं कहते। जहाँ उनके पीछे जासूस लगाये जाते हों, वहाँ सर्वांगीण विकास असम्भव है। असल बात यह है कि आजतक वे जिस प्रकारके वातावरणमें रहे हैं, वह साफ ही अराष्ट्रीय रहा है। यह वातावरण अब दूर हो जाना चाहिए। विद्यार्थियोंको

जानना चाहिए कि राष्ट्रीय भावनाको विकसित करना कोई अपराध नहीं, किन्तु एक सद्गुण है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १८-९-१९३७

१८०. स्वावलम्बी स्कूल

भारतकी आर्थिक अवनतिका मुख्य कारण यह है कि उसके मजदूर अपने जीवनकी शुरुआत बहुत जल्दी करते हैं। . . . कच्ची उम्रके बालकोंको औद्योगिक प्रशिक्षण देने से उनका दिमाग कुन्द हो जाता है और विकास रुक जाता है और वे कामके आर्थिक महत्त्वको नहीं समझ पाते हैं। ऐसे मजदूरका कोई भी शोषण कर सकता है। . . . जब मैं लंकाके चाय-बगानोंको देखने गया था तब सबसे ज्यादा दुःख तो मुझे यह देखकर हुआ था कि वहाँ बच्चोंसे मजदूरी करवाई जाती है। . . . लंका-जैसे देशमें भी, जहाँ प्राकृतिक साधनों का पूरा लाभ उठाने की दृष्टिसे आबादी कम है, बच्चोंसे मजदूरी करवाने का औचित्य नहीं हो सकता — भारतमें तो और भी नहीं, क्योंकि यहाँ बच्चोंको कामपर लगाने से बड़े बेकार हो जाते हैं।

हम अपने-आपको इस भ्रममें न रखें कि माल तैयार करके बाजारमें बेचनेवाले कारखानों-जैसे स्वावलम्बी स्कूल बच्चोंको शिक्षा देंगे। व्यवहारमें तो यह कानूनन बच्चोंसे मजदूरी करवाने की बात ही होगी। . . . मैं 'हरिजन' के सम्पादक की इस बातसे सहमत नहीं हो सकता कि कपड़ेके एक थानके लिए कितने सूतकी जरूरत है, यह गिनकर हिसाब सीखा जा सकता है या रुईके तनावके विकास और सुधारको देखकर विज्ञान और भूगोलकी शिक्षा प्राप्त की जा सकती है। . . . हाथ, कान व आँखकी शिक्षा बहुत आवश्यक है और शारीरिक श्रमको स्कूलोंमें अनिवार्य विषय घोषित कर दिया जाना चाहिए। लेकिन हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हाथकी शिक्षा वास्तवमें दिमागकी ही शिक्षा है। जो स्कूल शिक्षा देना चाहता है उसे, बाजारमें बेचा जा सके, ऐसा माल तैयार करने का विचार ही छोड़ देना चाहिए। उसे बच्चोंको भाँति-भाँतिका कच्चा माल और यन्त्र देने चाहिए, जिनपर वे प्रयोग करें और प्रयोगमें बरबादी हो तो बरबादी भी करें। बरबादी तो लाजिमी है। श्रीयुत परीखने 'हरिजन' के वर्त्तमान अंकमें जो आँकड़े दिये हैं उनका अच्छी तरहसे अध्ययन करने पर पता चलता है कि किसी ऐसे स्कूलमें भी जहाँ केवल एक ही उद्योगकी शिक्षा दी

जाती हो और जहाँ शिक्षा प्राप्त करनेवाले लड़के बड़ी उम्रके हों, काफी माल बरबाद होता है। उद्योग-धन्धा सिखानेवाला स्कूल विज्ञानके कॉलेजकी तरह प्रयोग करने और साधन-सामग्री बिगाड़नेवाली जगह है। भारत-जैसे सीमित साधनोंवाले देशमें ऐसे स्कूल कमसे-कम खोले जाने चाहिए, बल्कि उतने ही जितने बहुत जरूरी हों। . . .

यह बात कि हम काम सिखाने की गतिको बढ़ा सकते हैं और आज जिस चीजको सीखने में सात वर्ष लगते हैं उसे दो वर्षोंमें ही सिखाया जा सकता है, एक विचित्र भ्रामक धारणा है। . . . बालक जो चीज केवल १६ वर्षकी आयुमें ही सीख सकता है उसे वह ८ वर्षकी आयुमें सीखने का प्रयत्न नहीं कर सकता और उसे करना भी नहीं चाहिए। विदेशी भाषाके कारण विलम्ब होता है, यह बात नहीं है, और न ही हम जितना लोग समझते हैं उतना समय देते हैं। . . .

. . . अच्छा यही है कि हम ऐसी माँग न करें कि स्कूल न केवल व्यक्तियोंको तैयार करें, वरन् माल भी तैयार करें।

सारांशमें, स्कूल समृद्ध और राष्ट्र दिवालिया बने, ऐसी अल्प दृष्टिवाली नीति गलत अर्थव्यवस्था है।

'एक प्रोफेसर'

यह लेख[1] एक प्रसिद्ध विश्वविद्यालयके प्रोफेसरका है। इसके साथके पत्रमें प्रोफेसरके हस्ताक्षर हैं, लेकिन लेखपर नहीं हैं। इसलिए मैं लेखकका नाम नहीं दूँगा। पाठकको लेखकसे नहीं, लेखसे ही तो मतलब है। यह लेख इस बातका असाधारण उदाहरण है कि किसी चीजके बारेमें पहलेसे ही एक निश्चित धारणा बना लेने से मनुष्यका दृष्टिकोण कितना संकुचित हो जाता है। लेखकने मेरी योजनाको समझने का कष्ट ही नहीं उठाया है। वे जब मेरी कल्पनाके स्कूलोंके लड़कोंके साथ लंकाके बगानोंके अर्धगुलाम लड़कोंकी तुलना करते हैं तब वे अपनी बात आप काट देते हैं। वे भूल जाते हैं कि बागानोंके बालकोंके साथ विद्यार्थियोंके-जैसा व्यवहार नहीं किया जाता है। उनकी मजदूरी उनकी शिक्षाका अंग नहीं है। मैं जिन स्कूलोंकी हिमायत करता हूँ उन स्कूलोंमें अंग्रेजीको छोड़कर उन सभी विषयोंकी शिक्षा दी जायेगी जो आज किसी हाई स्कूलमें सिखाये जाते हैं। ऊपरसे कवायद, संगीत, चित्रकला तथा किसी एक धन्धेकी शिक्षा भी दी जायेगी। इन स्कूलोंको 'कारखाने' कहना अनेक तथ्योंको समझने से इनकार करना है। यह तो ठीक वैसा ही है जैसे किसी व्यक्तिने बन्दरके अलावा और कोई प्राणी न देखा हो और चूँकि मनुष्यका वर्णन अंशतः बन्दरसे मिलता है, इसलिए जब उसे मनुष्यका वर्णन पढ़ने को कहा जाये तो वह उससे साफ इनकार कर दे। मैंने अपने प्रस्तावमें जिन परिणामोंका दावा किया है

१. इसके कुछ अंश ही यहाँ दिये गये हैं।

वे सब परिणाम अवश्य निकलेंगे। यदि प्रोफेसर जनताको उनके विरुद्ध चेतावनी देते तो ठीक करते। लेकिन उनका यह चेतावनी देना भी अनावश्यक होता, क्योंकि मैंने स्वयं यह चेतावनी दी है।

मैं स्वीकार करता हूँ कि मेरा सुझाव नया है। लेकिन नयापन कोई अपराध नहीं है। मैं मानता हूँ कि इसके पीछे काफी अनुभव नहीं है। लेकिन मुझे और मेरे सहयोगियोंको जो अनुभव है उसके आधारपर मुझे लगता है कि यदि इस योजना पर पूरी निष्ठाके साथ अमल किया जाये तो यह अवश्य सफल होगा। और यदि यह सफल न हो तो भी इस प्रयोगको करने से राष्ट्रका कोई नुकसान नहीं होनेवाला है। और यदि यह प्रयोग आंशिक रूपसे भी सफल होता है तो उससे बहुत ज्यादा लाभ होगा। इसके अलावा और किसी भी तरीकेसे प्राथमिक शिक्षा मुफ्त, अनिवार्य और प्रभावकारी नहीं बनाई जा सकती। आजकी प्राथमिक शिक्षा निर्विवाद रूपसे एक भ्रम और पाश-रूप है।

श्री नरहरि परीखके आँकड़े जिस हदतक इस योजनाको समर्थन दे सकते हैं उस हदतक देने के लिए लिखे गये हैं। ये आँकड़े अन्तिम नहीं हैं। इनसे प्रोत्साहन मिलता है। इनसे उत्साही व्यक्तिको अच्छी सामग्री प्राप्त होती है। सात वर्ष मेरी योजनाका अनिवार्य अंग नहीं है। हो सकता है कि मेरे द्वारा निर्धारित बौद्धिक स्तरपर पहुँचने के लिए इससे भी ज्यादा समयकी जरूरत हो। शिक्षणका समय बढ़ाने से राष्ट्रका कोई नुकसान नहीं होनेवाला है। मेरी योजनाके आवश्यक अंग निम्नलिखित हैं :

१. सब तरहसे देखते हुए एक या अनेक उद्योग लड़के अथवा लड़कीके सर्वांगीण विकासके लिए सबसे अच्छे साधनोंमें से हैं, और इसलिए सारा पाठ्यक्रम उद्योग-प्रशिक्षणको ध्यानमें रखकर तैयार किया जाना चाहिए।

२. इस कल्पनाके आधारपर दी हुई प्राथमिक शिक्षा कुल मिलाकर स्वावलम्बी होगी, हालाँकि पहले अथवा दूसरे वर्षके भी पाठ्यक्रमम कदाचित् वह पूरी तरह स्वावलम्बी न हो। यहाँ प्राथमिक शिक्षाका अर्थ उस शिक्षासे है जिसका मैंने ऊपर वर्णन किया है।

प्रोफेसर साहबने उद्योगों द्वारा हिसाब तथा अन्य विषयोंकी शिक्षा दी जाने की सम्भावनापर शंका व्यक्त की है। यहाँ वे बिना अनुभव के बोल रहे हैं जबकि मैं अनुभवसे कह सकता हूँ। (ट्रान्सवालमें) टॉल्स्टॉय फार्ममें जिन लड़के व लड़कियोंकी शिक्षाकी जिम्मेदारी मुझपर थी,[१] उनका सर्वांगीण विकास करने में मुझे कोई दिक्कत नहीं हुई। जो शिक्षा वहाँ दी जाती थी उसकी मुख्य विशेषता लगभग आठ घंटेका औद्योगिक प्रशिक्षण थी। उन्हें एक अथवा ज्यादासे-ज्यादा दो घंटे किताबी शिक्षा दी जाती थी। उद्योगमें खोदना, खाना पकाना, पाखाना साफ करना, चप्पल बनाना, सरल बढ़ईगिरी और सन्देश लाना और ले जाना — ये सब काम थे। उसमें छ:

१. देखिए खण्ड ३९, पृ० २५५-६०

वर्षकी आयुसे लेकर १६ वर्षकी आयुतक के लड़के थे। उसके बादसे इस प्रयोगमें और भी वृद्धि हुई है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १८-९-१९३७

१८१. दिल्लीमें अमानुषिकता

जहाँतक गरीब लोगोंका सम्बन्ध है, दिल्लीमें प्रगति बहुत धीमी लगती है। दिल्लीमें मैंने आवास-क्षेत्र देखे, उनमें भंगियोंके आवास-क्षेत्रकी दशा सबसे दयनीय थी। मुझे यह नहीं मालूम कि आज उनकी दशा पहलेसे बेहतर है या नहीं। ठक्कर बापा अब रोड़ी कूटनेवालों की गम्भीर शिकायतोंकी ओर ध्यान दिलाते हैं।[1] इन गरीब लोगोंके श्रमका मूल्य नहीं दिया जाता और हृदयहीन ठेकेदार उनके अज्ञान तथा उनकी निर्धनताका नाजायज फायदा उठाते हैं। वह समय आ गया है कि दिल्लीकी जनता जागे और इस बुराईको दूर करे। यदि ठेकेदार उनसे ठीक व्यवहार नहीं करते तो जनताको चाहिए कि रोड़ी कूटनेवाले मजदूरोंकी हड़ताल करने में मदद करे और उस दौरान उनके लिए उचित धन्धेकी भी व्यवस्था करे। इसमें कोई सन्देह नहीं कि ऐसा अन्तिम कदम उठाने से पहले ठेकेदारोंके साथ बातचीत करना जरूरी होगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १८-९-१९३७

१८२. पत्र : निर्मला गांधीको

सेगाँव, वर्धा

१८ सितम्बर, १९३७

चि० नीमु,

तेरा दूसरा पत्र मिला। पण्डितजी आते हैं तो तुझे क्या सिखाते हैं? क्या तुझे लिखने और पढ़ने का काम भी देते हैं? वहाँकी आबोहवा तुझे कैसी लगती है? तेरे पास अब कितना पैसा है? जब जैसी जरूरत हो मँगा लेना। शायद बेहतर तो यह होगा कि मैं तुझे अलगसे ही पैसे भेजा करूँ। वहाँ यदि तुझे कोई काम मिल सकता हो तो कर लेना। यथासम्भव जितनी उपयोगी बन सके उतनी बनना। तू वहाँ सबके साथ घुलमिल तो गई होगी, क्योंकि तू मिलनसार तो है ही। आशा है, सुमित्रा[2] किसीको परेशान नहीं करती होगी। आचार्य महोदय

१. लेख यहाँ नहीं दिया गया है।

२. निर्मला गांधीकी ज्येष्ठ कन्या।

तुझे खुद ही अंग्रेजी पढ़ाते हैं, यह बहुत ही अच्छा चिह्न है। अपने कब्जकी बात विद्यावतीको भी बता देना।

कानम मौज कर रहा है।

फिलहाल गोशीबहन[1] और पेरीनबहन[2] यहीं हैं। वह उनसे घुलमिल गया है। गोशीबहन उसे कहानियाँ सुनाती है। और यदि उसे कहानियाँ सुनाई जायें तो उसे और कुछ नहीं चाहिए। कहानियाँ, फुटबाल और पतंग, यही उसकी खरी शिक्षा है। बाकी पढ़ाई तो चलती ही रहती है। किन्तु यदि उसे पढ़ाईमें कहानियों-जितना रस न आये तो इसे मैं शिक्षककी कमजोरी मानता हूँ। किन्तु शिक्षक तो उतना ही देगा न जितना उसके पास होगा?

वहाँ बड़ीसे-बड़ी लड़कियोंकी आयु कितनी है? उन्होंने तुझे वहाँ प्रवेश दिया, यह भी क्या अपवाद ही माना जाता है? क्या वहाँ कोई स्त्री शिक्षिका भी है या सभी पुरुष शिक्षक हैं?

वहाँके अमरूद और बेर प्रसिद्ध हैं। तू दोनोंको बारी-बारीसे औषधके तौरपर खाकर देखना। शायद इससे तेरे कब्जकी समस्या हल हो जाये। सरस्वतीबहनकी सिखावनोंपर यथासम्भव ध्यान देना।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजरातीसे : निर्मला गांधी पेपर्स। सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१८३. पत्र : महादेव देसाईको

सेगाँव, वर्धा
१८ सितम्बर, १९३७

चि० महादेव,

लीलावतीका रोग कुछ लम्बा हो गया जान पड़ता है। हलका-हलका बुखार उसका पीछा ही नहीं छोड़ता। लेकिन उसका शरीर लोहे-जैसा है, इसलिए वह चलती-फिरती रहती है। उसपर अंकुश रखना। खानेमें भी काफी परहेज रखा जाना है। डाक्टर जब आये तब जाँच करने के साधन भी साथ लेता आये। न केवल टॉन्सिल पर बल्कि दाईं ओर भी धब्बा-सा दिखाई देता है। वह तो टॉन्सिल काटने के बाद भी रहेगा न? इसलिए टॉन्सिलके बाहरके धब्बेको दूर करने का भी कोई उपाय होना चाहिए। इस रोगके बारेमें छोटालालको लिखना। यदि उसे कोई इलाज सूझे तो लिखे। और अमतुस्सलामके बारेमें भी लिखना; उसे दमा और खाँसी होती है, कब्ज तो है ही। इसके लिए भी यदि वहाँ बैठे-बैठे कोई इलाज बताया जा सकता हो तो

१. और २. गोशीबहन कैप्टेन और पेरीनबहन कैप्टेन, दादाभाई नौरोजीकी पौत्रियाँ।

वह बताये। उसने होम्योपैथसे इलाज करवाया था; वैद्यकी दवा तो अब भी चल रही है। लेकिन उससे कोई निश्चित रूपसे लाभ नहीं हुआ है। कह सकते हैं कि काम चल रहा है।

मेरे बारेमें [छोटालालको] लिखना कि उसके कहन के मुताबिक चार दिनोंसे मैं दो पुड़िया रोज ले रहा हूँ। आज चौथा दिन है। कलसे पाँच दिनों तक एक-एक पुड़िया लूँगा। उसके बाद यदि वह खुराकके बारेमें कुछ सुझाव देना चाहे तो दे। उससे तुम यह भी कह सकते हो कि उसकी दवा शुरू करने के बाद से मेरी खुराक कम हो गई है। कह सकते हैं, दूधकी मात्रा आधी रह गई है। रोटी भी नहीं खा पाता। दवा शुरू करने से पहले मैं रोटी और 'गोल पापड़ी'[1] के रूपमें गेहूँ ठीक प्रमाणमें ले पाता था। अब यह खानेकी क्षमता नहीं रही; इसका मुझे दुःख नहीं है, लेकिन छोटालालको यह बात मालूम तो होनी ही चाहिए।

तुम्हारी डाक मिल गई है। इस समय तो मैं चार-पाँच लोगोंके बीचमें हूँ। अपनी तबीयत जल्दी ठीक कर लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५६६)से।

१८४. विरोध ताड़ीका नहीं, ताड़ीकी शराबका[2]

अहमदाबादसे एक पारसी सज्जन लिखते हैं:

मैं खुद शराब या ताड़ीका व्यापार नहीं करता, और इन चीजोंका उपयोग भी नहीं करता। मैं मांसाहारी भी नहीं हूँ। १८९६ से मैं शाकाहारी हूँ। अब मेरी उम्र ६७-६८ वर्षकी है। अतः मैं अपना खुदका अनुभव बताता हूँ। कुदरतमें कोई भी चीज अनुपयोगी नहीं है। मैं शराब न तो पीता हूँ, न मुझे उसकी आदत है; पर कभी अगर बतौर दवाके आधा औंस लेने की जरूरत पड़ जाये तो ले लेता हूँ। किन्तु इधर एक लाभ होता है तो उधर दिमाग घूमने लग जाता है, इसलिए फौरन बन्द कर देता हूँ। इसमें तो शक नहीं कि शराब-बन्दी हो जाने से श्रमजीवी-वर्गकी आयु बढ़ जायेगी, पर जो पैसा उनके पास बचेगा वह व्यभिचार, नाटक, सिनेमा आदिपर खर्च होगा, अथवा वे आलसी बनकर अपने कुटुम्बको भी आलस्यमें फँसायेंगे, या फिर चोरी-छिपे शराब बनाने का रास्ता अख्तियार करेंगे।

१. एक प्रकारकी मिठाई।
२. इसका अंग्रेजी अनुवाद ९-१०-१९३७ के **हरिजन**, में प्रकाशित हुआ था।

१. ताड़ी एक निर्दोष पेय है; हालाँकि धूपमें गर्म होने से (बीयर की तरह) वह सहजमें नशीली हो जाती है।

२. गर्मीके मरीजको, बतौर दवाके देने से गर्मीकी बीमारी दूर हो जाती है।

३. ताड़ी खमीरकी जगह काममें आती है। डबल रोटी, बिस्कुट और गेहूँकी रोटीमें बतौर खमीरके ताड़ीका उपयोग होता है, और खमीरके पकवान बनते हैं।

४. ताड़ीसे पेटका कब्ज दूर होकर आँतें साधारणतया साफ हो जाती हैं।

५. ताड़ीका सिरका बनता है, जो अचार और खाने-पीने की दूसरी चीजोंमें भी काम आ सकता है।

दुर्भाग्यकी बात यह है कि शुद्ध ताड़ी आज कहीं भी नहीं बिकती। ईमानदारीके साथ व्यापार करना किसीको पुसाता ही नहीं। आज ताड़ीके जितने व्यापारी हैं वे अपने पापी पेटको किसी तरह पाल रहे हैं और साहूकारोंके सभी कर्जदार हैं। आजकल ताड़ीके पेड़ोंपर सरकारी कर, दुकानका किराया और आबकारी महकमेके जुल्म इतने ज्यादा है कि ताड़ीमें पानी, सेकरीन, अफीम आदि नशीली चीजें और दूसरी दवाइयाँ, जो धीरे-धीरे असर करनेवाले जहरका काम करती हैं, मिलाई जाती हैं। यह हालत भारी करोंके कारण है, और इसका शिकार बनना पड़ता है बेचारे गरीब आदमियोंको। इसका उपाय सिर्फ एक ही है, और वह यह कि सरकारी कर हटाकर ऐसी सुविधा कर दी जाये कि गरीब आदमी दो पैसेकी बोतल खरीदकर निर्दोष पेयका फायदा उठा सकें। एक तो शराबबन्दीसे लोग ताड़ी पीने लगेंगे; और ताड़ीपर कर न होने से किसानोंमें प्रतिस्पर्धा शुरू हो जायेगी और इससे सस्ती और शुद्ध ताड़ी मिलने का मार्ग खुल जायेगा। आबकारी कर जब तमाम ताड़ीसे हट जायेगा तभी कोई रास्ता मिलेगा। ६० वर्ष पहले ताड़ीके पेड़ोंपर बिलकुल कर नहीं था। किसी भी किस्मका जाब्ता नहीं था। इसके बाद कर लगने लगा। उसका कारण यह है:

आबकारी कमिश्नर एक यूरोपीय था। उसका और महुएकी शराब बनानेवाले ठेकेदारमें बाप-बेटे-जैसा रिश्ता था; और वह ठेकेदार था सूरत जिलेका। अतः उसने शराबकी खपत बढ़ाने के लिए निर्दोष पेय पर फी पेड़ १ रुपयेका कर लगा दिया; जो बढ़ते-बढ़ते अब ४-५ रुपये तक पहुँच गया है। . . .

उस समय सूरत जिलेके कलक्टर मि० लेली थे। आजमाइश करके उन्होंने देखा तो उन्हें यह विश्वास हो गया कि ताड़ीसे तो गरीब मजदूर-वर्गकी खुराक का काम निकलता है। इसलिए मि० लेलीने आबकारी कमिश्नरको अपनी रिपोर्ट ताड़ीके पक्षमें लिख भेजी। पर जहाँ अधिकारियोंके बीच बाप-बेटेका

रिश्ता हो, वहाँ भला किसी भलाईकी आशा की जा सकती है। इस 'रिकार्ड' को खोजा जाये तो बहुत-कुछ कामकी बातें निकलेंगी। ताड़ी स्वास्थ्यके लिए हानिकारक तो निश्चय ही नहीं है; क्योंकि इसमें पेड़के कुछ प्राकृतिक क्षार ऐसे होते हैं, जो शरीरकी रचनाके लिए आवश्यक हैं। यह राय मैंने एक अच्छे, होशियार डॉक्टरकी जबानी सुनी है और यदि आप चाहें तो शुद्ध ताड़ीका पृथक्करण कराकर तसल्ली कर सकते हैं।

शराब और ताड़ी पर तो प्रतिबन्ध लगा दिया जायेगा, पर भाँग, गाँजा, अफीम, चरस वगैरह मादक चीजें इससे मुक्त रहेंगी तो जनता इससे यह सोचेगी कि हिन्दू व्यापारियोंको छूट देकर पारसियोंके लिए ही ये प्रतिबन्ध लगाये गये हैं। इसलिए मुझे तो यह लगता है कि सभी नशीली चीजोंको एक साथ बन्द कीजिए, या फिर बतौर प्रयोगके एक-के-बाद-एकको लीजिए।

मैं एक बेवकूफ शेखचिल्ली-जैसा हूँ। इसीसे अपने गलत या सही विचारों को आपके आगे रखने की हिम्मत कर रहा हूँ, और अपनी इस बेवकूफीके लिए आपसे क्षमा चाहता हूँ।

तम्बाकू-बीड़ीका व्यसन इतना ज्यादा बढ़ता जा रहा है कि दिन-प्रति-दिन १२-१५ सालके नादान लड़के भी बीड़ी पीने लगे हैं। इस व्यसनपर अगर प्रतिबन्ध लगा दिया जाये तो देश और जनताको अनेक लाभ हों। यह व्यसन क्षय-रोग का मूल है। यह चीज आयुको कम करती है। हिन्दुस्तानकी आबादी ३६ करोड़की कही जाती है। इसका तीसरा हिस्सा अगर बीड़ी पीता हो, और १२ करोड़ आदमी इस चीजका उपयोग करते हों, तो इस प्रतिबन्धसे सालमें लगभग सवासे डेढ़ अरब रुपये तककी रकम बच सकती है। यदि एक आदमी रोज केवल दो पैसे बीड़ीपर खर्च करता है, तो तीस दिनमें एक रुपया बच सकता है, और सालमें १२ रुपये बचें तो बारह करोड़ आदमी कितना रुपया बचा सकते हैं, क्या यह विचारणीय प्रश्न नहीं है? यदि तम्बाकूकी खेती ही न हो, और दिसावरसे भी इसका आना बन्द हो जाये तो सोचिए कि देश कितना शक्तिशाली बन जायेगा, और गाँवोंके लोग अपने बच्चोंकी शिक्षाका भार आसानीसे उठा सकेंगे। लोगोंका स्वास्थ्य सुधरने लगेगा, और अग्नि-जैसी पवित्र चीज, जो परवरदिगारका नूर — प्रतिबिम्ब — है, अपवित्र होने से बच जाये, और हमारे ऊपर खुदाका आशीर्वाद बरसने लग जाये।

शहरकी ताड़ीकी तमाम दुकानें बन्द कर देने से जो बगैर ताड़ीके रह ही नहीं सकते, वे आसपासके किसी गाँवमें जाकर ताड़ी पीने की अपनी उत्कट इच्छा पूरी कर लेंगे; इससे शहरका पैसा गाँवोंमें जायेगा, और गाँवोंके लोग इससे समर्थ बनेंगे। . . .

मैंने आपका बहुत कीमती वक्त ले लिया है, जिसके लिए मैं आपसे माफी चाहता हूँ; और मालिकके दरवाजेपर यह दुआ माँगता हूँ कि आप तन्दुरुस्तीके साथ खूब लम्बी उम्र पायें, और हिन्दुस्तानकी कंगालीको दूर करें।

इस तरहके पत्र अन्य भले पारसी भाइयोंकी ओरसे भी आते रहते हैं। आश्चर्य है कि ऐसी दलील पारसी भाइयोंकी तरफसे ही आती है। सम्भव है, दूसरोंको भी ऐसी दलील सूझती हो; लेकिन पारसी भाइयोंके साथ मेरा अत्यन्त प्रगाढ़ सम्बन्ध है, इसलिए वे मुझे अपना मानकर अपने मनके चाहे जो भी विचार लिखने की छूट ले लेते हैं। ऐसा करने का उन्हें अधिकार भी है और यह मुझे अच्छा लगता है। इन भाईकी दलील म जितने तथ्य हैं वे सब मेरे सुझाये प्रयोगपर लागू नहीं होते। ये भाई शराब नहीं पीते, ऐसा वे नहीं कह सकते, क्योंकि दवाके तौरपर वे पीते हैं। दवाकी तरह पीने की छूट मेरी योजनामें भी रखी गई है। इतना अन्तर अवश्य है कि दवा की तरह शराब कब पीनी चाहिए, इसका निर्णय ये स्वयं करते हैं; जबकि सामान्य दवाएँ पीने का अधिकार आदमी अपने हाथमें नहीं रखता, बल्कि वैद्य या हकीमसे पूछकर उसके बताये गये प्रमाणमें पीता है। ऐसा ही शराबके विषयमें भी होना चाहिए। ये भाई अपने स्वास्थ्यकी स्थितिको भले ही समझ सकते हों, उसपर उन्होंने अपना नियन्त्रण भले कायम कर लिया हो, लेकिन हर आदमी ऐसा नहीं कर सकता। अगर हरएक आदमीसे अपनी दवा आप कर लेने को कहा जाये तो इसका दुष्परिणाम निकले बिना नहीं रहेगा।

इन पत्र-लेखक भाईने ताड़ीके बहुत-से गुण और उपयोग बताये हैं। ये सभी गुण और उपयोग सही सिद्ध किये जा सकते हैं या नहीं, इस सम्बन्धमें मुझे अपनी राय देने की जरूरत नहीं है। लेकिन ताड़ीमें गुण हैं और उसका उपयोग है, यह बात मैंने मान ली है। ताड़ी-मात्र पर प्रतिबन्ध लगाने की बात नहीं है। मैंने जो प्रतिबन्ध सुझाये हैं वे शराब, दारू आदि नशीले पेयोंके सम्बन्धमें हैं; और दारू तो जिस प्रकार गन्नेके रसमें से निकल सकती है, जैसे निकाली जाती है, अंगूरमें से निकलती है, सेवमें से निकलती है, उसी प्रकार ताड़ीमें से भी निकलती है। जो नशीली नहीं है, ऐसी ताजी ताड़ी सब पियें, इस बारे में तो मुझे कुछ कहना ही नहीं है। मैं मानता हूँ कि इस ताड़ीमें कुछ गुण अवश्य हैं। खजूरकी ताड़ीका गुड़ और उसका शरबत मैंने खाया-पिया है और बेझिझक दूसरोंको भी दिया है। पूरे हिन्दुस्तानमें इसे खाने-पीनेकी छूट है। उसपर कहीं कोई प्रतिबन्ध नहीं है। अगले मौसममें २५० खजूरोंसे ताड़ी निकालकर अच्छेसे-अच्छा गुड़ बनाने की आशा मैं मनमें सँजोये हुए हूँ। ज्यों-ज्यों मैं शोध करता जाता हूँ, त्यों-त्यों मुझे इस बातके प्रमाण मिलते जाते हैं कि ताड़ीके सदुपयोगकी ओर जनताका ध्यान खींचा ही नहीं गया, क्योंकि ताड़ीको शराब मानकर उसकी निन्दा ही की जाती रही है। एटलांटिक महासागर में पुर्तगालियोंके शासनमें मदिरा नामका जो द्वीप है वहाँ अंगूरोंका भी यही हाल हुआ है। घर-घर अंगूरकी बेलें हैं और घर-घर शराब बनती है। इसलिए वहाँ यह

माना जाता है कि अंगूरका रस शराब ही है। यह शब्द इतना बदनाम हो गया है कि हमने अपनी भाषामें भी उसे उसी रूपमें ले लिया है और "मदिरा" का अर्थ शराब करते हैं।[1] ताड़ी भी इसी तरह बदनाम हो गई है। पिछले सत्याग्रहके दौरान इसकी निन्दा करने में खुद मैंने भी कुछ कम भाग नहीं लिया।[2] पत्र-लेखक भाई मान सकते हैं कि अब जनता को ताड़ीकी शुद्ध पहचान करवाकर ताड़ीमें से मदिरा-तत्त्वको अलग निकालकर मैं प्रायश्चित्त कर रहा हूँ। और अगर शराबके धन्धेमें लगे पारसी भाई उसमें से निकल कर ताड़ीका उद्धार करें तो वास्तवमें वे अपना उद्धार करेंगे और देशकी भारी सेवा करेंगे। बम्बई-क्षेत्रके लिए यह कितना अच्छा सुयोग है कि मद्यनिषेधका काम एक विख्यात पारसी डाक्टरके हाथोंमें आ गया है!

अब ये भाई समझ गये होंगे कि मद्यनिषेधकी मुहिम छेड़कर मैं पारसी समाज का नुकसान करने की इच्छा नहीं रखता। मेरा विरोध जितना मदिराके प्रति है उतना ही अफीम, गाँजा और सभी नशीली चीजोंके प्रति है। और पारसियोंकी प्रवृत्तिके खास विषय ताड़ीके खिलाफ तो मेरी लड़ाई बिलकुल नहीं है। ताड़ीसे निकाली जाने-वाली दारू, अर्थात् उसके दुरुपयोगसे मेरा विरोध है और इसमें तो ये वृद्ध पारसी भाई भी मेरा साथ देते जान पड़ते हैं।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १९-९-१९३७

१८५. राष्ट्रीय शिक्षकोंसे

जो शिक्षक किसी भी प्रकारकी राष्ट्रीय शिक्षण संस्थाओंका संचालन कर रहे हैं, उन शिक्षकोंको मेरा यह सुझाव है कि मैं आजकल प्राथमिक शिक्षाके बारेमें जो लिख रहा हूँ[3] यदि वह उनके गले उतरा हो तो वे उसपर यथाशक्ति अमल करें, किस हदतक अमल कर पाये हैं इसका बाकायदा हिसाब रखें और अपने अनुभव मुझे लिख भजें। जो शिक्षक मेरे द्वारा सुझाई पद्धतिके अनुसार शाला चलाने के लिए तैयार हों, जो इस समय खाली हों अथवा जो दूसरा काम तो करते हों लेकिन उसे छोड़कर शाला चलाने को तत्पर हों, वे मेरे साथ पत्र-व्यवहार करें।

मेरी मान्यता यह है कि प्राथमिक शालाको आत्म-निर्भर बनाने की दिशामें सबसे पहले जिस उद्योगपर हमारी दृष्टि जाती है वह कताई आदि है। इसमें रुई चुनने से लेकर रंग-बिरंगी डिजाइनवाली खादी बनाने तककी सभी क्रियाएँ शामिल हैं। इसमें मजदूरी कमसे-कम दो पैसे प्रति घण्टेके हिसाबसे मानी जानी चाहिए। शाला पाँच

१. यहाँ गांधीजी ने 'मदिरा' शब्दकी अनोखी व्युत्पत्ति बताई है। वास्तवमें यह शब्द 'मद' से निकला है।

२. सन् १९३० का नमक सत्याग्रह, देखिए खण्ड ४३ पृ० १८८ और ३८७-८८।

३. देखिए पृ० १३६-३८। खण्ड ६५, तथा पृ० ४३८-४० भी।

घण्टे चले, उसमें चार घण्टे मजदूरीके होने चाहिए और बाकीके एक घण्टेमें जो उद्योग सिखाया जाता हो उसका तात्त्विक ज्ञान और अन्य विषयोंकी —— जो उद्योग सिखाते समय न सिखाये जा सकते हों —— शिक्षा दी जानी चाहिए। उद्योगकी शिक्षा देते समय आंशिक अथवा पूरी-पूरी शिक्षा —— इतिहास, भूगोल और गणितशास्त्रकी भी —— दी जायेगी। भाषा-विषयक ज्ञान और उसके अन्तर्गत व्याकरण तथा शुद्ध उच्चारणका समावेश तो होगा ही; क्योंकि शिक्षक इन समस्त विषयोंका ज्ञान देने का माध्यम उद्योगको मानेगा और बच्चोंको ठीक ढंगसे बोलना सिखायेगा और इस तरह वह सहज ही बच्चोंको व्याकरण सिखायेगा। बच्चोंको पहलेसे ही गिनती आनी चाहिए। इसलिए श्रीगणेश गणितसे होगा। सुघड़ता कोई अलग विषय नहीं होगा। बच्चोंके प्रत्येक कार्यमें सुघड़ता तो होनी ही चाहिए। उनका शालामें प्रवेश ही सुघड़तासे होगा। अतएव इस समय मेरी कल्पनामें एक भी ऐसा विषय नहीं आता कि जो बच्चोंको उद्योगकी शिक्षा देते समय सिखाया न जा सकता हो।

मेरी यह कल्पना अवश्य है कि जिस तरह मैंने सिखाये जानेवाले विषयोंको अलहदा नहीं गिना है, बल्कि सबको परस्पर एक-दूसरेसे सम्बद्ध माना है और यह माना है कि सब विषयोंकी उत्पत्तिका स्रोत एक ही है, उसी तरह मेरे खयालसे इन विषयोंको सिखानेवाला शिक्षक भी एक ही होना चाहिए। अलग-अलग विषयके लिए अलग-अलग शिक्षक नहीं बल्कि एक ही शिक्षक होना चाहिए। कक्षाओंके हिसाबसे शिक्षक अलग-अलग हो सकते हैं। अर्थात् यदि सात कक्षाएँ हों तो सात शिक्षक हों। एक शिक्षकके पास २५ से अधिक बच्चे नहीं होने चाहिए। यदि शिक्षा अनिवार्य हो तो मैं समझता हूँ कि आरम्भसे ही लड़के और लड़कियोंकी अलग-अलग कक्षाएँ होना जरूरी है। क्योंकि अन्ततः हर किसीको एक ही उद्योग नहीं सीखना है, इसलिए यदि आरम्भसे ही अलग कक्षाएँ हों तो उससे अधिक सुविधा होगी, ऐसी मेरी मान्यता है।

इस पद्धतिमें, घण्टोंमें, शिक्षकोंकी संख्यामें और विषयोंके चयनमें सुधारकी गुंजा-इश हो सकती है; लेकिन जिन सिद्धान्तोंके आधारपर ऐसी शाला चलाई जायेगी उन सिद्धान्तोंको स्थायी समझकर ही मेरी कल्पनाकी शाला चल सकती है। फिलहाल भले ही इन सिद्धान्तोंपर अमल करने का कोई निश्चित परिणाम न निकला हो लेकिन जो मन्त्री ऐसी शिक्षा आरम्भ करना चाहता है, उसके मनमें सिद्धान्तोंके प्रति श्रद्धा होनी ही चाहिए। और चूँकि यह श्रद्धा बुद्धिपर आधारित है इसलिए यह अन्धश्रद्धा न होकर ज्ञानमय होनी चाहिए। ये सिद्धान्त दो हैं: (१) शिक्षाका माध्यम कोई भी ग्रामोपयोगी उद्योग होना चाहिए, और (२) शिक्षा समग्र रूपसे स्वावलम्बी होनी चाहिए। तात्पर्य यह कि पहलेके एक-दो वर्षोंमें वह भले ही स्वावलम्बी न हो लेकिन सात वर्षके अन्तमें आमदनी और खर्च समान होने चाहिए। मैंने इस शिक्षाके सात वर्ष माने हैं, इसमें अवधिको कम-ज्यादा किया जा सकता है।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १९-९-१९३७

१८६. पत्र : अमृतकौरको[1]

सेगाँव
१९ सितम्बर, १९३७

आज तुमको स्वयं ही लिखने की आशा की थी किन्तु नींदके कारण ऐसा करना असम्भव हो गया। वाइसराय महोदयके पत्रकी भाषा कूटनीतिक और कपटपूर्ण है, और तुम्हारी बिलकुल खरी और सुस्पष्ट।

बर्फ-चिकित्साका क्या रहा?

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८१०) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९६६से भी

१८७. पत्र : निर्मला गांधीको

सेगाँव, वर्धा
१९ सितम्बर, १९३७

चि० नीमु,

ऊषाके[2] सम्बन्धमें तेरा पत्र चौंकानेवाला है। हम लोगोंमें बीमारीको देह धरेका दण्ड कहा जाता है। यह शब्द कितना अधिक उपयुक्त है। क्योंकि ऐसा देह धरेका दण्ड भुगतने पर ही निस्तार है। अब तू अधीर मत होना, चिन्ता मत करना। अपने काममें लगी रहना। सच कहा जाये तो तूने विद्यार्थीका जीवन कभी बिताया ही नहीं। तूने जो-कुछ बचपनमें सीखा, उसे वास्तवमें विद्यार्थी-जीवन नहीं माना जा सकता। जब मनुष्य किसी काममें इच्छापूर्वक जुट जाता है तभी यह कहा जा सकता है कि वह वैसा जीवन बिता रहा है। उदाहरण के लिए — सेवाके लिए जीवन, विद्यार्थी-जीवन, भोगके लिए जीवन, धन [कमाने] के लिए जीवन। इन मामलोंमें सेवा, विद्या, भोग और धन ही जीवनका उद्देश्य बन जाता है। और इनके कारण अन्य वस्तुओंका त्याग कर दिया जाता है। इस दृष्टिकोणसे जब तूने विद्यार्थी-जीवन अपनाया

१. ये पंक्तियाँ मीराबहन द्वारा अमृतकौरको लिखे पत्रके अन्तमें लिखी गई थीं।
२. निर्मला गांधीकी सबसे छोटी कन्या।

है तो तुझे ऊषाको भूल जाना चाहिए, सरिताको[1] भूल जाना चाहिए, रामदासको भूल जाना चाहिए और मुझे भूल जाना चाहिए। एकमात्र विद्या (अध्ययन)को नहीं भूलना चाहिए। इसका नाम अनासक्तियोग है। तूने एक वर्षके लिए विद्यार्थी-जीवन अपनाया है, इसलिए बाकी सब भूल जाना।

ऊषाकी खबर मैं लूँगा और सरिताको पत्र भी लिखूँगा। आज तो रविवार है, इसलिए मैं तार नहीं भेज रहा हूँ। कल तार दूँगा और नवनीतको पत्र भी लिखूँगा। जैसे रामदास दक्षिण आफ्रिकासे भागा-भागा ऊषाके पास नहीं आ सकता उसी प्रकार तू भी वहाँसे भाग नहीं सकती। जीवन-मरण ईश्वरके हाथमें है। यदि ऊषाके भाग्य में जीवित रहना बदा होगा तो वह जल्दी ही अच्छी हो जायेगी। यदि तू चाहे और सरिता सहमत हो तो ऊषाकी जिम्मेवारी लेने को मैं तैयार हूँ। बा तो यहाँ है ही। अमतुस्सलाम भी यहीं है। यदि उसे ऐसी सेवा करने का सुअवसर मिल जाये तो समझो कि उसकी पाँचों घी में। अमतुस्सलामकी स्वीकृति लेकर ही मैं यह लिख रहा हूँ। उपचारके बारेमें भी जितना मैं जानता हूँ उतना सरिताको लिख रहा हूँ। यदि तू स्वयं वहाँ होती भी तो उसका आज जैसा उपचार चल रहा है उससे अधिक भला तू क्या कर पाती? उसे अपने पास बुलाने का मतलब यह नहीं है कि उसकी यहाँ बेहतर देखभाल होगी। हाँ इसके पीछे यह विचार अवश्य है कि लखतरकी अपेक्षा यहाँ वैद्य-डाक्टरकी बेहतर सलाह मिल सकती है। अन्य प्रकारके सुझाव भी यहाँ बेहतर मिल सकते हैं और इस तरहकी कुछ व्याधियोंके बारेमें मैं भी काफी कुछ जानता हूँ। . . .[2]

गुजरातीकी नकलसे: निर्मला गांधी पेपर्स। सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१८८. पत्र: अमृतकौरको

सेगाँव
२० सितम्बर, १९३७

मूर्खा रानी,

मैंने हठपूर्वक दायें हाथसे लिखा है। दस मिनटमें प्रार्थना आरम्भ होगी और मौन टूटेगा। फिर अगले सोमवार तक दायें हाथसे लिखना बन्द।

मीराने तुम्हें मेरे जो समाचार दिये हैं उससे अधिक और कुछ नहीं है।

आशा है, महिलाओंके साथ तुम्हारी मुलाकात अच्छी रही होगी। तुम धनवानोंका बिलकुल त्याग नहीं कर सकती। तुम्हें उनको अपने साथ ले चलने की भरसक कोशिश करनी होगी। तुममें अपार धीरज होना चाहिए।

१. निर्मला गांधीकी माँ।
२. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ अंश छूटा हुआ है।

चार्लीसे कहो कि उन्हें नियमित दिनचर्या और खानेमें सादगी रखनी होगी। अगर वे फिलस्तीनकी समस्याका भार अपने ऊपर लेना चाहते हैं तो उन्हें फिरसे बीमार नहीं पड़ना चाहिए। उनका धनोपार्जनके उद्देश्यसे लेखन-कार्य करना उचित नहीं है। मनमें पैसेकी कामना न होने पर भी यदि कार्य करने के बाद छोटे-मोटे उपहार मिलें तो उन्हें स्वीकार कर लेना और बात है, किन्तु अर्थ-लाभके निमित्त लेखन-कार्य मुझे बहुत अनुचित लगता है। यदि वे अध्यापक होते और स्कूलोंके लिए पाठ्य पुस्तकें लिखते तो और बात होती। उस प्रकारके श्रमका पारिश्रमिक लेना उचित है, परन्तु किसी मौलिक रचना, उदाहरणार्थ 'इंडियन फाइट फॉर फ्रीडम' या 'लाइफ ऑफ जीसस'[1] के लिए पैसे लेना उचित नहीं है।

तुमने अपने एक्जीमाके विषयमें कुछ नहीं लिखा है।

बेचारी शारदाकी छोटी आँतोंमें शायद घाव (अलसर) है, परन्तु वह ठीक है और काफी बहादुर है। उसके पिता यहाँ आये हुए हैं और बुखारमें पड़े हुए हैं। लीलावतीकी दशामें सुधार है। बा भी पहलेसे ठीक है, हालाँकि अभी लँगड़ाती है। बालकृष्ण पहले-जैसा ही है। बत्रा पंजाबमें है।

मैं जो दवाई ले रहा हूँ वह कोई पेटेन्ट दवा नहीं है। बाजारमें बिकनेवाली सुपरिचित जड़ी है, जिसे धूपमें सुखाया गया है। यदि मैं नीमकी पत्ती या छाल खा सकता हूँ तो कोई और कड़वी जड़ी खाने में क्या हर्ज है? यदि यह नुकसानदेह है तो उसी हदतक जिस हदतक कि अरंडीका बीज हो सकता है। अतएव मेरे दवा लेने पर तुम चिन्तित न होना। मैं सावधान हूँ।

नबीबख्शसे मेरा प्यार कहना। अबतक तो उसे वापस आ जाना चाहिए।

मौसम अचानक गर्म हो गया है। शायद भारी वर्षा हो।

अखिल भारतीय चरखा संघ और अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघकी यहाँ बैठक हुई। बैठक अच्छी रही।

उर्दूके अंक सुविधाजनक हैं। विद्रोहिणी मेरा कितना खयाल रखती है! इतना अच्छी तरह सीख लूँ तब औरके लिए कहूँगा। औजारोंके हिन्दी नामोंकी भेजी हुई तुम्हारी सूचीको मैंने जिस यत्नसे सँभालकर रखा है, इसे भी वैसे ही रखूँगा।

स्नेह।

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६१२) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६४२१ से भी

१. सी० एफ० एन्ड्रयूजने अपने जीवनके अन्तिम दिनोंमें यह पुस्तक लिखना आरम्भ किया था, पर वे इसे पूरा नहीं कर पाये।

१८९. पत्र: महादेव देसाईको

सेगाँव
२० सितम्बर, १९३७

चि० महादेव,

तुम्हारे लिफाफेपर यह लिखा हुआ है: "डाह्याभाईके पास सुमित्राको भेजें"। मैं सोचमें पड़ गया। बादमें यह मान लिया कि तुम इसे काटना भूल गये हो। लिफाफा वापस भेज रहा हूँ; इसे देखना। यह तो मैंने विनोद करने की खातिर लिखा है।

तुम्हारी टिप्पणियाँ संक्षिप्त होनी चाहिए। उदाहरणके तौरपर तुम गुलजारीलाल की टिप्पणीको संक्षिप्त कर सकते थे; और टिप्पणियाँ भी इसी तरह। मैंने तो आज यही काम किया है। यह तुम देख सकोगे। यदि हम ऐसा नहीं करते तो फिर चाहे हम कितने ही पन्ने क्यों न भर डालें, हम अपना काम पूरा नहीं कर पायेंगे। जैसे-जैसे विषयोंकी संख्यामें वृद्धि होती जाती है वैसे-वैसे हममें [उनको] संक्षिप्त बनाने की शक्तिका भी पर्याप्त विकास होना चाहिए।

चें० के अवतरणोंको प्रकाशित नहीं किया जा सकता। वापस तो भेज ही रहा हूँ। पहला भाग ठीक है लेकिन हमारे कामका नहीं है। हमें इस देशसे सम्बन्धित साहित्य तैयार करना होगा। दूसरा भाग बिना सोचे-समझे संकलित किया गया है। हमारे सम्मुख कर बढ़ाकर मद्यनिषेधको सफल बनाने की समस्या नहीं है। हमें तो वह आय ही नहीं चाहिए। मुझे शाहके मामलेको तो हाथमें लेना ही पड़ा, क्योंकि वे कुछ हदतक सहमत तो थे।

मेरा ख्याल है कि 'आनन्दमठ'[1] का हिन्दी अनुवाद उपलब्ध है। सम्भव है, अच्छा गुजराती अनुवाद भी हो। यदि हो तो एक प्रति प्राप्त करना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

चेंडीका लेख वापस भेज देना। इसमें से क्या तुमने एम० [सी०] राजाका नाम निकाल दिया है? मैं कुछ और हेरफेर भी करना चाहता हूँ।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५७०)से।

१. बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय कृत बंगला उपन्यास जिसमें 'वन्देमातरम्' गान भी है।

१९०. पत्र : ई० एम० एस० नम्बूद्रिपादको[1]

सेगाँव, वर्धा
२१ सितम्बर, १९३७

भाई नम्बूद्रिपाद,

आपका पत्र मिला। आपने ठीक किया कि मुख्य मन्त्रीको पत्र लिखा, लेकिन उससे पहले आपको पुलिस-अधिकारियोंको लिखना चाहिए था और इस तरह क्रमशः आगे बढ़ना चाहिए था। ऐसी आशा मत रखिए कि ऊपरसे नीचे तक सभी श्रेणीके स्थायी सरकारी नौकर बिलकुल साधु बन गये हैं। और आप ऐसा क्यों कहते हैं कि आप कांग्रेसी मन्त्रियोंके बुरे कामोंकी भी निन्दा नहीं कर सकते? मेरे विचारसे तो किसी भी कांग्रेसीको न केवल यह अधिकार है बल्कि यह उसका कर्त्तव्य है कि वह बड़ेसे-बड़े कांग्रेसी पदाधिकारियोंके कार्योंकी खुलेआम आलोचना करे। हाँ, आलोचना शिष्ट और पूर्ण तथ्योंपर आधारित होनी चाहिए।

हृदयके आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत ई० एम० एस० नम्बूद्रिपाद
पोस्ट चेरूकारा, बरास्ता शोरानूर
दक्षिण मलाबार

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१९१. पत्र : महादेव देसाईको

२१ सितम्बर, १९३७

चि० महादेव,

रा०[2] के साथ बात करना और [उससे पहले][3] अप्पासे पूछना। यदि रा० नपुंसक है तो इसके बारेमें गं०[4] को अवश्य मालूम होगा। यदि यह सच है तो फिर

१. 'अखिल भारतीय कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टीके संयुक्त मन्त्री तथा केरल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके संयोजन मन्त्री श्री नम्बूद्रिपादने एक जब्तशुदा पुस्तकके सिलसिलेमें पुलिस द्वारा ली गई तलाशीकी ओर गांधीजी का ध्यान खींचा था।

२. और ४. नाम छोड़ दिये गये हैं

३. साधन-सूत्रमें स्पष्ट नहीं है।

गं० को उसके पास नहीं रहना चाहिए और न उसे इस तरह सताया जाना चाहिए। रा० ने दवा तो की ही होगी? लेकिन यदि दवाएँ हमेशा कारगर हों तो हमें जो इतने विज्ञापन देखनेको मिलते हैं उतने क्यों दिखें? लेकिन पहले सारे तथ्य जान लेना। गं० ने जो किया है, और वहाँ हालात कैसे हैं, सो सब मालूम करके आना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५७१) से।

१९२. पत्र: रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

सेगाँव, वर्धा
२३ सितम्बर, १९३७

प्रिय गुरुदेव,

आपका अमूल्य पत्र मेरे सामने है। आप मुझसे आगे निकल गये। जब सर नील-रतनका पिछला आश्वासन-भरा तार आया था, उसी समय मैं आपको पत्र लिखना चाहता था, परन्तु मेरे दायें हाथको आरामकी जरूरत है। बोलकर लिखवाना मैं चाहता नहीं था, और बायें हाथकी गति मन्द है। मैं यह सब केवल यह बताने के लिए लिख रहा हूँ कि हममें से कुछ लोगोंके मनमें आपके प्रति कितना स्नेह-भाव है। मेरा तो सचमुच यह विश्वास है कि ईश्वर ने आपके प्रशंसकोंकी मौन प्रार्थनाओंको सुना है और इसीलिए आप अभी भी हमारे बीच हैं। आप विश्व-गायक ही नहीं है, आपके जीवन्त शब्दोंसे हजारों लोगोंको मार्गदर्शन और प्रेरणा मिलती है। मेरी भगवान्से यही प्रार्थना है कि आप हमारे बीच बहुत वर्षों तक बने रहें।

प्रगाढ़ प्रेम-सहित,

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६४९) से।

१९३. सन्देश : कर्नाटक एकीकरण संघ, बेलगाँवको

[२४ सितम्बर, १९३७ के पूर्व]

अलग कर्नाटक प्रान्तके गठनके प्रश्नपर उसके गुण-दोषोंके आधारपर विचार करें तो उसका विरोध नहीं किया जा सकता। अतः इस आशयका प्रस्ताव चाहे कोई लाये, कांग्रेस मन्त्रिमण्डल द्वारा स्वागत किया जाना चाहिए और उसे तुरन्त लागू करने के सम्बन्धमें जो कठिनाइयाँ हों वे स्पष्ट बता दी जानी चाहिए। कांग्रेस मन्त्रिमण्डल इस विषयमें अपनी नीति और कार्य-प्रणालीकी घोषणा करके विरोधी दलको पहलेसे ही निरुत्तर कर दे सकता है।[1]

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २४-९-१९३७

१९४. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

सेगाँव, वर्धा
२४ सितम्बर, १९३७

चि० अम्बुजम,[2]

यह है उस व्यक्तिका पत्र जो अपनेको कमलाबाईका मामा बतलाता है। मैंने पत्र-लेखकको बता दिया है कि कमलाबाईके शुद्धीकरणकी प्रक्रियामें किसी भी कारणसे बाधा नहीं आनी चाहिए। यह शुद्धीकरण स्वयं कमलाबाईके और साथ ही उसके परिवारके हकमें भी आवश्यक है।

रोगिणी वहीं है; तुम उसका ध्यान रखना और मेरा मार्गदर्शन करना। जबतक मैं न लिखूं, रुपया-पैसा नहीं देना है।

मैं धीरे-धीरे अच्छा हो रहा हूँ।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजीसे: अम्बुजम्माल पेपर्स। सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. गांधीजी के सुझावपर सन्देश की एक प्रति बम्बई मन्त्रिमण्डलको भी भेजी गई थी। पृथक् कर्नाटक प्रान्तके गठनके लिए बम्बई विधान-सभामें एक प्रस्ताव पेश करने का इरादा जाहिर किया गया था।

२. सम्बोधन देवनागरी लिपिमें है।

१९५. पत्र : अमृतकौरको

२४ सितम्बर, १९३७

प्रिय विद्रोहिणी,

तुम्हें लिखने का मन हुआ, इसलिए यह पत्र लिख रहा हूँ। शम्मी बिलकुल गलत हैं। यदि सम्भव हो तो तुम्हें अवश्य प्रतिदिन लिखना चाहिए, परन्तु आराम या कामका हर्ज करके नहीं।

वेरियर[1] आज यहीं है। मैं उससे बात करूँगा और जो आवश्यक होगा सो करूँगा।

उन सात बन्दियोंने उपवास स्थगित कर दिया है।

जो बात तुम मिलने पर बताने को आतुर हो वह लिखकर क्यों नहीं कहतीं। लेकिन तुम्हें जो-कुछ अच्छा लगे वही करना। मैं ऐसे कुछ लोगोंको जानता हूँ जिनमें बड़ा कुतूहल है। मैं वैसा नहीं हूँ।

तुम कुछ गण्यमान्य सिखोंसे वचन[2] ले लो, चाहे उनके वचनोंका आम सिखोंके लिए कोई महत्त्व न हो।

आज बस करता हूँ।

स्नेह।

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८११) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६९६७ से भी

१९६. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

सेगाँव, वर्धा

२४ सितम्बर, १९३७

चि० नरहरि,

दूधाभाईको[3] लिखा तुम्हारा पत्र मुझे उचित लगा इसलिए मैंने उसे भेज दिया है और सलाह दी है कि वह जीवन्तिकाको सुसराल भेज दे। अब हमारे लिए और कुछ करने को नहीं रह जाता।

१. वेरियर एलविन।

२. देखिए "पत्र: अमृतकौरको", पृ० १४६।

३. दूधाभाई दाफड़ा।

धमकी-भरे गुमनाम पत्रकी बात मैं समझता हूँ। रावजीभाई इसके बारेमें क्या कहते हैं, सो जानना बाकी है। मैंने दिनकरके साथ सारी बातें कर ली हैं। दिनकरने खुद कहा कि मैं नरहरिभाईके साथ बातचीत कर लूँगा और हममें जो बातचीत हुई है उसका सार भी कह सुनाऊँगा। इसलिए मैंने तुम्हें कुछ नहीं लिखा। बातचीतका सार यह है कि जबतक कांग्रेसका काम-काज चलेगा तबतक वह वहाँ काम करता रहेगा। खर्चेके लिए हम जो देंगे सो लेगा। उसकी जरूरतें भी मामूली हैं। इसलिए मेरी सलाह उसे १०० रुपये देने की है। इसमें से कभी-कभी वह कुछ बचा लेगा और कभी-कभी पूरा पैसा खर्च हो जायेगा। वहाँ उसे घर बनाकर रहने की सुविधा प्रदान की जायेगी, ऐसा मैंने उससे कहा है। किराया उसे देना होगा।

डाह्यालाल आ गया है। अभी तो उसे मैंने भंगीका और कातने का काम सौंपा है।

यह खुशीकी बात है कि गायके दूधका घी बनाया जा रहा है। हर बार घीकी जाँच करते रहना। जरा भी कच्चा रह जानेसे उसके खराब हो जाने की पूरी आशंका रहती है। भैंसके घीकी अपेक्षा गायके घीमें अधिक सावधानीकी जरूरत होती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९११०) से।

१९७. पत्र : प्रभाशंकर पट्टणीको

सेगाँव, वर्धा
२४ सितम्बर, १९३७

सुज्ञ भाईश्री,

मुझे कुछ-कुछ याद आता है कि मैंने आपको भावनगरमें मद्य-निषेधके सम्बन्धमें लिखा था। लेकिन मुझे उसका उल्लेख कहीं दिखाई नहीं देता। जैसाकि मेरे साथ आजकल होता है, मैंने उसके बारेमें लिखने का सिर्फ विचार किया होगा और लगता है कि मैंने लिखा था। मैं हाथसे कम लिख पाता हूँ और वह भी बायें हाथसे ही लिखता हूँ। इसलिए हो सकता है कि मुझे लिखने का विचार आया हो, लेकिन किसीके पास न होने की वजहसे लिखवा न सका होऊँ। यह तो हुई प्रस्तावना।

आपके यहाँ मद्य-निषेध लागू है, उसका पूरा-पूरा अर्थ आप मुझे समझायें। कितने अर्सेसे लागू है? इसका परिणाम क्या निकला? मद्य-निषेधसे कितना महसूल आपने खोया है? क्या उससे लोगोंमें खुशहाली आ गई है? यदि उसका परिणाम मेरी कल्पनाके विरुद्ध निकला हो तो उसके बारेमें जानकर मुझे क्षोभ नहीं होगा। यदि कल्पनाके अनुरूप परिणाम निकला हो तो उससे मुझे आश्चर्य नहीं होगा। क्योंकि मद्यनिषेधके साथ-साथ जहाँ रचनात्मक कार्य भी चलाया जा रहा है वहाँ अन्य कोई परिणाम निकल ही नही सकता। यदि आप अपने आबकारी विभागके किसी

अधिकारीको यह कार्य सौंपेंगे और वे मुझे लिखेंगे तो यह काफी होगा। मैं आपपर यह बोझ कतई नहीं लादना चाहता।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९५४) से। सी० डब्ल्यू० ३२७१ से भी; सौजन्य : महेश पट्टणी

१९८. उड़ीसामें जलप्रलय

बाढ़, अकाल और महामारियाँ हिन्दुस्तानके नित्य जीवनका अंग बन गई हैं। बाढ़ और अकालके प्रकोप यों तो सारे संसारमें दिखाई देते रहते हैं, लेकिन जो देश आर्थिक और अन्य साधनोंसे सम्पन्न होते हैं, वहाँ उनकी उग्रता बहुत-कुछ कम कर दी जाती है। मगर हिन्दुस्तानमें, जहाँ दरिद्रता भुखमरीकी हदतक जा पहुँची है, बाढ़ और अकालपर काबू पाना तो दूर, उल्टे उन्हें जितना होना चाहिए उससे दूने असह्य हो जाते हैं। गरीबीके ही कारण हमारे यहाँ महामारियोंका भी सिलसिला बराबर चलता ही रहता है। पर हिन्दुस्तानकी गरीबीका सबसे बड़ा दोष यह है कि प्राकृतिक प्रकोपोंको एक अनिवार्य वस्तु मानकर हमने सबकुछ भाग्यके भरोसे छोड़ रखा है। और चूँकि हम ऐसा अनजानमें करते हैं, इससे इसकी क्रूरता कोई कम नहीं हो जाती है। अपनी इस बातको स्पष्ट करने के लिए मैं उड़ीसाका ही उदाहरण लेता हूँ। उड़ीसाके राजस्व और लोक-कार्य विभागके मन्त्रीने उड़ीसा बाढ़-पीड़ित-सहायक समितिके अध्यक्षकी हैसियतसे एक अपील जारी की है। चूँकि वे कांग्रेसी मन्त्री हैं, अत: उनमें कांग्रेस और सरकार दोनों आ जाते हैं। पर इस अपीलके साथ भेजे हुए अपने पत्रमें उन्होंने लिखा है कि उनकी अपीलके उत्तरमें लोगोंने कोई उल्लेखनीय योगदान नहीं दिया है। उड़ीसाके गवर्नरने बाढ़-पीड़ित-सहायता कोषकी उद्घाटन-सभामें कहा — "इस बाढ़ने जो तबाही मचाई है उसका मेरे सामने सजीव वर्णन पेश किया गया। मुझे बताया गया कि ६ अगस्तकी रात कटकमें ३०,००० लोग जिन जगहोंपर सो रहे थे या सोने का प्रयत्न कर रहे थे वे नदीके जलके स्तरसे दस फुट नीचे थीं।" बम्बईकी तुलनामें कटक एक मामूली शहर है। वह बम्बईके दसवें हिस्सेके बराबर भी नहीं है। कल्पना कीजिए कि बम्बईके पाससे भी कोई नदी बह रही होती और बाढ़के कारण यहाँके तीन लाख लोग उसी संकटमें पड़ गये होते जिसमें ६ अगस्तकी रात कटकके लोग घिर गये थे, तो उस महानगरका क्या होता! कटक तथा पुरी जिलोंका १५,०० वर्गमील क्षेत्र बाढ़से प्रभावित हुआ है। लेकिन चूँकि भारतके अनेक भागोंमें ऐसी बाढ़ें साल-दर-साल आती ही रहती हैं, इसलिए ऐसी विपत्तियोंसे बम्बई-जैसे उस महानगरकी अन्तरात्मामें भी कोई उद्वेलन नहीं होता जो भारतके किसी भी कोनेसे आई पुकारका उत्तर देनेमें कभी चूका नहीं है। यदि मेरी लेखनीकी प्रेरणापर किन्हींमें उस अपीलका

उत्तर देनेकी इच्छा जागती है तो उनसे जो-कुछ बने, जल्दी भेजें। बम्बईमें अनेक लोकोपकारी संस्थाएँ हैं। मेरा विनम्र सुझाव है कि वे सब मिलकर काम कर सकती हैं——अपने ध्यानमें आनेवाले ऐसे सभी मामलोंकी संयुक्त जाँच कर सकती हैं और तब अपने-अपने कोषके अनुसार अनुपाततः सहायताकी राशियाँ दे सकती हैं। अगर मेरी इस तजवीजपर अमल किया जाये, तो योग्य समर्थकके अभावमें किसी भी पीड़ितकी पुकार अनसुनी नहीं जायेगी। अभी तो यह स्वीकार करना होगा कि इन बड़ी-बड़ी दान-राशियोंके वितरणकी कोई विधि ही नहीं है। लेकिन यह सुझाव तो भविष्यके लिए है। अभी तो "तुरत दान महा कल्याण", इस कहावतके अनुसार जो लोग दान देना चाहते हैं वे किसी संयुक्त प्रयासकी राह देखे बिना तुरन्त दान दें।

दो शब्द मन्त्रियोंसे भी। उन्हें जो राशि प्राप्त होगी, उससे तो आंशिक रूपसे ही राहत मिलेगी। इसलिए उन्हें दो काम करने चाहिए: पहला यह कि उन्हें ऐसे उपाय करने चाहिए जिससे संकटग्रस्त लोग किसी उत्पादक काममें लगकर अपनी सहायता खुद करना सीखें। बिहारमें कताई तथा इसी तरहके अन्य कार्योंको हाथमें लिया गया था। उड़ीसामें अगर लोग चरखा न चलाना चाहते हों तो और कोई धन्धा अपना सकते हैं। मुख्य बात तो श्रमधर्मके गौरवको पहचानना है। खुद मन्त्रियोंको भी चाहिए कि वे हर रोज थोड़ी देरके लिए अपना कुरता उतारकर रख दें और साधारण मजदूरोंकी तरह काम करें। इससे उन लोगोंको प्रोत्साहन मिलेगा जिन्हें काम तथा उससे मिलनेवाली मजदूरीकी जरूरत है। दूसरे, वे कुशल इंजीनियरोंकी तलाश कर उनके शिल्प-कौशलको इस प्रकार काममें लायें जिससे बरसातके मौसममें नदियोंके प्रलयकारी प्रवाहको ऐसा मार्ग दिया जा सके कि वे उपयोगी बन जायें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २५-९-१९३७

१९९. अव्यावहारिक नहीं

सरदार सर जोगेन्द्रसिंह एक बहुत बड़े समाज-सुधारक, विद्वान् और राजनीतिज्ञ हैं। इसलिए वे जो-कुछ भी लिखते हैं, ध्यान देने लायक होता है। उन्होंने 'टाइम्स ऑफ इंडिया' में पूर्ण शराबबन्दीपर एक लेख लिखा है। उनके लेखोंको जितने ध्यानसे पढ़ना चाहिए उतने ध्यानसे मैंने उसे पढ़ा है। पर मुझे कबूल करना होगा कि उस लेखको पढ़कर मुझे निराशा हुई। इतने बड़े सुधारक ऐसे कारणोंपर कैसे पराजय मान सकते हैं जो तर्कके निष्कर्षपर टिक नहीं सकते? उनकी एकमात्र दलील यही दिखाई देती है कि "लोग निश्चय ही गैर-कानूनी ढंगसे शराब बनायेंगे और छिपकर पियेंगे भी, इसलिए पूर्ण शराबबन्दीके लिए प्रयत्न करना बेकार है।" पंजाबमें स्थानीय संस्थाओंको शराबबन्दी लागू करनेकी स्वतन्त्रता दी गई थी। पर किसीने उसपर अमल नहीं किया। "इसलिए", वे कहते हैं, "मैं तो इसी नतीजेपर पहुँचा

हूँ कि अगर जनतापर जबरदस्ती शराबबन्दी लादी जायेगी तो हमें उसमें सफलता नहीं मिलेगी और प्रान्तोंको गांवोंकी पुनर्रचनाके लिए जिस आमदनीकी जरूरत है उससे हाथ धोना पड़ेगा।" शराबबन्दीके मसलेको आयके साथ जोड़कर सरदार साहबने एकदम अपनी हार मान ली है, और खुद ही अपनी बातका खण्डन कर दिया है। क्योंकि अपने लेखके चौथे अनुच्छेदमें वे लिखते हैं: "मैंने साफ-साफ कह दिया है कि शराबपर अंकुश रखने की नीतिपर अमल करने में मैं आय-सम्बन्धी किसी विचारको आड़े नहीं आने दूँगा।" परमात्माको धन्यवाद है कि कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंने शराबसे होनेवाली आयका त्याग कर उसके जालसे अपने-आपको मुक्त कर लिया है। इस सम्बन्धमें जरा भी ढिलाई रह गई तो हम अनैतिक आयका उपयोग करने का लोभ संवरण करना कठिन हो जायेगा। क्योंकि इस बातसे कोई इनकार नहीं करता कि किसी शराबखोरकी शराबकी आदत आनन-फानन छुड़ाना कितना मुश्किल काम है। और जिन पुराने मन्त्रियोंसे मैं शराबबन्दी लागू करने के लिए कहा करता था उन्होंने कभी इसे अव्यावहारिक नहीं बताया। लेकिन वे शराबसे होनेवाली भारी आयको छोड़ने में अपनी असमर्थता व्यक्त करते थे। उन्हें शिक्षा के लिए इसकी जरूरत थी। ऐसे अनीतियुक्त मार्गसे प्राप्त होनेवाली आयकी सहायतासे जो शिक्षा दी जाये क्या वह कोई ग्रहण करने योग्य वस्तु हो सकती है? क्या उसका कोई वास्तविक मूल्य है? [illegible] स्कूलों और कॉलेजोंमें जिस प्रकारकी शिक्षा दी जाती है उसे प्राप्त कर युवकोंने क्या अपने ऊपर खर्च किये गये धनका कुछ मुआवजा भी चुकाया है?

यों तो चोरी अनन्त कालतक चलती रहेगी। तो क्या इसलिए उसे हम कानून द्वारा मंजूरी दे दें? चीजोंकी चोरीकी अपेक्षा मस्तिष्ककी चोरी करना क्या कम अपराधपूर्ण है। बेशक, कुछ हदतक लोग गैर-कानूनी ढंगसे हमेशा शराब बनाते रहेंगे। पर उसकी मात्रासे हम यह अन्दाज लगा सकेंगे कि सरकार किस हदतक प्रयत्नशील है, और जागरूक जनता शराब पीने व अफीम खानेवाले लोगोंके प्रति सतत और सहानुभूतिपूर्ण व्यवहारके द्वारा किस हदतक सरकारको सहयोग दे रही है। भौतिक या शारीरिक उन्नतिके लिए हमें जो मूल्य चुकाना पड़ता है, नैतिक उन्नतिके लिए उससे कोई कम मूल्य नहीं चुकाना पड़ता। पर मेरा यह निवेदन है कि यदि इस रचनात्मक प्रयाससे पहले हम पूर्ण मद्य-निषेध लागू नहीं करते हैं तो यह प्रयास अवश्य विफल होगा। जबतक राज्य शराबीको शराब पीने की इजाजत ही नहीं बल्कि सुविधाएँ भी देता रहेगा, तबतक सुधारकोंको सफलता मिलना लगभग असम्भव है। जिप्सी स्मिथ मद्य-निषेधका बड़ा जबरदस्त प्रचारक था। हजारोंकी तादादमें लोग उसके भाषण और गीत सुनने के लिए इकट्ठे होते थे और उनमें से बहुत-से उन्हें सुनकर मुग्ध हो जाते और प्रतिज्ञा कर लेते थे कि अब कभी शराब नहीं पियेंगे। लेकिन मैं दक्षिण आफ्रिकाके अपने अनुभवके आधारपर कहता हूँ कि इन गरीब शराबियोंमें से अधिकांश जब शहरके राजमार्गसे होकर गुजरते थे और वहाँ हर जगह महलों-जैसे आलीशान पानगृहोंको देखते अथवा शहरसे बाहर जाने पर जब रास्तेमें उन्हें यत्रतत्र शराब सुलभ करानेवाली पान्थशालाएँ दिखाई देती थीं तो ये लोग उनमें

जाकर शराब पीने का लोभ संवरण नही कर पाते थे। राज्यकी ओरसे की जानेवाली शराबबन्दी पूर्ण मद्य-निषेधके महान् सुधारका अन्त नही, बल्कि अनिवार्य शुरुआत है।

और स्थानीय तौरपर छूट देने के बारेमें जितना कम कहा जाये उतना ही अच्छा है। बुराईके इन अड्डोंको बन्द करने के खिलाफ क्या कभी कोई आन्दोलन हुआ? छूटका सवाल तो वहाँ खड़ा हो सकता है जहाँ सारी-की-सारी जनता शराब पीना चाहती हो।

ईश्वरकी कृपा हुई तो मद्य-निषेध कायम रहेगा। कांग्रेस और कुछ योगदान दे पाये या न दे पाये, इतिहासके पृष्ठोंमें यह बात स्वर्णाक्षरोंमें लिखी जायेगी कि कांग्रेसने सन् १९२० में शराबबन्दीकी प्रतिज्ञा ली थी और पहला अवसर मिलते ही उसने चुकाई जानेवाली कीमतकी परवाह किये बिना अपनी प्रतिज्ञाका पालन किया। मुझे इस बातका पूरा यकीन है कि अन्य प्रान्त भी इसका अनुकरण करेंगे। मैं सरदार जोगेन्द्रसिंहसे अनुरोध करता हूँ कि वे इस अत्यावश्यक सुधारके सम्बन्धमें कांग्रेसको चेतावनी न दें, बल्कि अपने प्रान्तमें और बहादुर सिखोंके बीच इस सुधारको सफल बनाने में अपना पूरा जोर लगा दें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २५-९-१९३७

२००. चार प्रश्न

एक पत्र-लेखकने मुझसे चार प्रश्न किये हैं, जो निम्न प्रकार हैं:

१. जिन हिन्दुओंने किन्हीं कारणोंसे स्वधर्मका त्याग करके इस्लाम या ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया था, वे अब हृदयसे पछताते हैं और पुनः हिन्दू-धर्ममें आना चाहते हैं। हमें उन्हें वापस हिन्दू-धर्ममें लेना चाहिए या नहीं? आप अपने लड़के हरिलालका ही उदाहरण लें।[1]

२. आप जानते हैं कि दक्षिण भारतमें दलित-वर्गोंके लोग सामूहिक रूपसे ईसाई धर्ममें शामिल हो गये हैं। त्रावणकोर दरबारकी घोषणाके[2] बादसे हरिजन-आन्दोलन वहाँ और लोकप्रिय हुआ तबसे कुछ लोग अपने पूर्वजोंके धर्मको फिरसे स्वीकार कर लेना चाहते हैं। उनके बारेमें आप क्या सलाह देंगे?

३. एक हिन्दूको अमुक लोभ देकर दूसरे धर्ममें शामिल कर लिया जाता है। कुछ दिनों बाद उसकी आँखें खुल जाती हैं, और वह हमारे यहाँ आकर हमारा दरवाजा खटखटाता है। उसका हम स्वागत करेंगे या नहीं?

१. देखिए खण्ड ६२, पृ० २३५ और ४९७ खण्ड ६३, पृ० ६-८ भी।
२. देखिए खण्ड ६४, पृ० ५४-५५।

हूँ कि अगर जनतापर जबरदस्ती शराबबन्दी लादी जायेगी तो हमें उसमें सफलता नहीं मिलेगी और प्रान्तोंको गाँवोंकी पुनर्रचनाके लिए जिस आमदनीकी जरूरत है उससे हाथ धोना पड़ेगा।" शराबबन्दीके सवालको आयके साथ जोड़कर सरदार साहबने एकदम अपनी हार मान ली है, और खुद ही अपनी बातका खण्डन कर दिया है। क्योंकि अपने लेखके चौथे अनुच्छेदमें वे लिखते हैं: "मैंने साफ-साफ कह दिया है कि शराबपर अंकुश रखने की नीतिपर अमल करने में मैं आय-सम्बन्धी किसी विचारको आड़े नहीं आने दूँगा।" परमात्माको धन्यवाद है कि कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंने शराबसे होनेवाली आयका त्याग कर उसके जालसे अपने-आपको मुक्त कर लिया है। इस सम्बन्धमें जरा भी ढिलाई रह गई तो उस अनैतिक आयका उपयोग करने का लोभ संवरण करना कठिन हो जायेगा। क्योंकि इस बातसे कोई इनकार नहीं करता कि किसी शराबखोरकी शराबकी आदत आनन-फानन छुड़ाना कितना मुश्किल काम है। और जिन पुराने मन्त्रियोंसे मैं शराबबन्दी लागू करने के लिए कहा करता था उन्होंने कभी इसे अव्यावहारिक नहीं बताया। लेकिन वे शराबसे होनेवाली भारी आयको छोड़ने में अपनी असमर्थता व्यक्त करते थे। उन्हें शिक्षा के लिए इसकी जरूरत थी। ऐसे अनीतियुक्त मार्गसे प्राप्त होनेवाली आयकी सहायतासे जो शिक्षा दी जाये क्या वह कोई ग्रहण करने योग्य वस्तु हो सकती है? क्या उसका कोई वास्तविक मूल्य है? हिन्दुस्तानके स्कूलों और कॉलेजोंमें जिस प्रकारकी शिक्षा दी जाती है उसे प्राप्त कर युवकोंने क्या अपने ऊपर खर्च किये गये धनका कुछ मुआवजा भी चुकाया है?

यों तो चोरी अनन्त कालतक चलती रहेगी। तो क्या इसलिए उसे हम कानून द्वारा मंजूरी दे दें? चीजोंकी चोरीकी अपेक्षा मस्तिष्ककी चोरी करना क्या कम अपराधपूर्ण है। बेशक, कुछ हदतक लोग गैर-कानूनी ढंगसे हमेशा शराब बनाते रहेंगे। पर उसकी मात्रासे हम यह अन्दाज लगा सकेंगे कि सरकार किस हदतक प्रयत्नशील है, और जागरूक जनता शराब पीने व अफीम खानेवाले लोगोंके प्रति सतत और सहानुभूतिपूर्ण व्यवहारके द्वारा किस हदतक सरकारको सहयोग दे रही है। भौतिक या शारीरिक उन्नतिके लिए हमें जो मूल्य चुकाना पड़ता है, नैतिक उन्नतिके लिए उससे कोई कम मूल्य नहीं चुकाना पड़ता। पर मेरा यह निवेदन है कि यदि इस रचनात्मक प्रयाससे पहले हम पूर्ण मद्य-निषेध लागू नहीं करते हैं तो यह प्रयास अवश्य विफल होगा। जबतक राज्य शराबीको शराब पीने की इजाजत ही नहीं बल्कि सुविधाएँ भी देता रहेगा, तबतक सुधारकोंको सफलता मिलना लगभग असम्भव है। जिप्सी स्मिथ मद्य-निषेधका बड़ा जबरदस्त प्रचारक था। हजारोंकी तादादमें लोग उसके भाषण और गीत सुनने के लिए इकट्ठे होते थे और उनमें से बहुत-से उन्हें सुनकर मुग्ध हो जाते और प्रतिज्ञा कर लेते थे कि अब कभी शराब नहीं पियेंगे। लेकिन मैं दक्षिण आफ्रिकाके अपने अनुभवके आधारपर कहता हूँ कि इन गरीब शराबियोंमें से अधिकांश जब शहरके राजमार्गसे होकर गुजरते थे और वहाँ हर जगह महलों-जैसे आलीशान पानगृहोंको देखते अथवा शहरसे बहार जाने पर जब रास्तेमें उन्हें यत्रतत्र शराब सुलभ करानेवाली पान्थशालाएँ दिखाई देती थीं तो ये लोग उनमें

जाकर शराब पीने का लोभ संवरण नहीं कर पाते थे। राज्यकी ओरसे की जानेवाली शराबबन्दी पूर्ण मद्य-निषेधके महान् सुधारका अन्त नहीं, बल्कि अनिवार्य शुरुआत है।

और स्थानीय तौरपर छूट देने के बारेमें जितना कम कहा जाये उतना ही अच्छा है। बुराईके इन अड्डोंको बन्द करने के खिलाफ क्या कभी कोई आन्दोलन हुआ? छूटका सवाल तो वहाँ खड़ा हो सकता है जहाँ सारी-की-सारी जनता शराब पीना चाहती हो।

ईश्वरकी कृपा हुई तो मद्य-निषेध कायम रहेगा। कांग्रेस और कुछ योगदान दे पाये या न दे पाये, इतिहासके पृष्ठोंमें यह बात स्वर्णाक्षरोंमें लिखी जायेगी कि कांग्रेसने सन् १९२० में शराबबन्दीकी प्रतिज्ञा ली थी और पहला अवसर मिलते ही उसने चुकाई जानेवाली कीमतकी परवाह किये बिना अपनी प्रतिज्ञाका पालन किया। मुझे इस बातका पूरा यकीन है कि अन्य प्रान्त भी इसका अनुकरण करेंगे। मैं सरदार जोगेन्द्रसिंहसे अनुरोध करता हूँ कि वे इस अत्यावश्यक सुधारके सम्बन्धमें कांग्रेसको चेतावनी न दें, बल्कि अपने प्रान्तमें और बहादुर सिखोंके बीच इस सुधारको सफल बनाने में अपना पूरा जोर लगा दें।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २५-९-१९३७

२००. चार प्रश्न

एक पत्र-लेखकने मुझसे चार प्रश्न किये हैं, जो निम्न प्रकार हैं:

१. जिन हिन्दुओंने किन्हीं कारणोंसे स्वधर्मका त्याग करके इस्लाम या ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया था, वे अब हृदयसे पछताते हैं और पुनः हिन्दू-धर्ममें आना चाहते हैं। हमें उन्हें वापस हिन्दू-धर्ममें लेना चाहिए या नहीं? आप अपने लड़के हरिलालका ही उदाहरण लें।[1]

२. आप जानते हैं कि दक्षिण भारतमें दलित-वर्गोंके लोग सामूहिक रूपसे ईसाई धर्ममें शामिल हो गये हैं। त्रावणकोर दरबारकी घोषणाके[2] बादसे हरिजन-आन्दोलन वहाँ और लोकप्रिय हुआ तबसे कुछ लोग अपने पूर्वजोंके धर्मको फिरसे स्वीकार कर लेना चाहते हैं। उनके बारेमें आप क्या सलाह देंगे?

३. एक हिन्दूको अमुक लोभ देकर दूसरे धर्ममें शामिल कर लिया जाता है। कुछ दिनों बाद उसकी आँखें खुल जाती हैं, और वह हमारे यहाँ आकर हमारा दरवाजा खटखटाता है। उसका हम स्वागत करेंगे या नहीं?

१. देखिए खण्ड ६२, पृ० २३५ और ४९७ खण्ड ६३, पृ० ६-८ भी।

२. देखिए खण्ड ६४, पृ० ५४-५५।

४. छोटे-छोटे हिन्दू बालक-बालिकाओंको अक्सर ये पादरी लोग हथिया लेते हैं और उनका धर्म-परिवर्तन कर देते है। कभी-कभी मुसलमान भी अपने यतीमखानोंका उपयोग इस कामके लिए करते हैं। ऐसे लड़के और लड़कियाँ, अकेले या अपने अभिभावकोंके साथ, अगर हमारे पास आकर अपनी शुद्धि कराना चाहें, तो उस वक्त हमें क्या करना चाहिए?

ये अथवा इसी तरहके दूसरे प्रश्न पहले भी किसी-न-किसी रूपमें पूछे गये हैं और उनका जवाब भी 'हरिजन' में दिया गया है। हर प्रश्नका जवाब अलग-अलग देने की जरूरत नहीं। मेरी रायमें ये सच्चे हृदय-परिवर्तनके उदाहरण नहीं हैं। अगर कोई आदमी डरसे, जोर-जबरदस्तीसे, भूखसे या कुछ रुपये-पैसेके लालचमें आकर दूसरे धर्ममें चला जाता है, तो उसे हृदय-परिवर्तनका नाम नहीं दिया जा सकता है। हम सामूहिक धर्म-परिवर्तनके जिन प्रसंगोंके विषयमें इधर दो वर्षसे सुनते आ रहे हैं, उनमें से अधिकतर तो मेरे विचारमें खोटे सिक्के हैं। सच्चा मत-परिवर्तन हृदयसे होता है; किसी अजनबी आदमीकी प्रेरणासे नहीं, बल्कि ईश्वरकी प्रेरणासे होता है। कौन-सी आवाज मनुष्यकी है और कौन-सी ईश्वरकी, इसे तो हम हमेशा पहचान सकते हैं। पत्र-लेखकने जो काल्पनिक दृष्टान्त दिये हैं, मैं मानता हूँ, वे सच्चे मत-परिवर्तनके दृष्टान्त नहीं हैं। इसलिए ऐसे पश्चात्ताप करनेवालों को मैं बगैर किसी शोर-गुलके, और निश्चय ही शुद्धिके बिना, हिन्दू धर्ममें फिरसे दाखिल कर लूँगा। ऐसे लोगोंको शुद्धिकी जरूरत ही नहीं है। और चूँकि मेरी यह मान्यता है कि इस जगत्के सभी महान् धर्म समान हैं, इसलिए यदि कोई आदमी जिस डाल-पर बैठा हो उसे छोड़कर उसी वृक्षकी दूसरी डालपर बैठ जाता है तो इससे वह अपवित्र अथवा दूषित हो जाता है, सो मैं नहीं मानता। वह अगर अपनी मूल डालपर फिरसे बैठना चाहता है, तो उसका स्वागत किया जाना चाहिए। यह कहना उचित नहीं कि जिस कुटुम्बमें वह पहले था उसे छोड़कर वह चला गया, इसलिए उसने कोई पाप किया। और जब वह सच्चे हृदयसे अपनी भूलका प्रायश्चित्त करता है और अपने धर्ममें वापस आ जाता है तो जिस हदतक उसने भूल की थी उस हदतक वह उसका परिष्कार भी कर लेता है। इस तरह प्रायश्चित्त करके वह शुद्ध हो जाता है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २५-९-१९३७

२०१. टिप्पणियाँ

एक अपील

मैं जानता हूँ कि ऐसे बहुत-से शिक्षक हैं जो मेरी बताई प्राथमिक शिक्षाकी विधिमें न्यूनाधिक विश्वास रखते हैं। मुझे यह भी पता है कि इनमें से कुछ शिक्षक किसी-न-किसी उद्योगके जरिये ऐसी शिक्षा देनेका प्रयत्न भी कर रहे हैं। फिर, ऐसे भी बहुत-से लोग हैं, जिनकी इस विषयमें रुचि तो है, किन्तु अपरिहार्य परिस्थितियोंके कारण शिक्षकके कामसे दूर जा पड़े हैं। अब चूँकि कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल मेरी योजनाके पक्षमें जान पड़ते हैं, इसलिए ऐसे लोगोंके नामोंकी जरूरत है जो इस प्रयोगको सफल कर दिखाने के लिए अपनी सेवाएँ दे सकते हों। क्या ऐसे मित्र मुझे अपने नाम, योग्यता, आवश्यक वेतन, और अगर कुछ शर्तें हों तो वे भी लिख भेजेंगे?

कानून-सम्मत व्यभिचार

कांग्रेस मन्त्रिमण्डलसे लोग जो बड़ी-बड़ी आशाएँ रखते हैं, उसका एक और प्रमाण डॉ० मुत्तुलक्ष्मी रेड्डीने[1] दिया है। लोगोंको ऐसी आशाएँ रखने का हक भी है। कांग्रेसके विरोधियोंने भी यह स्वीकार किया है कि कांग्रेस मन्त्रिमण्डल कसौटी पर खरे उतर रहे हैं। कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल लोक-हितकारी कामोंकी शुरुआत करने में परस्पर एक-दूसरेसे होड़ करते जान पड़ते हैं, जिससे कि उनका शासन-प्रबन्ध सच्चे भारतीय वातावरणके अनुरूप बन सके। डॉ० मुत्तुलक्ष्मी रेड्डीने मद्रासके मन्त्रिमण्डलके नाम एक खुली अपील प्रकाशित की है। उसमें उन्होंने मन्त्रियोंसे एक विधेयक पास करने का अनुरोध किया है, जिसके जरिये देवदासियोंको पतित जीवनके लिए अर्पित कर देने का अनैतिक रिवाज खत्म हो सके। मैंने इस विधेयकको अभी ध्यानपूर्वक नहीं पढ़ा है। लेकिन इसके पीछे जो भाव निहित है वह इतना ठोस है कि आश्चर्य होता है कि मद्रास अहातेकी कानूनकी पुस्तकमें अबतक उसे कैसे स्थान नहीं मिल पाया है। मैं डॉ० मुत्तुलक्ष्मीकी इस बातसे पूरी तरह सहमत हूँ कि यह सुधार भी उतना ही जरूरी है जितना कि शराबबन्दी। उन्होंने इस बातकी भी याद दिलाई है कि वर्तमान मुख्य मन्त्रीने[2] बरसों पहले इस बुरे रिवाजकी बड़े कड़े शब्दोंमें निन्दा की थी। मैं जानता हूँ कि आज जब इस बुराईको कानूनसे दूर करने की कुछ सत्ता उनके हाथोंमें आ गई है तो इस बुराईको दूर करने की उनकी उत्सुकता जरा भी कम नहीं हुई है। डॉ० मुत्तुलक्ष्मीके साथ-साथ मैं भी आशा करता हूँ कि चन्द महीनोंमें ही इस बुराईका कानूनी आधार हट जायेगा।

१. मद्रासकी एक सामाजिक कार्यकर्त्री।

२. चक्रवर्ती राजगोपालाचारी।

महुएका उपयोग

एक सज्जनने महुएके विषयमें एक लम्बा पत्र लिखा है, और यह इच्छा प्रकट की है कि शराब बनाने के अलावा महुएके अन्य उपयोगोंपर लगाये गये सभी प्रतिबन्ध हटा लिये जाने चाहिए। शराबबन्दीका मैं शत-प्रति-शत हिमायती रहा हूँ, इसलिए मुझे इस तजवीजका समर्थन करने में तनिक भी संकोच नहीं होता। शराब-बन्दीकी सारी कल्पनाके पीछे जो उद्देश्य है वह लोगोंको सजा देना नहीं, बल्कि शिक्षा देना है। शराब, अफीम, गाँजा वगैरह नशीली चीजोंको, और जहाँ ये बिकती हैं उन दुकानोंको राज्यकी ओरसे जो स्वीकृति मिली हुई है उसके हटते ही शिक्षणका रास्ता साफ हो जायेगा। मद्य-निषेध कानूनके अन्तर्गत जिन सजाओंका विधान किया जायेगा उनका स्वरूप आजतक प्रचलित सजाओंसे भिन्न रखना होगा। इसलिए अगर मेरी योजना स्वीकार कर ली जाती है, तो यह विश्वास रखकर चलना होगा कि लोग महुएका सदुपयोग करेंगे, और इस भयसे कि वे उसका दुरुपयोग करेंगे, उसके सभी उपयोगोंपर प्रतिबन्ध नहीं लगाया जायेगा। इसलिए शराबबन्दीके कानूनके अनुसार जिस तरह ताड़ीके सदुपयोगपर कोई अंकुश नहीं होगा उसी तरह महुएके सदुपयोगपर भी नहीं होगा। महुएके फूल, महुएके तेल और महुएकी लकड़ीके कुछ उपयोग, जो इन सज्जनने बताये हैं, मैं यहाँ उद्धृत करता हूँ:

१. ताजे महुए स्वादमें मीठे लगते हैं।

२. सुखाये हुए महुएसे अनेक प्रकारकी स्वादिष्ठ चीजें बनाई जाती हैं। गरीब लोगोंके लिए ये चीजें मिठाईका काम देती हैं।

३. पुराना बद्धकोष्ठ दूर करने में महुएका काढ़ा बड़ा गुणकारी होता है।

४. डोलिया कहे जानेवाले महुएके बीजको पेरकर निकाला हुआ तेल खाने के काममें आता है। गरीबोंका यह घी है।

५. महुआ मनुष्य और ढोर दोनोंके लिए पुष्टिकारक माना जाता है।

६. तंगी और अकालमें, जिनका खेड़ा जिलेपर अक्सर प्रकोप होता रहता है, गरीब आदमियोंको महुआ बिलकुल भूखों मरने से बचाने में बहुत मदद करता है।

७. डोलियेका तेल कपड़े धोने का साबुन बनाने के लिए खासकर पसन्द किया जाता है।

८. महुएकी लकड़ीका ईंधन तथा इमारती काम दोनोंमें उपयोग किया जाता है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २५-९-१९३७

२०२. पत्र : सरस्वतीको

सेगाँव
२५ सितम्बर, १९३७

चि० सरस्वती,

तुम्हारा खत मिला। तुम्हारे जरा भी चिन्तीत नहीं रहना है। कांति जैसा कहे वैसा किया करो। अमतुलसलामको खत लिखने की कोई आवश्यकता नही है। वह तो मेरे साथ ही है। तुम दोनोंके खुश हालसे वह खुश रह सकती है।

जब यहां आने की सम्मति मामाजी[1] और कांति दे तब आना। तवतक तो तुम्हारे अभ्यासमे ही परायण रहना। मनको स्थिर रक्खो।

अब तो कांतिके खत आते होंगे।

अस्पतालोंका तो जैसा लिखती है वैसा ही है। किसीको किसीकी नही पड़ी है। जो हमारे संबंधी नहीं उनको संबंधी समझना और उनकी सेवा करना वही सच्ची अहिंसा है और वही दयाभाव है।

मेरी तबियत अच्छी है। बा की भी अच्छी है।

नीमु, देहरादून हिन्दी और अंग्रेजी सीखने गई है।

लक्ष्मी अब भी मद्रासमें ही है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१६५) से। सी० डब्ल्यू० ३४३८ से भी; सौजन्य : कांतिलाल गांधी

२०३. बम्बईमें प्राथमिक शिक्षा[2]

अबतक मैंने जो चर्चा की है, वह ग्राम-शिक्षाके बारेमें की है, क्योंकि यही सारे हिन्दुस्तानका प्रश्न है। यदि इसको हम सीधी तरहसे हल कर सकें तो शहरोंके सम्बन्धमें कठिनाई नहीं होगी, यह समझकर मैंने शहरोंके बारेमें कुछ नही लिखा है। लेकिन बम्बईकी शिक्षामें दिलचस्पी लेनेवाले एक नागरिकने निम्नलिखित प्रश्नका उत्तर माँगा है :

१. जी० रामचन्द्रन्।
२. इस लेखका अंग्रेजी अनुवाद **हरिजन**के ९-१०-१९३७ के अंकमें प्रकाशित हुआ था।

कांग्रेस मन्त्रिमण्डल प्राथमिक शिक्षाके भारी खर्चके प्रश्नको हल करने में व्यस्त दीख पड़ता है। ऐसा सुझाव दिया गया है कि शिक्षाका खर्च उस शिक्षासे ही निकल सकता है। बम्बई-जैसे शहरमें किस तरहसे और किस हदतक इस दिशामें बढ़ा जा सकता है, इस प्रश्नकी चर्चा आवश्यक लगती है। कहा जाता है कि इस वर्ष शिक्षाके पीछे बम्बई कार्पोरेशनको अनुमानतः ३५ से ३६ लाख रुपये खर्च करने पड़ेंगे; और सारे शहरमे शिक्षाको अनिवार्य करने से कई लाख रुपयेका खर्च और बढ़ जायेगा। शिक्षकोंकी तनख्वाहपर २० लाख और किरायेमें ४ लाखसे ज्यादाकी रकम खर्च होती है। प्रति विद्यार्थी औसत सालाना खर्च ४० से ४२ रुपये होता है। विद्यार्थी पढ़ते-पढ़ते इतनी रकमका काम करें, तभी शिक्षाका खर्च शिक्षामें से निकल सकता है। यह कैसे हो सकता है?

मेरा तो दृढ़ विश्वास यही है कि यदि प्राथमिक शिक्षामें उद्योगोंके तत्त्वको लागू कर दिया जाये, तो उसमे बम्बईके बालकों और बम्बई शहरको लाभ ही होगा। शहरमें पले-बढ़े बालक तोतेकी तरह कविताएँ रटेंगे और सुनायेंगे, नाचेंगे, अन्य हाव-भाव दिखायेंगे, ढोल बजायेंगे, कूच करेंगे, इतिहास-भूगोलके जवाब देंगे, और कोई थोड़ा अंकगणित जानेंगे; पर उससे आगे नहीं बढेंगे। मैं भूल गया। वे थोड़ी अंग्रेजी जरूर जानते होंगे; पर यदि एक टूटी हुई कुर्सी ठीक करनी हो अथवा फटा हुआ कपड़ा सीना हो, तो वे नहीं कर सकेंगे। ऐसी बातोंमें हमारे शहरोंके लड़के जितने पंगु देखने में आते हैं, उतने पंगु लड़के मैंने दक्षिण आफ्रिका या इंग्लैण्डके अपने प्रवासमे कहीं नहीं देखे।[1] अभी तो अपनी प्राथमिक शिक्षाके बाद वे बच्चे जितनी योग्यताका परिचय दे सकते हैं वह कुछ खास नहीं होती और उन्हें योग्य नागरिक बनाने की दृष्टिसे तो वह बेकार ही होती है।

इसलिए मैं तो यह मानता हूँ कि यदि शहरोंमें भी उद्योगों द्वारा ही शिक्षा दी जाये, तो उससे बालकोंको बेहद लाभ हो सकता है, और यदि ३५ लाख नहीं, तो उसका एक बहुत बड़ा हिस्सा तो अवश्य बच सकता है। ४२ रु० के बजाय यदि वार्षिक खर्च ४० रु० प्रति बालक ही मान लिया जाये, तो कहा जा सकता है कि नगर निगम ८७,५०० बालकोंको पढ़ाता है। यदि दस लाखकी आबादी हो तो बालकोंकी संख्या कमसे-कम डेढ़ लाख होनी चाहिए, अर्थात् लगभग ६२,००० बालक बिना शिक्षाके रहते होंगे। यदि यह मान लें कि ये सब गरीब नहीं होंगे और इसलिए बालक निजी स्कूलोंमें भी जाते होंगे, तो भी ५६,००० बालक बचते हैं। इस हिसाब-से उनके लिए २२ लाख ४० हजार रुपये और चाहिए। इतने पैसे बम्बई कब पैदा करे और कब सब बालकोंको पढ़ाये? और क्या पढ़ाये?

मेरी मान्यता है कि शिक्षा अनिवार्य और मुफ्त होनी ही चाहिए। किन्तु बालकोंको उपयोगी उद्योगोंकी शिक्षा दी जानी चाहिए और उसके जरिये उनके मन और

१. अगला वाक्य **हरिजन**से लिया गया है।

शरीरका विकास किया जाना चाहिए। मैं यहाँ भी पैसोंका हिसाब करता हूँ, उसे अनुचित नहीं मानना चाहिए। अर्थशास्त्र नैतिक और अनैतिक दोनों प्रकारका होता है। नैतिक अर्थशास्त्रमें दोनों पहलू बराबर होंगे। अनैतिकमें ताकतवरके दो भाग होंगे। इसका अनुपात उसकी ताकतपर निर्भर करता है। जैसे अनैतिक अर्थशास्त्र घातक है, वैसे ही नैतिक आवश्यक है। उसके बिना धर्मकी पहचान और उसका पालन मैं असम्भव मानता हूँ।

मेरा नैतिक शास्त्र मुझे यह अवश्य बताता है कि बम्बईके बालक हँसते-खेलते प्रतिमास तीन रुपयेका काम कर सकते हैं। यदि वे ४ घंटे काम करें और हर घंटेके दो पैसे माने जाये, तो महीनेमें २५ दिन खुलनेवाले स्कूलमें वे ५० आने यानी ३-२-० का काम कर सकते हैं।

जब शिक्षाके रूपमें उद्योग सिखाया जायेगा, तब ऐसा मानने का कोई कारण नहीं है कि बालक कामके बोझसे दब जायेंगे। नाममात्रके शिक्षक इतिहास-भूगोल-जैसे सरल और सरस विषयोंको सिखाते हुए शिष्योंको भार-स्वरूप लगते हैं। सच्चे अध्यापक हँसते-खेलते अपने शिष्योंको उद्योग सिखाते हैं, यह मैंने अपनी आँखोंसे देखा है। ऐसे शिक्षक कहाँसे लाये जायें, यह तो कोई नहीं बतायेगा। कोई चीज करने लायक है, ऐसा मानने के बाद उसे करनेवाले लोग तैयार करना तो स्वभावतः उसे मानने-वाले व्यक्ति या संस्थाका धर्म हो जाता है। ऐसे शिक्षकोंको तैयार करने मे समय तो लगेगा ही। आजकी अनुपयुक्त शिक्षा-पद्धतिको गढने और उसके लिए शिक्षक तैयार करने में जितना समय लगता है उसका शतांश भी इसमे नहीं लगेगा। खर्च तो अनुपातमें कम ही लगेगा। यदि मेरे हाथमें बम्बई् नगर निगम हो, तो मैं अपनी परिकल्पनामें थोड़ी-बहुत श्रद्धा रखनेवाले शिक्षा-शास्त्रियोंकी एक छोटी-सी समिति नियुक्त करके उनसे एक महीनेके भीतर योजनाकी माँग करूँ और उसपर अमल शुरू कर दूँ। इसमें यह मान्यता अवश्य आ जाती है कि मुझे इस परिकल्पनाकी सम्भावनाके बारेमें अचल श्रद्धा है। परायी श्रद्धासे आजतक कोई अच्छा व महान् कार्य नहीं हुआ।

एक प्रश्न बाकी रहता है। कौन-सा उद्योग शहरोंमें सरलतापूर्वक सिखाया जा सकता है? मेरे पास तो उत्तर तैयार ही है। मैं जो चाहता हूँ, वह गाँवोंकी ताकत है। आज गाँव शहरोंके लिए जीते हैं, उनपर निर्भर हैं। यह अनर्थ है। शहर गाँवों पर निर्भर रहें, अपने बलका सिंचन गाँवोंसे करें अर्थात् अपने लिए गाँवोंका बलिदान करने के बजाय खुद गाँवोंके लिए बलिदान और त्याग करें, तो अर्थ सिद्ध होगा और अर्थशास्त्र नैतिक बनेगा। ऐसे शुद्ध अर्थकी सिद्धिके लिए शहरोंके बालकोंके उद्योगोंका गाँवोंके उद्योगोंके साथ सीधा सम्बन्ध होना चाहिए। इसके लिए मेरे खयालमें अभी तो पींजनसे लेकर कताई तकके उद्योग आते हैं। आज भी कुछ हदतक तो ऐसा होता ही है। गाँव कपास देते हैं और मिलें उससे कपड़ा बुनती हैं। इसमें शुरूसे आखिरतक अर्थका नाश किया जाता है। जैसे-तैसे कपास बोई जाती है, जैसे-तैसे चुनी जाती है और जैसे-तैसे साफ की जाती है। इस कपासको किसान कई बार

नुकसान सहकर भी राक्षसी ओटाई मिलोंको बेचता है। वहाँ वह बिनौलेसे अलग होकर, दबकर, अधमरी बनकर मिलोंमें गाँठोंके रूपमें जाती है। वहाँ उसे पींजा जाता है, काता जाता है और बुना जाता है। ये सब क्रियाएँ इस तरह होती हैं कि कपासका तत्त्व — सार — तो जल जाता है और उसे निर्जीव बना दिया जाता है। मेरी भाषाका कोई बुरा न माने। कपासमें जीव तो है ही। इस जीवके प्रति मनुष्य या तो कोमलतासे बरताव करे या राक्षसकी तरह। आजकलके बरतावको मैं राक्षसी व्यवहार मानता हूँ।

कपासकी कुछ क्रियाएँ गाँवोंमें और शहरोंमें हो सकती हैं। ऐसा होने से शहरों और गाँवोंका सम्बन्ध नैतिक और शुद्ध होगा। दोनोंकी वृद्धि होगी और आजकी अव्यवस्था, भय, शंका, द्वेष सब मिट जायेंगे या कम हो जायेंगे। गाँवोंका पुनरुद्धार होगा। इस परिकल्पनापर अमल करने में थोड़े-से द्रव्यकी ही जरूरत है। वह आसानीसे मिल सकता है। विदेशी बुद्धि या विदेशी यन्त्रोंकी जरूरत ही नहीं रहती। देशको भी अलौकिक बुद्धिकी जरूरत नहीं है। एक छोरपर भुखमरी और दूसरे छोरपर जो अमीरी चल रही है, वह मिट जायेगी और दोनोंका मेल सधेगा; और विग्रह तथा खून-खराबीका जो भय हमको हमेशा लगा रहता है, वह दूर होगा। पर बिल्लीके गलेमें घंटी कौन बाँधे? बम्बई नगर निगमका हृदय मेरी परिकल्पनाकी ओर किस प्रकारसे आकर्षित हो? इसका जवाब मैं सेगाँवसे दूँ, इसकी बजाय प्रस्तुत पत्र लिखनेवाले बम्बईके विद्या-रसिक नागरिक ही ज्यादा अच्छी तरह दे सकते हैं।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २६-९-१९३७

२०४. टिप्पणियाँ

सामाजिक प्रयत्नकी आवश्यकता

एक सज्जन लिखते हैं:[1]

यह कहा जा सकता है कि हिन्दू धर्मावलम्बियोंमें इस प्रकारकी मान्यता[2] लगभग सभी जगह प्रचलित है। इसके मूलमें जाने की आवश्यकता नहीं। मुझे तो पता भी नहीं। इस युगमें, जबकि स्त्री-पुरुषके अधिकार समान माने जाते हैं और माने जाने चाहिए, दोनोंका मूल्य भी समान आँकना चाहिए। पुत्र-जन्मसे इतना हर्ष क्यों? और पुत्रीके जन्मसे शोक क्यों? दोनोंको जीने का समान अधिकार है। दोनोंके अस्तित्वसे

१. यहाँ पत्रका अनुवाद नहीं दिया गया है। इसमें पत्र-लेखकने गांधीजी का ध्यान एक ५५ वर्षीय खादी-कार्यकर्त्ताके विवाहकी ओर खींचा था, जिनकी एक बार **हरिजनबन्धु**में प्रशंसा की गई थी और जिन्होंने पुत्र-प्राप्तिके लिए एक २० वर्षीय विधवासे विवाह कर लिया था।

२. पुत्रीकी तुलनामें पुत्रकी श्रेष्ठताकी मान्यता।

ही संसार चल सकता है। लेकिन जो मान्यता प्राचीन कालसे जड़ जमाये हुए है, वह एक या अधिक लोगोंके लिखने-मात्रसे एकाएक दूर नहीं हो सकती। हिन्दू-समाजमें जब सारासार विवेकका ज्ञान फैलेगा, स्त्रियोंका सच्चा आदर होने लगेगा, तभी कच्छके इन सज्जनने जिन बातोंका उल्लेख किया है, वे बन्द होंगी। आज तो यह हालत है कि जहाँ लड़कियाँ-ही-लड़कियाँ पैदा होती हैं वहाँ पति और पत्नी दोनों दूसरे विवाहके लिए सहमत हो जाते है। यह कहना उचित नही है कि इसमें उनकी विषयेच्छा ही प्रबल होती है। इसमें केवल एक विशेष भावना ही प्रबल होती है। भावना एकाएक इच्छा-मात्रसे बदली नहीं जा सकती। इसके लिए अच्छी तरहसे सामाजिक प्रयत्न करने की आवश्यकता होती है।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २६-९-१९३७

२०५. पत्र : वी० वी० अतीतकरको

सेगाँव, वर्धा
२६ सितम्बर, १९३७

प्रिय अतीतकर,

आप सरकारसे अनुदानकी माँग करें और अनुदान लें, इसमें कांग्रेसकी दृष्टिसे कोई नैतिक या कानूनी दोष नहीं है, लेकिन आपकी इस बातसे मैं सहमत हूँ कि आप ऐसा न करें तो यह ज्यादा अच्छा होगा।

हालमें शिक्षाके सम्बन्धमें मैं जो विचार व्यक्त करता रहा हूँ, उनसे आप देख सकते हैं कि विश्वविद्यालय यदि सरकारके लिए भार-रूप होते हैं तो मैं उनकी संख्या बढ़ाने के पक्षमें नहीं हूँ। लेकिन अगर सरकारसे कोई पृथक् परीक्षा विश्वविद्यालय खोलने को कहा जाता है तो मैं बेझिझक मंजूरी दे दूँगा, क्योंकि ऐसी संस्थाको जो परीक्षा-शुल्क मिलेगा उसके बलपर वह स्वावलम्बनसे भी बेहतर अवस्थामें रहगी। बहरहाल, जो लोग भी विश्वविद्यालय खोलने के लिए परवाना पाना चाहें उन्हें इस बातका ध्यान रखकर चलना होगा कि वह विश्वविद्यालय स्वावलम्बी होना चाहिए। कॉलेजोंको और अगर विश्वविद्यालयमें स्कूलोंको भी शामिल करना हो तो उन्हें भी स्वभावतः विश्वविद्यालय द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रम तथा उसके बनाये विनियमोंपर चलना होगा। इसलिए यदि आप विश्वविद्यालयको स्वावलम्बी बना सकते हैं, अर्थात् यदि आप मानते हों कि आपकी परीक्षाओंमें बैठनेवाले काफी विद्यार्थी मिल जायेंगे तो आप लोकमान्य विश्वविद्यालयकी स्थापनाका परवाना पाने के अधिकारी हैं।

मेरी परिकल्पनाके अन्तर्गत तो हर कला तथा दस्तकारीके लिए कॉलेज होंगे, और इसलिए इन शर्तोंपर चाहे जितने भी विश्वविद्यालय खोले जायें, मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत अतीतकर
तिलक स्मारक विद्यापीठ
पूना

अंग्रेजीकी नकलसे; प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

२०६. पत्र: वल्लभभाई पटेलको

सेगाँव
२६ सितम्बर, १९३७

भाई वल्लभभाई,

तुम्हारे पत्र तो मुझे मिलते रहते हैं। तुम पाँच दिनकी यात्रा कर सके, यही बात मुझे आश्चर्यजनक लगती है। यदि समान रूपसे कार्य करनेवाले दो व्यक्ति[1] एक साथ मिल जायें तो दोनोंको परेशानी होने लगती है। दो कमजोर व्यक्तियोंका साथ तो कभी-कभी निभ जाता है। ताकतवर आदमीके मनमें भी कमजोर व्यक्तिके प्रति थोड़ी-बहुत सहानुभूति तो अवश्य होती है, इसलिए कुछ हदतक उनमें निभ सकती है। तुम दोनों ऐसे इकट्ठे हुए हो कि एक यदि सेर है तो दूसरा सवा सेर; इसलिए तुम दोनोंकी यात्रा तो अवश्य देखने लायक रही होगी। ठीक है। तुमने कमला स्मारकका कर्ज तो अदा कर ही दिया। फिर चिन्ता किस बातकी? और आजकलके समयको देखते हुए यह रकम अच्छी कही जायेगी। (अहमदाबाद)के मिल-मालिकोंने क्या ठीक-ठीक चन्दा दिया?

काठियावाड़ परिषद्‌की बात मैं समझता हूँ।

नरीमान काण्डको[2] भूल जाना। तुमने अपनी चिन्ता मुझे सौंपी है और मैंने बहादुरजी[3]को। वे तो बहुत परिश्रमी व्यक्ति दीख पड़ते हैं। वे रोज समय निकाल कर एक-एक पत्र पढ़ते हैं और उसपर टिप्पणी लेते हैं। इन सबको पढ़ने में ही दो

१. सरदार पटेल और जवाहरलाल नेहरूने कमला नेहरू स्मारक कोषके सिलसिलेमें गुजरातका संयुक्त दौरा किया था।

२. देखिए "वक्तव्य: समाचारपत्रोंको", १६-१०-१९३७।

३. डी० एन० बहादुरजी।

हफ्ते लग जायेंगे। उनके पास ढेरों मामले हैं। इसे भी वे मानों उन्हींमें से एक मानकर समय निकालकर पढ़ते हैं। इसलिए तुम समयकी चिन्ता मत करना और जो होना होगा सो होने देना। अखबारोंमें तुमपर जो आक्रमण किये जाते हैं, तुम उन्हें पढ़ना ही नहीं।

इसके साथ मैं एक पत्र भेज[1] रहा हूँ, उसे पढ़कर वापस भेजना। ऐसा भाषण तुमने कब दिया था?

यदि कांग्रेस-अधिवेशनमें बहुत खर्च होता है तो मेरे विचारसे यह हमारे दिवालियेपनका सूचक होगा। हमारे पास पैसोंकी कमी है; इसमें मुझे हमारी मौत दिखाई देती है। कांग्रेसमें हम जो साज-सज्जा करनेवाले हैं वह साज-सज्जा किरायेकी होगी। यह [कांग्रेस] स्वयंसेवकोंकी लोक-सेवाकी भावनाका परिचायक न होगी। मैं जो यह सब लिख रहा हूँ सो तुम्हारी आलोचना करने के विचारसे नहीं लिख रहा हूँ। यह तो हमारा भविष्य है। हमारी स्थितिका करुणाजनक चित्र है। पाँच-सात दिन पहले मैंने रामदासको एक पत्र भेजा था। उसमें मैंने इन्हीं विचारोंका प्रतिपादन किया है; लेकिन भिन्न रूपसे। चाहे जो हो, तुम इससे यह निष्कर्ष न निकालना कि वहाँका काम बिगड़ता हो तो बिगड़े। तुम इसे यथाशक्ति, यथामति चलाते जाना। चूंकि मैं यह पत्र तुम्हारे लिए ही लिखवाने बैठा हूँ इसलिए यह सब लिखवा रहा हूँ।

महादेवको धूलिया भेजा है। . . . .[2]

मैंने इस पत्रकी शुरुआत दरबार-प्रसंगके सम्बन्धमें की थी। लेकिन मैंने ऊपर जो लिखा है वह तो प्रस्तावना ही है। कांग्रेस-नगर न बनवाकर, गाँव बनवाना। उसमें ग्रामीण कला मुखर हो उठे तो अच्छा। कलाके लिए बुद्धि और हृदयकी जरूरत है, पैसेकी कदापि नहीं। इसलिए बनावटी शोभामें तुम किसीको एक पैसा भी खर्च न करने देना। मुझे लगता है कि मिठाईकी दुकानोंमें और चाय-घरोंमें केवल गायके दूध और घीका उपयोग किया जा सकता है। अर्थात् लोगोंको स्टोर हमसे खरीदने चाहिए अथवा बिक्री हम लोगोंकी देख-रेखमें होनी चाहिए और उस देख-रेखमें जो खर्च हो उसके लिए पैसे लेकर (दुकानदारोंको) परवाने दिये जाने चाहिए। मैं यह अवश्य मानता हूँ कि हमें मिठाई और चाय आदिकी सुविधा प्रदान करनी चाहिए।

अब दरबारके सम्बन्धमें। दरबारका गाँव हमें दरबारकी खातिर नहीं, अपितु अपने आत्म-सम्मानके लिए वापस लेना होगा। दरबार तो ढसा की राजधानी छोड़ खेड़ाको राजधानी बना बैठे हैं। ढसा के दरबारसे कोई परिचित न था, खेड़ाके दरबार को सब कोई जानते हैं। इसलिए रावजीभाईके[3] पत्रका मुझपर कोई असर नहीं

१. पत्रमें शिकायत की गई थी कि माण्डवीमें एक भाषणके दौरान सरदार पटेलने यह आरोप लगाया था कि बम्बईके लोगोंको गन्दे नालेका पानी दिया जाता है।

२. साधन-सूत्रके अनुसार।

३. रावजीभाई मणिभाई पटेल।

हुआ। उसपर तो क्रोध आता है। लेकिन बूढ़ेको बुढ़ापेमें क्रोध नहीं करना चाहिए; फिर वे दूर बैठे हैं, इससे अपने क्रोधको दबा देता हूँ। उन्हें ढसा की जितनी चिन्ता है उससे कहीं अधिक हमें हो सकती है और है। और दरबारसे अपनी मित्रताके कारण उन्हें यह चिन्ता है। हमें तो यदि दरबार मित्र न होते बल्कि एक राष्ट्रीय सेवक होते तो भी चिन्ता करनी पड़ती। और यदि न करते तो कांग्रेसमें हमारी दो कौड़ीकी भी कीमत न रह जाती। लेकिन यह सब तो इधर-उधरकी बातें हुईं। रावजीभाईने जो खबर दी है उसके आधारपर कहा जा सकता है कि हमें अभी तुरन्त काम शुरू कर देना चाहिए। मैंने तो सोचा था कि नया मन्त्रिमण्डल तनिक साँस ले ले तब इसे शुरू करेंगे। अब तो मैं समझता हूँ कि तुम्हें गुजरात कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष के रूपमें अथवा उसके सैक्रेटरीको मुख्य मन्त्रीको[1] लिखना चाहिए कि वे कांग्रेसकी प्रतिष्ठाके लिए दरबारके मामलेको अपने हाथमें लें और गवर्नरको सलाह दें कि वे दरबारको ढसा वापस दिलायें। मुझे लगता है कि गवर्नर उनकी बातको मानेंगे और मुझे इसमें कुछ नहीं करना होगा।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
स्वराज्य आश्रम
बारडोली

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २१०-१४

२०७. पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
२७ सितम्बर, १९३७

प्रिय विद्रोहिणी,

अरी ओ, अविश्वासिनी! जबतक तुम्हारे पत्रोंमें ऐसी कोई बात नहीं होती जिसे मैं किसी अन्य व्यक्तिको पढ़ाना चाहता होऊँ, मैं तुम्हारे सारे पत्रोंको नष्ट कर डालता हूँ और उन्हें कोई नहीं पढ़ पाता। तुम जबसे औजारवाले बक्सेके निकटके उस कोनेको सूना करके गई हो तबसे केवल एक बार किसी ने तुम्हारा पत्र पढ़ा है।

इस बातकी तुम कुछ परवाह मत करो कि लोग ज०[2] या उसके प्रति तुम्हारे पक्षपातपूर्ण रवैयेके बारेमें क्या कहते हैं। जैसे हम यह चाहते हैं कि हमारे पड़ोसी

१. बी० जी० खेर।
२. जवाहरलाल नेहरू।

हमसे प्रेम करें वैसे ही अगर हम भी उनसे प्रेम करना चाहते हैं तो हमें उनके व्यवहारकी विचित्रताओंको सहना पड़ेगा। भला ऐसी कौन-सी स्त्री अथवा पुरुष है जिसके व्यवहारमें विचित्रता न हो? जो इनसे मुक्त हो वही दूसरोंसे कुछ कहे। क्या तुम हो या ऐसे किसीको जानती हो? मै तो नही जानता; और मैं छोटा या बड़ा जैसा भी हूँ, अपनेको भी इसका अपवाद नही मानता।

वह तो बड़ा ही महत्त्वपूर्ण दिन होगा जब तुम, विलम्बसे ही सही, खद्दरसे विवाह रचा लोगी। जब तुम ऐसा कर लोगी तब देखोगी कि खद्दर-प्रेमके माध्यमसे ही तुम्हारी अन्य रुचियाँ भी तुष्टि पा लेगी। अनन्य प्रेम ही विवाहका अर्थ और उसका रहस्य है। और जिस विवाहमें अनन्य प्रेम नही है वह व्यभिचार है, कोरी मूर्तिपूजा है। देवता अनेक है लेकिन ईश्वर एक। खैर, बहुत उपदेश हो गया।

चार्लीके लिए एक अलग पत्र संलग्न है।

मैंने सु०[1] से पहले ही कह दिया है कि जबतक वह पूर्ण स्वस्थ नहीं हो जाता तबतक उसे कलकत्ता नही जाना है, और न किसी कामको सक्रिय रूपसे हाथमें लेना है। पूर्ण स्वस्थ हो जाने पर भी वह ज० का स्थान नहीं ले सकता, क्योंकि ज० के पास शक्तिका अक्षय भण्डार और एकाग्रचित्तता है।

नागपुरमें तुम सफल ही रहोगी।

हाँ, मेरा खयाल है कि दवासे फायदा हुआ है और डाक्टरोंका भी यही विचार है।

साथमें मीराका कलका पत्र है। मेरे भुलक्कड़पनकी वजहसे यह कल भेजा नहीं गया। क्या इसे प्रेममें कमीका द्योतक समझा जाये? प्रेम कभी नहीं भूलता।

आज तो बस इतना ही।

स्नेह।

डाकू, तानाशाह एण्ड कं०

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६१३) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६४२२ से भी

१. सुभाषचन्द्र बोस।

२०८. पत्र : नारणदास गांधीको

सेगाँव, वर्धा
२७ सितम्बर, १९३७

चि० नारणदास

आज तो दायाँ हाथ इस्तेमाल करने का दिन है।[1] नरोत्तमकी कमी तुम्हें वहाँ अवश्य महसूस होगी, जैसे मुझे प्रतिक्षण छोटेलालकी कमी महसूस होती है। जिस उत्साहके साथ तुम सबने रेंटिया बारस के लिए काम किया था वैसा उत्साह सदा बना रहे। यही नरोत्तमका स्मारक कहा जायेगा और तब कह सकेंगे कि रेंटिया बारस भी ठीक तरहसे मनाई गई।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू० /२) से। सी० डब्ल्यू० ८५३९ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

२०९. पत्र : महादेव देसाईको

सेगाँव
२७ सितम्बर, १९३७

चि० महादेव,

सारी सामग्री तो तैयार नहीं है। जो है वह भेजे देता हूँ। इसे जाँच लिया गया है।

मैं इससे जल्दी जानबाको नहीं भेज सका। मीराबहनने तो अच्छी तरहसे जाँच कर ली है। जो सामग्री चन्द्रशंकरको भेज सकते हो सो भेज दो और 'हरिजन सेवक' और 'हरिजनबन्धु' की विषय सामग्रीको कलतकके लिए स्थगित कर। दो इस तरह संशोधनके लिए तुम्हारे पास एक प्रति भी रह जायेगी और डाक भी समय से चली जायेगी। लेकिन जैसा ठीक लगे वैसा करना। मैंने गुरुदेवको[2] जो पत्र लिखा है वह और उसकी दो प्रतियाँ इसके साथ हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५७२) से।

१. देखिए "पत्र : कान्तिलाल गांधीको", पृ० २०० ।
२. देखिए "पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको", पृ० १७४।

२१०. पत्र : गोविन्दराव वी० गुरजलेको

सेगाँव, वर्धा
२८ सितम्बर, १९३७

भाई गुरजले,

तुम्हें तुम्हारे संन्यासाश्रमवाले नामसे सम्बोधित न करूँ, मुझे यह ठीक लगता है, क्योंकि यह नाम अभी तक मेरे जीभ पर नहीं चढ़ा है। मुझे लगता है कि तुमने चायके बारेमें जो-कुछ कहा है, बिना सोचे-समझे कहा है। क्या तुम हजारों परिवारो की आर्थिक बरबादीकी बात सिद्ध कर सकते हो? मैं चाय और काफीकी आदतकी बुराइयोंके बारेमें थोड़ा-बहुत जानता हूँ, और मैंने इसके विरुद्ध लिखा भी है। लेकिन तुमने यह जो कड़ी निन्दा की है, उसे मैं ठीक नहीं मान पा रहा हूँ। चाय-काफी और शराबकी परस्पर कोई तुलना नहीं हो सकती। यदि चाय और काफी बहुत अधिक मात्रामें ली जाये तो उससे स्वास्थ्य पर बुरा असर होता है। लेकिन शराब तो, दवाके सिवा किसी और रूपमें नपी-तुली मात्रामें भी नहीं ली जा सकती। वह शरीर, मन तथा आत्मा सबका नाश करती है। अतएव मैं तो तुम्हें यही सलाह दूँगा कि जो लोग शराब और मादक द्रव्योंका सेवन करते हैं, तुम उनकी इस आदतको छुड़ानेके लिए जी-जानसे जुट जाओ और अन्य सवाल न उठाओ, फिर चाहे वे स्वयंमें कितने ही महत्त्वपूर्ण क्यों न हों।

तुम्हारे पत्रपर लिखे सरनामे और तुम्हारा संन्यासी नाम देखकर क्या मैं समझूँ कि तुम्हें अब शान्ति मिल गई है, तुम अच्छी तरह हो और तुम्हें अपने सन्तोष के योग्य सत्यकी प्राप्ति हो गई है?

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

स्वामी निर्मलानन्द भिक्षु
गांधी मिशन सोसाइटी
कृपा आश्रम, गांधी कुप्पम
तिरुवेन्नैनलूर डाकखाना, एस० इंडिया[1]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४०१) से। प्यारेलाल पेपर्स से भी; सौजन्य प्यारेलाल

१. पता प्यारेलाल पेपर्स की नकल से लिया गया है।

२११. पत्र : मनु सूबेदारको

२८ सितम्बर, १९३७

भाई सूबेदार,

तुम्हारे पत्रोंसे मैं ऊबनेवाला नहीं हूँ। लेकिन तुम्हारी टिप्पणियाँ यदि मैं न छापूँ, तो इससे नाराज मत होना। इन टिप्पणियोंमें से कुछ-न-कुछ तो मैं अपने लिए सुरक्षित रख लेता हूँ। लेकिन जनताके सामने तो मुझे जो रुचे वही रखना है न?

कोयाजीके लेख का[1] असर मुझपर होगा, ऐसा सम्भव नहीं लगता, क्योंकि इन दो मामलोंमें मेरी स्थिति ही अलग है। मद्यपान-निषेध तथा आबकारी की आय लगभग बन्द हो जाने पर उसके बदलेमें किसी और स्रोतमें पैसा जुटाने के बारेमें मेरी सलाह यह है कि तुम मद्रासमें पेश किये गये विधेयकका ठीकसे अध्ययन कर जाओ। अगर उसमें कुछ सुझाव देने लायक लगे तो मेरे पास भेजना। तुम्हारा सुझाव मैं राजाजी को भेज दूँगा। मैं समझता हूँ, मद्यपानके सम्बन्धमें इस दृष्टिसे जितना विचार हम दोनोंने किया है उतना किसी औरने नहीं किया होगा। और अगर किसीने किया हो तो मैं उसे नहीं जानता।

गुजरातीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

२१२. एक पत्र

२८ सितम्बर, १९३७

प्रिय बहन,

गुजरात विद्यापीठके विषयमें आपको आलोचना करने का अधिकार था। फिर, आलोचना मुझे अच्छी भी लगती है। आपने जो तीन बातें लिखी हैं उन्हें मैं स्वीकार करता हूँ। लेकिन आपने विद्यापीठको निष्फल माना है, इसे मैं स्वीकार नहीं करता। गुजरात विद्यापीठ या अन्य राष्ट्रीय विद्यापीठोंने हमारे संघर्षमें जो योगदान दिया है वैसा अन्य विश्वविद्यालयोंने नहीं दिया। और उसका कारण सिर्फ यही नहीं था कि

१. जे० सी० कोयाजीके लेखके कुछ अंश, जो २-१०-१९३७ के **हरिजन**में "एन इकनॉमिस्ट ऐंड हिज फिगर्स" (एक अर्थशास्त्री और उसके आँकड़े) शीर्षक से महादेव देसाई की टिप्पणी के साथ प्रकाशित हुए थे।

वे सरकारी संस्थाएं थीं, बल्कि उसका कारण तो यह था कि इन संस्थाओंके विद्यार्थियों और शिक्षकोंका मानस ही भिन्न था। फिर भी जिन बातोंका आपने उल्लेख किया है वे न होतीं तो राष्ट्रीय विद्यापीठोंने जितना योगदान दिया उससे बहुत अधिक दे पाते। लेकिन इनपर तो जब हम मिलेंगे तब विचार करेंगे, क्योंकि प्रस्तुत विषयसे इनका निकट-सम्बन्ध है और इसलिए उसको समझनेमें इनसे सहायता मिलेगी। जो बात जिस रीतिसे मैं आज रख रहा हूँ उसे उसी रीतिसे विश्वविद्यालयकी सभामें नही रखा जा सकता।

गुजरातीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

२१३. पत्र : लक्ष्मीदासको

२९ सितम्बर, १९३७

तुम्हारा पत्र मिला। तुम खुले दिलसे लिखते हो, यह मुझे अच्छा लगता है। वल्लभभाईको लिखकर तुमने अच्छा किया। तुम उन्हें लिखते रहना। उस भाषणके समय क्या तुम उपस्थित थे?

तुम किशोरलालभाईके साथ पत्र-व्यवहार कर रहे हो, यह तो बहुत अच्छी बात है।

उपमा उपमेयसे पूरी तरहसे नही मिलती। गुरु आदिकी उपमा पितासे दी जाती है, इसका मतलब यह नहीं कि वे सर्वांशतः पिता हैं, बल्कि यह है कि वे पिता-रूप हैं। किशोरलालभाईके कहने का आशय यही हो सकता है कि यदि सरदार गुजरातमें गुजरातियोंके लिए पिता-रूप हैं तो गुजराती चाहे जहाँ हों, सरदारके प्रति उनका यही भाव होना चाहिए। यह बात और है कि उनमें इस रूपमें माने जाने लायक गुण सचमुच हैं या नहीं।

जो-कुछ लिखा है, उसका अर्थ मात्र यही है कि हमें हर वाक्य या वचन तौलकर ही लिखना या बोलना चाहिए।

गुजरातीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

२१४. पत्र : यूसुफ मेहर अलीको

२९ सितम्बर, १९३७

भाई मेहरअली,

कितने ही गुमाश्तोंको सेठ बना देनेवाले सेठ जमनालालजी गुमाश्तोंकी परिषद्का शिलान्यास करें, यह उचित ही है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि गुमाश्तोंके काम का समय लम्बा होता है। गुमाश्ता भाइयोंको इतना याद रखना चाहिए कि उनकी कार्य-सिद्धि विग्रहसे नहीं, बल्कि शान्ति, सत्य और दृढ़तासे ही होगी।

गुजरातीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

२१५. पत्र : शंकरलालको

२९ सितम्बर, १९३७

भाई शंकरलालभाई,

तुम्हारे पत्रमें एक प्रश्न ऐसा है जिसका तुम मुझसे उत्तर चाहते हो। तुम्हारा प्रश्न यह है कि दोष दिख रहा हो, फिर भी उसके प्रति सहिष्णु बने रहें, इसको आचरणमें कैसे उतारा जाये? तुमने अपने मुँहसे कहा और लिखा है कि तुम्हें तो खुद अपनेमें ही ढेरों दोष दिखाई देते हैं। फिर भी तुम खुद अपने प्रति कितने अधिक सहिष्णु हो! मैं अपने ढेरों दोष रोज देखता हूँ, लेकिन अपने प्रति मेरी सहिष्णुताका तो कोई अन्त ही नहीं है। अगर मैं अपने दोष देखकर भी अपने प्रति सहिष्णु न रहूँ तो मुझे तो रोज ही उपवास करने पड़ें, अनेक प्रकारके प्रायश्चितोंकी खोज करनी पड़े और आखिरकार छोटेलाल[1] ने जो मार्ग ग्रहण किया वही मार्ग ग्रहण करना पड़े। लेकिन मैं ऐसा कुछ नहीं करता। मैं मानता हूँ कि मेरी सहिष्णुता अनुचित स्थानपर नहीं है, और इसके द्वारा मैंने दूसरोंके दोष देखकर भी उनके प्रति सहिष्णु रहने की शिक्षा ली। फिर भी, अपने आदर्शतक तो मैं अभी नहीं पहुँच सका हूँ, क्योंकि जितना सहिष्णु मैं स्वयं अपने प्रति हूँ, उससे अधिक या कमसे-कम उतना सहिष्णु तो दूसरोंके प्रति मुझे होना ही चाहिए। लेकिन ऐसा मैं कर नहीं सका हूँ। फिर भी, दिन-प्रति-दिन मैं इस बातका खयाल रखता हूँ कि मुझे इस दिशामें बहुत आगे जाना है, और मैं जानता हूँ कि मैं आगे बढ़ रहा हूँ। इसके बावजूद दोषको दोषके रूपमें तो देखता ही हूँ। इन दोनों बातोंके कारण ऐसी शक्ति भी बढ़ती जाती है और बढ़नी ही चाहिए। यह शिक्षा मने सर्वप्रथम अपने माता-पितासे

१. छोटेलाल जैन, जिसने आत्महत्या कर ली थी देखिए पृ० १९८-९।

ग्रहण की। वे मेरे दोष देखकर भी सहिष्णु बने रहते थे। मैं तो उनका पुजारी था, लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि उनके दोष मैं नहीं देख सकता था। उनके प्रति मेरी सहिष्णुता निरन्तर बढ़ती गई, क्योंकि उनपर मेरी भक्ति ही ऐसी थी। बादमें भाई-बन्धुओंके प्रति भी यही आचरण चलता रहा। मेरा परिवार बढ़ता गया, और मेरा आचार वैसा ही रहा। इसलिए मुझमें न्यूनाधिक सहिष्णुता कायम ही रहती है।

गुजरातीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

२१६. पत्र : भगवानदासको

२९ सितम्बर, १९३७

भाई भगवानदास,

. . .[1] किसी भी कुमारिका विधुरके साथ संबंध करना मुझे अप्रिय भी है। लेकिन काफी अनुभवके बाद मैंने पाया है कि विवाहके बारेमें लड़कियां और लड़के अजीब प्रकारके मार्ग ग्रहण करते हैं। ऐसी हालतमें सुधारककी सब भावनायें निकम्मी हो जाती है। अहिंसक सुधारकके पास अपनी बुद्धिका और अपने हाथके बल सिवाय और कुछ बल तो है ही नहीं।

पत्रकी नकलसे। प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

२१७. पत्र : गोपीनाथको

२९ सितम्बर, १९३७

भाई गोपीनाथ,

दावेके बारेमें जो लिखा है वह सही है। छोटी-सी रकमके दावा करने में भी काफी खर्चा हो जाता है। लेकिन जो आदमी पंचायतका कानूनका ही प्रबंध होना चाहिये, वह आज नहीं है। ऐसी स्थितिमें एक सुवर्ण उपाय है, किसीको न उधार देना, किसीसे न उधार लेना। अगर उधार देना तो इस दृष्टिसे कि वह पैसे वापस आनेवाला नहीं। ऐसा करना पड़ता है। और करना पड़े तो ऐसे ही समझकर किया जाय कि यह केवल दान है। इतना ध्यानमे रखा जाय कि जिनका अदालतोंका काम पड़ता है ऐसे लोग करोड़ोंमें से बहुत कम रहते हैं। हम लोग [कर्ज][2] में से निकल

१. साधन-सूत्रके अनुसार।
२. मूलमें ठीक पढ़ा नहीं जाता।

जाय और हिन्दुस्तानी जनसंख्याके समुद्रमें बिंदुरूप बन जाय तो अदालतकी उपाधी हमें नही रहती है।

वैद्यके धंधेके बारेमें। प्राचीन कालमें वैद्य लोग अपना ज्ञानका लाभ मुफ्त देते थे। दवाई तक मुफ्त देते थे। साधारण रूपसे उसकी किंमत भी कम रहती। राजवैद्यादि धन्धादीकी औषधियां बनाते थे और बड़ा आडंबर करते थे। आज उन्हींके वर्गके रह गये।

पत्रकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

२१८. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

सेगाँव, वर्धा
२९ सितम्बर, १९३७

चि० कान्ति,

क्या तूने मेरा बहिष्कार कर दिया है? मैं रोज तेरे पत्रकी राह देखता हूँ, लेकिन पत्र नहीं मिलता। मैंने तेरी सारी इच्छाओंपर अमल तो किया है। अब तू और क्या चाहता है? मैं तेरी इस चुप्पीको उचित नहीं समझता।

जब मैंने तुझे पत्र लिखा था तभी मैंने नानजप्पाको भी लिखने का विचार किया था; लेकिन अत्यधिक कामकी वजहसे लिखना रह गया। सोमवारके अलावा और किसी दिन मैं दायें हाथसे लिखता ही नहीं; तथा सोमवारको 'हरिजन'का काम और किसी कामका समय नहीं बचने देता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३३१)से। सौजन्य: कान्तिलाल गांधी

२१९. पत्र : सैयद बशीर अहमदको[1]

[३० सितम्बर, १९३७ के पूर्व][2]

आपने तथ्यों और तर्कोंका पूरा खयाल रखे बिना जो यह राय जाहिर की है कि जो मुसलमान कांग्रेसमें शामिल होता है वह मुसलमानोंके हितोंके प्रति विश्वासघात करता है, उससे मैं सहमत नहीं हो सकता। इसके विपरीत, मेरा तो विश्वास है कि जो मुसलमान भारतके लिए पूर्ण स्वतन्त्रता चाहते हैं उनके लिए सर्वश्रेष्ठ मार्ग यही है कि वे कांग्रेसके स्वतन्त्रता-संग्रामके कठिन कार्यमें अपना सहयोग दें। यह संस्था तो उन सबके लिए खुली है जो इसमें शामिल होना चाहते हैं। आप यह क्यों नहीं समझते कि यदि हजारोंकी संख्यामें मुसलमान लोग इसमें शामिल हों तो वे उसकी समस्त नीतिको निर्धारित कर सकते हैं? वहाँ जन-संख्याके अनुपातसे प्रतिनिधित्वका प्रश्न नहीं है। कांग्रेस पूर्णतया लोकतान्त्रिक संस्था है, जहाँ कोई साम्प्रदायिक भेद-भाव नहीं है।

मैं स्वयं कांग्रेसमें नहीं हूँ, इसलिए कांग्रेस और कांग्रेसी लोग जो-कुछ करते हैं उस सबके लिए मैं अपने-आपको जिम्मेदार नहीं मान सकता। लेकिन चूंकि मुझे कांग्रेसके ध्येयमें पक्का विश्वास है, इसलिए मुझे कांग्रेसको मन्त्रिपद सँभालने का कार्यक्रम अपनाने की सलाह देने में कोई संकोच नहीं हुआ। मुसलमानोंसे सम्बद्ध सभी सवालोंपर कांग्रेस के एकमात्र पथ-प्रदर्शक हैं मौलाना अबुल कलाम आजाद। मुस्लिम लीगके सदस्योंके कर्त्तव्याकर्त्तव्यके बारेमें मुझे कोई जानकारी नहीं है, लेकिन निःसन्देह मौलाना साहबने इस बातका पूरा-पूरा ध्यान रखा है कि किसी भी मुसलमान द्वारा नैतिक नियमोंका हनन किये जानेमें कांग्रेसका कोई हाथ न हो।

यदि किसी राजनीतिक दलका सदस्य अपने दलको छोड़ किसी अन्य दलके प्रति अपनी निष्ठा व्यक्त करता है तो इसमें सामान्यतया मैं कोई दोष नहीं देखता। यदि कांग्रेस, जितने मुसलमान उसमें शामिल हो सकें, उन सबको हर सम्मान-जनक ढंगसे लेने का प्रयास करती है तो उसमें आपको क्या आपत्ति हो सकती है, यह

१. **इशाअते-तब्लीग** के सम्पादक बशीर अहमदने पूछा था : "क्या आप मेरी इस बातसे सहमत नहीं हैं कि आप ईमानदारी, स्पष्टवादिता और नैतिक दृढ़ता पर आधारित सही मार्गपर चलकर सत्यको प्राप्त करना चाहते हैं? कांग्रेस उन मुसलमानोंसे, जो मुस्लिम लीगके टिकट पर निर्वाचित हुए हैं, मन्त्रिमण्डलमें शामिल होने को कह रही है, बशर्ते कि वे कांग्रेस प्रतिज्ञापर हस्ताक्षर कर दें। क्या आप यह चाहते हैं कि ये मुसलमान सदस्य, जिन्होंने चुनावसे पहले खुदा और पवित्र 'कुरान' को साक्षी मानकर लीगके प्रति निष्ठाकी शपथ ली थी, अपनी पवित्र शपथ तोड़ दें?"

२. यह और अगला शीर्षक दिनांक "तालेगाँव, ३० सितम्बर" के अन्तर्गत छपा था।

बात मेरी समझमें नहीं आती। मुझे लगता है कि यदि कांग्रेस हिन्दुओंके अतिरिक्त मुसलमानों तथा समाजके अन्य वर्गोंका प्रतिनिधित्व करने का प्रयत्न नहीं करती तो उसे जो अखिल भारतीय संगठनके नामसे पुकारा जाता है उसे वह खो बैठेगी। कांग्रेसकी शुरूसे ही यही पारम्परिक नीति रही है, यही उसकी शक्ति है। कांग्रेसके चुनाव-घोषणापत्र में[1] भारतकी पूर्ण स्वाधीनताका लक्ष्य रखा गया है। इस लक्ष्यकी प्राप्तिके लिए जो साधन बताये गये हैं वे हैं साम्प्रदायिक एकता, खादी, मद्य-निषेध, अस्पृश्यता-निवारण आदि आदि। अब जो मुसलमान पूर्ण स्वाधीनताका और इसे प्राप्त करने के लिए कांग्रेस द्वारा अपनाये गये तरीकोंका समर्थन करते हैं, यदि कांग्रेस उन मुसलमानोंको अपनाती है तो इससे वह सत्यसे कैसे विचलित होती है, यह बात मेरी समझमें नहीं आती।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २-१०-१९३७

२२०. पत्र : सैयद बशीर अहमदको

[३० सितम्बर, १९३७ के पूर्व]

मैं चकित हूँ कि मुसलमान मन्त्री चुनने के महत्वपूर्ण मामलेमें एक ही मुसलमानको[2] निरंकुश अधिकार देकर कांग्रेसने जो महान् कार्य किया है उसे आप समझ नहीं पाये हैं। बेशक मौलानासे गलती हो सकती है, लेकिन यहाँ यह बात अप्रासंगिक है। बड़ी और प्रासंगिक बात तो यह है कि कांग्रेसने आजतक जो अधिकार कभी किसी एक व्यक्तिको नहीं दिये वे आज एक मुसलमानको दिये हैं।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २-१०-१९३७

२२१. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

सेगाँव, वर्धा
१ अक्तूबर, १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, पट्टाभिका[3] चुनाव अच्छा है। लेकिन मेरा खयाल है कि इस बारेमें तुम्हें समितिके सदस्योंकी राय भी जान लेनी चाहिए।

१. अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने २२-२३ अगस्त, १९३७ को अपनी बैठकमें इस घोषणापत्रके मसौदे पर अपनी स्वीकृति दी थी; देखिए खण्ड ६५, परिशिष्ट ३।

२. अबुल कलाम आजाद; देखिए पिछला शीर्षक।

३. कांग्रेसके अध्यक्ष-पदके लिए पट्टाभि सीतारामय्याका नाम विचाराधीन था।

मुझे मालूम नहीं कि तुम वर्धामें होनेवाले शिक्षा-सम्मेलनमें[1] शामिल हो सकोगे अथवा नहीं। इसके लिए तुम्हें निमन्त्रण भेजा गया है। यदि समय निकाल सको तो मैं चाहता हूँ कि तुम आ जाओ, परन्तु मैं यह नहीं चाहता कि अधिक महत्त्वपूर्ण कार्यके कारण यदि अन्यत्र तुम्हारी उपस्थिति आवश्यक हो तो भी तुम इस सम्मेलनके लिए जरूर समय निकालो। बेशक, उन दो दिनोंमें तुमपर काफी जोर पड़ेगा, लेकिन यदि तुम आ सको तो उससे मुझे तो बहुत शान्ति मिलेगी।

स्नेह।

बापू

[पुनश्च:]

सैयद हबीबके साथ हुए मेरे पत्र-व्यवहारके फलस्वरूप एक चेक और पत्रकी प्राप्ति हुई है, जो संलग्न हैं। मैंने तुम्हारे साथ हुई अपनी बातचीतकी चर्चा किये बिना, इधर-उधरसे तथा कहींसे भी पैसा इकठ्ठा करने के लिए उसे अच्छी डाँट बताई।

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३७; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२२२. पत्र : अमृतकौरको[2]

सेगाँव

१ अक्तूबर, १९३७

आज तुम्हें केवल प्यार भेजता हूँ; अधिक लिखने का समय नहीं है।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६१६) से; सौजन्य: अमृतकौर।
जी० एन० ६४२५ से भी

१. २२ और २३ अक्तूबर को।
२. यह पंक्ति गांधीजी ने अमृतकौरको लिखे मीराबहनके पत्रके अन्तमें लिखी थी।

२२३. पत्र : प्रभावतीको

सेगाँव, वर्धा
१ अक्तूबर, १९३७

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। तुझे दूध नहीं छोड़ना चाहिए था। शोक[1] मनाने के लिए मनुष्य स्वाद छोड़ सकता है, लेकिन [स्वास्थ्यके लिए] जो आवश्यक हो वह तो उसे खाना ही चाहिए। अस्वादका व्रत लेने के बाद यदि मनुष्य उसका बराबर पालन करता रहे तो और स्वादकी चिन्ता न करता हो तो उस मनुष्यको किसी चीजका त्याग करने की कोई जरूरत नहीं होती। इसके अलावा यदि जन्म और मृत्यु दोनों एक ही चीज हों, और दोनों एक ही चीज हैं भी, तो फिर प्रियजनोंकी मृत्युमें शोक काहेका? प्रियजनोंके जन्मपर हर्ष क्यों? इसलिए इस पत्रके मिलते ही दूध पीना शुरू कर देना। यदि तू इस पत्रका उपयोग करना चाहे तो कर सकती है। मरने-वालोंके बाद उनके कार्यको स्वयं हाथमें ले लेना हमारा धर्म अवश्य है और वह तुम सब यथाशक्ति कर रहे हो। यह बोझ कोई अकेले तुझपर नहीं है। तू चाहे तो भी उसे नहीं उठा सकती। लेकिन दूध छोड़ने पर यदि तू कमजोर हो जाती है तो इससे तेरी कार्य करनेकी शक्ति कम हो जायेगी और उस हदतक तुम लोगोंपर जो बोझ आ पड़ा है तू उसे पूरी तरहसे न उठा पायेगी और इस तरह तू ठीक तरहसे अपना योगदान नहीं दे सकेगी। इसलिए समझदारीके साथ काम लेना और दूध, फल आदि लेना शुरू कर देना।

जब तू वहाँसे निकल सके तब आना। लेकिन इतनी देर न होनी चाहिए कि मैं यहाँ रहूँ ही न। फिर भी यदि कामकी वजहसे देर हो जाये तो कोई हर्ज नहीं। और जब भगवानकी इच्छा होगी तब मिलेंगे।

तू जितना समझती है, मुझे तो उतनी कमजोरी नहीं है। सामान्यतया सब कार्य ठीक-ठीक हो रहे हैं। मैं खाना भी ठीक तरहसे खा पाता हूँ। शारीरिक कार्य कम करता हूँ।

यहाँ आजकल मरीजोंके दो बिस्तर तो बराबर लगे रहते हैं। और भी थोड़ी-बहुत बीमारी चलती रहती है। पारनेरकर और चिमनलाल बिस्तरपर पड़े हुए हैं। पारनेरकरकी तबीयत तो ठीक है। थोड़े समयमें बिस्तरसे उठ बैठेंगे। लेकिन चिमन-लालकी किश्ती मझधारमें है। मोतीझरा है। आज १४वाँ दिन है, बुखार अभी

[1]. जुलाई, १९३७ में प्रभावतीके श्वसुर हरखू दयालका स्वर्गवास हो गया था।

उतरा नहीं है। इसलिए २१ दिन तो लगेंगे ही। मुख्य रूपसे शारदा और भणसाली भाई उसकी सेवामें हैं।

बा का पाँव अभी पूरी तरहसे ठीक नहीं कहा जा सकता। लीलावतीका स्वास्थ्य ढीला रहता है। बहुत सम्भव है कि उसके टांसिलसका कल आपरेशन हो।

अमतुस्सलाम तो हमेशा की तरह बीमार चलती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५०६) से।

२२४. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

सेगाँव, वर्धा
१ अक्तूबर, १९३७

चि० नरहरि,

चिमनलाल बहुत सख्त बीमार है। टायफाइडका आज १४ वाँ दिन है। बुखार अभी उतरा नहीं है। इसलिए ७ दिन और लग जायेंगे। कमजोर तो खूब हो गया है, लेकिन बीमार होते हुए भी वह जिस शान्तिसे रहता है वह शान्ति अद्भुत है। किसीको कोई तकलीफ नही, कोई भाग-दौड़ नहीं। तीन दिनोंसे बवासीरके उसके मस्से बढ़ गये हैं, काफी खून भी जाता है, लेकिन वह सबकुछ शान्तिपूर्वक-सहन कर रहा है। अधीर नहीं होता। यह समाचार शकरीबहन[1] को देना। [illegible] उपस्थितिके सम्बन्धमें मैंने उससे पूछा था। वह स्वयं शकरीबहनको नहीं बुलाना चाहता। सार-सम्भालके लिए भी शकरीबहनकी उपस्थिति आवश्यक नहीं है। उसकी सेवा भणसालीभाई और शारदा कर रहे हैं।

क्या शकरीबहनको जगहकी तंगीके कारण एक-दो महीनेके बाद आश्रम छोड़ना पड़ेगा? उसे कोई मदद दी जाती है या नहीं?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९१११) से।

१. चिमनलाल शाहकी पत्नी।

२२५. पत्र : नारणदास गांधीको

[१] अक्तूबर, १९३७ [के पश्चात्][1]

चि० नारणदास,

तुम्हारा कार्यक्रम तो ठीक तरहसे पूरा हुआ जान पड़ता है। जितना सोचा था उसके अनुसार पैसे भी ठीक मिले हैं और सूत भी।[2]

स्कूलमें जो पूनियाँ काती गई, मेरा खयाल है, उनकी रुई भी स्कूलसे ही दी गई होगी। इस तरह जो खर्च हुआ उसको अलग करने पर यदि हम सूतकी कीमत लगायें तो हमें कितना मिला? जिन गण्य-मान्य लोगोंके नाम तुमने दिये हैं उनके काम करने के दिनों और घंटोंका हिसाब यदि तुम दे सको तो देना।

रामेश्वरी देवीकी सभामें जो लोग उपस्थित थे, उनकी संख्या कितनी रही होगी? तुम्हारे ऊपर उनका [रामेश्वरी देवीका] क्या प्रभाव पड़ा? क्या तुम उनके निकट-सम्पर्कमें आये?

१५,००० रुपयेकी रकममें से क्या बाहरसे भी कुछ पैसे आये अथवा सारी रकम तुमने काठियावाड़से ही इकट्ठी की है। तुम १०,००० रुपये "हरिजन" में और बाकी खादी-कार्यमें लगाना।

विट्ठलकी, जो कातनेवालों में शामिल हुआ था, उम्र कितनी है? कातनेवालों में सबसे कम उम्र किसकी थी? क्या कोई तकलीपर कातनेवाला भी था?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू० /२) से। सी० डब्ल्यू० ८५४१ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. १ अक्तूबरको पड़नेवाले "रेंटिया बारस" के कार्यक्रम के उल्लेखसे।

२. नारणदास गांधीकी देख-रेखमें राजकोट राष्ट्रीय शालामें रेंटिया बारसके उपलक्ष्यमें विशेष कार्यक्रमका आयोजन किया गया था। उसमें लोगोंने ६८ दिनोंतक कुछ घंटे नित्य कताई की, जिसके फलस्वरूप २८,३४,००० गज सूत काता गया और खादी-कार्यके लिए उसमें पैसा भी इकट्ठा किया गया।

२२६. एक पत्र[1]

[२ अक्तूबर, १९३७ के पूर्व]

आपकी सुझाई हुई बहुत-सी दस्तकारियोंमें से कुछका उपयोग करने की मैं कोशिश करूँगा। आप तो इतने प्रतिभा-सम्पन्न हैं कि आप चाहें तो नये काम भी हाथमें ले सकते हैं। लेकिन ऐसा करनेसे पहले कुछ खास बातोंकी जरूरत है। आपको अपने बड़प्पनको भुलाकर अपने हाथ-पैरोंका उपयोग करना होगा। इसके लिए आपको अपने काम-काजके समयका कुछ भाग बचाना पड़ेगा। कपास और तकली लेकर कताई शुरू कीजिए और इस पूरे कामके प्रति बौद्धिक दृष्टिकोण रखते हुए इसे कीजिए। इस विषयपर मैं ग्रेगकी तथा स्वर्गीय मगनलाल गांधीकी पुस्तकें[2] आपके पास भेजता हूँ। श्री गुलजारीलाल नन्दा बड़ी खुशीके साथ आपको यह सब बतायेंगे। लेकिन आपके लिए इससे भी ज्यादा महत्त्वकी बात यह होगी कि आप शहरके नजदीकके किसी गाँवमें जाकर जम जायें और इस बातका अध्ययन करें कि टोकरी और रस्सी आदि बनानेवाले गरीब दस्तकार किस तरह अपना निर्वाह करते हैं। उनके हाथकी बनी छोटी-मोटी चीजोंमें भी आपको कुछ कला दिखाई देगी, लेकिन अपने बौद्धिक दृष्टि-कोणके कारण आप यह पता लगा सकेंगे कि काम करनेका उनका जो तरीका है, उसमें सुधारकी बहुत गुंजाइश है, और आप देखेंगे कि बरसोंसे इन अज्ञान लोगोंको किसीने यह नहीं बताया कि उन्हें अपने तरीकोंमें क्या सुधार करने चाहिए, और फलतः वे उसी पुराने ढर्रेसे काम किये जा रहे हैं। साथ ही आप यह भी महसूस करेंगे कि उनका अज्ञान मध्यम वर्गके हमारे पूर्वजों और आपके व मेरे द्वारा की गई इन गरीबोंकी उपेक्षाका ही परिणाम है। शायद इसपर आप सच्चे मनसे दुःखी भी हों। तभी आप यह जान सकेंगे कि दस्तकारियों द्वारा शिक्षा देनेसे मेरा क्या अभिप्राय है। सम्भव है, इन सब बातोंका आपपर कुछ और असर पड़े, और आज जो-कुछ चल रहा है, उसीको आप कायम रखना चाहें। यह भी हो सकता है कि आप मौजूदा और प्रस्तावित दोनों ही स्थितियोंको पसन्द न करें और एक तीसरी ही बिलकुल नई स्थितिकी खोज करें। यह आप निश्चित जानिए कि उससे मुझे

१. महादेव देसाई द्वारा अनूदित यह पत्र "ऐन ओपेन माइण्ड" (खुला दिमाग) शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था। इसकी प्रस्तावनामें महादेव देसाईने लिखा है: "गांधीजीके अनुरोधपर एक अर्थ-शास्त्री उन्हें मद्य-निषेध और शिक्षापर अपनी टिप्पणियाँ भेजते रहे हैं। उन्होंने इस प्रश्नपर विशुद्ध आर्थिक दृष्टिसे विचार किया है और इससे शैक्षणिक दृष्टिकोणका महत्त्व गौण हो गया है, जबकि गांधीजी इसके शैक्षणिक दृष्टिकोणको प्रमुख स्थान देना चाहते हैं।"

२. रिचर्ड बी० ग्रेगकी पुस्तक **इकनॉमिक्स ऑफ खद्दर** और मगनलाल गांधीकी पुस्तक **चरखा-शास्त्र**।

कोई रंज नहीं होगा। क्योंकि मेरा एकमात्र उद्देश्य तो मन, वचन और कर्मसे सत्यकी शोध करना ही है। इसीके लिए मैं पागल हो रहा हूँ, इसीके लिए मैं जिन्दा हूँ, इसीके लिए मरने की आशा रखता हूँ। यही वजह है कि मैं आप-जैसे मित्रोंको चुनौती देता हूँ और उन्हें अपनेको चुनौती देने के लिए आमन्त्रित करता हूँ। अगर वे मुझे यह विश्वास करा दें कि मेरे तरीके गलत हैं, तो मैं अपनी गलती मंजूर करने में जरा भी संकोच नहीं करूँगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २-१०-१९३७

२२७. कहीं भूल न जायें

एक हरिजन-सेवक मुझे याद दिलाते हैं कि आजकल हरिजनोंको, जिनके लिए यह साप्ताहिक पत्र शुरू किया गया था, पृष्ठभूमिमें डाल दिया गया है, और इसके पृष्ठ अन्य सब प्रकारके विषयोंसे भरे रहते हैं। इनका कथन अर्धसत्य है। अब मैंने इस साप्ताहिकके अन्दर ऐसे सवालों पर भी चर्चा करना शुरू कर दिया है जिन्हें अबतक जान-बूझकर छोड़ रखा था। अब उन्हें छोड़ रखने का कोई कारण नहीं रह गया है। बल्कि अब तो ठीक इसके विपरीत स्थिति है। भारतके अधिकांश प्रान्तोंमें कांग्रेसके हाथोंमें आज सत्ता और पद दोनों हैं। हाँ, यह सही है कि यह सत्ता परिमित है। पर वह मर्यादित तो पूर्ण स्वाधीनताकी दृष्टिसे ही है; अन्यथा नहीं। हिन्दुस्तान मानों एक विशाल कैदखाना है और अत्याचारकी ऊँची-ऊँची दीवारें उसके शरीर और मनका गला घोंट रही हैं। लेकिन उस कैदखानेके अधीक्षकने इन कैदियोंके एक बड़े हिस्सेको अपने ही लोगोंमें से शासनाधिकारी नियुक्त करने का अधिकार दे दिया है, जिन्हें पूरे प्रशासनिक अधिकार प्राप्त हैं — कमसे-कम इतने तो अवश्य कि जबतक उन्हें इस बातका भान है कि वे अब भी कैदी हैं तबतक वे अधिकाधिक शक्ति अर्जित करते रह सकते हैं। इन कैदियोंने इस आशासे इस छूटका लाभ उठाने का निश्चय किया है कि अधीक्षकके निर्विवाद रूपसे श्रेष्ठतर शारीरिक बलकी जरूरत वे कभी पैदा नहीं होने देंगे और इस तरह उसे यकीन करा देंगे कि उसकी अब कोई जरूरत नहीं है।

जो हो, भारत सरकार अधिनियम और पद-ग्रहणकी मेरी यही व्याख्या है, और इसलिए मुझे अपने उन साथियोंको, जो अब मन्त्री बन गये हैं, यह बताने की चेष्टा करनी होगी कि मेरे विचारानुसार वे किस प्रकार अपने ध्येयको प्राप्त कर सकते हैं। और अगर मैं अपने इस प्रयत्नमें कामयाब हो जाता हूँ तब तो समझ लेना चाहिए कि अस्पृश्यता-निवारणकी लड़ाईमें भी हम लगभग विजयी हो गये हैं।

लेकिन कहने की जरूरत नहीं कि साम्प्रदायिक एकताकी तरह हिन्दुओंके हृदयसे अस्पृश्यता की भावनाका लोप भी, पद-ग्रहणमें जो अहिंसात्मक नीति निहित है, उसके

माध्यमसे सफलता प्राप्त करने की अनिवार्य शर्त है। इसलिए हरिजन-सेवकोंको सवर्णों तथा हरिजनोंको प्रभावित करने के विचारसे दुगुने उत्साहसे अपनी कोशिशें जारी कर देनी चाहिए और इसलिए २५ सितम्बर, १९३२ को बम्बईमें पं० मदनमोहन मालवीयकी अध्यक्षतामें हिन्दू-समाजके प्रतिनिधियोंकी सभामें जो गम्भीर प्रतिज्ञा[1] ली गई थी, उसका हमें कट्टरपंथी सवर्ण हिन्दुओंको बार-बार स्मरण कराना चाहिए। वह प्रतिज्ञा यह है:

> **इस सम्मेलनका संकल्प है कि आजसे हिन्दुओंमें किसीको जन्मके कारण अछूत नहीं समझा जायेगा; और जिन्हें अभी तक अछूत समझा गया है, उन्हें सार्वजनिक कुओंसे पानी भरने तथा सार्वजनिक सड़कों और अन्य सार्वजनिक संस्थाओंका उपयोग करने के वे सभी अधिकार होंगे जो अन्य हिन्दुओंको है। इस अधिकारको पहला मौका मिलते ही वैधानिक मान्यता प्रदान कर दी जायेगी और यदि इसे स्वराज्य सरकारकी स्थापनासे पहले ही मान्यता नहीं मिली तो यह स्वराज्य पार्लियामेंटके सर्वप्रथम कार्योंमें से एक होगा।**
>
> **यह सम्मेलन इस बातको भी स्वीकार करता है कि सभी हिन्दूनेता समस्त वैधानिक और शान्तिपूर्ण तरीकोंसे —— मन्दिर-प्रवेश-सहित —— उन सभी सामाजिक निर्योग्यताओंको यथाशीघ्र दूर करवायेंगे जो प्रचलित रिवाजने आज तथाकथित अछूत वर्गपर लाद रखी हैं।**

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २-१०-१९३७

२२८. विद्यार्थी और हड़तालें

बंगलोरसे एक कॉलेजका विद्यार्थी लिखता है:

> **मैंने 'हरिजन' में आपका लेख पढ़ा है।[2] अंडमान-दिवस, बूचड़खाना-विरोधी दिवस[3] आदि हड़तालोंमें विद्यार्थियोंको भाग लेना चाहिए या नहीं, इस विषयमें मैं आपकी राय जानना चाहता हूँ।**

विद्यार्थियोंकी वाणी और आचरणपर लगे हुए प्रतिबन्धोंको हटानेकी पैरवी मैंने जरूर की है, पर राजनीतिक हड़तालों या प्रदर्शनोंमें उनके भाग लेने का समर्थन मैं नहीं कर सकता। विद्यार्थियोंको अपनी राय रखने और उसे जाहिर करने की पूरी-पूरी आजादी होनी चाहिए। वे चाहे किसी भी राजनीतिक दलके प्रति खुले तौर

१. देखिए खण्ड ५१, पृ० १४८-४९।

२. देखिए "शिक्षा-मन्त्रियोंके लिए", पृ० १५६-५८।

३. देखिए "तार: देशबन्धु गुप्तको", पृ० १२१।

पर सहानुभूति प्रकट कर सकते हैं। लेकिन मेरी रायमें, अपने अध्ययन-कालमें उन्हें किसी भी राजनीतिक आन्दोलनमें सक्रिय रूपसे भाग लेने की स्वतन्त्रता नहीं होनी चाहिए। विद्यार्थी राजनीतिमें सक्रिय भाग लें, और साथ-साथ अपना अध्ययन भी जारी रखें, यह नहीं हो सकता। राष्ट्रीय उत्थानके समय इन दोनोंके बीच स्पष्ट भेद करना मुश्किल हो जाता है। उस समय विद्यार्थी हड़ताल नहीं करते, या, ऐसी परिस्थितियोंमें "हड़ताल" शब्दका उपयोग किया जा सकता है तो, वह पूरी सामूहिक हड़ताल होती है; उस समय वे अपनी पढ़ाईको स्थगित कर देते हैं। इसलिए जो प्रसंग अपवाद-स्वरूप दिखाई देता है, वह असलमें अपवाद-रूप नहीं है।

वास्तवमें इस पत्र-लेखकने जो प्रश्न उठाया है वह कांग्रेस-शासित प्रान्तोंमें तो उठना ही नहीं चाहिए। क्योंकि वहाँ तो ऐसा एक भी अंकुश नहीं हो सकता जिसे विद्यार्थियोंका श्रेष्ठ वर्ग स्वेच्छासे स्वीकार न करे। अधिकांश विद्यार्थी कांग्रेस मनोवृत्तिके हैं, और होने चाहिए। उन्हें ऐसा कोई भी काम नहीं करना चाहिए जिससे मन्त्रियोंकी स्थिति विषम हो जाये। वे हड़ताल करें तो केवल इसी कारणसे करें कि मन्त्री उनसे ऐसा कराना चाहते हैं। लेकिन कांग्रेस जब पदोंका त्याग कर दे, और जब कांग्रेस तत्कालीन सरकारके विरुद्ध शायद अहिंसात्मक लड़ाई छेड़ दे तो उस प्रसंगके अलावा जहाँतक मैं कल्पना कर सकता हूँ, कांग्रेसी मन्त्री विद्यार्थियोंसे कभी भी हड़ताल करने के लिए नहीं कहेंगे। और तब भी, मैं समझता हूँ कि प्रारम्भमें ही विद्यार्थियोंसे हड़तालके लिए पढ़ाई स्थगित करने की बात कहना मानों अपना दिवाला पीटना होगा। यदि हड़ताल-जैसे किसी भी प्रदर्शनमें आम जनता कांग्रेसका साथ देती है तो विद्यार्थियोंसे तबतक उसमें शामिल होने के लिए नहीं कहा जायेगा जबतक ऐसा करना बिलकुल जरूरी न हो जाये। पिछले संघर्षमें विद्यार्थियोंसे, जहाँतक मुझे याद है, सबसे पहले लड़ाईमें शामिल होने के लिए नहीं कहा गया था, बल्कि सबसे अन्तमें कहा गया था — और वह भी केवल कॉलेजके विद्यार्थियोंसे।

मैं चाहूँगा कि पत्र-लेखक १८ सितम्बरके 'हरिजन' में एक अध्यापकके पत्रके उत्तरमें लिखे मेरे लेखको पढ़ जायें और यदि पहले पढ़ा हो तो एक बार फिर पढ़ जाये। विद्यार्थियों और अध्यापकोंकी राजनीतिक स्वतन्त्रताके विषयमें मेरे विचार उन्हें इस लेखमें मिल जायेंगे।

पर एक अन्य सज्जन इसी सम्बन्धमें लिखते हैं:

अगर हम सरकारके वेतन-भोगी अध्यापकों और दूसरे मुलाजिमोंको राजनीतिमें भाग लेने देंगे, तो सब चौपट हो जायेगा। सरकारकी नीतियों पर जिन सरकारी अफसरोंको अमल कराना है वे ही अगर उस नीतिके सम्बन्धमें वाद-विवाद करने लग जायें, तो कोई भी सरकार नहीं चल सकती। आपकी यह इच्छा कि राष्ट्रकी आशाओं, आकांक्षाओं और देशभक्तिके विचारोंको प्रकट करने की पूरी स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए, उचित है। लेकिन मुझे ऐसी आशंका

है कि आप अपनी स्थितिको अगर बिलकुल स्पष्ट नहीं करेंगे, तो आपके इस लेखसे गलतफहमी पैदा हो सकती है।

मेरा खयाल था कि मैंने अपने विचारोंको बिलकुल स्पष्ट रूपसे बता दिया है। जहाँ राष्ट्रीय सरकार होती है वहाँ उसके तथा उसके अधिकारियों और विद्यार्थियोंके बीच शायद ही कोई संघर्ष होता हो। मेरे उक्त लेखमें इस बातकी पूरी सावधानी बरती गई है कि उससे किसी प्रकारकी अनुशासनहीनताको प्रोत्साहन न मिले। उन अध्यापक महोदयको रोष तो इस बातपर है कि अब भी विद्यार्थियोंके पीछे जासूस रखे जाते हैं और उनके स्वतन्त्र विचारोंको कुचला जाता है। यह रोष उचित ही है। कांग्रेसके मन्त्री खुद प्रजाके हैं, और प्रजामें से ही आये हैं। उन्हें कोई बात गुप्त नहीं रखनी है। उनसे हरएक सार्वजनिक प्रवृत्तिके साथ व्यक्तिगत सम्पर्क रखने की अपेक्षा की जाती है, विद्यार्थियोंकी मनोवृत्तिसे भी अपनेको व्यक्तिगत रूपसे अवगत रखने की आशा की जाती है। कांग्रेसका सारा तन्त्र उनके हाथमें है; और चूंकि यह तन्त्र प्रजाकी इच्छाका व्याख्याता है, अतः इसकी शक्ति कानून, पुलिस और फौजी ताकतकी अपेक्षा निश्चय ही प्रबल है। जिन्हें इस प्रकारके तन्त्रका समर्थन प्राप्त नहीं है, वे काममें लाये हुए बन्दूकके खाली कारतूस के समान हैं। जिन मन्त्रियोंके पीछे कांग्रेसका बल है, कहा जा सकता है कि उनके लिए कानून, पुलिस और फौज बेकार और ऊपरकी शोभाकी चीजें हैं। और यदि कांग्रेस अनुशासनकी प्रतिमूर्ति नहीं है तो फिर उसमें और रखा ही क्या है? इसलिए कांग्रेसके शासन-कालमें अनुशासनका पालन सर्वत्र मजबूरन नहीं, बल्कि स्वेच्छासे ही होना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २-१०-१९३७

२२९. विचार नहीं, ठोस कार्य

डॉ० जी० एस० अरंडेलने 'ओरियन्ट इलस्ट्रेटेड वीकली' में प्रकाशित होनेवाले अपने एक लेखकी अग्रिम प्रति निम्नलिखित पत्रके साथ भेजी है:

> **आपने यह इच्छा व्यक्त की है कि इस देशमें इतने वर्षोंसे जो कृत्रिम शिक्षा दी जाती रही है अब उसके स्थानपर असली शिक्षा दी जानी चाहिए। एक ऐसे आदमीकी हैसियतसे, जिसने तीससे भी अधिक सालतक शिक्षाके क्षेत्रमें कार्य किया है, मैं आपको अपना एक लेख भेज रहा हूँ, जो 'ओरियन्ट इलस्ट्रेटेड वीकली' में छपने जा रहा है। सम्भव है, यह कुछ अंशोंमें आपके ही विचारोंका प्रतिनिधित्व करता हो। मैं भी यह अनुभव करता हूँ कि हमें शिक्षाकी एक राष्ट्रीय योजना बनानी चाहिए, जिसे प्रत्येक मन्त्री अपने प्रान्तमें सफल बनाने के लिए शक्ति-भर प्रयत्न करे। इस दिशामें छिटपुट प्रयत्न तो**

> प्राप्त न कर सकता हो, और हर प्रकारकी शिक्षामें, शहरकी शिक्षण-संस्थाओंमें भी, मैं चाहूँगा कि किसी-न-किसी अंशमें भूमिसे हमारा सम्पर्क बना रहे।
>
> आज हमें उन सब रूढ़ियोंसे एकबारगी अपना नाता तोड़ लेना चाहिए जिन्होंने शिक्षाको इतना अधिक निरर्थक बना दिया है। राष्ट्रीय मन्त्रिमण्डलोंके संरक्षणमें हमें सच्ची शिक्षाका शुभारम्भ कर देना चाहिए, और सच्ची शिक्षा बच्चोंके दिमागमें कोरी और अनुपयोगी जानकारी ठूँसने से बिलकुल अलग चीज है। हम तो शिक्षा-सम्बन्धी उन रूढ़ियों और ढकोसलोंके अन्दर बुरी तरह कैद कर दिये गये हैं जो अब पुराने और बेकार साबित हो चुके हैं। मैं गांधीजी द्वारा प्रतिपादित स्वावलम्बी शिक्षा-पद्धतिका हृदयसे स्वागत करता हूँ। वे जितनी दूर हमें ले जाना चाहते हैं उतनी दूर हम जा सकेंगे या नहीं, इसके बारेमें मैं निश्चित रूपसे कुछ नहीं कह सकता। मैं उनकी इस बातसे पूरी तरह सहमत हूँ कि सात वर्षकी शिक्षाके बाद हर विद्यार्थीको कुछ कमा सकने योग्य होना चाहिए। मुझे खुब यही लगता है कि प्रत्येक मनुष्यको, कुछ हदतक शिक्षा द्वारा, अपनी सृजन-शक्तिका एहसास होना चाहिए, क्योंकि वह भी तो विकासोन्मुख ईश्वरीय अंश है और ईश्वरकी जो परम शक्ति अर्थात् सृजन-शक्ति है वह उसमें भी है। यदि मनुष्यकी यह शक्ति जाग्रत नहीं होती तो शिक्षा किस कामकी है? फिर तो वह तथ्योंकी जानकारी देना है, शिक्षा नहीं।
>
> दिमाग जितना मस्तकमें है उतना ही हमारे हाथोंमें भी है। लम्बे अर्सेसे हम निष्क्रिय बुद्धिको ईश्वर समझते आये हैं। उसने हमपर बड़ा जुल्म किया है। वह हमारी शासिका और स्वामिनी रही है। वर्तमान व्यवस्थामें बुद्धि हमारी एक सेविका होनी चाहिए, और जो भी बातें हमारे जीवनको सरल और सादा बनानेवाली हों, और हमें प्रकृतिकी सादगीके निकट ले जाती हों, हमें हाथके सहारे जीने में सहायता देनेवाली हों उन्हें — अर्थात् शिल्पकार, किसान आदि सबके शारीरिक कार्यको — हमें ऊँचीसे-ऊँची प्रतिष्ठा देनी सीखनी चाहिए।
>
> मैं जानता हूँ कि अगर मुझे इस तरहकी शिक्षा मिली होती तो मेरा जीवन अधिक सुखी और सफल होता।

अबतक मैं जो बात साधारण आदमीकी हैसियतसे साधारण पाठकोंके लिए कहता आया हूँ, वह बात डॉ० अरंडेलने एक शिक्षा-शास्त्रीकी हैसियतसे शिक्षा-शास्त्रियोंके लिए तथा उन लोगोंके लिए कही है, जिनके हाथोंमें देशके युवकोंके चरित्र-निर्माणकी बागडोर है। स्वावलम्बी शिक्षाके प्रश्नपर विचार करते समय डॉ० अरंडेलने जो सावधानी बरती है, उससे मुझे आश्चर्य नहीं होता है। मेरे लिए तो वही सबसे कठिन समस्या है। मुझे अफसोस तो इस बातका है कि जो चीज मुझे पिछले ४० वर्षोंसे धुँधली-धुँधली दिखाई देती थी वह आज [illegible] स्पष्ट दिखाई देती है।

सन् १९२० में मैंने वर्तमान शिक्षा-पद्धतिकी काफी कड़े शब्दोंमें निन्दा की थी। आज मुझे देशके सात प्रान्तोंके मन्त्रियोंपर चाहे जितने भी थोड़े अंशमें हो, असर डालने का मौका मिला है, क्योंकि इन मन्त्रियोंने किसी समय मेरे साथ देशकी स्वाधीनताके महान् संग्राममें काम किया है और मेरे साथ तरह-तरहकी मुसीबतें उठाई हैं। इसीलिए आज मुझे अपने इस आरोपको सिद्ध करके दिखा देने की एक दुर्दमनीय प्रेरणा अनुभव हो रही है कि वर्तमान शिक्षा-पद्धति नीचेसे लेकर ऊपरतक मूलतः गलत है। और 'हरिजन'में जिस बातको व्यक्त करने का मैं अबतक असफल प्रयास करता रहा हूँ वही बात अब मेरे सामने एकाएक बिजलीकी तरह कौंध गई है और मुझे दिन-ब-दिन उस सत्यकी प्रतीति होती जा रही है। इसलिए देशके जिन शिक्षा-शास्त्रियोंका अपना कोई स्वार्थ नहीं है और जिनका हृदय नये विचारोंके लिए हमेशा खुला है उनसे मेरा यह कहना है कि वे मेरे इन दोनों सुझावोंपर विचार करें और विचार करते हुए वर्तमान शिक्षा-पद्धतिके बारेमें एक लम्बे अरसे से उनके मनमें जो धारणा बनी है उसे अपनी तर्क-बुद्धिके आड़े न आने दें। चूँकि मैं शिक्षाके तकनीकी और पारम्परिक स्वरूपसे अनभिज्ञ हूँ, इसलिए मैं जो लिख और कह रहा हूँ उसके बारेमें वे पहलेसे ही कोई धारणा न बना लें, उसपर अच्छी तरहसे विचार करें। कहा जाता है कि ज्ञान अक्सर बच्चों और शिशुओंके मुँहसे प्रकट होता है। "बालादपि सुभाषितम्"; इसमें कविकी अत्युक्ति हो सकती है, पर इसमें कोई शक नहीं कि ज्ञान कभी-कभी बच्चोंके मुँहसे प्रकट होता है। विद्वान् लोग परिष्कृत कर उसे शास्त्रीय रूप देते हैं। इसलिए मेरा अनुरोध है कि वे मेरे सुझावोंपर केवल गुण-दोषकी दृष्टिसे विचार करें। ये सुझाव मैं एक बार फिर दे रहा हूँ, लेकिन उन्हें उस रूपमें नहीं दे रहा हूँ जिस रूपमें मैं पहले दे चुका हूँ, बल्कि ये पंक्तियाँ लिखाते समय मुझे जो शब्द सूझ पड़ते हैं, उन शब्दोंमें दे रहा हूँ :

(१) आज प्राथमिक, माध्यमिक और उच्च विद्यालयोंकी शिक्षाके नामसे जो शिक्षा दी जाती है उसके स्थानपर सात अथवा सात वर्षसे अधिक की प्राथमिक शिक्षा दी जानी चाहिए। उसमें अंग्रेजीको छोड़कर मैट्रिकतक के तमाम विषय पढ़ाये जाने चाहिए और साथ ही किसी उद्योगकी इस तरह शिक्षा दी जानी चाहिए कि ज्ञानकी तमाम शाखाओंमें लड़के-लड़कियोंका आवश्यक मानसिक विकास हो सके।

(२) ऐसी शिक्षा समग्रतः स्वावलम्बी हो सकती है और होनी ही चाहिए। वस्तुतः स्वावलम्बन ही उसकी वास्तविकताकी सच्ची कसौटी है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २-१०-१९३७

२३०. शिक्षा-परिषद्के समक्ष उपस्थित प्रश्न

मारवाड़ी विद्यालय, जिसका नाम हाल में ही बदलकर नवभारत विद्यालय कर दिया गया है, अपनी रजतजयन्ती मनाने जा रहा है। विद्यालयके संचालकोंको यह विचार आया कि इस अवसरपर राष्ट्रीय विचारधाराके शिक्षा-शास्त्रियोंका एक छोटा-सा सम्मेलन बुलाया जाये और 'हरिजन'के स्तम्भोंमें मैं जिस शिक्षा-योजनाको प्रतिपादित करने का प्रयत्न कर रहा हूँ, उसपर परिचर्चा की जाये। यह सम्मेलन बुलाया जाना ठीक होगा या नहीं, इस सम्बन्धमें विद्यालयके मन्त्री श्रीमन्नारायण अग्रवालने मेरी सलाह माँगी और कहा कि यदि मुझे यह विचार पसन्द हो तो मैं उसकी अध्यक्षता करूँ। मुझे दोनों ही सुझाव पसन्द आये। इसलिए यह सम्मेलन आगामी २२ और २३ अक्तूबरको वर्धामें हो रहा है। इसमें केवल वही लोग भाग लेंगे जिन्हें इसके लिए निमन्त्रित किया जायेगा। अगर कुछ ऐसे शिक्षा-शास्त्री हों जो इस सम्मेलनमें भाग लेना चाहते हों, किन्तु जिन्हें निमन्त्रण नहीं मिला हो, तो वे मन्त्रीको पत्र लिख सकते हैं और उसमें अपना नाम तथा पता लिखने के साथ-साथ ऐसी विशेष जानकारी भी दे सकते हैं जिसके आधारपर प्रबंध-मण्डलको यह निर्णय करने में सुविधा हो कि उन्हें निमन्त्रण भेजा जा सकता है या नहीं। यहाँ तो केवल ऐसे थोड़े-से लोगोंके लिए ही व्यवस्था की जा रही है जो इस विषयमें गहरी दिल-चस्पी रखते हैं और जो इस परिचर्चामें उपयोगी योगदान दे सकते हैं। इस सम्मेलन में कोई तड़क-भड़क करने का विचार नहीं है। इसमें प्रेक्षकोंके लिए कोई स्थान नहीं होगा। यह तो केवल एक काम-काजी सम्मेलन होगा। पत्र-प्रतिनिधियोंको थोड़े-से टिकट जारी किये जायेंगे। अखबारवालोंको मेरी सलाह है कि वे आपसमें एक-दो प्रतिनिधि चुन लें और सम्मेलनकी खबरें सब समाचारपत्रोंको भेज दें।

इस कार्यमें मैं विश्वासपूर्वक, किन्तु पूरी नम्रताके साथ, खुले दिमागसे और मनमें कुछ सीखने तथा जहाँ जरूरी हो वहाँ अपने विचारोंमें संशोधन-परिवर्तनकी इच्छा लेकर हाथ डाल रहा हूँ।

मैं सम्मेलनके सम्मुख विचारार्थ जो प्रस्ताव रखना चाहता हूँ वे मुझे फिलहाल निम्न रूपमें सूझ रहे हैं:

१. शिक्षाकी वर्तमान पद्धति किसी भी तरह देशकी आवश्यकताओंकी पूर्ति नहीं कर सकती। उच्च शिक्षाकी तमाम शाखाओंमें अंग्रेजी भाषाको माध्यम बना देने के कारण उच्च शिक्षा-प्राप्त मुट्ठी-भर लोगों तथा अपढ़ जनसमुदायके बीच एक स्थायी दीवार-सी खड़ी हो गई है। इसके कारण ज्ञान सर्वसाधारणतक नहीं पहुँच सका है। अंग्रेजीको इस तरह अत्यधिक महत्त्व देने के कारण शिक्षित लोगोंपर जो बोझ

पड़ा है उसने उन लोगोंको जीवन-भरके लिए मानसिक रूपसे पंगु बना दिया है, और वे अपने ही देशमें अजनबी बन गये हैं। धन्धोंके शिक्षणके अभावने शिक्षित वर्गको उत्पादक कामके सर्वथा अयोग्य बना दिया है और शारीरिक दृष्टिसे भी उनका बड़ा नुकसान हुआ है। प्राथमिक शिक्षापर आज जो खर्च हो रहा है, वह बिलकुल निरर्थक है; क्योंकि जो-कुछ भी सिखाया जाता है उसे पढ़नेवाले बहुत जल्दी भूल जाते हैं और शहरों तथा गाँवोंके सन्दर्भमें उसका बहुत कम अथवा कोई भी मूल्य नहीं है। वर्तमान शिक्षा-पद्धतिसे जो-कुछ भी लाभ होता है उससे देशका मुख्य कर-दाता तो वंचित रह ही जाता है, क्योंकि उसके बच्चोंको इसका भाग सबसे कम मिल पाता है।

२. प्राथमिक शिक्षाका पाठ्यक्रम कमसे-कम सात सालका कर दिया जाना चाहिए। इसमें बच्चोंको इतना सामान्य ज्ञान मिल जाना चाहिए जो उन्हें साधारण-तया मैट्रिकतक की शिक्षामें मिल जाता है। इसमें अंग्रेजी नहीं रहेगी। उसकी जगह किसी ठोस धन्धेकी शिक्षा दी जायेगी।

३. लड़के और लड़कियोंके सर्वतोमुखी विकासके लिए सारी शिक्षा, जहाँतक हो सके, किसी-न-किसी ऐसे धन्धेके माध्यमसे दी जानी चाहिए, जिससे कुछ उपार्जन भी किया जा सके। दूसरे शब्दोंमें इस धन्धे द्वारा दो हेतु सिद्ध होने चाहिए — एक तो विद्यार्थी अपने परिश्रमके फलके द्वारा अपनी पढ़ाईका खर्च अदा कर सकें और इसके साथ ही, स्कूलमें सीखे हुए धन्धेके द्वारा उस लड़के या लड़कीके व्यक्तित्वका पूर्ण विकास हो सके।

पाठशालाकी जमीन, इमारतें और अन्य जरूरी सामानका खर्च विद्यार्थीके परि-श्रमकी कमाईसे निकालने की कल्पना नहीं की गई है।

कपास, रेशम और ऊनकी चुनाईसे लेकर सफाई, (कपासकी) ओटाई, पिंजाई, कताई, रँगाई, माँड़ लगाना, ताना लगाना, दुसूती करना, डिजाइन (नमूने) बनाना तथा बुनाई, कसीदा काढ़ना, सिलाई आदि तमाम क्रियाएँ, कागज बनाना, कागज काटना, जिल्दसाजी, आलमारी आदि तैयार करना, खिलौने बनाना, गुड़ बनाना, आदि निस्सन्देह ऐसे धन्धे हैं जिन्हें आसानीसे सीखा जा सकता है और जिनके करने के लिए बहुत बड़ी पूँजीकी भी जरूरत नही होती।

इस प्राथमिक शिक्षासे लड़के और लड़कियाँ इस लायक हो जायें कि वे अपनी रोजी कमा सकें, इसके लिए यह जरूरी है कि जिन धन्धोंकी शिक्षा उन्हें दी गई हो उन धन्धोंमें राज्य उन्हें रोजगार दे अथवा वह अपनी मुकर्रर की गई कीमतोंपर उनकी बनाई हुई चीजोंको खरीद लिया करे।

४ उच्च शिक्षाको खानगी प्रयत्नों तथा राष्ट्रकी आवश्यकतापर छोड़ दिया जाये, चाहे उस शिक्षाका सम्बन्ध विभिन्न प्रकारके उद्योगों और उनसे जुड़े शिल्प-कौशलोंसे हो या साहित्यसे अथवा ललित कलाओंसे।

सरकारी विश्वविद्यालय केवल परीक्षा लेनेवाली संस्थाएँ ही रहें और वे अपना खच परीक्षा-शुल्कसे ही निकालकर स्वावलम्बी बनें।

विश्वविद्यालय शिक्षाके समस्त क्षेत्रका ध्यान रखेंगे और उसके विभिन्न विभागोंके लिए पाठ्यक्रम तैयार करेंगे तथा उनपर अपनी स्वीकृति देंगे। कोई भी खानगी स्कूल सम्बन्धित क्षेत्रके विश्वविद्यालयसे पहलेसे मंजूरी लिये बिना शुरू नहीं किया जाना चाहिए। विश्वविद्यालयका अधिकार-पत्र किसी भी ऐसी संस्थाको उदारतापूर्वक दिया जाना चाहिए, जिसके सदस्योंकी योग्यता और प्रामाणिकताके विषयमें कोई सन्देह न हो। यह समझ रखना चाहिए कि अपने केन्द्रीय शिक्षा विभागका खर्च उठाने के अलावा राज्यपर खर्चका कोई भार नहीं होगा।

राज्यकी विशेष आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिए शिक्षा-संस्थाएँ या विद्यालय खोलने की जरूरत पड़ जाये, तो यह योजना राज्यको इस जिम्मेदारीसे मुक्त नहीं कर रही है।

अगर यह सारी योजना स्वीकृत हो जाये, तो मेरा दावा है कि जिसकी राज्यको सबसे अधिक चिन्ता है वह समस्या —— अर्थात् राज्यके युवकोंको, अपने भावी निर्माताओंको प्रशिक्षित करनेकी समस्या —— हल हो जायेगी।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २-१०-१९३७

२३१. टिप्पणियाँ

एक धर्माचार्यका समर्थन

अखबारोंमें एसोसिएटेड प्रेस द्वारा कालिकटसे भेजा गया निम्नलिखित समाचार प्रकाशित हुआ है:[1]

स्वामीजी सत्य और प्रगतिके पक्षमें साहसपूर्वक खड़े हुए हैं, इसके लिए मैं उन्हें बधाई देता हूँ। यदि वे "वर्णव्यवस्था-सम्बन्धी सभी विषयोंके अन्तिम निर्णायक" हैं तो आशा है, उनकी सम्मतिको अन्यत्र नहीं तो केरलमें तो रूढ़िवादी वर्ग अवश्य आदर देगा और उसके अनुसार चलेगा भी।

शिमलामें हरिजन-सेवा

शिमलामें गत पाँच वर्षोंसे वाल्मीकि (हरिजन) युवक-संघ काम कर रहा है। इस संघके अवैतनिक संचालक पण्डित सी० वी० विश्वनाथन् हैं। अवैतनिक मन्त्री

१. इसका अनुवाद यहाँ नहीं दिया जा रहा है। समाचारमें बताया गया था कि केरलके ब्राह्मणोंके सबसे बड़े धर्माचार्य अझवनचेरी थम्पुरक्कलने त्रावणकोर महाराजकी मन्दिर-प्रवेश राजघोषणा (देखिए खण्ड ६४, पृ० ५४-५५ और परिशिष्ट) की प्रशंसा करते हुए कहा है कि उसने हिन्दू धर्मके समस्त आदर्शोंकी रक्षा करते हुए उसमें नवजीवनका संचार किया है तथा हिन्दुओंके बीचसे अस्पृश्यता, विभेद और असमानताकी बुराइयोंको मिटा दिया है। समाचारमें यह सूचना भी दी गई थी कि केरलके इतिहासके लेखक पद्मनाभ मेननने अझवनचेरी थम्पुरक्कलको "वर्ण-व्यवस्था-सम्बन्धी सभी विषयोंका अन्तिम निर्णायक" बताया है।

लाला बी० लछमन सिंह सभोत्रा हैं, जो खुद वाल्मीकि हरिजन हैं। संघकी तरफसे गर्मीके मौसममें एक रात्रि-पाठशाला चलती है, जिसमें सब कौमोंके बालक दाखिल हो सकते हैं। पाठशालाके २१ विद्यार्थियोंमें ८ सवर्ण हिन्दू हैं। इस पाठशालामें तीन हरिजन अध्यापक हैं, जो सब वर्णोंके विद्यार्थियोंको पढ़ाते हैं। इनके अतिरिक्त दो सवर्ण हिन्दू और सिख अध्यापक भी हैं। आचार्य हरिजन है। संघ केवल सेवा-भावसे, बिना फीस लिये, काम करनेवाले चिकित्सकोंके सौजन्यसे मुफ्त डाक्टरी सहायता भी देता है। एक आपसी सहकारी कोष भी है। इसमें से एक पैसा प्रति रुपया ब्याज पर कर्ज दिया जाता है। इस हिसाबसे सूद की दर १८ प्रतिशत हुई। यह बहुत ज्यादा है। यह दर ६ प्रतिशतसे अधिक नहीं होना चाहिए, या ज्यादासे-ज्यादा ८ प्रतिशत। इसका अर्थ यह तो है ही कि रुपया उधार देने में अधिक सावधानी रखी जायेगी। इससे लाभ ही होगा। उधार दिये हुए रुपयेका उपयोग किस प्रकार हो रहा है, इसकी देखभाल रखनी चाहिए। संघका एक वाचनालय भी है। संघके मकानमें अक्सर गरीब निराश्रित हरिजनोंके कुछ रात ठहरने का भी प्रवन्ध रहता है। मैं चाहता हूँ कि इस संघको अपने सेवा-कार्यमें पूरी सफलता मिले।

उड़ीसा-बाढ़-संकट-निवारणके लिए

मुझे यह कहते हुए हर्ष होता है कि श्रीयुत् ए० बी० पण्डित ऐंड कम्पनीका ५०० रुपयेका चेक और श्री मणिलाल बुलाखीदासका १०० रुपयेका चेक उड़ीसा-बाढ़-संकट-निवारणके लिए प्राप्त हुआ है। यह मेरी अपीलके[1] उत्तरमें बड़ी तत्परता से भेजी गई प्रथम राशियाँ हैं। दोनों चेक मैंने सीधे उड़ीसाके मन्त्री श्री कानूनगो के पास, कटकके पतेपर भेज दिये हैं।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २-१०-१९३७

२३२. पत्र : अवन्तिकाबाई गोखले और गौरीबाई खाडिलकरको[2]

[२ अक्तूबर, १९३७ के आसपास][3]

तुम्हारा गहरा प्रेम तो मेरे लिए जानी-बूझी बात है। लेकिन जिनसे मेरा प्रत्यक्ष परिचय कभी नहीं हुआ, ऐसे अन्य असंख्य लोगोंका प्रेम मुझे कभी कर्त्तव्यपथसे विचलित नहीं होने देता।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ९-१०-१९३७

१. देखिए "उड़ीसामें जलप्रलय", पृ० १७८-७९।

२ और ३. महादेव देसाईके "नोट्स" (टिप्पणियाँ) से उद्धृत। अवन्तिकाबाई गोखले और गौरीबाई खाडिलकर गांधीजी के हर जन्म-दिनपर उन्हें अपने हाथोंसे काते सूतसे बनी धोतियाँ भेजा करती थीं।

२३३. पढ़े-लिखे बनाम अनपढ़

बम्बईसे एक सज्जन लिखते हैं:

वर्त्तमान सरकारने निगमसे यह अनुरोध किया है कि उसे अपने मताधिकारका क्षेत्र बढ़ाना चाहिए। आज यह उन बालिगोंतक ही सीमित है जो कमसे-कम ५ रुपये किराया देते हैं। अब यह सिफारिश की गई है कि सब पढ़े-लिखे लोगोंको मत देनेका अधिकार दिया जाये। प्रश्न यह है कि विधान-परिषद्के चुनावके लिए वयस्क मताधिकारका जो प्रस्ताव है, उसपर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा। अब यदि कांग्रेसके सदस्य शिक्षा-मताधिकार स्वीकार कर लेते हैं तो क्या इससे कांग्रेसका सिद्धान्त भंग नहीं होगा? मुझ-जैसे कुछ लोग यह मानते हैं कि फिलहाल शिक्षा-मताधिकारको स्वीकार कर लेना उचित होगा। इन परिस्थितियोंमें हमारा क्या कर्त्तव्य है?

कांग्रेसके अनुशासनके साथ इस प्रश्नका जहाँतक सीधा सम्बन्ध है, वहाँतक तो मुझे कोई राय देनेका अधिकार नहीं है। एक पत्रकारकी हैसियतसे यदि कुछ अर्थ लगाऊँ तो पत्र-लेखक इसका जितना मूल्य आँकेगा, मैं उससे अधिक नहीं आँक सकता। उसके लिए तो कांग्रेस अध्यक्ष जो कहे वही पर्याप्त है और मान्य है। लेकिन एक दीर्घकालिक अनुभवीके रूपमें इस विषयमें मैं जो राय रखता हूँ उसे मैं पत्र-लेखक तथा उन-जैसे दूसरे लोगोंको बताता हूँ। मैं मानता हूँ कि कांग्रेस द्वारा सुझाई सभी तजवीजोंको अमलमें लानेकी जिनमें शक्ति न हो, या जो यह मानते हों कि सभी तजवीजों के लिए यह समय नहीं है, वे कांग्रेसकी दिशामें जाते हुए जितने कदम उठा सकें उतने बिना किसी हिचकिचाहटके उठायें। ऐसा करना उनका फर्ज है, और इसमें वे अनुशासनको तनिक भी भंग नहीं करते।

गुण और दोषों पर विचार करते हुए मुझे ऐसा लगता है कि मताधिकारका क्षेत्र बढ़ाने में इसे साक्षरोंतक ही सीमित रखना कतई ठीक नहीं। हो सकता है कि २१ वर्षका पढ़ा-लिखा नवयुवक मताधिकारके बिलकुल योग्य न हो, और सम्भव है कि ५० वर्षका अनुभवी और समझदार अपढ़ आदमी मताधिकारका मूल्य समझ सकता हो। उसके मतका अपना महत्त्व होगा; और ऐसा होता ही है। कांग्रेसने जो वयस्क मताधिकारका समर्थन किया है, उसमें भी बहुत अध्याहार है। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि बहरे-गूँगे, जाने-माने मूरख, पागल, गुप्त अपराध करनेवाले और असाध्य रोगसे पीड़ित व्यक्ति यदि बालिग हों, तो भी वे मताधिकारका उपभोग नहीं कर सकते।

और जिन्होंने लिखना-पढ़ना सीख लिया, उन्होंने स्वयं कोई पुरुषार्थ किया है, ऐसा क्यों माना जाये? जो लोग आजतक पढ़ नहीं सके वे अपने अज्ञानके लिए खुद

जवाबदेह हैं, यह मानने के लिए मैं तैयार नहीं हूँ। असलमें देखा जाये तो करोड़ों आदमियोंके अज्ञानकी जड़ मध्यम वर्गके लोगोंकी लापरवाही है। उन्होंने आजतक अपने कर्त्तव्यका पालन नहीं किया, इसीसे हिन्दुस्तानमें निरक्षरोंकी बहुत बड़ी संख्या रही। इसलिए जिन्होंने सरकारकी कृपासे शिक्षा प्राप्त की है उन्हें मताधिकार देना, और जो सरकारकी अकृपासे शिक्षा प्राप्त नही कर सके उन्हें मताधिकार न देना, मेरी दृष्टिमें दोहरा दोष है। सत्ताधीशोंका यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वे उन निरक्षरों को तुरन्त शिक्षा प्रदान करें जिन्हें मताधिकार दिया गया हो। इसलिए एक ओर तो जिसे मताधिकार पहले ही मिल जाना चाहिए था उसे मताधिकार न देने का यह प्रायश्चित्त होगा तथा दूसरी ओर मतदाताको जो अधिकार मिला है, उसको अच्छी तरह काममें ला सकने के प्रयोजनसे उसे पढ़ा-लिखाकर तैयार करनेके लिए प्रोत्साहन मिलेगा।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ३-१०-१९३७

२३४. पत्र : अमृत कौरको[1]

सेगाँव
३ अक्तूबर, १९३७

बिलकुल समय नहीं है।
स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६१७)से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६४२६से भी

२३५. पत्र : महादेव देसाईको

३ अक्तूबर, १९३७

चि० महादेव,

कह सकते हैं, चिमनलालकी नाव तो अभी मझधारमें है। वह सारी रात सोया ही नहीं, वह सारी रात काँपता रहा। उसका स्वभाव भी काफी बदल गया है। टेम्परेचर तो ठीक है, ९८। आज डाक्टर आयेगा तो सही न? मेरे लिए यदि उसने आने का विचार स्थगित कर दिया हो तो चिमनलालके लिए तो आयेगा ही। जितनी जल्दी आये उतना अच्छा है। लीलाका क्या हुआ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५७४)से।

१. यह गांधीजी ने अमृतकौरको लिखे मीराबहनके पत्रके अन्तमें जोड़ दिया था।

२३६. पत्र : अमतुस्सलामको

३ अक्तूबर, १९३७

चि० अमतुल सलाम,

हम तो बहुत कुछ करना चाहते है लेकिन हमारी वहेतरी किसमे हैं वह तो रामजी जानें। अब रह गई है तो रहो। कल लीलावतीके साथ आ जाओ और शामकी गाड़ीमें जमनालालजी के साथ जाओ या ऐसे ही। आज रातको जानेकी कोई ज़रूरत नहीं।

बापुकी दुआ[1]

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९२) से।

२३७. पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव
४ अक्तूबर, १९३७

मूर्खा रानी,

इस सप्ताह खुद लिख सकना मेरे लिए असम्भव रहा है। बायाँ हाथ धीमे चलता है और दायेंसे रविवारके अलावा सप्ताहके दूसरे दिन काम नहीं लिया जा सकता।

लीलावतीने मेरा पूरा एक दिन लिया, लेकिन वह हकदार भी थी। बेचारीको आपरेशनके समय और उसके बाद भी काफी तकलीफ रही। चिमनलालका जीवन भी मानों अधरमें लटकता है; उसको लेकर मन सबसे अधिक चिन्तित है। कल पहली बार उसका तापमान कुछ घंटोंके लिए सामान्यपर आया, लेकिन वह बहुत कमजोर हो गया है। उसका दिमाग ठीक काम नहीं करता। पारनेरकरका बुखार उतर गया है और शक्ति वापस आ रही है।

सर जोगेन्द्रसिंहने मेरा लेख[2] पढ़कर एक मधुर पत्र भेजा है, जो संलग्न है। उसे पढ़ने के बाद बेशक नष्ट कर देना।

१. ये शब्द उर्दूमें हैं।
२. देखिए "अव्यावहारिक नहीं", पृ० १८०-८१।

ज०[१] का बड़ा आग्रह है कि मैं कलकत्ता जाऊँ[२] और मुझे लगता है कि जाना ही पड़ेगा। एक प्रकारसे यह ठीक भी होगा, क्योंकि मुझे नजरबन्दोंके[३] सम्पर्कमें आना ही चाहिए।

उड़ीसाके लिए तुमने जो चेक दिया है वह कटक भेज दिया गया है। तुम्हारा बहुमूल्य पार्सल, जिसमें कम्बल, बीज और चप्पलें थीं, पहुँच गया है, और तार भी। अभी तो पहला कम्बल भी कामके लायक है।

चूँकि तुम्हारी इच्छा है कि तुम्हारे पत्र पढ़ते ही फाड़ दिये जायें और मैं ऐसा ही करता हूँ; अतः मुझे याद नहीं कि किन-किन बातोंका उत्तर देना था। इसलिए तुम्हें हर सोमवारको लिखे जानेवाले मेरे अधूरे पत्रोंसे ही सन्तोष करना पड़ेगा।

स्नेह।

तानाशाह

[पुनश्च:]

बेशक मैं जानता हूँ कि यह शाल कितने प्रेमसे बुना गया है, कितने प्रेमके साथ चप्पलें बनाई गई हैं और बीजोंमें कितना प्रेम उँड़ेला गया है। आज अपने नकली दाँतोंसे तुम्हारा भेजा सेव खाया।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८१३) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९६९ से भी

२३८. पत्र : प्यारेलालको

४ अक्तूबर, १९३७

चि० प्यारेलाल,

मैं इसके साथ दाँत भेज रहा हूँ। इनका जो करना हो सो करना। मैंने इन्हें सारी रात और सारे दिन पहनकर देख लिया है। कल तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगा। फिर भी जरूरी हो तो रुक जाना। सबकुछ निपटा कर आना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८०२) से।

१. जवाहरलाल नेहरू।

२. कार्य-समितिकी बैठकके लिए, जो २६ अक्तूबरसे होनेवाली थी।

३. अंडमानके कैदियोंसे; गांधीजी उनसे ३० अक्तूबरको मिले थे; देखिए "बातचीत : अंडमानके कैदियोंसे", ३०-१०-१९३७, और "वक्तव्य : समाचारपत्रोंको", १-११-१९३७।

२३९. तार : राजेन्द्र प्रसादको

वर्धा
५ अक्तूबर, १९३७

राजेन्द्रप्रसाद
सदाकत आश्रम
पटना

आशा है आप अच्छे होंगे और २२ तथा २३ तारीखको यहाँ होनेवाले शिक्षा सम्मेलनमें शामिल हो सकेंगे। उसी समय कानपुरमें श्रम समिति की बैठक होगी। आशा है, उसकी तिथि आगे बढ़ाई जा सकती है।

गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९८७८) से; सौजन्य : राजेन्द्रप्रसाद

२४०. पत्र : मुन्नालाल जी० शाहको

सेगाँव
५ अक्तूबर, १९३७

चि० मुन्नालाल,

मैं कितने ही दिनोंसे तुम्हें बुलाकर तुमसे बातचीत करना चाहता था, लेकिन समय ही नहीं मिलता। इसलिए जो-कुछ तुमसे कहना है, उसे लिखकर ही कह दूं तभी मुझे सन्तोष होगा। मैं यहाँके कार्योंको पूरा नहीं कर पाता, इसलिए यह बात मनको सालती रहती है और अगर मैं किसी तरह उन्हें पूरा करने का प्रयत्न करता हूँ तो बिगड़ी हुई सेहत और बिगड़ने लगती है।

तुम्हारा मीराबहनके साथ वैमनस्य क्यों है? उसके साथ बातचीतका जी क्यों नहीं होता? मैंने उसे बच्चोंका मुआयना करने और पींजने आदिकी जाँच करने के लिए कहा था। मेरे कहने के मुताबिक उसने जो टिप्पणी मुझे भेजी है, वह इस पत्रके साथ नत्थी है। इसे मिले ६-७ दिन हो गये होंगे। इसमें अतिशयोक्ति हो सकती है, इस बातको जाने दें तो भी इससे हमें कुछ-न-कुछ सोचनेको तो मिलता ही है। उसके काममें व्यवस्था तो रहती है। मैं चाहता हूँ कि तुम उसकी देख-रेख में काम करो, उसे सहन करो। यदि तुम उसके मुखसे अपनी आलोचना नही सुन सकते तो

मैं उससे लिखवाकर तुम्हें देता जाऊँगा। लेकिन यदि उसका मूक निरीक्षण भी तुम्हें पसन्द न हो तो मैं उसे यह भी नहीं करने दूँगा। जो काम तुम आजकल कर रहे हो, उससे क्या तुम्हें पूरा आत्म-सन्तोष मिलता है?

स्कूलके बारेमें क्या तुम्हें कुछ कहना है? क्या तुम उसका कब्जा लेने को तैयार हो? क्या गाँवके लोग भी काम देने और लेने के लिए तैयार हो गये हैं? उसमें क्या तुम कुछ करना चाहते हो? समय है? करने की सामर्थ्य है?

जो काम तुम कर रहे हो, यदि उसीमें सम्पूर्णता लाओगे तो भी मुझे सन्तोष होगा। छोटेसे-छोटे काममें भी सम्पूर्णता लानेवाला व्यक्ति आत्म-सन्तोष पा सकता है।

जब तुम मुझे खाली देखो तब इसका जवाब जबानी या लिखकर दे देना। आजसे मैंने इस तरह लिखकर भी काम पूरा करने का निश्चय किया है। अतः नानावटी और डाह्याभाईको भी लिख रहा हूँ।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५७७)से। सी० डब्ल्यू० ७०२२ से भी; सौजन्य: मुन्नालाल जी० शाह

२४१. पत्र: अमृतलाल टी० नानावटीको

सेगाँव
५ अक्तूबर, १९३७

चि० अमृतलाल,

चूँकि मुझे बातचीतका समय नहीं मिलता इसलिए लिखकर निपटा रहा हूँ। मैं बहुत समयसे तुम्हारे साथ बातचीत करना चाह रहा था। आज तो इतना ही लिखूंगा। तुमसे तो मुझे मौलिक काम लेना है। इसके लिए यदि तुम्हें और सब काम छोड़ना पड़े तो मैं छुड़वानेके लिए तैयार हूँ।

कानमके[1] ऊपर जो प्रयोग किया जा रहा है उससे कानमको तो लाभ होगा ही, लेकिन यदि यह प्रयोग ज्ञानपूर्वक किया जाता है तो इससे तुम्हें भी बहुत लाभ होगा और मेरा काम भी खूब आसान हो जायेगा।

मैं चाहता हूँ कि तुम बुनाई-शास्त्रका आरम्भसे लेकर अन्ततक सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त करो। अब तुम्हारी अपनी इच्छा क्या है, सो मुझे बताना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७३७) से।

१. रामदास गांधीके पुत्र।

२४२. पत्र : अमृतकौरको[1]

६ अक्तूबर, १९३७

प्यार। तुम्हारे घोषणा-पत्रका मसौदा कल।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८१५)से। सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९७१ से भी

२४३. पत्र : विद्या आनन्द हिंगोरानीको

सेगाँव, वर्धा
६ अक्तूबर, १९३७

चि० विद्या,

तुम्हारा खत मिला। बहूत दिनोंके बाद आया। नैनीतालमें और भी रह-कर तबियत बिलकुल अच्छी बना लो। तुम्हारा प्रथम कर्तव्य शरीरको मजबूत बनाने का है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य : राष्टीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

१. यह अमृतकौरको लिखे मीराबहनमें पुनश्चके रूपमें लिखा गया था।

२४४. पत्र : आनन्द तो० हिंगोरानीको

६ अक्तूबर, १९३७

चि० आनंद,

तुम्हारा खत मिला। तुम्हारे अक्षर विद्यासे अच्छे हैं। हिन्दी भी अच्छी है। थोड़ा और प्रयत्न करेगा तो हिन्दीका ज्ञान बिलकुल अच्छा हो जायगा। नैनीतालमें हिन्दी बोलने का अभ्यास भी काफी हो जाना चाहिए। कुछ हिन्दी पढ़ने का भी अभ्यास रक्खो। हिन्दी अखबार और रामायण पढ़ो। 'हरिजनसेवक' पढ़ने से दो गूना फायदा पहुंचेगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

२४५. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

वर्धा
६ अक्तूबर, १९३७

संसारके और भारतके लगभग सब भागोंसे मेरे जिन बहुत-से मित्रोंने समुद्री तार तथा पत्र भेजे हैं उन सबको अलगसे धन्यवाद देना मेरे लिए असम्भव है। मैं देखता हूँ कि प्रतिवर्ष इनकी संख्या बढ़ती ही जाती है। मैं तो केवल यह आशा कर सकता हूँ कि समस्त संसारमें फैले मेरे असंख्य मित्र मेरे जीवनके अन्तिम अध्यायकी अन्तिम पंक्तिमें यह कह सकें कि उन्होंने मुझे जो स्नेह दिया उसके योग्य बनने के लिए मैं सदैव प्रयत्नशील रहा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ७-१०-१९३७

२४६. पत्र : माधवदास और कृष्णा कापड़ियाको

सेगाँव वर्धा
७ अक्तूबर, १९३७

चि० माधवदास[1] और कृष्णा,[2]

तुम दोनोंके पत्र और हार मिले। मैं पत्र लिखकर तुम्हें आशीर्वाद दूँ या न दूं, मेरा आशीर्वाद तो तुम्हारे पास है ही।

बाकी सब कुशल है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू० / २२) से।

२४७. पत्र : चन्दन पारेखको

७ अक्तूबर, १९३७

चि० चन्दू,

तेरे पत्रके बिना ही मैं यह पत्र लिख रहा हूँ। तू वहाँ अकेली है; वह परदेश है और वहाँ सब-कुछ विचित्र है। तिसपर तेरे मनपर . . .[3] के मामलेका बोझ है। इसलिए शंकरकी ऐसी इच्छा है कि यदि मैं समय-समयपर लिखता रहूँ तो तुझे उससे सान्त्वना मिलेगी। यह बात मुझे पसन्द आई। तेरे बारेमें वह इतनी चिन्ता करता है, यह तेरे लिए शुभ है। लेकिन इतनी दूर चले जानेके बाद किसीकी ओरसे सान्त्वना की क्या जरूरत है? जो व्यक्ति हजारों मील दूर विदेशमें जाता है उसमें आन्तरिक शान्ति प्राप्त करने की शक्ति होनी चाहिए। और वह तुझमें है, मैंने ऐसा मान लिया है। न हो तो इस प्रकारकी शान्तिका विकास करना। जो लोग ईश्वरमें विश्वास करते हैं, उनसे वह कभी दूर नहीं होता। वह अँगुलीके नाखूनकी अपेक्षा ज्यादा करीब है, क्योंकि वह तो हमारी रग-रगमें वास करता है। हृदयसे निकले गुह्यतम उद्गारोंका वह साक्षी है। हम उसके अस्तित्वमें विश्वास करते हैं अथवा नहीं, इसकी उसे कोई परवाह नहीं। हम उससे दूर भागें, इसकी भी उसे कोई चिन्ता नहीं। क्योंकि हमारी बागडोर तो उसीके हाथमें है।

. . .[4] के मामलेमें तो तुझे चिन्ता करनी ही नहीं चाहिए, क्योंकि इस चिन्ताको तो तूने मुझे सौंप दिया है। मुझे उम्मीद है कि मुझे तुझसे अब कोई प्रश्न

१ और २. कस्तूरबा गांधी के भाई और उनकी पत्नी।

३ और ४. नाम छोड़ दिया गया है।

नहीं पूछना पड़ेगा। लेकिन यदि पूछना हुआ तो मैं निस्संकोच पूछूँगा। और तू मुझे निस्संकोच उत्तर देना।

आशा है, तेरा स्वास्थ्य ठीक होगा। तेरा अध्ययन खूब जोरोंसे चल रहा होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९४४) से; सौजन्य: सतीश द० कालेलकर

२४८. पत्र: नरहरि द्वा० परीखको

७ अक्तूबर, १९३७

चि० नरहरि,

तुम्हारा पत्र मिला।

यदि हम बाहरसे हलवाई आदि बुलाते हैं और उनपर यह नियन्त्रण नही रख पाते कि उन्हें गायके घी-दूधका ही इस्तेमाल करना होगा, तो यह निश्चय ही बुरी बात है। यदि घी बाहरसे भी इकट्ठा किया जा सके तो ठीक है। अगर हम हलवाइयों आदिको आनेकी अनुमति देते है तो हमें उनकी चीजोंके भावोंपर अंकुश रखना होगा। और यदि उन्हें दूध आदिके दाम ज्यादा देने पड़ें तो हमें उसी अनुपातमें मिठाईके भाव भी बढ़ा देने चाहिए। [कांग्रेस] शिविरमें प्रतिस्पर्धा तो हो ही नहीं सकती। इसलिए हम जो उचित भाव तय करेंगे, लोग अवश्य उन्हें मानेंगे। हमें ज्यादा मुश्किल तो कदाचित् मांसाहारको लेकर होगी। मुझे मालूम नहीं कि फैजपुर-कांग्रेस में[1] क्या हुआ था। यदि कांग्रेस-शिविरमें मांसकी सुविधा नहीं थी तो खास फैजपुरमें तो अवश्य रही होगी। हम तो ऐसे स्थानपर गये हैं कि जो चीज हम शिविरमें नहीं रखेंगे वह बाहर भी उपलब्ध नहीं होगी। इसपर विचार करना। सरदारके साथ भी इसकी चर्चा करना।

शिक्षा-परिषद्की बैठकके समय यदि तुम बैठकके बाद नहीं ठहरोगे तो हम बात ही नहीं कर पायेंगे। और २५ तारीखकी सुबह मुझे कलकत्ताके लिए रवाना होना होगा। इसलिए कोई समय नहीं मिलेगा। यदि तुम एक-दो दिन पहले आ जाओ तो विचारोंका कुछ आदान-प्रदान हो सकेगा। मेरा खयाल है कि तुम परिषद्में काफी योगदान करोगे।

बापूके आशीर्वाद

श्रीयुत नरहरि द्वा० परीख
हरिजन आश्रम
साबरमती, बी० बी० एण्ड सी० आई० रेलवे

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९११४) से।

१. दिसम्बर, १९३६ के कांग्रेस-अधिवेशनमें।

२४९. पत्र : महादेव देसाईको

सेगाँव
७ अक्तूबर, १९३७

चि० महादेव,

वह शराबके ठेकेका मालिक अपने हककी रूसे ताड़ी तो बनाये ही जा रहा है। बाबासाहबके दीवानजी भी उसे नहीं रोकते। इसलिए जैसे ही उत्तर आये वैसे ही तुम एक पत्र नागपुर अवश्य लिख देना। लेकिन इसके अतिरिक्त तुम स्वयं जिला आयुक्त अथवा आबकारी आयुक्तके पास पहुँच जाना और कहना कि शराब बनाने के इस कामको रोका ही जाना चाहिए।

टार्चका बल्ब बिगड़ गया है। खरीदकर कल भेज देना। टार्च तो ठीक होगी, ऐसा मैं माने लेता हूँ।

लीलावतीके बारेमें मैं समझता हूँ। जबतक वह अधीर नहीं होती तबतक मैं अधीर होनेवाला नहीं हूँ। वह बिलकुल ठीक हो जाये तो समझूँगा कि सब कुछ पा लिया।

मालूम हुआ है कि गोमती[1] बुखारमें पड़ी हुई है। किशोरलालको[2] खाँसी है। यदि उनके पास जा सको तो जाना। यहाँसे यदि किसी व्यक्तिकी मदद की जरूरत हो तो भेजा जा सकता है। यदि आवश्यक हो तो ईश्वरदासकी मदद ले सकते हो। किशोरलाल स्वयं तो किसीसे कुछ नहीं कहेगा। यदि सिविल सर्जनको ले जाना तुम्हें उचित जान पड़े तो ले जाना। उसे बार-बार दौरा पड़ता है, यह बात मुझे अच्छी नहीं लगती।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्चः]

उन सौ रुपयोंकी बात विनोबाके कानमें डालना ठीक होगा।[3]

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५७५) से।

१ और २. गोमती मशरूवाला तथा किशोरलाल मशरूवाला।

३. यह "बापूकी ओरसे" कनु गांधीने लिखा था।

२५०. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

सेगाँव, वर्धा
८ अक्तूबर, १९३७

चि० अम्बुजम,[१]

तुमने मुझे हिन्दीमें लिखा, यह देखकर खुशी हुई। तुम्हारी लिखावट अच्छी — पूरी तरह सुवाच्य और भाषा काफी अच्छी है। अभी यह लिखवाते समय मैं तुम्हारी लिखावट पाससे देख रहा हूँ तो मुझे लगता है कि यद्यपि वह अच्छी और सुवाच्य है, फर भी उसमें शुद्धि और सुधारकी गुंजाइश है।

जब कभी तुम माता-पिताकी अनुमति और उनके आशीर्वाद लेकर वहाँसे कुछ दिनोंके लिए निकल सको, बीमार पड़ने के डरसे यहाँ आनेमें आगापीछा मत करो। मुझे तुम्हारे बीमार पड़ जानेका कोई भय नहीं है। तुम जैसा चाहोगी वैसा खा सकोगी। अपना कुकर साथ ले आना और खुद भोजन बना लेना। मुझे लगता है, नवम्बरके समाप्त होनेके पहले तुम यहाँ नहीं आ सकोगी, क्योंकि नवम्बरमें मेरे सीमाप्रान्त में रहने की सम्भावना है। मुझे शारीरिक आरामकी अपेक्षा लम्बे मानसिक आरामकी जरूरत है। जितना आराम सम्भव है उतना मैं ले रहा हूँ, लेकिन और अधिक लूँ तो भी कोई हर्ज नहीं।

राघवनका विकल्प ढूँढ़ने के बारेमें खूब विचार कर रहा हूँ। मैंने खुद ही तुम्हारे बारेमें सोचा था। तुम हमेशा बहुत संकोच करती रही हो — अपनी योग्यता तुमने सदा कम आँकी है, लेकिन यदि तुम खूब साहससे काम लो तो बहुत अच्छी संचालिका[२] साबित हो सकती हो। कोशिश करके देखो — यदि काम बूतेसे बाहरका लगेगा तो त्यागपत्र दे देना। कठिनाइयाँ आनेपर तुम मेरा सहारा तो लोगी ही — और मैं तुमको सहारा न केवल एक मार्गदर्शकके रूपमें, बल्कि इस संस्थाके अधिकृत प्रधानके तौरपर भी दूँगा। तुम्हें हिन्दीका पर्याप्त ज्ञान है, यह काम तुम्हें पसन्द भी है, ज्यादातर काम तुम जानती हो, तुममें बहुत अधिक ईमानदारी है, लगन है और जब चाहो तब स्वतन्त्र रूपसे निर्णय लेनेकी शक्ति भी है, इसलिए संकोचका तो कोई कारण ही नहीं है। तुम्हें झूठी विनम्रताका त्याग कर देना चाहिए। इसलिए यदि तुम इस कामको संभालनेके बारेमें विचार कर सको तो अच्छा होगा। उस हालतमें तुम सीधे राजगोपालाचारीके पास जाकर सलाह लो। अगर किसी कारणसे उन्हें मेरा विचार ठीक नहीं लगता तो मैं नहीं चाहता कि तुम यह पद स्वीकार करो।

१. सम्बोधन देवनागरीमें है।
२. हिन्दी प्रचार सभाकी।

तुम्हारी भेजी हुई फलोंकी विशेष टोकरी मिली। लेकिन जिन फलोंको मैं आसानीसे स्वीकार कर सकता हूँ वे तुम्हारे भेजे ये खास तौरसे महँगे फल नहीं, बल्कि संतरे और नींबू हैं। यहाँ वर्धामें बहुत उम्दा संतरे तो कभी मिलते ही नहीं और जैसे नींबू तुम्हें वहाँ मिलते हैं, वैसे नींबू भी नहीं मिलते। आजकल मैं तीन दर्जन संतरे और कमसे-कम एक दर्जन नींबू रोज उपयोगमें लाता हूँ। इसलिये ये दोनों जब भी सस्ते मिलें तुम लेकर भेज सकती हो। मुझे रेलभाड़ा बड़ा खटकता है। अगली टोकरी भेजो तो मेरी उत्सुकता शान्त करनेके लिए बताओ कि भाड़ा कितना आया।

महादेवने तुम्हें खबर नहीं दी होगी, पर पचास रुपये मिल ही गये होंगे।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजीसे। अम्बुजम्माल पेपर्स; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२५१. पत्र : अमृतकौरको[1]

८ अक्तूबर, १९३७

आजकल सोमवारके अतिरिक्त और किसी दिन मुझसे प्रेम-पत्रोंकी आशा मत रखो। सांस्कृतिक संघों आदिके बारेमें तुम्हारे जो विचार हैं, मैं उनसे सर्वथा सहमत हूँ। यह अतुल भी जानता है।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८१६) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६९७२ से भी

१. यह अमृतकौरको लिखे मीराबहनके पत्रमें पुनश्चके रूपमें लिखा था। मीराबहनके पत्रमें और बातोंके अतिरिक्त गांधीजी के ये सन्देश भी भेजे गये थे:

(क) नरीमान-प्रकरण अभी चल रहा है।

(ख) बड़ी अच्छी बात है कि नबीबख्श स्वस्थ है — बापू उसको प्यार भेजते हैं।

(ग) बापूने गोविन्ददासको पत्र और तार भी भेजा था कि वे ११ या १२ तारीखको यहाँ आ जायें।

२५२. पत्र : खुर्शेदबहन नौरोजीको[1]

८ अक्तूबर, १९३७

तुम तो मुझसे उत्तरकी अपेक्षा नहीं रखतीं, लेकिन मैं अपनेको रोक नहीं सकता। तुम चाहो तो उन लोगोंसे भी दूर भाग सकती हो जो तुम्हें चाहते हैं, लेकिन उनका क्या होगा? और क्या तुम्हें पूरा यकीन है कि तुम अपने और दूसरे मनुष्योंके बीच कोई दीवार खड़ी कर सकती हो? जिस प्रकार तुम अपने शरीरसे दूर नहीं जा सकतीं उसी प्रकार मनुष्योंसे भी परे नहीं जा सकतीं। जहाँ भी जाओगी शरीरधारी जीव तुम्हारा पीछा करते रहेंगे। शरीरधारी जीव शरीरधारी जीवके माध्यमसे ही उसमें समाये सत्‌के दर्शन कर सकता है। वह इससे परे नहीं है। उपनिषद् सच्चे मानवीय अनुभवोंके अंश हैं। क्या तुम 'ईशोपनिषद्' का मनन करोगी? और जब ईसाने यह कहा था कि "आप मेरे पिताको मेरे (शरीरधारी जीवके) माध्यमसे ही देख सकते हैं" तब उनका क्या अभिप्राय रहा होगा? अरे, अपनी इस निद्रासे जागो। तुम मुझे भूल जाओ, अस्वीकार कर दो, किन्तु मेरे लिए तो तुमको भूलना बिलकुल असम्भव है, भला मैं क्या करूँ?

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी [illegible] डायरी। सौजन्य : नारायण देसाई

२५३. पत्र : प्रभावतीको

सेगाँव, वर्धा
८ अक्तूबर, १९३७

चि० प्रभा,

मुझे यहाँसे २५ तारीखको जाना होगा। २६ से ३० तारीख तक कदाचित् कलकत्ता रहना होगा। वहाँसे वापस तो आऊँगा, लेकिन आनेके तुरन्त बाद सीमा-प्रान्त जाना होगा। इसलिए यदि तू आ सकती हो तो अभी आ जाना। बादमें तो कौन जाने, कब मिलना हो? यदि तू कलकत्ता आये भी तो उसका क्या फायदा? वहाँ तो मुझे तुझे देखने तककी भी फुर्सत न होगी।

१. दादाभाई नौरोजीकी पौत्री।

चिमनलाल अब ठीक है। अभी वह खटियामें पड़ा है; लेकिन बुखार लगभग उतर गया है।

मैं ठीक हूँ। कामका बोझ काफी है।

अमतुस्सलाम अभी बम्बईमें ही है। इस पत्रके पहुँचने तक भी वह कदाचित् वहीं हो। लेकिन निश्चित रूपसे नहीं कहा जा सकता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५२८) से।

२५४. पत्र : द० बा० कालेलकरको

सेगाँव
८ अक्तूबर, १९३७

चि० काका,

साथके पत्र तो तुम्हें दिखाना भूल ही गया। शंकरका पत्र बहुत मधुर है। पिछली स्मृतियोंके प्रति उसके मनमें आदर-भाव है। यह अच्छा लगता है। शंकरका पत्र याद करके बालको देना। बालको तो अब एक-दो दिनोंमें पहुँच जाना चाहिए।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७७०५) से।

२५५. पत्र : अमृतलाल टी० नानावटीको

सेगाँव
८ अक्तूबर, १९३७

चि० नानावटी,

मीराबहनको जो अनेक बातें टीका-टिप्पणी करने लायक जान पड़ी वे सब मैंने उसे लिखने के लिए कहा था। वह टिप्पणी इसके साथ है। वस्तुतः देखा जाये तो इनमें से कुछ तो डाह्याभाईके कार्य-क्षेत्रमें आती हैं और कुछ विजयाके। इनमें तुम कही भी प्रत्यक्ष रूपसे जिम्मेदार नहीं ठहरते हो। लेकिन जिस हदतक तुम व्यवस्थापक हो उस हदतक इन सब बातोंपर अमल करवाने की जिम्मेदारी भी तुम्हारे हाथमें होनी ही चाहिए। मीराबहनने तो यह सुझाव दिया था कि वह खुद ही तुम्हें बतायेगी, लेकिन मैंने उसे मना कर दिया। यदि तुम्हारे किसी उत्तरसे उसे सन्तोष न हुआ तो मुझे वह बात फिर सुननी पड़ेगी। उसकी किसी बातसे तुम्हें आघात पहुँचे और तुम वह

बात मुझतक न पहुँचाओ तो भी तुम्हारे मनको आघात तो पहुँचेगा ही। इस दुविधासे निकल जानेकी खातिर मैंने यह रास्ता पकड़ा है। मीराबहनके अधिकांश सुझाव उपयोगी और विचारणीय हैं। वे सारे सुझाव अच्छे हैं; हो सकता है उसमें कुछ [illegible] हो, लेकिन उसे मैं क्षम्य मानता हूँ। मीराबहन ऐसी बातोंको मेरे सामने लाये, इसके लिए मैं उसे प्रोत्साहन देनेकी बात सोचता हूँ। लेकिन चूंकि वह केवल मुझे ही बतायेगी, इसलिए क्षोभकी स्थिति उत्पन्न होनेकी कोई सम्भावना न होगी। उसके आधारपर मुझे जो-कुछ कहना होगा अथवा जो कार्यवाही करनी होगी सो मैं किया करूँगा। तुम इस बारेमें डाह्याभाईसे बातचीत कर लेना। यदि कोई बात विजयाको बताने लायक हो तो बता देना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७३८) से।

२५६. पत्र : हीरालाल शर्माको

सेगाँव, वर्धा
८ अक्तूबर, १९३७

चि० शर्मा,

तुमारे प्रयोग मैं ध्यानसे देख रहा हूं। चाहता हूं कि तुमको सफलता मिले। आंखोंसे देखना तो असम्भव-सा लगता है लेकिन ईश्वर असम्भवसे भी सम्भव पैदा कर सकता है।

खुर्जेके कांग्रेसके बारेमें तुमने मुझको हकीकत तो कुछ भी नहीं दी, इस हालतमें मैं क्या कर सकता हूं? नाम और निशानके साथ कुछ हकीकत भेज दोगे तो मैं वह खत अवश्य जहां जाना चाहिये वहां भेज दूंगा।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २६८

२५७. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेगाँव, वर्धा
[९ अक्तूबर, १९३७ के पूर्व][1]

भाई वल्लभभाई,

मैं नहीं समझता कि मैं इस समय जिन्नासे मिल सकूँगा। जवाहरलाल नहीं चाहते कि मैं उनसे मिलूँ।

लगता है, मुझे कलकत्ता जाना पड़ेगा। जवाहरलालका विशेष आग्रह है। बंगालसे भी ऐसा ही आग्रह किया गया है। सुभाषने भी लिखा है। और यदि मैं गया तो कैदियोंसे भी मिल सकूँगा। इसलिए वहाँ जाते हुए यदि रास्तेमें नहीं तो वहाँ पहुँचने पर तो हम दोनोंकी मुलाकात होगी न?

अच्छा तो यह होगा कि नरीमान-काण्डके सम्बन्धमें तुम स्वयं बहादुरजीको लिखो कि अब इसका जितनी जल्दी फैसला हो जाये उतना अच्छा है।

इस समय जो तूफानी हवा चल रही है उसपर यदि हम काबू नहीं पा लेते तो मेरे विचारसे बाजी हमारे हाथसे जाती रहेगी। इसपर काबू पानेके लिए हमसे जो बने सो हमें करना चाहिए। यदि लोग हमारी बात नहीं मानते तो हमें पीछे हट ही जाना होगा। थोड़ी-सी जगहोंपर थोड़े लोगोंका अधिकार होनेकी जो वर्त्तमान व्यवस्था है वह हमारे लिए बेकार है। यदि हमारा समस्त संगठनपर अधिकार होगा तभी काम आगे बढ़ेगा, अन्यथा नहीं। इसके लिए हमसे जो बन सके सो करना होगा।

सदानन्दके[2] बारेमें तुम्हें लिखना भूल ही गया। वह आया था। वह फिरसे अखबार चलाना चाहता था और एक समाचार एजेंसीका संगठन करना चाहता था। मैंने तो उसमें किसी प्रकारका प्रोत्साहन देनेसे साफ इन्कार कर दिया। उसे झमेलेमें न पड़नेकी सलाह दी। वह झमेलेमें पड़े अथवा न पड़े, लेकिन मुझे भूल जाये, ऐसा मैंने उससे कहा। उसने मुझे भूल जानेकी बातको स्वीकार किया। उसे किसी तरहका पश्चात्ताप हुआ हो, ऐसा नहीं लगा। मेरा खयाल तो यह है कि बम्बईमें नया अंग्रेजी अखबार निकालनेका काम हाथमें लेना ठीक नहीं है।

१. साधन-सूत्रके अनुसार पत्र अक्तूबरके पहले पखवाड़ेमें लिखा गया था। देखिए "पत्र: वल्लभभाई पटेलको", पृ० २३९।

२. **फ्री प्रेस जर्नल** के सम्पादक एस० सदानन्द।

निम्बकरको[1] जवाब तो देना चाहिए। मेरे कहनेका तात्पर्य तो इतना ही था कि अखबारकी रिपोर्टके आधारपर मैं कुछ नहीं कर सकता।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २१५-१६

२५८. मन्त्रियोंको जरा मौका तो दो

एक मुलाकातीसे हुई मेरी बातचीतका निचोड़ इस प्रकार है :

> आपको शायद इसका पता न हो कि मन्त्रियोंकी आज क्या दशा हो रही है। कांग्रेसी अपने-आपको सत्रह सालतक सरकारी पदोंसे अलग रखने के बाद अब अचानक देखते हैं कि जिस सत्ताका उन्होंने पहले अपनी इच्छासे परित्याग कर दिया था, वह सत्ता उनके चुने हुए प्रतिनिधियोंके हाथोंमें आ गई है। उन्हें यह नहीं सूझ पड़ रहा है कि अपने इन प्रतिनिधियोंके साथ किस तरह बरताव करना चाहिए। वे मानपत्रों और स्वागत-सत्कारोंसे उनकी नाकमें दम कर देते हैं, और चाहते हैं कि वे उनसे मुलाकात करें, क्योंकि उनका यह हक है। उनके सामने वे तरह-तरहकी तजवीजें रखते हैं, और कभी-कभी छोटी-छोटी मेहरबानियोंकी भी माँग करते हैं।

मन्त्रियोंको मुल्ककी सच्ची सेवा करनेके लिए अशक्त बना देनेका यह सबसे अच्छा तरीका है। इन मन्त्रियोंके लिए यह काम अभी नया है। ईमानदारीसे काम करनेवाले मन्त्रीके पास मानपत्र तथा स्वागत-सत्कार ग्रहण करने अथवा अतिशयोक्ति-पूर्ण या उचित प्रशंसात्मक भाषणोंका जवाब देनेके लिए समय नहीं हो सकता; न उनके पास ऐसे मुलाकातियोंके साथ बैठकर बातें करनेका ही वक्त हो सकता है, जिन्हें उन्होंने मिलने के लिए न बुलाया हो या जिनसे उन्हें अपने काममें कोई मदद मिलती मालूम नहीं होती हो। सिद्धान्तकी दृष्टिसे देखते हुए तो प्रजातन्त्रका नेता हमेशा प्रजाके बुलाने पर उससे मिलने या चाहे जहाँ जानेके लिए तैयार रहेगा। वह अगर ऐसा करे तो उचित ही है। किन्तु प्रजाने उसको जो कर्त्तव्य सौंप रखा है, उसे क्षति पहुँचाकर वह ऐसा करने की धृष्टता कदापि नहीं कर सकता। मन्त्रियोंको जो काम सौंपा गया है उसमें अगर वे पारंगत नहीं होते या प्रजा उन्हें पारंगत नही होने देती तो मन्त्रियोंकी फजीहत ही होनेको है। शिक्षा-मन्त्रीको अगर ऐसी नीति ढूँढ़ निकालनी है जो देशकी आवश्यताओंको पूरा कर सके तो उसे अपना सारा बुद्धि-बल इस काममें लगा देना पड़ेगा। आबकारी विभागका मन्त्री यदि मद्य-निषेधके

१. एक साम्यवादी कार्यकर्ता।

रचनात्मक अंगके प्रति ध्यान न देगा, तो वह अपने कर्त्तव्यपालनमें बिलकुल असफल रहेगा। यही बात वित्त-मन्त्रीके बारेमें है। और इसी तरह भारत [सरकार] अधिनियमने वित्त-मन्त्रीके मार्गमें जो बाधा खड़ी कर रखी है तथा स्वयं वित्त-मन्त्रीने आबकारी करका स्वेच्छासे त्याग करके अपने लिए जो कठिनाई पैदा कर ली है उसके बावजूद अगर वह अपना बजट सन्तुलित नहीं कर पाता है तो नाकामयाब माना जायेगा। इस कामको करने के लिए तो आँकड़ोंके जादूगरकी जरूरत है। ये तो केवल उदाहरण हैं। जिन तीन विभागोंके मन्त्रियोंका मैंने उल्लेख किया है लगभग उतनी ही सतर्कता, सावधानी और अध्ययन-मननकी हरएक मन्त्रीको जरूरत है।

स्थायी अधिकारी मन्त्रियोंके आगे जो कागज-पत्र रख दें उन्हें पढ़कर उनपर दस्तखत कर देने-भरका ही काम अगर इन मन्त्रियोंके पास होता, तो यह आसान काम था। पर हरएक कागज-पत्रका अध्ययन करना और विचारपूर्वक नई-नई नीतियोंका निर्धारण और उद्भावन करना कोई आसान काम नहीं है। मन्त्रियोंने जो सादगी अख्तियार की, वह शुरुआतके तौरपर आवश्यक थी। किन्तु यदि वे आवश्यक उद्योगशीलता, योग्यता, प्रामाणिकता, निष्पक्षता और प्रत्येक तफसीलपर अधिकार रखने की अगाध शक्तिका परिचय नहीं देंगे, तो उनकी इस कोरी सादगीसे उन्हें कुछ मिलनेवाला नही है। इसलिए अगर जनता अपने मन्त्रियोंको मानपत्र देने, उनसे मुलाकातें माँगने या उन्हें लम्बे-लम्बे पत्र लिखने में सयमसे काम लेगी, तो इससे लाभ ही होगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ९-१०-१९३७

२५९. सफलताकी शर्तें

श्री भाऊसाहब लवाटे[1] शराबबन्दीके बारेमें मेरे साथ बात करने के लिए पूनासे आये थे। यह काम जितना मुझे प्रिय है उतना ही उन्हें भी है। हम दोनों नीचे लिखे निर्णयपर पहुँचे हैं:

१. अबसे शराबसे होनेवाली तमाम आमदनीका उपयोग शराबबन्दीके लिए ही किया जाये, और किसी कामके लिए नहीं।

२. जहाँ शराबकी दूकानोंपर शराब पीनेके लिए जानेवालोंकी कमसे-कम ७५ फीसदी संख्या दूकानें बन्द कर देनेकी स्पष्ट माँग रख रही हो, वहाँ दूकानोंका लाइसेंस खत्म होने पर नया लाइसेंस न दिया जाये, और शराबकी सब दूकानें फौरन बन्द कर दी जायें।

३. जहाँ-जहाँ शराब बेचने की जरूरत हो, वहाँ वह सीधी सरकारी एजेन्सीके मार्फत ही बिकनी चाहिए।

१. पूनाके।

४. जहाँ-जहाँ हो सके वहाँ शराबकी दुकानोंको उपहारगृहों और मनोरंजनके स्थानोंमें बदल दिया जाये।

५. जिन जगहोंमें शराबकी विशेष रूपसे खपत होती हो, वहाँ इस व्यसनके मूल कारणोंका अच्छी तरह पता लगाया जाये, और उसका इलाज किया जाये।

६. मान्यता-प्राप्त व्यक्ति या समूह शान्तिमय, चुपचाप और शिक्षाप्रद पिकेटिंगका काम हाथमें ले लें। हेतु यह है कि वे इस दुर्व्यसनमें फँसे हुए लोगोंके सम्पर्कमें आयें, और इस बुरी लतको छुड़ाने में उनकी मदद करें। इस वैज्ञानिक पिकेटिंगके साथ यह होना चाहिए कि जो इस व्यसनके चंगुलमें फँसे हुए हैं उनके घर जाकर उनसे मिलने का कार्यक्रम रखा जाये। इस कामके लिए सरकारको चाहिए कि वह स्वयंसेवकों और सेविकाओंको आमन्त्रित करे, और उन्हें इस सेवा-प्रवृत्तिके लिए प्रोत्साहन दे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ९-१०-१९३७

२६०. प्राइमरी अध्यापकोंके उम्मीदवारोंसे

प्राइमरी शिक्षा-सम्बन्धी अपनी योजनाके बारेमें प्रति सप्ताह मैं इन स्तम्भोंमें लिखता रहा हूँ, और इस योजनाका समर्थन करनेवाले शिक्षकोंसे मैंने जो अपील[1] की थी उसके जवाबमें मेरे पास रोज अनेक खत आ रहे हैं। यह सन्तोषकी बात है। इन पत्रोंसे मैं देखता हूँ कि इन्हें लिखनेवालों ने मेरी अपीलका ठीक-ठीक अर्थ नहीं समझा। जिन्हें किसी लाभदायक दस्तकारी द्वारा शिक्षा देनेके विषयमें पूर्ण श्रद्धा न हो और जो इस कामको केवल प्रेमभावसे और सिर्फ जीविका लायक पैसा लेकर करने के लिए तैयार न हों उनकी जरूरत नहीं। उन्हें मेरी यह सलाह है कि वे कातने की कलामें और उसके पहलेकी तमाम क्रियाओंमें पूर्ण निष्णात बन जायें। इस बीच मैं उन सबके नाम दर्ज करके रख लेता हूँ। मेरी योजनाके अमलमें जो प्रगति होगी उसकी इन पत्र-लेखकोंको यथासमय खबर दे दी जायेगी। सातों प्रान्तीय सरकारें अगर मेरी योजनाको मंजूर कर लें और उसका प्रयोग करने के लिए तैयार हो जायें, तो उनकी माँग पूरी करने के लिए मेरा यह प्रयत्न है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ९-१०-१९३७

१. देखिए पृ० १८३

२६१. पत्र : गोविन्दराव वी० गुरजलेको

सेगाँव, वर्धा
९ अक्तूबर, १९३७

भाई गुरजले,

तुम्हारे पत्रके अन्तिम अंशकी स्पष्टवादिताकी मैं सराहना करता हूँ। मुझे खुशी है कि तुम मित्रोंका ध्यान नशाबन्दीपर केन्द्रित कर रहे हो।

तुम्हें पता है कि चाय और काफी बुरी चीजें हैं, किन्तु जबतक तुम अपने तर्कोंकी[1] पुष्टिमें मुझे तथ्य और आँकड़े नहीं देते तबतक मैं इस विषयमें कुछ नहीं कर सकूँगा।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४०२) से।

२६२. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेगाँव, वर्धा
९ अक्तूबर, १९३७

भाई वल्लभभाई,

निम्बकरको तुमने जो उत्तर दिया है उसे मैंने अभी-अभी पढ़ा। वह मुझे बिलकुल नहीं जँचा। इसमें बहुत असहिष्णुता दिखाई देती है। निम्बकरके बारेमें तुमने जो लिखा है, उसे सिद्ध करना मैं मुश्किल समझता हूँ। यह सब लिखने की जरूरत भी क्या थी? और [बॉम्बे] 'क्रॉनिकल' पर तुमने जो आक्षेप किया है, वह तनिक भी शोभा नहीं देता। 'ऑब्वियस रीजन्स' (सुस्पष्ट कारण) वे होते हैं जिन्हें सब जानते हैं। 'क्रॉनिकल' हमेशा तुम्हारा विरोध ही करता है, यह बात मैं नहीं जानता। और यदि करता भी है तो वह कारण क्या हो सकता है जो सबको मालूम हो? ऐसा कहने के पीछे तुम्हारा क्या हेतु था? मुझे तो लगता है कि तुमने स्वयं विरोध भड़काया है।

१. देखिए पृ० १९५।

वैकुण्ठ (मेहता) के बारेमें तुम्हें मुंशी बतायेंगे। मोरारजीको चाहिए कि उसे मोरेटोरियम[1] और नरहरिभाईके कार्यसे तीन महीनेके लिए मुक्त कर दे और यदि समितिका काम इससे आगे जानेवाला न हो तो तुम खुशीके साथ वैकुण्ठको ले सकते हो।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २१४-१५

२६३. पुर्जा : नरहरि द्वा० परीखको

[१० अक्तूबर, १९३७ के पूर्व][2]

तुमने पहले आकर ठीक ही किया। मैं तो बड़ी मुश्किलसे टिका हुआ हूँ। दिमागको बहुत आरामकी जरूरत है। २२ तारीखको कहीं मैं बिस्तरपर ही न पड़ जाऊँ, इस भयसे जितनी देरतक मौन रहकर सोया जा सकता है उतनी देरतक मैं मौन सोता रहता हूँ। लेकिन यहाँ सबका ध्यान रखना। नालवाड़ीके प्रयोगको मेरी दृष्टिसे देखना। काकाके साथ बात करना। [आर्य] नायकम्ने भी इस विचारको अच्छी तरह समझ लिया है। और सबसे अधिक विनोबाने। वे तो लिखते हैं कि उन्हें मेरे लेखोंमें कोई आपत्तिजनक बात दिखाई नहीं देती। उनके पत्रका एक अंश मैंने प्रकाशनके लिए 'हरिजनबन्धु'[3] में भेजा है। प्रकाशित हुआ या नहीं, सो मालूम नहीं।

* * *

वनमाला वगैरह ठीक बच गई।

* * *

विद्यार्थीकी उम्र क्या है?

* * *

गाँवकी किसी पाठशालामें बहुत छोटे बच्चे तो शायद ही होंगे। ऐसे बच्चे गाँवोंमें होते तो जरूर हैं लेकिन वे पाठशाला नहीं जाते। यहाँकी पाठशालामें बहुत

१. किसानों आदिको ऋणोंकी अदायगीके बारेमें मुहलत दिलाने का काम।

२. विनोबाके पत्र की चर्चाके आधारपर यह तारीख निश्चित की गई है। विनोबाका यह पत्र **हरिजनबन्धु**, १०-१०-१९३७ के अंकमें छपा था।

३. देखिए अगला शीर्षक।

छोटे बच्चोंको माता-पिता भेजते नहीं हैं। शिक्षक लोग उनमें दिलचस्पी नहीं लेते। वे न आयें, ऐसा मैं नहीं चाहता। मैं तो जो वस्तुस्थिति देखता हूँ, सो कहता हूँ।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९११२) से।

२६४. उद्योग द्वारा शिक्षणके दो आधार

यद्यपि विनोबा और मैं सिर्फ पाँच मीलके ही फासलेपर रहते हैं, फिर भी दोनोंके अपने-अपने काममें डूबे रहने और दोनोंकी तबीयत कुछ ढीली रहने के कारण हम एक-दूसरेसे कदाचित् ही मिल पाते हैं। इसलिए कुछ-एक कामोंको हम चिट्ठी-पत्री द्वारा निबटा लेते हैं।

उक्त विचार[1] मैंने उनके ऐसे ही एक पत्रसे उद्धृत किये हैं। इन विचारोंको मैं बहुत महत्त्व देता हूँ, क्योंकि इस दिशामें जितने-कुछ प्रयोग विनोबाने किये हैं उतने मैंने या मेरे अन्य साथियोंमें से किसी औरने किये हों, ऐसा मुझे याद नहीं पड़ता। तकलीकी गतिमें जो क्रान्तिकारी वृद्धि हुई है उसके मूलमें विनोबाकी प्रेरणा और उनका अपार श्रम है। एक बड़ी संस्थाका संचालन करते हुए भी उन्होंने आठ-आठ, दस-दस घंटे चरखे और तकलीको चलाया है। और शिक्षामें इस उद्योगको उन्होंने शुरूसे ही महत्त्वपूर्ण स्थान दे रखा है। इसलिए जिसे मैं अपनी मौलिक शोध मान रहा हूँ — अर्थात् उद्योग द्वारा स्वावलम्बी शिक्षण — उसके साथ विनोबा स्वभावतः पूर्णतया सहमत हैं, यह मेरे लिए तो निश्चय ही बहुत उत्साहजनक बात है। और जो लोग विनोबाको जानते हैं, इससे उनकी श्रद्धा भी दृढ़ होगी। अथवा जिनमें श्रद्धाका अभाव होगा उनके हृदयमें श्रद्धा जागेगी, इस आशासे उनके मतको मैंने यहाँ उद्धृत किया है।

श्री विनोबाका समर्थन मेरे लिए कोई नयी वस्तु नहीं है। और 'हरिजनबन्धु' के पाठकोंको भी यह कोई नयी-सी बात मालूम नहीं पड़ेगी। लेकिन यदि मुझे उनका समर्थन न मिले तो मैं सोचमें पड़ जाऊँगा। अपने पुरानेसे-पुराने साथियोंको जो बात मैं नहीं समझा सकता उसे जनताको समझाने की हिम्मत बाँधू, यह मेरी मूर्खता ही समझी जायेगी, या मेरे उस प्रयासकी गिनती धृष्टतामें तो होगी ही। मगर श्री मनु सूबेदारका निम्नलिखित पत्र[2] जब मिला, तो उससे मुझे अवश्य आनन्द

१. इसका अनुवाद यहाँ नहीं दिया गया है। विनोबा भावेने गांधीजी के शिक्षा-विषयके नवीनतम विचारोंसे अपनी पूर्ण सहमति व्यक्त करते हुए लिखा था कि उन्हें तो उद्योग और शिक्षाका द्वैत भी स्वीकार नहीं था। वे दोनोंको एक-दूसरेसे सर्वथा अभिन्न मानते थे और इसलिए उन्होंने उद्योग-शिक्षणकी दिशामें प्रयोग भी आरम्भ कर दिया था।

२. इसका अनुवाद यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र-लेखकने आर्थिक आधार पर बुनियादी शिक्षाका अनुमोदन किया था और यह सुझाव दिया था कि हर जिलेमें स्थानीय रूपसे उपलब्ध कच्चे मालका सर्वेक्षण किया जाये, तथा आवश्यक उपकरणोंके साथ कच्चा माल स्कूलोंमें ही लाकर दिया जाये।

और आश्चर्य हुआ। शिक्षा, मद्यनिषेध आदिके सम्बन्धमें मेरे जो विचार हैं उनके विषयमें मेरा उनके साथ पत्र-व्यवहार चल रहा है, जिसके परिणामस्वरूप यह पत्र आया है। इसे देखकर पाठकोंको भी प्रसन्नता होगी। उन्होंने इस पत्रके साथ अंग्रेजीमें कुछ सुझाव भी भेजे थे, जिन्हें मैं 'हरिजन' मे प्रकाशित कर चुका हूँ।[१]

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १०-१०-१९३७

२६५. टिप्पणी

अहमदाबादमें मद्य-निषेध

बम्बई सरकारने १ अप्रैलसे अहमदाबादमें पूर्ण मद्यनिषेधपर अमल करने का शुभ निश्चय किया है। यह उचित ही है। इस सम्बन्धमें जिन क्षेत्रोंमें प्रयोग किया गया है उनमें से अहमदाबाद एक है और वहाँ यह प्रयोग सहज ही सफल होना चाहिए। मद्यनिषेधका उद्देश्य यह है कि लोग शराब पीना बन्द कर दें। यदि लोगोंकी यह आदत दूर नहीं होती और चोरी-छिपे शराब बनती रहे और लोग पीते रहें तो मद्यनिषेध-सम्बन्धी कानून निष्फल हो जायेगा। इसलिए यद्यपि शराबकी दुकानें बन्द हुए बिना लोगोंसे शराब नहीं छुड़वाई जा सकती, लेकिन शराबकी दुकानें बन्द होनेके बाद जबतक शराबसे होनेवाले नुकसानसे लोगोंको अवगत नहीं करवाया जायेगा तबतक दुकानोंको बन्द करने से कोई फायदा नहीं होगा। अहमदाबादमें शराब पीने वालोंमें सबसे बड़ी संख्या मजदूरोंकी है। मजूर-महाजन संस्थाने लोक-शिक्षणका कार्य अपने हाथमें ले लिया है और इस बारेमें उसने प्रस्ताव भी पास किया है। इसके लिए वह बधाईकी पात्र है। यदि सब स्त्रियाँ और पुरुष इस कामको हाथों-हाथ उठा लें तो सफलता अवश्य मिलनी चाहिए। और यदि अहमदाबाद-जैसे केन्द्रमें इस प्रयासमें सफलता मिलती है तो हिन्दुस्तानके अन्य भागोंको प्रोत्साहन मिलेगा और सफलता कैसे प्राप्त की जा सकती है, इसका ज्ञान भी मिलेगा।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १०-१०-१९३७

१. यह *हरिजन*के २-१०-१९३७ के अंकमें "यूजफुल हिन्ट्स ऑन एजुकेशन" (शिक्षाके सम्बन्धमें कुछ उपयोगी सुझाव) शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

२६६. पत्र : श्रीमन्नारायण अग्रवालको

सेगाँव
१० अक्तूबर, १९३७

चि० श्रीमन्,

कल ही सूना कि तुमको चार दिनसे अविच्छिन्न बुखार आ रहा है। यह सब कैसे? क्या शादी की इसलिए? मैंने ऐसे ही मान रक्खा था कि तुम्हें कभी बीमारी हो ही नहीं सकती। यह सब बात कहाँ गई? आशा करता हूँ कि आज ही अच्छी खबर मिलेगी। यह खत तो प्रातःकालकी प्रार्थनाके बाद पाँच बजे लिखवा रहा हूँ। याद रक्खो कि तुम्हारी प्रेरणासे तुम्हारे पर विश्वास रखकर मैंने परिषद[1] भरने दी है और मैंने सभापतित्व स्वीकार किया है।

इतना बड़ा बोझ उठाने की मेरी बिलकुल शक्ति नहीं थी लेकिन तुम्हारे उत्साह से उत्साहित होकर मैंने स्वीकार किया। अब मुझको धोखा नहीं दोगे। निश्चित होकर जल्दी अच्छे हो जाओ। क्या परिषद्के बोझने तो तुम्हें बिमार नहीं कर दिया है? यदि यही कारण है तो 'गीता' माताका आश्रय लेकर अनासक्त और निश्चित बनो। अंतमें जो कुछ होता है वह ईश्वरसे ही।

बापुके आशीर्वाद

पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० २९९-३००

२६७. पत्र : अमृतकौरको[2]

सेगाँव, वर्धा
१० अक्तूबर, १९३७

मेरे पत्रके लिए तुम्हें कलतक प्रतीक्षा करनी होगी।
स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८१७) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९७३ से भी

१. अखिल भारतीय शिक्षा परिषद्।
२. यह अमृतकौरको लिखे मीराबहनके पत्रमें पुनश्चके रूपमें लिखा गया था।

२६८. पत्र : सी० एफ० एण्ड्रयूजको

सेगाँव, वर्धा
१० अक्तूबर, १९३७

प्रिय चार्ली,

तुम्हारे दो पत्र मिले। मेरा यह निश्चित मत है कि होरेस से[1] यह कहना ठीक नहीं है कि वह आलिव को[2] छोड़कर अफीम-निषेधके सिलसिलेमें यहाँ आये। बेशक नशाबन्दी शराब और मादक द्रव्यों दोनोंपर लागू होती है। उन सात प्रान्तों में तो सरकारको इस बातपर राजी करने के लिए समझाने-बुझाने की कोई जरूरत ही नहीं है। मन्त्रियोंको स्वयं ही यह बात मालूम हो जायेगी कि इस विषयमें क्या करना चाहिए। होरेसका इस समय यहाँ की अपेक्षा इंग्लैंडमें रहना अधिक उपयोगी है। आज जरूरत इस बातकी है कि इस आन्दोलनको संसारके श्रेष्ठतम विचारकोंका नैतिक समर्थन प्राप्त हो।

आशा करता हूँ, तुम अपने स्वास्थ्यका ध्यान अवश्य रखते होगे।

सप्रेम,

मोहन

[पुनश्च :]

तुम्हारा लेख[3] छपने जा रहा है।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४२६) से।

२६९. पत्र : अमतुस्सलामको

१० अक्तूबर, १९३७

चि० अ० सलाम,

खत मिला। सब अच्छे हैं। वहां खतम होने तक रहो।[4] आज विजिया अपने घर जाती है। क्या किया जाय। लीलावती आ गई है आराम तो चाहीये। डाह्या-लालको रसोड़ा दिया है। दवा शुरू कर दो।

बापुकी हजारों दुवा

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९३) से।

१ और २. होरेस अलेक्जैंडर और उनकी पत्नी, जो बीमार थीं।

३. यह लेख **हरिजनके** २३-१०-१९३७ के अंकमें "ओपियम टू" (अफीम भी) शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

४. अमतुसलाम अपने भाइयोंके आपसी मतभेदोंको दूर करनेके सिलसिलेमें बम्बईमें थीं।

२७०. पत्र : विजया एन० पटेलको

१० अक्तूबर, १९३७

चि० विजया,

मैं तेरे आँसू नहीं देख सकता था। माता-पिताका आशीर्वाद लेकर जल्दी आना। रास्तेमें सँभलकर जाना। मुझे बराबर पत्र लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७०७३) से। सी० डब्ल्यू० ४५६५ से भी; सौजन्य : विजयाबहन एम० पंचोली

२७१. तार : अमतुस्सलामको

वर्धागंज
११ अक्तूबर, १९३७

अमतुल सलाम
मार्फत यूरोट्रेड
बम्बई

तुम्हें आपरेशनके लिए वहाँ ठहरनेकी जरूरत नहीं है, लेकिन यदि जरूरी हो तो भाइयोंके लिए रह सकती हो। प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०६) से।

२७२. पत्र : अमृतकौरको

दुबारा नहीं पढ़ा

सेगाँव
११ अक्तूबर, १९३७

प्रिय विद्रोहिणी,

तुम्हारे मीठे उपालम्भके बावजूद सप्ताहके दूसरे दिनोंमें तुम्हें पत्र लिखने में मैं असमर्थ रहा हूँ। मुझे दायें हाथसे लिखना नहीं चाहिए और बायाँ बड़ी मुश्किलसे धीमेधीमे चलता है। मेरे पास बाये हाथसे लिखने का अभ्यास करने का भी समय नहीं है, और मैं प्रत्येक मिनटका सदुपयोग करना चाहता हूँ। जब तुम्हारा आग्रह यह है कि मैं तुम्हारा पत्र पढ़ते ही फौरन फाड़ डालूँ तब तुम्हें मुझसे यह आशा भी नहीं रखनी चाहिए कि मैं पूरे सात दिनोंतक तुम्हारे प्रश्नोंको याद रखूँ और रविवारको उनका उत्तर दूँ।

कहने की जरूरत नहीं कि तुमने भूलाभाईके[1] विषयमें जो लिखा उसपर मेरा ठीक ध्यान गया। इतना ही नहीं, मैंने उसके बारेमें उन्हें लिखा भी है, हालाँकि मुझे यह जानकारी कहाँसे मिली सो नहीं बताया है। अभी तक उनका उत्तर नहीं आया है। वैसे अबतक तो आ जाना चाहिए था। यह बात मैंने पहले भी सुनी थी, लेकिन मैं केवल अफवाहके आधारपर कोई कदम नहीं उठा सकता था। तुम्हारी सूचना तो पक्की सूचना थी।

मुझे खुशी है कि नबीबख्श वापस आ गया है। उसे मेरा प्यार कहना। जब यहाँ आओ तो उसे अवश्य लाना।

तुम्हारा चेक दिल्ली भेज दिया है। तुम्हें वहाँसे बाकायदा रसीद मिल जानी चाहिए। साधारण हिसाब लिखने में कोई भूल न होनेसे ही तो कोई मुनीम नहीं बन जाता। निरक्षर नबीबख्श भी अपने हरएक खर्चका ठीक-ठीक हिसाब देता है। तुम चाहो तो इस बातसे खुश हो सकती हो कि आय-व्ययका सामयिक हिसाब-किताब रखने में तुम भी उतनी ही अच्छी हो जितना कि वह। वाह री निष्ठावान् मुनीमजी ! ! !

यह तो एक रहस्य है कि सर जे०का पत्र[2] तुम्हारे लिफाफेमें क्यों नहीं मिला। मीरा ढूँढ़ रही है। याद रखो, न तो वह किरानी है और न मूर्खा है। मूर्खोंको चीजोंकी बहुत याद रहती हैं। मीरा पर्वतों और मेघोंका चित्रांकन कर सकती है, इसीलिए चीजोंको यथास्थान रखने-जैसी छोटी-मोटी बातोंका वह ध्यान नहीं रखती। लेकिन

१. भूलाभाई देसाई।
२. देखिए पृ० २२१-२२ और २५२।

ऐसा कहने से तुम्हारा और मेरा कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होता। मुझे बड़ी उत्कंठा थी कि तुम वह श्रेष्ठ पत्र देख पातीं। वे इस दिशामें बड़ी लगनसे काम कर रहे हैं। आशा है, वह पत्र मिल जायेगा।

साथके कागजपर हिन्दीमें 'बापू' हस्ताक्षर करके वापस भेजता हूँ। ठीक है ना?

विजयाके माता-पिता उसको घर बुलाना चाहते थे, इसलिए भेजना पड़ा। वह तो बहुत खिन्न थी और उसके आँसू रोके नहीं रुक रहे थे।[1] मुझे उसकी याद आती रहती है, क्योंकि वह बड़े कामकी लड़की थी, हमेशा खुशीसे काम करने को तत्पर रहती थी। वह वापस आना चाहती है।

अमतुस्सलाम अब भी बम्बईमें है और भाइयोंके आपसी मतभेदको दूर करने में मदद दे रही है। वह किसी भी दिन वापस आ सकती है। लीलावती काममें लगभग पूरी तरह जुट गई है। प्यारेलालकी बहन बुखार लिये शनिवारको पहुँची। इसलिए वह मगनवाड़ीमें है, जहाँ प्यारेलाल उसकी देखभाल कर रहा है। श्रीमन् तंद्रिक ज्वरमें पड़ गया है। मालूम नहीं, परिषद्का अब क्या होगा। शायद स्थगित कर देनी पड़े। वह तो एक विरल रत्न है।

२५ तारीखको कलकत्ताके लिए निकलूँगा; वहाँका पता होगा मार्फत कांग्रेस। आशा है, ज्यादासे-ज्यादा २ नवम्बर तक वापस आ जाऊँगा और खान साहबके बुलावेकी प्रतीक्षा करूँगा। वे चाहते हैं कि मैं नवम्बरके पहले हफ्तेमें उनके पास पहुँच जाऊँ।

स्नेह।

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८१८) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६९७४ से भी

२७३. पत्र : सीता गांधीको

सेगाँव, वर्धा
११ अक्तूबर, १९३७

चि० सीता,[2]

तेरी लिखावट तो बहुत सुन्दर है।

गुजराती भी ऐसी ही सुन्दर लिखना। दोनों भाषाओंमें लिखना। किसी दिन तो तू हमें अपना चेहरा दिखायेगी न? तू यहाँ रहती तो कानमको साथ मिलता और मैं तुझे नये तरीकेसे सिखाता। क्या तू नया तरीका जानती है? सुशीलासे पूछना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८६८) से।

१. देखिए "पत्र : विजया एन० पटेलको," पृ० २४५।
२. मणिलाल गांधी की पुत्री।

२७४. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

११ अक्तूबर, १९३७

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम्हारे पत्र बराबर आते हैं और वर्णनात्मक होते हैं। मुझे कोई शिकायत नही है। तुम शिकायत कर सकते हो। मैं काममें इतना व्यस्त रहता हूँ कि पिछली डाक पड़ी रह गई। आज निपटाये दे रहा हूँ। रामदासको मै अलगसे जोहानिसबर्ग लिख रहा हूँ। वह तुम्हारे साथ नहीं रह सका, यह दु:खकी बात तो है। लेकिन कैलेनबैकने[1] तो रामदासका ही विचार किया था। उनका व्यवहार फौजी [अनुशासन] जैसा तो है ही। इसका हमे दु:ख नही मानना चाहिए। एजेन्टके बारेमें तुमने जो कहा है सो मैं समझता हूँ। हमें तो ऐसी बहुत-सी बातें सहन करनी पड़ती हैं और यदि इन सबसे हम अलिप्त रह सकें तो समझना कि हमने धर्मका पालन किया है और हमने इस दुनियामें जीनेकी कला सीख ली है। जो कड़वे-मीठे अनुभव तुम्हें वहाँ होते रहते हैं, वैसे ही अनुभव हम सबको यहाँ होते हैं। इसीमें संसारकी विचित्रता है। यदि रोज फूलोंकी शय्या हो तो उसकी कद्र कौन करे? इसीसे मनसा, वाचा, कर्मणा धर्मकी भारी आवश्यकता महसूस होती है। यदि तुम दोनों अथवा दोनोंमें से कोई भी आ सके तो आना। आना सम्भव न हो तो कोई हर्ज नहीं। वहाँके कामको खतरेमें डालकर न आना। सीताको लिखा पत्र[2] इसके साथ है। और अधिक समाचार देने-जितना समय मेरे पास नहीं है। समय मिला तो पूरी एक जिल्द लिखकर भेज दूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८०९) से।

१. जर्मन वास्तुकार हरमन कैलेनबैक, जो दक्षिण आफ्रिकामें गांधीजी के सहयोगी बन गये थे।
२. देखिए पिछला शीर्षक।

२७५. पत्र : महादेव देसाईको

११ अक्तूबर, १९३७

चि० महादेव,

'हरिजन'की सामग्री तैयार की जा रही है। उम्मीद है, तुम श्रीमन्के पास जाते रहते होगे। सुशीलाके बारेमें चिन्ता होती है। सुनता हूँ कि अभी बुखार नहीं गया। इससे तुम्हारा काम भी खूब बढ़ गया है और २२ तथा २५ तारीख नजदीक आती जा रही है। तुम स्वयं अपनी सामर्थ्यसे बाहर जाकर काम न करना। शान्ता पर अंकुश रखना। यदि वह अपनी तबीयत बिगाड़ बैठी तो बहुत मुश्किल होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५७७) से।

२७६. पत्र : महादेव देसाईको

११ अक्तूबर, १९३७

चि० महादेव,

टीकाके उत्तरमें लिखे गये अंशको[1] मैं फिरसे पढ़ नहीं पाया हूँ। मीरा भी देख नहीं सकी है। तुम अच्छी तरहसे देख जाना। मैं यहाँ जानबाको नहीं रोकूँगा।

राजकुमारीको लिखे एक पत्रके साथ मैंने सर जोगेन्द्रका पत्र भी भेजा था। वह उसे नहीं मिला। मीरा डालना भूल गई, या वहीं रह गया? इसकी जाँच करना।

श्रीमन्के पास मुझे अवश्य ले जाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५७६) से।

१. देखिए पृ० २६४-६७।

२७७. पत्र : प्रभावतीको

११ अक्तूबर, १९३७

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। तू रहने के लिए आ सकती है। डाक अभी-अभी जानेवाली है? चिन्ता किस बातकी? मैं २५ तारीखको कलकत्ता जाऊँगा। उम्मीद है, पहली तारीखको वापस आ जाऊँगा।

जल्दी आना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५०७) से।

२७८. पत्र : जमनालाल बजाजको

सेगाँव, वर्धा
१२ अक्तूबर, १९३७

चि० जमनालालजी,

तुम्हारा पत्र मिला।

बहादुरजी आ सकते हैं।

श्रीमन्‌के बुखारके बारेमें मालूम हुआ। उसका बुखार खराब है। हठीला मालूम होता है। आज उसे देख आने की आशा रखता हूँ। यह पत्र मैं सुबह प्रार्थनाके बाद लिखवा रहा हूँ। श्रीमन्‌की बीमारीके कारण महादेव और किशोरलालने शिक्षा-परिषद्‌को स्थगित करने का सुझाव दिया है। वह मेरे गले नहीं उतरा। सौ लोगोंकी व्यवस्था करने की जिम्मेदारी तुम्हारे ऊपर नहीं होनी चाहिए। पैसे तुम्हारे होंगे, यह मैं मान लेता हूँ। इसकी मुझे चिन्ता भी नहीं। परन्तु मैं यह मानता हूँ कि यदि काम-काजका बोझ तुम्हारी सहायताके बिना दूसरे लोग न उठा सकें तो ऐसे काम करने ही नहीं चाहिए। और इतनी शक्ति दूसरोंमें भी आ जाये, तभी हमारे काम शोभान्वित होंगे। इसी कारण मैंने आर्यनायकम्‌को कहलवाया है कि उसकी अपनी श्रद्धा और लगन हो तभी परिषद् होने दे, अन्यथा भले स्थगित कर दी जाये। परिषद्‌की कल्पना ही श्रीमन्‌की थी और श्रीमन्‌के ऊपर ही मैं निर्भर था। और जबतक वह तन्दुरुस्त था तबतक मैं निश्चिन्त था। उसके बारेमें मैंने मान लिया था कि वह कभी बीमार नहीं पड़ेगा। इसलिए जब उसकी बीमारी के बारेमें सुना तब मैं व्याकुल हो गया। तुम्हारी श्रीमन्-

ो खोजको मैंने अत्यन्त आश्चर्यजनक माना है। उसमें विद्वत्ता, प्रौढ़ता और नम्रताका ासाधारण मिश्रण है। उसकी गैरहाजिरीमें परिषद् मुझे अटपटी लगेगी। परन्तु हाथमें लये कामको अधूरा नहीं छोड़ना चाहिए, इस सिद्धान्तको मानते हुए मैंने परिषद् रने का आग्रह रखा है, बशर्ते कि [आर्य]नायकम् की श्रद्धा कम न हो और तुम्हारी ोरसे परिषद्के आयोजनका कोई विरोध न हो। मैं समझता हूँ कि यदि तुम विरोध रते हो तो वह उचित होगा; क्योंकि मुझे तुम्हारी व्यवहार-बुद्धिमें श्रद्धा है। तुम्हारे बेना, तुम्हारे बँगलेके बिना परिषद्का काम सांगोपांग हो सकेगा या नहीं, इसकी री जानकारी तो तुम्हींको होगी। इसलिए अगर तुम चाहते हो कि परिषद् स्थगित ी जानी चाहिए तो मुझे तुरन्त तारसे खबर देना; मैं परिषद् स्थगित कर दूँगा।

उम्मीद है, तुम्हारी तबीयत ठीक होगी। सावित्रीका काम ठीक चल रहा होगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० १९०-९१

२७९. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

१२ अक्तूबर, १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं कलकत्ता आने की कोशिश कर रहा हूँ; २५ तारीखको यहाँसे निकलूँगा। तब तुम मुझे कांग्रेसी प्रान्तोंमें मन्त्रि-मण्डलोंके कार्य-कलापके बारेमें सब-कुछ बताना। मैं तो आशा करता हूँ कि गलेकी खराबी और जुकामने तुम्हें ज्यादा दिन परेशान नहीं किया होगा और तुम्हें पंजाबमें जो श्रम पड़ा होगा उसे तुम मजेमें झेल गये होगे। सीमा-प्रान्तकी आबोहवा तो खूब सुखद रही होगी। मेरी कितनी इच्छा है कि तुम कमसे-कम कुछ समय तो शान्तिसे बिताओ?

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३७; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२८०. पत्र : अमृतकौरको

१२ अक्तूबर, १९३७

प्रिय विद्रोहिणी,

यदि हिन्दू लोग देवनागरी लिपि और (फारसी शब्दोंकी बहुलतासे युक्त उर्दूसे भिन्न) हिन्दीके ज्ञानपर जोर देते हैं तो इसमें कोई हर्ज नहीं है। फिर भी यदि तुम परिषद्की समाप्ति तक इस सिलसिलेमें कोई सक्रिय कार्य न करो तो बुद्धिमत्ता होगी। यह सब अनुभवकी बात है और आसपासके वातावरण तथा स्थानीय परिस्थितियोंके ज्ञानके बिना कोई सलाह देना कठिन है। यदि किसी ऐसे नाजुक प्रश्नका निर्णय करना हो जिसके लिए वातावरण और परिस्थितियोंका ज्ञान नितान्त आवश्यक हो तो मैं इनका प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करना पसन्द करता हूँ। आशा है, इससे तुम्हें कुछ मार्ग-दर्शन मिलेगा। चाहे जो हो, मेरे लिए इतना तो स्पष्ट है कि प्रत्येक पंजाबीको यह समझना चाहिए कि पंजाबी और उर्दू दोनों उसकी भाषाएँ हैं, लेकिन एक हिन्दू-को, चाहे वह कहीं भी हो, देवनागरी लिपिके माध्यमसे ही हिन्दीका ज्ञान प्राप्त करना चाहिए जिससे कि वह सर्वोत्तम श्रेणीका भक्ति-साहित्य पढ़ सके। ऐसा साहित्य अन्य किसी प्रान्तीय भाषामें उपलब्ध नहीं है।

इस सम्बन्धमें हिन्दी प्रचारिणी सभाका दृष्टिकोण क्या है, सो मैं नहीं जानता। हो सकता है, वह मेरे दृष्टिकोणसे बिलकुल भिन्न हो। यदि ऐसा हो तो प्रचार-कार्यके औचित्यसे सम्बन्धित निर्णय, जैसा मैंने बताया, उससे कुछ भिन्न होगा।

तुम्हें सरदार जोगेन्द्रसिंहका पत्र कहाँसे मिल गया? क्योंकि तुमने अपने कलके पत्रमें लिखा था कि वह तुम्हें नहीं मिला है।

यह पत्र मैं आज मौन तोड़नेके बाद लिखवा रहा हूँ। हालाँकि मैं अपनी पूरी गतिसे काम कर रहा हूँ, फिर भी मैं थकावट महसूस नहीं करता। थकावट तो मुझे बातोंसे होती है। दायें हाथमें सिर्फ इतनी शक्ति बची है कि मैं सोमवारका काम ही निपटा सकता हूँ। मेरी बड़ी इच्छा होती है कि मैं प्रतिदिन बायें हाथसे लिखनेका अभ्यास करनेके लिए कुछ समय निकालूँ, लेकिन दैनिक पत्रोंपर हस्ताक्षर करनेके अलावा मुझे और समय नहीं मिल पाता।

स्नेह।

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६१८) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६४२७ से भी

२८१. पत्र : अमृतकौरको

१३ अक्तूबर, १९३७

प्रिय विद्रोहिणी,

कल रात मैंने तुम्हें एक लम्बा पत्र बोलकर लिखवाया। अब सवेरेके सवा चार बजे हैं और मैं यह पत्र खुर्शेदसे शुरू करता हूँ। उसके और तुम्हारे पत्रोंको पढ़ते ही मैंने फाड़ डाला। उसका मामला बड़ा दुःखद है। उसने मुझे दूसरे ही ढंगसे पत्र लिखा है, मानों वह मनुष्योंकी बस्तीसे दूर निर्जनमें जाना चाहती हो। मैंने उसे एक नरम-सा उत्तर दिया है।[1] वह मुझे ऐसे ढंगसे पत्र लिखती है जैसे कि मैं कोई अपरिचित हूँ, लेकिन मैं तो उसको लिखे पत्रमें हस्ताक्षर 'बापू'के रूपमें ही करता हूँ और उससे कहता हूँ कि चाहे वह मुझे छोड़ दे, मैं उसे नही छोड़ूँगा।

गोविन्ददास मेरे साथ एक घंटा रहा।[2] उसकी अपने मुँहसे कही हुई बातें ही उसके विपरीत बैठती हैं। मैंने उससे कहा कि उसके विरुद्ध मेरे पास जो शिकायतें आई हैं वे कहाँतक सच हैं, इसके बारेमें वह जाँच-पड़ताल करे। किन्तु उसके सम्बन्धमें मेरी प्रतिकूल धारणाओंका कोई असर तुम्हारे अनुकूल विचारोंपर नहीं होना चाहिए। यदि याद दिलाओगी तो मिलने पर और चर्चा करूँगा।

आशा है, तुम्हारा जुकाम बहुत पहले ठीक हो गया होगा। जिस समय तुम सर्दीसे ठिठुर रही हो उस समय बैठे रहने की आवश्यकता ही क्या है? तुम्हें हम ग्रामीणोंकी तरह पालथी मारकर और ओढ़-लपेटकर बैठने में संकोच नहीं करना चाहिए। और जब ठंड लगे तब लम्बे-लम्बे श्वास लो।

मुझे फिलस्तीनके स्कूलोंके बारेमें मालूम है। इस विषयपर कै[लेनबैक] बहुत साहित्य छोड़ गये थे।

स्नेह।

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८२०)से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६९७६ से भी

१. देखिए पृ० २३२।

२. देखिए पृ० २३१ की पाद-टिप्पणी १।

२८२. पत्र : अमृतकौरको[1]

१३ अक्तूबर, १९३७

शिक्षा-सम्बन्धी तुम्हारे विचार बिलकुल ठीक हैं। किन्तु तुम मेरी योजनाको अच्छी तरह समझ नहीं पाई हो। मैंने कल[2] सुबह चार बजे एक पत्र शुरू किया था, जो अब भी अधूरा पड़ा है।

बापूका प्यार

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८१९) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९७५ से भी

२८३. पत्र : जानकीदेवी बजाजको

१३ अक्तूबर, १९३७

चि० जानकीबहन,

मुझे आचार्य रामदेवका एक पत्र मिला है, जिसमें लिखा है कि तुम्हें देहरादून जाना अवश्य स्वीकार कर लेना चाहिए। तारीख मेरे पास नहीं है। श्रीमन् तो अच्छा हो ही जायेगा। अगर न जा सको तो उन्हें तार दे देना। जा सको तो अच्छा ही है। पतिदेवसे पूछने की जरूरत है क्या?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९८९) से।

१. यह अमृतकौरको लिखे मीराबहनके पत्रमें पुनश्चके रूपमें लिखा गया था।
२. लगता है यह चूक है। यहाँ जिस पत्रका उल्लेख है वह सम्भवतः पिछला पत्र है।

२८४. पत्र : प्रभाशंकर पट्टणीको

१३ अक्तूबर, १९३७

सुज्ञ भाईश्री,

बोटादके राजकीय दवाखानेमें हरिजनोंको दवा देनेके लिए जो डाक्टर और कम्पाउण्डर आदि आते हैं, जान पड़ता है कि वे अस्पृश्यतामें विश्वास रखते हैं। और यदि उनका स्पर्श करके कोई उपचार करना हो तो या तो उनका उपचार होता ही नहीं और यदि होता भी है तो बहुत संकोचके साथ होता है। उदाहरणके तौरपर, यदि किसीके कानसे पीप बहती हो और उसे पिचकारीसे साफ करने की जरूरत हो तो वैसा न करके उसके आगे थोड़ी-सी रुई फेंक दी जाती है और उससे कहा जाता है, 'जाओ, इससे कान साफ कर लो।' इस तरह उसे वहाँसे भेज दिया जाता है। इस सम्बन्धमें मुझे बहुत-से पत्र मिले हैं और वे विश्वास करने लायक हैं, ऐसा मुझे लगा है। यह बात तो मैं भी मानता हूँ कि जहाँ अधिकांश सरकारी नौकर अस्पृश्यताके मलसे लिप्त हों वहाँ सरकार भी क्या कर सकती है? तथापि यदि इस बारेमें राज्यकी ओरसे स्पष्ट रूपसे और समय-समयपर अस्पृश्यताके विरोध-में कुछ कहा जाये, उसपर अमल किया जाये तथा एक-दो कर्मचारियोंको अस्पृश्यता बरतने पर दण्ड दिया जाये तो थोड़ा-बहुत सुधार अवश्य होगा। दवाखानोंमें इस तरह भेदभाव करना असम्भव माना जाना चाहिए। इस समय तो मैं 'हरिजनबन्धु' अथवा 'हरिजन'में इस बारेमें कोई टिप्पणी नहीं लिखना चाहता।

मेरा विश्वास है कि आप आगामी शिक्षा परिषद्में आयेंगे अथवा ऐसे किसी व्यक्तिको भेजेंगे जिसे इसमें दिलचस्पी हो।[1]

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९५५)से। सी० डब्ल्यू० ३२७२ से भी; सौजन्य : महेश पट्टणी

१. इसके बाद पुनश्चके रूपमें महादेव देसाईने आभार व्यक्त करते हुए लिखा है कि आपका (प्रभाशंकर पट्टणीका) मद्यनिषेध-सम्बन्धी पत्र मिल गया है।

२८५. पत्र : डॉ० एम० जयसूर्य नायडूको

सेगाँव, वर्धा
१४ अक्तूबर, १९३७

प्रिय विपथगामी — किन्तु ईमानदार शिष्य,

मुझे मालूम था कि तुम्हें अपनेको सिर्फ जयसूर्य कहलाना अच्छा लगता था, लेकिन महादेवने मुझसे पूछा कि भला बताइए तो कि पत्र-लेखक कौन हो सकता है। वह मुझे छकाने की कोशिश कर रहा था। वह जानता है कि बढ़ती हुई उम्रके साथ मेरी स्मृति कमजोर पड़ती जा रही है, इसीलिए उसने मुझे यह बताने की चुनौती दी कि लेखक कौन है। अन्तिम वाक्य पढ़ा तब याद आया और तब मनमें सोचा कि तुम जयसूर्य कबसे बन गये हो। अब मुझे लगा कि धीरे-धीरे मुझे सब-कुछ याद आ रहा है, और मनमें कहा कि तुम नाइट्सब्रिजमें अपनेको जोशीले नौजवान बतानेवालों के शिष्टमण्डलमें मुझसे मिलने आये थे तब तुमने अपना नाम जयसूर्य लिखकर मेरे पास भेजा था। लेकिन उस अवसरपर तो माताजी[1] ने मुझे दाढ़ी रखनेवाले और अद्भुत आत्मविश्वासी युवकके रूपमें तुम्हारी पहचान पहले ही बता दी थी।

तुम्हारे पत्रसे प्रकट होता है कि बाहरी तौरपर तुम अब भी वैसेके-वैसे ही हो, लेकिन पुराने लोगोंके प्रति अपने उपेक्षा-भावके बावजूद मन-ही-मन तुम उनका सम्मान करते हो, और यह जानते हो कि जिस तरह तुम बचपनके अत्यन्त मूर्खतापूर्ण दौरसे गुजरे बिना आजकी स्थितिमें नहीं पहुँच सकते थे उसी प्रकार हम पुराने लोगोंके योगदानके बिना भी तुम इस हदतक विकास नहीं कर पाते। इसलिए यद्यपि मुझसे तुम्हारा बहुत मतभेद है और इस मतभेदको तुम अपने लिए गर्वकी बात मानते हो, तथापि मैं तुम्हारी तैयार की गई इस रूपरेखाकी उपेक्षा नहीं करने जा रहा हूँ। लेकिन मैं इसे बहुत ध्यानसे पढ़कर ही इसपर अपनी राय दूँगा। तुम्हें जरा धीरजसे काम लेना होगा।

फिलहाल तो इस पत्रके साथ स्वयं तुम्हारे और तुम्हारे परिवारके लिए तुम लोग जितना चाहो या जितनेकी तुम्हें जरूरत हो उतनी सारी शुभकामनाएँ भेज रहा हूँ। श्वेतकेशी भारत कोकिला-सहित पूरे परिवारको ढेर-सा स्नेह।

१. सरोजिनी नायडू।

प्यारेलाल मेरे साथ है — जिस अपरिवर्तित रूपमें तुमने उसे आश्रममें देखा था उसी रूपमें।

पुराना शिक्षक

डॉ० एम० जयसूर्य, एम० डी०
गोपाल क्लिनिक
स्टेशन रोड
हैदराबाद (दक्षिण)

अंग्रेजीकी नकलसे। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

२८६. पत्र : अमृतकौरको[1]

१४ अक्तूबर, १९३७

मेरी चिन्ता मत करो। भगवान् सबसे बड़ा वैद्य है। वही मुझे राह दिखाता है। यदि वह घातक औषध देता है तो भी अच्छा ही है। तुमने बिक्री अच्छी की।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८२१) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९७७ से भी

२८७. टिप्पणी : नरीमान-सरदार विवादपर

[१४ अक्तूबर, १९३७][2]

नरीमान-सरदारके मामलेमें श्री बहादुरजी अपना फैसला[3] लेकर मेरे पास आये हैं, जो साथमें नत्थी है। बहुत सोच-विचार करने के बाद जब मैंने उस काममें उनका सहयोग माँगा, जिसे मैंने लोकहितको देखते हुए अपने हाथमें लिया है, तो वे तुरन्त मान गये।

१. यह अमृतकौरको लिखे मीराबहनके पत्रमें पुनश्चके रूपमें लिखा गया था।

२. यह टिप्पणी १६ अक्तूबरसे पहलेवाले बृहस्पतिवारको लिखी गई थी, जब डी० एन० बहादुरजी सेगाँवमें थे। वह बृहस्पतिवार १४ तारीखको पड़ा था; देखिए पृ० २७५-६।

३. इस फैसलेके अनुसार "के० एफ० नरीमानके विरुद्ध १९३४ में हुए चुनावोंके सिलसिलेमें लगाये गये अभियोग सिद्ध हो गये थे और के० एफ० नरीमान द्वारा वल्लभभाईके खिलाफ लगाये गये अभियोग सिद्ध नहीं हुए थे।"

उन्हें सम्भवतः इस बातका पूरा-पूरा अन्दाज नहीं था कि इस कार्यको करने में कितना श्रम करना पड़ेगा। मैं नहीं जानता कि उनके अमूल्य सहयोगके बिना मेरा क्या हाल होता। हम दोनोंने उनके फैसलेको साथ-साथ पढ़ा और मैंने उसमें जो परिवर्तन सुझाये — जो कि बहुत थोड़े थे — उनको उन्होंने तुरन्त स्वीकार कर लिया। यह फैसला उनका निजी फैसला है और इसके सम्बन्धमें उन्होंने मुझसे कोई सलाह-मशविरा नहीं किया है। लेकिन उन्होंने जो तर्क दिये हैं और जो फैसला दिया है उससे मैं पूर्णतया सहमत हूँ।

लोग देखेंगे कि यह फैसला विशुद्ध रूपसे न्यायिक है। दोनों पक्षोंको साक्षीके बयान और कागजात देखने की पूरी-पूरी सुविधा दी गई थी, उनकी नकल लेने की और गवाहोंसे बहस और जिरह करने की स्वतन्त्रता प्राप्त थी। लेकिन वे लोग कोई जाँच अथवा जिरह नहीं करना चाहते थे और इसकी कोई आवश्यकता भी नहीं थी। हालाँकि ८० गवाह थे और गवाहियाँ भी बहुत ज्यादा थीं, लेकिन साक्ष्यका अधिकांश भाग प्रस्तुत समस्याके सन्दर्भमें असंबद्ध था। श्री नरीमानको ज्यादासे-ज्यादा सुविधा दी गई थी, ताकि अगर उनके पास कोई प्रमाण हो तो उसे वे मेरे सामने पेश कर सकें। उन्होंने गवाहोंके रूपमें जिन लोगोंके नाम मुझे भेजे थे उन्हें मैंने स्वयं पत्र लिखे। मैंने प्रमाणके लिए जो सार्वजनिक अपील की थी उसके उत्तरमें अधिकांश कांग्रेसी विधायकोंने अपने बयान भेजे हैं।[1]

यदि इस सम्बन्धमें मेरा कुछ और कर्त्तव्य न होता तो मेरे लिए कहने को कुछ नहीं रह जाता। लेकिन मुझे जो प्रमाण भेजे गये हैं उनसे ऐसी बातें प्रकाशमें आई हैं जिनकी मुझे चर्चा करनी ही होगी। श्री नरीमानने मुझे अखबारोंकी कतरनें भेजी हैं। उन्हें पढ़कर मुझे दुःख हुआ। इस बातका कहीं कोई प्रमाण नहीं मिलता कि सरदारका कार्य किसी प्रकारके साम्प्रदायिक द्वेषसे प्रेरित था। जिन अखबारोंने ऐसा मत व्यक्त किया है कि श्री नरीमानको साम्प्रदायिक द्वेषवश अस्वीकार किया गया था, उन्होंने बम्बईके सार्वजनिक जीवनका बहुत अनिष्ट किया है। और मुझे खुशी है कि स्वयं श्री नरीमानने ऐसे किसी निष्कर्षको मानने से इनकार कर दिया है।

वास्तवमें सरदारके विरुद्ध नरीमानकी शिकायतें कुल मिलाकर निम्न प्रकार प्रतीत होती हैं: सरदारने नरीमानको ३ मार्चको बताया था कि वे उनके पक्षका समर्थन नहीं करेंगे और उन्होंने समर्थन किया भी नहीं। और यह स्पष्ट है कि जब सरदार-जैसा प्रभावशाली व्यक्ति निष्क्रिय रहे, तो उनके इस रुखका असर नरीमानके हकके खिलाफ पड़ना लाजिमी था। लेकिन इसके लिए सरदारको दोषी नहीं ठहराया जा सकता। मुझे ऐसा लगता है कि श्री नरीमान भूल गये थे कि बम्बई शहर बम्बई प्रेसिडेन्सी नहीं है। और यदि उन्हें सचमुच महाराष्ट्र और कर्नाटकका समर्थन प्राप्त होता तो सरदारकी निष्क्रियताका कोई असर नहीं होता। बेशक, विधायक लोग चाहें तो अब भी श्री खेरसे[2] त्यागपत्र देने के लिए कह सकते हैं और

१. देखिए पृ० ६२-३।
२. बी० जी० खेर।

उनके स्थानपर श्री नरीमानको चुन सकते हैं। यह कहना कि सरदारका प्रभाव इतना जबरदस्त है कि ऐसा परिवर्तन करना सम्भव नहीं होगा, विचारहीनता है। कोई व्यक्ति चाहे कितना ही शक्तिशाली क्यों न हो, लेकिन ९० व्यक्ति बहुत समय तक उससे आतंकित नहीं रह सकते।

मैंने स्थितिका जो विश्लेषण किया है वह यह है कि श्री नरीमानने विधायकों-के ऊपर अपने प्रभावको जरूरतसे ज्यादा आँका था और उन्हें अपनी असफलता पर बहुत गहरी निराशा हुई। उनका विवेक कुंठित हो गया। उन्होंने मेरे सामने जो बयान दिये हैं उनसे भी यही बात प्रमाणित होती है। उनके सलाहकारोंने और अख-बारोंने उनके भ्रमको बनाये रखा। मुझे यह सब लिखते हुए कोई खुशी नहीं हो रही है। लेकिन मैं इसलिए लिख रहा हूँ कि मैं श्री नरीमानका मित्र और शुभ-चिन्तक रहा हूँ और कांग्रेस मन्त्रिमण्डलमें उनके सम्मिलित किये जाने के लिए मैं कुछ हदतक जिम्मेदार था। अतः यदि मेरे जैसा व्यक्ति अपने हृदयकी व्यथा खोल-कर रख दे तो शायद श्री नरीमानकी आँखें खुल जायें।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ३-११-१९३७

२८८. पत्र : एम० विश्वेश्वरय्याको[1]

सेगाँव, वर्धा
१५ अक्तूबर, १९३७

प्रिय सर एम० विश्वेश्वरय्या,

आपकी पुस्तकके लिए धन्यवाद। मैं उसे अपने सामने ही रखे हुए हूँ और अवसर पाते ही उसे पढ़ डालूँगा। यदि मैं आपसे सहमत हो सकूँ तो मेरे लिए इससे बढ़कर प्रसन्नताकी बात और क्या होगी?

उड़ीसाकी बाढ़-समस्याके समाधानका काम हाथमें लेने के लिए धन्यवाद। बेशक इसमें आपको जितना समय लगे उतना समय लीजिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९८३७)से। सौजन्य : मैसूर सरकार

१. यह पत्र १९६९-७० में दिल्लीमें हुई गांधी-दर्शन प्रदर्शनीके मैसूर पण्डालमें प्रदर्शित किया गया था।

२८९. पत्र : नारायण भास्कर खरेको

१५ अक्तूबर, १९३७

प्रिय डॉ० खरे[1],

मेरे विचारमें प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी द्वारा जनरल आवारीको चेतावनी दी जानी चाहिए और यदि वे फिर भी न मानें तो निस्सन्देह उनके विरुद्ध कानूनी कार्रवाई की जानी चाहिए। लेकिन यदि स्वयं आपके मनमें ही कुछ शंका हो तो मेरे कथन को अधिकृत न माना जाये। इस सिलसिलेमें एकमात्र अधिकरण तो कार्य-समिति या अध्यक्ष है।

आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
हितवाद, २-४-१९३९

२९०. पत्र : जगन्नाथ दासको

१५ अक्तूबर, १९३७

प्रिय जगन्नाथ दास,

काकासाहबने मुझे आपका १५ सितम्बरका पत्र भेजा है। मेरे पास वह १२ अक्तूबरको आ पाया। इसे पढ़कर दुःख हुआ। आपको इस बातका कभी कोई आश्वासन नहीं दिया गया था कि उत्तरसे[2] और भी धन प्राप्त होगा। तथापि ५,००० (पाँच हजार) रुपये आपके नाम भेज दिये गये हैं। राघवनसे इस कार्यके लिए पैसा जुटाने की अपेक्षा कभी नहीं की गई; वे तो सिर्फ व्यवस्थाकी देखरेख करनेवाले थे। मगर मैं इस बातको ठीक नहीं मानता कि इस कारण वे किश्तीको मँझधारमें छोड़ सकते हैं। वे शिकायत कर सकते हैं, असन्तोष व्यक्त कर सकते हैं, आप तथा सहयोगियों पर जिम्मेदारी डाल सकते हैं और आपसे साधन जुटाने के लिए कह सकते हैं। आप चाहें तो, बेशक, मुझे तंग कर सकते हैं, जमनालालजी और राजाजीको परेशान कर सकते हैं। चूँकि उन्होंने अपने ऊपर एक बहुत बड़ी जिम्मेदारी ले ली है, इस कारण

१. मध्य प्रान्तके तत्कालीन मुख्य मन्त्री।

२. दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभाके कार्यके लिए; देखिए पृ० ७८।

ा अपने पुराने दायित्वोंको पूरा करने के अपने कर्त्तव्यसे पीछे नहीं हट सकते। केवल ्क जुआरी ही वर्त्तमान दायित्वको पूरा किये बिना और इस बातपर विचार किये बेना कि वह पुराने दायित्वोंको कैसे पूरा करेगा नये दायित्वोंको अपने ऊपर ले ाकता है। सर आर० सी० ऐसे व्यक्ति नही हैं। यदि हम यह सोचते हैं कि पुराने ामसे बचने की खातिर वे नये कामका बहाना बनायेंगे तो हम उनके साथ अन्याय रेंगे। उनसे मिलने के बजाय उन्हें पत्र लिखें। मैं खुद भी उन्हें लिख रहा हूँ। आप ाहें तो यह पत्र उन्हें दिखला सकते हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७७०८) से।

२९१. पत्र : नारणदास गांधीको

१५ अक्तूबर, १९३७

चि० नारणदास,

मैंने तुम्हारे आँकड़ोंका उपयोग किया है। तुम अच्छी सेवा कर रहे हो। लेकिन ुम्हें बहुत आगे जाना है। उद्योगके द्वारा बुद्धिका सच्चा विकास किया जा सकता ़ै, इस प्रश्नपर विचार करना।

साथमें कुमीका[1] पत्र है। इसके बारेमें तुम्हारा क्या विचार है? यदि तुम उसे ाहीं रख सकते तो बेशक मत रखना। तुम्हारी प्रगतिमें उसे बाधा नहीं बनना ाहिए। उसे पैसा तो मुझे देना ही पड़ेगा, ऐसा मुझे लगता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से। सी० डब्ल्यू० ८५४० से भी; ौजन्य : नारणदास गांधी

१. कुमीबहन टी० मणियार, हरिलाल गांधीकी साली।

२९२. पत्र : द० बा० कालेलकरको

१५ अक्तूबर, १९३७

चि० काका,

जमनालालजीके साथ जरूर बात करना। यदि वे जायें तो यह बहुत अच्छी बात होगी। क्या वे जायेंगे? जा सकेंगे? कब जायेंगे?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७७०६)से।

२९३. पत्र : शरतचन्द्र बोसको

[१६ अक्तूबर, १९३७ के पूर्व][1]

आपका स्नेहमय पत्र मिला। ईश्वरकी इच्छा हुई तो निस्सन्देह मैं कलकत्ता आ रहा हूँ। मेरा स्वास्थ्य अभी इस योग्य नहीं कि मैं सभाओं या चर्चाओंमें भाग ले सकूँ। मुझमें अभी सीमित शक्ति ही है, जिसका उपयोग मैं वहाँ कैदियोंके हितमें और कार्य-समितिकी बैठकोंमें उठनेवाले प्रश्नोंके सम्बन्धमें ही करना चाहूँगा। रही बात मेरी, सो मैं प्रसन्नतासे आपका आतिथ्य स्वीकार करूँगा और आपको मुझे बहुत सारे मुलाकातियों और निरर्थक भेंटोंसे बचाना होगा। कृपया सार्वजनिक प्रदर्शनों और सभाओंसे मेरी रक्षा कीजिएगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १८-१०-१९३७

१. यह रिपोर्ट "खरसियांग, १६ अक्तूबर" की तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी।

२९४. टिप्पणियाँ

खादी-कार्यके लिए दान

डॉ० पट्टाभि लिखते हैं:

> **अनन्तपुर जिले (मद्रास प्रान्त-आन्ध्र) के ताड़पत्री गाँवके मूल लक्ष्मी-नारायणस्वामिगारुने खादी-कार्यके लिए ५,००० रुपयेका दान दिया है, और अपने जिलेमें रचनात्मक कार्यके लिए ४५,००० रुपयेकी रकम ३ प्रतिशत ब्याजपर उधार देनेका भी वचन दिया है।**

मैं दाताको उनके इस दानके लिए तथा जो रकम उधार देनेका उन्होंने वचन दिया है उसके लिए भी बधाई देता हूँ। इसमें मुझे कोई सन्देह नहीं कि अपने पैसेका इससे अच्छा उपयोग वे नहीं कर सकते थे। मैं आशा करता हूँ कि यह जिला इस दानसे और उधारकी रकमसे पूरा-पूरा लाभ उठायेगा, और कितना लाभ मिलेगा, यह बात स्थानीय [illegible] और खादीको प्राप्त होनेवाले स्थानीय संरक्षण पर निर्भर होगी।

रोमन कैथलिक और मद्य-निषेध

कुछ दिन पूर्व इस पत्रमें रोमन कैथलिक लोगोंके विषयमें श्री फिलिपकी कुछ उक्तियाँ प्रकाशित हुई थीं।[1] लाहौरके श्री एफ० ए० प्लेअरने उन उक्तियोंपर आपत्ति उठाई है। वे लिखते हैं कि रोमन कैथलिक पादरी तो अति प्राचीन कालसे मद्य-निषेधका उपदेश देते आ रहे हैं। अपने पत्रके अन्तमें वे लिखते हैं: "हम सभी रोमन कैथलिक लोग आपके मद्य-निषेधके आन्दोलनसे सहमत हैं, और उसमें हार्दिक समर्थन देते हैं।"

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १६-१०-१९३७

१. देखिए पृ० १३१-३३।

२९५. कुछ आलोचनाओंका जवाब

मेरी प्राथमिक शिक्षाकी योजनापर एक उच्च शिक्षाधिकारी ने हमारे एक मित्र द्वारा अपनी विस्तृत और विचारपूर्ण आलोचना भेजी है। वे अपना नाम प्रकट नहीं करना चाहते। स्थानाभावके कारण मैं उनकी सारी दलीलें नहीं दे सकता, और न उनमें कोई ऐसी नई बात ही है। फिर भी और नहीं तो लेखकने इस पत्रपर जो परिश्रम किया है उसीकी खातिर, उन्हें जवाब तो देना ही चाहिए।

लेखकने अपने शब्दोंमें मेरी तजवीजोंका आशय इस प्रकार दिया है:

> **(१) प्राथमिक शिक्षाका प्रारम्भ और अन्त दस्तकारियों और उद्योगोंकी तालीमके साथ हो, और सामान्य जानकारीकी दृष्टिसे जो-कुछ भी सिखाने-पढ़ाने की जरूरत हो वह सहायक शिक्षाके रूपमें शुरू-शुरूमें बता दिया जाये, और लिखाई-पढ़ाई द्वारा इतिहास, भूगोल और अंकगणित-जैसे विषयोंकी विधिवत पढ़ाई बिलकुल आखिरमें हो।**
>
> **(२) प्राथमिक शिक्षा शुरूसे ही स्वावलम्बी होनी चाहिए और यदि राज्य स्कूलोंमें बच्चोंकी बनाई चीजोंको लेकर जनताको बेच दिया करे, तो प्राथमिक शिक्षा स्वावलम्बी हो सकती है — और उसे होना चाहिए।**
>
> **(३) प्राथमिक शिक्षामें वह सब पढ़ाई हो जाये जितनी मैट्रिकतक आज होती है — बेशक अंग्रेजीको छोड़कर।**
>
> **(४) प्रोफेसर के० टी० शाहकी इस योजनाकी अच्छी तरह जाँच की जाये कि देशके नवयुवक और युवतियाँ प्राथमिक शालाओंमें लाजिमी तौरपर आकर पढ़ायें। यदि सम्भव हो तो इसपर अमल भी किया जाये।**[1]

इसके फौरन बाद ही लेखकने लिखा है:

> **यदि हम उपर्युक्त कार्यक्रमका विश्लेषण करेंगे तो यह दिखाई देगा कि इसकी मूलभूत कल्पनाएँ कुछ अंशोंमें मध्य कालीन हैं, और कहीं-कहीं तो ऐसी मान्यताओंपर आधारित हैं जो बुद्धिकी कसौटीपर टिक नहीं सकतीं। शायद संख्या (३)में सुझाया गया स्तर बहुत ऊँचा होगा।**

अच्छा होता अगर मेरे सुझावोंका मतलब अपने शब्दोंमें देने के बजाय वे मेरे ही शब्दोंको उद्धृत कर देते। क्योंकि सं० (१)में जितनी भी बातें कही गई हैं, उनका सचाईसे कोई सम्बन्ध नहीं है। मेरा कहना यह तो हरगिज नहीं है कि शिक्षाका आरम्भ दस्तकारियोंसे किया जाये और अन्य बातें गौण रूपमें सहायक विषयोंके तौर-

१. प्रोफेसर के० टी० शाहका लेख **हरिजन**, ३१-७-१९३७ के अंकमें छपा था।

पर सिखाई जायें। इसके विपरीत, मैंने तो यह कहा है कि विद्यार्थीकी प्रायः सारी सामान्य पढ़ाई दस्तकारियोंके जरिये और दस्तकारियोंमें उनकी प्रगतिके साथ-साथ ही हो। लेखकके शब्दोंसे जो भाव निकलता है वह और यह बिलकुल अलग-अलग चीजे हैं। मुझे पता नहीं कि मध्य युगमें क्या होता था। हाँ, मैं यह जरूर जानता हूँ कि मध्य या किसी भी युगमें यह उद्देश्य तो कभी नहीं रहा है कि दस्तकारियोंकी सहायतासे मनुष्यका पूर्ण विकास किया जाये। यह कल्पना सर्वथा मौलिक है। अगर यह गलत भी साबित हो तो भी उसकी मौलिकतामें कोई अन्तर नहीं पड़ता। और जबतक हम किसी नई कल्पनाको अच्छी तरह आजमा नहीं लेते, उसपर बिलकुल सीधा आक्रमण करना उचित नहीं है। किसी चीजको आजमाने से पहले उसे असम्भव बना देता कोई दलील नहीं है।

मैंने यह भी नहीं कहा है कि लेखन और पठनके द्वारा नियमित पढ़ाई बिलकुल आखिरमें की जाये। इसके विपरीत, असलमें सच्ची पढ़ाई तो शुरू-शुरूमें ही आ जाती है। वस्तुतः वह सामान्य शिक्षणका एक अभिन्न अंग है। हाँ, मैंने यह तो जरूर कहा है और फिर कहता हूँ कि वाचन कुछ देरसे सिखाया जाये और लेखन सबसे अन्तमें। पर यह सब क्रियाएँ पहले वर्षके अन्दर समाप्त कर देनी चाहिए, जिससे मेरी कल्पनाकी पाठशालामें सात सालका बच्चा, वर्तमान प्राथमिक शालाओंमें साधारण लड़के-लड़कियोंको एक सालमें जितना सामान्य ज्ञान होता, उससे कहीं अधिक प्राप्त कर लेगा। वह सही-सही पढ़ेगा और आज बच्चे आम तौरसे जैसे टेढ़े-मेढ़े और भद्दे अक्षर लिखते हैं उसके बजाय साफ-सुन्दर अक्षर लिखेगा। वह मामूली जोड़बाकी तथा पहाड़े भी सीख लेगा। और यह सब वह अपनी रुचिकी एक उत्पादक दस्तकारी——मसलन कताई—के जरिये और उसके साथ-साथ सीख लेगा।

दूसरा अनुच्छेद भी पहलेकी ही तरह भद्दे ढंगसे लिखा गया है। मैंने दावा तो यह किया है कि दस्तकारियोंकी सहायतासे जब शिक्षा दी जायेगी तो मेरी बताई कुल अवधिमें, अर्थात् सात वर्षमें, उसे स्वावलम्बी हो जाना चाहिए। मैंने यह साफ कह दिया है कि पहले दो वर्षमें तो उसमें कुछ अंशोंमें नुकसान भी होगा।

मध्यकाल भले ही बुरा हो, पर मैं किसी चीजकी महज इसलिए निन्दा करने के लिए तैयार नहीं हूँ कि वह मध्यकालकी है। निःसन्देह चरखा एक मध्य-कालीन चीज है। पर आज तो वह वर्तमान जीवनमें अपना स्थान पा चुका है। यद्यपि वस्तु तो वही है किन्तु एक समय ईस्ट इंडिया कम्पनीके आगमनके बाद जहाँ वह गुलामीका चिह्न था, वहाँ आज वह स्वतन्त्रता और एकताका प्रतीक बन गया है। नवीन भारतको आज उसके अन्दर वे गहन और सच्चे रहस्य नजर आने लग गये हैं जिनकी कल्पना हमारे बुजुर्गोंको सपनेमें भी नहीं होगी। इसी प्रकार ये हस्तशिल्प भी भले ही किसी समय शोषक व्यापारिक पेढ़ियों द्वारा कराये जानेवाले श्रमके प्रतीक रहे हों, आज उन्हें सम्पूर्ण और सच्चेसे-सच्चे अर्थमें शिक्षाका प्रतीक और वाहन बन जाना चाहिए। अगर मन्त्रियोंके अन्दर पर्याप्त साहस और सूझबूझ होगी, तो उच्च

शिक्षाधिकारियों तथा अन्य लोगों द्वारा, निस्सन्देह सद्हेतुसे प्रेरित होकर, की कई आलोचनाके बावजूद वे निश्चय ही इस योजनाको कार्यमें परिणत करके देखेंगे — विशेषकर इसलिए कि इस तरहकी आलोचना काल्पनिक आधारपर खड़ी है।

यद्यपि लेखकने प्रोफेसर के० टी० शाह द्वारा सुझाई हुई अनिवार्य सेवाकी योजनाकी व्यावहारिकताको कुछ अंशमें स्वीकार करने का सौजन्य बताया है, किन्तु आगे चलकर उन्हें इसपर अफसोस होता है और कहते हैं:

> **देशके नवयुवकों और युवतियोंको पाठशालाओंमें आकर पढ़ाने के लिए मजबूर करने की बात तो अत्याचारपूर्ण मालूम होती है। पाठशालाओंमें, जहाँ छोटे-छोटे बच्चे एकत्र होते हैं, ऐसे स्त्री-पुरुषोंको ही होना चाहिए जिन्होंने, इस संसारमें जिस हदतक स्वार्पण सम्भव है, उस हदतक अपनेको शिक्षण-कार्यके लिए अर्पित कर दिया हो और जो पाठशालाओंमें उमंग और उत्साहका वातावरण उत्पन्न कर सकें। हमने अपने देशके युवकों और युवतियोंपर अबतक जरूरतसे ज्यादा प्रयोग किये हैं। पर यह तो एक ऐसा प्रयोग है जिसका इतना बड़ा अनर्थकारी परिणाम होगा कि उससे हम कमसे-कम आधी शताब्दी-तक उबर नहीं पायेंगे। इस सबके पीछे कल्पना यह रही है कि अध्यापन एक ऐसी कला है जिसके लिए किसी प्रकार के प्रशिक्षणकी जरूरत नहीं है और हरएक आदमी जन्मजात शिक्षक होता है। बड़े आश्चर्यकी बात है कि श्री के० टी० शाह-जैसे विद्वान्के दिमागमें कैसे यह बात बैठ गई! यह तो एक शुद्ध सनक है और इसपर कहीं अमल होने लगा तो इसके भयंकर दुष्परिणाम निकलेंगे। और फिर हर शिक्षक बच्चोंको दस्तकारी आदिकी शिक्षा कैसे देगा?**

प्रोफेसर शाह अपनी योजनाका बचाव करने में पर्याप्त समर्थ हैं। पर मैं लेखक को याद दिला देना चाहता हूँ कि वर्त्तमान शिक्षक स्वयंसेवक नहीं हैं। वे भी (शुद्ध अर्थमें) किरायेपर अर्थात् रोटीके लिए काम कर रहे हैं। प्रोफेसर शाह अपनी योजनामें यह मानकर अवश्य चले हैं कि जो शिक्षक नियुक्त किये जायेंगे उनमें अपने देशके लिए प्रेम, स्वार्थत्याग की भावना, कुछ सुसंस्कार और एकाध दस्तकारीका ज्ञान भी होगा। उनकी कल्पनामें सार है; वह व्यावहारिक है और बहुत ध्यान देने योग्य है। अगर हम इस बात की राह देखते रहें कि हमें जन्मजात अध्यापक मिलें तब तो कयामतके दिनतक ठहरना पड़ेगा। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि हमें बड़े पैमानेपर शिक्षकोंको तैयार करना पड़ेगा — और सो भी थोड़ेसे-थोड़े समयमें। यह तबतक सम्भव नहीं है जबतक कि देशके मौजूदा शिक्षित नौजवानों और बहनोंकी सेवाएँ इस कामके लिए प्रेमपूर्वक प्राप्त नहीं होतीं। जबतक इस कामके लिए वे स्वेच्छापूर्वक आगे नहीं आते तबतक यह नहीं होगा। सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें उन्होंने, चाहे जितने सीमित प्रमाणमें, इसी प्रकार स्वेच्छासे सहयोग दिया था। अपनी गुजरके लिए थोड़ा-सा पारिश्रमिक लेकर इस रचनात्मक सेवामें क्या वे योग नहीं देंगे?

अब लेखक पूछते हैं:

(१) जब छोटे-छोटे बच्चे काम करेंगे, तो क्या कच्चे मालकी बरबादी नहीं होगी?

(२) इन चीजोंकी बिक्री क्या कोई केन्द्रीय संगठन करेगा? उसका खर्च कहाँसे आयेगा?

(३) क्या लोगोंको ये चीजें खरीदने पर मजबूर किया जायेगा?

(४) और उन जातियोंकी क्या दशा होगी जो आजकल ये चीजें बना रही हैं। उनपर इस पद्धतिकी क्या प्रतिक्रिया होगी?

मेरे उत्तर ये हैं:

(१) कुछ बरबादी तो जरूर होगी, पर पहले ही वर्षके अन्तमें प्रत्येक विद्यार्थीके जरिये कुछ लाभ भी जरूर होगा।

(२) तैयार चीजोंमें से राज्य अपनी जरूरतोंकी पूर्तिके लिए खुद ही काफी हिस्सा रख लेगा।

(३) देशके बच्चों द्वारा बनाई चीजें खरीदने के लिए किसीको मजबूर नहीं किया जायेगा। लेकिन देशके लोगोंसे यह अपेक्षा जरूर रखी जायेगी कि वे बच्चों द्वारा बनाई गई अपनी जरूरतकी इन चीजोंको अभिमानके साथ और देश-प्रेमकी भावनासे खरीदें।

(४) गाँवोंकी बनी चीजों और इन दस्तकारियोंमें तो मुश्किलसे कोई होड़ होगी। फिर, इस बातका खास तौरपर ध्यान रखा जायेगा कि इन पाठशालाओंमें ऐसी चीजें नहीं बनाई जायें जिससे इनकी गाँवमें बनाई जानेवाली चीजोंके साथ कोई अनुचित होड़ हो। मसलन, खादी, गाँवका बना कागज, खजूरका गुड़ आदि चीजोंमें किसी प्रकारकी प्रतिस्पर्धाकी सम्भावना है ही नहीं।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १६-१०-१९३७

२९६. मद्य-निषेध और शिक्षा

श्रीयुत जे० जी० गिलसन बालासोरके क्रिश्चियन हाई ऐण्ड टेक्निकल स्कूलके मन्त्री तथा इण्डस्ट्रियल आर्ट्स ऐण्ड वोकेशनल एजुकेशन फॉर ए० बी० बी० ओ० मिशनके निदेशक हैं। "गाँवोंमें गन्दे पानी, मलमूत्र आदिके निकासकी व्यवस्था" पर कुछ मूल्यवान साहित्य भेजते हुए उन्होंने लिखा है:[1]

> . . . सामान्य रूपसे मैं आपके निष्कर्षोंसे काफी हदतक सहमत हूँ। शारीरिक कार्य यदि ठीक तरहसे कराया जाये तो वह बौद्धिक विकासका सर्वश्रेष्ठ साधन है, यह बात आपने जैसी स्पष्ट रीतिसे बताई है वह मुझे विशेष रूपसे पसन्द आया। मुझे शिक्षकोंको यह विश्वास दिलाना बहुत कठिन लगा है कि पाठ्य पुस्तकों, व्याख्यानों तथा परीक्षाके लिए पाठ रटने के अलावा कोई और भी चीज इस दिशामें सहायक हो सकती है। आपने यह बात जिस तरह समझाई है उससे यह सबको स्पष्ट हो जानी चाहिए।
>
> दूसरी ओर मैं आपकी इस बातसे सहमत नहीं हो सकता कि शिक्षण-संस्थाएँ विद्यार्थियोंके उद्यमसे स्वावलम्बी बन सकती हैं या बननी चाहिए। . . . यदि कुशल कारीगरोंकी देख-रेखमें विद्यार्थियोंको प्रति-दिन चार घंटे ऐसे काममें लगाये रखा जाये तो वे निस्सन्देह अपना और शायद देखरेख करनेवाले लोगोंका खर्च भी निकाल सकते हैं, किन्तु ऐसे कार्यका शिक्षाकी दृष्टिसे कोई महत्व नहीं है। उससे तो उनकी बुद्धि वैसे ही कुण्ठित हो जायेगी जैसे लगातार पाठ्य पुस्तकें पढ़ने अथवा व्याख्यान सुनने से हो जाती है।
>
> यदि आप यह चाहते हैं कि बच्चोंको कार्य द्वारा शिक्षा दी जाये तो उन्हें भिन्न-भिन्न प्रकारके कार्य दिये जाने चाहिए और एक कामको अच्छी तरह सीख लेने के बाद उन्हें दूसरा काम दिया जाना चाहिए। . . . किन्तु उनके उद्यमसे तैयार की गई वस्तुओंसे शालाका खर्च निकल आये, यह मुझे सम्भव नहीं दीखता। हाँ, उनसे कुछ सहायता मिल सकती है।
>
> लेकिन मुझे कोई कारण दिखाई नहीं देता कि पाठशालाओंसे आत्म-निर्भर होने की आशा क्यों की जाये। बच्चोंकी शिक्षा तथा वयस्कोंकी शिक्षा जारी रखना समाजकी जिम्मेदारी है और मुझे लगता है कि भारतकी वर्तमान स्थितिको देखते हुए सार्वजनिक धन-राशिपर इसका पहला और सबसे ज्यादा अधिकार होना चाहिए।

१. यहाँ केवल कुछ अंशोंका ही अनुवाद दिया जा रहा है।

यह बड़े दुर्भाग्यकी बात है कि इसमें मद्य-निषेध तथा शिक्षा दोनोंको एक साथ रख दिया गया है और उसमें मद्य-निषेधके सम्बन्धमें अमेरिकाके अनुभवकी बात इस तरह उठाई गई है जिससे साफ पता चलता है कि लोग वहाँकी परिस्थितियोंसे पूरी तरह अवगत नहीं हैं। . . . यदि अमेरिकाका उदाहरण दिया जाता है तो यह भी कहना होगा कि अमेरिकामें मद्य-निषेधके दौरान शिक्षाके लिए धनकी कोई कमी नहीं थी, बल्कि उस अवधिमें पाठशालाओंमें खूब तेजीके साथ सुधार हुआ।

जहाँतक आम जनताकी दशा सुधारनेका प्रश्न है, अमेरिकामें मद्य-निषेध का प्रयोग असफल नहीं हुआ। अलबत्ता उन बड़े-बड़े शहरोंमें, जहाँ ज्यादातर यूरोपमें जन्मे लोग रहते हैं और जहाँ लोकमतके कारण इस कानूनको लागू नहीं किया जा सका, मद्य-निषेध सफल नहीं हुआ। शहरोंसे बाहरका विशाल अमेरिकी जन-समुदाय बिलकुल मद्यपान नहीं करता है और वहाँ मद्यपानको भारतके समान ही सामाजिक तथा नैतिक बुराई समझा जाता है, अथवा यों कहिए कि कमसे-कम १९३३ तक ऐसा समझा जाता था। पिछले चार वर्षोंके दौरान इस मामलेमें जितनी अति की गई उसके खिलाफ अब प्रतिक्रिया आरम्भ हो चुकी है।

अमेरिकामें मद्य-निषेधकी राजनीतिक विफलताका कारण बड़े-बड़े नगरोंकी राजनीतिक शक्ति थी और यह बात थी कि जहाँ शराबकी बिक्रीसे लाभ उठानेकी आशा रखनेवाले मद्य-निर्माता तथा अन्य लोग अखबारी प्रचारपर लाखों-करोड़ों डालर खर्च करनेको तैयार थे, आम लोग, जिनके लिए अब यह समस्या अत्यन्त गम्भीर नहीं रह गई थी, इसकी ओरसे उदासीन थे। यह तो शहरके धनवानों द्वारा देशका शोषण करनेका उदाहरण है। भारतमें मद्य-निषेधको सफल बनानेमें आपको भी इसी समस्याका सामना करना पड़ेगा। . . .

यदि किसी उद्योगके माध्यमसे दी जानेवाली शिक्षाके द्वारा विद्यार्थीके मस्तिष्कका भी विकास करना है तो उस शिक्षाके स्वावलम्बी बनाये जा सकनेके बारेमें श्री विल्सनके मनमें जो शंका है, उसपर मुझे कोई आश्चर्य नहीं होता। इस समस्यापर मैंने इसी अंकमें अन्यत्र विचार किया है।[1] अमेरिकाके मद्य-निषेध-विषयके अनुभवके विषयमें उन्होंने जो-कुछ बताया है उसे पाठक रुचिपूर्वक पढ़ेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १६-१०-१९३७

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२९७. समर्थनमें

बच्चेको शास्त्रीय और संस्कारी ढंगसे किसी उपयोगी दस्तकारीकी शिक्षा देने तथा जिस क्षणसे उसका शिक्षण आरम्भ हो उसी क्षणसे उसे किसी वस्तुका सृजन करने योग्य बनाने के आपके सुझावसे मैं सहमत ही नहीं हूँ, बल्कि विनम्र रीतिसे उसका समर्थन भी करता हूँ। निस्सन्देह, यह एक क्रान्तिकारी सुझाव है, किन्तु मैं इससे पूर्णतः सहमत हूँ। व्यक्ति तथा राष्ट्र दोनोंके लिए यह नैतिक, सांस्कारिक तथा आर्थिक सभी दृष्टियोंसे प्रचुर लाभदायक होगा। इससे बच्चे न केवल शरीर-श्रमकी गरिमा समझने लगेंगे, वरन उन्हें स्वावलम्बनकी भी शिक्षा मिलेगी और उनके अन्दर सृजनके महत्त्वका बोध जगेगा। हमारा ध्येय बच्चोंकी बौद्धिक, शारीरिक, नैतिक तथा औद्योगिक आवश्यकताओंकी पूर्ति तथा इन सब दृष्टियोंसे उनकी शक्तिका विकास करना होना चाहिए। उद्योगकी शिक्षासे बच्चे उत्पादनकी सभी क्रियाओंके सामान्य सिद्धान्त सीखेंगे, और साथ ही यह चीज बच्चों या युवाओंको सभी उद्योगोंसे सम्बन्धित सरलतम औजारोंके उपयोगका व्यावहारिक प्रशिक्षण देगी। हमारा आदर्श यह होना चाहिए कि नई पीढ़ीको पढ़ने-लिखने के साथ-साथ किसी उत्पादक कार्यकी भी शिक्षा दी जाये। इसका मतलब है सामान्य शिक्षाके साथ शारीरिक कार्यका जोड़ दिया जाना और इसका लक्ष्य यह है कि जिसके साथ शारीरिक कार्यका मेल बैठे ऐसे उद्योग की सभी शाखाओंका साधारण ज्ञान बच्चोंको दिया जाये। बौद्धिक तथा नैतिक प्रयासके साथ संयोजित शरीर-श्रम, यह हमारी शिक्षाकी प्रमुख प्रवृत्ति होनी चाहिए। बौद्धिक कार्य तथा शारीरिक कार्यका एक-दूसरेसे अलगाव न हो।

अपनी प्राथमिक शिक्षा-प्रणालीमें हमें निम्न विषयोंका समावेश करना चाहिए :

१. मातृभाषा
२. अंकगणित
३. प्राकृतिक विज्ञान
४. समाजशास्त्र
५. भूगोल तथा इतिहास
६. शरीर-श्रम तथा उद्योग-शिल्पका काम
७. व्यायाम

८. कला तथा संगीत

९. हिन्दुस्तानी

लेकिन यहाँ सवाल यह उठता है कि बच्चेकी शिक्षा किस उम्रमें शुरू होनी चाहिए। अगर ५-६ सालकी उम्रमें शुरू की जाये तो क्या इस उम्रमें उसे कोई उपयोगी दस्तकारी सिखाना शुरू किया जा सकता है? उस दस्तकारीकी शिक्षा देने के खर्चकी व्यवस्था कैसे की जायेगी? यह चीज साक्षरताके प्रचारसे अधिक आसान और कम व्ययसाध्य नहीं होगी। मैं तो ८-१० सालकी उम्रमें दस्तकारीकी शिक्षा देना आरम्भ करना चाहूँगा, क्योंकि औजारोंका उपयोग करने के लिए हाथमें शक्ति और ठीक पकड़ होनी चाहिए। किन्तु प्राथमिक शिक्षा पाँच-छः सालकी उम्रसे तो आरम्भ ही कर दी जानी चाहिए। बच्चेसे इससे अधिक प्रतीक्षा नहीं करवाई जा सकती। हम बच्चेको उद्योगकी जो शिक्षा देने का इरादा रखते हैं उसके अतिरिक्त उसे मैट्रिकुलेशन स्तरका ज्ञान भी दिया जाये, इसके लिए दस सालका पाठ्यक्रम रखना आवश्यक है। किन्तु इन बच्चों द्वारा — खासकर प्रारम्भिक अवस्थामें — तैयार की गई चीजोंके आर्थिक मूल्यमें मुझे शंका है। जिस देशमें स्वतन्त्र व्यापार चलता हो और जहाँ तरह-तरहके नितनवीन फैशन निकलते रहते हों वहाँ ऐसी चीजोंकी — विशेष रूपसे जब वे टिकाऊ और सफाईसे बनी हुई न हों — बिक्री नहीं हो सकती। यदि राज्य उन्हें खरीद ले अथवा वह ऐसी पाठशालाओंको जो सेवा-सहायता दे उसके एवजमें उन्हें ले ले तो वह उनका करेगी क्या? इस पद्धतिको अपनाने की अपेक्षा यह कहीं अधिक अच्छा होगा कि राज्य बच्चोंकी शिक्षापर सीधे खर्च करे। कहने की जरूरत नहीं कि बड़ी उम्र — जैसे कि १२ से १६ के बीच की उम्र — के बच्चों द्वारा बनाई गई चीजोंकी खपत हो सकती है और इस तरह ये चीजें आमदनीका एक जरिया बन सकती हैं।

मैं साक्षरताकी समस्याका विचार कुछ दूसरे ढंगसे करना चाहूँगा और उसके लिए कर लगाने तथा आवश्यक राशि खर्च करने में कोई संकोच नहीं करूँगा।

उपयोगी दस्तकारीकी परिकल्पनाको प्राथमिक शिक्षाकी आगेकी अवस्था (या माध्यमिक शिक्षाकी अवस्था)में विकसित किया जा सकता है। इस शिक्षाके दौरान जो उत्पादन हो उसकी कीमतसे इसे प्रारम्भमें कमसे-कम अंशतः और अनुभवके बाद यदि सम्भव हो तो पूर्णतः स्वावलम्बी बनाने का प्रयत्न किया जाना चाहिए। एक ही खतरेकी ओरसे सावधान रहना होगा; वह यह कि कहीं ऐसा न हो कि शरीर, मन और आत्माके संस्कारकी शिक्षा आर्थिक हेतु तथा पाठशालाकी आर्थिक व्यवस्थाके समक्ष सर्वथा गौण हो जाये।

आपके इस सुझावसे भी मैं सहमत हूँ कि प्राथमिक शिक्षाको, अंग्रेजीको छोड़कर और (मैं अपनी ओरसे कहूँगा) हिन्दुस्तानीको शामिल करके, मैट्रिकुलेशनके स्तरका बना देना चाहिए। इसका मतलब यह हुआ कि आप प्राथमिक शिक्षामें माध्यमिक शिक्षाको भी शामिल कर रहे हैं। आपका विचार स्कूली शिक्षाको — समझ लीजिए कि दस वर्षकी स्कूली शिक्षाको — एक सम्पूर्ण घटक बनाने का है। अपनी ओरसे इतना और कहूँगा कि यह शिक्षा मातृभाषाके अतिरिक्त और किसी भाषाके माध्यमसे नहीं दी जानी चाहिए। इससे बच्चे का मन मुक्त हो जायेगा और उसमें ज्ञान तथा जीवनकी समस्याओंके प्रति रुचि पैदा होगी और उसे सृजनात्मक शक्ति तथा दृष्टि प्राप्त होगी।

मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मध्य युगमें शिक्षा मुख्यतः स्वावलम्बी थी, और यदि हमारी सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक व्यवस्था और दृष्टि मध्य युगीन होती, अर्थात् वर्ग तथा वर्णपर आधारित अर्थ-व्यवस्था, समाज-व्यवस्था और राज्य-व्यवस्थाके पुराने एवं संकुचित मूल्योंमें हमारा विश्वास होता, तो हम अपनी शिक्षाको सामान्यतः स्वावलम्बी बना सकते थे। लेकिन आज जब हममें लोकतान्त्रिक, राष्ट्रवादी और समाजवादी जीवन-दृष्टि व्याप्त है, शिक्षा स्वावलम्बी नहीं हो सकती। आज समाजमें जिसके पास अपने आदेशों का पालन करवाने की शक्ति है और कोई काम करवाने के लिए आवश्यक साधन हैं वह एकमात्र संगठित सत्ता राज्य ही है। इसलिए उसीको यह कार्य अपने हाथमें लेना है। जाति, वर्ग, धर्मसंघ आदि सभी पुराने शक्ति-समूह अपनी शक्ति, सत्ता और साधन खो चुके हैं और पुराने समयमें जिस व्यापक अर्थमें इनका अस्तित्व था उस अर्थमें इनका कोई अस्तित्व नहीं रह गया है। उनमें लोगोंकी भी आस्था नहीं रह गई है। सारी सामाजिक शक्ति राजनीतिक संगठनके हाथोंमें सिमट आई है। यही संगठन आज आर्थिक और सामाजिक शक्तिका भी स्वामी है। भारतमें भी यही स्थिति है। इसलिए दो आदर्श — जिनमें से एक मध्य युगीन और दूसरा आधुनिक है, एकका आधार विविधता तथा अलग-अलग पेशे हैं तो दूसरेका एकत्व और प्रदेश हैं — साथ-साथ नहीं चल सकते हैं।

अतीतमें सार्वत्रिक शिक्षा नहीं थी, लोक-शासनवाला एकतन्त्री राज्य नहीं था, समतावादी राष्ट्रीय दृष्टि नहीं थी।

शिक्षा-कार्यके लिए युवा वर्गकी सेवा अनिवार्य रूपसे ली जाये, यह अब कोई नया विचार नहीं रह गया है और इसे कार्य-रूप दिया जाना चाहिए। कांग्रेस तथा उसके कांग्रेसी प्रान्तोंके मन्त्री अपने अधिकारकी रूसे देशके बौद्धिक वर्गसे अनुरोध करके देखें और जिनके हृदयमें जनताको शिक्षित देखने की लालसा

है उनका आह्वान करें कि साक्षरता, संस्कार और शिक्षाके प्रचारके निमित्त वे नयी सरकारोंकी सहायताके लिए आगे आयें। इससे जनसाधारणके साथ मात्र आर्थिक तथा राजनीतिक आधारपर ही नहीं, बल्कि एक नये आधारपर सम्पर्क स्थापित होगा। इससे जनताकी सामूहिक शक्ति और बुद्धिको जाग्रत, संगठित और व्यवस्थित करने के उच्चतर लक्ष्य की भी सिद्धि होगी।

किसी उद्योगके आधारपर स्थित स्वावलम्बी प्राथमिक शिक्षाके विषयमें जब मैंने पहले-पहल लिखा था उस समय शिक्षाके क्षेत्रमें काम करनेवाले अपने साथियोंसे अपनी-अपनी राय भेजने का आग्रह किया था। प्रोफेसर एस० वी० पुणताम्बेकर उन लोगोंमें से थे जिन्होंने मुझे अपने विचार सबसे पहले भेजे थे। उन्होंने मुझे एक लम्बा और तर्कपूर्ण उत्तर भेजा था। लेकिन स्थानाभावके कारण मैं उसे अबसे पहले नहीं प्रस्तुत कर सका। ऊपर जो-कुछ दिया गया है वह उनकी रायका सर्वाधिक प्रासंगिक अंश है। संक्षेप करने के विचारसे मैंने वे अंश निकाल दिये हैं जिनका सम्बन्ध साक्षरता और कालेजकी शिक्षासे है। कारण इसी महीनेकी २२ और २३ तारीखको जो शिक्षा परिषद् होनेवाली है उसमें चर्चाका मुख्य विषय किसी उद्योगके माध्यमसे दी जानेवाली स्वावलम्बी प्राथमिक शिक्षा होगी।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १६-१०-१९३७

२९८. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

सेगाँव, वर्धा
१६ अक्तूबर, १९३७

चि० अमला,

खुर्शेदबहनसे मालूम हुआ, तुम्हें यह शिकायत है कि मैं पत्र नहीं लिखता। तुम्हारा खयाल मुझे बराबर रहता है। मैंने तुम्हें यह सोचकर पत्र नही लिखा कि तुम्हें मेरे पत्रोंकी अभी जरूरत नहीं है। मुझे पता था कि तुम्हारा काम ठीक चल रहा है। लेकिन अब तुम मुझे अपने बारेमें सब-कुछ लिखना। यहाँ तो वैसा ही चल रहा है जैसा तुम्हारे सामने था। यदि आ सको तो किसी समय जरूर आ जाना। अपनी मातासे मेरा अभिवादन कहना।

स्नेह।

बापूके आशीर्वाद[1]

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. हस्ताक्षर गुजराती लिपिमें है।

२९९. पत्र : अमृतकौरको[1]

१६ अक्तूबर, १९३७

नागपुरसे मुझे अभीतक कोई निमन्त्रण[2] नहीं मिला है; तुम खुद कहकर मुझे निमन्त्रण मत भिजवाना। तुम इस पत्रसे पहले ही नरीमान-काण्डका निर्णय[3] देख लोगी।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८२२) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९७८ से भी

३००. एक पत्र

१६ अक्तूबर, १९३७

प्रिय बहन,

धन्यवाद। मैं ठीक हूँ। बोलने से सिर्फ थकावट हो जाती है। मैं कुछ ऐसा सोचता हूँ कि भगवान् यह नहीं चाहता कि मेरे खयालसे जो काम उसने मुझे सौंपा है उसे मैं अधूरा छोड़ जाऊँ। यदि मैं अपने अहंकारके कारण विश्राम नहीं ले पाता तो मुझे उसका उचित दण्ड अवश्य भोगना पड़ेगा।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य : नारायण देसाई

१. यह अमृतकौर को लिखे मीराबहनके पत्रमें पुनश्चके रूपमें लिखा गया था।

२. अखिल भारतीय महिला सम्मेलनके लिए।

३. देखिए पृ० २७५-७६ ।

३०१. पत्र : महादेव देसाईको

१६ अक्तूबर, १९३७

चि० महादेव,

यदि तुम्हें सफलता न मिली तो यह मेरी कलाके लिए लज्जाकी बात होगी। अपने-अपने क्षेत्रमें विनोबा, मगनलाल, छोटेलाल, पंडितजी, काका और देवदास मुझसे आगे बढ़ गये। तुम तो पहले कदमसे ही मुझसे आगे हो। अन्य अनेक नाम भी मुझे याद आते हैं। मेरा काम तो सत्य-अहिंसाका मन्त्र फूँकना है। जो इस मन्त्रको आत्मसात् कर लेते हैं वे फिर अपने क्षेत्रमे खूब उड़ान भर सकते है और मैं उनसे अलग खड़ा रहता हूँ। यदि तुम साप्ताहिक टिप्पणियाँ न लिखो तो कोई हर्ज नही। तुम्हें अपने बायें हाथसे लिखने की आदत डालनी चाहिए। मेरी अपेक्षा तुम उससे जल्दी काम ले सकोगे। प्रेमाका पोस्टकार्ड वापस भेजता हूँ। पेरीनबहनके लिए कल १ बजे बैलगाड़ी अथवा मोटरकी जरूरत होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५७८) से।

३०२. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

वर्धागंज
१६ अक्तूबर, १९३७

मुझे प्रसन्नता है कि नरीमान-सरदार प्रकरणके सम्बन्धमे मैं और डी० एन० बहादुरजी स्वतन्त्र रूपसे जिस निर्णयपर पहुँचे थे उस निर्णयके बजाय मैं श्री के० एफ० नरीमानका वक्तव्य[1] जनताके सामने रख रहा हूँ। यह कार्य, जिसका मैंने और मेरी इच्छा व आग्रहपर डी० एन० बहादुरजीने बीड़ा उठाया था, बहुत कष्ट-कर था। यदि वे इस कार्यमें अपना बहुमूल्य सहयोग न देते और उन्होंने जो असा-धारण परिश्रम किया है वह न करते तो इस समय मेरा जैसा स्वास्थ्य है, उसे देखते हुए इस बोझके कारण मैं शायद खाट पकड़ लेता। मेरे सामने जो प्रमाण पेश किये गये वे विस्तृत थे। मैं उनका एक-एक वाक्य पढ़ गया, किन्तु बहादुरजीने, जिन्हें

१. देखिए परिशिष्ट ६।

मैंने ये सारे कागजात सौंप दिये थे, उस मोटे पुलिन्देकी न केवल एक-एक पंक्तिको पढ़ा बल्कि उसपर लम्बी टिप्पणियाँ भी तैयार कीं; १९३४ के चुनावके पेचीदा मामलेके विषयमें कानूनका अध्ययन किया और उन्होंने मुझसे बिलकुल स्वतन्त्र रूपसे उपयुक्त निर्णय तैयार किया। इसमें तथ्यों और तर्कोंको बहुत बारीकीसे और संक्षिप्त रूपमें पेश किया गया है, फिर भी यह पूरे १४ पृष्ठोंमें दिया गया है। यह उनकी मेहरबानी थी कि वे उक्त निर्णयको लेकर सेगाँव आये और बृहस्पतिवारको पूरा दिन मेरे साथ रहे। फिर मैंने अपनी सहमति देते हुए एक टिप्पणी[1] लिखी। मुझे आशा थी कि उस दिन श्री के० एफ० नरीमान भी हमारे साथ होंगे, किन्तु वे न आ सके। इसपर मैंने यह सुझाव दिया कि बम्बई लौटकर बहादुरजी श्री नरीमानको बुलाकर अपना निर्णय तथा मेरी टिप्पणी दिखा दें। यदि श्री नरीमान उस निर्णय और मेरी टिप्पणी दोनोंको सही मानकर स्वीकार कर लेते हैं और स्वयं एक वक्तव्य प्रकाशित करते हैं तो हम सिर्फ दोनों पक्षोंको अपने निर्णयकी प्रतियाँ दे देंगे, लेकिन उसे जनताके सम्मुख रखने के बजाय श्री नरीमानके वक्तव्यको प्रकाशित होने देंगे। मेरा सुझाव बहादुरजीको जँच गया। बृहस्पतिवारकी रातको मैंने महादेव देसाईको अपनी टिप्पणियाँ देकर बहादुरजी तथा श्री नरीमानसे मिलने बम्बई भेजा। श्री नरीमान अपने वकीलको साथ लेकर बहादुरजीके कार्यालय गये और हमारा निर्णय पढ़ा और मुझे इस बातपर बहुत खुशी हो रही है कि मैं जनताके सम्मुख उनके वक्तव्यको रख सका हूँ। मुझे पूरी उम्मीद है कि जनता और समाचारपत्र उस अप्रिय और अशोभनीय विवादको भूल जायेंगे जिसने बम्बईकी सार्वजनिक प्रवृत्तियोंको, सामान्यतया उनमें जो उत्साह और आनन्द देखने को मिलता रहा है, उससे रिक्त कर दिया था। श्री नरीमानने विचारपूर्वक और पूरे हृदयसे जो स्वीकारोक्ति की है, उसके लिए मैं उन्हें धन्यवाद देता हूँ। बहादुरजीने लोकसेवाकी आत्यन्तिक कर्त्तव्य-भावनासे तथा मेरे प्रति अविचल प्रेमसे प्रेरित होकर इस कार्यमें मुझे जो योगदान दिया है उसके लिए मैं उनका हृदयसे आभारी हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १७-१०-१९३७

१. देखिए २५७-५९

२०३. स्वावलम्बी शिक्षा

सरकारका अर्थ सात प्रान्तोंमें कांग्रेस-सरकार समझना चाहिए। पर कांग्रेस-सरकार बन गई, इसलिए यह मानने का कोई कारण नहीं है कांग्रेसी विचारधारा के लोगोंका मन एकाएक वदल जायेगा। यद्यपि कांग्रेसका रचनात्मक कार्यक्रम १९२० के महापरिवर्तन कालसे चलता आ रहा है, तो भी यह नहीं कहा जा सकता कि इसके लिए कांग्रेसियोंमें जीवन्त वातावरण तैयार हो गया है। फिर जो लोग कांग्रेससे बाहर हैं, उनके बारेमें तो कहना ही क्या? यद्यपि संहारक (यदि अहिंसक कार्यक्रममें इस विशेषणका उपयोग करना अनुचित न हो तो) या निषेधात्मक कार्यक्रम जितना लोकप्रिय बना, उतना रचनात्मक अथवा उत्पादक कार्यक्रम नहीं बन सका, तथापि कांग्रेस उसे १९२० से सहन करती आ रही है। कांग्रेसने उसे कभी रद नहीं किया और उसे अच्छी संख्यामें कांग्रेसजनोंने अपना लिया है; इससे इस क्षेत्रमें जो-कुछ हो सका है, वह कांग्रेसवालोंसे ही हो सका है और प्रगति होने की आशा भी जहाँ कांग्रेस-सरकार बनी है, वहीं रखी जा सकती है। लेकिन कांग्रेस-सरकार बन गई, इसलिए रचनात्मक कार्यमें श्रद्धा रखनेवाले सुस्त न हो जायें, गफलतमें न रहें। कांग्रेस-सरकार बनने से उनका धर्म अधिक जाग्रत, अधिक उद्यमी और अधिक [illegible] बनना है। और जब ऐसा होगा तभी कांग्रेस सरकारसे की जानेवाली आशा फलीभूत होगी। कांग्रेस-सरकारका अर्थ है, जनताके प्रति जिम्मेदार लोकतन्त्र सरकार। इस सरकार को यदि जनता आज हटाना चाहे तो हटा सकती है। जनताकी इच्छा और सत्ता पर ही यह सरकार निर्भर है। इसलिए कांग्रेसी लोग चाहें तो रचनात्मक कार्यक्रम को स्वीकार भी कर सकते हैं और उसपर अमल भी करा सकते हैं, और यह कार्यक्रम तभी सम्पन्न भी हो सकता है। सरकारके पास स्वतन्त्र ताकत यानी तलवार की ताकत नहीं है। उसका कांग्रेसने इच्छापूर्वक त्याग किया है। यह ताकत तो ब्रिटिश सरकारके पास है। जब कांग्रेस-सरकारको ब्रिटिश सत्ताका यानी तलवारकी ताकतका उपयोग करना पड़े, तब समझना चाहिए कि तिरंगा झण्डा नीचे गिर गया। कांग्रेस-सरकारको उस दिनसे खत्म हुआ समझना चाहिए। लेकिन यदि लोग कांग्रेसकी अर्थात् कांग्रेस-सरकारकी बात नहीं मानेंगे या उनमें अहिंसाका प्रवेश नहीं होगा, तो आज तेजस्वी लगनेवाली सरकार कल निस्तेज हो जायेगी।

अतः रचनात्मक कार्यक्रममें श्रद्धा रखनेवाले कांग्रेसी सावधान ही हो जायें। मेरा पेश किया हुआ शिक्षाक्रम भी रचनात्मक कार्यका ही एक बड़ा अंग है। जो रूप उसे मैं आज दे रहा हूँ, उसे कांग्रेसने अपना लिया है, यह कहने का मेरा आशय नहीं है। पर मैं जो लिख रहा हूँ, वह १९२० से राष्ट्रीय शालाओंके सम्बन्धमें जो-कुछ मैंने

कहा है या लिखा है, यह उसके मूलमें ही निहित था। आज समय आने पर वह मेरे सामने एकाएक प्रकट हुआ है, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है।

अब यदि प्राथमिक शिक्षा उद्योग द्वारा ही देनी है, तो यह काम फिलहाल तो खासकर चरखे और दूसरे ग्रामोद्योगोंके बारेमें विश्वास रखनेवालों के द्वारा ही हो सकता है; क्योंकि ग्रामोद्योगोंमें मुख्य वस्तु चरखा है। चरखा उद्योगके बारेमें चरखा संघने काफी जानकारी प्राप्त कर ली है और दूसरे उद्योगोंके बारेमें ग्रामोद्योग संघ जानकारी प्राप्त कर रहा है। इसलिए मुझे लगता है कि इस सम्बन्धमें जो तात्कालिक व्यवस्था की जा सकती है, वह चरखे आदि ग्रामोद्योगों द्वारा ही की जा सकती है। पर जिनको चरखेमें श्रद्धा है, वे सब शिक्षक नहीं होते। हरएक बढ़ई बढ़ईगिरीका शास्त्री नहीं होता। जो व्यक्ति उद्योगका शास्त्र नहीं जानता, वह उद्योगकी सामान्य शिक्षा नहीं दे सकता। इसलिए जिन लोगोंको शिक्षाशास्त्रमें दिलचस्पी है और चरखे इत्यादि-में दिलचस्पी है, वे लोग ही प्राथमिक शिक्षामें मेरा सुझाया हुआ क्रम लागू कर सकते हैं। मेरे पास आया हुआ श्री दिलखुश दीवानजीका पत्र ऐसे लोगोंकी मदद करेगा, यह मानकर उसे नीचे दे रहा हूँ।[1]

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १७-१०-१९३७

३०४. एक श्रेष्ठ हरिजन-सेवकका देहान्त[2]

हरिजन-आन्दोलनके इतनी तेजीसे शुरू होने के पहलेसे ही मैं मणिलाल कोठारीको जानता था। और जब मेरा उनसे परिचय हुआ तभी मैंने यह देख लिया था कि उनमें छूतछातकी जरा भी गन्ध नहीं है। हरिजनोंकी सहायता करते हुए जो जोखिम उठानी चाहिए उसे उठाने को वे हमेशा तत्पर रहते थे। यदि यह कहा जाये कि अच्छे कार्योंके लिए पैसा इकट्ठा करने की उनमें लगभग अद्वितीय शक्ति थी, तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। उनमें यों तो बहुत-सी शक्तियाँ थीं, लेकिन पारमार्थिक कार्योंके लिए धन-संग्रह करने की उनमें जो शक्ति थी, उसके लिए तो लोग उन्हें हमेशा याद करेंगे। हरिजन-सेवाके लिए उन्होंने प्रचुर धन इकट्ठा किया था, और इस बातके लिए मुझसे हामी भरी थी कि यदि वे अच्छे हो गये तो मुझे जितना पैसा चाहिए उतना वे ला देंगे। चन्दा इकट्ठा कर देने के लिए जहाँ-तहाँसे उनके पास माँगें आती ही रहती थीं। मणिलाल उत्कट लगनवाले आदमी थे। कोई भी पारमार्थिक काम हो, वह उन्हें अपनी तरफ खींच सकता था। सेवा करने का उनका

१. अनुवाद यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र-लेखक पिछले दो वर्षोंसे उद्योगपर आधारित एक छोटा-सा स्कूल चला रहे थे। उन्होंने अपने अनुभवके आधारपर गांधीजी के प्राथमिक शिक्षा-सम्बन्धी विचारोंका पूर्ण समर्थन किया था।

२. यह "नोंध" (टिप्पणियाँ) शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

लोभ उन्हें चाहे जिस जोखिममें उतार सकता था। उनकी कमी उनके कुटुम्बको तो खटकेगी ही, हरिजनोंको भी खटकेगी; लेकिन इसमें सन्देह नहीं कि अन्य अनेक सेवा-क्षेत्रोंमें भी उनके अभावको बहुत समयतक महसूस किया जायेगा।

ईश्वर उनकी आत्माको शान्ति प्रदान करे।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १७-१०-१९३७

३०५. पत्र: किर्बी पेजको

सेगाँव, वर्धा, म० प्रा०
१७ अक्तूबर, १९३७

प्रिय मित्र,

भक्ति-साहित्यके अपने संग्रहमें आप एन्ड्रयूजकी रचनाओंके अंशोंको पुष्कल प्रमाणमें शामिल कर रहे हैं, इस बातसे मुझे बड़ी खुशी हुई। क्योंकि चार्ली एन्ड्रयूज परम श्रद्धालु और प्रार्थनाशील व्यक्ति हैं। वे सच्चे ईसाई हैं, लेकिन उनका ईसा किसी संकीर्ण सम्प्रदायका ईसा नहीं है। उनका ईसा सम्पूर्ण मानवताका ईसा है। वे उसके दर्शन रामकृष्णमें करते हैं, चैतन्यमें करते हैं तथा अन्य बहुत-से धर्मगुरुओंमें भी करते हैं, जो ईसाई धर्मसे इतर धर्मोंसे सम्बद्ध हैं। हम भारतवासी उन्हें बहुत अच्छी तरह जानते हैं — उन्हें दीनबन्धु कहते हैं। हमारी मैत्री बहुत पुरानी है, हम सगे भाइयोंकी तरह हैं। हम दोनोंका कुछ भी एक-दूसरेसे छिपा हुआ नहीं है। चार्लीमें बच्चेकी सरलता है। क्षमाशील और उदार तो इतने हैं कि इन गुणोंके अतिरेकको उनका एक दोष कहा जा सकता है। स्नेही और प्यारे ऐसे हैं मानों कोई पवित्रताकी प्रतिमूर्ति स्त्री हों। उन्हें विनोदपूर्वक अर्धनारीश्वर कहता हूँ, लेकिन वास्तवमें उन्हें मानता भी वैसा ही हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री किर्बी पेज
ला हैब्रा
केलीफोर्निया

अंग्रेजीकी नकल से। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

कहा है या लिखा है, यह उसके मूलमें ही निहित था। आज समय आने पर वह मेरे सामने एकाएक प्रकट हुआ है, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है।

अब यदि प्राथमिक शिक्षा उद्योग द्वारा ही देनी है, तो यह काम फिलहाल तो खासकर चरखे और दूसरे ग्रामोद्योगोंके बारेमें विश्वास रखनेवालों के द्वारा ही हो सकता है; क्योंकि ग्रामोद्योगोंमें मुख्य वस्तु चरखा है। चरखा उद्योगके बारेमें चरखा संघने काफी जानकारी प्राप्त कर ली है और दूसरे उद्योगोंके बारेमें ग्रामोद्योग संघ जानकारी प्राप्त कर रहा है। इसलिए मुझे लगता है कि इस सम्बन्धमें जो तात्कालिक व्यवस्था की जा सकती है, वह चरखे आदि ग्रामोद्योगों द्वारा ही की जा सकती है। पर जिनको चरखेमें श्रद्धा है, वे सब शिक्षक नहीं होते। हरएक बढ़ई बढ़ईगिरीका शास्त्री नहीं होता। जो व्यक्ति उद्योगका शास्त्र नहीं जानता, वह उद्योगकी सामान्य शिक्षा नहीं दे सकता। इसलिए जिन लोगोंको शिक्षाशास्त्रमें दिलचस्पी है और चरखे इत्यादि-में दिलचस्पी है, वे लोग ही प्राथमिक शिक्षामें मेरा सुझाया हुआ क्रम लागू कर सकते हैं। मेरे पास आया हुआ श्री दिलखुश दीवानजीका पत्र ऐसे लोगोंकी मदद करेगा, यह मानकर उसे नीचे दे रहा हूँ।[१]

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १७-१०-१९३७

३०४. एक श्रेष्ठ हरिजन-सेवकका देहान्त[२]

हरिजन-आन्दोलनके इतनी तेजीसे शुरू होनेके पहलेसे ही मैं मणिलाल कोठारीको जानता था। और जब मेरा उनसे परिचय हुआ तभी मैंने यह देख लिया था कि उनमें छूतछातकी जरा भी गन्ध नहीं है। हरिजनोंकी सहायता करते हुए जो जोखिम उठानी चाहिए उसे उठानेको वे हमेशा तत्पर रहते थे। यदि यह कहा जाये कि अच्छे कार्योंके लिए पैसा इकट्ठा करनेकी उनमें लगभग अद्वितीय शक्ति थी, तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। उनमें यों तो बहुत-सी शक्तियाँ थीं, लेकिन पारमार्थिक कार्योंके लिए धन-संग्रह करनेकी उनमें जो शक्ति थी, उसके लिए तो लोग उन्हें हमेशा याद करेंगे। हरिजन-सेवाके लिए उन्होंने प्रचुर धन इकट्ठा किया था, और इस बातके लिए मुझसे हामी भरी थी कि यदि वे अच्छे हो गये तो मुझे जितना पैसा चाहिए उतना वे ला देंगे। चन्दा इकट्ठा कर देनेके लिए जहाँ-तहाँसे उनके पास माँगें आती ही रहती थीं। मणिलाल उत्कट लगनवाले आदमी थे। कोई भी पारमार्थिक काम हो, वह उन्हें अपनी तरफ खींच सकता था। सेवा करनेका उनका

१. अनुवाद यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र-लेखक पिछले दो वर्षोंसे उद्योगपर आधारित एक छोटा-सा स्कूल चला रहे थे। उन्होंने अपने अनुभवके आधारपर गांधीजी के प्राथमिक शिक्षा-सम्बन्धी विचारोंका पूर्ण समर्थन किया था।

२. यह "नोंध" (टिप्पणियाँ) शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

लोभ उन्हें चाहे जिस जोखिममें उतार सकता था। उनकी कमी उनके कुटुम्बको तो खटकेगी ही, हरिजनोंको भी खटकेगी; लेकिन इसमें सन्देह नहीं कि अन्य अनेक सेवा-क्षेत्रोंमें भी उनके अभावको बहुत समयतक महसूस किया जायेगा।

ईश्वर उनकी आत्माको शान्ति प्रदान करे।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १७-१०-१९३७

३०५. पत्र : किर्बी पेजको

सेगाँव, वर्धा, म० प्रा०
१७ अक्तूबर, १९३७

प्रिय मित्र,

भक्ति-साहित्यके अपने संग्रहमें आप एन्ड्रयूजकी रचनाओंके अंशोंको पुष्कल प्रमाण-में शामिल कर रहे हैं, इस बातसे मुझे बड़ी खुशी हुई। क्योंकि चार्ली एन्ड्रयूज परम श्रद्धालु और प्रार्थनाशील व्यक्ति हैं। वे सच्चे ईसाई हैं, लेकिन उनका ईसा किसी संकीर्ण सम्प्रदायका ईसा नहीं है। उनका ईसा सम्पूर्ण मानवताका ईसा है। वे उसके दर्शन रामकृष्णमें करते हैं, चैतन्यमें करते हैं तथा अन्य बहुत-से धर्मगुरुओंमें भी करते हैं, जो ईसाई धर्मसे इतर धर्मोंसे सम्बद्ध हैं। हम भारतवासी उन्हें बहुत अच्छी तरह जानते हैं — उन्हें दीनबन्धु कहते हैं। हमारी मैत्री बहुत पुरानी है, हम सगे भाइयोंकी तरह हैं। हम दोनोंका कुछ भी एक-दूसरेसे छिपा हुआ नहीं है। चार्लीमें बच्चेकी सरलता है। क्षमाशील और उदार तो इतने हैं कि इन गुणोंके अतिरेकको उनका एक दोष कहा जा सकता है। स्नेही और प्यारे ऐसे हैं मानों कोई पवित्रताकी प्रतिमूर्ति स्त्री हों। उन्हें विनोदपूर्वक अर्धनारीश्वर कहता हूँ, लेकिन वास्तवमें उन्हें मानता भी वैसा ही हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री किर्बी पेज
ला हैब्रा
केलीफोर्निया

अंग्रेजीकी नकल से। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

३०६. पत्र : प्रभावतीको

सेगाँव, वर्धा
१७ अक्तूबर, १९३७

चि० प्रभा,

३१ तारीखको सेगाँवमें तेरा इन्तजार किया जायेगा — मैं वहाँ न पहुँचा तब भी। १-२ तारीख तक तो मैं अवश्य पहुँच जाऊँगा। सेगाँव वापस आये बिना, सीमा-प्रान्त जाना नहीं होगा।

तू जितना वजन खो चुकी है, यहाँ उसे फिरसे प्राप्त करना है। जयप्रकाशकी अनुमति — यहाँ रहने के लिए — ले लेना। यहाँ सर्दी शुरू हो गई है। रातको ओढ़नेके लिए कुछ-न-कुछ अवश्य ले आना, नहीं तो तेरा जो कम्बल मेरे पास है वह तुझे वापस मिल जायेगा। लेकिन अब तो वह काफी पुराना हो गया है।

चिमनलाल अच्छा हो गया है; हालाँकि अबी भी वह बिस्तर में पड़ा है। प्यारेलालकी बहन सुशीला यहीं है। सुरेन्द्र भी कल आया। आज प्रेमा[1] आ रही है। जब तू आयेगी तब ये सभी लोग जा चुके होंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५०८) से।

३०७. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

वर्धा
१७ अक्तूबर, १९३७

अंडमानके कैदियोंको भुलाया नही जा सकता। मैंने उनको रिहा करवाने के लिए एड़ी-चोटीका जोर लगाने का जो वचन दिया था उसकी याद दिलाने के लिए मुझे तीन प्रान्तोंसे तीन पत्र मिले हैं। इनमें कहा गया है कि अंडमानसे आये हुए कैदियोंकी दशा वहाँसे भी वदतर है तथा उनके जल्द ही रिहा होने की कोई आशा नहीं दिखती, और यदि रिहाई न हुई तो उन्हें अपने एकमात्र शस्त्रका सहारा लेना पड़ेगा, अर्थात् भूख-हड़ताल करनी पड़ेगी। मैं आशा करता हूँ कि जबतक वे यह जानते हैं कि जनता उनके कल्याणके प्रति उदासीन नहीं है तबतक वे भूख-हड़तालका सहारा नहीं लेंगे। जहाँतक मेरा सवाल है, मैं उन्हें यह विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि मैं इस विषयमें निष्क्रिय नहीं बैठा हूँ। और मैं जनता तथा समाचार-पत्रोंसे अनु-

१. प्रेमाबहन कंटकको।

रोध करूँगा कि वे इस अत्यन्त आवश्यक मामलेके प्रति जागरूक रहें। मैं प्रान्तीय सरकारोंसे भी अपील करूँगा कि वे इन बन्दियोंके साथ वैसा ही व्यवहार करें जैसे व्यवहारकी राष्ट्र उनसे अपेक्षा करता है। प्रान्तीय सरकारें, जो अब ऐसे मामलोंमें जनताके प्रति उत्तरदायी हैं, लोकमतकी उपेक्षा न करें। मुझे उम्मीद है कि इस सबन्धमें कांग्रेस तथा अन्य संस्थाओंमें कोई मतभेद नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

अमृत बाजार पत्रिका, १८-१०-१९३७

३०८. पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
१८ अक्तूबर, १९३७

प्रिय अस्पृश्या,

कुछ लोग ऐसे होते हैं जो उपाधियोंके लिए धीरजके साथ प्रतीक्षा कर सकते हैं और उनके पास उपाधियाँ अपने-आप चलकर जाती है। तुम्हारे अन्दर धीरज है ही नहीं, इसलिए तुम्हारी उपाधियाँ सामान्यतः सटीक ही होती हैं। केवल पहली उपाधि ही ठीक नहीं थी। तुम्हें विद्रोहिणी कौन कहेगा? मैं तो नही कहूँगा। मूर्खा अवश्य कहूँगा। लेकिन मैं भूल गया। वह उपाधि तो तुम्हें प्रदान की गई थी। तुमने खुशीसे उसे स्वीकार भी किया था। अस्पृश्या तुम हो, जैसाकि राजवंशके सभी लोग हैं। पता नहीं, तुम अगली उपाधि क्या चुनोगी।

आज मैं इत्मीनानमें हूँ। ज्यादा लिखाई-विखाई करने के बजाय मैं नींद ले रहा हूँ। लेख मैंने पिछली रातको ही लिख डाला था।

मुझे याद नहीं पड़ता कि कोई प्रश्न अनुत्तरित रहा हो। एक पत्रका कुछ भाग मैंने रख लिया है, लेकिन उसे निकालने मे आलस लग रहा है।

रामेश्वरीका काठियावाड़का दौरा बहुत अच्छा रहा। उसके विवरणात्मक पत्र सब बहुत अच्छे हैं। इन पत्रोंकी हिन्दी अत्यन्त सुपाठ्य है। मुझे जिन लोगोंने पत्र लिखे हैं उन्होंने उसकी बहुत तारीफ की है। उसका दौरा अब लगभग समाप्त हो चुका है।

नरीमानकी स्वीकारोक्ति तुमने देखी ही होगी।

सभी मरीज ठीक हैं।

स्नेह।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८२३) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९७९ से भी

३०९. पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव
दिनके साढ़े चार बजे, १८ अक्तूबर, १९३७

मूर्खा रानी,

मैं आज तुम्हें यह दूसरा पत्र लिख रहा हूँ। यह पत्र, हिन्दीमें तुमने जो प्रगति की है, उसके सम्बन्धमें तुम्हें बधाई देने के लिए है। मेरे पास तुम्हारा हिन्दीमें लिखा जो पत्र आया है उससे पता चलता है कि तुम इस दिशामें खूब तरक्की कर रही हो। शीघ्र ही तुम्हारी शैली भी प्रांजल हो जायेगी। तुम्हें नियमपूर्वक रामायण पढ़नी चाहिए और हो सके तो हिन्दी अखबार भी पढ़ना चाहिए। लेकिन यदि अखबार न पढ़ो तो कोई हर्ज नहीं। अंग्रेजीमें शेक्सपीयरका जो महत्त्व है वही हिन्दीमें तुलसीदासका है। इसलिए अगर तुम केवल तुलसीदास ही पढ़ो तो भी मुझे सन्तोष होगा। बेशक, तुम्हें व्याकरणकी एक अच्छी पुस्तकका अध्ययन भी जरूर करना चाहिए।

हाँ, शम्मीकी बातका विरोध न करो और अगर उसे इससे खुशी मिलती है तो वह तुम्हें जबतक रोकना चाहता है तबतक वहीं रहो।

तुम वहाँ अपना भाषण[1] भी खूब चैनके साथ तैयार कर सकोगी। भाषण मौलिक और संक्षिप्त होना चाहिए और उसमें इधर-उधरकी बातें नहीं होनी चाहिए। तुम अपने विषयसे भटकना नहीं। अतीतमें जो काम किया है उसका ज्यादा बखान मत करना, बल्कि भविष्यके कार्यक्रमपर ध्यान देना। यह कार्यक्रम साहसपूर्ण, सार्वजनीन और रचनात्मक होना चाहिए। लेकिन इन सब बातोंके अलावा कार्यक्रम व्यावहारिक होना चाहिए और ऐसा होना चाहिए कि उसे गाँवोंपर लागू किया जा सके और फिर भी तुम्हारी संस्थाकी सदस्याएं उसपर अमल कर सकें। वे गाँवोंमें जाकर काम नहीं करेंगी, लेकिन गाँवोंके लिए तो काम कर सकती हैं। क्या यह एक अच्छा पत्र नहीं है?

स्नेह।

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६११) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६४२८ से भी

१. नागपुरमें होनेवाले अखिल भारतीय महिला सम्मेलनके लिए अध्यक्षीय भाषण।

३१०. पत्र : विजया एन० पटेलको

सेगाँव
१८ अक्तूबर, १९३७

चि० विजया,

तुम्हारे पोस्टकार्डके बाद और कोई पत्र नहीं आया। ऐसा क्यों? मृदुलाबहनने[१] तुम्हारी माँग की है। मैंने लिखा है कि यदि तुम शामिल होने के लिए राजी हो तो मैं नही रोकूँगा, किन्तु जबरदस्ती नहीं करूँगा। कदाचित् वह तुमसे मिली भी होगी। प्रेमाबहन कल आई। सारे मरीज अच्छे है।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती विजयाबहन
मार्फत —— नारणभाई पटेल
वारोड, बारडोली तालुका
ताप्ती वैली रेलवे

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७०७४) से। सी० डब्ल्यू० ४५६६ से भी; सौजन्य : विजयाबहन एम० पंचोली

३११. पत्र : महादेव देसाईको

१८ अक्तूबर, १९३७

चि० महादेव,

बलवन्तसिंहके बारेमें देखूँगा।

आज तो मैं आराम ही कर रहा हूँ। और भी लिखना चाहता हूँ, मगर शायद न लिख पाऊँ। फिर भी तुम्हें सामग्रीकी कमी तो नही होगी। शारदा यहाँ हमारे पास जो गाड़ी है उसमें आयेगी। उसीमें उसे कल वापस भेज देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५७९) से।

१. मृदुला साराभाई।

३१२. पत्र : द० बा० कालेलकरको

१८ अक्तूबर, १९३७

चि० काका,

तीनोंको[1] बुला तो लेना ही। उन्हें दाखिल कर लेंगे। गोपालरावके बारेमें बात तो मुझे भी पसन्द आई है। लेकिन तुमने ठीक लिखा है। मैं नायकम्को लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

वोराके सुझावको मान लेना। आर्मस्ट्राँगके[2] बारेमें मैंने पहले पढ़ा है। उसका उपयोग करूँगा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७७०७) से।

३१३. पत्र : नारणदास गांधीको

[१८][3] अक्तूबर, १९३७ [के पश्चात्]

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला।

जो खादी तैयार हुई है, तुम उसका क्या करोगे?

शायद तुम्हारे पास नालवाड़ीका 'सेवावृत्त'[4] नहीं आता होगा; मैं आज भेज रहा हूँ। इसमें तुम तकलीके आश्चर्यजनक आँकड़े देखोगे।

रामेश्वरीबहनका पत्र आया था। वह हिन्दीमें पत्र लिख सकती है। वहाँ [सौराष्ट्र]की यात्राके बारेमें मुझे कल उसका चौथा पत्र मिला। उसने अपनी पूरी यात्राका वर्णन लिखा है। यह सारा वर्णन दिलचस्प और पढ़ने योग्य है।

१. हाशियेमें यह टिप्पणी लिखी हुई है: "ये तीन कौन हैं? एक तो गोपालराव है; अन्य दो कौन हैं? तीनोंके नाम नायकम्जी को भेजना।"

२. हेम्पटन संस्थानके संस्थापक जनरल आर्मस्ट्राँग; देखिए "भाषण: शिक्षा-परिषद्में-१," पृ० २९३-२९८।

३. रामेश्वरी नेहरूकी सौराष्ट्र-यात्राके उल्लेखके आधारपर; देखिए "पत्र: अमृतकौरको", पृ० २८१।

४. ग्रामसेवावृत्ति।

नानालाल यहाँ आ गया था। उसने भी तुम्हारे कामकी बहुत प्रशंसा की।

मैं आजकल शिक्षापर जो लेख लिख रहा हूँ उनको देखते हुए जो परिवर्तन किये जा सकते हों, सो करना। क्या तुम उनमें से कुछ चीजें बाल-मन्दिरके लिए लेना उचित समझते हो? बाल-मन्दिरके बच्चोंकी उम्र क्या है?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मैंने तुम्हें यहाँ आने के लिए तार दिया है।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५४२ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

२१४. पत्र : अमृतकौरको

१९ अक्तूबर, १९३७

प्रिय विद्रोहिणी,

मैं आजकल ज्यादातर मौन ही रहता हूँ, जिससे मैं २२ और २३ तारीखको ताजगी महसूस कर सकूँ। और चूँकि मैं दाहिना हाथ चला ही रहा हूँ, इसलिए सोचा, तुमको भी दो-चार पंक्तियाँ लिख डालूँ।

संलग्न पत्रसे देखोगी कि सर जोगेन्द्र करीब आते जा रहे हैं। चाहो तो पत्रको बेशक फाड़ डालना। मैं प्रस्तावना नहीं लिख रहा हूँ, लिखना उचित भी नहीं।

तुमने चार्लीके बारेमें मुझे जो समाचार दिया है वह बुरा है। यदि तुम मेरे सम्पर्कमें आनेवाले सभी व्यक्तियोंके — जिनमें मूर्ख, विद्रोही, अस्पृश्य तथा और भी कई तरहके लोग शामिल हैं — दोषोंके लिए मुझे जिम्मेदार ठहराओगी तो तुम्हें मुझमें और भी कमियाँ दिखाई देंगी।

मेरा खयाल है, तुम्हारे महमूदाबादको[1] पत्र लिखने से कोई फायदा नहीं। इस तरह कीचड़ उछालने का क्या परिणाम होगा सो ईश्वर ही जाने।

स्नेह।

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८२४) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९८० से भी

१. महमूदाबादके नवाब।

३१५. पत्र: मुहम्मद अली जिन्नाको

सेगाँव, वर्धा
१९ अक्तूबर, १९३७

प्रिय मित्र,

मैंने आपके लखनऊके भाषणको[1] ध्यानपूर्वक पढ़ा है, और मेरे दृष्टिकोणको लेकर आपको जो गलतफहमी हुई है उससे मेरे मनको बहुत आघात पहुँचा है। मेरा पत्र[2] आपके भेजे हुए एक विशेष गुप्त सन्देशके उत्तरमें था। उसमें मैंने अपने हृदयकी गहनतम भावनाओंको अभिव्यक्त किया था। वह पत्र तो बिलकुल व्यक्तिगत था। उसका आपने जैसा उपयोग किया, क्या वह उचित था?

निस्सन्देह आपका पूरा भाषण, जैसाकि मैं समझ पाया हूँ, युद्धकी घोषणा है। मैंने तो यह उम्मीद की थी कि आप मुझ गरीबको दोनों पक्षोंके बीच सेतुके रूपमें मानेंगे। मैं देखता हूँ कि आपको ऐसे किसी सेतुकी जरूरत नहीं, और मुझे इसका खेद है। झगड़ा हमेशा दो पक्षोंके बीच होता है और आप देखेंगे कि चाहे मैं शान्ति स्थापित न कर सकूँ, लेकिन मैं झगड़ा करनेवालों में से नहीं हूँ।

वैसे तो यह पत्र प्रकाशनके लिए नहीं है, लेकिन आपकी इच्छा प्रकाशित करनेकी ही हो तो बात और है।[3] यह सब मैं पूरे सद्भावके साथ और दुःखी मनसे लिख रहा हूँ।[4]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १६-६-१९३८

१. १५ से १८ अक्तूबर तक होनेवाले अखिल भारतीय मुस्लिम लीगके पच्चीसवें अधिवेशनके सभापति-पदसे दिया गया भाषण; देखिए परिशिष्ट ७ (क)।

२. देखिए खण्ड ६५, "पत्र: मु० अ० जिन्नाको", पृ० २४५।

३. गांधी-जिन्ना पत्र-व्यवहार १५-६-१९३८ को प्रकाशनके लिए प्रेस-प्रतिनिधियोंको दिया गया था।

४. जिन्नाके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट ७ (ख)।

३१६. पत्र : परीक्षितलाल एल० मजमूदारको

सेगाँव, वर्धा
१९ अक्तूबर, १९३७

भाई परीक्षितलाल,

गिडवानी-स्मारक-कोषका सदुपयोग ही हुआ है। और अब धनतेरसके दिन भंगी विद्यार्थी-निवासके उद्‌घाटनकी क्रिया आचार्य श्री आनन्दशंकरभाईके[1] कर-कमलोंसे सम्पन्न होगी। छात्रावासके लिए इस बातको मै शुभ लक्षण मानता हूँ। मैं आशा करता हूँ कि खेड़ाके निवासी इस छात्रावासको अपना लेगे और उसको अनेक प्रकारसे प्रोत्साहन देते रहेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९६५) से।

३१७. पत्र : महादेव देसाईको

१९ अक्तूबर, १९३७

चि० महादेव,

आनन्दशंकरभाईकी पाण्डुलिपि मैं फिरसे पढ़ गया हूँ। इसमें मैंने जो संशोधन-परिवर्धन किये हैं, उन्हें एक नजर देख जाना। इसके बारेमे यदि तुम्हें कोई सुझाव न देना हो तो एक अच्छे कागजमे लपेटकर इसे रजिस्टर्ड बुकपोस्टसे रवाना कर देना। पत्र भी इसके साथ है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५८१) से।

१. आनन्दशंकर बापूभाई ध्रुव।
२. यह उपलब्ध नहीं है।

३१८. पत्र : ठाकोरदास नानावटीको

१९ अक्तूबर, १९३७

भाई ठाकोरदास,

चि० अमृतलालको ऐसा कोई रोग नहीं है जिसके लक्षण बाहरसे दिखाई पड़ें। वह काम-काज करता है, बुखार बिलकुल नहीं है। लेकिन वजन नहीं बढ़ता। घी-दूध ठीक मात्रामें लेता है। वहाँसे आने के समय उसका जो वजन था उसमें से कुछ खोया ही है। शक्ति अलबत्ता वहाँकी अपेक्षा बढ़ गई है। चिन्ता करने का तो कोई भी कारण नहीं है। वहाँ जाने के लिए तो मैंने अनेक बार कहा है लेकिन उसका जाने का मन ही नहीं करता, इसलिए मैं उसके साथ जबरदस्ती नहीं करता। अतः अमृतलालने तुम्हें जो लिखा सो झूठ नहीं था, तथापि मेरा मन कहता है कि उसने सभी तथ्य नहीं दिये। उसे तुम्हें वजन आदिके बारेमें सच-सच बताना चाहिए था। ऐसी बातोंको छिपाने से कोई फायदा नहीं होता। अलबत्ता सिर दुःखने-जैसी छोटी-मोटी बातें नहीं लिखी जानी चाहिए। तुम भी ऐसी हकीकतें तो नहीं माँगते। इतना सब लिखने के बाद मेरी तुमको यह सलाह है कि तुम चिन्ता न करना। चिन्ता करने का कतई कोई कारण नहीं है। वह जो करना चाहे सो करने देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७३९) से।

३१९. पत्र : डॉ० विलियम एच० टैंडीको[1]

सेगाँव, वर्धा
२० अक्तूबर, १९३७

प्रिय डॉ० टैंडी,

अस्पताल खोलने के बारेमें आपने आज मुझे अपनी योजना समझाने की कृपा की है। उससे यह मालूम होता है कि आप अस्पतालके साथ रोगियोंके परिवारके ठहरने के लिए भी मकानका प्रबन्ध करना चाहते हैं ताकि उनको रोगियोंके लिए खाना बनाने में सुभीता रहे। अस्पतालके कामके साथ मेरा जो-कुछ थोड़ा-बहुत संबंध रहा है उससे

१. यह पत्र मूलतः अंग्रेजीमें लिखा गया था, किन्तु रोगियों तथा उनके रिश्तेदारोंके लाभके लिए गांधीजी ने उसका हिन्दी अनुवाद भी साथमें भेज दिया था। हिन्दी अनुवादपर भी गांधीजी के हस्ताक्षर थे। यहाँ वही अनुवाद प्रस्तुत किया गया है।

मेरा यह अनुभव है कि इस प्रकार स्वतंत्र भोजन बनाने की व्यवस्था करना एक बुरी आदतको पुष्टि देना है। क्योंकि इस तरह बनाये हुए भोजनमें आम तौरपर डाक्टरी मशवरोंका ख्याल नहीं किया जाता। रिश्तेदार लोग अक्सर अपने प्रेमके वश होकर मुमानियतोंका भंग करते हैं, रोगीसे लाड़-प्यार करते हैं और इससे उसके अच्छा होने में रुकावट डालते हैं। कभी-कभी यह अंध-प्रेम रोगीके लिए घातक भी साबित होता है। इसलिए रोगियोंके हितको देखते हुए मेरी आपको यह सख्त हिदायत है कि जिस प्रकार आप अपने रोगियोंको मनपसंद दवाइयाँ लेने नहीं देंगे उसी प्रकार आप उनको व्यक्तिगत रूपसे भोजन बनवाने मे भी प्रोत्साहन न दें। अगर रोगियोंके साथ उनके रिश्तेदार भी आ जायें तो उनकी रोगियोंसे मुलाकात निश्चित समयपर और उचित मर्यादाओंके अनुसार ही होनी चाहिए।

मैं जानता हूँ कि बदकिस्मतीसे समाजमें ऐसी उच्च कहलानेवाली जातियाँ हैं जो खान-पानके विषयमें छुआछूत पालती हैं। मेरी रायमें आपको ऐसे वहमोंको आश्रय न देना चाहिये, खास तौरपर जबकि छुआछूतके कलंकका तेजीसे अन्त आ रहा है।

मेरी यह आपसे आशा है कि जो लोग किसी हालतमें भी मांस-मछली नहीं खाना चाहते उनके लिये आप एक चुस्त निरामिष भोजनालयका प्रबंध करेंगे।

आपका,
मो० क० गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४४४४) से। सौजन्य : डॉ० विलियम एच० टैंडी

३२०. पत्र : महादेव देसाईको

२० अक्तूबर, १९३७

चि० महादेव,

पट्टणीने[1] तो गजब कर दिया। मैं आज कुछ नहीं भेज रहा हूँ। टैंडी आ गये। हमने आधे घंटेमें [सारा काम] खत्म कर दिया। मुझे वे बहुत सज्जन जान पड़े। हाँ, आज मैं कुछ नहीं भेज रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५८२) से।

१. प्रभाशंकर पट्टणी।

३२१. पत्र: अमृतकौरको

सेगाँव
२०/२१ अक्तूबर, १९३७

प्रिय विद्रोहिणी,

तुम्हारा पत्र मिला।

मेरे पास रहने की इच्छाको तुम यों जीत सकती हो तो निर्धारित समयतक मेरे पास रहो और बाकी समय अन्यत्र। जिसका कोई इलाज नहीं उसको सहन तो करना ही पड़ता है।

ठंडे मौसममें तुम्हें अपने-आपको अच्छी तरह लपेटकर रखना चाहिए, चाहे फैशनकी दृष्टिसे उसमें तुम जितनी अटपटी दिखो। नमक या सोडाके साथ गरम पानी, अलसीके बीज और भापके बारेमें क्या विचार है?

यदि तुम आग्रह करती रही कि खुर्शेद तुम्हारे साथ रहे तो वह मान जायेगी।

तुमने लड़कियोंके बारेम जो-कुछ कहा सो मैं समझ गया हूँ। इस विषयपर मेरे अपने भी कुछ विचार ह, जिनकी चर्चा हम मिलने पर करेंगे।

आशा है, तुम्हारा जुकाम बिलकुल ठीक हो गया होगा।

अनसूया[1] और इन्दुमती[2] आज ही अहमदाबादसे यहाँ आई हैं। और भी कई लोग आये हैं।

स्नेह।

डाकू

[पुनश्च :]

तुम्हारा आजका पत्र मिला। यदि मुझे नागपुरसे कोई आमन्त्रण नहीं आया तो निश्चय ही तुम यह नहीं चाहोगी कि मैं केवल तुम्हारी खातिर वहाँ आऊँ। थोड़ा इन्तजार करो। वह आने मे अपना समय लेगा। इसमें जल्दबाजी न करो। हाँ, ग्रेस लंकास्टर तुम्हारी उपस्थितिमें यहाँ आयेगी। लेकिन 'यदि' क्यों कहें? तुम्हारे नागपुर जाने पर 'यदि'का प्रश्न कहाँ उठता है?

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८२५) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६९८१ से भी

१. अनसूया साराभाई, अहमदाबाद की मजदूर नेता।
२. इन्दुमती चिमनलाल सेठ।

३२२. पत्र : महादेव देसाईको

२१ अक्तूबर, १९३७

चि० महादेव,

तुमसे बन सके उतना ही काम करना। बीमार न पड़ना। जो मुसलमान भाई आ रहे हैं उन्हें काफी समय देना। मैंने शंकरलालसे भी कहा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५८३) से।

३२३. पत्र : सुभाषचन्द्र बोसको

[२२ अक्तूबर, १९३७ या उसके पूर्व][1]

मैं कलकत्ता जा सकूँ, इसके लिए अपने-आपको स्वस्थ रखने की कोशिश कर रहा हूँ और भगवानसे प्रार्थना भी कर रहा हूँ। मेरे वहाँ पहुँचने के बाद तुम्हें इस बातका ध्यान रखना होगा कि अंडमानके कैदियों और कार्य-समितिके सिलसिलेमें जो-कुछ करना पड़े उसके अलावा मुझे किसीसे मिलना-जुलना न पड़े, किसी और कार्यक्रममें शरीक न होना पड़े।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २२-१०-१९३७

१. यह रिपोर्ट दिनांक "वर्धा, २२ अक्तूबर" के अन्तर्गत छपी थी।

३२४. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

सेगाँव, वर्धा
२२ अक्तूबर, १९३७

चि० अम्बुजम,[१]

कितना अच्छा होता, अगर शिक्षा परिषद्के सिलसिलेमें तुम आज यहाँ होती! लेकिन यह कमलाकी खातिर लिखा गया है। अपनी माँ की खातिर मद्रास जाने की उसकी इच्छा नहीं है, लेकिन वह यह अवश्य चाहती है कि मैं ऐसी व्यवस्था करूँ जिससे उसकी माँ को अपनी गरीबीके कारण चिकित्साके बिना नहीं रहना पड़े। मैं चाहता हूँ कि तुम इसकी व्यवस्था करो और पता करो कि उसे सचमुच इसकी जरूरत है या नहीं। अगर जरूरत है तो जिस हदतक है उस हदतक उसकी सहायता करो। यह सब काम मैं तुम्हें यह मानकर सौंपता हूँ कि जितना तुम खर्च करोगी वह सब मुझसे ले लोगी।

हिन्दी प्रचारके निदेशकका क्या हुआ?

आशा है, तुम सब मजेमें हो। २५ को कलकत्ताके लिए रवाना होऊँगा। नवम्बरके आसपास लौटूँगा।

बापूके आशीर्वाद[२]

मूल अंग्रेजीसे: अम्बुजम्माल पेपर्स। सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३२५. पत्र : प्रभावतीको

२२ अक्तूबर, १९३७

चि० प्रभावती,

तेरा पत्र मिला। मैंने फाड़ डाला है। मैं ७ तारीखतक सीमा प्रान्त जा सकूँगा, यह कतई सम्भव नहीं है। मुझे उम्मीद है कि पहली अथवा दूसरी तारीखको मैं वर्धा अवश्य पहुँच जाऊँगा। इसलिए तू पूर्वनियोजित कार्यक्रमके अनुसार अवश्य आ जाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५०४) से।

१ और २. यह हिन्दी में है।

३२६. भाषण : शिक्षा-परिषद्में – १[1]

[२२ अक्तूबर, १९३७]

तमाम आमन्त्रित सज्जनोंको धन्यवाद देने के पश्चात् गांधीजी ने कहा कि मैं आप लोगोंके सामने परिषद्के अध्यक्षकी हैसियतसे उपस्थित होऊँ या एक सदस्यकी हैसियतसे, मैंने तो आप लोगोंको यहाँ आने का कष्ट इसलिए दिया है कि मैंने विचार करने के लिए जो मुद्दे[2] तैयार किये हैं, उनपर आपकी और खासकर जो इनका विरोध करते हैं उनकी राय सुनूँ और उनसे सलाह लूँ। मैं चाहता हूँ कि आप मेरी इन तजवीजों पर स्वतन्त्र रूपसे स्पष्टताके साथ पूरी-पूरी चर्चा करें, क्योंकि मुझे अफसोस है कि मै अपने कमजोर स्वास्थ्यकी वजहसे पंडालके बाहर आप सज्जनोंसे नहीं मिल सकता।

उन्होंने आगे कहा, जो बातें मैंने विचारार्थ रखी हैं, उनमें प्राथमिक शिक्षा और कॉलेजकी शिक्षा दोनोंका ही समावेश है। पर आप लोग तो अधिकतर प्राथमिक शिक्षाके बारेमें ही अपने विचार जाहिर करें। माध्यमिक शिक्षाको मैंने प्राथमिक शिक्षामें शामिल कर लिया है, क्योंकि प्राथमिक कही जानेवाली शिक्षा ही हमारे गाँवोंके कुछ थोड़े-से लोगोंको मयस्सर होती है। १९१५ से शुरू किये हुए अपने कई दौरोंमें मैंने सैकड़ों गाँव देखे हैं। मैं महज गाँवोंके ही लड़कों और लड़कियोंकी जरूरतोंके बारेमें कह रहा हूँ, जिनका बहुत बड़ा भाग बिलकुल निरक्षर है। मुझे कॉलेजकी शिक्षाका अनुभव नहीं है, हालाँकि कॉलेजके हजारों लड़कोंके सम्पर्कमें मैं आया हूँ, उनके साथ दिल खोलकर मैंने बातें की हैं और खूब पत्र-व्यवहार भी किया है। उनकी आवश्यकताओंको, उनकी नाकामयाबियोंको और उनकी तकलीफोंको मैं जानता हूँ। पर अच्छा हो कि आप अपनेको प्राथमिक शिक्षातक ही महदूद रखें। कारण यह है कि मुख्य प्रश्नके हल होते ही कॉलेजकी शिक्षाका गौण प्रश्न भी हल हो जायेगा।

मैंने खूब सोच-समझकर यह राय कायम की है कि प्राथमिक शिक्षाकी यह मौजूदा प्रणाली न केवल धन और समयका अपव्यय करनेवाली है, बल्कि नुकसानदेह भी है। अधिकांश लड़के अपने माँ-बापके तथा अपने खानदानी पेशा-धन्धेके कामके

१. यह और इससे अगला शीर्षक महादेव देसाई के "द प्राइमरी क्वेश्चन" (प्राथमिक प्रश्न) शीर्षक लेखमें से लिये गये है। परिषद्का आयोजन मारवाड़ी शिक्षा मण्डलकी रजत-जयन्तीके अवसरपर गांधीजी की अध्यक्षतामें किया गया था। सुबहका सत्र प्रातः साढ़े ८ बजेसे साढ़े ११ बजेतक चला था।

२. देखिए "शिक्षा-परिषद्के समक्ष उपस्थित प्रश्न", पृ० २१५-१७।

नहीं रह जाते। वे बुरी-बुरी आदतें सीख लेते हैं, शहरी तौर-तरीकोंके रंगमें रँग जाते हैं और थोड़ी-सी ऊपरी बातोंकी जानकारी ही उन्हें हासिल होती है, जिसे और चाहे जो नाम दिया जाये, पर शिक्षा तो हरगिज नहीं कहा जा सकता। इसका इलाज मेरे खयालमें यह है कि उन्हें उद्योग या दस्तकारीकी तालीमके जरिये शिक्षा दी जाये। मुझे इस प्रकारकी शिक्षाका कुछ व्यक्तिगत अनुभव है। मैंने दक्षिण आफ्रिकामें खुद अपने लड़कोंको और दूसरे बच्चोंको भी, जो अलग-अलग जातियों और धर्मोंके थे और जिनमें से कुछ बड़े कुशाग्र बुद्धि, कुछ मन्द और कुछ साधारण बुद्धिके थे, टॉल्स्टॉय फार्ममें किसी-न-किसी दस्तकारी, जैसे कि बढ़ईगिरी या जूते बनानेके कामके जरिये, इस प्रकारकी शिक्षा दी थी।[1] जूते बनानेका काम मैंने कैलेनबैकसे सीखा था और उन्होंने एक ट्रेपिस्ट मठमें इस हुनरकी शिक्षा प्राप्त की थी। मेरे लड़कोंने और उन सब बच्चोंने, मुझे विश्वास है, कुछ गँवाया नहीं, यद्यपि मैं उन्हें ऐसी शिक्षा नहीं दे सका जिससे कि खुद मुझे या उन्हें सन्तोष हुआ हो। कारण, समय मेरे पास बहुत कम रहता था और काम इतने अधिक रहते थे कि जिनका कोई शुमार नहीं।

मैं असल जोर धन्धे या उद्यमपर नहीं, बल्कि हाथ-उद्योग द्वारा शिक्षणपर दे रहा हूँ — साहित्य, इतिहास, भूगोल, गणित, विज्ञान इत्यादि सभी विषयोंके शिक्षण-पर। शायद इसपर यह आपत्ति उठाई जाये कि मध्ययुगमें तो दस्तकारीके अलावा और कोई चीज नहीं सिखाई जाती थी। मगर उस समय पेशे-धन्धेकी तालीम शैक्षणिक प्रयोजनके लिए नहीं होती थी। इस युगमें यह हुआ है कि लोग उन पेशोंको, जो उनके घरोंमें होते थे, भूल गये हैं, पढ़-लिखकर उन्होंने क्लर्कोंका काम हाथमें ले लिया है और इस तरह वे आज देहातके कामके नहीं रहे हैं। इसका यह नतीजा हुआ है कि किसी भी औसत दर्जेके गाँवमें हम जायें, तो वहाँ अच्छे, निपुण बढ़ई या लोहारका मिलना असम्भव हो गया है। दस्तकारियाँ करीब-करीब लुप्त हो गई हैं, और कताईका उद्योग, जो उपेक्षाकी नजरसे देखा जा रहा था, लंकाशायर चला गया, जहाँ कि उसका विकास हुआ। धन्यवाद है अंग्रेजोंकी अनोखी प्रतिभाको कि ऐसे हुनरोंको उन्होंने आज इस हदतक विकसित कर दिया है। यह बात मैं अपने औद्योगीकरण-सम्बन्धी विचारोंके बावजूद कहता हूँ।

इलाज इसका यह है कि हरएक दस्तकारीकी कला और विज्ञान व्यावहारिक शिक्षण द्वारा सिखाया जाये और फिर उस उद्योग द्वारा शिक्षा दी जाये। उदाहरणके लिए, तकलीपर की कताई-कलाको ही ले लीजिए। इसके प्रशिक्षणके लिए और भी कई तरहकी बातोंका ज्ञान कराना आवश्यक है — जैसे कपासकी अलग-अलग किस्मोंका और हिन्दुस्तानके विभिन्न प्रान्तोंकी तरह-तरहकी जमीनोंका ज्ञान, दस्तकारीके विनाशके

१. देखिए खण्ड ३९, पृ० २५५-६०।

इतिहास और उसके राजनीतिक कारणोंका ज्ञान, जिसमें भारतमें अंग्रेजी राज्यका इतिहास भी आ जायेगा। इसी तरह गणित इत्यादि कई विषयोंकी भी शिक्षा आवश्यक होगी। मैं अपने छोटे पोते पर[1] इसका प्रयोग कर रहा हूँ, जो शायद ही यह महसूस करता हो कि उसे कुछ सिखाया जा रहा है; क्योंकि वह तो हमेशा खेलता-कूदता, हँसता-गाता रहता है।

खास तौरसे तकलीका उदाहरण इसलिए दे रहा हूँ कि इसके विषयमें आप लोग मुझसे सवाल पूछें, क्योंकि मुझे इसके विषयमें बहुत-कुछ ज्ञान है। इसकी शक्ति और इसमें निहित काव्य मैंने देखा है। एक कारण यह भी है कि वस्त्र-निर्माणकी दस्तकारी ही ऐसी चीज है, जो सबको सिखाई जा सकती है, और तकलीपर कुछ खर्च भी नहीं होता। जितनी आशा की जाती थी, तकलीका मूल्य और महत्त्व उससे कहीं ज्यादा साबित हो चुका है। जिस हदतक भी हमने रचनात्मक कार्यक्रम पूरा किया है, उसीके परिणामस्वरूप सात प्रान्तोंमें आज कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल बने हैं; और जिस हदतक इस कार्यक्रमपर अमल होगा, उसी हदतक इन मन्त्रिमण्डलोंको सफलता मिलेगी।

मैंने सोचा है कि अध्ययन-क्रम सात सालका रखा जाये। जहाँतक तकलीका सम्बन्ध है, इस अवधिमें विद्यार्थी बुनाई तकके व्यावहारिक ज्ञानमें (जिसमें रँगाई, डिजाईनिंग आदि भी शामिल हैं) निपुण हो जायेंगे। हम जितना कपड़ा पैदा कर सकेंगे, उसके लिए ग्राहक तो तैयार हैं ही।

मैं इसके लिए बहुत उत्सुक हूँ कि विद्यार्थियोंकी दस्तकारीकी चीजोंसे शिक्षाका खर्चा निकल आना चाहिए, क्योंकि मेरा यह विश्वास है कि हमारे देशके करोड़ों बच्चोंको तालीम देने का दूसरा कोई रास्ता ही नहीं है। जबतक सरकारी खजानेसे आवश्यक पैसा न मिल जाये, या वाइसराय फौजी खर्चको कम न कर दें, या ऐसा ही कोई कारगर जरिया न निकल आये, तबतक रास्ता देखते हम बैठे नहीं रह सकते। आप लोगोंको याद रखना चाहिए कि इस प्राथमिक शिक्षामें सफाई, आरोग्य और आहार-शास्त्रके प्रारम्भिक सिद्धान्तोंका समावेश भी हो जाता है। अपना काम खुद कर लेने तथा घरपर अपने माँ-बापके काममें मदद देने वगैरहकी शिक्षा भी इसमें शामिल है। वर्त्तमान पीढ़ीके लड़कोंको न तो सफाईका ज्ञान है, न वे यह जानते हैं कि आत्म-निर्भरता क्या चीज है; और वे शरीरसे भी काफी दुर्बल होते हैं। इसलिए उन्हें मैं लाजिमी तौरपर गाने और बाजेके साथ कवायद वगैरहके जरिये शारीरिक व्यायामकी भी तालीम दूँगा।

मुझपर यह दोषारोपण किया जा रहा है कि मैं साहित्यिक शिक्षाके खिलाफ हूँ। नहीं, यह बात नहीं है। मैं तो केवल वह तरीका बता रहा हूँ जिससे साहित्यिक

१. अनुमानतः कानम; देखिए "पत्र : अमृतलाल नानावटीको", पृ० २२४।

शिक्षा देनी चाहिए। और मेरे स्वावलम्बनके पहलूपर भी हमला किया गया है। यह कहा गया है कि प्राथमिक शिक्षापर जहाँ हमें करोड़ों रुपये खर्च करने चाहिए, वहाँ हम उलटे बच्चोंका ही शोषण करने जा रहे हैं। यह आशंका भी व्यक्त की जाती है कि इसमें भारी बरबादी होगी। लेकिन अनुभवने इस भयको गलत साबित कर दिया है। जहाँतक बच्चेपर बोझ डालने या उसका शोषण करने का सवाल है, मैं यह जानना चाहूँगा कि बच्चेको सर्वनाशसे बचाना क्या उसपर बोझ डालना है। तकली बच्चोंके खेलने के लिए एक काफी अच्छा खिलौना है। चूँकि यह एक उत्पादक खिलौना है, इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि यह खिलौनेसे किसी तरह कम है। आज भी बच्चे किसी हदतक अपने माँ-बापकी मदद करते ही हैं। हमारे सेगाँवके बच्चे खेती-बाड़ीकी बातें मुझसे कहीं ज्यादा जानते हैं, क्योंकि उन्हें अपने माँ-बापके साथ खेतोंपर काम करना पड़ता है। जहाँ बच्चेको इस बातका प्रोत्साहन दिया जायेगा कि वह काते और खेतीके काममें अपने माँ-बापकी मदद करे, वहाँ उसे ऐसा भी महसूस कराया जायेगा कि उसका सम्बन्ध सिर्फ अपने माँ-बापसे ही नहीं, बल्कि अपने गाँव और देशसे भी है और उसे उनकी भी कुछ सेवा करनी चाहिए। यही एकमात्र रास्ता है। मैं मन्त्रियोंसे कहूँगा कि खैरातमें शिक्षा देकर तो वे बच्चोंको असहाय ही बनायेंगे; लेकिन उनसे अपने पसीनेकी कमाईसे अपनी शिक्षाका खर्च निकलवाकर वे उन्हें बहादुर और आत्म-विश्वासी बनायेंगे।

यह पद्धति हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई, सभीपर समान रूपसे लागू होगी। मुझसे पूछा गया है कि मैं धार्मिक शिक्षापर कोई जोर क्यों नहीं देता। इसका कारण यह है कि मैं उन्हें सच्चा धर्म, स्वावलम्बनका धर्म सिखा रहा हूँ।

इस तरह जो विद्यार्थी शिक्षित किये जायेंगे, उन्हें जरूरत पड़ने पर रोजी देने के लिए राज्य बँधा हुआ है। जहाँतक अध्यापकोंका प्रश्न है, प्रोफेसर शाहने अनिवार्य सेवाका उपाय सुझाया है।[1] इटली तथा अन्य देशोंके उदाहरण देकर उन्होंने इसका महत्त्व बताया है। उनका कहना है कि अगर मुसोलिनी इटलीके तरुणोंको देशकी सेवामें जुटा सकता है, तो हमें हिन्दुस्तानके तरुणोंको ऐसी सेवामें क्यों नहीं लगाना चाहिए? हमारे नौजवानोंको अपना रोजगार शुरू करने से पहले एक या दो सालके लिए अनिवार्य रूपसे अध्यापनका काम करना पड़े, तो उसे गुलामी क्यों कहा जाये। पिछले सत्रह सालोंमें आजादीके हमारे आन्दोलनने जो सफलता प्राप्त की है, उसमें नौजवानोंका योग कुछ कम नहीं है। इसलिए मैं उनसे अपने जीवनका एक साल राष्ट्र-सेवाके लिए अर्पण करने को कह सकता हूँ। इस सम्बन्धमें कानून बनाने की भी जरूरत हुई, तो वह जबरदस्ती नहीं होगी, क्योंकि हमारे प्रतिनिधियोंके बहुमतकी रजामन्दीके बिना वह कभी मंजूर नहीं हो सकता।

१. प्रोफेसर के० टी० शाहका लेख ३१-७-१९३७ के **हरिजन** में प्रकाशित हुआ था।

इसलिए मैं आपसे पूछूँगा कि शारीरिक परिश्रम द्वारा दी जानेवाली शिक्षा आपको रुचती है या नहीं? मेरे लिए तो इसे स्वावलम्बी बनाना ही इसकी उपयुक्त कसौटी होगी। सात सालके अन्तमें बालकोंको ऐसा तो हो ही जाना चाहिए कि अपनी शिक्षाका खर्च वे खुद उठा सकें और परिवारके कमाऊ सदस्य बन सकें।

कॉलेजकी शिक्षा मुख्यतः शहरोंकी चीज है। यह तो म नहीं कहूँगा कि यह भी प्राथमिक शिक्षाकी तरह बिलकुल असफल रही है, लेकिन इसका जो परिणाम हमारे सामने है, वह काफी निराशाजनक है। अन्यथा कोई ग्रेजुएट भला बेकार क्यों रहे?

तकलीको मैंने निश्चित उदाहरणके रूपमें सुझाया है, क्योंकि विनोबाको इसका सबसे ज्यादा व्यावहारिक अनुभव है, और इस सम्बन्धमें कोई एतराज उठाये जायें, तो उनका जवाब देने के लिए वे यहाँ मौजूद हैं। काका साहब भी इस बारेमें कुछ कह सकेंगे, हालाँकि उनका अनुभव व्यावहारिकके बनिस्बत सैद्धान्तिक अधिक है। उन्होंने जनरल आर्मस्ट्रांगकी लिखी हुई 'एजुकेशन फॉर लाइफ' (जीवनकी शिक्षा) पुस्तककी तरफ और उसमें भी खास तौरसे "हाथकी शिक्षा" वाले अध्यायकी ओर मेरा ध्यान खींचा है। स्वर्गीय मधुसूदन दास थे तो वकील, लेकिन उनका यह विश्वास था कि अगर हम अपने हाथ-पैरोंसे काम न लेंगे, तो हमारा दिमाग कुन्द पड़ जायेगा और अगर वह काम करेगा भी तो वह शैतानका ही घर बनेगा। टॉल्स्टॉयने भी हमें अपनी बहुत-सी कहानियोंके द्वारा यही बात सिखाई है।

भाषणके अन्तमें गांधीजी ने स्वावलम्बी प्राथमिक शिक्षाकी अपनी योजनाके मूलभूत तत्त्वपर उपस्थित जनोंका ध्यान आकर्षित करते हुए कहा:

हमारे यहाँ साम्प्रदायिक झगड़े होते रहते हैं, लेकिन यह कोई हमारी ही खासियत नही है। इंग्लैण्डमे भी ऐसी ही लड़ाइयाँ हो चुकी हैं और आज ब्रिटिश साम्राज्यवाद सारे संसारका शत्रु हो रहा है। अगर हम साम्प्रदायिक और अन्तर्राष्ट्रीय संघर्षको समाप्त करना चाहें, तो हमारे लिए यह जरूरी है कि जिस शिक्षाका मैंने प्रतिपादन किया है, उससे अपने बालकोंको शिक्षित करके शुद्ध और दृढ़ आधारके साथ इसकी शुरुआत करें। अहिंसासे इस योजनाकी उत्पत्ति हुई है। पूर्ण मद्य-निषेधके राष्ट्रीय निश्चयके सिलसिलेमें मैंने इसे सुझाया है। लेकिन मैं कहता हूँ कि राजस्वमें कोई कमी न हो और हमारा खजाना भरा हुआ हो, तो भी अगर हम अपने बालकोंको शहरी न बनाना चाहें, तो यह शिक्षा अत्यन्त आवश्यक है। हमें तो उनको अपनी संस्कृति, अपनी सभ्यता और अपने देशकी सच्ची प्रतिभाका प्रतिनिधि बनाना है; और यह उन्हें स्वावलम्बी प्राथमिक शिक्षा देने से ही हो सकता है। यूरोपका उदाहरण हमारे लिए कोई उदाहरण नहीं है, क्योंकि वह हिंसामें विश्वास करता है और इसलिए उसकी सब योजनाओं और उसके सभी कार्यक्रमोंका आधार हिंसा ही होती है। रूसने जो सफलता हासिल की है, उसको मैं कम महत्त्वपूर्ण नहीं

समझता, लेकिन उसका सारा ढाँचा पशुबल और हिंसाके आधारपर खड़ा है। अगर हिन्दुस्तानने हिंसाके परित्यागका निश्चय किया है, तो उसे जिस अनुशासनमें से होकर गुजरना पड़ेगा, यह शिक्षा-पद्धति उसका एक अभिन्न अंग बन जाती है। हमसे कहा जाता है कि इंग्लैण्ड शिक्षापर लाखों रुपया खर्च करता है और यही हाल अमेरिकाका भी है; लेकिन हम यह भूल जाते हैं कि यह सब धन शोषणसे ही प्राप्त होता है। उन्होंने शोषणकी कलाको विज्ञानका रूप दे दिया है, जिससे उनके लिए अपने बालकोंको ऐसी महँगी शिक्षा देना सम्भव हो गया है। लेकिन हम तो शोषणकी बात न सोच सकते हैं और न सोचेंगे ही। इसलिए हमारे पास शिक्षाकी इस योजनाके सिवा, जिसका आधार अहिंसापर है, और कोई मार्ग ही नहीं है।[1]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३०-१०-१९३७

३२७. भाषण : शिक्षा-परिषद्में – २

२२ अक्तूबर, १९३७

तीसरे पहरके सत्रमें[2] गांधीजी ने अपने भाषणका आरम्भ कुछ आलोचनाओंका उत्तर देते हुए किया। उन्होंने कहा कि तकली एकमात्र साधन नहीं है, लेकिन वही एकमात्र ऐसी चीज है जिसे सार्वत्रिक बनाया जा सकता है। और भी चीजें हैं, जैसे कागज बनाना, ताड़का गुड़ बनाना आदि। यह पता लगाना मन्त्रियोंका काम है कि किस स्कूलके लिए कौन-सी दस्तकारी सर्वोत्तम रहेगी। जो लोग मशीनोंके पक्षपाती हैं, उन्हें मैं चेतावनी देना चाहता हूँ कि मशीनपर बहुत ज्यादा जोर देने से इस बातका खतरा है कि मनुष्य भी मशीन बन जायें। जो लोग मशीन-युगमें रहना चाहते हैं उनके लिए मेरी योजना बेकार है, लेकिन मैं उन्हें यह भी बता देना चाहता हूँ कि मशीनोंके जरिये गाँववालोंको जीवित रख सकना असम्भव होगा। जिस देशमें ३० करोड़ जिन्दा मशीनें हैं वहाँ नई मुर्दा मशीनें लाने का विचार व्यर्थ है। डॉ० जाकिर हुसैनका यह कहना ठीक नहीं है कि यह योजना सैद्धान्तिक दृष्टिसे ठीक हो या न हो, शैक्षणिक दृष्टिसे ठीक है।[3] एक महिला, जिन्हें [अमेरिकाकी] "प्रोजेक्ट"

१. उसके बाद जो चर्चा हुई उसमें निम्नलिखित लोगोंने भाग लिया : सर्वश्री जाकिर हुसैन, मौलवी अब्दुल हक, सौदामिनी मेहता, के० टी० शाह, तिजारे, खामगाँव राष्ट्रीय शालाके प्रिंसिपल, भागवत, डॉ० सैयद महमूद और बालूभाई ठाकोर।

२. यह तीसरे पहर २-३० से ५ बजेतक चला था।

३. डॉ० जाकिर हुसैनने सुबहके सत्रमें चर्चामें भाग लेते हुए कहा था कि गांधीजी की योजनाको एक सही शैक्षणिक योजना मानता हूँ, भले ही कोई शहरी सभ्यतामें विश्वास करता हो या ग्रामीण सभ्यतामें, हिंसामें करता हो या अहिंसामें।

पद्धतिका ज्ञान है, पिछले दिनों मेरे पास आई थीं। उन्होंने कहा कि "प्रोजेक्ट"-पद्धति और मेरी योजनामें जबरदस्त अन्तर है। लेकिन मैं यह नहीं चाहता कि बिना अच्छी तरह कायल हुए आप मेरी योजनाको स्वीकार करें। अगर हमारे अपने लोग ही ईमानदारीसे काम करें तो इन स्कूलोंसे गुलाम नहीं बल्कि कुशल कारीगर तैयार होकर बाहर आयेंगे। बच्चोंसे जो भी श्रम कराया जाये वह निश्चय ही दो पैसे प्रति-घंटेके मूल्यका होना चाहिए।

लेकिन मैं यह नहीं चाहता कि आप लोग मेरा खयाल करके कोई चीज स्वीकार कर लें। मैं तो मौतके दरवाजेपर खड़ा हूँ, और मैं यह नहीं चाहता कि जबरदस्ती कोई चीज लोगोंके गले उतार दूँ। इस योजनाको पूरी तरह विचार करने के बाद ही स्वीकार किया जाना चाहिए, ताकि इसे कुछ समयके बाद ही छोड़ न देना पड़े। मैं प्रोफेसर शाहकी इस बातसे सहमत हूँ कि वह राज्य किसी कामका नहीं है जो अपने बेरोजगार लोगोंके लिए ठीक व्यवस्था नहीं कर सकता। लेकिन भीख देना बेरोजगारीकी समस्याका हल नहीं है। मैं हरएक आदमीको काम दूँगा और अगर पैसा नहीं दे सकता तो खाना दूँगा। ईश्वरने हमें खाने, पीने और मौज करने के लिए नहीं पैदा किया है, बल्कि पसीना बहाकर अपना भोजन प्राप्त करने के लिए पैदा किया है।[1]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३०-१०-१९३७

३२८. नागरिक स्वतन्त्रता

गुरुदेवने नागरिक स्वतन्त्रताका काव्य-गान[2] किया है। यद्यपि उनका वह वक्तव्य समस्त संसारमें प्रसिद्धि पा चुका है, फिर भी 'हरिजन'-जैसे साप्ताहिक पत्रमें उद्धृत करना अनुचित न होगा। वह इसी अंकमें अन्यत्र दिया जा रहा है। "उद्धरेदात्मनात्मानं"[3] अथवा "आत्मैव ह्यात्मानो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः"[4] को ही उन्होंने अपनी सुललित भाषामें कहा है।

१. इसके बादके वक्ताओंमें अन्य लोगोंके अलावा विनोबा भावे, प्रफुल्ल चन्द्र राय, काकासाहब कालेलकर, के० टी० शाह, देव शर्मा, एम० एस० हुसैन, नाना आठवले, एन० आर० मलकानी, नानाभाई भट्ट, बी० जी० खेर, सुब्बरायन और विश्वनाथ दास थे। पहले दिनकी कार्यवाहीके बाद परिषद्ने गांधीजी की योजनापर विचार करनेवाली समितिका रूप ले लिया।

२. रवीन्द्रनाथ ठाकुरने १७ अक्तूबर, १९३७ को "भारतमें नागरिक स्वतन्त्रता" पर लन्दनमें होनेवाले सम्मेलनके लिए अपना एक सन्देश भेजा था।

३ और ४. **भगवद्गीता**, ६, ५।

नागरिक स्वतन्त्रताका अर्थ अपराध करने की आजादी नहीं है। जब कानून और व्यवस्था लोक-नियन्त्रणमें हो, तब जिन मन्त्रियोंके अधीन यह विभाग होता है, वे यदि लोक-मतके खिलाफ कुछ करने लगें तो एक दिन भी नहीं टिक सकते। यह सच है कि विधान-सभाएँ अभी समस्त जनताका प्रतिनिधित्व नहीं कर रही हैं, फिर भी मताधिकार इतना व्यापक तो जरूर हो गया है कि कानून और व्यवस्थाके विषयमें ये सभाएँ राष्ट्रके मतका प्रतिनिधित्व कर सकती हैं। आज देशके सात प्रान्तोंमें कांग्रेसका शासन चल रहा है। मालूम होता है, इसका अर्थ कुछ लोगोंने यह समझ रखा है कि कमसे-कम इन प्रान्तोंमें तो आदमी जो चाहे सो कह और कर सकता है। पर जहाँतक मैं कांग्रेसके मानसको समझता हूँ, वह इस प्रकारकी स्वच्छन्दताको बर्दाश्त नहीं करेगी। नागरिक स्वाधीनताका अर्थ यह है कि साधारण कानूनकी मर्यादाके अन्दर रहते हुए आदमी जो चाहे कहे और करे। "साधारण" शब्दका प्रयोग यहाँ जान-बूझकर किया गया है। विशेषाधिकार देनेवाले कानूनोंकी बात तो छोड़ ही दें, दण्ड-संहिता और दण्ड-प्रक्रिया-संहिताके अन्दर भी विदेशी शासकोंने अपनी रक्षाके लिए कितनी ही धाराएँ डाल रखी हैं। इन धाराओंको हम बड़ी आसानीसे ढूँढ़ सकते है और उन्हें रद कर दिया जाना चाहिए। किन्तु सच्ची कसौटी कानून और व्यवस्थाके लिए जिम्मेदार मन्त्रियोंके अधिकारोंकी कार्य-समिति द्वारा की गई व्याख्या है। इसलिए कार्य-समिति कांग्रेसी मन्त्रियोंके मार्ग-दर्शनके लिए जो निर्देश जारी करे उन्हें ध्यानमें रखते हुए मन्त्रिगण, मेरी बताई मर्यादाओंके अन्दर, अपनी सत्ताका उपयोग उन लोगोंके खिलाफ कर सकते हैं जो नागरिक स्वाधीनताके नाम-पर अराजकताका प्रचार करते हैं।

कुछ लोगोंका कहना है कि कांग्रेसी मन्त्री तो अहिंसाके लिए प्रतिज्ञाबद्ध हैं। इसलिए वे ऐसे कानूनका उपयोग नहीं कर सकते जिसमें सजाका विधान हो। कांग्रेस द्वारा स्वीकृत अहिंसाका मैं ऐसा अर्थ नहीं करता। मैं खुद अभी कोई ऐसा मार्ग नहीं खोज पाया हूँ जिसका अनुसरण करके हर तरहकी कल्पनीय परिस्थितिमें हम सजाओं और दण्डात्मक प्रतिबन्धोंके बगैर काम चला सकें। अगर इस प्रसंगमें कहा जा सके तो कहूँगा कि निःसन्देह सजाएँ भी अहिंसक ही होनी चाहिए। जिस प्रकार हिंसाका, सैनिक शास्त्रके नामसे ज्ञात, अपना एक अलग शास्त्र है, जिसमें संहारके ऐसे-ऐसे तरीके तथा साधन ढूँढ़े गये हैं जिनके बारेमें पहले कभी किसीने सुना भी नहीं था, उसी प्रकार अहिंसाका भी एक शास्त्र और कला है। राजनीतिके क्षेत्रमें अहिंसा एक नया शस्त्र है, जिसका अभी विकास हो रहा है। उसमें निहित व्यापक सम्भावनाओंका अभी अनुसन्धान नहीं हो पाया है। अनेक क्षेत्रोंमें और बड़े पैमानेपर जब अहिंसाका प्रयोग होने लगेगा तब इस विषयमें अन्वेषण भी हो सकेंगे। अगर कांग्रेसके मन्त्रियोंको अहिंसामें विश्वास होगा, तो वे इस अन्वेषण-कार्यको आगे बढ़कर अपने हाथोंमें ले लेंगे। लेकिन वे यह अन्वेषण-कार्य कर रहे हों, उस दौरान —— बल्कि वे यह काम करें या न करें तब भी —— इसमें कोई शक नहीं कि वे ऐसे कार्योंको या भाषणोंको कभी बर्दाश्त नहीं कर सकते जिनसे हिंसाको उत्तेजना मिलती हो, भले ही

उन्हें लोग इस कारण हिंसावृत्तिवाला ही क्यों न बतायें। जब लोग देखें कि उन्हें ऐसे मन्त्रियोंकी सेवाओंकी जरूरत नहीं है, तो वे अपने प्रतिनिधियोंके जरिये अपनी असम्मति प्रकट कर दें। अगर कांग्रेसकी ओरसे मन्त्रियोंको कोई निश्चित निर्देश न मिले हों तो मन्त्रियोंके लिए यह उचित होगा कि वे अपनी प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीको या कार्य-समितिको सूचित कर दें कि उनकी रायमें जनतामें से अमुक लोगोंका व्यवहार हिंसोत्तेजक है, और उसके सम्बन्धमें वे आवश्यक निर्देश माँगें। अगर उनके उच्चाधिकारी उनकी सिफारिशोंको मंजूर न करें तो मन्त्री अपने इस्तीफे पेश कर दें। उन्हें परिस्थितिको यहाँतक बिगड़ने नहीं देना चाहिए कि फौजको बुलाने की नौबत आ जाये। मेरी रायमें तो यदि किसी मन्त्रीको फौजको — जिसपर जनताका नियन्त्रण नहीं है — बुलाना पड़े तो यह राजनीतिक दिवालियापन होगा। अहिंसाकी किसी भी योजनामें देशकी आन्तरिक शान्तिके लिए तो फौजकी जरूरत होनी ही नहीं चाहिए।

मैं तो इस भारत अधिनियमका अर्थ यह लगाता हूँ कि उसमें कांग्रेसवादियोंको अनजाने ही यह चुनौती दी गई है कि वे अहिंसाकी महत्ता और उसमें अपनी अटल श्रद्धा साबित करें। अगर कांग्रेस इस बातको साबित कर दे तो अधिकांश सुरक्षात्मक पूर्वोपाय (सेफगार्ड्स) अपने-आप बेकार हो जायेंगे, और अहिसात्मक संघर्ष अथवा सविनय अवज्ञाके बिना भी कांग्रेस अपने लक्ष्यकी सिद्धि कर लेगी। अगर कांग्रेस जनताके अन्दर अहिंसाकी भावना इतनी पूर्णताके साथ न भर सकी हो तो उसे अल्पसंख्यक बनकर विरोध-पक्षमें रहना चाहिए। यदि वह अपना सिद्धान्त बदल दे तो बात और है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २३-१०-१९३७

३२९. भारतीय उद्योग

अक्सर यह प्रश्न पूछा जाता है कि भारतीय उद्योगसे क्या मतलब है? यह प्रश्न आम तौरपर हमारी स्वदेशी प्रदर्शनियोंके सम्बन्धमें पूछा जाता है। पहले यह दावा किया जाता था कि हिन्दुस्तानमें चलनेवाले किसी भी उद्योगको हम हिन्दुस्तानी उद्योग कह सकते हैं। इस तरह, ऐसा उद्योग भी हिन्दुस्तानी ही समझा जाता था जिसे भारतमें अस्थायी तौरपर बसे हुए यूरोपीय लोग विदेशसे पूँजी, कुशल इंजीनियर तथा कारीगर और मशीनें लाकर यहाँ चलाते थे। यह साबित हो जाने पर भी कि देशकी आम जनताके लिए वह हानिकारक है, उसे भारतीय उद्योग ही माना जाता था। इस व्याख्यासे हम अब बहुत आगे बढ़ गये हैं। किसी भी उद्योगको भारतीय तभी कहा जा सकता है जब यह सिद्ध हो जाये कि वह जन-साधारणके लिए हितकारी है और उसमें काम करनेवाले कुशल कारीगर व मजदूर, दोनों भारतीय हैं। उसकी पूँजी और यन्त्र भी भारतीय होने चाहिए; और उस उद्योगमें जो मजदूर काम करते हों उन्हें उससे पेट भरने लायक मजदूरी मिलनी चाहिए, उनके

रहने के लिए साफ-सुथरे और सुविधाजनक मकान होने चाहिए, और मजदूरोंके बच्चोंके लिए भी मिल-मालिकोंको पर्याप्त सुविधा कर देनी चाहिए। यह भारतीय उद्योगकी आदर्श व्याख्या है। सिर्फ अ० भा० चरखासंघ और अ० भा० ग्रामोद्योग संघ ही शायद कुछ हदतक इस परिभाषाके दायरेमें आते हैं। इन दोनों संघोंको भी इस दिशामें अभी काफी लम्बी मंजिल तय करनी है। फिर भी, इस व्याख्याका शत-प्रति-शत अनुसरण करना इन संघोंका तात्कालिक ध्येय है।

पर इस व्याख्याके, और कांग्रेसमें भी सन् १९२० के पहले जो व्याख्या प्रचलित थी उसके बीच दूसरी कई व्याख्याओंका समावेश हो जाता है। साधारणतया मिलके कपड़ेके अलावा भारतमें बनी हुई सब चीजें कांग्रेस द्वारा की गई स्वदेशीकी व्याख्यामें आ जाती हैं। सामान्यतः यह दावा किया जा सकता है कि कपड़ा मिल-उद्योग भारतीय उद्योग है। पर जापान और लैंकशायरके साथ टक्कर लेने की शक्तिसे युक्त होते हुए भी यह उद्योग जितने अंशोंमें खादीपर हावी होता है उतने ही अंशोंमें जन-साधारणका शोषण करता है और उसकी दरिद्रताको बढ़ाता है। आजकल सारे देशमें भारी-भारी यान्त्रिक उद्योग खड़े कर देने की धुनमें मेरे इस विचारको बिल्कुल ठुकराया भले न गया हो, लेकिन इसके विषयमें शंका तो उठाई ही गई है। यह कहा गया है कि यान्त्रिक उद्योगोंकी प्रगतिके कारण यदि जन-साधारणकी दरिद्रता बढ़ती जाती है तो यह चीज अनिवार्य है, और इसलिए इसको सहन करना ही चाहिए। इस अनिष्टको सहन करना तो दूर, मैं तो यह भी नहीं मानता कि यह अनिवार्य है। अखिल भारतीय चरखासंघने सफलतापूर्वक यह बता दिया है कि लोगोंके सिर्फ फुर्सतके समयका उपयोग अगर कातने और उससे सम्बन्धित अन्य क्रियाओंमें किया जाये, तो मात्र इतनेसे ही गाँवोंमें भारतकी जरूरतके लायक कपड़ा तैयार हो सकता है। कठिनाई तो जनतासे मिलका कपड़ा छुड़वाने में है। यह कैसे हो सकता है, इसकी चर्चा करने का यह प्रसंग नहीं है। इस समय मेरा हेतु करोड़ों ग्रामवासियोंको ध्यानमें रखकर मैंने भारतीय उद्योगकी जो व्याख्या की है उसको और उस व्याख्याके लिए अपने कारणोंको प्रस्तुत करने का था। और इतना तो सभीको स्पष्ट समझ लेना चाहिए कि राष्ट्रीय प्रदर्शनियाँ केवल ऐसे ही उद्योगोंके लिए आयोजित की जानी चाहिए, जिनको हर तरहसे जनताके समर्थनकी जरूरत है। जो उद्योग बिना किसी प्रदर्शनी आदिकी सहायताके ही खूब तरक्की कर रहे हों, और जो खुद ही अपनी प्रदर्शनियोंका आयोजन कर लेते हों उनके लिए राष्ट्रीय संस्थाओंको किसी प्रदर्शनीका आयोजन करने की आवश्यकता नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २३-१०-१९३७

३३०. पत्र : प्राणजीवनको

२३ अक्तूबर, १९३७

भाई प्राणजीवन,

यदि वर्षोसे चला आ रहा हर विद्यालय अपने इतिहासपर दृष्टि डाले तो [उसमें पढ़े हुए लोगोंमें से] कोई-न-कोई व्यक्ति ऐसा मिल ही जायेगा जो अन्तमें प्रसिद्धिको प्राप्त हुआ हो। इसलिए मैं तो ऐसी चीजोंको संयोग ही मानता हूँ। जैसा आपका है वैसे पुराने विद्यालयके लिए तो पुलकित होने का अवसर तब होगा जब वह सुधार आदि करके इतनी प्रगति कर ले कि अपने क्षेत्रमें अद्वितीय माना जाये। संयोगपर अभिमान कैसा?

मोहनदासके वन्देमातरम्

[राष्ट्रीय] शाला, राजकोट

गुजरातीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

३३१. पत्र : द० बा० कालेलकरको

सेगाँव
२३ अक्तूबर, १९३७

चि० काका,

इसके साथ म वे पत्र वापस भेज रहा हूँ जो कबितको पढ़ाये जाने चाहिए। इनके उत्तरमें उसे जो लिखना हो सो लिख भेजे, क्योंकि तुम देखोगे कि उसने आनन्द-बाबूपर काफी जोरोंसे प्रहार किया है। यदि वह स्वीकार करता है कि उसने अतिशयोक्तिसे काम लिया है तो उसने जिस उत्साहके साथ उनपर आरोप लगाया है और उसका प्रचार किया है, उसी उत्साहके साथ उसे उस आरोपको वापस ले लेना चाहिए और यदि वह ऐसा नहीं करता तो उसे उस आरोपको साबित करने के लिए तैयार रहना चाहिए। ऐसी शिकायतें उसने मुझसे क्यों नहीं कीं? यह भी जानने लायक बात है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७७०९) से।

३३२. पत्र : तुलसी मेहरको

सेगाँव, वर्धा
२३ अक्तूबर, १९३७

चि० तुलसी मेहर,

तुम्हारा खत मिला। ऐसे ही लिखा करो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६५५३) से।

३३३. पत्र : भगवान देवीको[1]

२३ अक्तूबर, १९३७

प्रिय बहन[2]

तुम्हारे एक हजार रूपीये मिल गये थे। वह हरिजन कार्यमें लगाये जायेंगे। जिसको ईश्वरने धन दिया है उनका धर्म तो यह है कि अपने लिए जितना आरोग्यको सुरक्षीत रखते हुए कमसे-कम ले सकते है उतना ले कर नियमबद्ध दान करते जाय। नियमित रूपसे जो थोड़ा-सा भी किया जाता हो वह अनियमित रूपसे बहुत करने से कई गुना अधिक फल देता है। ईश्वरकी सारी सृष्टि अगर नियमबद्ध न होती तो एक दिन भी चलनेवाली नहीं थी।

बापुके आशीश

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई

१. घनश्यामदास बिड़लाकी बहन।
२. सम्बोधन प्यारेलाल पेपर्सं से लिया गया है।

३३४. भाषण : शिक्षा-परिषद्‌में[1]

२३ अक्तूबर, १९३७

गांधीजी ने चर्चाका उपसंहार करते हुए कहा कि आप सब लोग यहाँ आये, और इस काममें योग दिया, इसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। आप लोगोंसे मैं अभी और भी अधिक सहयोग की आशा रखूँगा, क्योंकि यह परिषद् तो अभी पहली ही है, और ऐसी तो कई परिषदें हमें करनी पड़ेंगी। मालवीयजी ने मुझे चेतावनीका तार भेजा है, पर उन्हें मैं तसल्ली दे सकता हूँ कि इस परिषद्‌में कोई अन्तिम फैसला नहीं होना है, क्योंकि यह तो शोधकोंकी परिषद् है, और हरएक व्यक्तिको अपना सुझाव रखने और आलोचना करने को आमन्त्रित किया गया है। किसी भी चीजको जैसे-तैसे जल्दीमें करा डालने का मेरा कोई विचार नहीं है। राष्ट्रीय शिक्षा और मद्य-निषेधकी कल्पनाएँ तो असहयोगकी-जितनी ही पुरानी हैं, पर यह चीज इस रूपमें तो मुझे आज देशकी बदली हुई परिस्थितियोंमें सूझी है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३०-१०-१९३७

१. गांधीजी ने समिति द्वारा तैयार किये गये प्रस्ताव विचारके लिए प्रस्तुत किये। पास किये प्रस्ताव इस प्रकार थे :

१. परिषद् की रायमें राष्ट्रव्यापी स्तरपर सात वर्षतक निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा दी जानी चाहिए।

२. शिक्षाका माध्यम मातृ-भाषा हो।

३. परिषद् महात्मा गांधी द्वारा रखे गये इस प्रस्तावका अनुमोदन करती है कि सात वर्षकी इस अवधिमें शिक्षा किसी-न-किसी उद्योग और उत्पादक कार्यके जरिये दी जानी चाहिए और बच्चोंमें जिन अन्य योग्यताओंका विकास करना हो या उन्हें जो अन्य प्रशिक्षण देना हो वह सब बच्चोंके वातावरणको ध्यानमें रखते हुए किसी चुनी हुई दस्तकारीके साथ जुड़ा होना चाहिए।

४. परिषद् यह आशा करती है कि यह शिक्षा-पद्धति धीरे-धीरे शिक्षकोंका पारिश्रमिक चुका सकने में समर्थ हो जायेगी।

३३५. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

[२५ अक्तूबर, १९३७ के पूर्व][1]

चि० मणिलाल और सुशीला,

यदि तुम दोनों स्वदेश लौट आओगे तो वहाँके कामको कौन देखेगा? वहाँ ऐसा कौन है जो सम्पादकके पदको सम्भाल सके? गुजरातीमें तेरी मदद कौन करता है? क्रिस्टोफर किस धर्मका पालन करता है? विवाह-विधि किसने सम्पन्न करवाई थी? दोनोंके धर्मोकी रक्षा हुई है अथवा धर्म तो नाम-मात्रको ही है? यहाँ भी इसी तरहका एक प्रसंग उठ खड़ा हुआ है, इसीसे मैं इस तरहके प्रश्न पूछ रहा हूँ।

रामदास यदि वहाँ स्थायी रूपसे रहने लगे तब तो बहुत अच्छा हो।

देवदास दो-तीन दिनोंके लिए यहाँ आया है। मुझे ४-५ दिनोंके लिए कार्य-समितिकी बैठकमें भाग लेने के लिए कलकत्ता जाना पड़ेगा। वहाँ देवदास साथ होगा और वहाँसे लक्ष्मीको लेने मद्रास जायेगा और वहाँसे वर्धा होता हुआ दिल्ली जायेगा।

तेरे कितने ग्राहक हैं? उसमें कितने मुसलमान हैं, कितने हिन्दू हैं और कितने ईसाई हैं? क्या कोई अंग्रेज ग्राहक भी है?

स्लोसबर्ग मुझसे आकर मिल गया। मुझे वह सज्जन जान पड़ा।

रिचका क्या हाल है? क्या वे तुझसे कोई सम्पर्क रखते हैं? एन्ड्रयूज फिलहाल हिन्दुस्तानमें हैं। शिमलामें रहते हैं; बहुत बीमार हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४७६३) से।

१. पत्रमें कलकत्तामें होनेवाली कार्य-समितिकी बैठकमें भाग लेने के लिए गांधीजीके वहाँ जाने के उल्लेखके आधारपर।

३३६. पत्र : के० एफ० नरीमानको

१ वुडबर्न पार्क
कलकत्ता
२९ अक्तूबर, १९३७

भाई नरीमान,

तुमने मसूरमें जो असाधारण वक्तव्य दिया है उसे पढ़कर मुझे बड़ा दुःख हुआ। मैंने तुम्हें अभीतक इसलिए पत्र नहीं लिखा कि मैंने महादेवसे तुमसे यह पूछने के लिए कहा था कि अखबारोंमें वक्तव्यको जिस रूपमें पेश किया गया है, क्या वह सही है। उसने मुझे कल बताया कि तुमने अखबारमें छपे वक्तव्यकी पुष्टि कर दी है। क्या तुम यह महसूस नहीं करते कि इसमें तथ्योंको बहुत ज्यादा तोड़ा-मरोड़ा गया है? तुम्हारी स्वीकारोक्तिसे[1] मेरे स्वास्थ्यका निश्चय ही कोई ताल्लुक न था, क्योंकि मेरा काम खत्म हो चुका था और मेरे तारमें, जिसका तुमने जिक्र किया है, मेरे स्वास्थ्यका उल्लेख तुमने मुझसे जो निर्णय स्थगित रखने का आग्रह किया था उसके सन्दर्भमें हुआ था। मैंने और श्रीयुत बहादुरजीने जिस समय तुम्हें यह सुझाव दिया था कि यदि तुम्हें निर्णयमें सचाई दिखाई देती हो तो हम उस निर्णयको प्रकाशित करें, इसके बजाय तुम ही स्वीकारोक्ति कर लो तब हमारे मनमें तुम्हारे हितकी बात ही थी। उस समय तुम्हारा वकील भी साथ था। तुम्हें निर्णयका जो मसौदा दिया गया था उसमें तुमने कुछ फेर-बदल करने की भी माँग की थी, जिसे हमने स्वीकार कर लिया था। क्या तुम्हें याद है कि तुम्हारी स्वीकारोक्तिके साथ निम्न-लिखित पत्र भी था?

बम्बई
१५ अक्तूबर, १९३७

पूज्य गांधीजी,

महादेवभाईके हाथ आपने जो मसौदा भेजा है और जिसमें श्रीयुत बहादुरजीकी लिखावटमें कुछ परिवर्तन भी हैं, वह मैं पढ़ गया हूँ। उसपर मैंने हस्ताक्षर कर दिये हैं, इसलिए मैं आशा करता हूँ कि निर्णय प्रकाशित नहीं किये जायेंगे। आपको मेरी वजहसे इतनी चिन्ता और परेशानी उठानी पड़ी, इसका मुझे सचमुच बड़ा अफसोस है और इसके लिए मैं आपसे क्षमा चाहता हूँ। आशा है, आप मुझे क्षमा कर देंगे।

आपका,
के० एफ० नरीमान

१. देखिए परिशिष्ट ६।

तुमने मैसूरमें जो वक्तव्य दिया है उससे पता चलता है कि तुमपर कतई भरोसा नहीं किया जा सकता। मुझे यह बताने की कोई आवश्यकता नहीं कि तुम्हें उस निर्णयको प्रकाशित करने की पूरी स्वतन्त्रता थी और है जिसकी प्रतियाँ तुम्हें १६ अक्तूबर, १९३७ को डाक द्वारा भेजी गई थीं। मैंने कार्य-समितिके सम्मुख सारे तथ्य पेश कर दिये हैं और मैं अब निर्णयकी प्रतियाँ भी उसके आगे रखने जा रहा हूँ।

हृदयसे तुम्हारा,

[अंग्रेजीसे]

ए० आई० सी० सी० फाइल सं० ७४७-ए, १९३७। सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३३७. पत्र : टंडनजीको

२९ [अक्तूबर][1], १९३७

भाई टंडनजी,

मेरे बारेमें भी आपका तार मिला। उसके सिवाय मैंने और कुछ नहीं देखा था। उस बारेमें मुझको रिपोर्ट भेज दिया यह भी अच्छा हुआ। तारका उत्तर मैंने जानबूझकर नहीं दिया। इस वर्ष इतने तार आ गये, दुनियाके सब विभागसे, कि मुझको आश्चर्य हुआ। और मैंने ईश्वरका अनुग्रह जाना। आभार-प्रदर्शनके लिए छोटा-सा संदेश मैंने अखबारोंमें भेज दिया। किसीको व्यक्तिगत उत्तर नहीं देने का निश्चय किया। मुखसे उत्तर देना भी क्या? इतने प्रेमका उत्तर केवल कृतिसे ही दिया जा सकता है। देखें, ईश्वर मुझको किस बातमें अपना निमित्त बनायेगा।

पत्रकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

१. साधन-सूत्रमें "सितम्बर" है, जो स्पष्टतः चूक है; देखिए "वक्तव्य: समाचारपत्रोंको", पृ० २२६।

३३८. भेंट : राजनीतिक पीड़ितोंको[1]

कलकत्ता
२९ अक्तूबर, १९३७

खबर है, गांधीजी ने शिष्टमण्डलसे कहा कि मैंने इस मामलेको बहुत गम्भीरतासे हाथमें लिया है और मुझसे जो-कुछ बन सकेगा सो करने के लिए मैं कटिबद्ध हूँ। उन्होंने आगे कहा कि मैं यदि पूरी तरहसे नहीं तो मुख्यतया इसी उद्देश्यसे बंगालमें आया हूँ और इस प्रश्नको लेकर मैं वाइसरायसे भी मिलने के लिए तैयार हूँ। उन्होंने शिष्टमण्डलसे अनुरोध किया कि वे लोग ऐसा कोई कार्य न करें जिसके कारण समस्याके समाधानमें कठिनाई हो।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ३०-१०-१९३७

३३९. ताड़ी नहीं, नीरा

कुछ लोग जाने-अनजाने यह कहने लगे हैं कि मैंने खट्टी ताड़ी (ताड़ीकी शराब) पीने की छूट दे दी है। मैंने यह बिलकुल स्पष्ट कर दिया है कि मद्य-निषेध तमाम मादक पेयों तथा वस्तुओंपर लागू होता है, और इसमें एक भी चीज अपवाद-रूप नहीं है। इसलिए सम्पूर्ण मद्य-निषेधकी किसी भी योजनामें ताड़ीकी शराबकी छूट कभी हो ही नहीं सकती। पर मैंने यह जरूर कहा है और फिर कहता हूँ कि ताजी मीठी ताड़ीका, जिसे "नीरा" कहते हैं, निषेध नहीं होना चाहिए, और खट्टी ताड़ीकी जगह नीरा पीने के रिवाजको प्रोत्साहन भी देना चाहिए। यह कैसे हो सकता है, इसका निर्णय तो मद्य-निषेधके लिए जिम्मेदार मन्त्री ही करेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३०-१०-१९३७

१. बंगाल और पंजाबके राजनीतिक पीड़ितोंका एक शिष्टमण्डल गांधीजी से शामको मिला। ऐसा मालूम होता है कि प्रतिनिधियोंने गांधीजीसे अनुरोध किया कि वे राजनीतिक बन्दियोंकी रिहाईके प्रश्नको देशके सम्मुख एक प्रमुख समस्याके रूपमें पेश करें और आगे कहा कि इस प्रश्नको लेकर सरकारपर दबाव डालने की आवश्यकता हो तो कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंको पद-त्याग तक करना चाहिए।

३४०. समाज-सेवकोंकी अनिवार्य भरती

इस महत्त्वपूर्ण प्रबन्धका[1] मतलब यह नहीं है कि समाज-सेवकोंकी भरतीकी जो योजना इसमें प्रस्तुत की गई है उसके अलावा इसकी और कोई योजना हो ही नहीं सकती। इसमें समाज-सेवकोंकी भरतीकी व्यावहारिकता दिखाई गई है। यह योजना उस भरतीका एक रास्ता सुझाती है।

> . . . आधुनिक स्वतन्त्र समाजोंमें अनिवार्य भरतीका उपयोग अबतक आम तौरपर राष्ट्रीय प्रतिरक्षा या साम्राज्यवादी आक्रमणसे बचावके लिए किया गया है। यदि इस देशमें हम सार्वजनिक अनिवार्य भरतीको – जिसमें स्त्री-पुरुष सभी शामिल होंगे – अपनायेंगे तो उसमें हमारा कोई विध्वंसक उद्देश्य नहीं होगा; बल्कि वह भरती राष्ट्रकी शुद्ध सेवा और सामाजिक पुर्नानर्माणके निमित्त होगी।
>
> कुछ देशोंमें कुछ लोगोंको ऐसी अनिवार्य और निःशुल्क सार्वजनिक सेवासे बरी कर दिया जाता है और अक्सर ऐसी सेवा करनेवालोंको कुछ एवजी लाभ भी दिये जाते हैं। इस देशमें भी हमें किसी ऐसे ही तरीकेसे काम लेना पड़ सकता है। हमारी राष्ट्रीय व्यवस्थामें यह नई चीज प्रभावकारी ढंगसे और सुचारु रूपसे काम कर सके, इसके लिए हमें इसको कई चरणोंमें हासिल करना पड़ सकता है। लेकिन इसकी नींव तो जल्द ही पड़ जानी चाहिए।
>
> समाज-सेवकोंकी अनिवार्य भरतीका काम १८ से २५ सालके बीचकी उम्रके शिक्षित पुरुषोंसे शुरू करना चाहिए। भरती किये गये कार्यकर्त्ताओंके दलकी सहायताके लिए ब्रिटिश बालचरों या इतालवी बैलिला किस्मके बालक या बालिका स्वयंसेवकोंकी सहायक संस्थाएँ स्थापित की जा सकती हैं। भारतमें शिक्षित पुरुषोंका अनुपात ५ : १ और शिक्षित महिलाओंका अनुपात ५० : १ है। लेकिन जिस उम्रके लोगोंमें से भरती शुरू करनी चाहिए उस उम्रके लोगोंमें यह अनुपात शायद बेहतर हो –– समझ लीजिए पुरुषोंमें ३ : १ और स्त्रियोंमें १० : १। "शिक्षित" शब्दका प्रयोग यहाँ किंचित् उदार, बल्कि कहिए, अति उदार अर्थोंमें किया गया है, क्योंकि इनमें वे लोग भी शामिल हैं जो केवल अपनी मातृभाषाकी दृष्टिसे साक्षर-मात्र हैं। . . . जो छात्र माध्यमिक स्तरकी पढ़ाई पूरी करने की अवस्थामें हैं, भरतीका काम उन्हींतक सीमित रखना शायद अधिक कार्य-साधक हो। बम्बई प्रान्तमें ऐसे १५ लाख छात्र

१. के० टी० शाहके इस प्रबन्धके कुछ अंश ही यहाँ दिये जा रहे हैं।

उपलब्ध हैं। इनमें से शायद २,५०,००० ही न्यूनतम शैक्षणिक कसौटी पर खरे उतरें और १,००,००० से भी कम ऊपर सुझाई उच्चतर कसौटी पर खरे उतरें।

हम अपना प्रयोग इन एक लाख लड़कोंसे शुरू कर सकते हैं। १८ साल या इससे कुछ अधिक उम्रके ये युवक जो सेवा करें उसे इन समर्थ लोगों द्वारा दिया जानेवाला एक प्रकारका दस प्रतिशतका व्यक्ति-कर मानना चाहिए, जो वे किस्मोंमें अदा कर रहे हैं। उनकी बेहतर शिक्षाको इस बातका प्रमाण मानना चाहिए कि उनमें यह कर चुकाने की योग्यता है।

उदाहरणके तौरपर बम्बई प्रान्तको लें। यहाँ हम जिन एक लाख शिक्षित युवकोंको लेकर अपना प्रयोग आरम्भ कर सकते हैं वे उस प्रान्तके २१,४८४ गाँवोंमें हमारे तात्कालिक उद्देश्यके लिए पर्याप्त होंगे। प्रत्येक गाँवके लिए प्रायः ५ सेवक उपलब्ध होंगे। इनके अलावा २५,००० स्त्रियाँ भी इनके काममें योग दे सकती हैं।

समाज-सेवाके सबसे जरूरी और तत्काल हाथमें लिये जानेवाले काम ये हैं: (क) अशिक्षा और अज्ञानको दूर करना; (ख) स्वास्थ्य और सफाईके बुनियादी ज्ञानका प्रचार; (ग) ग्रामीण लोगोंकी उत्पादक संस्थाओं और धन्धोंमें सुधार करना और उनमें सहायता देना।

अनिवार्य भरतीके लिए बनाये जानेवाले कानूनकी एक सबसे महत्त्वपूर्ण धारा सेवकोंको दिये जानेवाले कार्योंको सावधानीसे परिभाषित करने के सम्बन्धमें होगी। जबतक हरएक प्रान्तमें किये जानेवाले कामकी एक व्यापक योजना तैयार न कर ली जाये और उसपर स्वीकृति प्राप्त न हो जाये तबतक भरतीकी किसी भी योजनाको कार्यान्वित नहीं करना चाहिए। . . .

यहाँ जो योजना सुझाई गई है उसके अनुसार तैयार की जानेवाली सेवकोंकी सेनाको विशेष प्रशिक्षण — यूरोपके रंगरूटोंसे भी अधिक प्रशिक्षण — देना होगा, क्योंकि यूरोपके रंगरूट तो भरती होने से पूर्व अपने स्कूलोंमें भी कुछ सैनिक शिक्षा प्राप्त कर ही चुके होते हैं। भारतकी शिक्षा-प्रणालीमें औसत युवकोंके लिए ऐसी कोई सुविधा नहीं है।

हर प्रान्तमें मौजूदा स्कूलों और कालेजोंको ही प्रशिक्षण-संस्थाओंकी तरह विकसित करना चाहिए। इन संस्थाओंके शिक्षकोंके पास, विशेषकर ऊँची कक्षाओंके शिक्षकोंके पास तो जरूरतसे ज्यादा काम नहीं है और उन्हें वेतन भी कम नहीं मिलता है। शिक्षाके प्रत्येक विभागमें और शाखामें ऊपरसे लेकर नीचेतक हर किसीसे कमसे-कम एक घंटा सेवा अवश्य ली जानी चाहिए। सेवा-कालके एक वर्षमें से छः महीने इस तरहका गहन प्रशिक्षण दिया

जाना चाहिए। प्रत्येक सेवकको उसकी रुचि और पूर्व-प्रशिक्षणके अनुसार काम दिया जाना चाहिए।

इस तरह भरती किये जानेवाले लोगोंको प्रशिक्षण-काल और वास्तविक कार्य-कालमें वेतनके रूपमें कुछ नहीं दिया जायेगा। लेकिन उनका निर्वाह-खर्च सरकारको चलाना चाहिए और अपने घर जाने और वहाँसे कार्य-क्षेत्रतक आने का व्यय भी सरकारको ही वहन करना चाहिए। लेकिन यह खर्च इतना नहीं होना चाहिए कि इसे चुकाना राज्यके लिए भारी हो जाये और न सेवकों द्वारा की जानेवाली सेवाके मूल्यसे ही उसे अधिक होना चाहिए।

जो लोग स्वेच्छासे और बिना किसी छूटके ऐसी सेवा करते हैं वे जब अपने निर्वाहके लिए रोजगारकी तलाश करने लगें तो सरकारी संस्थाओंको उन्हें प्राथमिकता देनी चाहिए। साथ ही सरकारको ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए जिससे गैर-सरकारी संस्थाएँ भी उन्हें प्राथमिकता दें। सरकारके लिए यह करना आसान भी हो गया है, क्योंकि इन दिनों राज्यकी ओरसे उद्योगोंको आम तौरपर संरक्षण मिलता ही है और सरकार उद्योगपतियोंसे ऐसा कह सकती है कि अगर इन सेवकोंको प्राथमिकता नहीं दी गई तो वह अपना संरक्षण वापस ले लेगी। ऐसी भरतीके लिए बनाये जानेवाले बुनियादी कानूनमें इस प्रकारके पुरस्कारकी स्पष्ट व्यवस्था रहनी चाहिए।

अनिवार्य भरतीके लाभोंको विस्तारपूर्वक समझाने की जरूरत नहीं है। पहली बात तो यह कि इससे हमारे देशमें जिस अनिवार्य और तात्कालिक समाज-सेवाकी आवश्यकता है, उसपर होनेवाले खर्चका सवाल एक बड़ी हदतक हल हो जायेगा। साथ ही इससे लोगोंको नियमबद्ध ढंगसे और मिलजुल कर —— तथाकथित [illegible] —— काम करने की आदत पड़ेगी और भारत जिस अनुपात-दूरीके रोगसे ग्रस्त है, उसे दूर करने के लिए कटिबद्ध समाजके लिए अपनेमें ऐसी आदत डालना अनिवार्य है। और ऐसे एक मार्गीकरण (रेजीमेंटेशन) —— इस शब्दका प्रयोग इसका गलत अर्थ लगाये जाने की आशंकाके बिना किया जा सकता है —— के फलस्वरूप समाजके अधिकाधिक लोगोंको व्यक्तिगत सफाई और आरोग्यमय जीवनकी वे आदतें अपने-आप पड़ती चली जायेंगी जिन्हें अधिकांश लोग, यदि उन्हें अपनी मर्जीपर छोड़ दिया जाये तो, कोई महत्त्व नहीं देते और परिणामस्वरूप उनके स्वास्थ्य, स्वभाव और कार्यकुशलताको हानि पहुँचती है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३०-१०-१९३७

३४१. एक कदम आगे

अभी जो शिक्षा-परिषद् हुई है उसका कार्य-विवरण इस अंकमें अन्यत्र दिया गया है।[१] जनता और कांग्रेसी मन्त्रियोंके आगे मेरी योजना पेश करनेके काममें इस परिषद्से एक नया और महत्त्वपूर्ण प्रकरण प्रारम्भ होता है। इतने सारे मन्त्री परिषद्में उपस्थित थे, यह एक शुभ चिह्न था। परिषद्में जो आपत्तियाँ उठाई गई और जो आलोचनाएँ हुई, वे खासकर इस विचारके —— मेरे किये हुए संकुचित अर्थमें भी —— विरोधमें थीं कि शिक्षाको स्वावलम्बी होना चाहिए। इसलिए परिषद्ने जो प्रस्ताव पास किया है उसमें बहुत सावधानीसे काम लिया गया है। इसमें तो कोई सन्देह नहीं कि परिषद्को एक अज्ञात समुद्रमें नाव खेनी थी। उसके सामने एक भी सम्पूर्ण पूर्वोदाहरण नहीं था। मैंने जो विचार रखा है, अगर वह निर्दोष होगा, तो अमलमें लाने पर वह ठीक स्वरूप ग्रहण करके चल निकलेगा। अन्तमें तो जिनको स्वावलम्बनवाले भागपर श्रद्धा होगी उन्हींको इस विचारके अनुसार पाठशालाएँ चलाकर इसकी सचाईको साबित करके दिखाना है।

पूरी प्राथमिक शिक्षा, जिसमें अंग्रेजीको छोड़कर माध्यमिक अभ्यास-क्रमके भी सभी विषयोंको शामिल करने का इरादा है, किसी भी उद्योगके माध्यमसे देनी चाहिए, इस प्रश्नपर तो परिषद्में आश्चर्यजनक मतैक्य था। लड़कों और लड़कियोंके पूर्ण व्यक्तित्वका विकास उद्योग द्वारा करना है —— यह तथ्य अपने-आपमें ऐसा है जो स्कूलोंको कारखाने बन जाने से बचाता है। क्योंकि लड़कों और लड़कियोंको जिस उद्योगकी शिक्षा मिलेगी उसमें अमुक हदतक निष्णात होने के अलावा उन्हें जो अन्य विषय सीखने होंगे उनमें भी उन्हें उतनी ही योग्यता दिखानी पड़ेगी।

इस योजनापर व्यावहारिक अमल किस तरह हो सकता है, और लड़के-लड़कियोंको एकके बाद दूसरे वर्षमें क्या-क्या सीखना होगा, यह तो हम डॉ० जाकिर हुसैनकी समितिके[२] परिश्रमपर से ही जान सकेंगे।

एक एतराज यह उठाया गया है कि परिषद्में क्या-क्या प्रस्ताव[३] पास करने हैं, यह तो पहलेसे ही निश्चित हो चुका था। इस एतराजमें जरा भी तथ्य नहीं

१. देखिए पृ० २९३-९९।

२. जाकिर हुसैन की अध्यक्षतामें नियुक्त इस समितिको परिषद्के प्रस्तावोंके आधारपर एक सुनियोजित पाठ्यक्रम निर्धारित करने और एक महीनेके अन्दर अपनी रिपोर्ट गांधीजी को देने के लिए कहा गया था। इस समितिके अन्य सदस्य थे: आर्यनायकम, ख्वाजा गुलाम सैफुद्दीन, विनोबा भावे, द० बा० कालेलकर, श्री कृष्णदास जाजू, जे० सी० कुमारप्पा, आशादेवी, किशोरलाल मशरूवाला और के० टी० शाह।

३. प्रस्तावोंके लिए देखिए ३०५ पर पा० टि० १।

है। सारे देशमें से बिना सोचे-विचारे सारे शिक्षा-विशारदोंको भी बुलाना और उनसे एक ऐसी योजनापर, जो उनके लिए निःसन्देह क्रान्तिकारी योजना थी, अपना मत एका-एक व्यक्त करने के लिए कहना वस्तुतः असम्भव था। इसलिए ऐसे ही व्यक्तियोंको निमन्त्रण भेजा गया जिन्हें शिक्षकके रूपमें उद्योग-शिक्षणका कुछ अनुभव है। राष्ट्रीय शिक्षाका कार्य करनेवाले मेरे साथी इस नई कल्पनाको इस तरह [illegible] ग्रहण कर लेंगे, यह तो खुद मैंने भी नहीं सोचा था। यह योजना जब जाकिर हुसैन समितिके सौजन्यसे ठोस और अधिक पूर्ण रूपमें जनताके आगे आयेगी, तब शिक्षा-विदोंके विशाल वर्गको इसपर विचार करने के लिए जरूर निमन्त्रण दिया जायेगा। जिन शिक्षाविदोंके पास सहायता दे सकनेवाले कुछ सुझाव हों उनसे मेरी प्रार्थना है कि वे कृपया वे सुझाव समितिके संयोजक और मन्त्री श्री आर्यनायकमके पास, वर्धाके पतेपर भेज दें।

परिषद्में एक वक्ताने जोर देकर यह कहा था कि छोटे-छोटे बच्चोंको शिक्षा देने का काम पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियाँ अच्छी तरह कर सकती है; और कुमारियोंकी अपेक्षा माताएँ और भी अच्छी तरह कर सकती हैं। एक दूसरी दृष्टिसे भी प्रोफेसर शाहकी अनिवार्य सेवाकी योजनामें पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियाँ ज्यादा उपयोगी बैठती हैं। जिन देशभक्त महिलाओंके पास फुरसतका समय हो उनके लिए इस बहुत बड़े सत्कार्यमें अपनी सेवा अर्पण करने का यह बड़ा सुन्दर अवसर है, इसमें सन्देह नहीं। लेकिन वे अगर तैयार हों तो उन्हें अच्छी तरह प्रारम्भिक प्रशिक्षण लेना पड़ेगा। आजीविकाकी तलाशमें पड़ी हुई गरजमन्द बहनें इस कामको एक धन्धा मानकर इसमें आने का विचार करती हों तो उससे कोई मतलब निकलनेका नहीं। वे अगर इस योजनामें आना चाहती हैं तो उन्हें शुद्ध सेवा-भावसे ही इसमें पड़ना चाहिए, और इसे अपना जीवन-कार्य बना लेना चाहिए। वे यदि स्वार्थी वृत्तिसे इसमें पड़ेंगी तो वे इस काममें सफल नहीं हो सकेंगी और उन्हें अत्यन्त निराशा होगी। अगर भारतकी संस्कारी महिलाएँ गाँवोंके लोगोंके साथ — और वह भी उनके बच्चोंके माध्यमसे — ऐक्य-साधन करें, तो वे भारतके गाँवोंके जीवनमें एक शान्त और भव्य क्रान्ति ला सकती हैं। क्या वे इसके लिए तत्पर होंगी?

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३०-१०-१९३७

३४२. बातचीत: अण्डमानके कैदियोंसे[1]

[कलकत्ता
३० अक्तूबर, १९३७][2]

किसी भी कारणसे आपको अनशन नहीं करना है। यद्यपि ऐसी परिस्थितियोंकी कल्पना की जा सकती है जब अनशन करना उचित माना जा सकता है, लेकिन रिहाईके लिए या कोई शिकायत दूर करवाने के लिए अनशन करना गलत है। और इधर मैं बातचीत चला रहा हूँ और उधर आप अनशन करने लगें तो यह तो मेरे पंख तोड़ देने-जैसा होगा। लेकिन जब अनशनके लिए आपके पास मुझ-जैसा विकल्प है ही तब फिर उसके बारेमें आप सोचें ही क्यों? मैं तो अब चन्द दिनोंका मेहमान हूँ। अब ज्यादा दिन मेरे जीने की सम्भावना नहीं है, साल-दो साल खींच लूँ तो खींच लूँ, और आपको बता दूँ कि इस छोटी-सी अवधिका अधिकतर भाग मैं आपकी रिहाईके प्रयत्नोंमें ही लगाने जा रहा हूँ। मैं मरने से पहले आपको रिहा देखना चाहता हूँ। मैं आपको यह वचन देता हूँ और आपसे भी यह वचन चाहता हूँ कि जबतक मैं आपके लिए कार्य करते हुए जीवित हूँ, आप अनशन नहीं करेंगे। जबतक आपको रिहा नहीं करवा लेता मैं सुख-चैनसे नहीं बैठ सकता। आप मेरी बातका विश्वास कीजिए। मनुष्य विश्वासके सहारे ही जीता है। मेरा काम वकीलका नहीं, बल्कि मानव-सेवकका, अहिंसाके पुजारीका है। जबतक आप लोग कैदमें हैं, अहिंसा नहीं फैल सकती। इसीलिए मैंने इस कामके लिए अपने प्राणोंकी बाजी लगा दी है। इसलिए कृपया अनशनकी बात मत सोचिए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २३-४-१९३८

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। लेखकके अनुसार जब गांधीजी शामके पाँच बजे अण्डमानसे कुछ ही दिन पूर्व आये कैदियोंसे अलीपुर जेलमें मिलने गये तब उन लोगों ने कहा कि यदि उन्हें रिहा नहीं किया जाता, दूसरे शब्दोंमें, यदि गांधीजी यह स्पष्ट कर देते हैं कि वे उनकी रिहाईके प्रयत्नमें असफल रहे तो वे फिर अनशन करेंगे। लेकिन उन्होंने गांधीजी को यह वचन अवश्य दिया कि जबतक वे स्पष्ट शब्दोंमें अपनी असफलता स्वीकार नहीं कर लेते तबतक वे कुछ नहीं करेंगे। उन्होंने पूछा कि अब स्थिति क्या होनी है और उन्हें कबतक प्रतीक्षा करनी है। इसपर गांधीजी ने उनसे उपर्युक्त बातें कहीं।

२. १-११-१९३८ के **बॉम्बे क्रॉनिकल**से।

३४३. पत्र : अमृतकौरको

३१ अक्तूबर, १९३७

प्रिय अस्पृश्या,

आज मैंने १२-१० पर मौन धारण किया, ताकि कल कार्य-समितिकी बैठकके लिए अपनेको तैयार कर सकूँ। यह पत्र लिखते-लिखते मुझे तुम्हारा २९ तारीखका पत्र मिला है। मुझे तो मेरी ओरसे महादेवके लिए पत्रोंके अन्तमें अपनी ओरसे दो शब्द लिखने की भी फुरसत नहीं मिलती। उस समय मैं आम तौरपर कार्य-समितिकी बैठकमें होता हूँ।[1]

इन परिस्थितियोंमें मेरा स्वास्थ्य जितना ठीक रह सकता है, उतना रहा है। हाँ, मैं कैदियोंसे मिला। उनके साथ दो घंटे रहा। उनकी रिहाईका मामला सरलता या आसानीसे सुलझनेवाला नहीं है। उसके लिए मैं हर सम्भव प्रयत्न करूँगा। लेकिन अन्ततः सबकुछ भगवानके हाथ है।

मैं कल सेगाँवके लिए रवाना हो रहा हूँ[2] और गवर्नरसे[3] तथा जिन अन्य लोगोंसे मिलना जरूरी हो उनसे मिलने के लिए ११ नवम्बरको वापस लौटूँगा।

आज बस इतना ही।

स्नेह।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८२६) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६९८२ से भी

१. साधन-सूत्रके अनुसार।

२. लेकिन रक्तचाप बढ़ जाने के कारण गांधीजी को यात्रा स्थगित करनी पड़ी; देखिए "तार: अब्दुल गफ्फार खाँ को", ४-११-१९३७ के पूर्व।

३. सर जॉन एंडर्सन।

३४४. पत्र : नन्दलाल बोसको

वुडबर्न रोड,
कलकत्ता
३१ अक्तूबर, १९३७

प्रिय नन्द बाबू,

क्या आप कृपया साथका[1] लेख तथा चित्रोंको देख जायेंगे, जिन्हें लेखिका पुस्तक-रूपमें प्रकाशित करवाना चाहती है? मुझे प्रस्तावना लिखने को कहा गया है, लेकिन मुझमें इसकी कोई योग्यता नहीं है। इसलिए आपकी राय जानने के लिए मैं यह लेख आपको भेज रहा हूँ। यदि आपके विचारमें लेखमें कुछ वास्तविक गुण हैं तो आप अपनी राय भेज दीजिएगा, जिसे यदि लेखिका चाहेगी तो प्रस्तावनाके-रूपमें छपवाया जा सकता है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्च :]

कृपया उत्तर सेगाँव भेजिएगा।

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९८३८) से।

३४५. पत्र : अमृतकौरको

१ नवम्बर, १९३७

प्रिय अस्पृश्या,

कल मैंने दो-चार पंक्तियाँ लिखी थीं। आज उसीको पूरा करने के लिए लिखा गया मानना। हाँ, [illegible] घोषणापत्र और नामोंकी प्रतीक्षा किये बिना प्रकाशित किया जा सकता है। लेकिन मैं समझता हूँ, उसके सिलसिलेमें कुछ काम भी करना होगा और तुम इसे अकेले ही नहीं करोगी ! ! !

तुम्हारा भाषण[2] दो दिन हुए, भेज दिया था। जैसा कि तुमने देखा होगा, मैंने उसमें कुछ महत्त्वपूर्ण सुधार किये हैं। जबतक वे तुम्हें बिलकुल ठीक न लगें

१. यहाँ गांधीजी ने सन्दर्भ-चिह्न लगाकर लिखा है, "अलगसे, बुक पोस्ट द्वारा नहीं"।

२. यह भाषण अमृतकौरने अखिल भारतीय महिला सम्मेलन के अध्यक्ष-पदसे दिया था। यह ८-१-१९३८ के **हरिजन**में "नोट्स" (टिप्पणियाँ) शीर्षक के अन्तर्गत "ए रिमार्केबल एड्रेस" (एक उल्लेखनीय भाषण) उपशीर्षक से छपा था।

तबतक तुम्हें उन्हें स्वीकार करने की जरूरत नहीं है। तुम्हारे सब सुझाव अच्छे हैं, किन्तु क्या वे स्वीकृत होंगे और यदि स्वीकृत हुए भी तो क्या वे अमलमें लाये जायेंगे? जहाँ तुम्हें बोलना है वहाँ अपने श्रोताओंको देख-समझ लेना और उसके मुताबिक जैसा उचित लगे उस तरह उन्हें कार्यक्रम समझाना।

अनसूया कालेने और बादमें सरोजिनीने मुझसे पूछा कि मैं सभामें किस दिन जा सकूँगा। सरोजिनीने अन्तिम दिनका सुझाव दिया। मैंने कोई एतराज नहीं किया। लेकिन तय तुम्हीं करना। सबकुछ मौसमपर निर्भर करेगा। मेरा कार्यक्रम अस्त-व्यस्त हो गया है। मुझे गवर्नरसे मिलने के लिए यहाँ ११ तारीखको वापस आना होगा। वे यहाँ नहीं हैं और इस समय मेरी जैसी तबीयत है उसे देखते हुए मैं दार्जिलिंग नहीं जा सकता। मुझे १७ को या २० तारीखसे पहले ही सीमा प्रान्त पहुँचना है। खान साहब चाहते हैं कि मैं बीस दिन वहाँ रहूँ। इसका तात्पर्य यह हुआ कि मैं १० दिसम्बरसे पहले सेगाँव नहीं पहुँच सकूँगा। मुझे खेद है। ऐसी हालतमें तुम क्या करोगी? यदि शिमलाकी आबोहवा तुम्हें माफिक आती है तो क्या तबतक तुम वहीं नहीं रह सकती? मैंने सुना है कि शिमलामें सर्दीका मौसम सबसे अच्छा मौसम है, लेकिन तुम्हारे शरीरको क्या माफिक आयेगा सो तो तुम्हीं जानो।

इतना लिखने पर विघ्न आ पड़ा और वह अभी भी चालू है।

स्नेह।

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८२७) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६९८३ से भी

३४६. पत्र: जवाहरलाल नेहरूको

१ वुडबर्न पार्क
कलकत्ता
१ नवम्बर, १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारे और मेरे साथ हुए पत्र-व्यवहारमें[1] श्री नरीमान द्वारा उठाये गये दो मुद्दोंके सम्बन्धमें जाँच समितिने जो निर्णय दिया वह साथमें भेज रहा हूँ। मैंने श्री नरीमानको सुझाया था कि इस निर्णयके प्रकाशनके बजाय वे अपनी भूल स्वीकार कर लें,[2] जिसपर वे राजी हो गये। मैंने सोचा था इस स्वीकारोक्तिसे उस जाँचका सुखद अन्त होगा जिसके सिलसिलेमें मुझे कई बार काफी परेशानी उठानी पड़ी। किन्तु श्री नरीमानने अपनी ही स्वीकारोक्तिका जो खण्डन किया है और जिसे मैंने

१. देखिए "टिप्पणी: सरदार-नरीमान-प्रकरण-पर" पृ० २५७-५९।
२. देखिए "वक्तव्य: समाचारपत्रों को", पृ० २७५-७६ और परिशिष्ट ६।

पहले-पहल अखबारोंमें ही देखा उससे स्थिति बिलकुल बदल गई है और श्री नरीमानकी बुद्धिकी दयनीय अवस्था सामने आ गई है। इस खण्डनमें एक सफेद झूठका सहारा लिया गया है, जिसका संकेत मैंने श्री नरीमानको लिखे अपने पत्रमें[1] कर दिया है। साथमें वह पत्र भी भेज रहा हूँ।

मुझे याद है कि श्री नरीमानने स्वयं ही जाँचका आग्रह किया था और उन्होंने विचारपूर्वक यह माँग की थी कि १९३४ के बम्बईके चुनावके मामलेमें सरदार वल्लभभाईने उनपर गम्भीर विश्वास-भंगका जो आरोप लगाया था उसकी पूरी तहकीकात की जाये। उन्होंने तुम्हें जो पत्र लिखा था उसमें निम्न वाक्य भी है:

> **यदि ऐसी स्वतन्त्र जाँच-समिति मुझे तनिक भी दोषी पायेगी तो आप या कोई अन्य अधिकारी व्यक्ति मुझे जो भी सजा देगा उसे मैं सहर्ष स्वीकार करूँगा, लेकिन साथ ही यह आशा और अपेक्षा रखता हूँ कि यदि दोषी कोई और पाया गया तो उसके व्यक्तित्वका खयाल किये बिना या किसी प्रकारका व्यक्तिगत लिहाज-मुरौवत किये बगैर उसके खिलाफ भी वैसा ही भेदभाव-शून्य निर्णय दिया जायेगा।**

मेरे नाम लिखे अपने पत्र (जिसकी नकल मेरे पास नहीं है) में इससे भी आगे बढ़कर उन्होंने कहा कि यदि मुझे सरदार द्वारा लगाये गये आरोपका दोषी पाया गया तो मैं अपनेको किसी भी जिम्मेदारीके पदके अयोग्य मानूँगा।

मेरी राय है कि अपने इस आचरणसे श्री नरीमानने यह सिद्ध कर दिया है कि वे किसी भी जिम्मेदारीके पदके अयोग्य हैं — सो केवल इस कारण नहीं कि वे १९३४ के चुनावके सिलसिलेमें गम्भीर विश्वास-भंगके दोषी पाये गये हैं और सरदारके विरुद्ध लगाये अपने आरोपको सिद्ध करनेमें असफल रहे हैं, बल्कि अपने बादके उस आचरणके कारण भी जो उनके पत्र-व्यवहारमें प्रतिबिम्बित होता है, और विशेषकर अपनी उस स्वीकारोक्तिके दुर्भाग्यपूर्ण खण्डनकी वजहसे जो उन्होंने अपने वकीलकी उपस्थितिमें बिना किसी दबावके स्वतन्त्र रूपसे की थी।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

श्री जवाहरलाल नेहरू
अध्यक्ष, अ० भा० कां० कमेटी

[अंग्रेजीसे]

एक आई० सी० सी० फाइल सं० ७४७ ए, १९३७। सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. २९ अक्तूबर, १९३७ का पत्र, देखिए पृ० ३०७।

३४७. पुर्जा : वल्लभभाई पटेलको

१ नवम्बर, १९३७

मैं तो इस नतीजेपर पहुँचा हूँ कि [यदि तुम सभी] हट जाओ तो अच्छा है। अगर सब न भी हटें तो भी तुमको हट जाना चाहिए। जमनालाल तो हटेंगे ही। फिर रहा कौन? राजेन्द्रबाबू? दिवाला ही निकला समझो। भूलाभाई भी हटेंगे। लेकिन यदि वे न हटे तो भी कोई हर्ज नहीं। मौलानाका साथ मिलना ही चाहिए, ऐसा मुझे नही लगता। अगर वे नही हटे तो अन्तमे मजबूरन हटने की नौबत आयेगी। मैंने देख लिया है कि सुभाषका कोई भरोसा नहीं है। फिर भी उनके सिवा और कोई अध्यक्ष[1] नहीं बन सकता। मैंने तो रातको खूब विचार किया, इस समय भी किया। दूसरे जो जीमें आये करें। मेरा विश्वास है कि तुम्हें तो हट ही जाना चाहिए। यदि हरएक अपना फर्ज न समझे तो कुछ होगा नहीं और सारी बाजी हाथसे चली जायेगी।

नरीमानका मामला फिरसे अवश्य उठाऊँगा, लेकिन सम्भव है, वह कुछ भी न करना चाहे। तो भी दूसरे सदस्य क्या कहते हैं, यह देखना है। देव[2] और पटवर्धन क्या सोचते हैं? भूलाभाई क्या कहते हैं? वे अकेले ही कहें तो उससे क्या फर्क पड़ेगा?

हटने के कारण साफ हैं। मैसूर-प्रकरण[3] और बढ़ता हुआ मतभेद। . . .[4] ऐसे तीव्र मतभेदोंके रहते कमेटीमें हरगिज नहीं रहा जा सकता, तुम्हें यह स्पष्ट कर देना चाहिए। पूरा विचार तुम खुद ही अकेले बैठकर कर लेना। इसमें किसीकी समझदारी काम नहीं आ सकती। मैं तो बने रहने में तुम्हारा अकल्याण ही देखता हूँ। गुजरातको सँभाला जा सके तो ठीक है। वह भी जाये तो जाये। प्रवाहमें बह जाना विनाशकारी है।

मैंने तो सुझाव दिया है कि तुम सबको त्यागपत्र दे देना चाहिए। आज सब इकट्ठे होकर विचार कर लो। आजका काम हरगिज ठीक नहीं माना जा सकता। और भी जो-कुछ हुआ, सब अनुचित है। वे खुशीसे अपनी समिति बनायें। यदि वे विरोधमें इस्तीफा दें तो ठीक न होगा। यह भी उनके सामने स्पष्ट कर देना चाहिए। राजेन्द्रबाबू आज यहाँ आ रहे हैं। यह सब सुनकर मुझे लगता है कि तुम सबको

१. आगामी हरिपुरा कांग्रेसका।

२. शंकरराव देव।

३. देखिए "अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी," १३-११-१९३७।

४. साधन-सूत्रके अनुसार।

त्यागपत्र दे देना चाहिए। मेरे पास तो समय नहीं है, शक्ति नहीं है, मुश्किलसे टिका हुआ हूँ। तुम्हें ही आज रात बातचीत करके तय कर लेना चाहिए।

जब इतना असत्य घुस आया है तब बने रहकर क्या करोगे?[1]

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २१७-१८

३४८. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

१ नवम्बर, १९३७

कलकत्ता छोड़ने से पहले मैं जनताको बता देना चाहूँगा कि मैंने अंडमानके कैदियोंको पूरे दिलके साथ राहत दिलवाने का जो वचन दिया था उस सिलसिलेमें मैंने जो प्रयत्न किये हैं उनकी क्या स्थिति है।

इन्हीं प्रयत्नोंके क्रममें और बंगाल सरकारकी कृपापूर्ण अनुमतिसे मैं ३० अक्तूबरको अंडमानसे लौटे कैदियोंसे मिला[2] और उनके साथ लगभग दो घंटे रहा।

इस विषयमें मेरा सरकारके साथ पत्र-व्यवहार चल रहा है और मैं ११ तारीखको कलकत्ता लौटने की आशा रखता हूँ। उस समय मुझे उम्मीद है कि मैं परमश्रेष्ठ गवर्नर महोदयसे मिलूँगा और यदि आवश्यकता हुई तो सरकारकी अनुमति मिलनेपर मैं कैदियों और नजरबन्दोंसे भी मिलूँगा।

इस बीच मुझे यकीन है कि कैदी, वे चाहे जहाँ भी हों, फिरसे भूख-हड़ताल करके स्थितिको विकट नहीं बनायेंगे। मुझे सूचना मिली है कि इस विलम्बके कारण बहुतेरे कैदी बेचैन हो उठे हैं? मैं उन्हें केवल यही आश्वासन दे सकता हूँ कि जहाँ तक मेरा सवाल है, मेरी ओरसे इस कार्यमें कोई ढील नहीं होगी। और जहाँतक जनताका सम्बन्ध है, कैदियोंको जानना चाहिए कि उन्हें राहत दिलवाने का जन-आन्दोलन सतत जारी है।

[अंग्रेजीसे]

स्टेट्समैन, २-११-१९३७

१. इसका पाठ महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे मिला लिया गया है।

२. देखिए "बातचीत : अंडमानके कैदियोंसे", पृ० ३१५।

३४९. तार : अब्दुल गफ्फार खाँको

[१ नवम्बर, १९३७ या उसके पूर्व][1]

रक्त-चाप बहुत अधिक होने और थकानके कारण वर्धा नहीं जा पाया। डाक्टरोंने सीमा-प्रान्तकी यात्राके लिए मना किया है और मैंने अनिश्चित कालके लिए वहाँ जाना स्थगित कर दिया है। इससे मुझे बड़ा दुःख हुआ है किन्तु यह अनिवार्य है और मुझे कोई दूसरा समय तय करना होगा।

[अंग्रेजीसे]

स्टेट्समैन, ४-११-१९३७

३५०. पत्र : अमीना तैयबजीको[2]

१ वुडबर्न पार्क
कलकत्ता
४ नवम्बर, १९३७

प्रिय बहन,

मैंने जान-बूझकर आपको अभीतक पत्र नहीं लिखा, क्योंकि लिखने से पहले मैं मौलाना साहबसे बातचीत कर लेना चाहता था। केवल पत्रकी पहुँच भेजना मैंने अनावश्यक समझा। मौलानासे मेरी लम्बी बातचीत हुई। जहाँतक मैं समझ पाया हूँ 'कुरान' की परम्परागत तथा साम्प्रदायिक [illegible] भिन्न, मेरी व्याख्यासे वे सहमत हैं। किन्तु सम्भवतः भारत-भरमें वे एकमात्र ऐसे मौलाना हैं जो 'कुरान' की ऐसी उदार और सार्वभौमिक व्याख्या करते हैं, इस कारण वे नहीं चाहते कि जनता-के सामने एक आमूल सुधारवादीके रूपमें आयें और इस तरह भारतीय मुसलमानोंपर अपने प्रभावको आँच आने दें। इसलिए उन्होंने स्वयं हबीबको[3] पत्र लिखा है कि मेरे कलकत्तामें रहते वह सोहेला[4] को लेकर आ जाये। अतः मैंने हबीबको यहाँ आने के लिए तार भेजा है। यकीन मानिए, जबसे हमीदाका[5] मामला उठा है तबसे मैं

१. गांधीजी का वर्धा जानेका कार्यक्रम सोमवार, १ नवम्बरको स्थगित हो गया था।
२. दिवंगत अब्बास तैयबजीकी पत्नी।
३. अमीना तैयबजीके दामाद।
४. अमीना तैयबजीकी पुत्री।
५. अमीना तैयबजीकी नातिन।

आपके, आपकी कठिनाइयों और परेशानियोंके बारेमें बराबर सोचता-रहा हूँ। मैं हमेशा इस तरह काम करता रहा हूँ, करता रहूँगा और कर रहा हूँ मानों अब्बास साहबकी सजीव प्रतिमा मेरे सामने मौजूद है और वे मेरे सब काम देख रहे हैं। इससे अधिक मैं और क्या कर सकता हूँ?

कुछ और घटना आगे घटते ही तत्काल फिर पत्र लिखूंगा। मैं यहाँ कमसे-कम ९ तारीखतक रहूँगा। मेरे स्वास्थ्यको लेकर किसीको चिन्तित होने की जरूरत नहीं। संकटकी घड़ी टल चुकी है। मैं पूरा आराम कर रहा हूँ। आशा करता हूँ, आप और रेहाना[1] अच्छी तरह होंगी।

स्नेह।

आपका,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६९०) से।

३५१. पत्र : द० बा० कालेलकरको

१ वुडबर्न पार्क
कलकत्ता
५ नवम्बर, १९३७

चि० काका,

इसके साथका पत्र पढ़कर मेरा मार्गदर्शन करना। सोमवारको जाने के लिए जब आधा घंटा रह गया तब डाक्टरने सबको घबराहटमें डाल दिया और स्वयं भी घबरा गये। अन्ततः मुझे उनका कहना मानकर रह जाना पड़ा। अब तो ८ तारीखतक इस पहली मंजिलपर ही रहना पड़ेगा। बादमें जो हो, सो हो। मुझे उम्मीद है कि मैं ९ अथवा १० तारीखको यहाँसे रवाना हो जाऊँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७६८९) से।

१. अमीना तैयबजीकी पुत्री।

३५२. रवीन्द्रनाथ ठाकुरको लिखे पत्रका अंश[1]

६ नवम्बर, १९३७

(बिड़ला) बन्धु, मित्रोंकी मददसे या उनकी मददके बिना, प्रतिमास १,००० रुपये देंगे। इनमें से ८०० रुपये तो स्कूल ऑफ इण्डोलॉजीके लिए और २०० रुपये नन्दबाबूकी चित्रकलाके स्कूलके लिए होंगे। यह व्यवस्था तबतक रहेगी जबतक ये विभाग सन्तोषजनक ढंगसे काम करते रहेंगे।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य: नारायण देसाई

३५३. पत्र: रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

कलकत्ता
८ नवम्बर, १९३७

प्रिय गुरुदेव,

आपका सन्देशवाहक आपका बहुमूल्य पत्र और रसीदें लाया है।[2] मैंने तो कुछ नहीं किया, सब-कुछ ईश्वर-प्रेरित था। आपका श्रम और आपकी प्रार्थना दोनों सफल हुए हैं। प्रभुसे यही प्रार्थना है कि पैसेके लिए आपको कभी परेशान न होना पड़े और इस तरह श्रम न करना पड़े।

मैं भली प्रकार हूँ, धन्यवाद।

स्नेह।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६४८) से।

१. महादेव देसाईके अनुसार, पत्रमें गांधीजी द्वारा १३,००० रुपये भेजे जाने की भी सूचना दी गई थी। इस रकममें से १०,००० कला-भवनके लिए थे और शेष ३,००० एक-एक हजारकी मासिक किस्तोंमें भेजे जानेवाले थे।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

३५४. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको[1]

९ नवम्बर, १९३७

गवर्नर महोदयके साथ बैरकपुरमें लगभग दो घंटेतक मेरी बातचीत हुई। मेरी बीमारीका ध्यान रखते हुए मुलाकातका प्रबन्ध बागमें किया गया था। स्वभावत: हमारी बातचीत राजनीतिक कैदियों और नजरबन्दोंकी रिहाईके सवालतक ही सीमित रही।

आशा है, जनता अपने और मेरे समान ध्येयका विचार कर मुझसे यह आशा नहीं रखेगी कि मैं इस बातचीतका विस्तृत ब्योरा दूँ। मैं पत्रकारों और जनतासे कहूँगा कि मेरे इस कथनसे ही सन्तोष मानें कि मैंने अपने दृष्टिकोणको जितनी अच्छी तरह हो सकता था उतनी अच्छी तरह उनके सामने रखा और उसपर गवर्नर महोदय और मैंने विस्तारसे चर्चा की। मैं समाचार-पत्रोंसे अनुरोध करूँगा कि वे इस गोपनीय बातचीतके बारेमें कोई अटकलबाजी न करें।

[अंग्रेजीसे]
अमृतबाजार पत्रिका, १०-११-१९३७

३५५. तार : जे० एस० पिल्लईको[2]

[१० नवम्बर, १९३७ या उसके पूर्व][3]

महापौर-पदके लिए चुने जाने पर मेरी तरफसे हार्दिक बधाई। मुझे कोई सन्देह नहीं कि आप इस पदको गौरवान्वित करेंगे।

गांधी

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ११-११-१९३७

१. गांधीजी ने बैरकपुरमें बंगालके गवर्नरसे बातचीत करके लौटने के बाद यह वक्तव्य जारी किया था।

२. जे० एस० पिल्लई प्रथम हरिजन थे, जो मद्रासके महापौर चुने गये थे।

३. यह तार श्री पिल्लाईको १० नवम्बरको प्राप्त हुआ था।

३५६. तार : अमृतकौरको

कलकत्ता
१० नवम्बर, १९३७

राजकुमारी अमृतकौर
मनोरविले
शिमला वेस्ट

सबकुछ मजेमें झेल गया। रवाना होने की तिथि अनिश्चित है। स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४१९८) से: सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७८३४ से भी

३५७. पत्र : दिलखुश बी० दीवानजीको

सेगाँव
११ नवम्बर, १९३७

भाई दिलखुश,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारी भेजी चीज पढ़ जाऊँगा, और उसके बारेमें यदि कुछ कहने लायक होगा तो लिखूँगा। काम पूरा करने का लोभ ठीक है। लेकिन उसे पूरा करना है, इस कारण जो देने लायक है उसे देने में विलम्ब किया जाये, ऐसा नहीं होना चाहिए। तुम निरर्थक विलम्ब करोगे, ऐसी आशंका मुझे नहीं है, लेकिन मेरी कुछ बातोंका सहज ही गलत अर्थ लग सकता है, इस बातको ध्यानमें रखकर मैंने यह चेतावनी दी है। अपूर्ण वस्तु भी यदि सौ फीसदी सत्य और अनुभवसिद्ध हो तो उसे देना बहुधा धर्म हो जाता है। खादी-शास्त्रमे मैंने जितनी वस्तुओंका समावेश किया है उनका पूर्ण ज्ञान तो किसीको नहीं है। पर इससे मैं निराश नहीं हूँ। लेकिन यदि किसीको उसकी एक भी शाखाका पूर्ण ज्ञान न हो और तब भी वह उस ज्ञानको प्राप्त करने की कोशिश न करे तो इसपर मुझे दु:ख अवश्य होगा। निराशा तो मुझे तब भी नहीं होगी। क्योंकि जबतक स्वयंपर मेरी श्रद्धा है, जबतक खादीमें मेरी आस्था है और उसका ज्ञान प्राप्त करने का यथाशक्ति प्रयत्न कर रहा हूँ तबतक मैं निराश क्यों होऊँ? जिनकी खादीपर ऐसी श्रद्धा है उनका रुख यही

होना चाहिए। हो सकता है, तुम्हें यह सब लिखना सर्वथा अनावश्यक हो। ऐसा हो, तब भी मेरा लिखना शायद तुम्हारे लिए सहायक हो।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
मोटाना मन, पृ० ७०

३५८. टिप्पणी : मद्य-निषेधपर

यह लेख[1] मद्यनिषेध-विषयक चर्चाके सन्दर्भमें एक बहुमूल्य देन है। इसमें जहाँ कुछ चीजें ऐसी हैं जिन्हें स्वीकार नहीं किया जा सकता वहीं कुछ सुझाव ऐसे भी हैं जो विचारणीय हैं। राजस्वके लिए लेखकने क्रमिक सुधारका पेचीदा मार्ग अपनाया है। इस रास्तेपर चलने से पूर्ण असफलता ही मिलने की सम्भावना है। किन्तु लेखकने मादक पदार्थोंके उत्पादन व बिक्री तथा कच्ची ताड़ीपर राज्यके एकाधिकारका जो सुझाव दिया है वह बहुत अच्छा है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १३-११-१९३७

३५९. अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी

कांग्रेसी मन्त्रियोंके सिरपर चार प्रकारकी जिम्मेदारी है। व्यक्तिगत रूपसे मन्त्री मुख्यतः अपने मतदाताओंके प्रति जिम्मेदार है। अगर उसे यह यकीन हो जाये कि वह अब उनका विश्वासपात्र नहीं रहा है, या जिन विचारोंके कारण वह चुना गया था वे उसने बदल दिये हैं, तो वह इस्तीफा दे देगा। सामूहिक रूपसे वे विधायकोंके बहुमतके प्रति जिम्मेदार हैं। ये विधायक चाहें तो अविश्वास-प्रस्ताव या ऐसे ही किसी दूसरे उपायसे उन्हें किसी क्षण पदच्युत कर सकते हैं। लेकिन एक कांग्रेसी मन्त्री अपने पद और जिम्मेदारीके लिए कांग्रेसकी प्रान्तीय समिति और अ० भा० कांग्रेस कमेटीके प्रति भी उत्तरदायी है। जबतक ये चारों संस्थाएँ मिलकर काम करती रहती हैं, मन्त्रियोंको अपने कर्त्तव्य-पालनमें आसानी रहती है।

लेकिन अ० भा० कांग्रेस कमेटीकी हालकी बैठकसे[2] मालूम हुआ कि उसके कुछ सदस्य कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंसे और खासकर मद्रासके मुख्य मन्त्री श्री राजगोपालाचारीसे बिलकुल सहमत नहीं हैं। पूरी जानकारीपर आधारित स्वस्थ और सन्तुलित

१. एक "डाक्टर मित्र"का लिखा लेख, जो यहाँ नहीं दिया गया है।
२. कलकत्तामें।

आलोचना सार्वजनिक जीवनका प्राण है। एक सर्वथा प्रजातन्त्रवादी मन्त्री भी जनताकी सतत निगरानीके बिना पथ-विचलित हो सकता है। लेकिन कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंकी आलोचना करनेवाला अ० भा० कांग्रेस कमेटीका प्रस्ताव और उससे भी अधिक उस-पर दिये गये भाषण सीमासे बाहर थे। आलोचकोंने तथ्योंको जानने की परवाह नहीं की थी। श्री राजगोपालाचारीका उत्तर उनके सामने नहीं था। वे जानते थे कि श्री राजगोपालाचारी वहाँ आने और अपने आलोचकोंको उत्तर देने के लिए बहुत उत्सुक थे, लेकिन गम्भीर बीमारीके कारण वे आ नही सके। अपने प्रतिनिधिके प्रति आलोचकोंका यह कर्त्तव्य था कि वे प्रस्तावपर विचार किया जाना स्थगित कर देते। इस सम्बन्धमें जवाहरलाल नेहरूने अपने विस्तृत वक्तव्यमें जो-कुछ कहा है, उन्हें चाहिए कि वे उसका अध्ययन करें और उसे हृदयंगम करें। मेरा विश्वास है कि आलोचकोंने अपनी आलोचनाओंमें सत्य और अहिंसाका त्याग कर दिया था। अगर उन्होंने अ० भा० कांग्रेस कमेटीको अपने पक्षमें कर लिया होता, तो कमसे-कम मद्रास-के मन्त्रियोंको तो, उन्हें विधान-सभाके सदस्योंके बहुमतका जो पूर्ण विश्वास प्राप्त दिखाई देता है, उसके बावजूद इस्तीफा दे ही देना पड़ता। निश्चय ही, यह कोई वांछनीय परिणाम न होता।

मेरी रायमें इससे भी कहीं अधिक हानिकर मैसूरवाला प्रस्ताव[1] था, और दुःखकी बात तो यह है कि जब यह प्रस्ताव पास हुआ उस अवसरपर सत्यके पक्षसे बोलने को लगभग कोई भी खड़ा नहीं हुआ। मैं मैसूर राज्यकी हिमायत नहीं करता। बहुत-सी बातें ऐसी हैं जिनके सम्बन्धमें मैं महाराजा द्वारा सुधार किये जाने की अपेक्षा रखता हूँ। लेकिन कांग्रेसकी नीति है कि अपने विरोधीको भी उचित अवसर दिया जाये। मेरी रायमें मैसूरका प्रस्ताव [देशी राज्योंमें] हस्तक्षेप न करने के प्रस्तावके[2] खिलाफ था। जहाँतक मैं जानता हूँ, वह प्रस्ताव कभी रद नहीं किया गया है। गुण-दोषकी दृष्टिसे देखें तो कांग्रेस कमेटी पूरे राज्यके सम्बन्धमें कोई प्रस्ताव पास करने या चर्चा करने के लिए नहीं बैठी थी। वह सिर्फ दमन-नीतिपर विचार कर रही थी। प्रस्तावमें स्थितिको सही-सही प्रस्तुत नहीं किया गया था और भाषण गुस्सेसे भरे हुए और मामलेकी असलियतका लिहाज किये बिना दिये गये। अगर अ० भा०

१. इसमें कहा गया था: "अ० भा० कांग्रेस कमेटीकी यह बैठक मैसूर राज्यमें अनेक प्रतिबन्धात्मक और निषेधात्मक आदेश लागू करने और राजनीतिक मुकदमे चलाने और इस प्रकार वहाँ दमनकी क्रूर नीति आरम्भ किये जाने के खिलाफ जोरदार शब्दोंमें अपना रोष प्रकट करती है, और वहाँ भाषण करने, सभा करने और संघ बनाने के बुनियादी अधिकारोंका हनन करके नागरिक स्वतन्त्रता और अधिकारोंको दबानेकी नीतिकी भी निन्दा करती है।

यह बैठक मैसूरकी जनताको शुभकामनाएँ भेजती है और उनके वैध अहिंसात्मक संघर्षमें उनकी सफलताकी कामना करती है और भारतीय रियासतों और ब्रिटिश भारतकी जनतासे अपील करती है कि मैसूरके लोगोंको आत्मनिर्णयके अधिकारके लिए राज्यके विरुद्ध उनके संघर्षमें उनको पूरा समर्थन और प्रोत्साहन प्रदान करें।"

२. जो लखनऊमें अप्रैल, १९३६ में पास किया गया था।

कांग्रेस कमेटीका ऐसा ही खयाल था, तो अपना फैसला सुनाने से पहले उसे असलियत मालूम करने के लिए और नहीं तो एक ही आदमीकी एक समिति नियुक्त करनी चाहिए थी। अगर उसे सत्य और अहिंसाका जरा भी खयाल है, तो ऐसे मामलोंमें वह कमसे-कम इतना तो कर ही सकती है कि पहले वह कार्य-समितिको उनपर अपना फैसला जाहिर करने दे और बादमें अगर जरूरत हो तो उसपर न्यायिक दृष्टिसे विचार करे। अपनी बातको साबित करने के लिए शायद मुझे दोनों प्रस्तावोंकी तफसीलोंकी चर्चा करनी चाहिए थी, लेकिन मैंने जान-बूझकर ही वैसा नहीं किया। मैं अपनी परिमित शक्तिको बचा रहा हूँ और साथ ही मामलेको महासमितिके सदस्योंकी दूरदर्शितापर छोड़ता हूँ, क्योंकि १९२० से ही इस संस्थाको अपूर्व महत्त्व प्राप्त रहा है, जो पद-ग्रहणके प्रस्तावके[1] बाद तो दूना हो गया है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १३-११-१९३७

३६०. पत्र : जाकिर हुसैनको

१ वुडबर्न पार्क
कलकत्ता
१४ नवम्बर, १९३७

प्रिय जाकिर,

कई दिनोंसे यह पत्र लिखवाना चाह रहा था, लेकिन मौका ही नहीं मिला। वर्धामें उन दो दिनोंके दौरान तुमने जो काम[2] किया वह बहुत श्रेष्ठ था। अगली बार मिलोगे तो मैं तुम्हें सात सालका पाठ्यक्रम देना चाहूँगा। उसके बिना तुम्हारी रिपोर्ट अधूरी रह जायेगी। तुम्हें यह भी बताना चाहिए कि कितनी जगहकी जरूरत होगी और स्कूलकी इमारतों या इमारतकी शक्ल-सूरत क्या होगी। इमारत बनवाने का खर्च और उसमें लगनेवाली सामग्री भी बतानी चाहिए। इमारत बड़ी हो, यह कोई जरूरी नहीं है, लेकिन आधार ऐसा हो कि बादमें उसका विस्तार किया जा सके। तुम्हारे वर्धामें रहते मैं तुम्हारे साथ नहीं रह पाया, इसका अफसोस है। मैं खास तौरसे ख्वाजा गुलाम सैयदेनसे[3] मिलना चाहता था। अपनी रिपोर्ट पूरी करके जब तुम फिर आओगे उस अवसरपर तुम्हारा साथ पाने के दिनका मैं बेकरारीसे इन्त-

१. जो १६ मार्च, १९३७ को पास किया गया था; देखिए खण्ड ६५, पृ० ४-५। इस लेखके सम्बन्धमें जवाहरलाल नेहरूकी प्रतिक्रियाके लिए देखिए परिशिष्ट ८।

२. बुनियादी शिक्षापर जाकिर हुसैन समितिकी रिपोर्ट।

३. अलीगढ़के टीचर्स ट्रेनिंग कालेजके प्रिंसिपल; बादमें भारत सरकारके शिक्षा विभागमें सलाहकार और सचिव।

जार कर रहा हूँ। अगर मेरा अभीका काम खत्म हो गया तो बुधवारको यहांसे रवाना होने की आशा रखता हूँ।

इसकी एक नकल आर्यनायकमको भेज रहा हूँ।

तुम्हारा,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

३६१. पत्र : अमृतकौरको

१५ नवम्बर, १९३७

प्रिय अस्पृश्या,

तीन दिनके अन्तरालके बाद मुझे आज तुम्हारी दो चिट्ठियाँ मिलीं। मैं अभी भी चिट्ठी-पत्री नहीं लिखता हूँ। दोनों हाथ कमजोर हैं। मैं सोमवारको 'हरिजन'के लेखोंके लिए दाहिने हाथका इस्तेमाल करता हूँ। लेकिन मैं आज तुम्हें चन्द पंक्तियाँ अवश्य लिखूँगा।

यदि ईश्वरकी इच्छा हुई तो हम बुधवारको वर्धाके लिए रवाना होंगे और आवश्यकता हुई तो नये गवर्नरके अपना पद-भार सँभाल लेने के बाद हम वापस लौट आयेंगे।

मुझे स्वस्थ होने के लिए पूरे आरामके अलावा और किसी चीजकी जरूरत नहीं है। मुझे उम्मीद है कि मैं सेगाँवमें पूरा आराम कर सकूँगा। यहाँ मुझे कोई आराम नहीं मिल सकता है। मौकेपर रहने के कारण स्वभावत: मेरा मन कैदियोंके काममें लगा रहता है और इससे मेरे दिमागपर जोर पड़ता है। इससे मुझे जिस मानसिक आरामकी सख्त जरूरत है उसमें काफी बाधा पड़ती है।

मैं अपने श्रमके परिणामके सम्बन्धमें कुछ नहीं कहता, क्योंकि उसके बारेमें कुछ नहीं जानता। हाँ, निराश नहीं हूँ।

क्या तुम्हें याद है कि तुमने मुझे सम्मेलनके पहले दिन नहीं, बल्कि २ तारीख को अथवा समापनके दिन बुलाया था। इससे मुझे कोई फर्क नहीं पड़ता। तुम अपने भाषणका शब्दश: अनुवाद मत करो। स्वतन्त्र अनुवाद करो। तुम चाहो तो कहीं कुछ छोड़ भी सकती हो और जोड़ भी सकती हो। कानों और ललाटका क्या हाल है? नबीबख्श कैसा है? क्या शिमला जाने से शम्मीको कुछ फायदा हुआ है?

स्नेह।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८२८)से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६९८४ से भी

३६२. पत्र : नरेशनाथ मुखर्जीको

१ वुडबर्न पार्क
कलकत्ता
१७ नवम्बर, १९३७

प्रिय मित्र,

आपके १६ तारीखके पत्रके सिलसिलेमें मैं यह कहूँगा कि मेरा स्पष्ट मत है कि जबतक कांग्रेसकी मनाही लागू है तबतक किसी गवर्नर और सरकारी अफसरके लिए आयोजित विदाई-समारोहमें, चाहे उसका आयोजन कहीं भी और किसीके भी द्वारा किया गया हो, कोई भी कांग्रेसी शामिल नहीं हो सकता। गवर्नर महोदयके साथ मेरी भेंट[1] तथा मन्त्रियोंके साथ मेरी मुलाकात चाहे मेरे आतिथेयके निवास-स्थलपर[2] हुई हों अथवा उन्हींके निवास-स्थानपर[3], यह कोई सामाजिक या सरकारी समारोह नहीं था। चूँकि मैं कांग्रेसका चवन्निया सदस्य भी नहीं हूँ, अतः मैं जो-कुछ निडर होकर कर सकता हूँ, वह चीज कांग्रेसजन नहीं कर सकते। जिस उदाहरणका आपने उल्लेख किया है, उसका मेरे दृष्टान्तसे कोई साम्य नहीं है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
अमृतबाजार पत्रिका, १८-११-१९३७

३६३. भेंट : 'यूनाइटेड प्रेस' के प्रतिनिधिको[4]

खड़गपुर
१७ नवम्बर, १९३७

अभी तो बंगालके मन्त्रियोंके साथ अपनी चर्चाके विषयमें कोई भी प्रेस-वक्तव्य देने का मेरा कोई इरादा नहीं है।

महात्माजी को जब यह बताया गया कि बंगाल सरकार उनके साथ हुई वार्त्ताके बारेमें एक विज्ञप्ति कल ही निकालनेवाली है, तब उन्होंने कहा :

१. ९ नवम्बरको।
२. १७ नवम्बर को।
३. १६ नवम्बर को।
४. गांधीजी शाम के ४ बजे खड़गपुर स्टेशन पहुँचे। वहाँ प्रतीक्षालयमें यूनाइटेड प्रेसके एक प्रतिनिधिने उनसे भेंट की थी।

सरकारी विज्ञप्ति देखने के उपरान्त यदि मुझे वक्तव्य देने की आवश्यकता प्रतीत हुई तो सम्भवतः एक वक्तव्य जारी करूँगा, किन्तु वह तो वर्धासे ही हो सकेगा।[1]

इसके बाद गांधीजी ने यूनाइटेड प्रेसको बताया कि वे बहुत शीघ्र कलकत्ता आयेंगे।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १८-११-१९३७

३६४. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

वर्धा जाते हुए
१८ नवम्बर, १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

मेरा खयाल है, रविवारकी उस कठिन रात और, मौन-दिवस, यानी सोमवारको जब तुम मेरे इर्द-गिर्द मँडरा रहे थे तब मैंने तुम्हारी आँखोंमें छिपे इस व्यक्तिगत पत्रको पढ़ लिया था। मेरी कमजोरी अभी गई नहीं है। मुझे हर तरहके मानसिक श्रमसे विश्राम चाहिए, लेकिन वह तो शायद नहीं मिल सकता।

इस पत्रका प्रयोजन तुम्हें यह बताना है कि मैंने बंगालके कैदियोंके बारेमें क्या किया और यह जानना भी कि मैंने उनके सम्बन्धमें जो-कुछ किया है क्या तुम उससे सहमत हो। समझौतेकी बातचीत बहुत थका देनेवाली साबित हुई है। बातचीत शुरू करने से पहले मैंने दोनों भाइयोंसे[2] इस बारेमें सलाह कर ली थी कि बातचीतके जरिये बन्दियोंको राहत दिलवाना वांछनीय होगा या नहीं। बातचीतके परिणामके प्रति उदासीन रहना सम्भव था और इस बातका भरोसा रखा जा सकता था कि लोकमतके विकसित होने पर समय आने पर बन्दियोंको रिहा कर दिया जायेगा। दोनों भाई प्रबल रूपसे इस पक्षमें थे कि जन-आन्दोलन चलता रहे, लेकिन बातचीत अवश्य की जाये। मैंने उनके सामने अपनी योजना भी रखी, जो अंडमान-के कैदियोंको भेजे मेरे तार पर[3] आधारित थी। और इस तरह मैंने अंडमानसे वापस लाये गये बन्दियों और देवलीसे लाये गये नजरबन्दोंसे मुलाकात की[4] और कल रात हिजलीके कैदियोंसे भी मिला। मन्त्री "गाँव और घरमें नजरबन्द" श्रेणीके बन्दियोंको लगभग तुरन्त ही और नजरबन्दी शिविरमें रखे गये ऐसे नजरबन्दोंको, जिन्हें वे खतरनाक न समझते हों, चार महीनेके अन्दर रिहा करने के लिए राजी हो गये हैं। बाकीके मामलेमें, यदि वे पहले ही रिहा नहीं हो गये हैं तो, वे मेरी सिफा-रिशको मान लेंगे। मेरी सिफारिश नजरबन्दोंके वर्त्तमान विश्वासके पता लगा लेने-पर निर्भर होगी। यदि मैं सरकारसे यह कह सकूँगा कि स्वतन्त्रता प्राप्त करने के

१. देखिए "वक्तव्य : बंगाल सरकारकी विज्ञप्तिपर", पृ० ३४०-४२।
२. सुभाषचन्द्र बोस और शरतचन्द्र बोस।
३. देखिए पृ० ८१ और १०८।
४. ३० अक्तूबर को।

साधनके रूपमें वे हिंसामें विश्वास नहीं रखते और समय-समयपर कांग्रेस द्वारा स्वीकृत प्रवृत्तियोंमें ही भाग लेंगे तो उन्हें रिहा कर दिया जायेगा। इस सम्बन्धमें किसी भी समय नीतिकी घोषणा की जा सकती है। विभिन्न जेलोंके और हिजली शिविरके कैदियोंसे मेरी जो बातचीत हुई, उसका तफसीलवार वर्णन करने की जरूरत मैं नहीं समझता। पता नहीं, यह सब तुम्हें ठीक भी लगा है या नहीं। यदि यह सब तुम्हें बिलकुल नापसन्द हो तो मैं चाहूँगा कि तुम मुझे तार दो। अन्यथा मैं तुम्हारे पत्रकी प्रतीक्षा करूँगा।

अहमदाबादकी हड़तालोंसे — जिनके बारेमें अखबारोंमें जितना पढ़ने को मिला है उसके अलावा और कोई जानकारी मुझे नहीं मिली है — और शोलापुरकी घटनाओंके[1] सम्बन्धमें अखबारोंमें जो-कुछ लिखा है उससे भी मन बहुत परेशान हुआ। यदि हम स्थितिपर नियन्त्रण नहीं रख सकते — चाहे उसका कारण यह हो कि कांग्रेसियोंका एक हिस्सा कांग्रेसके अनुशासनका पालन नहीं करता अथवा यह कि कांग्रेस उन लोगोंकी गतिविधियोंपर काबू नहीं रख सकती जो कांग्रेसके प्रभाव-क्षेत्रसे बाहर हैं — तो हमारे पदारूढ़ रहने से उस उद्देश्यको निश्चय ही हानि पहुँचेगी जिसको लेकर कांग्रेस चल रही है।

'वन्देमातरम्' को लेकर जो झगड़ा उठ खड़ा हुआ था वह अभी खत्म नहीं हुआ है। कार्य-समितिके निर्णयसे बहुत-से बंगाली अप्रसन्न हैं।[2] सुभाषने मुझे बताया कि वे वातावरणको शान्त करने की कोशिशमें लगे हुए हैं।

मैं आशा करता हूँ कि नये गवर्नरके कार्य-भार सँभालने के तुरन्त बाद मुझे बंगाल वापस जाना होगा।

उम्मीद है, तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक होगा। सरूपके[3] बारेमें अखबारोंकी खबर चिन्ताजनक थी। उसपर जो जोर पड़ रहा है, क्या उसका शरीर उसे सहन नहीं कर सकता?

यह पत्र नागपुरके निकट आते-आते लिखा जा रहा है। हम आज शामको वर्धा पहुँच रहे हैं।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३७; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय। **ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स**, पृ० २४७-४८ से भी

१. देखिए "तूफानके आसार", पृ० ३३७-३८।

२. कुछ मुसलमानों ने कतिपय विधानमण्डलोंमें "वन्देमातरम्" के गायनके चलनेपर आपत्ति की थी। इसपर कांग्रेसकी कार्य-समितिने यह सिफारिशकी कि "जब कभी और जहाँ-कहीं वन्देमातरम्का गायन हो, पहले दो पद गाये जायें, और संयोजकोंकी इस बातकी पूरी स्वतन्त्रता हो कि वे वन्देमातरम्के अतिरिक्त या उसके स्थानपर कोई अन्य ऐसा राष्ट्र-गान गायें जो किसी प्रकार आपत्तिजनक न हो।"

३. जवाहरलाल नेहरूकी बहन विजयलक्ष्मी पण्डित।

३६६. मन्दिर-प्रवेश

वक संघकी कार्यकारिणी समितिने नीचे दिया हुआ प्रस्ताव पास

ाबार जिले और कोचीन राज्यमें मन्दिर-प्रवेश आन्दोलनने जो प्रगति र इन स्थानोंमें हरिजनोंके लिए मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें लोकमत जिस रहा है, उसपर हरिजन सेवक संघकी कार्यकारिणी समिति अपना हट करती है और इस कार्यका पूरा समर्थन करती है। मद्रास और सरकारोंसे इस समिति की प्रार्थना है कि वे अपने इलाकेके तमाम रोंको हरिजनोंके लिए खोल देने की घोषणा करके हरिजनोंकी अवि- ामें सहायक हों।

में दोनों सरकारोंको एक ही श्रेणीमें रखना ठीक नहीं है। कोचीन- क हिन्दू नरेशके मातहत खानगी सरकार है और कोचीनके मन्दिरों- जाका आधिपत्य है अथवा उनमें से अधिकांशके धर्म-प्रधान वही हैं। के अधिकारकी बात है, और मेरी रायमें उनका कर्त्तव्य भी है कि हरिजनोंके लिए भी उसी तरह मन्दिरोंको खोल दें, जैसे कि सवर्ण लिए वे खुले हुए हैं। इसलिए कोचीनके महाराजासे की गई प्रार्थना है।

ास-सरकार मद्रासकी जनताके प्रति जिम्मेदार है, और जनतामें सभी ोंके लोग शामिल हैं। इसलिए उसका कोचीन दरबारकी तरह कोई ा कर देना उचित नहीं है, जिसके द्वारा उसके इलाकेमें सब मन्दिर खोल दिये जायें। वहाँ तो हरिजनोंके लिए मन्दिर या तो खुद मर्जीसे खुल सकते हैं, या उन सवर्णोंकी प्रेरणासे जो नियमित रूपसे न्दिरमें दर्शन करने जाते हैं। अलबत्ता, मद्रास-सरकार ऐसा कानून ती है, और उसे बनाना भी चाहिए, जिससे इस दिशामें सहायता ा जाता है कि अगर सब सवर्ण ट्रस्टी चाहें तो भी एक अदालती जेसके कारण वे मन्दिरोंको हरिजनोंके लिए नहीं खोल सकते। गुरु- श आन्दोलनके[1] समय मैंने इस फैसलेपर विचार किया था और ने तथा उसके अर्थके बारेमें अपना सन्देह प्रकट किया था। लेकिन सन्देह-निवारणके लिए केन्द्रीय विधान-सभामें ऐसा कानून पास करने

१. ३ में।

का प्रयत्न किया गया था और वह नाकामयाब रहा।[1] फिर भी, मेरा खयाल है, नये संविधानके अन्तर्गत प्रान्तीय विधान मण्डलों के पास ऐसा कानून बनाने की सत्ता है। कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल अस्पृश्यताके हरएक रूपका नाश करनेके लिए प्रतिज्ञाबद्ध हैं। सवर्ण हिन्दुओंने यरवडा समझौतेके समय दूसरी बहुत-सी बातोंके साथ हरिजनोंके लिए, मन्दिर खोल देने की भी प्रतिज्ञा की थी।[2] इसलिए अवसर मिलते ही सबसे पहले कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंको ऐसा कानून बनाने का, बशर्ते कि कानूनन उनको ऐसा अधिकार हो, प्रयत्न करना चाहिए जिससे अस्पृश्यता कानूनी तौरपर खत्म हो जाये और ट्रस्टी या मन्दिरोंमें [illegible] रखनेवाले लोग मन्दिरोंको हरिजनोंके लिए खोलकर सदियोंसे चले आये अस्पृश्यता-रूपी अभिशापका उन्मूलन कर सकें। प्रान्तीय हरिजन सेवक संघ, बेशक, इसके पक्षमें सवर्ण हिन्दुओंका मत तैयार कर सकते हैं। मैं देखता हूँ कि हरिजन लोग इस दिशामें कुछ कर भी रहे हैं और मन्दिरोंको खोल देने पर जोर दे रहे हैं, जो ठीक ही है। मुझे यह भी मालूम है कि राव बहादुर एम० सी० राजाने इसके लिए एक विधेयक भी प्रस्तुत किया है। मैं आशा करता हूँ कि इस सम्बन्धमें वे मन्त्रियोंसे सम्पर्क रखेंगे और जैसी वे सलाह देंगे वैसा ही करेंगे; क्योंकि उनका और मन्त्रियोंका, दोनोंका, उद्देश्य तो एक ही है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २०-११-१९३७

३६७. तूफानके आसार

शोलापुरकी हालकी घटनासे, और कानपुर तथा बम्बईके मजदूरोंकी अशान्तिसे यह जाहिर होता है कि अव्यवस्थाकारी शक्तियोंपर कांग्रेसको कितना कम काबू है। जरायमपेशा कहलानेवाली जातियोंके साथ पहले जिस तरह पेश आया जाता था उससे भिन्न तरीकेसे उनके साथ तबतक पेश नहीं आया जा सकता जबतक यह बात अच्छी तरह न समझ ली जाये कि उनका आचरण कैसा होगा। एक फर्क तो बड़ी आसानीसे किया जा सकता है। उनके साथ ऐसे मुजरिमों-जैसा बरताव न किया जाये जिनसे खौफ खाना और दूर रहना ही ठीक है, बल्कि उनके साथ भाईचारा कायम करने और उन्हें राष्ट्रीय प्रभावमें लाने की कोशिशें की जायें। यह कहा जाता है कि शोलापुरकी बस्तीके लोगोंको लाल झण्डेवाले (अर्थात् साम्यवादी) अन्दर-अन्दर उभाड़ते हैं। क्या वे लोग कांग्रेसके आदमी हैं? अगर हाँ, तो वे उन कांग्रेसियोंकी तरफ क्यों नहीं हैं जो कांग्रेसकी इच्छासे आज मन्त्री बने हुए हैं? और अगर वे कांग्रेसजन नहीं हैं, तो क्या वे कांग्रेसके प्रभाव और प्रतिष्ठाको नष्ट करने की कोशिश कर रहे हैं? अगर वे कांग्रेसी नहीं हैं और कांग्रेसकी प्रतिष्ठा नष्ट करना चाहते हैं

१. देखिए खण्ड ५३, पृ० १५ की पाद-टिप्पणी ३; तथा पृ० १३७-४१ भी।
२. देखिए पृ० २०८-९; तथा खण्ड ५१, पृ० १४८-४९ भी।

तो कांग्रेसी इन जातियोंके पास क्यों नहीं पहुँच सके और उनकी वास्तविक या तथा-कथित हिंसावृत्तिका अनुचित लाभ उठानेवालोंका उनपर कोई असर न हो, ऐसी स्थिति क्यों नही पैदा कर सके?

अहमदाबाद और कानपुरमे हमे क्यों हमेशा आकस्मिक या अनुचित हड़तालोंका डर बना रहता है? संगठित मजदूरोंपर सही दिशामे अपना प्रभाव डालने में क्या कांग्रेस असमर्थ है? जिन सूबोंमें आज कांग्रेसी मन्त्रियों द्वारा शासन चलाया जा रहा है उनमें वहाँकी सरकारके जारी किये हुए नोटिसोंको हम अविश्वासकी नजरसे न देखें। हम गैरजिम्मेदार सरकारके नोटिसोंको कोई महत्त्व नहीं दिया करते थे, लेकिन वैसा ही सलूक इन नोटिसोंके साथ करने से काम नही चलेगा। अगर हमारा कांग्रेसी मन्त्रियोंपर विश्वास नहीं है या उनसे हम असन्तुष्ट हैं, तो वे बिना किसी तक-ल्लुफके बरखास्त किये जा सकते है। लेकिन जबतक हम उनको मन्त्रियोंके पदोंपर बने रहने देते हैं, तबतक उनके नोटिसों और अपीलोंको तमाम कांग्रेसजनोंका पूर्ण हार्दिक सहयोग मिलना चाहिए।

कांग्रेसियोंका पद-ग्रहण किसी और हालतमें उचित नहीं ठहराया जा सकता। कांग्रेसजनोंके सच्चे प्रयत्नके बावजूद अगर ये उपद्रव पुलिस और फौजकी सहायता लिये बगैर काबूमें नही लाये जा सकते तो, मेरी रायमें, कांग्रेसके पद-ग्रहणमें कोई बल और अर्थ नहीं रह जाता, और जितनी ही जल्दी मन्त्री अपने पदोंपर से हट जायें, कांग्रेस और उसकी पूर्ण स्वराज्य हासिल करने की लड़ाईके हकमें उतना ही बेहतर होगा।

मैं तो यही उम्मीद करता हूँ कि शोलापुरकी बस्तीका उपद्रव और अहमदाबाद तथा कानपुरके मजदूरोंकी अशान्ति मजदूरोके मनमे, बल्कि तथाकथित जरायमपेशा जातियोंके भी मनमें, उनकी दशामे आमूल परिवर्तनकी जो अतिरंजित आशाएँ जगा दी गई थीं उन्हीके प्रकट लक्षण है। तब तो कांग्रेसको इन उपद्रवोंको रोकने में कोई कठिनाई नही होनी चाहिए। इसके विपरीत, अगर ये कांग्रेसके शासनकी कम-जोरीके चिह्न हैं, तब कांग्रेसियोंके पद-ग्रहणसे उत्पन्न सारी स्थितिपर पुनर्विचार करने की जरूरत है।

एक चीज निश्चित है। कांग्रेसके संगठनको मजबूत बनाने और उसमें से गन्दगी को निकाल बाहर करने की जरूरत है। कांग्रेसके सदस्य न सिर्फ कुछ लाख पुरुष व स्त्रियाँ हों, बल्कि १८ सालसे ऊपरके हरएक बालिग पुरुष और स्त्रीको उसका सदस्य होना चाहिए, चाहे वे किसी भी धर्मके हों। और कांग्रेसके रजिस्टरमें उनके नाम इसलिए दर्ज किये जायें ताकि वे राष्ट्रीय स्वतन्त्रताकी लड़ाईकी दृष्टिसे सत्य और अहिंसाके आचरणका ठीक-ठीक प्रशिक्षण पा सकें। कांग्रेसके बारेमे मेरी हमेशाकी यह कल्पना रही है कि वह सारे राष्ट्रको राजनीतिक शिक्षा देने का सबसे बड़ा विद्यालय है। लेकिन कांग्रेस इस आदर्शको चरितार्थ करने की स्थितिसे अभी दूर है। सुनने में आता है कि कांग्रेसके झूठे रजिस्टर गढ़े जाते हैं, संख्या बढ़ाने की गरजसे फर्जी नाम लिख लिये जाते हैं। जहाँ रजिस्टर ईमानदारीके साथ तैयार किये जाते हैं, वहाँ भी मतदाताओंके निकट-सम्पर्कमें रहने का प्रयत्न नहीं किया जाता।

स्वभावतः यह प्रश्न उठता है: क्या हम सचमुच सत्य और अहिंसामें, सतत कार्य और अनुशासनमें, और चतुर्विध रचनात्मक कार्यक्रमकी शक्तिमें विश्वास करते हैं? अगर करते हैं तो कांग्रेसी मन्त्रियोंके चन्द महीनोंके शासनमें यह दिखाने के लिए काफी सबूत मिल चुका है कि जब पदग्रहण किया गया था तबकी अपेक्षा आज हम पूर्ण स्वाधीनताके अधिक निकट पहुँच गये हैं। लेकिन अगर हमें खुद हमारे ही पसन्द किये हुए उद्देश्योंके विषयमें भरोसा नहीं है, तो कोई आश्चर्य नही यदि किसी दिन हमारी आँखें खुलें और हम देखें कि पदग्रहणकी दिशामें कदम उठाकर हमने एक भारी भूल की थी। कांग्रेसको पदग्रहणकी दिशामे प्रवृत्त करनेवाले एक या प्रधान व्यक्तिकी हैसियतसे मेरे अन्तर्मनमे तो किसी प्रकारकी द्विधा नहीं है। मैंने इस खयालसे पदग्रहणकी सलाह दी थी कि कांग्रेसवादी कुल मिलाकर न केवल लक्ष्यके सम्बन्धमें बल्कि सत्य और अहिंसा-रूपी साधनोंके विषयम भी दृढ़ हैं। अगर हमारे अन्दर साधनके सम्बन्धमे यह राजनीतिक श्रद्धा नही है, तो सम्भव है कि पदग्रहण एक जाल साबित हो।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २०-११-१९३७

३६८. टिप्पणियाँ

प्रान्तीय सरकारें और हरिजन

ठक्कर बापाने नीचे लिखा प्रस्ताव प्रकाशनार्थ भेजा है:

(क) हरिजन सेवक संघकी कार्यकारिणी समिति कांग्रेसी प्रान्तोंकी सरकारोंसे अनुरोध करती है कि हरिजनोंकी अस्पृश्यताका निवारण करने के सम्बन्ध में वे शीघ्र ही अपनी नीतियाँ घोषित करें।

(ख) यह समिति प्रान्तीय सरकारोंसे यह भी प्रार्थना करती है कि सामान्यतया हरिजनोंके उत्थान-कार्यकी देखभाल करने, तथा विशेषतः सार्वजनिक पाठशालाओं, कुओं, तालाबों और नलोंके उपयोगके सम्बन्धमें उनकी बाधाएँ हटाने के लिए, और हरिजनोंको उनके नागरिक अधिकारोंका उपयोग करने में मदद देने के लिए जिन प्रान्तोंमें खास महकमे और खास अफसर नहीं हैं, वहाँकी सरकारें खास महकमे खोल दें और खास अफसरोंकी नियुक्ति कर दें।

(ग) यह समिति प्रान्तीय सरकारोंसे यह भी प्रार्थना करती है कि नगरपालिकाओं और दूसरी स्थानिक संस्थाओंके मुलाजिम भंगी तथा जमादार आज जिस दुःखजनक स्थितिमें रह रहे हैं और उनकी नौकरीकी जो शर्तें हैं, उनकी तरफ वे उन संस्थाओंका ध्यान आकर्षित करें, और उनसे कहें कि वे अपने इन मुलाजिमोंके लिए अच्छे मकानोंका, पानी और रोशनीका माकूल इन्तजाम

करके उन्हें जीवनकी बेहतर सुविधाएँ दें, और उनको अच्छा तथा पर्याप्त वेतन दें तथा उनकी नौकरियोंको स्थायी बना दें।

(घ) यह समिति प्रान्तीय सरकारोंका ध्यान सितम्बर, १९३२ के यरवडा-समझौते की ९ वीं धाराकी ओर, जो नीचे लिखे अनुसार है, आर्कषित करती है और उसको अमलमें लाने के लिए उनसे प्रार्थना करती है।

"(९) हर प्रान्तमें शिक्षाके अनुदानमें से एक अच्छी-खासी रकम दलित जातियोंके विद्यार्थियोंको शिक्षा-सम्बन्धी सुविधाएँ देने के लिए अलग रख दी जायेगी।"

प्रस्तावके भाग (क) में समितिको सिर्फ कांग्रेसी प्रान्तोंकी सरकारोंसे ही क्यों अपना कर्त्तव्य-पालन करने के लिए आग्रह करना चाहिए? मेरे खयालमें तो हरिजन सेवक संघकी कार्यकारिणी समितिका यह प्रस्ताव सभी सरकारोंपर लागू होता है। और जिन प्रान्तोंकी सरकारोंका ध्यान इस तरफ न हो या हो तो वे उपेक्षा कर रही हों, वहाँ विरोधी पक्षवालोंको उन्हें अपने कर्तव्य-पालनकी भावनाके प्रति जाग्रत करना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २०-११-१९३७

३६९. तार: प्रभाशंकर पट्टणीको

वर्धागंज
२० नवम्बर, १९३७

सर प्रभाशंकर पट्टणी
नई दिल्ली

रक्तचाप अस्थिर है। अत्यधिक थकान है किन्तु चिन्ताका कोई कारण नहीं।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९५६) से। सी० डब्ल्यू० ३२७३ से भी; सौजन्य: महेश पट्टणी

३७०. वक्तव्य : बंगाल सरकारकी विज्ञप्तिपर

वर्धा
२१ नवम्बर, १९३७

नजरबन्दोंके सवालपर बंगाल सरकार जिस निर्णयपर पहुँची है उसके लिए वह बधाईकी पात्र है। कांग्रेसी लोग अगर इस विज्ञप्तिका[1] मूल्य कांग्रेसके पैमानेसे आँकेंगे तो गलत करेंगे। बंगालका मन्त्रिमण्डल कांग्रेसके चुनाव घोषणापत्रसे बँधा हुआ नहीं है, और न वह कांग्रेसके आदर्शोंमें विश्वास रखता है। फिर भी उसने कांग्रेस की कार्य-पद्धतिकी दिशामें काफी दूरतक प्रयाण किया है। यह बात स्वीकार न की जाये, यह गलत होगा। राजनीतिक विरोधी भी यदि श्रेयके लायक कोई काम करे तो उसे भी श्रेय देना चाहिए। मेरी रायमें, बंगाल सरकारने एक हदतक लोकमतका खयाल रखा है, हालाँकि जितनी मैंने आशा की थी उस हदतक नहीं।

यदि मैं इस तथ्यका उल्लेख न करूँ कि इस मामलेमें परमश्रेष्ठ गवर्नर महोदयने काफी सहायता की तो यह अनुचित होगा। उनके सहयोगके बिना मन्त्रिगण अपनी इच्छाको कार्य-रूप नहीं दे सकते थे।

इस विज्ञप्तिको मैं, इस सम्बन्धमें आगे जो बहुत-कुछ किया जानेवाला है, उसका सूचक मानता हूँ। मैं विज्ञप्तिमें जाहिर की गई इस रायसे सहमत हूँ कि बहुत-कुछ इस सरकारी निर्णयके प्रति जनताकी और जिन ११०० नजरबन्दोंको सभी प्रकारके प्रतिबन्धोंसे मुक्त किया गया है या किया जायेगा उनकी प्रतिक्रियापर निर्भर करेगा। एक बात ऐसी है जो इस निर्णयकी शोभाको कम करती है। तात्पर्य इस शर्तसे है कि रिहा हुए लोगोंको अपने पतेमें होनेवाले परिवर्तनोंकी सूचना पुलिसको देनी पड़ेगी। इससे जो भीरुता प्रकट होती है उसका परिचय बंगाल सरकारने न दिया होता तो बहुत अच्छा होता।

लेकिन मैं आशा करता हूँ कि यह मात्र एक औपचारिकता है और इसे अनावश्यक महत्त्व देने की जरूरत नहीं है।

मुझे पूरा यकीन है कि यदि सरकार द्वारा उठाये गये इस कदमसे अहिंसाके वातावरणमें कोई बाधा नहीं पहुँचती है तो अन्तमें पूरी राहत अवश्य प्राप्त होगी। अहिंसाके पालनपर कांग्रेसका भी आग्रह है, बल्कि उसका तो यह सिद्धान्त है। कांग्रेसी मन्त्रियोंको मालूम है कि मन्त्रियोंके रूपमें उनका अस्तित्व एकमात्र अहिंसाके पालन-पर ही कायम है। मुझे आशा है कि रिहा किये गये नजरबन्द ऐसा आचरण करेंगे जिससे अहिंसाके वातावरणके निर्माणमें और उसकी नींव पुख्ता करने में मदद मिलेगी। चिकित्साके लिए यूरोप रवाना होने के पहले श्री सुभाषचन्द्र बोसने भी इस बातपर जोर दिया है, जो सर्वथा उचित है।

१. देखिए परिशिष्ट ९।

आशा है, रिहा किये गये नजरबन्द लोग उनकी ओरसे जनता द्वारा आयोजित किसी प्रदर्शनमें शरीक नही होंगे और जनता भी आवश्यक संयमसे काम लेगी। मैं तो रिहा हुए लोगोंसे अनुरोध करूँगा कि वे चुपचाप कोई जन-सेवाका कार्य हाथमें ले लें और इसीमें जुट जायें। मुझे विश्वास है कि जिन्हें रोजगार की जरूरत होगी उनकी मदद बड़ी-बड़ी व्यापारिक पेढ़ियाँ जरूर करेंगी। कलकत्ताकी जेलोंमे मैं जिन लोगोंसे मिला उनमें से अधिकांशने मुझे बताया कि वे अपनी रिहाई सिर्फ इसलिए चाहते है कि वे कांग्रेस द्वारा निर्दिष्ट ढंगसे जन-हितका कार्य कर सकें। उनमें से हरएकने मुझे चेतावनी देते हुए कहा कि हमें रिहा करवाने के लिए आप सरकारसे कोई सौदा न करें। उन्होंने कहा कि हम आपको जो आश्वासन दे रहे हैं उसे हमारी ईमानदारीकी पर्याप्त कसौटी मानना चाहिए।

मैंने भी कहा कि आपकी स्वतन्त्रता खरीदने के लिए मैं आपकी प्रतिष्ठा या आत्म-सम्मानको बेचने का अपराध कभी नही करूँगा।

जनताको स्मरण होगा कि वार्त्ताके आरम्भमें ही मैंने अंडमानके कैदियोंसे यह पूछकर देख लिया था कि क्या मै यह मानकर चल सकता हूँ कि स्वराज्य-प्राप्तिके हिंसक उपायोंका उन्होंने त्याग कर दिया है।[1] यदि मै ऐसा आश्वासन देने की स्थितिमें नहीं होता (और यदि मुझे इस बातका भरोसा नहीं होता कि कैदी जो-कुछ कह रहे हैं वह सच्चे मनसे कह रहे हैं)[2] तो मुझसे उनकी रिहाईकी माँग करते नही बनता।

मैं बंगालमें अपना काम पूरा नही कर पाया। जबतक वहाँ रहा, उस दौरान जितना किया उससे अधिक करना मेरे लिए सम्भव नही था। बंगाल सरकारने मुझे कैदियों और नजरबन्दोंसे चाहे जब, और अफसरोंकी अनुपस्थितिमें, मिलने की सुविधा दी, इसके लिए मै उसका आभारी हूँ। मेरी बातचीत अभी पूरी नहीं हुई है। मेरे हिजली जेलके मित्र मुझसे दो-तीन दिन बातचीत करना चाहते थे, लेकिन मैं उन्हें केवल दो घंटे दे सका। लेकिन जब उन्होंने मेरा चेहरा देखकर जान लिया कि मैं उस गरमागरम चर्चाका तनाव सहन नहीं कर सकता तब वे मान गये। उन्होंने मेरा अत्यधिक ध्यान रखा। मै जानता था कि मै उनके साथ न्याय नहीं कर रहा हूँ, क्योंकि यदि मैं स्वस्थ होता तब वे जितने मुक्त भावसे मेरे साथ बातचीत कर सकते थे उतने मुक्त भावसे उस हालतमे नहीं कर सकते थे। ज्यों ही मेरा स्वास्थ्य इस लायक होगा, मैं फिर बंगाल जाकर हरएक कैदी और नजरबन्दसे बातचीत करने की आशा रखता हूँ।

अंडमानके कैदियोंके सम्बन्धमें विज्ञप्तिमें कुछ नही कहा गया है। मैं जानता हूँ कि सरकार सजा पाये हुए कैदियों और बिना मुकदमा चलाये रोक रखे गये नजरबन्दोंके बीच बहुत अन्तर करती है।

१. देखिए "तार : वाइसरायको", पृ० ८१-८२।

२. कोष्ठक में दिया गया अंश २७-११-१९३७ के **हरिजन** में उपलब्ध वाक्यांशका अनुवाद है।

यह अन्तर सही है। निस्सन्देह, मार्गमें कठिनाइयाँ हैं। लेकिन अभी मैं इतना ही कह सकता हूँ कि अगर सबकुछ ठीक-ठाक चला और जनता — विशेषकर बंगाल की जनता — अबतक जिस तरह मेरी सहायता करती आई है उसी तरह करती रही तो इन लोगोंको भी रिहा करवा पाने की पूरी आशा है।

विज्ञप्तिका एक कथन कुछ चिन्तामें डालनेवाला है। इसमें कहा गया है कि सरकारकी नीतिकी सफलता "जिसमें विध्वंसक प्रवृत्तियोंको तनिक भी उत्तेजन न मिले, ऐसा वातावरण कायम रखने में जनता तथा जनमतको नेतृत्व देनेवाले लोगों द्वारा मिलनेवाले सहयोगपर निर्भर होगी।"

यदि "विध्वंसक प्रवृत्तियों"से सरकारका मतलब केवल हिंसात्मक प्रवृत्तियोंसे है तब तो कोई कठिनाई ही नही है और न हमारे तथा सरकारके बीच कोई मतभेद है। लेकिन अगर "विध्वंसक प्रवृत्तियों" में कांग्रेस जिसकी हिमायती है, उस तरहकी अहिंसात्मक कार्रवाई, जिसमें सविनय अवज्ञा भी शामिल है, भी आ जाती है तब तो मानना होगा कि जो रिहाइयाँ की गई है वे भूल हैं और आगे और भी लोगोंकी रिहाई बिलकुल असम्भव है। मन्त्रियोंके साथ हुई अपनी पूरी बातचीतके दौरान मैंने यह बात बिलकुल साफ कह दी थी कि मैं तो केवल अहिंसात्मक वातावरण बनाये रखने में ही सहायता दे सकता हूँ।

सरकार और जनताके पारस्परिक व्यवहारका एकमात्र योग्य और सम्मानजनक आधार अहिंसा ही हो सकती है। इस सुदृढ़ आधारशिलाके बिना लोकतन्त्र भारतमें एक सपना ही बना रहेगा। मुझे आशा और विश्वास है कि "विध्वंसक प्रवृत्तियों"से सरकारका तात्पर्य सिर्फ ऐसी प्रवृत्तियोंसे है जो या तो अपने-आपमें हिंसात्मक हैं या जिनका उद्देश्य हिंसाको उत्तेजन देना है।

[अंग्रेजीसे]
स्टेट्समैन, २२-११-१९३७

३७१. पत्र : जहाँगीर वकीलको

२२ नवम्बर, १९३७

प्रिय वकील,

मैं आपका पत्र आज सुबह ही पढ़ पाया। अपना पत्र-व्यवहार आजकल समयपर नहीं निपटा पाता।

आपके प्रेमको मैं अपने लिए अमूल्य निधि मानता हूँ और घृणा तो आपकी मने कभी जानी नहीं। लेकिन यदि मुझे उसके बारेमें मालूम होता तो भी मैं उसका बुरा नहीं मानता, क्योंकि सभी अपने स्वभावानुकूल ही आचरण करते हैं। "यीशुमय" और "ईश्वरमय" दोनों ही मेरे लिए बहुत वर्षोंसे समानार्थक शब्द रहे हैं।

अधिकांश ईसाई "यीशुमय" शब्दको जिस अर्थमें लेते हैं, मैं उसे उस अर्थमें नहीं लेता और शायद कभी लूँगा भी नहीं। लेकिन इससे कोई फर्क नहीं पड़ता।

आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य : नारायण देसाई

३७२. पत्र : महादेव देसाईको

मौनवार [२२ नवम्बर, १९३७][1]

चि० महादेव,

कलकत्तामें मैसूरके बारेमें जो प्रस्ताव पास हुआ था,[2] मैं उसे देखना चाहता हूँ। इससे तुम्हारा काम जरा बढ़ जायेगा। तुमने जवाहरलालको जो पत्र लिखा है[3] उसकी नकल भी मुझे चाहिए।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५८०) से।

३७३. पत्र : प्यारेलालको

२२ नवम्बर, १९३७

चि० प्यारेलाल,

तुमने यह क्या किया? मुझे बीमार छोड़कर और सुशीलाको रोती छोड़कर तुम चले गये। लेकिन मैंने तुम्हें जाने की अनुमति दी थी, यही न? लेकिन मेरी एक शर्त भी थी। मैंने इस तरह सशर्त अनुमति देकर उचित किया अथवा अनुचित, यह समय आने पर मालूम हो जायेगा। फिलहाल मेरी चिन्ता और भी बढ़ गई है और सुशीला बिलकुल अस्वस्थ-चित्त हो गई है।

तुमने माँ को दबाया, भाईको दबाया, बहनको हतप्रत कर दिया, कल बा को भी दबाया और जाते-जाते मुझे भी न छोड़ा। इस बातकी तुम्हें कुछ खबर है?

१. महादेव देसाई द्वारा जवाहरलाल नेहरू को १९ नवम्बर को लिखे पत्रके उल्लेखके आधारपर; देखिए परिशिष्ट १० (क)। इसके बाद मौनवार २२ नवम्बर को पड़ा था।

२. देखिए पृ० ३२८ पर पा० टि० १।

३. महादेव देसाईके लिखे इस पत्रके लिए देखिए परिशिष्ट १०(ख)।

तुम्हें अपना कहा याद है? [तुमने कहा था कि] यदि मैं तुम्हें जाने दूंगा तो सम्भव है कि तुमसे मेरा वियोग सहन न हो और वापस आकर मेरी गोदमें अपना सिर रख दो। क्या वह समय नहीं आया? क्या दो दिनोंका यह वियोग तुम्हें दो वर्षके समान नहीं लगा? यदि लगा हो तो जवाबमें यहाँ चले आना और तार देना। तभी सुशीला मेरी सेवा कर सकेगी और मैं उससे सेवा करवा सकूँगा।

क्या तुम जानते हो कि यदि तुम्हारी बात मैं समझ जाऊँगा तो मैं तुम्हारे भयंकर कदम उठाने की इच्छासे सहमत भी हो जाऊँगा? मगर क्या तुम मेरे अच्छे होने की अथवा मरने की राह नही देखोगे? जब मैं इस बीमारीसे उठूँगा तब पहला अवसर मिलते ही तुम्हारे साथ बातचीत करूँगा। यदि तुम यह कहते हो कि अब समझाने-जैसी कोई बात नहीं है तो यह जलेपर नमक छिड़कना होगा।

छोटेलालके देहान्तके बाद तुमने रामदासको जो पत्र लिखा था, वह उचित नहीं था। वह अन्यायपूर्ण था। तुममें किशोरलालका पत्र पढ़ने तकका धीरज न था। तुमने उसके साथ घोर अन्याय किया है। प्रारम्भिक भागको छोड़कर तुम पत्रका अन्य सारा हिस्सा पढ़ने के अपने धर्मसे चूक गये। अगर सारी दुनिया तुम्हें नहीं पहचानती और तुम्हारे साथ अन्याय करती है तो भी तुम्हारा धर्म सब-कुछ सहन करने में है। "मारी लाज तमारे हाथ, लाज सम्भालजो रे।" यदि तुम अनुचित कदम उठाओगे तो तुम मेरा जीवन बिगाड़ोगे। ऐसा अपने हाथों न होने दो। जल्दी आओ और यदि तुम नही ही आते तो मुझे और सुशीलाको ऐसा तार दो अथवा पत्र लिखो जिससे हमारे मनको शान्ति मिले।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य: नारायण देसाई

३७४. पत्र: अमृतकौरको[1]

सेगाँव
२४ नवम्बर, १९३७

फिलहाल मुझसे पत्रोंकी आशा मत रखो।
स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८३०) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६९८६ से भी

१. यह अमृतकौरको भेजे गये मीराबहनके पत्रमें उपलेखके रूपमें है।

३७५. प्रस्तावना[1]

सेगाँव, वर्धा
२७ नवम्बर, १९३७

आचार्य कृपालानीकी विचार-शैलीमे और उनकी कलममें कुछ असाधारणता है, यह बात उनकी कृतियाँ पढ़ने पर तुरन्त समझमे आ जाती है। जो लोग आचार्य कृपालानीको जानते हैं, वे तुरन्त कह देंगे कि अमुक लेख उन्हीका है। इस संग्रहको पढ़ते समय मेरे मनपर यह छाप पड़ी है।

आज जबकि देशमे अनेक प्रकारके नवीन विचारोंका प्रचार हो रहा है, यह संग्रह उन लोगोंके लिए बहुत सहायक सिद्ध होगा जो उन विचारोंका अध्ययन करना चाहते हैं। १९२० में कांग्रेसने जो कार्यक्रम अपनाया था, वह स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए आज भी उतना ही उपयोगी है जितना १९२० मे था, इसका आचार्य कृपालानी ने अच्छी तरहसे निरूपण किया है।

आचार्य कृपालानीका यह कथन बिलकुल सही है कि गांधीवाद-जैसी कोई चीज नही है। सत्यका आग्रह सनातन चीज है, उसका चिन्तन करते हुए अहिंसा-रूपी रत्नकी उपलब्धि हुई और अहिंसाके प्रयोगके फलस्वरूप १९२० का कार्यक्रम निश्चित किया गया। इसके बिना स्वतन्त्रता प्राप्त करने की कोशिश करना छूँछको पछोरने-जैसा है।

मो० क० गांधी

[गुजरातीसे]
आचार्य कृपालानीना लेखो

1. **आचार्य कृपालानीना लेखो**की।

३७६. पत्र : ख्वाजा नजीमुद्दीनको

मगनवाड़ी, वर्धा (मध्य प्रान्त)
२८ नवम्बर, १९३७

प्रिय सर नजीमुद्दीन,

आपके २४ तारीखके विस्तृत कृपा-पत्रके[1] लिए धन्यवाद।

मैं अभी भी बिस्तर पर पड़ा हूँ, किन्तु उत्तर तो पेन्सिलसे लिख ही डालूँगा और महादेव देसाई उसकी साफ प्रतिलिपि बना देंगे।

आपने मुझमें जिस विश्वासका परिचय दिया है वह मेरे लिए बहुत सन्तोष-दायी है, किन्तु यही विश्वास यदि उन लोगोंको भी नहीं दिया गया जिनके माध्यमसे ही मैं कार्यको सफलतापूर्वक सम्पन्न करने की आशा रखता हूँ, तो वह कार्य, जिसके लिए आप और मैं उद्यमशील हैं, ठप हो जायेगा। नजरबन्द कैदियों या बंगालकी जनतापर मेरा जो-कुछ भी प्रभाव है वह अधिकृत नेताओंके माध्यमसे ही है। मैं उनपर अपनी बात ऊपरसे नहीं थोप सकता। मेरे पास सिवाय समझाने-बुझाने के और कोई तरीका नहीं है। इस विषयमें श्री शरत बोसके साथ मेरा पत्र-व्यवहार बराबर होता रहता है। इन दोनों भाइयोंकी सहायताके बिना बंगालमें मैं कुछ भी नहीं कर सकता था। बेशक आपने बहुत ठीक किया कि डॉ० विधानचन्द्र राय और सरोजिनी देवीको हिजलीके मित्रोंसे मिलने की अनुमति दी। इस मुलाकातसे मदद मिलेगी।

एक बात मैं स्पष्ट कर देना चाहता हूँ। मैं जो-कुछ भी सिफारिशें करूँ, जहाँ-तक बंगाल सरकारका सम्बन्ध है, वे मैं केवल अपनी निजी जिम्मेदारीपर करूँगा। अतः आशा करता हूँ कि आप अपने फैसलेपर पुनर्विचार करेंगे और फिलहाल श्री शरत बोसको मेरी ओरसे हिजलीके कैदियोंसे मिलने की अनुमति प्रदान करेंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

सर के० नजीमुद्दीन
गृह-मन्त्री
राइटर्स बिल्डिंग
कलकत्ता

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७७८३)से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१. देखिए परिशिष्ट ११।

३७७. पत्र : अमृतकौरको[1]

सेगाँव
२८ नवम्बर, १९३७

मुझे तो समुद्र-तटवर्ती स्थानपर भेजने की साजिश चल रही है।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८३३)से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९८९से भी

३७८. पत्र : अमृतकौरको[2]

सेगाँव
२९ नवम्बर, १९३७

तुम्हें बीमार नही होना चाहिए। कितना अच्छा हो, अगर तुम एक बार पूरी तरह अपनी प्राकृतिक चिकित्सा करवा लो। आशा है, तुम्हारी भतीजीकी तबीयत पहलेसे अच्छी है। मुझे आज वाइसरायका एक व्यक्तिगत शुभकामना-पत्र प्राप्त हुआ। तुम रोज पत्र लिखो। फलोंके लिए महाराजा साहबको धन्यवाद देना, परन्तु उनसे कहना कि जब हमारे देशमें ताजे व सूखे दोनों तरहके फल काफी मात्रामें हैं तो फिर विदेशी फल क्यों?

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८३४)से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९९० से भी

१ और २. यह अमृतकौरको भेजे गये मीराबहनके पत्रमें पुनश्चके रूपमें है।

३७९. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको[1]

सेगाँव, वर्धा
२९ नवम्बर, १९३७

आशा है, मां अच्छी होगी।

बापूके आशीर्वाद

अम्बुजम्माल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३८०. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

नवम्बर, १९३७

मैं तो विदेशीका भी उपयोग कर लूँ। [मगर दूधका] पाउडर अथवा कंडेन्स्ड दूध तो हिन्दुस्तानमें भी तैयार हो सकता है। हाँ, उसपर खर्च जरूर करना पड़ेगा। अब देखना यह है कि स्वागत-समिति[2] इतनी दूरतक जाने के लिए तैयार है या नहीं। मेरे ही आग्रहको मानकर यदि कुछ किया जाता है तो यह बात मुझे कतई पसन्द नहीं। मैं तो आज हूँ, कल नहीं। यदि विचार अच्छे और सच्चे हों तभी उनपर अमल किया जाना चाहिए। जितनी तुमसे हो सके उतनी मेहनत करना। क्या दूधको पूरी तरह सुखाया नहीं जा सकता? यदि हम गायके दूधका आग्रह रखना अपना फर्ज समझते हैं तो बाहर जो पाउडरका दूध सस्ते दामपर मिलता है, उसका इस्तेमाल भी कर सकते हैं। ये तो रहे मेरे विचार। लेकिन यदि ये विचार सबके गले उतरें तो सारे हिन्दुस्तानमें तुम किसी-न-किसी रूपमें गायका दूध तैयार कर सकते हो। यदि तुम इस निश्चयपर पहुँचो तो मैं भी आजमाऊँगा।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९११३) से।

१. यह एस० अम्बुजम्मालके नाम मीराबहनके पत्रमें पुनश्चके रूपमें है।
२. हरिपुरा कांग्रेसकी।

३८१. पत्र : महादेव देसाईको

५ दिसम्बर, १९३७

चि० महादेव,

ये रहीं दो चीजें। शाहका बादमें भेजूँगा।

दुर्गाको तुरन्त न खदेड़ देना। मैं तो दुविधामें पड़ा हुआ हूँ। कहीं इसे हठ न माना जाये, इसलिए मैं समुद्र-तटपर[1] रहने जा रहा हूँ और तुम्हें भी साथ में घसीट रहा हूँ। लेकिन हम ठीक तरहसे वहाँ पहुँच जायेंगे, यह कौन जानता है? दुर्गा अभी जहाँ है वहीं रहे, यह मेरी सलाह है। लीलावती वहाँ खुश है। लेकिन अन्ततः तो ईश्वर ही मालिक है। वह जो करेगा वही ठीक होगा। और वर्त्तमान [illegible] मेरी अक्ल की कीमत है कितनी?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५८४) से।

३८२. पुर्जा : दामोदरदास मूँदड़ाको

[६ दिसम्बर, १९३७ या उसके पूर्व][2]

यह कागज जमनालालजी को दिखाना। इंजन लाने की कोई जरूरत नहीं। यदि इसकी पटरीको पार करने की अनुमति नहीं मिलेगी तो मैं कुर्सीपर बैठकर जाने के लिए तैयार रहूँगा।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०७४-ए) से।

१. बम्बईमें जुहूपर।

२. इस कागजपर प्राप्ति की तारीख ६ दिसम्बर, १९३७ पड़ी हुई है।

३८३. पत्र : महादेव देसाईको

मौनवार [६ दिसम्बर, १९३७][1]

चि० महादेव,

मेरा खयाल है कि हमारे पास कहीं देशी रियासतोंसे सम्बन्धित प्रस्ताव[2] पड़ा हुआ है। रत्नेके बारेमें तुमने जो लिखा वह सही है। जमनालालजी से पूछना। कदाचित् उन्हें याद होगा। कल रात मैंने तुम्हें दो चीजें भेजी थीं; वे गिरधारीने तुम्हें दे दी होंगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५८५) से।

३८४. बातचीत : महादेव देसाईसे[3]

६ दिसम्बर, १९३७

गांधीजी की सेगाँवसे जानेकी इच्छा नहीं थी और जैसा कि वर्धासे हमारे रवाना होने के दिन[4] उन्होंने मुझे बताया, उन्होंने सेगाँव केवल इस कारण छोड़ा है कि कहीं कोई उनपर हठधर्मिताका आरोप न लगाये।

मुझे सर्दीकी और ठंडेसे-ठंडे मौसममें भी खुलेमें सोने की आदत है, किन्तु अगर डाक्टर[5] जोर देते हैं कि ठंडका दिलपर और इसके फलस्वरूप रक्तचापपर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है, तो मुझे उनका कहना मान लेना चाहिए, चाहे वह हठधर्मिताके आरोपसे बचने के लिए ही क्यों न हो।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १८-१२-१९३७

१. पत्रमें "दो चीजें" भेजे जाने के उल्लेखके आधारपर; देखिए "पत्र : महादेव देसाईको", पृ० ३४९।
२. देखिए परिशिष्ट १० (ख)।
३. महादेव देसाई के "नोटस" (टिप्पणियाँ) से उद्धृत।
४. ६ दिसम्बर।
५. डॉ० जीवराज मेहता।

३८५. तार : अमृतकौरको

बम्बई
७ दिसम्बर, १९३७

राजकुमारी अमृतकौर
जालंधर सिटी

मैं पहुँच गया। अब अच्छा हूँ।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८३९) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६९९५ से भी

३८६. पत्र : लीलावती आसरको

८ दिसम्बर, १९३७

चि० लीलावती,

क्या तू पहले-जैसी ही है? विह्वल, चंचल, अशान्त, भावुक, संवेदनशील, अस्थिर और अव्यवस्थित। जब मैं चला जाऊँगा तब तू क्या करेगी? मेरा वश चलता तो तुझे साथ ही लाता। तुममें से किसीको भी पीछे छोड़ना मेरे लिए सम्भव न था, लेकिन मेरे कर्त्तव्यने मुझे विवश कर दिया। मुझे पत्र लिखना। तेरा पत्र मुझे मिल जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५८८) से। सी० डब्ल्यू० ६५६० से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

३८७. पत्र : विजया एन० पटेलको

८ दिसम्बर, १९३७

चि० विजया,

मैं तेरा दुःख समझता हूँ। तू धीरज रखना। मुझे खत लिखना। तेरा खत मुझे मिल जायेगा। पूरा ब्योरा देना, परेशान मत होना। सब-कुछ अच्छी तरह से सीखना। विनोबाके सत्संग का पूरा लाभ उठाना।

बाकी पीछे लिखा है।[1]

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७०७५) से। सी० डब्ल्यू० ४५६७ से भी; सौजन्य : विजयाबहन एम० पंचोली

३८८. पत्र : जे० पी० भणसालीको

८ दिसम्बर, १९३७

चि० भणसाली,

शारदाको अंग्रेजी सिखाने के लिए थोड़ा समय देना। वह ऐसी लड़की है कि उसे तुम जो-कुछ भी सिखाओगे उसका फल अच्छा निकलेगा। बच्ची होने पर भी वह सयानी और समझदार है।

मैंने कातने के बारेमें जो कहा है वह सब सत्य के पुजारीके लिए आवश्यक है, यह बात तुम समझ गये होगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८३६६) से। सी० डब्ल्यू० ७०२३ से भी; सौजन्य : मुन्नालाल जी० शाह

१. यह कनु गांधी द्वारा लिखित गांधीजी के स्वास्थ्यकी, विशेषकर उनके रक्तचापकी, रिपोर्ट है।

३८९. पत्र : अमृतलाल टी० नानावटीको

८ दिसम्बर, १९३७

चि० अमृतलाल,

यदि तुम अपनी अशान्तिकी बात मुझसे कहोगे तो अच्छा होगा। इसका क्या कारण हो सकता है? चाहे जो भी हो, तुम्हें यह परिवर्तन करना ही चाहिए। यदि तुम थोड़े समयके लिए बाहर जाना चाहते हो तो कब और कितने समयके लिए? तुम अपना वजन लिख भेजना। और तुमने जो-कुछ लिखा नहीं है, सो भी लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७४२) से।

३९०. पत्र : शारदा चि० शाहको

८ दिसम्बर, १९३७

चि० शारदा,

खबरदार! हारना नहीं। मनकी शान्ति बनाये रखना। मुझे विस्तारसे लिखती रहना। मैं तो नियमपूर्वक नहीं लिख सकता। आज ही कुछ-एक पत्रोंको हाथ लगा पाया हूँ। ऐसा हमेशा नहीं होगा। सारा काम सावधानीके साथ करना।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९७७) से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला

३९१. पत्र : अमृतकौरको

१३ दिसम्बर, १९३७

प्रिय अस्पृश्या,

आज सोमवार है और ७ बजकर ५५ मिनट हुए है। मैं तुम्हें कुछ पंक्तियाँ लिखे बिना नहीं रह सकता। तुम नागपुरके लिए रवाना होनेकी तैयारी कर रही हो।[1] किन्तु तुम मुझे नहीं ले जा सकतीं। यह बात मुझे पीड़ा देती है। तमाम प्रतिकूल बातों के बावजूद मैं आशा लगाये हुए था कि मैं तुम्हारी मददके लिए साथ रहूँगा। किन्तु परमात्माकी इच्छा कुछ और ही थी। मुझे क्षमा करना। वैसे मेरा मन तुम्हारे साथ ही होगा। पढ़ने या प्रकाशित करवाने के लिए मै तुम्हें शायद कोई सन्देश न भेज सकूँ, किन्तु तुम्हें उसकी जरूरत भी नही है। तुम्हारे लिए यह जान लेना ही काफी है कि मै उस कठिन समयके दौरान तुम्हारी सफलताके लिए प्रार्थना करता रहूँगा। तुम्हें मेरी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। वास्तवमें मैं काफी ठीक हूँ और डाक्टरों तथा जमनालालजी के कहे अनुसार चल रहा हूँ। मै देखता हूँ कि तुम अपनी भतीजीकी बीमारीसे भी चिन्तित हो। हर चीज उस सर्वशक्तिमान्के भरोसे छोड़ दो। कितना अच्छा होता कि दिनशा मेहताकी मालिश आदिकी चिकित्सा देखने[2] और उनसे अपना इलाज करवाने के लिए तुम मेरे पास होतीं।

स्नेह।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८४४) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ७००० से भी

१. अ० भा० महिला सम्मेलनकी अध्यक्षता करनेके लिए।

२. पूना हेल्थेटोरियममें।

३९२. पत्र : अमृतलाल टी० नानावटीको

१३ दिसम्बर, १९३७

चि० अमृतलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं समझता हूँ। जैसा तुमने लिखा है उसके अनुसार मैं वापस आने पर तुम्हारे जानेका बन्दोबस्त करूँगा। सावलीमें तुम्हारे देखने और सीखने लायक बहुत-कुछ है। लेकिन मुझे तुमसे जिस चीजकी अपेक्षा है वह मौलिक और भिन्न है। सावली और नालवाड़ीमें हस्तकलामें विशेष ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। वह तो तुम्हें अच्छी तरह प्राप्त कर लेना चाहिए और उसीके आसपास अन्य सारे ज्ञानको गूँथने की कलामें भी तुम्हें कुशल बनना है। यह पुस्तकोंसे कदाचित् ही मिले। यह तो तुम्हारे दिल और दिमागसे उद्भूत होगी। जब विजया जाये तब उसके साथ तुम सावली जाना।

तुम्हारा वजन बढ़ना ही चाहिए। जबतक घी-दूध हजम हों तबतक तुम्हें उन्हें कम नहीं करना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७४३)से।

३९३. पत्र : शारदा चि० शाहको

जुहू
१३ दिसम्बर, १९३७

चि० शारदा,

तुझे मेरा और प्यारेलालका पत्र मिला होगा। उम्मीद है, तूने ठीक-ठीक समझ लिया होगा और इलाज शुरू कर दिया होगा। तेरा पत्र क्यों नहीं आया? देखना, तू घबराना नहीं। सब-कुछ ठीक चल रहा होगा। सबको आशीर्वाद। यदि बलवन्तसिंह और पारनेरकर आ गये हों तो उनसे कहना कि वे मुझे लिखें। रोहित तो अब खूब खेलता होगा।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९७८)से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला

३९४. पत्र : जे० पी० भणसालीको

१५ दिसम्बर, १९३७

चि० भणसाली,

एक ढेले से दो पक्षियोंको मारा जा सकता है, ऐसा हम कैसे कह सकते हैं? हाँ, यह कह सकते हैं कि हम एक ढेलेसे दो फल गिरा सकते हैं। तुम एक ढेले से चाहे जितने फल गिराओ, लेकिन अपनी नींद गँवाकर सारी रात जागरण मत करो। सच्चा योग तो वही है जिससे शरीर, मन और आत्मा तीनों तेजस्वी बनें। शारदा के बारेमें जैसा तुम लिखते हो वैसा ही है। वह सयानी लड़की है। उसे जितना ज्ञान दिया जा सकता हो उतना देना।

मेरी तबीयत सुधरती जा रही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८२९७)से। सी० डब्ल्यू० ७०२४ से भी; सौजन्य : मुन्नालाल जी० शाह

३९५. पत्र : शारदा चि० शाहको

१५ दिसम्बर, १९३७

चि० शारदा,

तेरा खत मिला। तेरे लिए कक्षाओंकी व्यवस्था करके मैं तुझे फुसलाना नहीं चाहता। और यह हो भी कैसे सकता है? तू क्या इतनी भोली है कि तू किसी की बातोंमें आ जाये? एक काम तुझे करना होगा। तुझे अपना शरीर इस्पात-जैसा बनाना होगा। बाकी देखना मेरा काम है। दिनशाजी की बात यदि तू ठीक-ठीक समझ गई हो तो इलाज शुरू कर देना। इसमें तुझे जितने समयकी आशंका है, उतना नहीं लगेगा। लेकिन जितना जरूरी है उतना समय निकालना। परिणामके बारेमें लिखती रहना।

तुझे वातावरण क्यों नीरस जान पड़ता है? तेरा मन क्यों उदास रहता है? इसमें तो तेरा दोष है। इतने व्यक्तियों, गायों, बछड़ों, बछियों, मधुमक्खियों, पेड़-

पौधों और पक्षियोंका संग हो तो मनुष्य आनन्दमग्न रहता है। ये सब सगे-सम्बन्धी हैं, पेड़-पौधे तक। तू वहाँ के बच्चोंके साथ क्यों नहीं खेलती?

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९७९) से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला

३९६. पत्र : अ० वि० ठक्करको

जुहू
१६ दिसम्बर, १९३७

बापा,

इस तरह निराश हो जाओगे तो उससे क्या फायदा होगा? मैंने तो तुमसे पहले ही कहा था कि हमें पूर्ण स्वराज्य मिल जाये तो भी हमें सरकारी सहायताकी अधिक अपेक्षा नहीं रखनी होगी। जिस कर्त्तव्यको करना प्रत्येक हिन्दूका धर्म है, क्या उसे भगवान् अथवा सरकार करेगी? क्या उसका पालन प्रत्येक व्यक्तिको नहीं करना चाहिए? तथापि हम संयुक्त प्रान्त और बिहारके[1] बारेमें देख लेंगे। लेकिन यदि हमें वहाँसे सहायता मिलती है तो इसमें हमारे लिए श्रेयकी कोई बात नहीं होगी। हमारे लिए श्रेय की बात तो तब होगी जब हम प्रत्येक हिन्दूसे उससे जितनी बन सकेगी उतनी सहायता प्राप्त कर सकेंगे। इसलिए मुझे उम्मीद है कि तुम भविष्यमें कभी आलस्य नहीं करोगे। तुम्हारा सेवा-क्षेत्र तो जीवन-भरके लिए निश्चित हो गया है। पूना तुम्हारे लिए नहीं है। वहाँ जूनमें तो प्रत्येक वर्ष अवश्य जाना। घनश्यामदास भले कुछ कहें, लेकिन संघको समेटा नहीं जा सकता।[2] यह पत्र मैं बिस्तरपर पड़े-पड़े लिख रहा हूँ।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य : नारायण देसाई

१. अ० वि० ठक्करने शिकायत की थी कि संयुक्त प्रान्त और बिहारमें मन्त्रिगण हरिजन शिक्षा-कार्यमें सहायता नहीं कर रहे हैं।

२. घनश्यामदास बिड़लाने सुझाव दिया था कि चूँकि संयुक्त प्रान्त और बिहारमें मन्त्रिगण हरिजनोद्धार-कार्यको अपने हाथमें लेनेके लिए तैयार हैं इसलिए हरिजन सेवक संघको वहाँसे समेटा जा सकता है।

३९७. पत्र : लीलावती आसरको

जुहू
१७ दिसम्बर, १९३७

चि० लीला,

तू मेरे आने तक दुर्गाके पास जरूर रहना। फिलहाल तो तेरा यही धर्म है, इसलिए यदि तेरा कहीं जाना जरूरी हो तो भी उसे मुल्तवी रखना। लेकिन भविष्यमें तुझे अपनी शक्तिके अनुरूप कार्य करना चाहिए। हममें बहुत-कुछ करने की इच्छा हो सकती है; लेकिन यदि हममें उतनी शक्ति न हो तो हमें झुक जाना चाहिए।

मेरी गाड़ी ठीक चल रही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३६८) से। सी० डब्ल्यू० ६६४३ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

३९८. पत्र : नारायण मोरेश्वर खरेको

जुहू
१७ दिसम्बर, १९३७

चि० पण्डितजी,

योगा,[1] सोमणको[2] मेरा आशीर्वाद। ईश्वर करे, दोनों सुखी रहें, दीर्घायु हों और दोनोंका जीवन आश्रमके लिए शोभाप्रद हो। योगासे कहना कि वह एक पत्र लिखकर मुझे भूल गई। अब वह आलस छोड़े।

लक्ष्मीबहन[3] अब बिलकुल ठीक हो गई होंगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०४७) से।

१. नारायण मोरेश्वर खरे की भतीजी।
२. रामचन्द्र जे० सोमण।
३. नारायण मोरेश्वर खरे की पत्नी।

३९९. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

२० दिसम्बर, १९३७

चि० मणिलाल-सुशीला,

मेरे बारेमें चिन्ता मत करना। समाचार-पत्रोंपर विश्वास मत करना। यदि कुछ खास बात हुई तो यहीं से तुम लोगोंको तार दिया जायेगा।

सुशीला जो कहती है, वह सच है। वह जो मदद करती है, उसमें आभार मानने-जैसी कोई बात नहीं है। हाँ, यदि वह नहीं करती तो यह आश्चर्यकी बात होगी। हम फीनिक्समें एक भजन गाया करते थे; उसमें एक चरण है: "विनयनी पूर्णी मागे नहीं ते प्रेम प्रेमीनो।" "विनय की पूर्णी" अर्थात् आभार अथवा बदला। तुम दोनोंमें से एक तो अब रवाना होने वाला ही होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८६९) से।

४००. पत्र : विजया एन० पटेलको

२० दिसम्बर, १९३७

चि० विजया,

तू बीमार पड़ने पर सेगाँव चली आई, यह तूने अच्छा ही किया। लेकिन सेगाँवसे बाहर जाकर तू बीमार पड़ गई, सो क्यों? तुझे इसका कारण खोजना चाहिए। यदि तू इसका पता नहीं लगायेगी तो तू सेगाँवसे बाहर रहने के अयोग्य हो जायेगी। विनोबा के वचनोंसे तू क्या सीख सकेगी? उनके कामसे अवश्य कुछ ग्रहण किया जा सकता है? और यदि वचनोंसे सीखा जाता हो तो क्या मैं तुझे किसी बड़े विद्वान्के पास नहीं भेज सकता? स्वस्थ होनेके बाद तू नालवाड़ी जाना और वहाँका काम तुरन्त पूरा करने के बाद वापस लौट आना। तकली और चरखे-पर उत्तम गति प्राप्त करने की कला हस्तगत कर लेना। उसी तरह पींजना भी अच्छी तरहसे सीख लेना। तू आठ घंटे काम करने से थक क्यों जाती है? क्या तू बूढ़ी हो गई है? सीधे बैठकर कातने में थकावट कैसी? वहाँ 'गीता' के श्लोकोंका

सर्वोत्तम उच्चारण किया जाता है। कदाचित् 'गीता'-पाठ तुझे सुनने को नहीं मिलता। वहाँ तो मराठी 'गीताई'[1] का पाठ होता है न?

बापूके आशीर्वाद[2]

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७०७६) से। सी० डब्ल्यू० ४५६८ से भी; सौजन्य: विजयाबहन एम० पंचोली

४०१. पत्र: जे० पी० भणसालीको

२० दिसम्बर, १९३७

चि० भणसाली,

तुम कर्ममार्गकी ओर प्रवृत्त हुए हो। इसमें सन्देह नहीं कि कर्ममार्ग उत्तम मार्ग है। शरीरके लिए अन्य कोई मार्ग है ही नहीं। यदि हम सब-कुछ ईश्वरार्पण कर देंगे तो हम मुक्त हो जायेंगे। जो मनुष्य कर्मसे चिपक जाता है, वह भोगी है। और जो व्यक्ति कर्म के परिणामका त्याग करके कर्त्तव्य समझकर यज्ञार्थ अर्थात् परोपकारार्थ कर्म करता जाता है वही सच्चा योगी है।

तुम थोड़े दिनोंके लिए . . .[3] खुशीसे नालवाड़ी . . .[4] पूछकर जाना।

दूधकी मात्रा बढ़ाने की जरूरत जान पड़े तो बढ़ाना। तुम शारदाको पढ़ा देते हो, यह बहुत अच्छी बात है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८२९५) से। सी० डब्ल्यू० ७०२५ से भी; सौजन्य: मुन्नालाल जी० शाह

---

१. विनोबा भावे कृत मराठीमें गीताका समश्लोकी अनुवाद।
२. इसके बाद एक टिप्पणी दी गई है जो इस प्रकार है: "इसे सेगाँव भेज दिया जाये।"
३ और ४. साधन-सूत्रमें ये अंश अस्पष्ट हैं।

४०२. पत्र : रामदास गांधीको

२१ दिसम्बर, १९३७

तेरा खत मिला। जबतक तुझे मेरी ओरसे कोई तार न मिले तबतक समाचार-पत्रोंमें प्रकाशित समाचारोंका भरोसा न करना। यदि कोई ऐसी बात होगी तो तुझे तार अवश्य दिया जायेगा।

मेरे बारेमें जैसा तू मानता है, वैसा नहीं है। मेरा खयाल है कि मैं सभी नेताओं में सबसे अधिक सावधान हूँ। मेरे रक्तचापका सीधा-सादा कारण जो मै समझता हूँ वह यह है। 'गीता'की अनासक्तिका जो अर्थ है उससे मेरी अनासक्ति कम है — मैं भावनाओंसे भरा हुआ हूँ। मुझे हर किसीके दुःखसे दुःख होता है। ऐसा होना भी चाहिए; किन्तु इसके बावजूद मुझे अलिप्त रहना चाहिए। मैं इस कलामे अभी पारंगत नहीं हुआ हूँ। और यदि मैं दूसरोंके दुःखसे दुःखी नही होता तो यह अलिप्तता नहीं है। 'गीता'का कहना है : सर्दी-गर्मी, सुख-दुःख सहन करो। अनासक्त मनुष्यको ये चीजें नहीं व्यापतीं, ऐसा कुछ 'गीता'में नहीं कहा गया है। इसलिए यदि तू मुझे यह लिखता कि "बापू तुम अपनी 'गीता'-माताके आदेशका पालन नहीं करते" तो तेरा यह आक्षेप उचित माना जाता। बाकी मै आराम वगैरह, [शरीरके साथ] लाड़-प्यार तो खूब कर रहा हूँ। जुहूमे आकर रहने लगा हूँ, इसे लाड़-प्यार ही समझ। बहुत सारे काम हैं, जिन्हें मैं छोड़े बैठा हूँ। बुद्धि चलती है, तथापि मैं उससे काम नहीं ले रहा हूँ। इसलिए मेरी चिन्ता न करना। . . .[1]

यदि ऐसा हो तो तुम बारी-बारीसे भी यहाँ आ-जा सकते हो। शर्त यह है कि तेरा स्वास्थ्य अच्छा होना चाहिए। तू पैसा उगाह सकता है, कम्पोज कर सकता है, थोड़ा-बहुत लिख भी सकता है। काम करने से ही आता है। नीमूको वहाँ अच्छा अनुभव मिल रहा है और काममें तो वह खूब मदद कर सकती है। कानम मजेमें है। बाकी सब तुझे बा के पत्रसे मालूम होगा।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य : नारायण देसाई

१. साधन-सूत्रमें यह अंश पढ़ा नहीं जा सका।

४०३. पत्र : अमृतकौरको

जुहू
२४ दिसम्बर, १९३७

मूर्खा रानी,

अब जब तुम अपना काम शुरू करनेवाली हो मेरे मनमें तुम्हारा खयाल आ रहा है। मेरी यही कामना है कि तुम्हारे अन्तर का प्रकाश तुम्हारा पथ-प्रदर्शन करे और तमाम कठिनाइयोंके बीच तुम्हारे मार्ग को सुगम बनाये। आशा है, तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक चल रहा होगा। तुम्हारे साथ कौन है? जमनालालजी सम्भवत: २६ तारीखको नागपुरमें ही होंगे। मुझे कोई सन्देह नहीं कि तुम उनको निमन्त्रित करोगी। बहरहाल उनसे पूछना कि क्या तुम कुछ दिनके लिए जुहू आ सकती हो और अगर वे हाँ कहें और तुम्हारा कोई पूर्व-निश्चित कार्यक्रम न हो तो अवश्य आओ।

मैं अपने पत्रके उत्तरमें तुम्हारे विस्तृत पत्रकी आशा कर रहा हूँ।

अगर तुम क्रिसमसके लिए शुभकामनाएँ चाहती हो तो मैं तुम्हें ढेर-सी भेज रहा हूँ। तुम तो मेरे साथ पूरे महीने रहनेवाली थीं।[1] लेकिन ——

स्नेह।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६२०) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६४२९ से भी

४०४. पत्र : अमृतकौरको

जुहू
२७ दिसम्बर, १९३७

मूर्खा रानी,

चाहे कुछ भी हो, मैं दो पंक्तियाँ तो तुम्हें लिखूँगा ही। वैसे कुछ होनेवाला नहीं है। मुझे आशा है कि वहाँ मौसम ठंडा होगा और तुम्हारी [illegible]ने तुम्हारा काम आसान बना दिया होगा। इस दौरान मैं मनसे तुम्हारे साथ ही हूँ। आशा है, तुमसे पहले ही मेरा पत्र[2] नागपुर पहुँच गया होगा। मैं कुछ उतार-चढ़ाव

१. अमृतकौर शिमला लौटने से पहले कुछ दिन वर्धामें रहनेवाली थीं।
२. देखिए पिछला शीर्षक।

से तो गुजर रहा हूँ, पर मुझे उनसे कोई चिन्ता नहीं होती। तुम्हारा एक्जीमा कैसा है? बाकी समाचार मीरासे मिल जायेगा।

स्नेह।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६२१) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६४३० से भी

४०५. पत्र : योगा रा० सोमणको

जुहू
२९ दिसम्बर, १९३७

चि० योगा,

तू ससुराल जाकर सीधी होगी। इतनी छोटी लड़कीके लिए चाय कैसी! दूध को इस तरह खराब क्यों करती है? दूध यदि नहीं पचता तो उसमें पानी डाला जा सकता है, ताड़का गुड़ डाला जा सकता है। तू अपना संगीतका ज्ञान तो पक्का कर ही लेना।

तू मनमें निश्चय कर लेगी तो सोमणजी से बहुत-कुछ सीख सकेगी। तेरी सीखने की उम्र अभी खत्म नहीं हो गई है? अपने शरीर को सुदृढ़ बनाना। सास की अच्छी तरहसे सेवा करना। मैं सोमणको अलगसे पत्र नहीं लिख सकता। पण्डितजी को भी नहीं लिख रहा हूँ। तू उन्हें यह पत्र पढ़वा देगी न? रामभाऊ[1] क्या बिलकुल सुधर गया है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०४८) से।

४०६. पत्र : प्रभावतीको

२९ दिसम्बर, १९३७

चि० प्रभा,

तू मुझे सचमुच शरारती जान पड़ती है। पत्र न लिखने का कैसा बहाना बनाती है? उलटा चोर कोतवाल को डाँटे। गई तो अपनी मर्जी से थी और अब कहती है कि जाना पड़ा और इसलिए पत्र क्या लिखना? तूने तो मुझसे वादा किया था कि तू पत्र जरूर लिखेगी। अकेली गई। पहुँचने की चिट्ठी तक भी न डाली। मेरा तो खैर ठीक है; लेकिन बेचारी अमतुस्सलाम का क्या होगा? वह रोज मुझसे

१. नारायण मोरेश्वर खरेके पुत्र रामचन्द्र।

पूछती है, क्या प्रभावती का कोई पत्र आया है? वह रोज लिखती है और तू एक पंक्ति भी नहीं लिखती, तेरा यह कैसा अविनयपूर्ण व्यवहार है? कैसी निर्दयता है? बोल अब तुझे कैसी और कितनी सजा दी जानी चाहिए। वहाँ दूध का क्या बन्दोबस्त है? तू गई, यह तो ठीक ही किया। मेरे बारेमें तो अमतुस्सलाम लिखेगी। बीच-बीचमें सबको तेरी याद आती रहती है। वहाँ तू पढ़ना, लिखना और पिताजी की खूब सेवा करना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

अब लिखने में लापरवाही मत करना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५०९) से।

४०७. पत्र : अमृतकौरको

जुहू
३० दिसम्बर, १९३७

प्रिय अस्पृश्या,

मुझे अभी-अभी तुम्हारी 'पुर्जी' (नोटलेट) दी गई है। क्या आकार की लघुता का बोध करानेवाला इससे बढ़कर कोई शब्द तुम सुझा सकती हो? तुम्हें पत्र लिखने के बाद ही मुझे पता चला कि तुम्हें पहले ही मेरे पास आने से रोक दिया गया था। तो अब तुम मुझसे ही उसका बदला चुका रही हो। किन्तु मैं स्थिति समझता हूँ। तुम बादमें अवश्य आना। मुझे उम्मीद है कि मैं स्वयं हरिपुरा जा सकूँगा, इसलिए तुम्हारे वहाँ आने की पूरी आशा रखता हूँ।

मैंने तुम्हारे स्वास्थ्यके विषयमें जो प्रश्न पूछे थे उनका उत्तर तुम दे देतीं तो मूर्खा कैसे होतीं। अब अगले पत्रमें अवश्य सब हाल लिखना।

साथमें दो कतरनें संलग्न हैं, जो तुम्हें रोचक लगेंगी। शायद तुमने इन्हें अभी तक नहीं देखा होगा।

अपने विषयमें मैं कुछ नहीं लिखता, क्योंकि मीरा तुम्हें सब सूचना देती रहती है।

सस्नेह,

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८४८) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७००४ से भी।

४०८. पत्र : मैडेलिन रोलाँको

३० दिसम्बर, १९३७

प्रिय मैडेलिन,[१]

तुम्हारा पत्र पाकर खुशी हुई। मेरा हाल जैसा हो सकता है वैसा ही है। और मैं चाहे कुछ करूँ या न करूँ, अगर ईश्वर की इच्छा मुझसे और काम लेने की है तो म अभी कुछ दिन और जीऊँगा। उसका काम तो चलता ही रहता है। हम बीच में तभी और उसी हदतक आते हैं जब और जिस हदतक वह चलता है। बेशक, मुझे तुम्हारे और उस सन्त के साथ बिताई वे सुखद घड़ियाँ याद है। काश, वे फिर आती।

मैं आशा करता हूँ कि जिस विषम राजनीतिक वातावरणने तुम लोगों को चतुर्दिक घेर रखा है उसके बावजूद तुम सब मजे मे होगे। संचार के इन द्रुत साधनोंने पृथ्वीको इतना छोटा बना दिया है कि जो-कुछ उसके एक हिस्से मे होता है उसकी अनुगूंज उसके सभी भागोंमें फैल जाती है।

तुम दोनों को मेरा प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०५८९) से; सौजन्य : मैडेलिन रोलाँ

४०९. पत्र : विजया एन० पटेलको

जुहू
३० दिसम्बर, १९३७

चि० विजया,

तेरा पत्र मिला। आश्चर्य कि तू तकलीसे कातते हुए थक जाती है। तू शक्ति प्राप्त करना और ऐसी बन जाना कि चाहे कितना भी क्यों न काते, फिर भी थकावट न हो। थकावट का कारण खोज निकालना। खबरदार, यदि फिर बीमार पड़ी तो! मेरे बारेमें कनु आदि लिखेंगे। अपने बारेमें विनोबासे पूछना। यदि वे चले जायें, और वल्लभ भी चला जाये तब कदाचित् तेरा नालवाड़ीमें रहना जरूरी नहीं रहेगा। मुझे लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७०७७) से। सी० डब्ल्यू० ४५६९ से भी; सौजन्य : विजयाबहन एम० पंचोली

१. रोमाँ रोलाँकी बहन।

४१०. पत्र : शारदा चि० शाहको

३० दिसम्बर, १९३७

चि० शारदा,

इस तरह बैठा जाता है। इस स्नानमें तुझे गरम और ठंडे पानीमें पड़े रहना होगा। गरम और ठंडे पानी का जो असर होगा वही असलमें महत्त्वपूर्ण है। इस स्नान के लिए यदि हमारे पास छोटा गोल टब हो तो ठीक होगा, लेकिन वह तो है नहीं। अब तो तू समझ गई न? सब-कुछ अच्छी तरह समझ लेने के बाद ही दिनशाजी को उपचार शुरू करना उचित होगा। क्या तुझे पढ़ाने का समय मिल पाता है? क्या तू कोई हिसाब रहती है? अपनी तबीयतका ध्यान रखना। वहाँ कितनी सर्दी होती है?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

बलवन्तसिंह से कहना कि वह अपने जख्मी होने की चिन्ता न करे, लेकिन जख्म की उपेक्षा न करे। यदि अस्पताल जाना जरूरी हो तो जाये। नानावटी को आज लिखने की ताकत मुझमें नहीं है।

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९८०) से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला

४११. तार : एफी एरिस्टार्शीको

[१९३७][1]

प्रिन्सेस एरिस्टार्शी
होटल स्कोट्जकी
फ्रीबर्ग, आई० बी० (जर्मनी)

भौतिक असुविधाओंके कारण तुम्हें हिम्मत नहीं हारनी चाहिए। इस कष्टमें तुम्हें आनन्दका अनुभव करना चाहिए। स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी नकलसे। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१. साधन-सूत्र में इसे तथा अगले तार को १९३७ के पत्रों के साथ रखा गया है।

४१२. तार: सी० एफ० एन्ड्रयूजको

[१९३७]

चार्ली एन्ड्रयूज
पेम्ब्रूक कॉलेज
कैम्ब्रिज (इंग्लैण्ड)

तुम्हारा सुझाव अनुचित है।

बापू

अंग्रेजीकी नकलसे। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

४१३. बातचीत: एक इतालवी प्रोफेसरके साथ[1]

[१९३७]

प्रोफेसर: आज अगर हमारे बीच अहिंसा-धर्मपर चलनेवाली कोई जाति होती तो क्या वह अपनेको दूसरोंकी गुलाम बनने से बचा पाती?

गांधीजी: अगर एक व्यक्ति अपनेको गुलाम होनेसे बचा सकता है तो बेशक एक राष्ट्र भी बचा सकता है। कोई भी व्यक्ति या व्यक्ति-समूह किसी भी अन्य व्यक्ति या व्यक्ति-समूहको उसकी इच्छाके विरुद्ध गुलामीमें नहीं रख सकता। गुलामोंका मालिक कहेगा, 'ऐसा करो', लेकिन जिनसे कहेगा वे वैसा करने से इनकार कर देंगे। ऐसी कल्पना करना असम्भव नहीं है कि किसी दिन सभी राष्ट्रोंमें इतनी समझदारी आ जायेगी कि उनके निवासी सामूहिक रूपसे भी वैसा ही आचरण करने लगेंगे जैसा आज अलग-अलग व्यक्ति करते हैं।

इसके बाद गांधीजी ने भारतके हिंसा-मार्गपर आरूढ़ होनेके परिणामोंका अत्यन्त सजीव चित्र प्रस्तुत करते हुए बताया कि किस तरह यहाँ हत्या और युद्धका ताण्डव

१. मीराबहन द्वारा बातचीतका यह विवरण "द वे ऑफ गॉड ऑर द वे ऑफ डेविल" (ईश्वर का मार्ग या शैतान का मार्ग) शीर्षक से प्रकाशित हुआ था। इसकी परिचयात्मक टिप्पणी में लेखिका कहती है: "१९३७ में सेगाँवमें गांधीजी और एक इतालवी प्रोफेसरके बीच हुई निम्नलिखित बातचीत पढ़ना पाठकोंको अच्छा लगेगा। पुराने कागजात उलटते-पलटते समय एक नोटबुक में इसपर मेरी नजर पड़ी। गांधीजी ने विश्वकी स्थितिपर अखबारोंको जो सन्देश दिया है, उसकी अर्थवत्ताकी इससे वृद्धि होती है।" देखिए खण्ड ७०, "वक्तव्य: समाचार-पत्रोंको", २७-८-१९३७ या उसके पूर्व।

मच सकता है और किस प्रकार देशके प्रतिहिंसाकी आगमें जलते-जलते ऐसी स्थिति आ सकती है कि ३० करोड़में से सिर्फ एक करोड़ लोग बच रहें।

लेकिन मैंने तय किया कि नहीं, यह मेरा रास्ता नहीं है। मैंने अपने मनमें इन सभी बातोंका विचार किया, लेकिन अन्तमें स्वयंसे कहा, 'यह शैतानका रास्ता है, ईश्वरका नहीं।' इस तरह हिंसाकी बलिवेदीपर चढ़ जानेवाले उन उनतीस करोड़ लोगोंकी स्मृति मेरे मनको हमेशा सालती रहेगी। और इस विचारसे मुझे किसी तरहकी शान्ति और सन्तोष नहीं मिलेगा कि हिंसामें प्रवीण जो एक करोड़ नरशार्दूल बच रहेंगे वे सारे भारतमें फैल जायेंगे। मैंने मनमें कहा, 'मुझे तो अहिंसाका मार्ग ही अपनाना है, और उस मार्गपर अपने साथ पागलों और कोढ़ियोंको भी ले चलना होगा।

क्योंकि क्या यह सच नहीं है कि हम सबके-सब न्यूनाधिक कोढ़ी और पागल हैं? अगर हम सब विवेकशील होते तो क्या देवता न बन गये होते? हमारे मस्तिष्कका कोई-न-कोई पेच ढीला है, इसीलिए हम ईश्वरके साथ ऐक्य साधनेम सफल नहीं हो पाते।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ९-९-१९३९

४१४. बातचीत : डाक्टरोंसे[1]

[६ जनवरी, १९३८ या उसके पूर्व][2]

डाक्टरोंकी इच्छा थी कि गांधीजी जनवरीके अन्ततक जुहूमें ही रहें, लेकिन गांधीजी को महीने-भरसे अधिक सेगाँवसे बाहर रहना बिलकुल स्वीकार नहीं था। यह बात नहीं कि उनके स्वास्थ्यकी अवस्था ऐसी हो गई हो जिससे वे फिरसे अपने सब काम सामान्य रीतिसे कर सकें। लेकिन उन्होंने डाक्टरोंसे अपनी बात ऐसे ढंगसे कही कि उनसे कुछ जवाब देते नहीं बना। उन्होंने कहा :

अगर मैं सेगाँवसे बाहर रहे बिना स्वस्थ नहीं हो सकता तो, मेरी समझम, ईश्वरने देशका जो काम करने की विशेष शक्ति मुझे दी है उसे करते हुए सेगाँवमें ही मृत्युको प्राप्त हो जाना मैं अधिक पसन्द करूँगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १५-१-१९३८

१ और २. यह और अगला शीर्षक दोनों महादेव देसाईके "नोटस" (टिप्पणियाँ)से लिये गये हैं। बातचीत ७ जनवरी, १९३८ को गांधीजी के जुहूसे सेगाँवके लिए रवाना होनेसे पहले हुई थी।

४१५. बातचीत : चक्रवर्ती राजगोपालाचारीकेसाथ

७ जनवरी, १९३८

गांधीजी के जुहू-निवासके अन्तिम दिन चक्रवर्ती राजगोपालाचारीने उनसे पूछा : "लेकिन आप बोलते-बोलते इतने आवेशमें क्यों आ जाते हैं?" गांधीजी ने हँसते हुए उत्तर दिया :

क्योंकि 'गीता' का वीतराग होनेका पाठ सीखना अभी शेष है। मुझमें बराबर यह इच्छा रहती है कि जिसके बारेमें भी बोलूँ, जिसके सामने भी बोलूँ उसमें सत्य — सौ फीसदी सत्य — ही प्रकट हो।

[**च० रा० :**] **लेकिन पूर्ण स्वस्थ होनेतक आप सारे काम-काजको भूल क्यों नहीं जाते?**

[गांधीजी :] कुछ ऐसी चीजें है जो जानकी जोखिम होनेपर भी भुलाई नहीं जा सकतीं। अंडमानके कैदियों और बंगालके नजरबन्दोंका सवाल मेरे लिए एक ऐसी ही चीज बन गया है।

[**च० रा० :**] **तब फिर आप मुझसे क्यों कहते हैं कि दूसरोंका काम मैं दूसरों को करने दूँ और उनकी जिम्मेदारियोंको सँभालने के जंजालमें न पड़ूँ? मैं इतना हो तो कहता हूँ कि अपने स्वभावपर नियन्त्रण रखने की कला मैं नहीं सीख पाया हूँ।**

[गां० :] इसी प्रकार मुझे भी अपने स्वभावके अनुसार चलना पड़ता है।

इसपर एक अन्य मित्रने पूछा : "लेकिन आप अपना कीमती समय उन लोगों और उन कार्योंको क्यों देते हैं जो हमें बेकार लगते हैं?"

[गां० :] आपको बेकार लगते होंगे, मुझे नहीं। पचास वर्षोंसे मैं तो ऐसे ही बरतता आ रहा हूँ, और अब इस उम्रमें अपनी प्रकृति नहीं बदल सकता।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १५-१-१९३८

४१६. भेंट : पत्र-प्रतिनिधियोंको[1]

बम्बई
७ जनवरी, १९३८

जब गांधीजी से यह पूछा गया कि ऐसे स्वास्थ्यके रहते क्या वे सेगाँवकी सर्दी बर्दाश्त कर सकते हैं तो उन्होंने अपनी साफ-सुन्दर आवाजमें उत्तर दिया कि मुझे आशा है, सेगाँव मुझे रास आयेगा। उन्होंने यह स्वीकार किया कि ३२ दिनोंके जुहू-प्रवाससे उनके स्वास्थ्यको काफी लाभ पहुँचा है।

अब मुझे सेगाँव जाकर उस गाँव की आबोहवाको आजमाने दीजिए। अगर फिर तबीयत बिगड़ी तो जुहू लौट आऊँगा।

यह पूछने पर कि वे जुहूमें कुछ सप्ताह और क्यों नहीं ठहरते, उन्होंने अपना सिर हिलाते हुए हाथ उठाकर कहा :

देखूँ कि ईश्वरने मेरे भाग्यमें क्या लिख रखा है।

महात्मा गांधीने अखबारवालों की इस बातके लिए प्रशंसा की कि उन्होंने उनके साथ पूरा सहयोग किया, जिससे वे डाक्टर द्वारा दिये गये पूर्ण विश्रामके निर्देशका पालन कर पाये।

बंगालके नजरबन्दोंके सम्बन्धमें कोई सन्देश माँगने पर महात्मा गांधीने कहा :

क्षमा कीजिएगा, कोई सन्देश वगैरह नहीं दे सकता।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ८-१-१९३८

४१७. पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव
९ जनवरी, १९३८

प्रिय विद्रोहिणी,

तुम्हारे पत्र यथासमय मिलते रहे हैं। बात सिर्फ यह है कि इन दिनों मैं लिखता बहुत कम हूँ। पाँच-छह दिनों तक पत्रादि लिखने से दूर रहने के बाद आज यह पहला पत्र तुम्हींको लिख रहा हूँ। मैं ठीक भी हूँ, और नहीं भी हूँ। रक्त-चाप गिरते-गिरते बिलकुल सामान्य हो जाता है, लेकिन फिर जरा-सी वजह से ही चढ़ जाता है। मैं बातचीत नहीं कर सकता, गंभीर बातचीत सुन भी नहीं सकता।

१. विक्टोरिया टर्मिनस स्टेशनपर।

तुम १ या २ फरवरीको, जैसे तुम्हारे लिए ठीक हो, आओ और जितने दिन ठहर सको, ठहरो। मेरे ७ को रवाना होकर आगामी ९ तारीखको हरिपुरा पहुँचने की उम्मीद है। तुम मेरे साथ ही जाओगी। कार्य-समितिकी बैठक यहाँ ३ तारीखको होगी।

१५ तारीखके आसपास लॉर्ड लोथियन मुझसे मिलने आयगे,[1] और फिर बंगाल के कैदियोंके बारेमें बात करने शायद घनश्यामदास आयेंगे। अब तुम्हारी जरूरतकी सारी जानकारी तुम्हें दे दी। मौसम काफी अच्छा है। रातमें तापमान ६०-६४ रहता है, दिनमें ७२-७६।

तुम्हें प्राकृतिक चिकित्सा-पद्धतिसे अपना इलाज करवाते हुए अपना स्वास्थ्य ठीक रखना चाहिए। बड़ा जी होता है कि तुम कुछ पहले आ जातीं। लेकिन प्रभु की छोटी-मोटी कृपाओंके लिए भी उसका कृतज्ञ होना चाहिए। फिर भी, यदि सम्भव हो तो पहले आनेकी कोशिश जरूर करो।

तुम्हें यह बताया या नहीं कि जो शाल तुमने मुझे पिछले साल दिया था वह बा के कहने पर उसे दे दिया गया। मैं जानता हूँ कि तुम इसका बुरा नहीं मानतीं।

तुम्हें और शम्मी को प्यार।

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६२२) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६४३१ से भी

४१८. बातचीत: जमनालाल बजाजके साथ[2]

९ जनवरी, १९३८

गांधीजी के सेगाँव आने पर रविवारको उनसे जमनालालजी ने कहा: "लेकिन अब आप यह तो जान गये हैं कि आप अमुक सीमा तक ही कामके बोझको सहन कर सकते हैं। फिर आप उतना बोझ अपने सिरपर लेकर लोगोंके मनमें क्यों ऐसा खयाल आने देना चाहते हैं कि सेगाँव आपको रास नहीं आता?"

[गांधीजी:] ऐसा कहना तो गलत होगा। मैं तो तुमसे एक ही बातकी माँग करता हूँ। मैं सबसे कहता हूँ कि मुझे सेगाँवमें ही जीना या मरना है और अन्यत्र कहीं नहीं जाना है तथा किसी भी बाहरी डाक्टरको यहाँ आनेकी तकलीफ न दी जाये। यह बात सबको समझाने में मेरी मदद करो।

लेकिन आपने तो हमें अक्सर यह भरोसा दिलाया है कि आप संकल्पपूर्वक जीवित रहने का प्रयत्न कर रहे हैं।

१. देखिए "बातचीत: लॉर्ड लोथियनके साथ", पृ० ३८३-८४।

२. महादेव देसाई के "नोट्स" (टिप्पणियाँ) से उद्धृत।

हाँ, ऐसा भरोसा जरूर दिलाया है। लेकिन अगर कोई मुझे मौत से बचने के लिए पूरे सालके लिए हिमालयपर चले जानेको कहे तो मैं तो नहीं जाऊँगा। क्योंकि मैं जानता हूँ कि मनुष्य चाहे जितनी सावधानी बरतकर खुश हो ले, मृत्यु तो अटल है। मैं चाहूँगा, तुम इस बातको समझो कि भारतमें मैं उन चन्द राष्ट्र-सेवकोंमें से हूँ जो अपने स्वास्थ्यकी रक्षा करना जानते हैं। मुझसे ईश्वरको क्या काम लेना है, यह तो वही जानता है। उसे अपने कामके लिए जबतक मेरी जरूरत होगी, उसके बाद वह क्षण-भर भी मुझे यहाँ नहीं रहने देगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १५-१-१९३८

४१९. तार: जवाहरलाल नेहरूको

१० जनवरी, १९३८

माताजी का जीवन जितना सौम्य था उतनी ही सौम्य उनकी मृत्यु भी हुई। पत्नी, विधवा और माँ के रूपमें वह आदर्श थीं। दुःखी होनेका प्रसंग नहीं। उनका जीवन हमारी स्त्री-जातिके लिए अनुकरणीय है। प्यार।

बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, ११-१-१९३८

४२०. पत्र: कान्तिलाल गांधीको

सेगाँव
१० जनवरी, १९३८

चि० कान्ति,

तेरे पत्र मेरे पास पड़े हुए हैं। वे सबके-सब मैंने ध्यानपूर्वक और दिलचस्पीके साथ पढ़े, क्योंकि मैं तो रोज उनकी बाट देखता था। मुझे जब तेरा पहला पत्र मिला, उससे पहले ही मेरी तुझे लिखने की इच्छा थी, लेकिन तेरे डरके कारण मैं नहीं लिख सका। डर यह था कि तू मुझसे नाराज है और मैं चाहे कुछ भी क्यों न लिखूँ तू और भी ज्यादा नाराज हो जायेगा। इस डरके बावजूद यदि मैं बीमार न होता तो मैं हिम्मत करके तुझे अवश्य लिख डालता। मुझे खुशी है कि मुझे तेरे पत्रोंमें कोई नाराजगी दिखाई नही देती। लेकिन मैं यह जरूर मानता हूँ कि तूने जो एकाएक लिखना बन्द कर दिया था वह मेरे प्रति अपनी नाराजगीके कारण ही किया था। लेकिन फिर तूने अपने स्वभावानुसार उसपर सोच-विचार किया, और अपने क्रोधको भूलकर पूर्ववत् लिखना शुरू कर दिया। चाहे जो हो, मेरी नजरमें

तेरे पत्र उतने ही महत्त्वपूर्ण हैं जितनी कि चातकके लिए वर्षा होती है। वस्तुतः मैंने तेरी आशा नही छोड़ी थी और मुझे विश्वास है कि तू मेरे जीते-जी ही पहले के समान मुझमें समा जायेगा। इसका अर्थ यह नहीं कि तू अपनी पढ़ाई छोड़कर मेरे पास दौड़ा चला आय। तू अपनी पढ़ाई पूरी कर।

तूने त्रिवेन्द्रम जाकर ठीक किया। सरस्वती तुझसे मिलने के लिए व्याकुल थी। यहाँ जब आना हो सके तब आना।

शिक्षकके साथ हुई तेरी परिचर्चा अच्छी है। तुझमे बहस करने की शक्ति तो है ही। तमिल, मलयालम और कन्नड़का क्या हुआ? तेरे लिए इन भाषाओंका ज्ञान हस्तामलकवत् है। अमला १३ भाषाएँ जानती है; कुछ तो सिखा भी सकती है। मैक्समूलरको १४ भाषाएँ अच्छी तरह आती थीं, जिनमे लैटिन, ग्रीक, हिब्रू और संस्कृत भी थीं। वह संस्कृतमे पत्र-व्यवहार कर सकता था। हम अंग्रेजी बहुत ज्यादा पढ़ते हैं और उसकी मार्फत समस्त ज्ञान प्राप्त करने की चेष्टामें बहुत ज्यादा थक जाते हैं और किसी दूसरे कामके नहीं रह जाते। अन्य भाषाओंका ज्ञान प्राप्त करना जितना आसान और दिलचस्प है उतना ही उपयोगी भी है।

उम्मीद है, तू अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखता होगा। मुझे पत्र लिखने की अभी मनाही है। और मैं कह सकता हूँ कि बीमारीके बाद इतना लम्बा पत्र तो मैंने केवल तुझे ही लिखा है। इसमे यदि कोई भूल रह गई होगी तो महादेव सुधार देंगे।

मेरी तबीयत ठीक चल रही है। मुझे अच्छा हो जानेकी उम्मीद तो है। आरामके अलावा और कोई दवा नहीं लेता; और जितना आराम कर सकता हूँ, करता हूँ।

देवदासको लिखना, रामदास और मणिलालको भी। मणिलाल या सुशीलाके आनेकी सम्भावना है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३३२) से; सौजन्य : कान्तिलाल गांधी

४२१. पत्र : महादेव देसाईको

१० जनवरी, १९३८

चि० महादेव,

साथका लेख नहीं चलेगा। तुम्हारा उत्तर कोई उत्तर नहीं है। उसका लेख हिन्दीमें है न? उत्तर भी हिन्दीमें ही दिया जाना चाहिए। उत्तर देनेका तरीका भी दूसरा होना चाहिए। कोई जल्दी नहीं है। हम जब मिलेंगे तब विचार कर लेंगे। तुम्हें लेख भेजनेवाला कौन है, यह भी जानना है। यह लेख काकाको दिखाना। मेरा खयाल है, वह काकाका मित्र है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

इसके साथ एक लेख है। यदि अच्छा लगे तो भेजना। न लगे तो वापस ले आना और मेरे साथ इसपर चर्चा करना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५८६) से।

४२२. पत्र : रामदास गांधीको

१० जनवरी, १९३८

तू मेरी चिन्ता मत कर। मेरी, तेरी, सबकी चिन्ता करनेवाला एक ही है। तो फिर हम क्यों चिन्ता करें? और फिर मेरी तबीयत सुधरती जा रही है — धीरे-धीरे ही सही। 'हरिजन' के अलावा और किसी समाचार-पत्रपर विश्वास न करना।

यदि तू शान्तिपूर्वक वहीं रह सके तो तबीयत तो वहीं ठीक हो जायेगी। बाकी "रूखो-सूखो रामजीनो टुकड़ो" तो तुझे कहीं भी मिलता ही रहेगा। यदि तू शान्त हो जाये तो तबीयत तो वहीं सुधरेगी। यहाँ पेट-भरकर खाना खटकता है; जबकि वहाँ तो सभी पेट-भर खाते हैं, खा सकते हैं। उस मानसिक वातावरणकी बलिहारी है। इस कंगाल देशमें सुखपूर्वक कैसे खाया जा सकता है? वहाँ गये, अर्थात् यहाँसे दूर हो गये। यहाँसे दूर होनेका मतलब हुआ यहाँके बारेमें सब-कुछ भूल जाना और आसपासके वातावरणके अनुरूप आचरण करने लगना। मुझे आजतक कोई ऐसा व्यक्ति दिखाई नहीं दिया जो वातावरणके वशीभूत न हुआ हो। और मेरा तो यह खयाल है कि ऐसा व्यक्ति हो ही नहीं सकता। लेकिन यदि लाखोंमें कोई एक ऐसा हो भी तो वह 'वातपी', अर्थात् केवल हवा खाकर जिन्दा रहनेवाला ही होगा। ऐसे व्यक्तिको अन्य कुछ खानेका अधिकार ही कहाँ है? ईश्वर कहाँ खाता है? और किस मुँहसे तथा किस आधारपर खाये? अब और नहीं लिखूँगा, नहीं तो डाक्टर शिकायत करेंगे। नीमू और कानमकी चिन्ता न करना। सबके लिए जो-कुछ सम्भव है वह हो रहा है, इतना विश्वास रखना। इससे यदि अधिक करना सम्भव हुआ तो मैं अवश्य करूँगा। लेकिन यदि अपनी शक्तिसे बाहर जाकर हम कोई काम करते हैं तो अपने धर्मका उल्लंघन करते हैं और टूट जाते हैं।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य : नारायण देसाई

४२३. तार : बन्दी-सहायता समिति, लाहौरके मन्त्रीको[1]

११ जनवरी, १९३८

प्रतिकूल आसारके बावजूद मैं आशा करता हूँ कि मेरी बीमारीको ध्यानमें रखते हुए कैदी लोग अनशन तोड़ देंगे। वे मुझे कोई अवसर नहीं दे रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १५-१-१९३८

४२४. पत्र : महादेव देसाईको

११ जनवरी, १९३८

चि० महादेव,

राहत-सम्बन्धी दूसरा लेख भी मुझे अच्छा नहीं लगा इसलिए नया लेख ही लिखकर भेज रहा हूँ। यदि तुम्हें ऐसे किसी लेखकी जरूरत न हो तो इसे रद कर देना।

अहिंसा-सम्बन्धी लेख[2] सुधार दिया है। वह तो ठीक ही है। इस विषयकी पेचीदगियोंकी कभी चर्चा करना। तुम्हें ऐसे विषयपर लिखने का अवसर मिलता है, यह अच्छी बात है।

जवाहरलालको तार देना। विधेयक-सम्बन्धी टिप्पणी[3] ठीक है। दूसरी टिप्पणी भी ठीक है। विधेयककी नकल मुझे चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५८७) से।

१. लाहौर की बन्दी-सहायता समितिके मन्त्रीने गांधीजी को पंजाबकी जेलमें राजनीतिक कैदियों द्वारा अनशन करने की सूचना दी थी।

२. सम्भवतः **हरिजन**, १५-१-१९३८ के अंक में प्रकाशित "ट्रेनिंग फॉर नॉन-वाइलैंलेंस" (अहिंसा का प्रशिक्षण) शीर्षक लेख।

३. हरिजनोंको मन्दिरों में पूजा करने का अधिकार देनेवाले विधेयक पर, जो बम्बई विधान-मण्डलमें पेश किया गया था, यह टिप्पणी "ए नेसेसरी मेजर" (एक आवश्यक कानून) शीर्षकसे **हरिजन**, १५-१-१९३८ के अंकमें प्रकाशित हुई थी।

४२५. प्रश्नोत्तर

सेगाँव
१३ जनवरी, १९३८

१. नानाभाई खुद ही छोड़ना चाहते हों तो वैसा मैं जानना चाहूँगा। मैं तो उनके छोड़ने में अपनी सहमति कदापि नही दूँगा। [उनके पास] जो है वह स्थायी है, वे अस्थायीके पीछे क्यों भागे?

२. मुझे तो तुम्हारे बारेमें भी शंका नही है।[1] तुम भी नहीं छोड़ सकते। इसपर[2] भी मैं तो सभी दृष्टिकोणोंसे विचार करूँगा। अगर तुम हरिजन आश्रममें ही चौबीसों घंटे काम करो तो भी उसमें इतना अधिक काम है कि प्रतिदिन कुछ-न-कुछ करने को बच ही रहेगा। फिर भी अगर तुम हरिजन आश्रमको सँभालते हुए और काम कर सकते हो तो अवश्य करो। लेकिन इस शिक्षाके आचार्यके रूपमें मुझे तो यह लगता है कि तुम्हारे पास हरिजन आश्रममें जो बच्चे है उन्हींमे तुम इस शिक्षाकी सम्भावनाएँ विकसित कर सकते हो। और यह बात मेरे मनको बहुत रुचेगी।

३. लेकिन आपका तो कहना है कि इस कामको हमें अपना समझना चाहिए?

तुम्हारे भेजे कागजात पढ़ने के बाद भी मैं इसपर विचार नहीं कर पाया हूँ। उसके लिए हमारे पास पर्याप्त साधन नहीं है। लेकिन विचार करने पर लगता है कि यदि इस प्रश्नपर मगनभाई[3] कुछ प्रकाश डाल सकें तो डालें। मैं यह नहीं मानता कि यदि हमें जरूरी साधन प्राप्त नहीं होते तो भी हमें जैसे-तैसे कुछ-न-कुछ करना ही चाहिए। हमारे छिटपुट प्रयत्नोंके जो परिणाम निकलते हैं वे भले निकलें। कुछ और करने का मतलब स्वयंको धोखा देना होगा।

यदि जाकिर हुसैन और [आर्य] नायकम न मिले होते तो शिक्षा-सम्बन्धी जो विचार मुझे सूझे उनके अमलकी बात मैं छोड़ ही देता। यह बात मेरे स्वभावमें शामिल है।

४. महाराष्ट्रमें अतीतकरने इस कामको अपने जिम्मे लेने की तत्परता दिखाई है। वे कितना कर सकेंगे, यह मैं नहीं कह सकता। लेकिन उन्होंने हिम्मतसे बीड़ा उठाने की इच्छा प्रकट की है। हम गुजरातमें कुछ न कर सकें, यह क्या ठीक लगेगा? सरकार तो कहती है कि बुनियादी प्रशिक्षण महाविद्यालय भी हम ही चलायें।

१. यह बात नरहरि द्वा० परीखको सम्बोधित करके कही थी।
२. आश्रममें रहकर अध्यापन मन्दिर चलाने के प्रश्नपर।
३. मगनभाई पी० देसाई।

यह मैं समझ गया हूँ। हम बीड़ा न उठा पायें तो मुझे शर्म भी आयेगी। पर बीड़ा उठा लेनेके बाद कुछ न कर पायें तो वह डूब मरने के समान होगा। इसलिए यदि हमे विचार करने पर भी अपने बीचमे कोई ऐसा आदमी नहीं मिल पाता जिसमे आत्मविश्वास हो तो फिर हमे खामोश ही रहना चाहिए। क्या बालूभाईकी मंडलीमे से हमे कोई ऐसा आदमी नहीं मिल सकता? मगनभाई क्या कहते है?

५. मगनभाई कहते हैं कि हमें विद्यापीठकी विशारद कक्षाके विद्यार्थियोंमें से अध्यापक तैयार करने चाहिए।

तो हम वही करें। प्रेमचन्द विद्यालय[1] जैसा चल रहा है वैसा ही चलता रहे। विद्यापीठमे जो प्रयोग चल रहा है सरकार उसे अपनाये और उसका खर्च भी दे।

६. खर्चा लेनेके बारेमें जब सरदारसे पहली बार बातचीत हुई तो उनकी तात्कालिक राय तो यह थी कि खर्चेकी बात तो वे देख लेंगे। सरकारसे खर्चा माँगने की बात उन्हें पसन्द नहीं थी।

मेरी राय भी यही होगी। लेकिन यहाँ प्रश्न यह है कि सरकार कुछ करने को उत्सुक है और वह अपने अधिकारियोंको भी उसमें शामिल करना चाहती है। यह प्रयोग कांग्रेसने सुझाया है, इसलिए हर कांग्रेसी सरकारको कुछ-न-कुछ करना ही चाहिए —— इस दृष्टिसे विचार करने पर हम किस प्रकार सरदारकी सहायताके लिए जा सकते है? [जवाब मगनभाईने दिया] अगर मगनभाई आदिमे अधिक आत्मविश्वास हो तो वे आगे बढ़ें; अन्यथा हम सरकारके पैसेका उपयोग न करें। संस्था सरकारकी निगरानीमें चलती है, तो इसका मतलब यह हुआ कि हमे सरकारी शिक्षक मिलेंगे; और हमें जो अन्य बहुत-सी सुविधाएँ मिलेंगी उनके बावजूद हम सरकारके लाल फीते (रेड टेप) से बँधे हुए होंगे, क्योंकि वह हमपर अंकुश नहीं रखेगी।

७. फिर हम असहयोगके सिद्धान्तके विषयमें क्या करें? क्या ऐसा प्रस्ताव पास करना उचित होगा कि जबतक कांग्रेस सरकार है तबतक इस सिद्धान्तका अमल स्थगित रखा जाये?

ऐसा प्रस्ताव पास करने में मुझे विचार-दोष दिखाई देता है। इसलिए हम उसे स्थगित नही करेंगे; लेकिन अगर हम उसे ब्रिटिश सरकारका ही शासन माने तो भी स्थिति यह होगी कि उसे हम सहयोग नही दे रहे हैं, बल्कि वह हमे सहयोग दे रही है। मतलब यह कि हम उसमे किसी तरहकी रद्दोबदल किये बिना सरकारके साथ मिलकर काम कर सकते है। इस प्रस्तावको[2] निःसंकोच गढ़नेवाला तो मैं ही था। उस समय भी मैंने यह समझाया था कि सरकार हमे सहयोग देने को आगे आये, और हम उसे स्वीकार करे, इसमे हमारी कसौटी हो सकती है। उस स्थितिमे हमें यह देखना होगा कि उससे हमारी शक्ति बढ़ती है या घटती है। जब पूर्ण

१. प्रेमचन्द रायचन्द ट्रेनिंग कॉलेज फॉर प्राइमरी टीचर्स।
२. देखिए खण्ड १९, पृ० १८९-९१।

असहयोग चल रहा था, उस समय मैंने लॉर्ड रीडिंगसे कहा था कि अगर मेरी अमुक शर्तें मान ली जायें तो स्वयं मैं भी विधान-सभामें प्रवेश कर सकता हूँ, लेकिन उसमें प्रवेश करके भी मैं अपनेको असहयोगी ही मानूँगा। लॉर्ड इर्विनको लिखे पत्रमें[१] भी मैंने यही बात कही थी। इस समय वह सवाल नहीं उठता। इसमें या तो [बौद्धिक] आलस्य है या दोषपूर्ण भाषाका प्रयोग। यह हमारा आलस्य है। कांग्रेसके मन्त्रीने क्या यह आदेश जारी नहीं किया है कि कलक्टरोंको कांग्रेसियोंके साथ मिलकर काम करना है?

८. मगनभाई और विट्ठलदासके सुझावोंके विषयमें आपका क्या विचार है?

मैंने सुझावोंको वैसी बारीकीसे नहीं पढ़ा है। सरसरी तौरपर पढ़ने से तो वे मुझे असंगत नहीं लगे। आपने उन सुझावोंको छिटपुट विचारोंका नाम दिया है। मैंने भी उन्हें इसी दृष्टिसे पढ़ा। आलोचककी तरह उनका गहरा अध्ययन करने का मेरे पास समय ही नहीं है।

९. मगनभाईका सुझाव इसे गुजरात यूनिवर्सिटीकी हलचलके साथ जोड़कर इसे अधिक गति प्रदान करनेका है।

जरा रुको। इस बातकी चर्चा हमने शुरू नहीं की है। विद्यापीठके विषयमें मगनभाईके विचार मैं पचा नहीं सका। इस विषयमें नरहरिने जो-कुछ कहा है उसमें, क्या पता, उसने मेरे ही विचार और मेरी ही भाषा न चुरा ली हो। और अगर वह प्रशंसा-प्रिय हो तो यह कहूँगा कि मेरे विचारोंको उसने मेरी अपेक्षा बहुत अच्छी भाषामें प्रस्तुत किया है। मेरी कल्पनाका विद्यापीठ तो इस शिक्षासे उत्पन्न होगा। मैंने तो वल्लभभाईसे यहाँ तक कहा कि आज विद्यापीठमें जो-कुछ चल रहा है उस सबको बन्द करके सम्पूर्ण शिक्षक मण्डलको इसी शिक्षामें लगा दें तभी हम स्वयं शोभान्वित हो सकते हैं और विद्यापीठको सुशोभित कर सकते हैं। मुझे लगता है कि यह सुनकर उस समय तो उन्हें आघात पहुँचा था, लेकिन मैं उन्हें और अधिक विचार करने के लिए प्रेरित नहीं कर सका। दूसरे काम भी थे। लेकिन अगर शिक्षकोंके गले उतार सकूँ तो अपने विचारोंपर आज ही अमल कर डालूँ।

१०. आजकी व्यवस्थाको समेटे बिना हमें कुछ करना पड़े तो क्या करें?

यह तो मजबूरीमें कुछ करने-जैसा होगा। ऐसी अवस्थामें, यदि मगनभाईने कोई योजना पेश की हो तो उसपर विचार करके उसमें कोई रद्दो-बदल सुझाना जरूरी लगा तो सुझाऊँगा। किशोरलालभाई तुमने कहा था कि हम लोग प्राथमिक शिक्षाकी उपेक्षा कर रहे हैं। बादमें हमने एक प्रस्ताव भी पास किया। इस प्रस्तावपर हम कभी भी पूरी तरह अमल नहीं कर पाये हैं। आज अवसर है। क्योंकि सरकार अपनी है और उसमें खेर-जैसे साधु पुरुष शामिल हैं।

११. (विद्यापीठके लिए सनद प्राप्त करने के बारेमें।)

१. देखिए खण्ड ४३, पृ० २-९।

इसमें मुझे बहुत खतरा नजर आता है। क्योंकि इसमें पड़कर हम उत्कट ईर्ष्या-द्वेषको न्योता देंगे। खर्च भी बहुत कराना पड़ेगा। मैं इसमें कोई रस नहीं ले पाऊँगा। क्योंकि यह तो ऐसा होगा जैसे हमने बीचसे ही झपटकर कुछ ले लिया हो। हमारा क्षेत्र दरिद्रनारायणकी सेवा करने का है। एक तरहसे यह कठिन है, लेकिन दूसरी तरहसे आसान भी है। फिर भी मैं कोई बाधा उपस्थित करनेवाला नहीं हूँ। आज भी क्या म इस सारी व्यवस्थामें कोई दिलचस्पी लेता हूँ या किसीसे मिलता-जुलता हूँ। कुछ बातें जानता अवश्य हूँ। वर्धा योजनाका तो मुझे प्रवर्तक माना जा सकता है, इस-लिए उसमें तो कुछ समय मुझे देना ही चाहिए। विद्यापीठके भविष्यके बारेमें इस समय क्या करना ठीक होगा, इस सम्बन्धमें निर्णय करने के लिए मैं अपनेको आधार-रूप नहीं मानता। अभी मेरा मन पूरी तरहसे गाँवमें बसता है। मैं उसे वही रहने देना अच्छा समझता हूँ। अगर विद्यापीठके सम्बन्धमें विचार करने में आप मेरी मदद चाहेंगे तो बेकार चोट खायेंगे, क्योंकि मैं तो जो-कुछ करूँगा, वह दूर बैठकर पत्थर फेंकने-जैसा ही होगा।

१२. मगनभाई कहते हैं कि आज गांधी-विचारधाराको कांग्रेसमें बहुमत मिल सकता है लेकिन लोकमत, खासकर शिक्षाके क्षेत्रमें, हमारे विरुद्ध है। इस स्थितिमें बहुमतका लाभ उठाना क्या हमारे लिए उचित है?

सत्याग्रहकी दृष्टिसे मुझे यह बात बुनियादी लगती है। सत्याग्रहका काम लोक-मतको शिक्षित करने का है। इस मामलेमें लोकमत हमारे पक्षमें है, यह कहना कठिन है। इसलिए हमारे बीच इसका उचित स्थान है। [इसका लाभ उठाना][1] मुझे तो बहुत उचित लगता है। क्योंकि इससे हम लोक-सेवा करेंगे। इसमें किसी प्रकारकी जबरदस्ती तो है ही नहीं।

और यदि मगनभाई वहाँ केवल अध्यापन मन्दिर चलाते हैं तब तो कोई मत-भेद ही नहीं रह जाता। लेकिन उस हालतम क्या दूसरी चीजें समेट नहीं लेनी चाहिए? मुझे लगता है कि इसमें मगनभाई कुछ उलझनमें भी पड़ गये हैं।

मगनभाईके अध्यापन मन्दिरमें तो बहुत थोड़े – सिर्फ दो-चार – विद्यार्थी ही होंगे।

लगता है, मगनभाईको अध्यापन मन्दिरका पूरा बोध नहीं है। अगर वे अध्या-पन मन्दिरका काम करते हैं तो उनके करने को कुछ और रह ही नहीं जायेगा। मैं चाहता हूँ, यहाँ जो-कुछ चल रहा है उसका आप सब बारीकीसे अध्ययन करें। वह पूर्ण तो नहीं है, लेकिन आजमाकर देखने लायक है।

१३. गांधीजी ने इशारेसे बताया कि हरिजन आश्रमके विद्यार्थियों और वाडज विद्यालयको मिलाकर एक कर दिया जाये और उसे वर्धा-योजनाके अनुसार नरहरि-भाई चलायें, यह उन्हें पसन्द है।

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० १०७३८) से। सौजन्य : गोमतीबहन कि० मशरूवाला

१. यहाँ कुछ शब्द धुँधले पड़ गये हैं।

४२६. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

१४ जनवरी, १९३८

मेरे नाम कैदियोंने जो सन्देश[1] भेजा है उसका तारके रूपमें दिया गया सार मैंने पढ़ा है। उनके सोचने के तरीकेको समझने में मेरे सामने कोई कठिनाई नहीं है, लेकिन उनसे जो मैं धीरजसे काम लेने को कह रहा हूँ उसका कारण व्यक्तिगत किन्तु साथ ही ऐसा है जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। इस सम्बन्धमें काम करने के अपने सामान्य ढंगसे हटकर अगर मैं विशेष प्रयत्न करना और दूर-दूरकी यात्रा करना आरम्भ कर दूँगा तो मेरे शरीरके जवाब दे जाने से उस उद्देश्यकी हानि हो सकती है जो हम सबको समान रूपसे प्रिय है, और इस तरहका प्रयत्न करने से मेरा शरीर जवाब दे जायेगा, यह तो डाक्टरोंकी निश्चित राय है। इसलिए मैं अनशन करने-वालों से अनुरोध करता हूँ कि वे अनशन स्थगित कर दे और इस तरह देशको तथा खासकर मुझे उस समान उद्देश्यकी दिशामें प्रयन्न करने का अवसर दें। वे ऐसा आचरण न करें जिससे किसीको उन्हें प्रमत्त या हठी कहने का मौका मिले।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १५-१-१९३८

४२७. बातचीत : विदेशी शिक्षाविदोंके साथ[2]

[१५ जनवरी, १९३८ के पूर्व]

[डॉ० जिलिएकस :] **वर्षोंसे मेरी यह कामना रही है कि लोक-नेता लोग शिक्षाकी तरफ ध्यान दें, क्योंकि शिक्षाके जरिये ही समाजकी पुनर्रचना हो सकती है। जब मैंने देखा कि आपने अपना ध्यान शिक्षाकी ओर दिया है तो मुझे कितना सुख हुआ, यह मैं बता नहीं सकता। हमने आपकी [शिक्षा] योजनाका अध्ययन किया है और हम उसकी सफलताके लिए अपने हार्दिक समर्थनका आपको विश्वास दिलाते हैं।**

[गांधीजी :] मैं बहुत कृतज्ञ हूँ कि इतने सारे शिक्षा-शास्त्रियोंने इस योजना को अपना समर्थन प्रदान किया है। इसके आलोचक भी हैं, लेकिन जब मैंने अपनी योजना

१. यह गांधीजी के ११ जनवरी के तारके उत्तरमें भेजा गया था; देखिए पृ० ३७५।

२. न्यू एजुकेशन फेलोशिप शिष्टमण्डलके सदस्य डॉ० जिलिएकस, प्रोफेसर बोवेट और प्रोफेसर डेविस गांधीजी से मिलने के लिए आये थे।

का सूत्रपात किया था उस समय मैंने सोचा भी नहीं था कि मेरे साथी कार्यकर्त्ताओं के अलावा किसी औरको इसमें कोई दिलचस्पी होगी। भारतकी जनता और उसकी वर्त्तमान स्थितिपर विचार करते हुए मै अन्य किसी प्रकारकी शिक्षाका विचार नही कर सकता था। यहाँके जन-साधारणके लिए सबसे बड़ा महत्त्व तो कामका है और शिक्षा-शास्त्रियोंका कर्त्तव्य उस कामको ऐसा रूप देना है जिससे लोगोंको कामके जरिये शिक्षा भी प्राप्त हो। हर बच्चेको यह अनुभव होना चाहिए कि वह किसी उपयोगी चीजकी रचना कर रहा है, और इस उत्पादक कार्यको करते हुए उसके जरिये उसके मन और हृदयका भी विकास होना चाहिए।

महान् मनोवैज्ञानिक डॉ० एडलरने, . . . कहा, "मैं आपसे सहमत हूँ। शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो बच्चेको उपयोगी बनाये।"

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १५-१-१९३८

४२८. बातचीत : एक मित्रके साथ

[१५ जनवरी, १९३८ के पूर्व]

[गांधीजी :] मेरा विचार बच्चोंको सिर्फ एक विशेष धन्धा अथवा पेशा सिखाना नहीं है, बल्कि उसके द्वारा उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्वका विकास करना है। उदाहरणके तौरपर, वह केवल बुनना ही नहीं सीखेगा, बल्कि यह भी सीखेगा कि क्यों उसे किसी और तरीकेसे नहीं बल्कि एक खास तरीकेसे ही बुनना चाहिए, क्यों उसे सूतको किसी और तरहसे न पकड़कर एक विशेष ढंगसे पकड़ना चाहिए, क्यों उसे स्वयं ही कातना आना चाहिए और उसे क्यों अमुक प्रकारकी बुनाईके लिए अमुक अंकके सूतपर ही आग्रह रखना चाहिए। बुनकर बालक यह सब बातें घरमें नहीं सीख पाता। चरखा आज भी उसके लिए वैसा ही है जैसा कि दो हजार साल पहले था। हम उसे अधिकसे-अधिक क्षमताशील चरखा और करघा बनाने की कला सिखाते हैं — सो इसलिए नहीं कि वह ज्यादा कताई और बुनाई करके दूसरे कातने और बुननेवालों को बेरोजगार बना दे बल्कि इसलिए कि आज जिस तरहके करघे और चरखे मौजूद हैं उनसे कहीं अधिक क्षमताशील चरखों और करघोंको तैयार किया जा सके। आपने विभिन्न वर्गोंके लिए — बुनकरों, कतैयों और बढ़ई आदिके लिए — अलग-अलग स्कूल खोलने का जो सुझाव दिया है, उससे मेरा उद्देश्य सिद्ध नही होता है। मैं समाजके विभिन्न स्तरके लोगोंको समान स्तरपर लाना चाहता हूँ। इतनी शताब्दियोंसे समाजके श्रमिक वर्गोंको अलग रखा गया है और उन्हें निम्न दर्जा दिया गया है। उन्हें शूद्र कहा जाता है, जिसका अर्थ निम्न स्तरका व्यक्ति लगाया जाता है। मैं एक बुनकरके पुत्रमें और एक किसान तथा एक स्कूल मास्टरके पुत्रमें कोई भेद नहीं होने देना चाहता।

[मित्र :] लेकिन क्या हमें भिन्न-भिन्न लड़कोंके लिए कामके भिन्न-भिन्न घंटे नहीं रखने चाहिए — मेरा तात्पर्य है कि क्या हमें मौसमके लिहाजसे कक्षाओंको नहीं बाँटना चाहिए ?

नहीं, हमें कामके अलग-अलग घंटे रखने की भी जरूरत नहीं है। गाँव तो एक पूर्ण इकाई है। देहातके अधिकांश लोग किसान हैं। मुझे भारतके उन दस प्रतिशत लोगोंके लिए, जो किसान नहीं हैं, अलगसे स्कूल खोलने की जरूरत नहीं है। मैं भारतके गाँवोंमें रहनेवाले हर लड़के अथवा लड़कीको बुनकर अथवा कतैया नहीं बनाना चाहता, लेकिन वे जो भी धन्धा सीखेंगे उसके द्वारा मैं उन्हें पूर्ण मनुष्य अवश्य बनाना चाहता हूँ। गाँवकी पाठशालाको हम यथासम्भव मितव्ययता और कुशलताके साथ एक शैक्षणिक कर्मशालामें परिवर्तित कर देंगे।

अतएव यह पाठशाला ऊँचे किस्मकी कोई ऐसी कर्मशाला नहीं होगी, जहाँकी परिस्थिति और वातावरण आजकलकी कर्मशालाओंके ही समान होगा। ऐसी कर्मशालामें बच्चोंको हर ऐसी चीजको, जो उपयोगी हो सकती हो, तैयार करना नहीं सिखाया जायेगा। उदाहरणके तौरपर, विश्व-भरमें तम्बाकूका बहुत ज्यादा उपयोग किया जाता है; भारतमें इसका उत्पादन नकदी फसल के रूपमें किया जाता है। लेकिन इससे मनुष्यको शारीरिक और नैतिक रूपसे जो नुकसान होता है, वह प्रत्यक्ष है। मैं अपने स्कूलकी कर्मशालामें बीड़ी बनाना नहीं सिखाऊँगा। और मुझे उम्मीद है कि इस दृष्टिसे हमारी पाठशालाएँ विदेशोंके उन स्कूलोंसे मूलतः भिन्न होंगी जो व्यावहारिक शिक्षा देने का दावा करते हैं। कुछ दिन पहले मैंने इंग्लैण्डमें एक ऐसे स्कूलके बारेमें पढ़ा जहाँ लड़कोंको कुशल दुकानदार बनने की शिक्षा दी जाती है। इंग्लैण्ड मद्य-निषेधको स्वीकार नहीं करता और न ही वह निकट अथवा दूरस्थ भविष्यमें मद्य-निषेध लागू करने का इरादा रखता है। इसलिए अंग्रेज लड़कोंको शराबकी दुकानोंमें कुशलतापूर्वक काम करने की भी शिक्षा दी जायेगी। इसलिए उपर्युक्त अंग्रेजी स्कूलने शराबके लाइसेन्सके लिए भी अर्जी दी है, जिससे कि स्कूलके लड़कोंको शराब बेचने का प्रशिक्षण दिया जा सके। युद्धके दौरान इंग्लैण्ड अपने स्कूलोंको गोला-बारूद बनाने के कारखानोंके रूपमें परिवर्तित कर सकता है। लेकिन जिस देशकी राष्ट्रीय नीति अहिंसा है, वहाँ ऐसी बात अकल्पनीय होनी चाहिए। हमारे स्कूलोंको भी कारखानोंमें परिवर्तित कर दिया जायेगा, लेकिन ऐसे कारखानोंके रूपमें जहाँ ऐसी चीजोंकी शिक्षा दी जायेगी जो राष्ट्रीय आदर्शके अनुरूप स्वस्थ जीवन जीने के लिए जरूरी हों।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १५-१-१९३८

४२९. पत्र : मुल्कराजको

सेगाँव, वर्धा
१५ जनवरी, १९३८

भाई मुल्कराज,

यह खत[1] पढ़ीये, पढ़कर वापस कीजिए। लाला गिरधारीलाल का कुछ पता है क्या? अगर साथवाले पत्रमें लिखी हुई बात सही है तो पत्रिका सभ्योंको भेजकर लालाजी का नाम हमारे दफ्तरमें से निकलना चाहिए। इस बारेमें अगर आप सहमत हैं तो यह खत अभिप्रायके लिये सभ्योंको भेज दें।

सभ्योंका नाम, ठिकाना, अगले सभाकी मिनिट मुझे भेजीये।

आपका,
मो० क० गांधी

पत्रकी नकलसे। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

४३०. बातचीत : लॉर्ड लोथियनके साथ[2]

[२० जनवरी, १९३८][3]

आखिरी रोजकी बातचीतमें लॉर्ड लोथियनने ईसाई-पद्धतिका[4] जिक्र करते हुए उसपर गांधीजी की राय माँगी।

मनुष्यका ईश्वरसे अटूट सम्बन्ध है। इसलिए मनुष्य जिस हदतक ईश्वरके साथ अपने इस सम्बन्धको पहचानेगा उसी हदतक वह पाप और रोगसे मुक्त होगा। मनुष्यके श्रद्धासे स्वस्थ होने का रहस्य यही है। ईश्वर सत्य, स्वास्थ्य और प्रेम है।

[गांधीजी :] और वह वैद्य भी है। मेरा ईसाई-पद्धतिके चिकित्सकोंके साथ कोई झगड़ा नहीं है। मैंने तो बरसों पहले जोहानिसबर्गमें कहा था कि मैं उस सिद्धान्तको पूरी तरह मानता हूँ, पर ईसाई-पद्धतिके बहुत-से चिकित्सकोंमें मेरी कोई श्रद्धा नहीं है। बौद्धिक विश्वास होना एक बात है, और किसी चीजको हृदयसे श्रद्धापूर्वक

१. यह उपलब्ध नहीं है।
२. महादेव देसाईके "नोट्स" (टिप्पणियाँ) से उद्धृत।
३. लॉर्ड लोथियन १८ से २० जनवरी तक सेगाँव में ठहरे थे।
४. जिसके अनुसार रोगोंकी चिकित्सा व्यक्तिके ईसाई विश्वासोंके आधारपर की जाती है।

ग्रहण करना दूसरी बात है। मैं इस विधानको मंजूर करता हूँ कि रोग-मात्र पापका परिणाम है। आदमीको अगर खाँसी आती है तो वह पापका ही फल है। मेरी इस रक्त-चापकी बीमारीका कारण भी अत्यधिक काम और चिन्ताका बोझ ही तो है। पर सवाल यह है कि मैंने क्यों इतना काम और चिन्ता की? अत्यधिक काम और जल्दबाजी पाप है। मै यह भी अच्छी तरह जानता हूँ कि डाक्टरोंसे बचना भी मेरे लिए पूरी तरह सम्भव था। पर ईसाई-पद्धतिके चिकित्सकोंने शारीरिक स्वास्थ्य और रोगवाले प्रश्नको जो इतना अधिक महत्त्व दे रखा है, वह मेरी समझमें नही आता।

आदमी अगर इतना मान ले कि रोग-मात्र पापका ही फल है, तो काफी है। 'गीता' में भी तो कहा है कि पंचेन्द्रियोंके विषयोंका मनुष्यको त्याग कर देना चाहिए, क्योंकि वे माया हैं। ईश्वर जीवन, प्रेम और स्वास्थ्य है।

मैंने इसे कुछ दूसरे शब्दोंमें रखा है। ईश्वर सत्य है, क्योंकि हमारे धर्मग्रन्थोंमे लिखा है कि सिवा सत्यके कुछ है ही नहीं। इसका अर्थ यह हुआ कि ईश्वर ही जीवन है। और फिर मैंने कहा है कि सत्य और प्रेम एक ही सिक्केके दो पहलू हैं, और प्रेम वह जरिया है जिसके द्वारा हम सत्यको, जो हमारा ध्येय है, प्राप्त कर सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-१-१९३८

४३१. एक सन्देश[1]

सेगाँव
२० जनवरी, १९३८

मेरी महत्त्वाकांक्षा यह है कि काँग्रेसको ऐसे एकमात्र दलके रूपमे सब स्वीकार कर लें जो सरकारका सफल प्रतिरोध कर सकता है और जो-कुछ करना आवश्यक है वह करके दिखा सकता है। यही एकमात्र दल है, जो स्थापनाके समयसे ही सभी अल्पसंख्यक समुदायोंका प्रतिनिधित्व करता आया है।

यदि ब्रिटिश सरकार काँग्रेसकी इस विशिष्ट स्थितिको स्वीकार कर ले तो उसे संघकी[2] स्थापनाको तबतक के लिए स्थगित रखने मे कोई हिचकिचाहट नहीं होगी जबतक कि वह कांग्रेसको सन्तोष न दिला पाये। और कांग्रेसको सन्तोष दिलाना कठिन नहीं होना चाहिए। उसके लिए सिर्फ इतना ही करना पड़ेगा कि देशी नरेशों को सम्मिलित करने से पहले उनकी प्रजाके मौलिक अधिकारोंकी रक्षाकी गारंटी दे दी जाये और प्रजा का प्रतिनिधित्व चुनाव द्वारा हो। मेरी रायमें तो यदि संघ

१. इस सन्देशके ऊपर लिखा था: "लॉर्ड लोथियन और जिम्मेदार राजनयिकोंके लिए ही"।
२. १९३५ के गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्टके अन्तर्गत प्रस्तावित संघकी।

को जबरदस्ती थोपने का प्रयत्न किया गया तो इससे भारी संकटकी स्थिति उत्पन्न हो सकती है।

मेरे सुझाये तरीकेसे यदि वर्त्तमान कठिनाईपर पार पा लिया जाये तो भी इस अधिनियमका विरोध तो कायम ही रहेगा। मैं तो समझता हूँ, शान्ति तभी सुनिश्चित हो सकती है जब किसी संविधान-सभा द्वारा तैयार किया गया संविधान इस अधिनियम का स्थान ले ले। जो भी हो, यदि कांग्रेसके उचित दर्जे को पूरी तरहसे स्वीकार कर लिया जाये तो शेष सब-कुछ सरलतासे निबट सकता है।

यह मेरा व्यक्तिगत मत है और मैंने किसी भी साथी कार्यकर्त्ताके साथ इस-पर चर्चा नहीं की है।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७७९१) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

४३२. पत्र : वाइसरायको

सेगाँव, वर्धा
२१ जनवरी, १९३८

प्रिय मित्र,

मेरे स्वास्थ्यके लिए शुभकामना करते हुए आपने जो स्नेह-भरा पत्र भेजा उसे पढ़कर मैं विह्वल हो उठा। जरा बेहतर हो जाऊँ, इसी बातकी राह देखते हुए उसकी प्राप्तिकी सूचना देने में कुछ देर कर दी। खतरेसे बाहर तो अब भी नहीं हूँ, लेकिन जब आपका कृपापत्र मिला था, उस समयकी अपेक्षा बहुत अच्छा हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

परमश्रेष्ठ वाइसराय
नई दिल्ली

अंग्रेजीकी नकलसे। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

४३३. पत्र : अमृतकौरको

२१ जनवरी, १९३९

मूर्खा रानी,

मैंने कल फलाहारी उपवास आरम्भ किया और अब परम स्वस्थ अनुभव कर रहा हूँ। मुझे इसकी आवश्यकता थी। इसे आठ दिन जारी रखना चाहता हूँ। किन्तु वह तो इसपर निर्भर होगा कि इससे मुझे कितना लाभ होता है। इसलिए तुम चिन्ता मत करना।

किन्तु यह पत्र तुम्हे यह सूचित करने के निमित्त है कि मैंने कल लॉर्ड लोथियन को बता दिया कि तुमने लेडी लोथियनकी क्षयरोग-सम्बन्धी समितिकी सदस्यता क्यों अस्वीकार कर दी। इसकी आवश्यकता इसलिए पड़ी कि लेडी लोथियनने उनकी मार्फत ऐसा सन्देश भेजा था कि मै अपना नाम इस योजनामे शामिल होने दूँ। उन्होंने यह भी कहा था कि इस योजनाके साथ सम्राट्का सम्बन्ध केवल अस्थायी है। मुझे लगा, उन्हे मालूम है कि तुम्हारे एतराजका मुझे पता है। इस कारण मैंने तुम्हारी चर्चा चलाकर लॉर्ड लोथियनको बताया कि तुम्हारे और मेरे बीच चूंकि कोई दुराव नही है (मेरा कथन बिलकुल ठीक था न?) इस कारण मुझे आशा है कि लेडी लोथियनने इस बातका बुरा नहीं माना होगा कि तुमने मुझे यह बात बता दी है। मैंने यह भी बताया कि पहल तुम्हारी ओरसे ही की गई थी और मुझे तो पता तब चला जब तुम इनकार कर चुकी थीं, किन्तु तुम्हारी आपत्तियाँ मुझे सहज ही बहुत ठीक लगीं। अब तुम बताओ कि मैंने ठीक किया या नहीं। यदि तुम बहुत व्यस्त हो तो जब मिलेंगे तभी इसका उत्तर देना।

मैंने लॉर्ड लोथियनको तुम्हारा सन्देश दे दिया। उनका कहना है कि उनकी समिति[1] तथा दूसरी समितिके[2] सामने आनेवाले साक्षियोंमे तुम योग्यतम थी।

मिलेंगे तब और बातें होंगी।

स्नेह।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६२३) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६४३२ से भी

१. १९३२ की मताधिकार समिति, जिसके सम्मुख अमृतकौरने भारतकी महिलाओंकी ओरसे साक्षी दी थी।

२. ब्रिटिश संसदकी संयुक्त प्रवर समिति, जिसने भारतके लिए नवीन संविधानपर विचार किया था।

४३४. पत्र : अमृतकौरको[1]

सेगाँव
२२ जनवरी, १९३८

मैं ३१ तारीखको तुम्हारे आने की आशा कर रहा हूँ।
स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६२४) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६४३३ से भी

४३५. तार : सुभाषचन्द्र बोसको

[२३ जनवरी, १९३८][2]

स्वदेश लौटने पर तुम्हारा स्वागत है। परमात्मा तुम्हें जवाहरलालकी जगह सँभालने की शक्ति दे। प्यार।[3]

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २६-१-१९३८

४३६. पत्र : द० बा० कालेलकरको

२३ जनवरी, १९३८

चि० काका,

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने अभी प्रस्ताव नहीं देखा है। मुझे प्रस्ताव भेजना, ताकि उसे पढ़कर निर्णय कर सकूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७६८८) से।

१. यह अमृतकौरको भेजे गये मीराबहनके पत्रमें पुनश्चके रूपमें है।
२. सुभाषचन्द्र बोस इसी तारीखको लन्दनसे कराची पहुँचे थे।
३. साधन-सूत्रमें आगे कहा गया है: "महात्मा गांधीने दूसरे तारमें कहा है कि अब वे पहलेसे काफी अच्छे हैं।"

४३७. पत्र : महादेव देसाईको

३० जनवरी, १९३८

चि० महादेव,

मैं तुम्हारी टिप्पणी वापस भेज रहा हूँ। अहिंसावाली टिप्पणी देख नहीं सका। अब बाद में देखूँगा। तुम्हें याद होगा कि राजकुमारी कल शाम को वहाँ पहुँच रही है। उसे तुरन्त रवाना कर देना। उसकी खातिर मैं आज जरा जल्दी मौन धारण करूँगा। सैर तो तुमने एक ही दिन की न? यह उचित नहीं है।

प्रभुदयाल कांग्रेस मे शामिल होना चाहता है। तुमपर उसकी क्या छाप पड़ी है? कुमारप्पा से पूछना। कागज-विभाग में उसका काम कैसा है?

साथका पत्र डाक मे डालना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५८९) से।

४३८. पत्र : शारदा चि० शाहको

सेगाँव
३० जनवरी, १९३८

चि० शारदा,

दो दिन तो मैंने तुझे लिखे बिना काटे, लेकिन आज लिखे बिना नहीं रह सकता। आज तेरा पत्र आना चाहिए था। तू प्रसन्नचित्त होगी। तेरी तबीयत अच्छी रहती होगी। तुझे सर्दी भी बहुत ज्यादा महसूस नही होती होगी। मुझे तेरा ब्योरे-वार पत्र मिलता ही रहना चाहिए। क्या देवदास, ब्रजकिशन, प्यारेलालकी माँ तुझसे मिले? ठीक होकर तुरन्त आना। मैं मजे में हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

सरस्वतीबहन को आशीर्वाद।

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९८१)से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला

४३९. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

३१ जनवरी, १९३८

प्रिय कुमारप्पा,

मैंने ऐसा माना है कि लखनऊ की तरह हरिपुरा में भी प्रदर्शनी दिखाने के लिए मानचित्र आदिके साथ किसी मार्गदर्शककी व्यवस्था होगी। इस बार यह सब पिछली बारसे बहुत बेहतर जरूर होना चाहिए।

स्नेह।

बापू

[पुनश्च :]

राजकुमारी आज रात को आ रही है।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१३३)से।

४४०. पत्र : महादेव देसाईको

सेगाँव
३१ जनवरी, १९३८

चि० महादेव,

तुम्हारा यह लेख ठीक है। उसमें अब भी परिवर्द्धनकी बहुत गुंजाइश है। मैंने तो तुम्हें रूपरेखा दी थी। तुम्हारे पहले लेखमें काट-छाँटकी जा सकती थी, लेकिन उसमें समय बहुत जाता। जब तुम ऐसे प्रयत्न करते रहोगे तभी मुझे पता चलेगा न कि तुम मेरे विचारोंको पचा सकते हो या नहीं। इसलिए तुम्हारे लिखे लेख तो अगर मैं सौ बार भी रद करूँ तो तुम्हें फिरसे लिखना ही पड़ेगा।

सभी मेरे साथ जाना चाहते हैं तो फिर पीछे कौन रहेगा? चाहे कितना ही काम क्यों न हो, निश्चित समयपर तुम तीनों अवश्य सैर करने जाओ। इस बातको मैं तो आवश्यक मानता हूँ। खाने-पीने का समय जितना जरूरी है, उतना ही घूमने का समय भी है।

सत्यमूर्ति का [पत्र] याद करके जवाहरलाल को दे देना। चाहे तो वह सारा पत्र पढ़ जाये। जमनालाल आदि को भी पढ़वाना। घनश्यामदास का पत्र भी वापस

भेज रहा हूँ। मैंने वे सब कतरनें पढ़ डाली हैं और अब वापस भेज रहा हूँ। एकको छोड़कर बाकी सब मुझे खराब नहीं लगीं।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

लैंकैस्टर रात को आ सकती है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५८८)से।

४४१. पत्र : शारदा चि० शाहको

सेगाँव
१ फरवरी, १९३८

चि० शारदा,

तेरा पहला पत्र मिला। तूने अपनी सूजन सरस्वतीबहन को दिखाई होगी। अब तो सूजन दब गई होगी। भूख लगे तो रोटी खाने से मत डरना। असली खूबी तो वहाँ के स्नानमें, मिट्टीमें और हवामें है। वहाँ इन सब चीजोंका जो असर होगा उसमें और यहाँ इनका जो असर होगा उसमें फर्क है। वह स्थान अच्छा समझकर ही मैंने तुझे भेजा है। मैं जानता हूँ कि तू धनसे लुब्ध नही होनेवाली है। ईश्वर तेरी रक्षा कर रहा है।

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुजींथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम् ।।[1]

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९८२) से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला

१. ईशोपनिषद्, १।

४४२. पत्र : मुहम्मद अली जिन्नाको

सेगाँव, वर्धा
३ फरवरी, १९३८

प्रिय श्री जिन्ना,

पण्डित जवाहरलाल नेहरूने मुझे कल बताया कि आप मौलाना साहबसे शिकायत कर रहे थे कि मैंने अपने १९ अक्तूबरके पत्रके उत्तरमें लिखे आपके ५ नवम्बरके पत्रका[1] जवाब नहीं दिया। आपका पत्र उन दिनों मिला जब कलकत्तामें डॉक्टरोंने मुझे गम्भीर रूपसे बीमार करार दे दिया था। पहुँचने के तीन दिन बाद मुझे वह दिखाया गया। यदि मुझे लगता कि उसका उत्तर देना बहुत जरूरी है, तो बीमारी के बावजूद मैंने उत्तर भेज दिया होता। मैंने आपका पत्र दुबारा पढ़ा है। मेरा अब भी यही विचार है कि उत्तरमें मैं कोई भी उपयोगी बात कह नहीं सकता था। फिर भी एक प्रकारसे मुझे खुशी है कि आपने उत्तरकी अपेक्षा और प्रतीक्षा की। यह रहा मेरा उत्तर।

श्री खेरने स्पष्ट रूपसे मुझे बताया कि वे आपका एक गोपनीय सन्देश लाये हैं, और उन्होंने एकान्त पाकर आपका सन्देश दिया। मैं आपको मौखिक उत्तर भेज सकता था, किन्तु आपको अपनी सही मन:स्थितिसे अवगत कराने के निमित्त मैंने वह पुर्जा भेजा। उसमें छिपाने की तो कोई बात ही नहीं थी, किन्तु आपने उस पत्रका जिस ढंगसे उपयोग किया उससे मुझे दु:ख और आश्चर्य हुआ और अब भी हो रहा है।

आप मेरे मौनकी शिकायत करते हैं। उसका कारण शब्दश: और सही-सही मेरे उस पुर्जेमें व्यक्त है। आप विश्वास कीजिए कि जिस क्षण भी मैं दोनों जातियों के बीच मेल कराने के लिए कुछ करने की स्थितिमें होऊँगा, दुनियाकी कोई भी ताकत मुझे वैसा करने से रोक नहीं सकती।

आप इस बातसे इनकार करते प्रतीत होते हैं कि आपका भाषण युद्धकी घोषणा था, किन्तु आपने उसके बाद भी जो-कुछ कहा है उससे मेरी प्रथम धारणाकी पुष्टि होती है। जो केवल भावनाकी बात है उसे मैं सिद्ध कैसे कर सकता हूँ? आपके भाषणोंमें मैं उस पुराने राष्ट्रवादीका अभाव महसूस करता हूँ। सन् १९१५ में जब मैं अपने दक्षिण आफ्रिकाके स्वेच्छासे अपनाये गये प्रवाससे लौटा तो सब लोग आपका एक कट्टर राष्ट्रवादीके रूपमें बखान करते थे, जिसपर हिन्दुओं और मुसलमानों दोनोंकी आशाएँ टिकी हुई थीं। आप क्या अब भी वही पुराने जिन्ना साहब हैं? यदि आप हामी भरें तो आपके भाषणोंके बावजूद मैं आपकी बातपर विश्वास करूँगा।

१. देखिए परिशिष्ट ७ (ख)।

अन्तिम बात यह कि आपकी इच्छा है, मैं कोई प्रस्ताव लेकर आगे आऊं। मैं घुटने टेककर आपसे यही विनती करूँगा कि मैं आपको जैसा समझता था, आप वैसे ही बन जायें। इसके सिवाय मैं और क्या प्रस्ताव कर सकता हूँ? किन्तु दोनों जातियोंमें एकताका आधार प्रस्तुत करनेवाला कोई प्रस्ताव आपकी ओरसे ही आना चाहिए।

यह पत्र भी छापने के लिए नहीं, बल्कि केवल आपके लिए है। यह एक मित्रकी पुकार है, विरोधीकी नही।[1]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १६-६-१९३८

४४३. पत्र : वी० ए० सुन्दरम्‌को

३ फरवरी, १९३८

प्रिय सुन्दरम्,

तो तुमने अपने जीवनके ४२ वर्ष बिता दिये। आगे सिर्फ २५ वर्षोंकी ही कामना क्यों करते हो? अपनी कामनाके बजाय भगवान्‌की इच्छापर क्यों नही छोड़ते?

तुम्हारी पुस्तिका देख गया हूँ। किन्तु ब्रण्टनकी[2] समालोचना तो तुम्हारे पत्रमें नहीं मिली।

मालवीयजी के विषयमें तुम्हारे विस्तृत पत्रकी प्रतीक्षामें हूँ। उनकी ओर मेरा ध्यान बराबर लगा हुआ है।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२०५) से।

१. श्री जिन्नाके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट १२।
२. **सर्च इन सीक्रेट इंडिया**के लेखक पॉल ब्रण्टन।

४४४. पत्र : मणिलाल गांधी और उनके परिवारको

३ फरवरी, १९३८

चि० मणिलाल और सुशीला, सीता, अरुण,

तुम सब आये, अच्छा हुआ। यहाँ कब आ रहे हो? अकोला तो रास्तेमे ही है। नानाभाईकी[1] तबीयत भी अच्छी नहीं है। वहाँ सबसे पहले जाना। हम यहाँ से ७ अथवा ८ तारीखको हरिपुराके लिए प्रस्थान करेंगे। तुम साथ हीं चलोगे न? मैं ठीक ही हूँ।

बापूके आशीर्वाद[2]

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८७०) से।

४४५. पत्र : द० बा० कालेलकरको

५ फरवरी, १९३८

चि० काका,

आज तो कदापि मत आना। परसों तीन बजे आना। पाठचक्रम[3] क्या मुझे ही तैयार करना होगा? या जो तुम अलीगढ़से लाये हो वही है? यदि अलीगढ़वाला ही है तब तो मैं उसे देख गया हूँ। लगता है कि प्रस्तावना लिखना मुश्किल है। मैं ८ तारीखको रवाना होना चाहता हूँ। यदि तबतक लिख सका तो दे दूँगा। कामथके [कागजात] देखकर और उनपर हस्ताक्षर करके भेजूंगा। तुम तो जरूर जाना। किशोरलालका स्वास्थ्य भी यदि अनुमति दे तो जरूर आये।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७६९०) से।

१. मणिलाल गांधीके श्वसुर नानाभाई आई० मशरूवाला।
२. इसके साथ कस्तूरबा ने भी अपना आशीर्वाद भेजा था।
३. जाकिर हुसैन कमेटी द्वारा तैयार किया गया।

४४६. पत्र : शारदा चि० शाहको

सेगाँव
५ फरवरी, १९३८

चि० शारदा,

तेरा पत्र मिला। रक्तचाप थोड़ा बढ़ गया है, लेकिन चिन्ता करनेकी कोई जरूरत नहीं। काम भी ज्यादा करना पड़ता है। हम ८ तारीखको हरिपुराके लिए रवाना होंगे। तूने फतूही बनवाकर ठीक किया; शरीर गर्म रहना चाहिए। घूमने तो खूब जाना चाहिए। मुझे हरिपुरा पत्र लिखे तो उसपर कांग्रेस कैम्प, हरिपुराका पता लिखना।

तू प्रसन्न रहती है न?

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९८३) से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला

४४७. पत्र : एन० एस० हार्डीकरको

वर्धा
५ फरवरी, १९३८

प्रिय श्री हार्डीकर,[1]

गांधीजी को आपका २६ जनवरीका पत्र मिल गया था।[2] **हम जल्दी ही हरिपुरामें मिलेंगे, इसलिए गांधीजी का कहना है, आप कुछ मिनटका समय लेकर उनसे मिल लें और सेवा-दलके भविष्यके बारेमें चर्चा कर लें तो अच्छा हो।**

हृदयसे आपका,
महादेव देसाई

मूल अंग्रेजीसे। एन० एस० हार्डीकर पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. कांग्रेस सेवा-दल के प्रधान।

२. हार्डीकर ने "बागलकोटमें सेवादल प्रशिक्षण अकादमीके भवनका कब्जा ले लिया" था और आगेके कार्यके बारेमें गांधीजी की सलाह माँगी थी।

४४८. पत्र : शारदा चि० शाहको

६ फरवरी, १९३८

चि० शारदा,

तेरा पत्र मिला। अब यदि तू वहाँ गई ही है तो जबतक तेरी तबीयत खराब न हो तबतक आने में उतावली न करना। जहाँ रहना हमारा फर्ज हो वहाँ हमें अपना मन लगाना चाहिए। मैं तो तुझे समय-समयपर लिखता रहूँगा।

सरस्वतीबहनके बारेमें जो तू लिखती है वह सच है। लेकिन हमें जहाँ जो अच्छाई दिखाई दे उसे हमें ग्रहण करना चाहिए।

यदि खाने में तुझे ज्यादा समय लगता है तो उसके लिए तुझे परेशान अथवा शर्मिन्दा नहीं होना चाहिए। तू जितना खा सकती है उतना चबा-चबाकर खाने, में शर्मकी कोई बात नहीं। यदि दर्द कम नहीं हुआ है, तो यह बात तुझे सरस्वतीबहन से कह देनी चाहिए।

सितार-कक्षा देख तो जरूर आना और यदि वह तुझे पसन्द आये तो उसमें दाखिल हो जाना।

हालाँकि काम अधिक करना पड़ता है, फिर भी मैं ठीक ही हूँ। स० दे० से कहना कि वे जो कोई भी सवाल मुझसे पूछेंगी उसका जवाब मैं जरूर दूंगा।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९८४)से। सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला

४४९. बातचीत : जॉन डी बोअरके साथ[1]

[८ फरवरी, १९३८ या उसके पूर्व][2]

डॉ० जॉन डी बोअरने कहा कि यह शिक्षा-योजना तो उन्हें बहुत ही अच्छी लगी है, क्योंकि उसकी जड़में अहिंसा है। पर उन्हें आश्चर्य इस बातका था कि पाठ्यक्रममें अहिंसाको इतना कम स्थान क्यों दिया गया है।

[गांधीजी :] आपको जिस वजहसे वह इतनी पसन्द आई, वह बिलकुल ठीक है। परन्तु सारा पाठ्यक्रम अहिंसापर केन्द्रित नही किया जा सकता। यही जानना

१ और २. महादेव देसाईके "नोट्स" (टिप्पणियाँ) से उद्धृत। डॉ० जॉन डी बोअर अमेरिकी पादरी और दक्षिण भारत की एक शिक्षण-संस्था के संचालक थे और उन्होंने गांधीजी से ८ फरवरीको उनके हरिपुरा जाने से पहले मुलाकात की थी।

काफी है कि वह एक अहिंसावादीके दिमागकी उपज है। पर उसमें यह नहीं मान लिया गया है कि जो इसको स्वीकार करेंगे, वे अहिंसाको भी मानेंगे ही। उदाहरणार्थ, समितिके सारे सदस्य अहिंसाको जीवन-सिद्धान्तके रूपमें नहीं मानते। जैसे किसी निरामिष-भोजी आदमीका अहिंसावादी होना जरूरी नहीं है — वह स्वास्थ्यके कारण भी निरामिष-भोजी हो सकता है — वैसे ही जरूरी नहीं कि जो भी इस योजनाको पसन्द करें, उन सबको अहिंसामें विश्वास होना ही चाहिए।

मैं कुछ ऐसे शिक्षा-शास्त्रियोंको जानता हूँ, जो इस शिक्षा-योजनाको महज इसलिए स्वीकार नहीं करेंगे कि यह अहिंसात्मक जीवन-दर्शनपर आधारित है।

मैं जानता हूँ। पर यों तो मैं भी ऐसे कई प्रमुख लोगोंको जानता हूँ जो खादी को इसलिए ग्रहण नहीं करते कि उसका आधार मेरा जीवन-दर्शन है। पर इसका क्या इलाज है? अहिंसा तो सचमुच इस योजनाका मर्म है और यह मैं बड़ी आसानीसे सिद्ध कर सकता हूँ। पर मैं जानता हूँ कि यदि मैं ऐसा करूँ तो उसके विषयमें लोगोंका उत्साह बहुत कम हो जायेगा। आज तो जो लोग इस योजनाको पसन्द करते हैं, वे इस तथ्यको मानते हैं कि जिस देशमें करोड़ो लोग भूखों मर रहे हों, वहाँ किसी दूसरी तरहसे बच्चोंको पढ़ाया ही नहीं जा सकता, और यदि यह शिक्षा-योजना चल निकली तो देशमे अपने-आप एक नयी अर्थ-व्यवस्था कायम हो जायेगी। वैसे मेरे लिए यह काफी है कि बहुत-से कांग्रेसवाले अहिंसाको अपना जीवन-सिद्धान्त तो नहीं मानते लेकिन उसे स्वाधीनता-प्राप्तिके साधनके रूपमें स्वीकार करते हैं, वैसे मेरे लिए यह भी पर्याप्त है। अगर सारा हिन्दुस्तान अहिंसाको अपना धर्म और जीवनादर्श मान ले तो हम आज ही यहाँ लोकतन्त्र कायम कर सकते हैं।

मैं समझ गया। पर एक बात और है, जो मेरी समझमें नहीं आ रही है। मैं एक समाजवादी हूँ और अहिंसामें भी मेरा विश्वास है। एक अहिंसावादीकी हैसियतसे तो आपकी योजना मुझे बहुत पसन्द है। पर जब मैं समाजवादीकी दृष्टिसे इसपर विचार करता हूँ, तो ऐसा लगता है कि वह हिन्दुस्तानको संसारसे अलग कर देगी, जबकि हमें तो संसारके साथ घुल-मिल जाना है। और यह बात समाजवाद जितनी अच्छी तरहसे कर सकता है, उतनी अच्छी तरह और कोई चीज नहीं कर सकती।

मुझे तो इसमें कोई कठिनाई नही मालूम पड़ती। हम कोई सारी दुनियासे नाता थोड़े ही तोड़ना चाहते हैं। हम तो सभी राष्ट्रोंके साथ मुक्त आदान-प्रदान रखेंगे, लेकिन आजके बन्धनयुक्त आदान-प्रदान को तो समाप्त होना ही है। हम यह नहीं चाहते कि कोई हमारा शोषण करे और हम खुद भी किसी दूसरे राष्ट्रका शोषण नहीं करना चाहते। इस योजना द्वारा हम सभी बच्चोंको उत्पादनकर्त्ता बनाकर सारे राष्ट्रकी शक्ल बदल देना चाहते हैं, क्योंकि इस शिक्षाका प्रभाव धीरे-धीरे हमारे पूरे सामाजिक ढाँचेमें व्याप्त हो जायेगा। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि हम

सारी दुनियासे नाता तोड़कर अलग हो जायेंगे। ऐसे राष्ट्र भी होंगे ही, जो कुछ चीजें अपने यहाँ पैदा न कर सकने के कारण दूसरे राष्ट्रोंके साथ आदान-प्रदान करना चाहेंगे। इसमें कोई शक नहीं कि उन्हें उन चीजोंके लिए दूसरे राष्ट्रोंपर अवलम्बित रहना पड़ेगा। लेकिन जो राष्ट्र उनकी जरूरतें पूरी करें, उन्हें उनका शोषण नहीं करना चाहिए।

लेकिन अगर आप अपने जीवनको इस हदतक सादा बना लेंगे कि दूसरे देशोंकी बनी किसी चीजकी आपको जरूरत ही न हो, तो आप अपनेको उनसे अलग कर लेंगे, जबकि मैं चाहता हूँ कि आप अमेरिकाके लिए भी जिम्मेदार हों।

अमेरिकाके लिए जिम्मेदार तो हम इसी तरह हो सकते हैं कि न तो हम किसी का शोषण करें और न किसीको अपना ही शोषण करने दें, क्योंकि जब हम ऐसा करेंगे, तो अमेरिका भी हमारा अनुसरण करेगा; और तब हमारे बीच खुले आदान-प्रदानमें कोई कठिनाई नहीं होगी।

लेकिन आप तो जीवनको सादा बनाकर औद्योगीकरणको खत्म कर देना चाहते हैं।

अगर मैं तीन करोड़के बजाय तीस हजार आदमियोंसे काम कराकर अपने देश की सारी जरूरतें पूरी कर सकूँ तो मुझे उसमें कोई आपत्ति न होगी, बशर्ते कि उसके कारण तीन करोड़ आदमी बेकार और काहिल न हो जायें। मैं यह जानता हूँ कि समाजवादी लोग यन्त्रीकरणको इस हदतक ले जाना चाहेंगे जिससे रोज एक-दो घंटेसे ज्यादा काम करने की जरूरत न रहे। लेकिन मैं ऐसा नहीं चाहता।

क्यों? इससे तो उन्हें अवकाश मिलेगा।

लेकिन अवकाश किसलिए? क्या हाकी खेलने के लिए?

सिर्फ इसीके लिए नहीं, बल्कि और भी कार्योंके लिए — जैसे सर्जनात्मक दस्तकारियों आदिके लिए।

ऐसी दस्तकारियोंमें लगने के लिए तो मैं उनसे कह ही रहा हूँ। लेकिन यह उन्हें आठ घंटे रोज अपने हाथसे काम करके करना होगा।

तब तो निश्चय ही आप समाजको ऐसी स्थितिमें नहीं ले जाना चाहते, जिसमें हरएकके घरमें रेडियो हो और हरएकके पास अपनी मोटर गाड़ी रहे। अमेरिकी राष्ट्रपति हूवरकी यही तजवीज थी। वह तो चाहते थे कि हरएक घरमें एक ही नहीं, दो-दो रेडियो हों और दो-दो मोटर गाड़ियाँ रहें।

अगर इतनी अधिक मोटरें हमारे पास हो जायें, तो फिर पैदल चलने के लिए बहुत कम गुंजाइश रह जायेगी।

मैं आपसे सहमत हूँ। हमारे यहाँ हर साल मोटर-दुर्घटनाओंसे लगभग ४० हजार आदमी मरते हैं, और इससे तिगुनोंके अंग-भंग हो जाते हैं।

कमसे-कम मैं तो वह दिन देखने के लिए जीवित नहीं रहने जा रहा हूँ, जब हिन्दुस्तानके हरएक गाँवमें रेडियो पहुँच जायेंगे।

पण्डित जवाहरलाल प्रचुर उत्पादनवाली अर्थ-व्यवस्थाको ध्यानमें रखकर सोचते प्रतीत होते हैं।

मैं जानता हूँ। पर उत्पादनकी प्रचुरतासे क्या आशय है? लाखों टन गेहूँ नष्ट कर देनेकी क्षमता तो नहीं, जैसाकि आप लोग अमेरिकामें करते हैं?

वह तो पूँजीवादका अनिष्ट परिणाम है। वे अब गेहूँ नष्ट तो नहीं करते, लेकिन अधिक गेहूँ पैदा न करें, इसलिए उन्हें पैसे दिये जा रहे हैं। अब तो लोग वहाँ एक-दूसरेपर अंडे फेंककर मनबहलाव करते हैं, क्योंकि अंडोंकी कीमत अब गिर गई है।

यही तो हम नहीं चाहते। प्रचुरतासे अगर आपका यह मतलब है कि हरएक आदमीके पास खाने-पीने और पहनने के लिए पर्याप्त भोजन और वस्त्र हों, अपनी बुद्धिको शिक्षित और सुसंस्कृत बनाने के लिए काफी साधन हों, तो इसपर मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी। पर जितना हजम कर सकता हूँ, उससे ज्यादा भोजन मैं पेटमें ठूँसना पसन्द नहीं करूँगा और जितनी चीजोंका मैं अच्छी तरह उपयोग कर सकूँ, उनसे ज्यादा चीजें मुझे नहीं रखनी चाहिए। पर मैं हिन्दुस्तानमें न गरीबी या कंगाली चाहता हूँ, न मुसीबत और गन्दगी।

लेकिन पण्डित जवाहरलालने तो अपनी 'आत्मकथा'में यह लिखा है कि आप दरिद्रनारायणकी पूजा करते हैं और दरिद्रताकी खातिर ही दरिद्रताकी सराहना करते हैं।

गांधीजी ने हँसते हुए कहा:

मुझे मालूम है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १२-२-१९३८

४५०. पत्र : महादेव देसाईको

८ फरवरी, १९३८

चि० महादेव,

यह रहा लेख। जापानी और बंगाली सज्जनोंसे मैंने बात कर ली है। जापानी सज्जन हमारे साथ आयेंगे। बंगाली महाशय बाद में आयेंगे। वे बंगाल-शिविरमें रहेंगे।

कृष्णचन्द्र के किन पत्रों की बात करते हो? मैं तो स्टेशनपर मिलूँगा ही। मैं रेलके फाटक तक चलूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५९०)से।

४५१. पत्र : शारदा चि० शाहको

सेगाँव
८ फरवरी, १९३८

चि० शारदा,

दो दिनसे तेरा कोई पत्र नहीं आया। मुझे इस तरह पत्रसे वंचित न किया कर। हम आज जा रहे हैं। उम्मीद है, पन्द्रह दिनमें वापस आ जाऊँगा। तब-तक तुझे वापस लौटने लायक हो जाना चाहिए। वहाँ शान्तिसे रहना। उद्वेलित मत होना। तेरे बारेमें मुझे हरिपुरामें ज्यादा मालूम होगा।

पंडितजी[1]के स्वर्गवासकी खबर तुझे मिली होगी। वे संगीत-परिषद्में भाग लेनेके लिए हरिपुरा गये थे। वहाँ उन्हें निमोनिया हो गया, जो प्राणलेवा सिद्ध हुआ। ऐसी क्षणभंगुर है हमारी काया।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९८५) से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला

४५२. भाषण : खादी और ग्रामोद्योग प्रदर्शनीमें

हरिपुरा
१० फरवरी, १९३८

भाई शंकरलालने पंडितजी की मृत्युसे जो हानि हुई है, उसका उल्लेख किया है। पंडितजी की आवाज और उनका चेहरा इस समय दिखाई नहीं देता, यह बात मुझे शूलकी तरह सालती है, इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं।

जब आश्रमकी स्थापना हुई तब मगनलाल [गांधी] पंडितजी के गुरु पंडित विष्णु दिगम्बर [पलुस्कर] के पास पहुँचे और उनसे किसी ऐसे संगीतशास्त्रीकी माँग की जो आश्रमको सुशोभित कर सके। दिगम्बर शास्त्री भी समझ गये कि हमें किस प्रकारका व्यक्ति चाहिए और उन्होंने आश्रम-जीवनके अनुरूप पण्डित खरे शास्त्रीको ढूँढ़ निकाला। और जिस तरहसे उन्होंने अपने पदको सुशोभित किया, उस तरहसे सुशोभित करने-वाला व्यक्ति हिन्दुस्तानमें आज मेरी नजरमें कोई नही है। उनकी मृत्युसे जो क्षति हुई है वह कभी पूरी नहीं होगी। उन्होंने संगीतके साथ शुद्ध और पवित्र जीवनका

१. हरिपुरामें ६ फरवरीको नारायण मोरेश्वर खरेका देहावसान हो गया था।

जैसा मेल साधा था वैसा मेल बहुत कम कलाकार साध पाते हैं। न मालूम क्यों हम ऐसा मानने की आदत पड़ी हुई है कि कलाके साथ जीवन-शुद्धिका कोई सम्बन्ध नही है। मुझे तो पग-पगपर यह अनुभव होता है कि हमारी यह धारणा गलत है। जीवन-शुद्धि ही सच्ची कला है। आज मृत्युके किनारे खड़ा हुआ मै यही अनुभव प्राप्त कर रहा हूँ। कण्ठसे संगीतकी साधना तो अनेकों कर सकते हैं। लेकिन मधुर कंठके साथ जीवनका मेल बिठाना एक अलौकिक कला है, इस कलाका पण्डितजी ने अविच्छिन्न रूपसे विकास कर लिया था। उनकी शुद्धिको लेकर मेरा मन निराश हुआ हो, ऐसा प्रसंग कभी नही आया। गुजरातमे उन्होंने संगीतका जो रस प्रवाहित किया है, वह सदैव बना रहे, ऐसी मेरी कामना है।

हमें आशा है कि उनके बच्चे रामभाऊ और मथुरी दोनों मिलकर उनके आसनको सुशोभित करेंगे। लक्ष्मीबहन बहादुर हैं। और मेरा यह दृढ़ विचार है कि वे अपने वैधव्यको सुशोभित करेंगी तथा उनका जीवन पण्डितजी की तरह सेवामय होगा। जिस तरह पण्डितजी का जीवन समाप्त हुआ, उस तरह हम सबका भी हो, ऐसी हमारी आकांक्षा है। इसी प्रसंगमे और इसी स्थलपर काम करते हुए और रामनाम जपते हुए देह जाये तो ऐसी मृत्यु किसे अच्छी न लगेगी। मेरी यह कामना है कि गुजरातमें उनकी मधुर स्मृति सदैव बनी रहे।

जब लखनऊमें इस तरहकी प्रथम प्रदर्शनी हुई थी[1] उस समय मैंने कहा था कि प्रत्येक प्रदर्शनी हमारे लिए, अर्थात् हम करोड़ों लोगोंके लिए शिक्षाका स्थान होना चाहिए। यह हमारा एक चलने-फिरनेवाला वार्षिक विद्यालय है। आठ-दस दिनों में यहाँ कोई करोड़ों लोग तो नहीं आ सकते, लेकिन कुछ-एक लाख तो यहाँ आकर अपने लिए वर्ष-भरका पाथेय ले जा सकते हैं। अनेक गरीब व्यक्ति इस प्रदर्शनीसे आठ घंटे काम करके रोटी, दाल, शाक, घी और दूध प्राप्त करने की कला सीख सकते हैं। मैं तो आपको इस बातकी गारंटी दे सकता हूँ कि चाहे कितना ही मूढ़ पुरुष या कितनी ही निरक्षर बहन क्यों न हो, इस प्रदर्शनीका निरीक्षण करके वे एक वर्षके लिए अपनी आजीविका अर्जित करने का साधन ढूँढ़ सकते हैं।

मैंने इस प्रदर्शनीमे एक घंटा बिताया है। चूँकि मै चरखा संघका अध्यक्ष और उद्योग संघका सलाहकार ठहरा, इसलिए आपको यह लगेगा कि मेरे लिए ये सारी चीजें [illegible] होनी चाहिए। लेकिन मैं ऐसा भोला नही हूँ कि अपने बारेमें ऐसा मान लूँ। मेरे लिए तो इस प्रदर्शनीमें ६९ वर्षकी आयुमें भी बहुत-कुछ सीखने को है। लेकिन उसे सीखकर भी मैं अपनी आजीविका नही कमा सकता। आजकल तो मैं भिक्षान्न खाकर जीवित रहता हूँ, लेकिन मजदूरी करके मै अपना निर्वाह कर सकूँ, ऐसी कोई नयी वस्तु मै कदाचित् [इस प्रदर्शनीसे] प्राप्त न कर सकूँ। लेकिन मेरा कहना यह है कि एक सामान्य व्यक्ति निरन्तर अभ्यासके द्वारा एक वर्षतक मजदूरी करके अपनी आजीविका कमाने का साधन इस प्रदर्शनीसे सीख

१. २८ मार्च, १९३६ को; देखिए खण्ड ६२, पृ० ३१३-१७।

सकता है। उसे अनेक वस्तुएँ पसन्द करने की जरूरत नहीं, कोई भी एक चीज पसन्द करनी होगी।

शंकरलालने मुझे सुझाव दिया था कि मैं प्रदर्शनीकी कुछ खामियोंकी ओर इंगित करूँ। यह बताना तो मेरा काम ही है। एक खामी तो मैंने यह देखी है कि हम यहाँ एक वर्षमें जितना प्राप्त करते हैं उसे लिखित रूप प्रदान कर सहेजकर नहीं रखते। मुझे लगता है कि हमें चित्रों और विवरणों द्वारा नयी-नयी खोजों और प्रयोगोंको पुस्तक रूपमें सुरक्षित रखना चाहिए, जिससे स्फूर्तिवान अनुभवी शिक्षक इन पुस्तकोंसे बहुत-कुछ सीख सकें। यह करने की हममें शक्ति होनी ही चाहिए। अनेक उद्योगोंका एकीकरण करके उसे हमें जनताके आगे रखना चाहिए। ऐसी वार्षिक पाठ्य-पुस्तक बनाने की कला अभी हमने नहीं सीखी है। यह हमें सीख लेनी चाहिए। प्रत्येक वस्तु कैसे बनती है, यह बात हम कदाचित् यहाँ पूरी तरहसे नहीं बता सके हैं। मैंने कहा है कि हिन्दुस्तानके सात लाख गाँवोंको यदि जीना है और सच्ची सभ्यताका जो मूल है, उसकी अर्थात् शान्तिकी स्थापना करनी है तो उद्योगोंके बीच चरखेको रखना जरूरी है। इतने वर्षोंतक चरखा चलाने के बाद इसके प्रति मेरी श्रद्धा दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है। मैंने चरखेको सूर्यकी उपमा दी है; इसके आसपास घूमनेवाले उद्योग नक्षत्र और ग्रह हैं और जिस तरह नित्य नये-नये नक्षत्र व ग्रह जुड़ते जाते हैं उस तरह उद्योग भी अगणित हैं और नित्य नये उद्योग जुड़ते रहने चाहिए। लेकिन इसके लिए हमें चरखेको सचमुच सूर्यनारायण मानना होगा।[1]

मैंने बारडोलीमें सत्याग्रहका सुझाव दिया था। मेरे पास तो यह खबर भी आई थी कि बारडोलीकी जनता सत्याग्रह करने के लिए तैयार नहीं है; लेकिन विट्ठलभाईके आग्रहसे मैं इसमें कूद पड़ा। उसके बाद क्या-क्या हुआ, यह आप सब जानते हैं। आज भी बारडोलीसे यहाँ आये हुए सब भाई-बहन खादीधारी हैं, सो मैं नहीं देखता। इन सबसे मेरा कहना है कि चरखा सूर्यनारायण है। घी-दूध प्राप्त करने के लिए आपको अपनी खेतीके साथ-साथ चरखा अवश्य चलाना चाहिए।

इस प्रदर्शनीमें जगह-जगहपर आप कला देखेंगे। उसे मैं आपको शब्दों द्वारा नहीं बता सकता; आपकी आँखें ही वह देख सकेंगी। अमुक वस्तुको अमुक ढंगसे रखने पर वह सुन्दर लगती है, यह बात हम यहाँ देख सकेंगे। कलाका मतलब है बाह्य और आन्तरिक सौन्दर्यको व्यक्त करने का साधन। जब हमने लखनऊमें ऐसी प्रदर्शनी आयोजित की थी तबसे हमें हिन्दुस्तानके महान् कलाकार नन्दबाबूकी[2] सेवाएँ प्राप्त हैं। लखनऊमें उन्होंने अपनी कलाका प्रदर्शन किया था और इसमें वे उत्तरोत्तर वृद्धि करते जा रहे हैं। लेकिन यहाँ तो हमें गुजरातके कलाकार भी मिले हैं। जिस तरह गुजरातमें पंडितजी ने संगीतको प्रवर्तित किया उस तरह भाई रविशंकरने[3]

१. यह वाक्य **हरिजन**से लिया गया है।

२. नन्दलाल बोस।

३. रविशंकर रावल।

कलाको। यहाँ आप रविशंकर और उनके साथी कनु देसाईकी कला भी देख सकेंगे। कलाके भी अलग-अलग विभाग हैं और प्रत्येक विभागमें आप कलाको गहराई तक पहुँचा हुआ देखेंगे। खादी-विभागमें आप देखेंगे कि बहन वकीलने कैसी कलाका परिचय दिया है।

अब मैंने आपसे जो कहा है उसपर आप अपने मनमें अच्छी तरहसे विचार करें। आपको समय-समयपर ये प्रदर्शनियाँ देखने को मिलेंगी और आप उनसे जो रस और ज्ञान प्राप्त करना है सो करेंगे। कांग्रेसके धुरन्धर लोग तो यहाँ आयेंगे ही और उसका संचालन करेंगे, लेकिन सच्ची कांग्रेस तो इस प्रदर्शनीमें ही है। हम सब प्रतिनिधि तो नहीं बन सकते, लेकिन हम कांग्रेसका बहुत सारा काम प्रदर्शनीके निरीक्षण व उपयोग द्वारा कर सकते हैं।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १३-२-१९३८

४५३. बातचीत : कार्यकर्त्ताओंके साथ[1]

[१० फरवरी, १९३८][2]

प्रदर्शनीके विभिन्न विभाग दिखाये जाते समय जब उन्हें उस जगह ले जाया गया जहाँ गुजरातकी राष्ट्रीय पाठशालाओं और आश्रमोंके कुछ लड़के चरखेसे प्रतिदिन तीनसे चार आने तक पैदा करते हुए दिखाये गये थे, तो उन्होंने कहा :

यह कुछ भी नहीं है। जहाँतक स्कूलोंका सम्बन्ध है, आपको यह सिद्ध करने में अपनी शक्ति लगानी होगी कि दस्तकारियों अर्थात् चरखेके द्वारा हम हरएक चीज सिखा सकते हैं। साहित्यिक शिक्षाके साथ-साथ किसी एक दस्तकारीकी तालीम कोई नयी या विचित्र कल्पना नहीं है। नयी कल्पना तो साहित्यकी शिक्षाके लिए दस्तकारीकी शिक्षाको मुख्य साधन बनाना है।

फिर मजदूरीके सम्बन्धमें उन्होंने कहा :

अगर आप समझें कि आप अपने आदर्शतक पहुँच गये हैं तो यह आपकी बड़ी भारी गलती होगी। आदर्श तो है एक आना फी घंटा, और जब गरीब महाराष्ट्र औसतन तीनसे चार आने रोज तक देने में सफल हो सका है, तब धनिक गुजरात अपने कतैयोंको वही मजदूरी देने में सन्तोष नहीं कर सकता। आपको तो अपने प्रान्त में जो मजदूरी मिल सकती है उसीके आधारपर सोचना होगा और इसलिए तबतक

१ और २. महादेव देसाईके "नोट्स" (टिप्पणियाँ) से उद्धृत। यह बातचीत उस समय हुई थी जब गांधीजी खादी और ग्रामोद्योग प्रदर्शनीका उद्घाटन करनेके बाद उसे देखनेके लिए जा रहे थे; देखिए पिछला शीर्षक।

सन्तोष नहीं करना चाहिए जबतक कि आप कमसे-कम आठ आने रोजपर नहीं पहुँच जाते।

इसपर एक कार्यकर्त्ताने कहा, "लेकिन तब तो खादीकी कीमत इतनी अधिक हो जायेगी कि उसे खरीदना मुश्किल हो जायेगा।"

यह कोई जवाब नहीं है। आपको अपने मनमें यह निश्चय कर लेना चाहिए कि न्यूनतम मजदूरीको आठ आने तक ले ही जाना है। जबतक आप उसम सफलता प्राप्त नहीं कर लेते तबतक उसकी कोशिशमें कोई कसर बाकी नहीं छोड़नी चाहिए। ऊपरी खर्चोंमे कटौती कीजिए, सूतको बारीकसे-बारीक बनाइए, कुछ भी कीजिए, लेकिन लक्ष्यपर पहुँचिए। खादी नहीं बिकेगी, यह सिर्फ वहम है। इसी तरह का डर तब भी जाहिर किया गया था जब हमने कताईकी मजदूरी की नयी दर तय की थी;[1] लेकिन आज हम जानते हैं कि वह डर किस तरह गलत साबित हुआ।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १९-२-१९३८

४५४. बातचीत : वल्लभभाई पटेलके साथ[2]

[१० फरवरी, १९३८]

जब हम प्रदर्शनीसे लौट रहे थे, उन्होंने आह भरते हुए सरदार वल्लभभाईसे कहा :

यह कैसे दुःखकी बात है कि खादीके बारेमें हम अन्य प्रान्तोंसे इतने अधिक पिछड़े हुए हैं, और फिर भी हम कोई उपाय नहीं करते। हमारे यहाँ हिन्दुस्तान-भरमें सबसे अच्छी कपास पैदा होती है, और कोई कारण नहीं कि हम अधिकसे-अधिक न्यूनतम मजदूरी न दे सकें और गुजरातको खादीसे न पाट दें।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १९-२-१९३८

१. देखिए खण्ड ६२, पृ० ३२-३३ और ६९-७१।

२. महादेव देसाईके "नोटस" (टिप्पणियाँ) से उद्धृत।

४५५. पत्र : शारदा चि० शाहको

हरिपुरा कांग्रेस कम्प
११ फरवरी, १९३८

चि० शारदा,

तेरा सुन्दर पत्र मिला। मुझे आये आज तीसरा दिन है। मेरी तबीयत ठीक रही है। साथमें वसुमती[1] और प्रभावती हैं। लीलावती और अ० स० वहाँ रह गई हैं। बलवन्तसिंह आये हैं।

सरस्वतीदेवीसे कहना कि मैं तुझे नारंगीके छिलके और छाल खाने देनेसे डरता हूँ। पेट-दर्द बन्द होनेके बाद और अधिक अच्छा होनेके लिए यदि इनकी जरूरत हुई तो मैं खाने दूँगा। अभी तो मैंने तुझे मिट्टी और पानीके इलाजके लिए व चपाती खानेके लिए वहाँ भेजा है, जिससे कि तू जल्द अच्छी हो सके। यदि २२ तारीख तक तुझे अपनी तबीयतमें खास सुधार दिखाई न दे तो सरस्वतीदेवीसे इजाजत लेकर तू वापस चली आना।

शकरीबहन यहीं है। मैं उसके साथ अवश्य बात करूँगा। चेहरेसे तो उसकी तबीयत मुझे ठीक लगी।

तू लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९८६)से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला

४५६. पत्र : अमतुस्सलामको

११ फरवरी, १९३८

चि० अमतुल सलाम,[2]

तुमको हमेशा खत भेजे गये हैं। मेरी उम्मीद है तुम्हारी तबीयत अच्छी होगी। मेरे हाल लीलाके खतसे जानो।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९५)से।

१. वसुमती पण्डित।
२. सम्बोधन गुजराती लिपि में है।

४५७. भाषण: सफाई-स्वयंसेवकोंके समक्ष[1]

११ फरवरी, १९३८

महात्मा गांधीने स्वयंसेवकोंसे कहा कि आप लोग भंगीका काम खूब मन लगाकर करें। उन्होंने कहा:

ऐसा मत सोचिए कि आपका काम राष्ट्रपति सुभाषचन्द्र बोस या जवाहरलाल नेहरूके कामसे कम महत्त्वपूर्ण है। नहीं, रत्ती-भर भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। वे भी सेवा करते हैं और आप भी सेवा करते है, और सच तो यह है कि मैं आपके कामकी ज्यादा कद्र करता हूँ। मैं खुद भी एक अनुभवी और कुशल भंगी हूँ। आप अपना काम ईमानदारीसे और मन लगाकर करें। शीघ्र ही प्रतिनिधि लोग बड़ी संख्यामें आनेवाले हैं, और यदि आपके काममें कोई कमी रही तो वे शिकायतें करेंगे। मैं तो शिकायत कर नहीं सकता, क्योंकि मैं प्रतिनिधि नहीं हूँ, और प्रतिनिधि बनने का मेरा कोई इरादा भी नहीं है।[2]

आप जानते हैं कि जिस कामको आप कर रहे हैं वह मुझे बहुत पसन्द है। हरिजनोंमें भी भंगीको बहुत नीचा समझा जाता है, क्योंकि उसके कामको सब बहुत नीचा मानते हैं। बहुत-से लोग भूल जाते है कि भंगी लोग कितनी बड़ी समाज-सेवा करते हैं।[3] लेकिन हम इस बातको भूल जाते हैं कि जब हम बालक थे और सफाईके बारेमें कुछ भी नहीं जानते थे, तब यही काम हमारी माताओंने भी किया था। अगर यह काम खराब हो तो भंगी भी खराब होंगे, लेकिन अगर यह काम अच्छा है तो भंगीका काम भी अच्छा है। हमारी माताओंने तो हमारी गन्दगी इसलिए साफ की क्योंकि हम उनके बच्चे थे, इससे अन्यथा वे कर नहीं सकती थीं। हम उन्हींके अंश थे और वे हमारे रूपमें स्वयं अपनेको ही प्यार करती थीं। इस प्रकार उनके काममें स्वार्थपरता थी, लेकिन स्वयंसेवक-भंगियोंका काम निःस्वार्थ है और इसलिए माताओंके कामसे भी ज्यादा श्रेष्ठ है। और अगर मैं अपनी माताकी और इसलिए सारी स्त्री-जातिकी पूजा करता हूँ, तो क्या यह स्पष्ट नहीं है कि स्वयंसेवक-भंगीकी मुझे उससे भी ज्यादा पूजा करनी चाहिए।

इसलिए मुझे यह देखकर बड़ी खुशी हुई है कि आप लोगोंने यह काम अपने हाथमें ले लिया है। लेकिन आप लोगोंको यह जानना चाहिए कि यह काम कैसे

१. वी० एल० फड़के और जुगतराम दवे के नेतृत्व में लगभग १,२०० स्वयंसेवक हरिपुरा के कांग्रेस-शिविरकी सफाके-कार्यमें लगे हुए थे।

२. यह और पिछला अनुच्छेद *हिन्दू* से लिये गये है।

३. यह वाक्य *हिन्दू* से लिया गया है।

होता है। यह काम प्रेमसे और बुद्धिमत्तापूर्वक किया जाना चाहिए —— प्रेमसे इसलिए कि जो लोग गन्दगी फैलाते हैं उन्हें यह नहीं मालूम कि वे क्या बुराई कर रहे हैं, और बुद्धिमत्तापूर्वक इसलिए कि हमें उनकी कुटेव छुड़ानी और उनका स्वास्थ्य सुधारना है। आदर्श भंगी वही है जो भोजन और पोषक तत्त्वोंका विज्ञान जानता है, और मल देखकर उसे विसर्जित करनेवाले के स्वास्थ्यका पता लगा सकता है। इसी प्रकार आप इस कार्यको गौरवपूर्ण बना सकते हैं। मैं यह इसलिए कहता हूँ कि म खुद आदर्श भंगी हूँ। मैं यह कार्य गत ३५ वर्षोंसे सच्चे दिलसे और ठीक ढंगसे कर रहा हूँ। इसलिए मैं आपसे कहता हूँ कि आप हरएकके साथ नम्रता, आदर और शिष्टताका व्यवहार करें, क्योंकि आप ऐसे बहुत-से आदमियोंसे मिलेंगे जो स्वास्थ्यके नियमोंको नहीं जानते। आप उनसे नम्रतासे बोलें और उन्हें कांग्रेसके स्वास्थ्य-सफाईके नियम समझायें। अगर आपने यह कला सीख ली तो मैं आपको कांग्रेसके प्रतिनिधियोंसे बढ़कर समझूँगा। इसका यह मतलब नहीं कि मैं प्रतिनिधियोंका आदर नहीं करता, बल्कि मैं यह बात आप लोगोंको यह समझाने के लिए कह रहा हूँ कि कांग्रेसका वास्तविक कार्य क्या है। मैंने कांग्रेस बिना बात ही नहीं छोड़ी है। मैं प्रतिनिधि नहीं हूँ, साधारण सदस्य भी नहीं हूँ, लेकिन इसके पीछे एक रहस्य है।[1] मैंने देखा कि कांग्रेसके एक प्रतिनिधिके रूपमें मेरी इतनी आवश्यकता नहीं है जितनी कि कांग्रेसके कार्यकर्त्ताके रूपमें है। और मैं उस समय तक यह काम करते रहने की आशा रखता हूँ जबतक कि जनता को मेरी सेवाओंकी आवश्यकता रहेगी। मैं तो मानता हूँ कि जबतक मैं कांग्रेसकी भावनासे चरखा चलाऊँगा, किसी और उद्योगमें लगा रहूँगा, या भंगीका काम करता रहूँगा, तबतक वस्तुतः मैं कांग्रेसका ही कार्य करूँगा; और जबतक ईश्वर मुझे जिन्दा रखे, उस समयतक एक गाँवमें बैठकर यह कार्य करते रहने में ही मुझे सन्तोष है।

आगे बोलते हुए महात्माजी ने कहा कि प्रत्येक मनुष्यका प्रथम कर्त्तव्य है कि स्वयं स्वच्छ रहे और अपने परिवेश को भी स्वच्छ रखें। भंगीका काम करनेवाले को पहले अपना भंगी होना चाहिए।[2]

आपको इस कामकी सारी विधियाँ जाननी चाहिए और सभ्य ढंगसे इसे सम्पन्न करना चाहिए। मैंने भंगीका काम किया है और इसका मुझे अच्छा अनुभव है।

इस कामके लिए किसी डिग्रीकी आवश्यकता नहीं है। इसके लिए जैसे मजबूत और साफ हाथोंकी जरूरत है उसी प्रकार शुद्ध और कोमल हृदयकी भी आवश्यकता है। अगर आपके पास ये दोनों साधन हैं और फिर आप अपनेको पूरी तरह इसमें लगा दें तो आप-जैसे १,२०० योद्धा स्वराज्य प्राप्त करने के लिए काफी हैं। मैंने यह बात वर्षों पहले भी कही थी और अब इसे फिर दुहरानेमें भी मुझे कोई संकोच नहीं है। लेकिन क्या आपके हृदय शुद्ध हैं?[3]

१. यह वाक्य **हिन्दू** से लिया गया है।

२. यह और अगला अनुच्छेद **हिन्दू**से लिये गये हैं।

३. इसके बादका अनुच्छेद **हिन्दू**से लिया गया है।

स्वयंसेवकोंकी ओरसे मुझसे यह माँग की गई है कि उन्हें नुमाइश मुफ्त देखने दी जाये। मैंने उनके लिए अन्तिम दिन सुरक्षित रखा है। उस दिन उनके समुदायके अन्य सदस्य अधिवेशन देखने आयेंगे। मेरी सलाह है कि आप लोग अपने कामकी तरफ ध्यान दें और नुमाइशमें न जायें। लेकिन अगर आप लोग बहुत उत्सुक हों तो अपने मित्रोंसे उधार लेकर नुमाइश देखने जायें। मेरी रायमें यह नुमाइश सबको मुफ्त नहीं दिखाई जानी चाहिए, क्योंकि दो आनेके टिकटोंसे करोड़ों लोगोंको लाभ होता है। जिन लोगोंके पास पैसा है, फिर भी वे इसे खर्च न करें तो उन्हें चोरों-जैसा समझना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १९-२-१९३८ और **हिन्दू,** १२-२-१९३८

४५८. पुर्जा : अमतुस्सलामको

[१३ फरवरी, १९३८ के पूर्व][१]

सबर तेरा रास्ता है। खुदा चाहेगा तब तू घी घिसेगी।[२] दूसरे की दयापर रहने में अहिंसा है। हमें कुछ हक्क नहीं हैं। हमारे तो फर्ज अदा करनी है।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७३३) से।

४५९. पत्र : शारदा चि० शाहको

हरिपुरा
१३ फरवरी, १९३८

चि० शारदा,

दो दिनोंसे तेरा कोई पत्र नहीं। पोस्टकार्ड तो लिखना ही चाहिए। तथापि तेरे बारेमें मेरे मनमें विचार तो आते रहते हैं। क्या मोहनलाल आकर मिल गया? यहाँ उसका कोई पत्र नहीं आया। आज लोगोंकी बहुत भीड़ है और धूल भी बहुत है।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९८७) से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला

१. **बापू के पत्र : बीबी अमतुस्सलाम के नाम**में यह पत्र १३ फरवरी, १९३८ के पत्रके पहले रखा गया है।

२. अमतुस्सलाम आश्रम लौटने पर गांधीजी के पाँवोंमें घीकी मालिश करना चाहती थीं।

४६०. भाषण : प्रदर्शनीमें[1]

१३ फरवरी, १९३८

गोरक्षा उपयुक्त शब्द नहीं है। हमारा आदर्श तो गोसेवा है। आज जो हालात हैं, उनका मुख्य कारण हमारा अज्ञान है, जो हमारे आलस्यका परिणाम है। अगर हम विशुद्ध वस्त्र-निर्माणके विज्ञानकी तहमें जायेंगे तो हम पायेंगे कि चरखा उसकी अनिवार्य शर्त है। उसी तरह यदि आप दुग्ध-शास्त्रका अध्ययन करें तो आप देखेंगे कि कमसे-कम भारतमें गोसेवा उसकी अनिवार्य शर्त है। मैंने इस शास्त्रका जो अध्ययन किया है और इस सम्बन्धमें विशेषज्ञोंके साथ मेरी जो बातचीत हुई है उससे मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि गाय और भैंस दोनोंकी रक्षा करना असम्भव है। यह सम्भव है कि यदि गायको बचा लिया जाता है तो उसके बाद कुछ हदतक भैंसकी भी रक्षा हो जाये। लेकिन यदि आप भैंसको गायसे होड़ करने देंगे तो भैंस और गाय दोनोंका विनाश हो जायेगा। हमें यह बात समझ लेनी चाहिए कि आर्थिक दृष्टिसे गोपालन ज्यादा फायदेमन्द है और स्वयं हमारे पूर्वजोंने जब अपने राजाओंको गो और ब्राह्मणोंके रक्षकके रूपमें प्रतिष्ठित किया था तब उन्होंने भी इसे बखूबी समझ लिया था; लेकिन गौर कीजिए कि उन्होंने पहले गायका नाम लिया, क्योंकि ब्राह्मणोंका — समाजके आध्यात्मिक नेताओंका — अस्तित्व भी गायपर निर्भर करता है। बारडोलीमें आप लोग इस [illegible] लेकर चले हैं कि आर्थिक दृष्टिसे गाय फायदेमन्द नहीं है और यह कि भैंस ही आपका मुख्य आधार है। मैं आपसे कहता हूँ कि यह भ्रम है और आप भैंसकी जितनी देखभाल करते हैं यदि उतनी ही गायकी भी देखभाल करें और आर्थिक दृष्टिसे गायके महत्त्वको समझने का प्रयत्न करें तो अन्ततः आप देखेंगे कि गाय भैंससे अधिक लाभकारी है।

अभी तक हमने गायको कसाईके चंगुलसे बचाने में ही अपनी शक्ति लगाई है। हमें ऐसा क्यों करना चाहिए? कसाईको तो अपना धन्धा करना है। इस सम्बन्धमें कसाईको दोष देना ठीक वैसा ही है जैसा अपने बुखारके लिए डाक्टरको दोष देना। हमने उसकी घोर उपेक्षा की है और इस तरह उसे कसाईके हाथमें जाने दिया है। उसकी हत्याकी सारी जिम्मेदारी हमपर है। हमें चाहिए कि हम ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दें जिससे आर्थिक दृष्टिसे गायको कसाईके हाथों बेचना अनावश्यक हो जाये।

१. महादेव देसाईके "नोट्स" (टिप्पणियाँ) से उद्धृत। गांधीजी ने यह भाषण पशुपालन और डेरी-संचालनसे सम्बन्धित प्रदर्शनीमें दिया था, जिसका उद्घाटन वल्लभभाई पटेलने किया था।

इस प्रदर्शनीसे और बड़ी प्रदर्शनीमें स्थित चर्मालयसे आप देखेंगे कि ऐसा करना सम्भव है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १९-२-१९३८

४६१. पत्र : लीलावती आसरको

हरिपुरा
१३ फरवरी, १९३८

चि० लीला,

रक्तचाप आज सवेरे १७२-१०६ था और दोपहरको १०७-१०[४][1] था। मैंने काम जरा ज्यादा किया। गोशाला देखी;[2] ठीक है। आज कांग्रेस-अध्यक्ष आ रहे हैं। लोग इकट्ठे हो रहे हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३६९) से। सी० डब्ल्यू० ६६४४ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

४६२. पत्र : अमतुस्सलामको

१३ फरवरी, १९३८

प्यारी बेटी,

मैं खुश हूं। [रक्तका] दबाव लीलाके खतसे[3] जानो। जाकिर साहब आज आये। मेरे साथ खाया। कुछ पता नहीं सरहद से कौन आनेवाले हैं। यहां धूल बहुत है।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०१) से।

१. सी० डब्ल्यू० प्रति से।
२. देखिए पिछला शीर्षक।
३. देखिए पिछला शीर्षक।

४६३. पत्र : दूधाभाई दाफड़ाको

हरिपुरा
१५ फरवरी, १९३८

भाई दूधाभाई,

अभी-अभी तुम्हारा पत्र मिला। दानीके[१] देहान्तसे दुःख होना अनिवार्य है। लेकिन सब-कोई अपने समयपर ही जाते हैं और हम सबको एक दिन जाना है, ऐसा जानकर हमें सन्तोष करना चाहिए। दानी अन्त समय रामनाम जपती रही, यह तो बहुत अच्छी बात है। तुमने अन्धविश्वासपूर्ण रीति-रिवाजोंका पालन न करके अच्छा ही किया। यदि तुम पवित्र रह सको तो दूसरा विवाह न करना। ईश्वरने तुम्हें काफी बच्चे दिये हैं।

उम्मीद है, लक्ष्मी[२] दुःखी नहीं होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२४८) से।

४६४. पत्र : लीलावती आसरको

१५ फरवरी, १९३८

चि० लीला,

तुझे तो रोज पत्र लिखता हूँ, लेकिन तेरी ओरसे कोई पत्र नहीं; ऐसा क्यों? मेरा रक्तचाप सवेरे १७४-१०६ और दोपहरको ११०-९६ था। आज से लहसुन शुरू किया है। तेरा मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य कैसा है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९६) से।

१. दूधाभाई की पत्नी।
२. दूधाभाई की पुत्री।

४६५. पत्र : अमतुस्सलामको

१५ फरवरी, १९३८

चि० अमतुल सलाम,

तुम दोनों को यहां से हमेशा खत गये हैं तो भी फरीयाद करती है, उसका क्या मतलब? तुमारी तबीयत कैसी है? मेरे हाल लीलावती के खतसे[1] मालुम होगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९६) से।

४६६. भेंट : अमीनको[2]

हरिपुरा
१५ फरवरी, १९३८

महात्माजी ने आफ्रिकावासी भारतीयोंको सलाह दी कि वे आफ्रिकियोंकी उन्नतिके लिए जो-कुछ कर सकते हों, करें। गांधीजी ने यह मत प्रकट किया कि अन्य प्रवासी जातियोंके साथ बराबरीका दर्जा प्राप्त करने के लिए भारतीय जो लड़ाई लड़ रहे हैं उसके साथ ही उनका यह भी कर्त्तव्य है कि वे आफ्रिकियोंकी उन्नतिमें हर तरहसे सहायता करें — राजनीतिक क्षेत्रमें भी और उन्हें कला तथा विज्ञानकी उच्चतर शिक्षा सुलभ कराने के मामलेमें भी।

महात्माजी ने हाईलैंड्सके प्रश्नपर और पूर्वी आफ्रिकामें भारतीयोंकी निर्योग्यताओं के बारेमें भी चर्चा की।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १६-२-१९३८

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. पूर्व आफ्रिकी भारतीय प्रतिनिधि-मण्डल के महामन्त्री।

४६७. पत्र : चिमनलाल एन० शाहको

हरिपुरा
१६ फरवरी, १९३[८][1]

चि० चिमनलाल,

शकरीबहनके साथ एक घण्टा बातचीत की। जब मिलेंगे तब इसके बारेमें ज्यादा बताऊँगा। अभी तो लगता है कि मैं उसे तसल्ली दे सका हूँ। फिलहाल वह हरिजन आश्रममें ही रहेगी। मैंने उससे कहा है कि यदि उसकी मिलने की इच्छा हो तो वह खुशीसे एक बार आ सकती है।

मेरी गाड़ी चल रही है। शर्मा, डाह्यालाल और पारनेरकर काममें मग्न होंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०५८१) से।

४६८. पत्र : शारदा चि० शाहको

१६ फरवरी, १९३८

चि० शारदा,

तेरा खत मिला। साथका पत्र[2] सरस्वतीदेवीको देना। मैं काममें काफी व्यस्त हूँ। आज शकरीबहनके साथ एक घण्टा बातचीत की। मुझे लगता है कि उसे तसल्ली हो गई है। फिलहाल तो गुजरातमें रहेगी। ज्यादा मिलने पर।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९८८) से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला

१. साधन-सूत्रमें "१९३७" लिखा हुआ है। यह भूल जान पड़ती है, क्योंकि गांधीजी १९३८ में हरिपुरामें थे।

२. यह उपलब्ध नहीं है।

४६९. पत्र : लीलावती आसरको

१६ फरवरी, १९३८

० लीला,

मेरा रक्तचाप आज सवेरे १९४/१०८, दोपहरको १६०/१०० और अपराह्नमें ‹२/९६ रहा। मैंने काम भी खूब किया है।

यह सबको दिखाना। आज मैंने सर्पगन्धा ली है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९७) से।

४७०. पत्र : अमतुस्सलामको

१६ फरवरी, १९३८

ा० अमतुल सलाम,

इस तरह लिखता हूं सो ठीक है न? मेरे हाल लीलाके खतसे[1] मिलेंगे। तुम ानोंके खत नहीं सो अच्छा नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९७) से।

४७१. भाषण : खादी और ग्रामोद्योग प्रदर्शनीमें

हरिपुरा
१६ फरवरी, १९३८

आरम्भमें ही गांधीजी ने श्रोताओंके मत लेकर यह निश्चित कर लिया कि हेन्दीमें उनके भाषणको लोग समझ सकेंगे।[2]

यहाँ एक भाईने शिकायत की है कि यह व्याख्यान प्रदर्शनीके बाहर रखा जाता ो लोग इसमें अच्छी तरह आ सकते, और गरीब आदमी भी सुन सकते। यहाँ तो जन्होंने दो आनेका टिकट लिया वही आ सकते हैं। इस त्रुटिको मैं स्वीकार करता ूँ। पर आप लोगोंको यह समझना चाहिए कि मैं लाचार हूँ। मेरी आवाज ठीक-

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. यह वाक्य हिन्दूसे लिया गया है।

ठीक काम नहीं देती, जितना चाहता हूँ उतना काम अब शरीर नहीं दे सकता। इसलिए एक हदके अन्दर रहकर थोड़ा ही काम करूँ, यह अच्छा है। अब मैं भारी-भारी जन-समूहोंमें भाषण देने लायक नहीं रहा। पर आखिरकार हूँ तो मैं व्यापारी, और वह भी हिन्दुस्तानका व्यापारी, इसलिए मुझे लगता है कि दो आने अगर मिलते हैं तो वह भी ले लूँ। लोगोंको मेरा व्याख्यान अच्छा लगेगा तो वे सुनने आयेंगे और इस बहाने प्रदर्शनी भी देखेंगे। और वे अगर मेरी बातको अच्छी तरह समझेंगे तो मेरे दूत बनकर हजारों लोगोंके पास मेरा सन्देश ले जायेंगे। एक आदमीकी आवाज भला कहाँतक पहुँचेगी? मैं चाहे जितना बड़ा महात्मा समझा जाऊँ तो भी यह गुमान नहीं रखता कि अकेले अपनी शक्तिसे मैं हिन्दुस्तानको हिला सकता हूँ। ऐसा विचार तो मुझे कभी स्वप्नमें भी नहीं आया। मैं जो कहता हूँ उसे लोग बुद्धि-पूर्वक समझें और हृदयमें उतारें, और दूसरोंको सुनायें, तो समझिए कि हमारा काम बन गया। इसलिए आप यह शिकायत न कीजिएगा कि यह आदमी तो थोड़े-से लोगोंके आगे बात करता है और काम सबसे लेना चाहता है। एक आदमीको पैगाम सुना सकूँ तो उसके द्वारा उसे करोड़ों आदमियोंतक पहुँचा सकता हूँ। मुझे करोड़ों आदमियोंतक तो पहुँचना है ही।

मैंने जबसे खादीकी बात निकाली है, मैं यह कहता आ रहा हूँ कि मैंने दरिद्र-नारायणकी सेवा करने के लिए जन्म लिया है, इसीके लिए जी रहा हूँ, और इसीके लिए मरना चाहता हूँ। यह काम करता हुआ मरूँगा तो मैं अपना जीवन कृतार्थ मानूँगा। मुझे इतना सन्तोष है कि कमसे-कम इस बहाने मैंने दरिद्रनारायणके लिए पैसा तो इकट्ठा कर लिया है। यही बात साँझकी प्रार्थनाके सम्बन्धमें है। साँझकी प्रार्थनामें यदि बहुत बड़ी उपस्थिति हो जाये तो शांतिसे प्रार्थना नहीं हो सकती, यद्यपि मुझे अच्छा तो यह लगता है कि प्रार्थना ऐसी जगहपर करूँ जहाँ लाखों आदमी आ सकें। पर हम लोगोंमें इतना अनुशासन उत्पन्न नहीं हुआ कि हम ऐसे समय शान्तिके साथ बैठे। हिन्दुस्तानके सब लोगोंमें — हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई, सभीमें — यह भाव पैदा नहीं होना चाहिए कि मेरा धर्म सच्चा है और दूसरोंका झूठा, और यदि सब लोग ऐसे समभाव और सचाईसे प्रार्थना करें तो अच्छी बात है। मैं तो अपने लिए प्रार्थना करता हूँ और इसमें जितने आते हैं उन्हें शामिल कर लेता हूँ।

यह तो प्रस्तावना हुई। फैजपुरमें मैंने एक बात कही थी।[1] आज एक दूसरी बात कहूँगा। गुजरातमें एक भक्त कवि हुआ है। उसे हम गुजरातका आदिकवि कहते हैं। उसका नाम नरसिंह मेहता था। हम उसे एक प्रसिद्ध कविके रूपमें नहीं किन्तु भक्तके रूपमें जानते हैं। वह जूनागढ़का नागर था।[2] वह गरीबीमें गुजर करनेवाला था, और भगवान्का परम भक्त था। वह कवि तो था, पर उसने कवि बनने के लिए कुछ नहीं लिखा, उसने तो ईश्वर-भक्तिके लिए ही काव्य-रचना की।

१. दिसम्बर, १९३६ के कांग्रेस अधिवेशनमें।
२. ब्राह्मणों की एक उप-जाति।

नरसिंह मेहताने जैसी प्रभातियाँ लिखी हैं वैसी मैंने किसी दूसरी भाषामें नहीं देखीं। एक प्रभातीमें लिखा है :

ज्यांलगी आतमा तत्त्व चीन्यो नहीं,
त्यांलगी साधना सर्व जूठी।

इसका अर्थ मैं खादीपर यह घटाना चाहता हूँ कि जहाँतक हमने खादीका तत्त्व नहीं समझा वहाँतक तमाम साधनाओंको व्यर्थ समझना चाहिए। ३० करोड़ आदमियोंको कपड़ा पहनना है तो वे पेरिस या अहमदाबादकी मिलोंका कपड़ा किस-लिए पहनें और दरिद्रनारायणके हाथका बना क्यों न पहनें? खादी तो भक्त पहने और ढोंगी दगाबाज भी पहने, पवित्र सती पहने और वेश्या भी पहने। एक समय हिन्दुस्तानमें यही कपड़ा बनता था, दूसरा बनता ही नहीं था, इसलिए सब यही पहनते थे। यह बात नहीं कि उस समय कोई चोर-डाकू नहीं था, या वेश्या नहीं थी, किन्तु वे खादीका भेद, खादीका तत्त्व नहीं समझते थे।

खादीका तत्त्व मैं आपको समझाता हूँ। खादीकी बात मैंने जबसे की तबसे यह कहता आ रहा हूँ कि खादी शुद्ध स्वदेशी है। मैंने यह भी हमेशा कहा है कि सूतके धागेपर स्वराज्य है, स्वतन्त्रताका आधार है। कोई-कोई कहते थे कि इस कथन में भारी अतिशयोक्ति है, और भाट-लोग जैसे छोटी-सी बातको खूब बढ़ा-चढ़ाकर कहते हैं उसी तरह मैं खादीकी बात कहता हूँ। पर मैंने अतिशयोक्तिसे काम नहीं लिया। मैं सत्याग्रही होनेका दावा करता हूँ। सत्याग्रही असत्य बात नहीं कहता। क्योंकि एकके बदले दो कहना या लाख कहना, ये दोनों असत्य ही हैं। तब सत्या-ग्रही होकर मैंने यह कैसे कहा? इतने वर्ष बाद भी फिर वही बात कहने बैठा हूँ। खादीका यदि रहस्य जानें तभी इसमें स्वराज्य है। बिना समझे खादी पहनने मात्रसे स्वराज्य मिलने का नहीं। अहमदाबादके सेठ लोग सौदा करना क्या जानें? वे तो पेट भरते हैं, अपने बाल-बच्चोंको पालते हैं, और थोड़े-से मजदूरोंको पैसा फेंकते हैं। सौदागर होनेका दावा तो मेरा है। मैं तो हिन्दुस्तानके हरएक आदमीको दाल, भात, रोटी और घी दिलाना चाहता हूँ। मैं चाहता हूँ कि कोई नग्न न रहे। जबतक यह नहीं होता, मेरी सौदागरी सच्ची नहीं। मेरे कहने पर आप अमल करें, तो मैं सच्चा सौदा कर सकूँगा।

संयुक्त प्रान्त और बिहारके मन्त्री पद-त्याग करके आ गये हैं। इसमें कोई बड़ा आश्चर्य नहीं हुआ। यह शासन-विधान एक खिलौना है, यह समझकर ही वे वहाँ पदोंपर बैठे थे। जो बिहार और संयुक्त प्रान्तमें हुआ है, वही कल बम्बईमें और मद्रासमें हो सकता है। यह कैसे हुआ, इसका रहस्य मैं आपको समझाता हूँ। यदि मैं मन्त्री हूँ, तो तीस कैदियोंको या तीन कैदियोंको छोड़ने का मुझे इख्तियार है। इसमें गवर्नर क्यों दस्तंदाजी करे? मुझे मन्त्री इसलिए बनाया है कि मेरे पास इतने मत हैं। इसलिए कैदियोंको छोड़ने का मुझे अधिकार है। समाजवादी भले ही मुझे गालियाँ दें, पर मुझे यह कहना ही चाहिए कि हम खादीका मन्त्र नहीं जानते, इसीसे गवर्नर ऐसा कर सके। खादीका भेद नहीं समझा, यही इसका कारण है।

खादी अहिंसाकी प्रतिष्ठा है, अहिंसाकी मूर्ति है। समझदार खादी-धारीकी जबानसे असत्य नहीं निकल सकता। ढोंगी खादी-धारी या पेट भरने के लिए खादी पहननेवाले की मैं बात नहीं करता। हमारे मनमें अगर हिंसा है, चालबाजी है, तो हम खादीका रहस्य नहीं समझे। लोग यदि यह कहें कि खादीका अगर यह अर्थ है तो हम खादी नहीं पहनते, तो मैं क्या कहूँगा? मैं कहूँगा कि हिन्दुस्तान सत्य और अहिंसा द्वारा स्वराज्य लेना नहीं चाहता। मैं जोर-जबरदस्तीसे सत्य और अहिंसाका पालन नहीं करा सकता, और इस तरह स्वराज्य भी प्राप्त नहीं हो सकता।

यहाँ हरिपुरामें कांग्रेसपर साढ़े सात लाख रुपया खर्च हुआ है। इसमें बहुत-सी चीजें मुझे अच्छी लगी हैं। पर इसमें खादीकी आत्मा ओतप्रोत नहीं है। सरदार और मुझमें कोई भेद नही है, हम एकदिल हैं, पर यह हो सकता है कि सरदारने शायद खादीका रहस्य पूरी तरहसे न समझा हो। जहाँ खादीकी साधना मौजूद हो वहाँ साढ़े सात लाख रुपया खर्च कैसे हो सकता है? मैंने तो कहा था कि गाँवमें कांग्रेस की जाये तो उसमें पाँच हजारका खर्च होना चाहिए। फैजपुर कांग्रेसके समय शंकरराव देवसे भी मैंने यही कहा था कि पाँच हजारसे अधिक खर्च होगा तो मैं तुम्हारा सारा आयोजन निरर्थक समझूँगा और यही हुआ भी। यह बात मेरे मनसे गई नहीं। इतना अगर नहीं हो सकता, तो इसका यही अर्थ हुआ कि हम सच्चे स्वराज्यके सेवक नहीं बने, सच्चे देहाती नहीं बने। जहाँ देहाती भावना हो वहाँ बिजलीका क्या काम? मोटर-लारियाँ वहाँ क्यों? फैजपुरमें मुझे मोटरमें बिठाकर ले गये थे। यहाँ भी मोटरमें बिठाकर लाये। मुझे पैदल नहीं चलने दिया। बैलगाड़ी में तो सुभाषबाबूको बिठाया, मुझे नहीं। मुझे यहाँ आनेमें देर लगती तो क्या बिगड़ जाता। अब तो सभी शाहजादे बन गये हैं, और कहते हैं कि मोटर न मिली तो हम दंगा करेंगे। यहाँ जो यह साढ़े सात लाखका खर्च हुआ, इसमें खादीकी भावना नहीं है। मैं तो खेतमें कपास पैदा करूँ और उससे खादी बनाऊँ। यहाँ तो तमाम चीजें बाहरसे मँगाई गई हैं। कामिनिया हेयर आयल और टूथ पाउडर भी आये हैं। देहातीका टूथ-पाउडर तो कोयला और नमक है, उसका ब्रश बबूलकी ताजी दातुन है। पर यहाँ तो लोगोंको दातुन नहीं, किन्तु टूथ-ब्रश चाहिए; नमक नहीं किन्तु पाउडर-पेस्ट चाहिए। कंघी भी मशीनकी चाहिए। मोटर चाहिए और बाकीका सारा सामान विदेशी चाहिए।

इस प्रदर्शनीमें भी पाँच दोष एक आदमीने मुझे और मैंने शंकरलाल बैंकरको बता दिये हैं। हम खादीका मन्त्र ग्रहण नहीं कर सके, इसलिए समाजवादी अधीर हो गये हैं और कहते हैं कि गांधीका जमाना गया, अब तो दूसरा जमाना आया है। इसमें मुझे डर नहीं, दुःख नहीं। मेरी बात अगर आपको फेंक देने जैसी लगे तो फेंक दें, आप जो-कुछ भी करें वह हिन्दुस्तानकी खातिर करें, मेरी खातिर न कीजिएगा। मैं तो मिट्टीका पुतला हूँ, इसकी तो राख हो जायेगी, मेरी खातिर आप खादी पहनते होंगे तो मेरा शरीर जिस दिन जलाओ उसके दूसरे दिन खादीको भी जला देना। पर अगर आपने खादीका मन्त्र ठीक तरहसे समझा होगा, उसका

रहस्य घोटकर पी लिया होगा, तो खादी मेरी मृत्युके बाद टिकी रहेगी। खादी-रूपी प्रतिमामें आत्मा है या नहीं, यह तो आप जानें। पुतलेको परमेश्वर न समझें; समझेंगे तो बुतपरस्त बन जायेंगे। खादीका भेद समझे बिना खादीपरस्त बनेंगे, तो बुतपरस्त बनेंगे।

खादीकी कल्पना मैंने पिछले बीस बरसोंसे हिन्दुस्तानके सामने रख रखी है। इन बीस बरसोंमें मैंने यह एक ही बात हिन्दुस्तानमें सबको सुनाई है। आज मृत्यु-शय्या पर पड़ा हुआ भी मैं यही कहना चाहता हूँ। खादी अब पुरानी, जीर्ण-शीर्ण चीज नहीं रही, बल्कि नौजवान बन गई है और खूबसूरत मालूम पड़ती है। आज यह बात स्पष्ट दिखाई पड़ती है। ईश्वर मुझसे कह रहा है कि इसमें कोई भूल नहीं है। इसमें स्वराज्य है, इसीमें स्वतन्त्रता है।

हरिजनसेवक, २६-२-१९३८

४७२. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको[1]

हरिपुरा
१६ फरवरी, १९३८[2]

बिहारके मन्त्रियोंके प्रस्तावपर गवर्नर-जनरलने जो हस्तक्षेप किया है वह बहुत दुर्भाग्यपूर्ण है और इसकी कोई आवश्यकता भी न थी। मैंने भारत सरकार अधिनियमके खण्ड १२६(५) का बार-बार अध्ययन किया है। उसमें वाइसरायको उस समय हस्तक्षेप करने का अधिकार दिया गया है जब मन्त्रियों द्वारा प्रस्तावित किसी कदमसे भारतके किसी भागमें शान्ति और अमनको गम्भीर खतरा हो। निश्चय ही कुछ कैदियोंको रिहा करने से, हालाँकि उन्हें हिंसात्मक अपराधके लिए दण्ड दिया गया है, शान्ति और अमनको कोई खतरा नहीं हो सकता। ये लोग भ्रमवश समझ बैठे थे कि ऐसा करना देशके हितमें होगा। यदि इन रिहाइयोंके फलस्वरूप देशमें अव्यवस्था फैलती तो उस स्थितिमें गवर्नर-जनरलका हस्तक्षेप करना उचित होता।

और जिस मामलेको लेकर वाइसरायने हस्तक्षेप किया है उस सम्बन्धमें, मुझे मालूम हुआ है कैदियोंने बिहारके मुख्य मन्त्रीको यह आश्वासन दिया था कि उन्होंने अपनी मनोवृत्ति बदल डाली है और यदि उन्हें रिहा कर दिया जाता है तो वे अन्य नागरिकोंकी तरह शान्तिपूर्ण जीवन व्यतीत करना चाहते हैं।

गवर्नर-जनरलकी इस कार्रवाईसे मैं चकित रह गया हूँ और मुझे ऐसा सन्देह है कि मन्त्रियोंका कैदियोंको रिहा करने का प्रस्ताव केवल अन्तिम निमित्त था और

१. यह **हरिजन**में "गवर्नमेंट मस्ट अनडु मिसचिफ" (सरकारको इस बुराईका निराकरण करना ही चाहिए) शीर्षकके अन्तर्गत छपा था।

२. १७-२-१९३८ के **बॉम्बे क्रॉनिकल**से।

वास्तवमें ब्रिटिश सत्ताधारी सामान्यतया कांग्रेसी मन्त्रियोंसे ऊब-थक चुके थे। मैं आशा करता हूँ कि मेरा यह सन्देह निराधार है, लेकिन यदि ऐसी बात है तो भी हस्तक्षेप किये जानेकी बात मेरी समझमें नहीं आती। अगर इसके लिए सरकारके पास कोई ऐसा कारण हो जिससे जनता अनभिज्ञ हो तो बात और है। गवर्नर-जनरल अपना कदम वापस ले सकें और ऐसे संकटको, जिसका भविष्यमें क्या परिणाम होगा इसके बारेमें कोई कुछ नहीं कह सकता, टाल सकें तो कितना अच्छा हो।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १९-२-१९३८

४७३. प्रस्ताव : मन्त्रिमण्डलोंके त्यागपत्रपर

[१८ फरवरी, १९३८ के पूर्व][1]

फैजपुर कांग्रेसके निर्देशानुसार मार्च, १९३७ में अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने प्रान्तोंमें सत्ता स्वीकार करने के प्रश्नका निपटारा किया और इस शर्तपर कांग्रेसजनों को मन्त्रिमण्डल बनाने की अनुमति दी गई कि ब्रिटिश सरकार द्वारा अथवा उसकी ओरसे कुछ आश्वासन दिये जायें। और जब ये आश्वासन मिलते दिखाई नहीं दिये तब प्रान्तीय विधान-सभाओंमें कांग्रेस-दलके नेताओंने पहले तो मन्त्रिमण्डल बनाने से इनकार कर दिया। तत्पश्चात् इन आश्वासनोंको लेकर कुछ महीनोंतक काफी वाद-विवाद चला और भारत-मन्त्री, वाइसराय तथा प्रान्तीय गवर्नरोंने इस सम्बन्धमें विभिन्न घोषणाएँ कीं। इन घोषणाओंमें अन्य बातोंके अलावा निश्चित तौरपर यह कहा गया कि उत्तरदायी मन्त्रियों द्वारा किये जानेवाले प्रान्तीय मामलोंके दैनिक प्रशासनमें कोई हस्तक्षेप नहीं किया जायेगा।

प्रान्तोंमें कांग्रेस-मन्त्रियोंको अपने पदोंका जो अनुभव रहा है उससे प्रकट होता है कि संयुक्त प्रान्त और बिहार, कमसे-कम इन दो प्रान्तोंमें तो दैनिक प्रशासनमें गवर्नर द्वारा हस्तक्षेप किया जाता रहा है, जिसका उदाहरण आगे दिया जा रहा है। गवर्नरोंने जब कांग्रेसजनोंको मन्त्रिमण्डल बनाने के लिए आमन्त्रित किया था तब उन्हें कांग्रेसके घोषणापत्रके बारेमें मालूम था, जिसमें कांग्रेसकी नीतिके मुख्य अंगके रूपमें राजनीतिक बन्दियोंकी रिहाईका उल्लेख किया गया था। उसके अनुसार मन्त्रियों ने राजनीतिक बन्दियोंको रिहा करना तो शुरू कर दिया, लेकिन शीघ्र ही उन्होंने यह अनुभव किया कि उसमें देर हो रही है और यह देर कभी-कभी झुँझलाहटकी हद तक बढ़ जाती थी। कारण यह था कि गवर्नर रिहाईके आदेशका अनुमोदन करने में देर लगाते थे। इन रिहाइयोंमें जिस तरह बार-बार देर की गई है उससे मन्त्रियोंके

१. १९-२-१९३८ के **बॉम्बे क्रॉनिकल** के अनुसार गांधीजी द्वारा तैयार किये गये इस मसौदेपर १८ फरवरीको कार्यसमिति द्वारा विचार किया जा रहा था।

अनुकरणीय धीरजका पता चलता है। कांग्रेसकी रायमें बन्दियोंकी रिहाईका मामला मुख्यतः दैनिक प्रशासनका अंग है, जिसमें गवर्नरोंके साथ लम्बी बातचीतकी कोई गुंजाइश नहीं है। गवर्नरका काम यह नहीं है कि मन्त्री अपने दैनिक दायित्वोंके निर्वाहके लिए अपने विवेकके अनुसार जो-कुछ करें उसमें वह हस्तक्षेप करता रहे। उसका काम तो मन्त्रियोंका पथ-प्रदर्शन करना और उन्हें सलाह देना है। जब कार्य-समितिके लिए कांग्रेसके प्रतिनिधियों और जनताके सम्मुख वर्ष-भरका लेखा-जोखा पेश करने का समय आया तब उसने मन्त्रियोंको, जिन्हें अपनी स्थितिके सही होनेका पूरा विश्वास था, निर्देश दिया कि वे अपने अधीनस्थ कैदियोंको रिहा कर दें और यदि उनके इन आदेशोंको रद किया जाता है तो वे त्यागपत्र दे दें। संयुक्त प्रान्त और बिहारके मन्त्रियों ने जो कदम उठाया है, कांग्रेस उससे सहमत है और उसका अनुमोदन करती है तथा इसके लिए उन्हें बधाई देती है।

कांग्रेसकी रायमें, संयुक्त प्रान्त और बिहारके मुख्य मन्त्रियों द्वारा सोच-विचारकर किये गये कार्यमें हस्तक्षेप कर गवर्नर-जनरलने न केवल उपर्युक्त आश्वासनको भंग किया है, बल्कि भारत सरकार अधिनियमके खण्ड १२६(५) का दुरुपयोग भी किया है। शान्ति और अमनको गम्भीर खतरा पैदा होनेका कोई प्रश्न ही नहीं था। इसके अलावा दोनों मामलोंमें मुख्य मन्त्रियोंको सम्बन्धित कैदियोंसे मिले आश्वासनों और अन्य प्रकारसे यह विश्वास हो गया था कि उनकी मनोवृत्ति बदल गई है और कांग्रेसकी अहिंसाकी नीति उन्हें स्वीकार्य है। अलबत्ता गवर्नर-जनरलके हस्तक्षेपसे ऐसी स्थिति जरूर उत्पन्न हो गई है जो कांग्रेसके प्रयत्नोंके बावजूद बड़ी आसानीसे शान्तिके लिए गम्भीर संकटका रूप धारण कर सकती है।

अपने अल्प कार्य-कालमें कांग्रेसियोंने आर्थिक और सामाजिक बुराइयोंको दूर करने के लिए कानून बनाने के मामलेमें आत्मत्याग, प्रशासकीय क्षमता और रचनात्मक योग्यताका पर्याप्त प्रमाण दिया है। कांग्रेस प्रसन्नताके साथ यह स्वीकार करती है कि गवर्नरोंने भी मन्त्रियोंके साथ अंशतः सहयोग किया। इस अधिनियमके अन्तर्गत जहाँतक सम्भव था वहाँतक जनताकी भलाई करने, पूर्ण स्वराज्यके लक्ष्यकी प्राप्तिके लिए उसे शक्ति प्रदान करने और भारतके आम लोगोंके साम्राज्यवादी शोषणको समाप्त करने के लिए कांग्रेस ईमानदारीके साथ प्रयत्नशील रही है।

कांग्रेस ऐसी संकटकी स्थिति उत्पन्न नहीं करना चाहती जिसमें उसे अहिंसामय असहयोगका और ऐसी कार्यवाहीका सहारा लेना पड़े जो कांग्रेसकी सत्य और अहिंसा की नीतिके अनुरूप हो। इसलिए कांग्रेस फिलहाल अन्य प्रान्तोंके मन्त्रियोंको गवर्नर-जनरलकी कार्यवाहीके विरोधमें त्यागपत्र देनेके लिए कहने में संकोच कर रही है और वह परमश्रेष्ठ गवर्नर-जनरलसे अनुरोध करती है कि वे अपने निर्णयपर एक बार फिरसे विचार करें, जिससे प्रान्तोंके गवर्नर संवैधानिक ढंगसे काम करने लगें और राजनीतिक बन्दियोंकी रिहाईके मामलेमें मन्त्रियोंकी सलाहको मान लें।

जो जनताके प्रति उत्तरदायी नहीं हैं, ऐसे मन्त्रिमण्डलोंकी स्थापनाको कांग्रेस तलवारके बलपर शासन करने का एक बहाना मानती है। ऐसे मन्त्रिमण्डलोंकी स्थापनासे

है और वे जैसा ठीक समझें उस तरहसे काम करने का उन्हें अधिकार है। वर्त्तमान परिस्थितियोंको ध्यानमें रखते हुए सभी सम्बद्ध तथ्योंपर विचार करना उनका काम है, लेकिन एक बार वे जो निर्णय ले लें उन्हें स्वीकार करना और लागू करना गवर्नरका काम है। उनके दैनिक प्रशासनके संचालन-अधिकारके उपयोगमें यदि हस्तक्षेप किया जाता है तो उससे उनकी स्थिति कमजोर होती है और उसे धक्का पहुँचता है। कांग्रेसी मन्त्रियोंने हिंसक अपराधोंके सम्बन्धमें उचित कार्रवाई करने के अपने निश्चय की कई बार घोषणा की है और जिन कैदियोंने स्वयं ही हिंसा-नीतिका त्याग कर दिया है उन्हें रिहा करने में खतरेकी आशंका महज काल्पनिक है।

कांग्रेसने पिछले कुछ महीनोंके दौरान अनुशासन और कांग्रेस द्वारा स्वीकार की गई अहिंसाकी नीतिको भंग करनेवालों के विरुद्ध कड़ी कार्रवाई करने की अपनी इच्छा का पर्याप्त प्रमाण दिया है। तथापि कांग्रेस इस बातकी ओर कांग्रेसियोंका ध्यान आकर्षित करती है कि वाणी अथवा आचरण-विषयक जिस अनुशासनहीनतासे हिंसाको पोषण और प्रोत्साहन मिलता है उससे लक्ष्य-प्राप्तिकी दिशामें देशकी प्रगतिमें बाधा पहुँचती है।

राजनीतिक कैदियोंको रिहा करवाने के अपने कार्यक्रमको क्रियान्वित करने में कांग्रेस पद-त्याग करने और लोक-हितकारी कानून बनाने के अवसरका लाभ उठाने में नहीं हिचकिचाई है। लेकिन कांग्रेस साफ-साफ कह देना चाहती है कि कैदसे मुक्ति पाने के लिए भूख-हड़ताल करना उसे सख्त नापसन्द है। ऐसी भूख-हड़तालोंसे कांग्रेसको राजनीतिक कैदियोंकी रिहाईकी अपनी नीतिका पालन करने में कठिनाई होती है। इसलिए पंजाबमें अब भी जो लोग अनशन कर रहे है कांग्रेस उनसे अनुरोध करती है कि वे अनशन छोड़ दें और उन्हें आश्वासन देती है कि जिन प्रान्तोंमें कांग्रेस पदारूढ़ है उनमें अथवा अन्य प्रान्तोंमें कांग्रेसी लोग उचित और शान्तिपूर्ण ढंगसे राजनीतिक नजरबन्दों और कैदियोंको रिहा करवाने के अपने प्रयत्नोंको जारी रखेंगे।

आज देशम जो स्थिति उत्पन्न हो गई है उसे देखते हुए कांग्रेस कार्यसमितिको यह अधिकार देती है कि वह [इस सम्बन्धमें] जो जरूरी समझे सो कदम उठा सकती है और आवश्यकता पड़ने पर संकटका सामना करने के लिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीसे निर्देश ले सकती है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २६-२-१९३८

४७४. पत्र : अमतुस्सलामको

हरिपुरा
१८ फरवरी, १९३८

चि० अमतुल सलाम,[1]

तुमको क्या कहूं ? क्यों लिखती नहीं ? मेरी उम्मीद तो है कि शायद हम लोग यहांसे २० या २१ को निकलेंगे। देखूगा कितना वजन बढ़ाया है। रामचन्द्रन नहीं आया।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९४)से।

४७५. भेंट : 'डेली हेराल्ड' के प्रतिनिधिको[2]

हरिपुरा
१८ फरवरी, १९३८[3]

मुझे प्रान्तीय स्वायत्तताकी कार्य-पद्धतिमें गवर्नरों या वाइसराय द्वारा अकारण हस्तक्षेप किये जानेका जो भय था वह अप्रत्याशित ढंगसे सत्य सिद्ध हुआ है। अब मैं केवल यही आशा करता हूँ कि जिसे मैं एक गम्भीर भूल समझता हूँ, उसका किसी-न-किसी तरह निराकरण किया जायेगा। मैं आशा करता हूँ, मेरे मनमें जो एक और आशंका है वह निराधार है। वह आशंका यह है कि कांग्रेस और कांग्रेसके मन्त्री रचनात्मक दिशामें जो प्रगति कर रहे हैं उससे ब्रिटिश अधिकारी ऊब गये हैं अथवा शायद भयभीत भी हो उठे हैं। फिर भी मेरे लिए यह समझना बहुत मुश्किल है कि वाइसराय एक ऐसे मामलेको लेकर, जो उनकी दृष्टिमें भी तुच्छ ही होगा, संकटकी स्थिति उत्पन्न होने दें। मैंने भारत सरकार अधिनियमके खण्ड १२६(५)का अध्ययन किया है और उसपर मनन किया है। इस खण्डके द्वारा वाइसरायको "भारत या उसके किसी भागमें अमन या शान्तिको गंभीर खतरा देख उससे बचावके निमित्त" अपने विवेकके अनुसार कार्य करने का अधिकार प्राप्त है। राजनीतिक हेतुसे

१. सम्बोधन देवनागरी लिपि में है।

२. यह और अगली भेंट-वार्ता दोनों "गवर्नमेंट मस्ट अनडु मिसचिफ" (सरकारको बुराई का निराकरण करना ही चाहिए) शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुई थीं।

३. १८-२-१९३८ के *हिन्दू* से ली गई है।

किये हुए हिंसात्मक अपराधोंके लिए दण्डित अनेक बन्दियोंको इससे पहले और कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंके कार्य-कालमें रिहा किया गया है। मैं नहीं जानता कि उनकी रिहाईके फलस्वरूप भारतके किसी भी भागमें अमन या शान्तिको कोई गम्भीर खतरा पैदा हुआ हो। सातों प्रान्तोंमें कांग्रेसी मन्त्रियोंने अव्यवस्था फैलानेवाले तत्त्वोंसे निबटने में अपनी तत्परता और क्षमताका पर्याप्त प्रमाण दिया है। यदि कांग्रेसके शासन-कालमें उसके किसी प्रान्तमें अव्यवस्था फैलती है तो उससे सरकारकी बनिस्बत कांग्रेसको अधिक नुकसान पहुँचेगा। मैं समझता हूँ कि सम्बद्ध प्रान्तोंमें मन्त्रियोंने बन्दियोंकी रिहाईकी माँग करने से पहले उनकी परिवर्तित मनोवृत्तिके बारेमें इत्मीनान कर लिया था। बेशक, कानूनके मुताबिक अपने-अपने प्रान्तोंमें कानून और व्यवस्था बनाये रखने की सबसे पहली जिम्मेदारी उनकी ही है। और यदि कांग्रेसी मन्त्रियोंके प्रयत्नोंके बावजूद प्रान्तोंमें अव्यवस्था फैलती है तो उस अव्यवस्थाको रोकने की अपनी सर्वविदित क्षमतासे युक्त गवर्नर तथा पूरी ब्रिटिश ताकत हमेशा मौजूद है। कैदियोंको रिहा करने के मामलेमें मन्त्रियोंने जो सुविचारित निर्णय किया था उसमें हस्तक्षेप करने का निश्चय ही कतई कोई कारण न था। और मैं यह सोचे बिना नहीं रह सकता कि कार्य-समितिके निर्देशपर जिन मन्त्रियोंने त्यागपत्र दिये हैं उनके लिए वही एक सम्मानजनक रास्ता था।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १९-२-१९३८

४७६. भेंट : 'लन्दन टाइम्स' के प्रतिनिधिको

हरिपुरा
१८ फरवरी, १९३८[1]

गांधीजी ने बताया कि गवर्नर-जनरलने जो कदम उठाये हैं वे उनकी समझमें नहीं आते। उन्होंने कहा, कांग्रेसके कार्य-भार सँभालने के समय मुझे इसी प्रकारके हस्तक्षेपकी आशंका थी और हालकी घटनाओंने यह सिद्ध कर दिया है कि यह आशंका उचित ही थी। इस हस्तक्षेपसे मेरा यह अनुमान है कि कांग्रेसने अपनी रचनात्मक नीतिकी दिशामें तीव्रताके साथ जो प्रगति की है और दिन-ब-दिन जिस प्रकार जनतापर उसका प्रभाव दृढ़ होता जा रहा है उसे देखकर ब्रिटिश अधिकारी घबरा उठे हैं। लेकिन यह तो अपेक्षित ही था। किन्तु मैं समझता हूँ कि इस हस्तक्षेपका कोई औचित्य नहीं है और हालाँकि गवर्नर-जनरलकी कार्रवाईसे संकट उपस्थित हो गया है, तथापि उसका जो बुरा नतीजा हुआ है उसका किसी-न-किसी तरह निराकरण हो जायेगा। लेकिन इस सबके लिए ब्रिटिश अधिकारी ही जिम्मेदार

१. १८-२-१९३८ के **हिन्दू** से।

हैं और इसका निराकरण भी उन्हें ही करना होगा। जिस शानदार ढंगसे कांग्रेसी मन्त्रियोंने सामाजिक और आर्थिक कानूनोंके निर्माणका काम शुरू किया है, उससे कांग्रेसने यह सिद्ध कर दिया है कि वह अपने सत्ता ग्रहण करने से सम्बन्धित कार्य-क्रमपर अमल करने के लिए गम्भीरतासे काम करना चाहती है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १९-२-१९३८

४७७. पत्र : शामलालको

हरिपुरा
२० फरवरी, १९३८

प्रिय लाला शामलाल,[1]

कृपा करके भूख-हड़तालियोंको बता दीजिए कि उन्होंने मेरी अपीलकी[2] अव-हेलना कर दी, इससे मुझे गहरा दुःख हुआ है। वे अब भी मान जायें और हड़ताल छोड़ दें तो अच्छा हो। डाक्टरोंसे अनुमति मिलते ही और अपने पुराने वायदे निबटाते ही मैं उनकी रिहाईके प्रयत्नमें लग जाऊँगा। इसके लिए यदि मुझे पंजाब आना पड़ा तो वह भी करूँगा। कांग्रेसने जो प्रस्ताव[3] पास किया है उसे देखते हुए भी उन्हें हड़ताल छोड़ देनी चाहिए। आशा करता हूँ कि यह अपील निरर्थक नहीं जायेगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२८४)से।

१. पंजाब विधान-सभाके सदस्य।
२. देखिए "तार : बन्दी-सहायता समिति के मन्त्रीको", पृ० ४७५, और "वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको", पृ० ३८०।
३. देखिए "प्रस्ताव : मन्त्रिमण्डलोंके त्यागपत्रपर", पृ० ४१८-२१।

४७८. पुर्जा : वल्लभभाई पटेलको

विट्ठलनगर, हरिपुरा
२० फरवरी, १९३८

भाई वल्लभभाई,

देवदासने तुम्हारे आज के भाषण की शिकायत की है। बादमें जयप्रकाश आया। उसने बहुत दुःखपूर्वक बातें कीं। मुझे लगता है कि तुम्हारा भाषण बहुत गर्म था। समाजवादियोंपर ऐसे विजय प्राप्त नहीं की जा सकती। यदि तुम्हें अपनी भूल महसूस हो तो तुम सुभाषकी विशेष अनुमति लेकर मंचपर जाकर आँसू पोंछना और उन्हें हँसाना। हम "जैसेको तैसा" वाला व्यवहार नहीं कर सकते। बलवान का भूषण क्षमा है। उसकी जीभमें तलवार [की सी तेजी] नहीं होगी। मुझे तो बात करनी थी, लेकिन समय ही नहीं बचा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २१८

४७९. पुर्जा : आनन्द तो० हिंगोरानीको

२१ फरवरी, १९३८

अगर विद्या ठीक रहती है और तुम्हारे पास पर्याप्त काम हो तो वहाँ बस सकते हो। पिताको तो तुम्हें भूल ही जाना चाहिए। ऐसा न करने का मतलब जख्मको कुरेदना होगा।[1]

जयरामदाससे आज ही यह करने को कहो।

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य : भारतीय अभिलेखागार तथा आनन्द तो० हिंगोरानी

१. आनन्द तो० हिंगोरानीने नैनीतालमें बसने और पितासे अपने सम्बन्धके बारेमें सलाह माँगी थी।

४८०. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको[1]

२३ फरवरी, १९३८

गवर्नर-जनरलके वक्तव्य[2]को मैंने उचित सम्मानके साथ और ध्यानपूर्वक पढ़ा है। प्रान्तीय विधान-मण्डलोंके कांग्रेसी सदस्योंने मन्त्रिपद स्वीकार करने से पहले सरकारकी ओरसे कुछ आश्वासन दिये जानेकी माँग की थी। उसके सम्बन्धमें गवर्नर-जनरलने जो घोषणा की थी उससे कमसे-कम मैंने और यदि अनुचित न हो तो कहूँ, बहुत सारे कांग्रेसियोंने सन्तोषका अनुभव किया था, और मैं आशा किये बैठा था कि उनका यह वक्तव्य भी हमें कुछ वैसा ही सन्तोष प्रदान करेगा। किन्तु यह वक्तव्य भ्रामक दलीलोंसे युक्त है और जिस व्यक्तिके पास ऐसी अपार सत्ता हो जैसी पहले कभी नहीं सुनी गई, उस व्यक्तिको यह वक्तव्य शोभा नहीं देता।

जो कैदी रिहा किये जानेवाले हैं उनके मामलोंकी जाँच किये जानेके औचित्यके सम्बन्धमें किसीने कोई शंका नहीं उठाई है, लेकिन मैंने जिस बातपर शंका उठाई है और कांग्रेसने भी जिस बातपर बहुत जोर दिया है वह यह है कि जिन प्रान्तोंको पूर्ण स्वायत्तता-प्राप्त कहा जाता है उन प्रान्तोंमें गवर्नरों द्वारा यह जाँच किये जानेका क्या औचित्य है। भारत सरकार अधिनियम और उत्तरदायी सरकारवाले उपनिवेशोंमें प्रचलित परिपाटीको मैं जैसा समझा हूँ उसके अनुसार ऐसी जाँच करने का कर्त्तव्य और अधिकार केवल उत्तरदायी मन्त्रियोंका ही है। गवर्नरोंका अधिकार और कर्त्तव्य तो नीति-निर्धारणके प्रश्नपर मन्त्रियोंको सलाह देना है और अमुक सत्ताका प्रयोग करने में निहित खतरोंके विरुद्ध चेतावनी देना है। लेकिन इतना करने के बाद उन्हें मन्त्रियोंको अपने निर्णयके अनुसार करने देना चाहिए। यदि ऐसा नहीं होगा तो जिम्मेदारी शब्दका कोई अर्थ ही नहीं रह जायेगा। कानूनमें दैनिक प्रशासन चलाने का जो काम मन्त्रियोंको सौंपा है यदि उनकी इस जिम्मेदारीमें गवर्नर भी भागीदार हो तब तो अपने मतदाताओंके प्रति उत्तरदायी मन्त्रियोंके हिस्से गालियों और अपमान-के अतिरिक्त और कुछ नहीं पड़ेगा। गवर्नर-जनरल महोदय द्वारा बेचारे मन्त्रियोंके विरुद्ध इस बातका उल्लेख किया जाना उन्हें शोभा नहीं देता कि मन्त्रियोंको गवर्नरों-को अलग-अलग व्यक्तियोंके मामलोंकी जाँच करने से रोकने की स्पष्ट सत्ता प्राप्त है, लेकिन उन्होंने उसका उपयोग नहीं किया। कांग्रेसके प्रस्तावमें[3] मन्त्रियोंकी सहिष्णुता-

१. यह "हाउ क्राइसिस कैन बी अॅवाइडेड" (संकट को कैसे टाला जा सकता है) शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था :

२. २२ फरवरीके।

३. देखिए "प्रस्ताव : मन्त्रिमण्डलोंके त्यागपत्र पर", पृ० ४१८-२१।

को अनुकरणीय धैर्य कहा गया है। इसके साथ मैं इतना और कहने की धृष्टता करूँगा कि कदाचित् मन्त्रियोंकी अनुभवहीनताके कारण भी यह सब हुआ, क्योंकि इस कार्यमें वे बिलकुल नये थे। इसलिए मुझे तो लगता है कि यदि इस महत्त्वपूर्ण प्रश्नका निबटारा मन्त्रियोंके पक्षमें नहीं होता तो कांग्रेसने उन्हें जिस गम्भीर दायित्वको उठाने की अनुमति दी है उस दायित्वको उठाना उनके लिए कठिन हो जायेगा।

मैंने बंगालमें जिस तरहसे काम लिया है, गवर्नर-जनरल महोदयने उसकी ओर जनताका ध्यान आकर्षित किया है। उससे मैं प्रसन्न हुआ हूं। उन्हें एक ओर बंगाल तथा दूसरी ओर संयुक्त प्रान्त तथा बिहारमें जो अन्तर है वह भी बताना चाहिए था। बंगालमें मैं एक ऐसी सरकारसे वार्त्ता कर रहा था जो कांग्रेसके घोषणापत्रसे किसी प्रकार बँधी हुई नहीं है। वहाँके मन्त्री, सही अथवा गलत, सारे सजायाफ्ता कैदियोंको एकसाथ छोड़ने की बात सुनने को तैयार ही नहीं थे। मैंने कैदियोंको जो वचन दिया था उसको पूरा करने के प्रयत्नमें मैं वहाँ अत्यन्त नाजुक स्थितिसे गुजर रहा था। मेरा हेतु नितान्त मानवीय था और बंगालके मन्त्रियोंके हृदयमें निहित मानव के सम्मुख विनती करना ही मेरा एकमात्र अस्त्र था, और मुझे यह कहते हुए खुशी हो रही है कि मैं वहाँ पत्थर-दिल लोगोंसे बात नहीं कर रहा था। संयुक्त प्रान्त और बिहारकी स्थिति एकदम भिन्न है। वहाँके मन्त्री उस घोषणापत्रसे बँधे हुए हैं जिसने उन्हें चुनावोंमें सफलता प्रदान की। वे जिन कैदियोंको रिहा करवाना चाहते थे उनके मामलोंकी उन्होंने जाँच कर ली थी, इतना ही नहीं बल्कि अपने प्रान्तोंमें शान्ति बनाये रखने के अपने उत्तरदायित्वके प्रति वे चूँकि पूर्णतः सजग थे इसलिए उन्होंने सम्बन्धित कैदियोंसे निजी तौरपर यह आश्वासन प्राप्त कर लिया था कि वे लोग अब हिंसामें विश्वास नही करते है।

गवर्नर-जनरल महोदयके वक्तव्यमें एक ऐसी बात है जिससे मुझे यह उम्मीद अवश्य बँधती है कि आसन्न संकटको टाला जा सकता है। उन्होंने अब भी गवर्नरों और मन्त्रियोंके बीच बातचीत करने का दरवाजा खुला रखा है। मैं स्वीकार करता हूँ कि मन्त्रियोंने एकाएक नोटिस दिये, लेकिन वस्तुस्थितिको देखते हुए ऐसा करना लाजिमी था।[1] अब सारे पक्षोंको परिस्थितिपर विचार करने के लिए काफी समय मिल गया है।

मेरे विचारसे संकटको टालने का रास्ता यह है कि गवर्नरोंको ऐसा आश्वासन देनेकी छूट दी जाये कि कैदियोंके मामलोंकी जाँच करने के पीछे उनका उद्देश्य मन्त्रियोंके अधिकारको छीनना नहीं था और चूँकि मन्त्रियोंने कैदियोंसे आश्वासन प्राप्त कर लिया है इसलिए वे उन्हें अपनी जिम्मेदारीपर छोड़ सकते हैं। और मुझे आशा है कि कार्य-समिति मन्त्रियोंको इस बातकी इजाजत दे देगी कि यदि गवर्नर लोग

१. वाइसरायके वक्तव्य में कहा गया था: "बिहारके मामलेमें त्यागपत्र स्वीकार करनेकी माँग गवर्नरके पास दोपहर एक बजे पहुँची थी और मुख्य सचिवसे उसी दिन शामको चार बजेसे उसे लागू करनेकी माँग की गई थी। संयुक्त प्रान्तमें इस्तीफे लागू करने का जो समय निर्धारित किया गया था वह भी कुछ हदतक कम था।"

मन्त्रियोंको बुलाते हैं तो उन्हें जो आश्वासन दिया जायेगा उससे उन्हें सन्तोष होगा या नहीं, इसका निर्णय वे स्वयं करें।

परमश्रेष्ठने इस अवसरपर भारत सरकार अधिनियमके १२६ वें खण्डके ५ वें उपखण्डके उपयोगके पक्षमें जो दलील दी है उसको ध्यानमें रखकर गवर्नर-जनरल द्वारा इस उपखण्डके अधीन उसे प्राप्त अधिकारोंके प्रयोगके सम्बन्धमें मैं एक बात अवश्य कहूँगा। मैं उक्त खण्डको अच्छी तरहसे पढ़ गया हूँ। उसका शीर्षक है — "कुछ मामलोंमें संघ सरकारका प्रान्तोंपर अंकुश।" यदि बात ऐसी नहीं है कि उपखंडोंका परस्पर एक-दूसरेसे कोई सम्बन्ध नहीं है और प्रत्येकको एक-दूसरेसे अलग रखकर पढ़ा जाना चाहिए तो मेरा विचार तो यह है कि प्रस्तुत प्रसंगमें खण्ड १२६ के उपखण्ड ५ का स्पष्ट रूपसे दुरुपयोग किया गया है। लेकिन यह सवाल बहुत नाजुक है। इसका निर्णय वकील करें। मेरे इस लम्बे वक्तव्यका उद्देश्य है, आज एकाएक जो विषम स्थिति उत्पन्न हो गई है उसका शान्तिपूर्ण हल निकालने में मदद देना।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २६-२-१९३८ और **हिन्दू**, २४-२-१९३८

४८१. पत्र : महादेव देसाईको

२३ फरवरी, १९३८

चि० महादेव,

तुम्हारी नीयत खराब और खोटी थी; तिसपर तुम्हें नींदकी जरूरत थी, इसलिए तुमने न आकर ठीक ही किया।

गोसीबहनको यह तार देना।

"स्वास्थ्य अच्छा है। उम्मीद है जालभाईकी तबीयत सुधर रही है। स्नेह : बापू।"[1]

ए० पी० को इस आशयका तार किसने दिया कि मैंने वक्तव्य नहीं देखा है। लेकिन कोई हर्ज नहीं।

बाकी जब तुम शामको आओगे तभी।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

रेलकी पटरीके बाद थोड़ा रास्ता चलने पर सुशीला मोटर ले आई, इसलिए उसमें बैठ गया।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५९१) से।

१. साधन-सूत्रमें तार अंग्रेजीमें है।

४८२. पत्र : एन० एस० हार्डीकरको

वर्धा, सेगाँव
२४ फरवरी, १९३८

प्रिय डॉ० हार्डीकर,

स्वयंसेवकोंके बारेमें आज भी मेरे विचार वैसे ही हैं जैसे १९२० में थे। आपको मालूम होगा कि अहमदाबादमें कांग्रेसने एक प्रस्ताव पास किया था,[1] जिसमें स्वयं-सेवकोंके निमित्त एक प्रतिज्ञा और उनके पालनार्थ कुछ निर्देश शामिल थे। अनुभवसे यह सिद्ध हो गया है कि जो रुख मैंने तब अपनाया था वह सही था। यह सच है कि लोगोंने वैसा उत्साह नहीं दिखाया जैसा मैं चाहता था। अभी उसके कारणकी चर्चा करने की जरूरत नहीं है। मेरे लिए तो मेरे स्वयंसेवक दुर्निवार और अजेय सेनाके सदस्य हैं और होने चाहिए। इसलिए मैं यह चाहूँगा कि हर वयस्क व्यक्ति कमसे-कम तीन महीने तक स्वयंसेवकका व्यावहारिक प्रशिक्षण प्राप्त करे। सात प्रान्तोंमें कांग्रेस शासन चला रही है, इसलिए यह चीज आसान होनी चाहिए। इसलिए पहली जरूरी बात तो यह है कि एक पाठ्य-पुस्तक तैयार की जाये, जिसमें स्वयंसेवक बनने के उम्मीदवारोंको दी जानेवाली शिक्षाका क्रम विस्तारसे प्रस्तुत किया जाये। इसके बाद प्रशिक्षणका काम आरम्भ किया जाये, लेकिन शहरोंमें नहीं, गाँवोंमें। मैं तो सारा प्रयत्न गाँवोंपर केन्द्रित कर देना चाहूँगा। जो शानदार जन-जागृति आई है उसकी ओरसे मैं बेखबर नहीं हूँ, लेकिन साथ ही मुझे इस बातका भी दुःखद एहसास है कि अगर हम विश्वासपूर्वक यह कहने की स्थितिमें आना चाहते हैं, कि हमारे माँगने-भरसे हमें स्वराज्य मिल जायेगा तो आजकी अपेक्षा बहुत अधिक और बहुत प्रबल जागृतिकी आवश्यकता है। सम्भव है, किसी बाहरी परिस्थितिके कारण हमें स्वराज्य मिल जाये, लेकिन उसे मैं जनताका स्वराज्य नहीं कहूँगा।

जो-कुछ मैंने कहा है वह यदि आपके हृदय और बुद्धिको जँचता हो तो यह पत्र आपको जवाहरलालको दिखा देना चाहिए। और यदि वे इसका अनुमोदन करें तो — लेकिन अनुमोदन करें तभी — आपको आगेकी कार्रवाई करनी चाहिए। यह बात मैं विचारपूर्वक कह रहा हूँ। मैं अब जीवनमें राजनीतिक ढंगका ऐसा कोई कदम नहीं उठाना चाहता जिसपर उनका अनुमोदन और सहयोग प्राप्त न हो। दूसरे, हमारे बीच हृदयकी वैसी एकता नहीं है जिसके बलपर मैं मार्ग-दर्शन दे सकूँ। कारण आप जानते हैं। मैं जानता हूँ कि आपके और जवाहरलालके बीच भेदकी ऐसी कोई दीवार नहीं है। इसलिए भले ही मैं कोई ऐसी बात कहूँ जो

१. देखिए खण्ड २२, पृ० १०६-७।

आपके हृदय और बुद्धिको ठीक लगे, लेकिन मेरी कही बातके अनुसार आप कोई कदम उठाने से पहले, मेरी रायमें, यह जरूरी है कि उसपर जवाहरलालकी हार्दिक सहमति प्राप्त हो जाये।

आशा है, अब आप पूर्ण स्वस्थ होंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
महात्मा, खण्ड ४, पृ० २७२-७३ के बीच प्रकाशित प्रतिकृतिसे।

४८३. पत्र: मुहम्मद अली जिन्नाको

सेगाँव, वर्धा
२४ फरवरी, १९३८

प्रिय श्री जिन्ना,

पत्रके लिए धन्यवाद। जवाहरलालके नाम आपका पत्र भी पढ़ा। मैं देखता हूँ कि दोनों पत्र लिखित उत्तरकी नहीं, बल्कि व्यक्तिगत बातचीतकी अपेक्षा रखते हैं। कह नहीं सकता कि आपकी पहली बातचीत जवाहरलालके साथ होगी, या सुभाष बोस से; क्योंकि अब वे उनकी जगह आ गये हैं। इसलिए अगर आप चाहते हों कि इससे पहले मेरी आपकी बातचीत हो जाये तो १० मार्चसे पहले आपको जब भी सुविधा हो, मैं सेगाँवमें आपसे मिल सकता हूँ; क्योंकि उसके बाद अगर स्वास्थ्य ठीक रहा तो मुझे शायद बंगाल जाना पड़ेगा। जहाँतक मेरी बात है, जैसे पहले मैं हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न पर डॉ० अन्सारीसे मार्ग-दर्शन लेता था वैसे ही अब — उनके हमारे बीच न रह जानेके कारण — मौलाना अबुल कलाम आजादको मैंने अपना पथ-प्रदर्शक मान लिया है। इसलिए मेरा तो आपको यही सुझाव है कि पहली बातचीत आपके और मौलाना साहबके बीच ही होनी चाहिए। फिर भी हर हालतमें आप जैसा चाहें मैं उसके लिए तैयार रहूँगा।[1]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १६-६-१९३८

१. जिन्नाके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट १३।

४८४. पत्र : शारदा चि० शाहको

२५ फरवरी, १९३८

चि० शारदा,

तेरा पत्र मिला था। यदि तू वहाँ शान्तिपूर्वक रह सकती है तो जरूर रहना। मैंने तो तुझे आनेकी इजाजत दे दी है। सरस्वतीबहनका बहुत आग्रह है कि तू तीन महीने उनके पास रहे। वहाँ रहने से यदि तेरी तबीयत सचमुच सुधर सकती है तो जरूर रहना। सम्भव है कि मैं अप्रैलमें उस ओर आऊँ। मैंने देवदासके साथ तेरे संगीतके बारेमें बातचीत कर ली है। वह तुझसे मिलेगा। जब तू वापस आये तब अहमदाबादके रास्तेसे होकर आ सकती है। शकरीबहनके साथ मेरी खूब बातचीत हुई, यह तो मैं तुझे लिख ही चुका हूँ।[1] कल सारी रात तेरे ही सपने आते रहे। मैंने देखा कि तू अत्यन्त अधीर और विह्वल होकर मुझसे कह रही है 'अब तो मेरा विवाह करवा दो।' व्यक्तिका नाम भी बता रही थी, मैं उसे पहचानता नहीं था, नाम भी नहीं जानता था। तू मेरी इच्छाके विरुद्ध तो कुछ नहीं चाहती थी; लेकिन आग्रह बहुत कर रही थी। यह क्या बात है?

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९८९) से; सौजन्य: शारदाबहन गो० चोखावाला

४८५. पत्र : जाकिर हुसैनको

सेगाँव, वर्धा
२७ फरवरी, १९३८

प्रिय जाकिर,

हरिपुरामें मैंने हिन्दू-मुस्लिम एकतापर बातचीत आरम्भ की। अगर हम मिल पाते तो अगले दिन मुझसे तुम्हारी बातचीत होनेवाली थी। बदकिस्मतीसे मैं समय नहीं निकाल सका। मैं चाहूँगा कि अगर तुम भेज सको तो अपने विचार लिखकर मुझे भेज दो।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१. १६ फरवरीको; देखिए पृ० ४१२।

४८६. तार : शामलालको

[४ मार्च, १९३८ या उसके पूर्व][1]

मेरी अपीलके उत्तरमें बन्दियोंने जो निश्चय किया उसके लिए कृपया उन्हें बधाई तथा धन्यवाद दीजिए।[2] उनकी खातिर मैं कोई भी प्रयत्न उठा नहीं रखूँगा।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ५-३-१९३८

४८७. भेंट : सिन्धिया जहाजरानी कम्पनीके प्रतिनिधियोंको[3]

[४ मार्च, १९३८][4]

सिन्धिया जहाजरानी कम्पनीके तीन प्रतिनिधियोंने सेगाँवमें गांधीजी से मुलाकात की। . . . वे निम्नलिखित और ऐसी ही दूसरी बातोंको लेकर चिन्तित जान पड़ते थे :

(१) भेदभाव-विषयक धाराएँ।[5] उन्होंने 'यंग इंडिया' में प्रकाशित गांधीजी के "राक्षस और बौना" शीर्षक लेखसे निम्नलिखित कथन उद्धृत किया :[6]

> **अतएव भारतीयोंके हित और अंग्रेजों या यूरोपीयोंके हितमें किसी प्रकारका भेदभाव न रखने की बात कहना, भारतीयोंकी दासताको स्थायी बनाने के समान है। राक्षस और बौनेके बीच अधिकारोंकी समानता ही क्या? . . . शासक-वर्गका होनेके कारण अंग्रेजको जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमें विशेषाधिकार प्राप्त है। . . . लंकाशायरको समृद्ध बनाने के लिए भारतीय**

१. यह रिपोर्ट दिनांक "नई दिल्ली, ४ मार्च" के अन्तर्गत दी गई है।

२. देखिए "तार : बन्दी-सहायता समितिके मन्त्रीको", पृ० ४७५, तथा "वक्तव्य : समाचार-पत्रों को", पृ० ३८०, और "पत्र : शामलाल को", पृ० ४२४।

३. महादेव देसाई के "स्वदेशी इंडस्ट्रीज ऐंड डिस्क्रिमिनेशन" (स्वदेशी उद्योग और भेदभाव) शीर्षक लेख से उद्धृत।

४. **गांधी — १९१५-१९४८ : ए डिटेल्ड क्रॉनोलॉजी**के अनुसार शान्तिकुमार मोरारजी और गगनविहारी मेहता गांधीजी से इसी तारीखको सेगाँवमें मिले थे।

५. १९३५ के भारत सरकार अधिनियम के अनुसार लागू किये गये संविधान के अन्तर्गत।

६. देखिए खण्ड ४५, पृ० ३६३-६५।

घरेलू उद्योग धन्धोंको नेस्तनाबूद होना पड़ा है और ब्रिटिश जहाजरानीकी वृद्धिके लिए भारतीय जहाजरानी को।"

क्या स्वतन्त्र भारतमें जहाजरानीका पुनरुद्धार नहीं होना है, क्या उसे पूरी सम्भावित ऊँचाई तक नहीं उठना है?

(२) भारतीय या स्वदेशी कम्पनियाँ क्या हैं? जो संस्थान पूर्ण रूपसे ब्रिटिश हैं उनके नामके आगे "(इंडिया) लिमिटेड" जोड़कर भोली जनता को धोखा देनेका एक फैशन-सा चल पड़ा है। लिवर ब्रदर्स "(इंडिया) लिमिटेड"की फैक्टरियाँ अब यहाँ भी हैं। वह स्वदेशी साबुन बनाने का दावा करता है और अबतक वह बंगालकी कई छोटी-बड़ी साबुन फैक्टरियोंकी बरबादीका कारण बन चुका है। फिर है इंपीरियल केमिकल्स (इंडिया) लिमिटेड, जिसे बड़ी महत्वपूर्ण रिआयतें दी गई हैं। यह हमपर विदेशी 'मालके' बजाय विदेशी 'उद्योग' थोप रहा है।

(३) फिर, कुछ ऐसी भी कम्पनियाँ हैं जिनके निदेशालय भारतीय हैं, लेकिन प्रबन्ध-एजेंट अंग्रेज हैं, जो वास्तवमें निदेशालयोंका भी निदेशन करते हैं। जिस कम्पनीकी पूँजीमें भारतका बहुत बड़ा हिस्सा हो और बोर्डमें बहुत-से भारतीय निदेशक हों, लेकिन जिसका प्रबन्ध-निदेशक गैर-भारतीय हो या प्रबन्ध-एजेंट गैर-भारतीय पेढ़ी हो उसे क्या आप स्वदेशी कहेंगे?

उत्तर देते हुए गांधीजी ने इन तमाम प्रश्नोंकी चर्चा काफी विस्तारसे की। उनके उत्तर संक्षेपमें निम्न प्रकार प्रस्तुत किये जा सकते हैं:

(१) मुझे खुशी है कि इस सम्बन्धमें आपने मुझे १९३१ में लिखे मेरे लेखका स्मरण दिलाया है। मेरे विचार अब भी वही हैं और मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं कि स्वतन्त्र भारतको, जहाँ-कहीं उसके हितों को देखते हुए जरूरी लगेगा विदेशी हितों के विरुद्ध भेदभाव — बशर्ते कि इस स्थितिको भी भेदभाव कहना आवश्यक हो — बरतने का अधिकार होगा।

(२) जहाँतक स्वदेशी कम्पनीकी परिभाषाका सम्बन्ध है, मैं कहूँगा कि जिन पेढ़ियोंका नियन्त्रण, निदेशन और प्रबन्ध — चाहे वह प्रबन्ध प्रबन्ध-निदेशक द्वारा किया जाये या प्रबन्ध-एजेंट द्वारा — भारतीयोंके हाथोंमें होगा, केवल उन्हींको स्वदेशी माना जायेगा। जहाँ स्वदेशी पूँजी या स्वदेशी प्रतिभा उपलब्ध न हो वहाँ जरूरत होने पर विदेशी पूँजी और प्रतिभाके उपयोगपर मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी, लेकिन शर्त यह रहेगी कि ऐसी पूँजी और प्रतिभाका नियन्त्रण, निदेशन तथा प्रबन्ध पूर्ण रूपसे भारतीयोंके हाथोंमें हो और उनका उपयोग भारतके हितमें हो।

लेकिन विदेशी पूँजी और प्रतिभाका उपयोग तथा देशपर विदेशी औद्योगिक संस्थानोंका थोपा जाना, ये दोनों बातें एक-दूसरेसे बिलकुल अलग हैं। जिन पेढ़ियोंके नाम आपने लिये हैं उन्हें किसी भी तरहसे स्वदेशी नहीं कहा जा सकता। इन उप-

क्रमोंका समर्थन करनेके बजाय तो मैं यह चाहूँगा कि यदि आवश्यक हो तो इन उद्योगोंका विकास कुछ वर्ष भले ही रुका रहे ताकि राष्ट्रीय पूँजी और उपक्रमको विकसित होनेका मौका मिले और कालान्तरमें इनका विकास हो जानेपर इनके बलपर भविष्यमें भारतीयोंके नियन्त्रण, निदेशन और प्रबन्धमें ऐसे उद्योग खड़े हों।

(३) इसका उत्तर दूसरे प्रश्नके उत्तरमें आ जाता है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २६-३-१९३८

४८८. बातचीत: एक मित्रके साथ[1]

[५ मार्च, १९३८ के पूर्व]

[गांधीजी:] देशी राज्योंके विषयका जो यह प्रस्ताव[2] पास हुआ है इसका यह मतलब नहीं कि देशी राज्योंकी प्रजा गाढ़ी नींदमें सो जाये, बल्कि उसका आशय तो यह है कि वह कमर कसकर अपने बलपर काम शुरू कर दे। देशी राज्योंकी प्रजाकी भलाईका कांग्रेसको बहुत ज्यादा खयाल है, यह तो संघ-सम्बन्धी कांग्रेसके प्रस्तावसे[3] साफ जाहिर हो जाना चाहिए। हम चाहते हैं कि देशी राज्योंकी प्रजा देशी राज्योंमें अविराम रूपसे काम करे, पर कांग्रेसके नामपर नहीं। कांग्रेसके नामका उपयोग करने से कांग्रेसके अपमानित होनेकी सम्भावना है। इस अपमानसे अन्ततः देशी राज्योंकी प्रजाको फायदा पहुँच सकता हो, तो मैं इस अपमानको बर्दाश्त कर लूँगा। पर यह बात नहीं है। यह मुमकिन नहीं कि कांग्रेस प्रत्येक देशी राज्यमें जाकर वहाँ आन्दोलन चलानेवालों की रक्षा कर सके। कांग्रेस अपने नामका उपयोग न कराकर ही उन लोगोंकी अधिक अच्छी तरह रक्षा कर सकती है। यदि देशी राज्योंके लोग कांग्रेसको समझने और उसकी इज्जत करने लगे हों, तो यह अच्छी बात है, पर तब वे कांग्रेसके नैतिक समर्थनके द्वारा काम करें, और कांग्रेसके नामका उपयोग न करें। जब भी कांग्रेस देशी राज्योंकी जनताकी सच्ची मदद कर सकेगी, वह करेगी, पर उनके काममें सक्रिय हस्तक्षेप करके नहीं, बल्कि उनके और राजाओंके बीच मध्यस्थ बनकर। कांग्रेस देशी राज्योंके अन्दर जाकर मदद करे यह असम्भव बात है, और इसीलिए मैं देशी राज्योंके लोगोंको जान-बूझकर यह सलाह देता आ रहा हूँ कि वे देशी राज्योंमें

१. महादेव देसाईके "नोट्स" (टिप्पणियाँ) से उद्धृत।

२. यह कांग्रेसके हरिपुरा अधिवेशनमें पास किया गया था।

३. जिसमें कहा गया था: "संघमें शरीक देशी राज्योंको प्रान्तोंकी भाँति ही अपने यहाँ लोक-निर्वाचित संस्थाएँ और उत्तरदायी सरकारकी स्थापना करनी चाहिए, प्रान्तोंके ढंगपर नागरिक स्वतन्त्रता प्रदान करनी चाहिए और संघीय विधानसभाके सदनोंमें प्रतिनिधियोंके चुनावका तरीका प्रान्तोंकी तरह ही रखना चाहिए। अन्यथा, जिस प्रकारके संघकी कल्पना की गई है वह भारतीय एकताको मजबूत बनानेके बजाय पृथक्तावादी प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन देगा और राज्य आन्तरिक और बाहरी संघर्षों में पड़ जायेंगे।"

कांग्रेस कमेटियाँ न बनायें। कुछ लोग कहते हैं कि 'हम देशी राज्योंको खत्म करना चाहते हैं।' इस बातसे इन मित्रोंको या देशी राज्योंको कोई हानि होनेकी सम्भावना नहीं। पर अगर वे देशी राज्योंके काममें सक्रिय रूपसे दिलचस्पी लेते हैं और कांग्रेसके नामसे काम करना चाहते हैं, तो उनकी जरूर हानि होगी। कांग्रेसके नामका उपयोग होनेसे कांग्रेसकी प्रतिष्ठा कुछ बढ़ती नहीं, बल्कि घटती है। मैसूरका ही उदाहरण लीजिए। वहाँ प्रामाणिक कांग्रेस कमेटी थी, फिर भी वह राष्ट्रीय झंडेका अपमान होनेसे न रोक सकी।

उन मित्रने कहा: पर ये सब बातें ब्रिटिश भारतमें कहाँ नहीं हुई?

हुई हैं, और कांग्रेसने हमेशा ऐसे अपमानोंका सामना किया है। इसका कारण यह है कि ब्रिटिश भारतमें किसी भी अच्छे कामके लिए सविनय अवज्ञा की जा सकती है, पर देशी राज्योंमें ऐसा नहीं हो सकता। वहाँ तो कांग्रेस कमेटियोंको हमेशा राज्योंकी दयापर ही अपना निबाह करना पड़ता है; उदाहरणार्थ जैसे अफगानिस्तानमें कोई कमेटी हो तो वह केवल अफगानिस्तानकी सरकारकी दयापर ही अपना अस्तित्व कायम रख सकती है, वही स्थिति देशी राज्योंकी भी होगी। पर यह तो मेरा व्यक्तिगत विचार और व्याख्या है।

जब मैं भारत वापस आया उस समय मुझे तीन राज्योंकी ओरसे आमन्त्रण मिला था कि मैं वहाँ जाकर रहूँ और वहींसे देश-सेवाका कार्य करूँ। पर मुझे उनका आमन्त्रण अस्वीकार करना पड़ा।

पर हम कांग्रेससे कोई सक्रिय सहायता नहीं माँगते। हमें तो कांग्रेस के आश्रयमें रहकर अपना संगठन करना है। हमारी सहायता करने की जवाबदारी कांग्रेसपर रहेगी तो अवश्य पर हम उससे सहायता माँगेंगे नहीं।

यही बात है। आप सहायता माँगें या न माँगें, पर सहायता देनेकी जवाबदारी तो कांग्रेसके ऊपर रहती ही है, और फिर भी वह अपनी जवाबदारी पूरी नहीं कर सकती। कांग्रेस आपको जब कोई सक्रिय सहायता नहीं दे सकती, तो उसका आश्रय लेना व्यर्थ है। कांग्रेस-जैसी बड़ी संस्थाको यह सह्य नहीं कि इस तरह वह अपना उपहास होने दे। मुझे तो यह बात दीपककी तरह स्पष्ट दिखाई देती है। मालूम नहीं, देशी राज्योंके लोग इस बातको क्यों नहीं समझ पाते। आज तो कांग्रेस अच्छीसे-अच्छी सहायता यही कर सकती है कि वह इस भ्रमको दूर कर दे कि देशी राज्योंकी प्रजाकी वह सक्रिय मदद कर सकती है। इसका अर्थ स्वतः यह हुआ कि देशी राज्योंकी प्रजाको तमाम आन्तरिक सुधारोंके लिए अपने बल पर लड़ना सीखना है।

यह तो मैं अच्छी तरह समझ सकता हूँ। पर प्रस्ताव जिस रूपमें अन्तमें पास हुआ है उसे तो आप देखें। उसमें जो संशोधन किया गया है वह तो हास्यास्पद-सा है। हमें देशी राज्योंमें कमेटियाँ बनाने की इजाजत तो दे दी गई है, पर इन कमेटियोंको कोई काम नहीं करने दिया जायेगा। यह स्थिति विषम है।

हाँ, यह बात है तो सही। देशी राज्योंको सन्तोष देनेके लिए इतनी छूट दी गई है, पर मैं जो अर्थ करता हूँ उसके अनुसार तो यह छूट व्यर्थ है।

तब हमारी स्थिति क्या रहेगी? क्या हम कांग्रेसके सदस्य बनाना बन्द कर दें, और एक नयी राष्ट्रीय संस्थाका संगठन करना शुरू कर दें? उस संस्था को हम वर्त्तमान मर्यादाओंके अन्दर रहकर कांग्रेसके साथ जोड़ सकेंगे?

असलमें करना यह है कि आप लोग अपनी खुदकी संस्था बनायें। पर कांग्रेसके सदस्य आप बने रहें। कांग्रेसमें आप आयें और उसके साथ अपना संसर्ग बनाये रहें। पर आपका असली काम तो देशी राज्योंमें रहेगा। कांग्रेसके प्रस्तावमें कांग्रेस कमेटी बनाने की अनुमति-भर दी गई है। आपको देशी राज्योंमें कमेटियाँ बनाने की जरूरत नहीं। पर मेरी सलाहका कोई मूल्य नहीं। आपको तो कांग्रेस कार्य-समितिसे प्रामाणिक हिदायतें माँगनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ५-३-१९३८

४८९. तार: श्रीमती जॉर्ज जोजेफको

[५ मार्च, १९३८ या उसके पश्चात्][1]

परम दुःखद समाचार मिला। तुम बहादुरीसे काम लो और हर चीजमें ईश्वरका प्रेम देखो, यही चाहता हूँ। पूरा बिवरण भेजो। हम सबकी ओरसे प्यार।

अंग्रेजीकी नकलसे। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

४९०. चर्चा: सुभाषचन्द्र बोसके साथ

६ मार्च, [१९३८][2]

सुभाष बोस: बापू, क्या मैं आपसे एक सवाल पूछ सकता हूँ? बोर्डका[3] भावी कार्यक्रम क्या है?

[गांधीजी:] बोर्डको जो काम सबसे पहले और जल्दी करना है वह है शिक्षकोंके लिए पाठ्य पुस्तकें तैयार करना।

१. महादेव देसाईके नाम श्रीमती जॉर्ज जोजेफके ५ मार्च, १९३८ के निम्नलिखित तारके उत्तरमें भेजा गया था: "जोजेफकी दशा बिगड़ती जा रही है। बापूको सूचित करें।"

२. साधन-सूत्रमें इसे १९३८ के पत्रोंके साथ रखा गया है।

३. अखिल भारतीय शिक्षा बोर्ड।

इसके बाद, बोर्डको विभिन्न कांग्रेसी मन्त्रियोंसे सम्पर्क करके हर प्रान्तके लिए कार्यकी योजना तैयार करनी है, जिसमें वर्तमान मर्यादाओं और काम करने की क्षमताका खयाल रखकर चलना होगा।

तीसरे, बोर्डको अपने तैयार किये पाठ्यक्रमकी कसौटी करने के लिए स्वयं एक प्रयोग-केन्द्रका संचालन करना चाहिए, और उसमें जो अनुभव प्राप्त हो उसको ध्यानमें रखकर हर कदमपर स्वयं अपनी ही सिफारिशोंमें परिवर्तन करना चाहिए।

चौथी बात यह कि बोर्डको यथासम्भव अधिकसे-अधिक प्रशिक्षण-केन्द्र खोलने और उनका संचालन करना चाहिए। हर प्रशिक्षण विद्यालयसे दुहरे प्रयोजनकी सिद्धि होगी। वह न केवल भावी शिक्षकोंको प्रशिक्षित करेगा, बल्कि ऐसा हर विद्यालय बुनियादी शिक्षाके निदर्शन विद्यालयका काम करेगा।

सुभाष बोस : बोर्डका खर्च कैसे चलेगा?

[गां० :] हमें झोली फैलानी पड़ेगी। कांग्रेसी सरकारोंसे किसी प्रकारकी आर्थिक सहायताकी अपेक्षा करना मैं उचित नहीं मानता, क्योंकि उससे विरोधी पक्षको आलोचनाका अवसर मिलेगा।

सुभाष बोस : बापू, यह तो हुआ ग्रामीण बुनियादी शिक्षाकी समस्याके बारेमें। शहरी क्षेत्रोंमें बुनियादी शिक्षाके बारेमें आपका क्या सुझाव है? कुछ नगरपालिकाएँ — जैसे कलकत्ता और बम्बईकी — इस दिशामें कुछ काम कर रही हैं, और अपनी इस प्रवृत्तिको वे प्राथमिक शिक्षाके क्षेत्रमें लागू करना चाहेंगी। शहरोंमें प्राथमिक शिक्षाकी समस्याके सम्बन्धमें आपका क्या सुझाव है?

[गां० :] मेरे शिक्षा-दर्शनके अनुसार तो ग्रामीण और शहरी क्षेत्रोंकी बुनियादी शिक्षामें कोई अन्तर नहीं है। दोनों मामलोंमें उद्देश्य एक ही है — किसी उद्योगके द्वारा बुद्धिका विकास। जो प्रशिक्षण-पद्धति देहाती क्षेत्रोंके सम्बन्धमें विकसित की जायेगी वही शहरी क्षेत्रोंपर भी लागू होगी।

मैं निजी अनुभवसे यह जानता हूँ कि शहरी विद्यालयोंमें प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करके निकले हुए लोग किसी कामके नहीं होते, लेकिन फिलहाल मैं बोर्डकी शक्तिको विभाजित नहीं करना चाहता। अगर उसने देहाती शिक्षाकी समस्या हल कर ली तो दूसरी समस्या भी हल हो जायेगी। अगर ग्रामीण शिक्षापर दस वर्ष काम किया जाये तो तुम मान सकते हो कि ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रोंकी प्राथमिक शिक्षासे सम्बन्धित सम्पूर्ण समस्या हमारी पकड़में आ चुकी है।

सुभाष बोसने आगे पूछा कि क्या नगरपालिकाके किसी ऐसे प्रतिनिधिको, जिसे नगरपालिकाकी ओरसे दी जानेवाली शिक्षाका अनुभव हो, बोर्डका सदस्य नहीं बनाया जा सकता? अगर उसे बोर्डका सदस्य बना दिया जाता है और यदि वह चाहे तो शहरी क्षेत्रोंकी बुनियादी शिक्षाके प्रयोजनके लिए अ० भा० शि० बोर्डके निष्कर्षोंका उपयोग कर सकता है।

[गां० :] हाँ, ऐसा अवश्य किया जा सकता है। बोर्ड प्रातिनिधिक संस्था होगी। बोर्डके सभी सदस्य शहरोंके प्रतिनिधि हैं। सच्चे ग्रामीण सदस्य हमें कहाँ मिल सकते हैं?

अंग्रेजीकी नकलसे। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

४९१. तार: ग्लैडिस ओवेनको

[७ मार्च, १९३८][1]

ग्लैडिस ओवेन
विनोना बॅगलो
शोलापुर

१२ तारीखसे पहले किसी भी दिन आ जाओ। प्यार।

बापू

[अंग्रेजीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० १९४

४९२. पुर्जा: जमनालाल बजाजको

७ मार्च, १९३८

सुभाषबाबू कल एक बजे या तत्पश्चात जब चाहे आवें। साथका तार[2] भेज दिजीये। पैसे महादेवसे लिजीये।

बापु[3]

पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० १९४

१. इस तारका मसौदा जमनालाल बजाजको लिखे ७-३-१९३८ के पत्रके साथ संलग्न था; देखिए अगला शीर्षक।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

३. हस्ताक्षर गुजराती लिपिमें हैं।

४९३. पत्र : महादेव देसाईको

७ मार्च, १९३८

चि० महादेव,

इसके साथ सारी सामग्री भेज रहा हूँ। मेरा खयाल है कि मेरे संशोधनोंको पढ़ने मे दिक्कत पेश नहीं आयेगी। मणिलालको थोड़ा समय दूँगा। बाकी तो तुम जितना समय मणिलालको देते हो सो मैंने दिया, ऐसा मैं माने लेता हूँ।

गोलेका पत्र विनोदपूर्ण था। भणसालीने खाना शुरू कर दिया, यह जानते हो न? विजयाको नानावटीने काफी पत्र लिखे हैं। उन्हें बहुत चोट लगी है। कदाचित् आगामी सप्ताह आयेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५९२) से।

४९४. पत्र : मुहम्मद अली जिन्नाको

सेगाँव, वर्धा
८ मार्च, १९३८

प्रिय श्री जिन्ना,

पत्रके[1] लिए धन्यवाद। आशा करता हूँ अब आपकी तबीयत बिलकुल ठीक हो गई होगी।

आपके पत्रसे कुछ दुःखद स्मृतियाँ जाग उठी हैं। आपके पत्रमें उठाये गये विभिन्न विवादास्पद मुद्दोंके बारेमें कमसे-कम इस समय तो मैं कोई चर्चा नही करूँगा। इतना ही कहना काफी होगा कि आप जैसा चाहें मैं वैसा करने को तैयार हूँ। यदि आप सेगाँव नहीं आ सकते तो जब आप बम्बईमें हों उस समय अगर मेरा स्वास्थ्य ठीक रहा तो मैं खुशीसे वहाँ आ जाऊँगा। इस समय तो मुझे बंगाल जाना है, फिर कुछ समयके लिए उड़ीसा। इसमें यह पूरा महीना निकल जायेगा। अतएव हम अप्रैलमें ही मिल सकते हैं, उससे पहले नहीं।

आपके पत्रसे दो प्रश्न उठते हैं, जिनका उत्तर देना मुझे जरूरी लगता है। आप पूछते हैं कि क्या अब मुझे प्रकाश दीखने लगा है। मुझे बड़े खेदके साथ

१. देखिए परिशिष्ट १३।

'ना' कहना पड़ रहा है। यदि दिखा होता तो मैं डंकेकी चोट उसकी घोषणा करता। किन्तु उसके अभावके बावजूद मुझे वर्त्तमान कठिनाईको पार करने के छोटेसे-छोटे अवसरका भी लाभ उठाने में कोई अड़चन नहीं होगी।

आप आशा रखते हैं कि मैं "कांग्रेस तथा देश-भरके अन्य हिन्दुओंकी ओरसे" बोल सकूँगा। किन्तु मुझे लगता है कि मैं इस कसौटीपर पूरा नहीं उतर सकूँगा। आप जो अर्थ लेते हैं उस अर्थमें मैं न तो कांग्रेसका प्रतिनिधित्व कर सकता हूँ और न हिन्दुओंका। किन्तु एक सम्मानजनक समझौता कराने के लिए उनके ऊपर मेरा जितना भी नैतिक प्रभाव हो सकता है, उस सबका मैं इस्तेमाल कर सकता हूँ।[१]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १६-६-१९३८

४९५. पत्र : शारदा चि० शाहको

८ मार्च, १९३८

चि० शारदा,

मैं तुझे पहले लिखना चाहता था लेकिन न लिख सका। जहाँ रहना हमारा धर्म हो वहाँ हमें खुशीके साथ रहना चाहिए। इसीका नाम है श्रेय और प्रेयका मेल। इसे हासिल करने की तुझमें शक्ति है; इसका और अधिक विकास करना। अब तो जब सरस्वतीदेवी छोड़ें अथवा तबीयत बिगड़ती मालूम हो तभी आना। सितार [सीखने] की दिशामें कुछ हुआ?

तेरे विवाहके विचार तो मेरे मनमें आते रहते हैं। तूने उसकी चिन्ता मुझपर छोड़ दी है, इसलिए अब मुझे चिन्ता करनी ही होगी न? यदि मैं चिन्ता न करूँ और तू भी न करे तो कैसे काम चलेगा? तुझे तो चिन्ता करनी ही नहीं है। इसकी चर्चा तो मैंने हँसीमें और यह बताने के लिए की थी कि मैं भूला नहीं हूँ।

हकीमजी के साथ तेरी जो बातचीत हुई है वह तू लिखनेवाली थी; क्यों नहीं लिखी? काममें आलस्य मत करना।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९९०) से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला

१. इसके उत्तरमें जिन्नाने अपने १७-३-१९३८ के पत्रमें गांधीजी से बम्बईमें अप्रैलमें किसी समय मिलना स्वीकार कर लिया था।

४९६. पत्र : लक्ष्मीनारायण गाडोदियाको

८ मार्च, १९३८

भाई लक्ष्मीनारायणजी,

आपका पत्र मिला। शारदाको जब आप दोनों छुटी देंगे तब ही बुलाऊँगा। नैसर्गिक उपचारपर मेरा विश्वास है ही। लेकिन हमेशा योग्य उपचार हाथमें नहीं आते हैं। हकीमजी के ज्ञान[के] बारेमें मेरी पूर्ण श्रद्धा नहीं जमी है। मुझे तो ठीक ही रहता है।

दुग्धालय कैसे चलता है?

बापुके आशीर्वाद

जी० एन० ५६२६ की फोटो-नकलसे।

४९७. बातचीत: एक शान्तिवादी मित्रके साथ[1]

[१२ मार्च, १९३८ के पूर्व]

[गांधीजी:] अहिंसा-भावसे ओतप्रोत होनेके लिए हममें ईश्वरमें जीवन्त श्रद्धा होनी चाहिए। फलकी तनिक भी आशा किये बिना निरन्तर सेवा करते रहने से ही मनमें अहिंसा-भावका उदय होता है। इसमें मनुष्य सिर्फ अपना अर्पण करता चला जाता है और यह अपना पुरस्कार आप है; निष्काम भावसे की गई ऐसी सेवा केवल मित्रोंके लिए ही नहीं होती, बल्कि शत्रुओंके लिए भी होती है। अहिंसाकी यह अनिवार्य शिक्षा है। मुझे तो ईश्वरने इस मार्गपर दक्षिण आफ्रिकामें डाला, जहाँका वातावरण बहुत प्रतिकूल था। मैं ऐसे देशमें था जहाँ न तो किसी यूरोपीयसे और न किसी भारतीयसे ही मेरा परिचय था। मैं वहाँ वकालत करने के लिए गया था। किन्तु वहाँ सीखने को मिल गया मुझे यह शाश्वत नियम कि अन्याय और बुराईको दूर करने का एकमात्र उपाय कष्ट-सहन है। यही अहिंसाका सिद्धान्त है। इसमें हमें चाहे किसी भी व्यक्तिके हाथों मार पड़े, उसे हँसते-हँसते सहन करने के लिए तैयार रहना पड़ता है किन्तु हम कभी किसी व्यक्तिके अहितकी कामना नहीं करेंगे, उन लोगोंकी भी नहीं जिन्होंने हमारे साथ अन्याय किया है।

१. महादेव देसाईके "नोट्स" (टिप्पणियाँ) से उद्धृत।

इस समय अनेक लोग विश्व-शान्ति और शान्ति संघोंकी स्थापना करने की बात कर रहे हैं तथा इस आशयके प्रस्ताव पास कर रहे हैं। यह सब ठीक है। किन्तु यह सम्भवतः अहिंसा न हो। हिंसाकी सेना जितना जोखिम उठाती है, अहिंसाकी सेना भी उतना ही जोखिम उठाती है। फर्क केवल इतना ही है कि हिंसाकी सेना स्वयं आक्रामक न होने पर भी प्रत्याक्रमण कर सकती है, जबकि अहिंसाकी सेना प्रतिकारकी कामना किये बिना जोखिम उठाती है।

[शान्तिवादी :] लेकिन युद्धकी भावना धीरे-धीरे हममें घर कर रही है। इसका प्रतिरोध हम कैसे करें?

मैं जानता हूँ कि इंग्लैंडमें इसका प्रतिरोध करना आपके लिए कितना कठिन है। आप मुट्ठी-भर लोग है, फिर भी आपको आस्था और दृढ़ निश्चयके साथ इस समस्याका समाधान ढूँढ़ निकालना होगा। आपको मैं सलाह दूँगा कि अहिंसाके आचरणके सम्बन्धमें रिचर्ड ग्रेगकी जो पुस्तक[1] है, आप उसका अध्ययन करें। सच्चा शान्तिवादी हिंसा द्वारा प्राप्त शान्ति और व्यवस्थाका सुख भोगने से इनकार करेगा। जबतक हम शस्त्रास्त्रोंकी छत्रछायामें उगाये हुए अन्नका एक दाना भी खाते हैं तबतक, समझना चाहिए, हम हिंसामें भाग लेते हैं। जिस व्यक्तिको इस बातका एहसास हो जायेगा वह व्यक्ति अपने देशमें ही एक निष्कासित व्यक्ति तथा राजद्रोही बन जायेगा। किन्तु मनुष्यको अपनी [illegible] ही सब-कुछ करना चाहिए। अपने विचारोंके प्रति अडिग आस्था रखनेवाले थोड़े-से लोग भी सारे देशको काफी परेशान कर सकते हैं। किन्तु इसपर किस हदतक अमल किया जा सकता है, इसका निर्णय प्रत्येक व्यक्तिको स्वयं ही करना होगा।

इंग्लैंडमें हमारा शान्ति-आन्दोलन बढ़ता जा रहा है। लेकिन क्या हम केवल अधिकाधिक सदस्य ही बनाते चले जायें?

मुझे संख्यासे कोई मोह नहीं है। शान्ति-सेनामें लोगोंकी संख्या बड़ी हो लेकिन वे सब अहिंसाका मर्म न समझते हों तो उनपर वह सेना भरोसा नहीं करती। अतएव मैं तो इसी बातपर ध्यान दूँगा कि थोड़े-से लोग अहिंसाकी भावनासे ओतप्रोत हो जायें और भारीसे-भारी कष्ट सहन करना सीखें।

अमुक परिस्थितिमें क्या किया जाना चाहिए, यह तो हम प्रभु-कृपासे ही जान सकते हैं और उस कृपाको प्राप्त करने का उपाय है सच्चे मनसे ईश्वरसे प्रार्थना करना। हृदयसे की गई प्रार्थनाका तुरन्त उत्तर मिलता है। ऐसी प्रार्थना आत्माकी पीड़ा लिये हुए होती है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १२-३-१९३८

१. **द पॉवर ऑफ नॉन-वायलेंस।**

४९८. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

सेगाँव, वर्धा
१३ मार्च, १९३८

चि० कान्ति,

आजकल तो मैंने लिखना करीब-करीब बन्द कर दिया है। तेरे जैसोंको कभी-कभार एक-दो पंक्तियाँ लिख देता हूँ। तुझे तो बहुत दिनोंसे लिखने की इच्छा हो रही थी। सो आज लिख रहा हूँ। अ० स० के बारेमें तू एक छोरसे दूसरे छोरपर जा खड़ा हुआ है। यह हिंसा है। उसके साथ तू कोई वास्ता न रखे, यह बात तो समझमें आती है, लेकिन जहाँ वह हो वहाँ तू जा ही नहीं सकता; इसका क्या मतलब है? ऐसी कायरता किसलिए? जो दोष तू उसमें देखता है वे मुझे दिखाई नहीं देते। मुझे वह परेशान नही करती। उसमें बहुत गुण हैं। मैं उसका त्याग कैसे कर सकता हूँ? जब मैंने रामचन्द्रनसे पूछा तब उसे भी उसमें कोई दोष दिखाई नहीं दिया। तुझे अपनेमें धीरज और उदारताका विकास करना चाहिए। वह तेरे बारेमें कुछ पूछ नहीं सकती और मैं उससे कुछ कहता नही। इसका मतलब यह नहीं है कि वह तेरे बारेमें कुछ सोचती ही नहीं है। सरस्वती भी डरी हुई जान पड़ती है। तू मेरा विश्वास कर और शान्त हो; अस्वाभाविकताका त्याग कर। उड़ीसा जरूर आना।

प्रभा वहाँ नहीं आ सकती। जब तू मिलेगा तब समझाऊँगा। शेष महादेवसे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३३३) से; सौजन्य : कान्तिलाल गांधी

४९९. पत्र : शिवाभाई जी० पटेलको

सेगाँव
१३ मार्च, १९३८

चि० शिवाभाई,

मेरा खयाल है कि तुम मुझसे झूठी सान्त्वना की अपेक्षा नहीं करते। हीरा अपना कर्ज चुकाकर और अपना लेना पाकर चली गई है। उसमें दुःख किस बातका? तुम्हारा कर्त्तव्य स्पष्ट है। तुम्हें बालकका पालन-पोषण करना चाहिए और पुनर्विवाह करने का विचार तक मनमें नहीं आने देना चाहिए। यदि यह तुम्हारी शक्तिसे बाहर हो तो फिर तुमसे यथाशक्ति जो बन सके सो करना। अपने-आपको धोखा मत देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९५१८) से। सी० डब्ल्यू० ४३४ से भी; सौजन्य : शिवाभाई जी० पटेल

५००. पत्र : चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको

१४ मार्च, १९३८

प्रिय सी० आर०,

साथका पत्र[1] पढ़ो। मुझे तो नहीं लगता कि तुम अब भी बन्दियोंको रिहा करने से इनकार कर सकते हो। कैसे हो? मैं कल कलकत्ता जा रहा हूँ।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०६८) से।

१. गांधीजी को लिखे इस पत्रमें शामलालने लिखा था : "आपको यह सूचना देते हुए मुझे खुशी हो रही है कि सब आतंकवादी हिंसामें विश्वास छोड़ बैठे हैं। मेरी उनसे बातचीत हुई थी। वे कोई ढोंग नहीं कर रहे हैं। आपसे विनती है कि पंजाबकी जेलोंमें बन्द मद्रासके राजनैतिक बन्दियोंके विषयमें आप मद्रासके मुख्य मन्त्रीको लिखें। उन्हें तत्काल रिहा करने में उन्हें कोई संकोच नहीं होना चाहिए।"

५०१. पत्र : एन० आर० मलकानीको

सेगाँव, वर्धा
१४ मार्च, १९३८

प्रिय मलकानी,

तुम जो चाहते थे सो भेज रहा हूँ।[1] अपने लिए और देशके लिए जो सर्वोत्तम हो उसे ग्रहण करके शीघ्र वापस लौट आना।

तुम्हारा आधिकारिक पत्र मैं महावीरप्रसादको भेज दूंगा।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२८) से।

५०२. प्रमाणपत्र : एन० आर० मलकानीको

सेगाँव, वर्धा
१४ मार्च, १९३८

प्रोफेसर मलकानी गुजरात राष्ट्रीय विश्वविद्यालयके राष्ट्रीय महाविद्यालयमें पढ़ाते रहे हैं। आजकल वे भारतके तथाकथित अस्पृश्योंके लिए स्थापित दिल्ली उद्योग-मन्दिर के संचालक हैं। वे कुछ समयके लिए यूरोपकी यात्रापर जा रहे हैं। मित्रगण उनकी जो सहायता करेंगे उसके लिए मैं उनका आभार मानूंगा।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२९) से।

१. देखिए अगला शीर्षक।

५०३. पत्र : महादेव देसाईको

१४ मार्च, १९३८

चि० महादेव,

तुम्हारे लेखमें तो मैंने थोड़ी ही वृद्धि की है। क्या वह ठीक है? कलवाले लेख तो मैंने कल ही देख लिये थे। कहा जा सकता है कि इस बारके लेखोंमें मैंने कोई परिवर्तन नहीं किया है।

यहाँ तो हमने भूकम्पके धक्के महसूस नहीं किये। इसका कारण यह भी हो सकता है कि हम तो बराबर जमीनपर हैं और दीवारें भी कच्ची हैं। तथापि ऐसे भूकम्प स्थानीय होते हैं।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

प्यारेलाल और अन्य लोगोंने भूकम्प महसूस किया था।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५९३) से।

५०४. एक चर्चा[1]

[१५ मार्च, १९३८ या उसके पूर्व][2]

अपने एक मित्र और साथीसे हरिपुरा-कांग्रेसके बारेमें बातें करते हुए गांधीजी ने कहा कि महाकोशलमें जिनपर कांग्रेस-अधिवेशनकी जिम्मेदारी आयेगी उनकी जानकारी और लाभके लिए मैं जहाँतक हो सकेगा जल्दी ही अपने ये विचार बता दूँगा।

कांग्रेसका हरिपुरा-अधिवेशन सरदार और उनके सहायकोंकी महान् संगठनशक्ति और धनिक मित्रोंसे धन-संग्रह करने की उनकी योग्यताका ज्वलन्त प्रमाण है। लेकिन जिस पैमानेपर यह-सब किया गया है उसकी पुनरावृत्ति नहीं हो सकती, और न होनी ही चाहिए। पैसा पुष्कल हो, तब भी उसको खुले हाथों खर्च करना ठीक नहीं है। बिजली, मोटरों और मोटर-लारियोंके उपयोगके लिए तो आंशिक रूपमें मैं भी

१ और २. महादेव देसाईके "हरिपुरा नोट्स-५" (हरिपुरा-सम्बन्धी टिप्पणियाँ-५), १९-३-१९३८ से उद्धृत। स्पष्ट ही यह बातचीत १५ मार्चको गांधीजी के सेगाँवसे कलकत्ताके लिए प्रस्थान करने के पूर्व हुई होगी।

जिम्मेदार हूँ। देव और दास्तानेके[1] आग्रहपर फैजपुरमें मैंने इस बारेमें ढिलाई कर दी थी। सरदारकी अध्यवसायिताने यह स्पष्ट कर दिया कि गाँवमे होनेवाले कांग्रेस-अधिवेशनके लिए इन चीजोंका इस्तेमाल बिलकुल वाहियात है। जैसाकि होना चाहिए और सोचा भी गया था, उसके मुताबिक बजाय इनके कि कांग्रेस-शिविर गाँवका ही विस्तृत रूप मालूम पड़े, इन चीजोंके कारण वह बम्बईका ही एक छोटा संस्करण बन गया था।

वर्ग-विभाग फैजपुरमे भी था, पर हरिपुरामे तो वर्गीकरण बहुत अधिक हो गया था। हरिपुरामे नेता थे, मन्त्री थे, प्रतिनिधि थे, प्रेक्षक थे और ग्रामवासी थे—इतने सारे वर्ग थे। यह वर्गीकरण क्षेत्रानुसार नहीं, बल्कि छोटे-बड़ेके भेदके अनुसार किया गया था। कांग्रेस हमारे लिए राजनैतिक काशी या मक्का है। सालाना अधिवेशन कोई तमाशा या मेला नहीं है, बल्कि एक हज है, एक तीर्थ-यात्रा है, जिसमें राव और रंकके, विद्वान् और अनपढ़के, शहर-निवासी और ग्रामवासीके तमाम भेदभाव लुप्त हो जाते हैं। कार्य-समितिके सदस्योंको दूसरोंकी अपेक्षा अधिक सुविधाएँ क्यों प्राप्त हों? ग्रामवासियोंके भोजनसे उनका भोजन भिन्न प्रकारका क्यो हो? क्या किसी ग्रामवासीके, कार्य-समितिका सदस्य हो जाने पर उसे भिन्न प्रकारका खाना चाहिए और भिन्न प्रकारका मकान चाहिए? या कोई प्रतिनिधि यदि मन्त्री हो तो उसके लिए ऐसा झोंपड़ा क्यों होना चाहिए जिसमे कई कमरे हो? हाँ, कोई बीमार हो, या वह कोई खास तरहका खाना खानेका आदी हो तो बात अलग है। ऐसे आदमी अपना इन्तजाम या तो खुद कर लें, या पहलेसे कहकर स्वागत-समितिसे अपने लिए खास इन्तजाम करा लें। सच तो यह है कि जिनका शरीर कमजोर हो उन्हें कांग्रेसमें जाना ही नहीं चाहिए, अगर कांग्रेसके हकमें उनकी उपस्थिति अनिवार्य ही हो तो बात दूसरी है। ऊँच-नीचकी भावनाके आधारपर विभिन्न शिविरोंका यह विभाजन कांग्रेसमे आनेवाले ग्रामवासियोंके आगे एक बुरा उदाहरण रखता है। कांग्रेस-के व्यवस्थापकोंको तो ग्रामवासियोंको खास प्रयत्न करके यह दिखाना चाहिए कि यहाँ न कोई राजा है, न कोई रंक, बल्कि सब बराबर हैं। अगले साल अगर ये कृत्रिम भेद दूर हो जायेंगे तो स्वागत-समितिका बहुत-कुछ पैसा बच जायेगा।

बिजलीकी रोशनीकी बिलकुल जरूरत नहीं है। आशा हमे यह करनी चाहिए कि प्रेक्षक अपनी-अपनी लालटेनें लेकर आयेंगे। स्वागत-समिति सिर्फ उतनी ही रोशनी का प्रबन्ध करे जितनी कांग्रेसका काम चलाने और शिविरकी हिफाजतके लिए जरूरी हो। आशा यह रखी जाये कि साँझ पड़ने के बाद ज्यादा काम होना ही नही है।

मोटरें और मोटर-लारियाँ एक बबाल हैं, ग्रामवासियोंके लिए एक बुरी मिसाल हैं, शान्तिमें बाधा डालती हैं, और इनसे कामके ठीक तरहसे होनेमें रुकावट पैदा होती है, और गर्द इनसे इतनी उड़ती है कि कुछ पूछिए नहीं। रेलवे स्टेशनसे दस या दस मीलसे कमका फासला कोई ज्यादा नही है। यह दूरी पैदल चलकर या बैल-

१. विट्ठल वी० दास्ताने।

गाड़ियोंपर तय की जानी चाहिए। और कांग्रेस-शिविरके अन्दर तो किसी सवारीके जानेकी इजाजत होनी ही नहीं चाहिए, वहाँ तो सब लोग पैदल ही चलें।

जहाँतक हो सके, कांग्रेसके लिए ऐसी समतल चौकोर जगह चुनी जाये, जहाँ शिविरके एक सिरेसे दूसरे सिरेके बीचका फासला ज्यादा लम्बा न हो। जिस जगह-पर खुला अधिवेशन रखा जाये उसके चारों ओर कांग्रेस-नगर बसाया जा सकता है।

रसोई सबके लिए एक ही होनी चाहिए। वहाँसे हर चीज निर्धारित मूल्यपर दी जानी चाहिए। लोगोंको भोजन रसोईमें नहीं, बल्कि अपने-अपने रहने के स्थानोंमे ले जाकर करना चाहिए।

यदि इन पूर्व-चेतावनियोंपर ध्यान न दिया गया तो बहुत मुमकिन है कि कांग्रेसकी सारी कल्पना ही विफल हो जाये, क्योंकि कल्पना तो इसके मूलमें यह है कि ग्रामवासियोंको कांग्रेससे कुछ शिक्षा मिले और शहरी तथा देहाती लोगोंके बीच एक सजीव और राष्ट्रीय सम्पर्क स्थापित हो जाये।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १९-३-१९३८

५०५. पत्र : शारदा चि० शाहको

कलकत्ता
१६ मार्च, १९३८

चि० शारदा,

हम आज कलकत्ता पहुँचे। तेरा काम खूब जोरोंसे चल रहा होगा। दर्दमें कोई फर्क पड़ा? क्या खाती है? कुछ पढ़ती है क्या? सितारका क्या हुआ?

मैं ठीक हूँ। रास्तेमें लोगोंने काफी परेशान किया।

मेरा यहाँका पता निम्नलिखित है: मार्फत सुभाष बाबू, कांग्रेस-अध्यक्ष, वुडबर्न पार्क, कलकत्ता।

हम यहाँसे २४ तारीखको डेलांग, उड़ीसा जायेंगे। वहाँ गांधी सेवा संघका सम्मेलन हो रहा है। वहाँ ३१ तारीख तक रहना पड़ेगा। साथमें प्यारेलाल, महादेव, कनु और सुशीला हैं।

तेरा एक पत्र तो मुझे यहीं मिलना चाहिए और दो-तीन डेलांगमें।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९९१) से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला

५०६. बातचीत : हरिजनोंके साथ[1]

कलकत्ता
१८ मार्च, १९३८

कांग्रेसको आज बंगालमें बहुमत प्राप्त नहीं है, लेकिन एक-न-एक दिन वह अवश्य सत्तामें आयेगी, क्योंकि उसका कार्यक्रम इतने व्यापक आधारपर आधारित है कि वह सभी दलोंको अपनी ओर आकृष्ट कर सकती है।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १९-३-१९३८

५०७. बातचीत : कृषक प्रजा दलके सदस्योंके साथ[2]

कलकत्ता
१९ मार्च, १९३८

कहा जाता है, कृषक दलके नेताओंने महात्मा गांधीके साथ अपनी बातचीतके दौरान यह बताया कि वे चाहते हैं, बंगालकी राजनीतिक स्थितिमें परिवर्तन हो। उन्होंने यह भी कहा कि वे विधान-मण्डलमें कांग्रेस दलके साथ मिलकर काम करना चाहते हैं, बशर्ते कि प्रान्तके प्रशासनका संचालन विशुद्ध राष्ट्रीय और आर्थिक आधार पर हो।

महात्मा गांधीने कहा कि आप लोग यह समझ लें कि बंगाल आनेके पीछे मेरा मुख्य उद्देश्य राजनीतिक बन्दियोंको रिहा करवाना है और मैं स्थानीय राजनीति में कोई भाग नहीं लेना चाहूँगा। तथापि, महात्मा गांधीने दलके सदस्योंको बताया कि डेलांगमें गांधी सेवा संघके वार्षिक अधिवेशनमें भाग लेनेके बाद उनका इरादा पहली अप्रैलको वापस कलकत्ता लौटने का है। उन्होंने कहा कि मैं अपनी इस कलकत्ता-यात्राके दौरान अपना सारा ध्यान नजरबन्दों और राजनीतिक बन्दियोंको रिहा करवाने में लगाना चाहता हूँ। लेकिन डेलांगसे लौटने के बाद मैं अपना सारा समय

१. कांग्रेसमें शरीक होनेकी गांधीजी की अपीलके आधारपर अनुसूचित जातियोंके कुछ सदस्योंने उनसे पूछा था कि बंगालमें तो सत्ता कांग्रेसके हाथोंमें नहीं है, इसलिए अगर हम उसमें शामिल हो जायें तो हमारे राजनीतिक एवं आर्थिक हितोंकी रक्षा कैसे होगी।

२. बंगाल विधानसभाके २० सदस्योंने और विधान-परिषद्के दो सदस्योंने दोपहरको गांधीजी से लगभग एक घण्टे तक बातचीत की थी।

और शक्ति बंगालकी उन विशिष्ट राजनीतिक समस्याओंको सुलझाने में लगाऊँगा जिनकी ओर मेरा ध्यान पहले ही आकृष्ट किया जा चुका है।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, २०-३-१९३८

५०८. हमारी असफलता

[२२ मार्च, १९३८ के पूर्व][1]

कांग्रेसके मुख्यालय इलाहाबादमें साम्प्रदायिक दंगा होने और उसके लिए पुलिस ही नहीं बल्कि फौजको भी बुलाने की जरूरत पड़ने से मालूम होता है कि कांग्रेस अभी इस योग्य नहीं हुई है कि ब्रिटिश सत्ताका स्थान ले सके। यह नग्न सत्य चाहे जितना कटु लगे, अच्छा यही है कि हम इसे स्वीकार करके इसका सामना करें।

कांग्रेस जो थोड़े-से लोग इसके सदस्य हैं, उन्हींका नहीं सारे भारतका प्रतिनिधित्व करने का दावा करती है। जो लोग इसके विरोधी हैं और जिनका बस चले तो इसे कुचल भी डालें, उनका भी इसे प्रतिनिधित्व करना चाहिए। जबतक हम इस दावेको सिद्ध न करें तबतक हम ऐसी स्थितिमें नहीं आ सकते कि ब्रिटिश सरकारको हटाकर स्वाधीन राष्ट्रके रूपमें अपना काम चला सकें।

ब्रिटिश शासनको चाहे हम हिंसासे हटाना चाहें या अहिंसासे, यह बात तो दोनों ही सूरतोंमें लागू होती है।

बहुत सम्भव है कि जब ये पंक्तियाँ प्रकाशित होंगी तबतक इलाहाबाद तथा अन्य स्थानोंमें शान्ति स्थापित हो चुकी होगी। मगर एक संस्थाके रूपमें कांग्रेस सम्पूर्ण रूपसे ब्रिटिश सत्ताका स्थान लेनेके लिए पूरी तरह योग्य है या नहीं, इस बातकी जाँच-पड़ताल करने में हमें उससे कोई मदद नहीं मिलेगी।

कोई भी कांग्रेसी गम्भीरताके साथ इस बातमें सन्देह नहीं करेगा कि इस समय कांग्रेस ऐसी स्थितिमें नहीं है कि यदि उससे कहा जाये तो वह इस दायित्वका ठीक प्रकारसे निर्वाह कर सके। अगर उसमें ऐसी सामर्थ्य हो तो वह इसकेलिए किसीके कहने की प्रतीक्षा नहीं करेगी। लेकिन हरएक कांग्रेसीका यह विश्वास है कि कांग्रेस तेजीके साथ ऐसी संस्था बन रही है। हरिपुराकी ज्वलन्त सफलताको इस बातके अत्यन्त ठोस सबूतके रूपमें पेश किया जायेगा।

ये दंगे और दूसरी चन्द बातें ऐसी हैं कि हमें तनिक ठहरकर यह सोचना चाहिए कि क्या सचमुच कांग्रेसका विकास हो रहा है और वह अधिकाधिक शक्ति प्राप्त करती जा रही है? मुझे यह मानना ही पड़ेगा कि यह दावा करने का अपराधी मैं ही हूँ। क्या ऐसा करके मैंने जरूरतसे ज्यादा जल्दबाजी की है?

१. "बातचीत: कार्यकर्त्ताओंके साथ", २२-३-१९३८ में इस लेखके उल्लेखके आधारपर।

मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि कांग्रेसका जो अद्भुत व्यापक विकास हुआ है वह उसके द्वारा अहिंसाकी नीतिकी स्वीकृति और, चाहे जितना अपूर्ण, पालन है। लेकिन अब कांग्रेसको अहिंसाके स्वरूपपर विचार करने का वक्त आ गया है। यह अहिंसा कमजोर और असहायकी अहिंसा है या बलवान और सशक्तकी? अगर कमजोरकी हो तो यह हमें अपने ध्येयतक कभी नहीं पहुँचायेगी, और यदि लम्बे समयतक इसका पालन किया गया तो हमें हमेशाके लिए स्वराज्यके अयोग्य बना देगी। क्योंकि कम-जोर और असहाय लोग तो व्यवहारमें इसीलिए अहिंसक बनते हैं कि इसके सिवा वे कुछ कर ही नहीं सकते; लेकिन वस्तुतः उनके दिलमें हिंसा समाई रहती है और उसके प्रदर्शनके लिए वे केवल अवसरकी प्रतीक्षामें रहते हैं। अतः कांग्रेसियोंके लिए यह आवश्यक है कि वे व्यक्तिगत और सामूहिक रूपसे इस बातकी जाँच करें कि उनकी अहिंसा किस किस्मकी है। अगर उसका मूल वास्तविक शक्तिमें न हो, तो कांग्रेसके लिए सबसे अच्छी और ईमानदारीकी बात यह होगी कि वह इस बातकी स्पष्ट घोषणा करके अपने व्यवहारमें आवश्यक परिवर्तन करे।

अबतक, यानी सत्रह साल तक अहिंसापर अमल कर लेनेके बाद कांग्रेसको इतना समर्थ तो हो ही जाना चाहिए कि वह कुछ हजार नहीं, बल्कि लाखों ऐसे स्वयंसेवकोंकी अहिंसक सेना खड़ी कर सके जो उन सब अवसरोंपर काम आ सके जिनके लिए पुलिस और फौजकी जरूरत पड़ती है। इस प्रकार हमारी स्थिति ऐसी होनी चाहिए कि शान्ति-स्थापनाके लिए मरनेवाले एक वीर पशुपतिनाथ गुप्त[1] ही नहीं, बल्कि सैकड़ों लोग सामने आ सकें। हथियारबन्द सैनिकोंके विपरीत, एक अहिंसक सेना न केवल दंगेके वक्त, बल्कि शान्तिके समय भी काम करती है। ये सैनिक बराबर ऐसी रचनात्मक प्रवृत्तियोंमें लगे रहेंगे जो ऐसे दंगोंकी सम्भावना सहज ही समाप्त कर देती हैं। इस सेनाका कर्तव्य यह होगा कि वह आपसमें झगड़नेवाली जातियोंके बीच मेल-जोल पैदा करने के हर अवसरका लाभ उठाये, शान्तिके लिए प्रचार करे और ऐसी प्रवृत्तियोंमें लगी रहे जो उसे अपने मुहल्ले या क्षेत्रके हरएक स्त्री-पुरुष, बच्चे-बूढ़ेके सम्पर्कमें लाये। ऐसी सेनाको सदा हर प्रकारकी आपात स्थितिका सामना करने के लिए तैयार रहना चाहिए और भीड़के क्रोधको शान्त करने के लिए चाहे जितने प्राणोंकी बलि देनेको तत्पर रहना चाहिए। ऐसी कुछ सौ या कुछ हजार निर्दोष मौतें इस तरहके दंगोंको हमेशाके लिए समाप्त कर देंगी। जान-बूझकर भीड़के क्रोधका शिकार होनेवाले कुछ सौ तरुण स्त्री-पुरुषोंकी आहुति ऐसे पागलपनका मुकाबला करने के लिए पुलिस और सेनाकी शक्तिके प्रदर्शन और प्रयोगकी अपेक्षा हर हालतमें एक सस्ता और बहादुराना उपाय होगा।

यह कहा जाता है कि जब हम स्वाधीनता प्राप्त कर लेंगे तब दंगे तथा ऐसी अन्य बातें नहीं होंगी। लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि स्वतन्त्रताकी लड़ाईके दौरान

१. किन्तु २-४-१९३८ के **हरिजन**में महादेव देसाईने लिखा है कि पशुपतिनाथ गुप्त यद्यपि छुरेके प्रहारसे गम्भीर रूपसे घायल हो गये थे, लेकिन अब उनकी स्थितिमें सन्तोषजनक सुधार है।

अगर हम अहिंसात्मक कार्यके तत्त्वको अच्छी तरह समझकर हरएक कल्पनीय परिस्थितिमें उसका इस्तेमाल नहीं करते तो हमारी यह आशा थोथी ही साबित होगी। जिस हदतक कांग्रेसी मन्त्रियोंको पुलिस या फौजका सहारा लेना पड़ा है, उस हदतक मेरी रायमें, हमें अपनी असफलता मंजूर करनी ही चाहिए। दुर्भाग्यवश यह बिलकुल सच है कि मन्त्रियोंने ऐसी परिस्थितियोंमें जो-कुछ किया उसके सिवा वे कुछ कर ही नहीं सकते थे। अतः मेरी ही तरह अगर हरएक कांग्रेसी और कांग्रेस कार्य-समिति भी यह सोचती हो कि हम असफल हुए हैं, तो मैं चाहूँगा कि वे इस बातपर विचार करें कि हम असफल क्यों हुए।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २६-३-१९३८

५०९. पत्र : शारदा चि० शाहको

वुडबर्न पार्क, कलकत्ता

[२२ मार्च, १९३८ या उसके पूर्व][1]

चि० शारदा,

मैं मूर्खतावश अपने साथ स्याही नहीं लाया इसलिए पेंसिलसे लिख रहा हूँ। उम्मीद है, तू मेरी लिखावट पढ़ सकेगी।

तू वहाँ निश्चिन्त होकर रहना। मेरा साथ तो अब कहाँ छूटनेवाला है? और तू मेरा क्रोड़ छोड़कर कहाँ जानेवाली है? विवाह करने के बाद भी तू मुझे छोड़ेगी थोड़े ही? तुझे चिमनलालने तो मुझे सौंप ही दिया और फिर शकरीबहनने भी हरिपुरामें सौंप दिया। यह जरूर है कि आजकल मैं घूमता ही रहता हूँ इसलिए तुझे मेरा सान्निध्य नहीं मिल सकता और तुझे साथ ले जानेका तो कोई प्रसंग ही उपस्थित नहीं होता।

तुझे पुस्तकें मिल गई हैं, यह बात मैं ब्रजकृष्ण और देवदासको भी लिख रहा हूँ। तुझे संकोच होता है, यह मैं समझता हूँ। तुझे थोड़ा-बहुत संगीत सीखने को मिलता है, यह अच्छी बात है।

तुझे दस्त हो जायें, इसमें परेशान हो उठने की कोई बात नहीं। खानेमें सबसे बड़ा ध्यान यह रखना चाहिए कि उतना ही खाना चाहिए जितना हजम हो सके। इसलिए यदि कभी अपथ्य भोजन ले भी लिया जाये तो उससे बहुत नुकसान होनेकी सम्भावना नहीं है। कच्चे चनोंके बारेमें मुझे शक है। लेकिन यदि तू उतने चने

१. गांधीजी २४ मार्च, १९३८ को डेलांगके लिए रवाना हुए और चूँकि उन्होंने यह न कहकर कि वे कल रवाना होनेवाले हैं यह कहा कि वे २४ तारीखको जा रहे हैं, इसलिए बहुत सम्भव है कि यह २३ तारीखको न लिखा गया हो।

खाती है जितने हजम हो सकते हों तो उसमें कोई हर्ज नहीं, यही बात वेरोंपर भी लागू होती है।

मौलवी साहब आते हैं क्या? मुझे तो उनका कोई पत्र नहीं मिला। मैं २४ तारीखको डेलांग, उड़ीसा जा रहा हूँ। वहाँसे पहली तारीखको वापस यहीं आ रहा हूँ। मैं ठीक हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

क्या मेरी . . .[1] की अनुपस्थितिमें भी तू रोज इसीका इस्तेमाल करती है?

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९७६) से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला

५१०. पत्र : मीराबहनको

कलकत्ता
२२ मार्च, १९३८

चि० मीरा,

मूर्खतावश मैं तो दावात लाया नहीं और कनुमें तुम्हारे-जितनी समझदारी और सावधानी नहीं है। इसलिए मैं तुम्हें पेन्सिलका लिखा पत्र ही दे सकता हूँ।

नहानेका बरतन बहुत उपयोगी रहा।[2] तुमने सावधानी न बरती होती तो कनुकी लापरवाहीके कारण वह मेरे साथ नहीं आया होता। कनुका तो अभी निर्माण हो रहा है।

मेरी तबीयत सचमुच असाधारण रूपसे अच्छी है। एक भले आदमीके प्रेमके कारण मैंने एक प्रयोग करने की जोखिम उठाई है। इससे रक्तचापमें गड़बड़ हो गई है, मगर मुझे उम्मीद है कि वह आज काबूमें आ जायेगा। सुशीला चाहेगी तो उस प्रयोगका वर्णन करेगी।

मुझे लगता है कि सेगाँवसे बाहर रहने की मीयाद शायद एक सप्ताह बढ़ जायेगी। मुझे कार्य-समितिकी बैठकके लिए कलकत्ता वापस आना पड़ेगा। तुम्हें अशान्त हरगिज नहीं होना चाहिए। अपनेको ईश्वरकी इच्छापर छोड़ दो। जब तुम्हें मेरे साथ लाना उपयोगी होगा, तुम जरूर आओगी, और अगर मैं कहीं महीनोंके लिए जाऊँगा

१. यहाँ एक शब्द अस्पष्ट है।

२. **बापूज लेटर्स टु मीरा**में मीराबहन कहती हैं: "यह नहाने का टीनका बरतन था। यात्राके दौरान नहाने का बड़ा बरतन शायद सुलभ न हो, इसलिए बापू यात्रामें इसे साथ ले जाते थे। उनके रक्तचापके उपचारमें गरम पानीमें लेटना भी शामिल था।"

तब तो तुम बेशक मेरे साथ रहोगी। आशा है, तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा होगा। सलादकी पत्तियोंका क्या हाल है?

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३९७) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९९९२ से भी

५११. पत्र : अमृतकौरको

कलकत्ता
२२ मार्च, १९३८

मूर्खा रानी,

या तो मैं पेंसिलसे लिखूँ या बिलकुल भी नहीं। कनु दावात नहीं लाया और मेरी मूर्खता ही कहो मैंने भी फिक्र नहीं की। पासमें कोई फाउण्टेन पेन नहीं है और इस घरमें साधारण कलम अथवा स्याही भी नहीं है। यह तो केवल कामकाजी पत्र है; अधिक लिखने का समय नहीं है।

मध्य प्रान्तमें जगह खाली होनेकी सम्भावना नहीं है। किन्तु मेरी सलाह यह है कि तुम [कांग्रेस] अध्यक्ष तथा विभिन्न मुख्य मन्त्रियोंको एक सामान्य पत्र लिखो और उसमें ऐसी महिलाओंके नाम बताओ जो तुम्हारे विचारसे जिम्मेदारीका पद सँभालने के योग्य हों। और अध्यक्षके नाते इतनेसे तुम्हारा काम खत्म हो जाना चाहिए।

अब रही दिल्लीकी बात, तो जहाँतक ईमानदारीका सम्बन्ध है, ब्रजकृष्णको सोनेसे तोला जा सकता है। लेकिन तथ्यों और घटनाओंके बारेमें उसका जो विश्लेषण होता है उसे मैं अधिक महत्त्व नहीं देता। मगर अब चूँकि सरदार और शंकरलाल वहाँ हैं, इसलिए सब ठीक हो जायेगा।

मेरा स्वास्थ्य अच्छा है, किन्तु मैंने एक प्रयोग करके कुछ बिगाड़ लिया है। उसके बारेमें मैं तुम्हें अवश्य लिखूँगा। यहाँके कार्यके विषयमें मैं तुम्हें निश्चित रूपसे कुछ नहीं कह सकता।

स्नेह।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८४९) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ७००५ से भी

५१२. बातचीत: साथी कार्यकर्त्ताओंके साथ[1]

[२२ मार्च, १९३८][2]

मैं वह लेख[3] लिखे बिना रह नहीं सकता था। मैं चाहता हूँ कि आप उसे पढ़ें। मेरे लिए यह शर्मकी बात है कि हमारे मन्त्रियोंको पुलिस तथा सेनाकी सहायता लेनी पड़ी और विरोधी पक्षके भाषणोंके जवाबमें उन्हें जैसी भाषाका प्रयोग करना पड़ा उसके लिए भी मैं शर्मिन्दा हूँ। मुझे ऐसा लगता है मानों कांग्रेसकी हार और ब्रिटेनकी जीत हो गई है। ऐसे अवसरोंपर हमारी अहिंसा क्यों बेकार हो जाती है? क्या वह कमजोर लोगोंकी अहिंसा है? हमको गुण्डोंसे भी विचलित होकर यह नहीं कहना चाहिए कि हम उन्हें फाँसीपर लटका देंगे या आवश्यक हुआ तो गोलीसे उड़ा देंगे। वे भी हमारे देशवासी हैं। यदि वे हमें मार डालना चाहें तो हमें उन्हें ऐसा करने देना चाहिए। संगठित हिंसाका मुकाबला दुर्बलकी अहिंसासे नहीं, बल्कि बहादुरसे-बहादुर लोगों द्वारा बरती जानेवाली अहिंसासे ही किया जा सकता है। . . .[4] आप कहेंगे कि हमने काफी हदतक अहिंसाका पालन किया तो है। हम सविनय अवज्ञा आन्दोलनके दौरान अहिंसक रहे, हमने लाठियोंकी बौछार सही और उससे भी बढ़कर अन्य कष्ट सहे। मेरा उत्तर है, हाँ, हमने यह सब तो जरूर किया, लेकिन पर्याप्त मात्रामें नहीं। हम दांडी-कूचके[5] अन्तमें स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं कर सके, क्योंकि हमारी अहिंसा शूरतम लोगोंकी विशुद्ध अहिंसा नहीं थी। हमने जो कष्ट-सहन किया उसके फलस्वरूप हम कई कदम आगे तो जरूर बढ़े, किन्तु हममें हिंसा छिपकर बैठी रही। इसी कारण १९३४ में मुझे पटनामें वह वक्तव्य देना पड़ा।[6] और मुझे विश्वास है कि यदि मैंने सविनय अवज्ञा आन्दोलन स्थगित करने की सलाह न दी होती तो हमारा नैतिक बल बिलकुल टूट गया होता। तबसे हम एक-एक कदम करके आगे बढ़ते जा रहे हैं। . . .[7] किन्तु अब गहन आत्म-परीक्षण करने का समय आ गया है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २-४-१९३८

१. यह महादेव देसाईके "नीड फॉर सेल्फ-एक्जामिनेशन" (आत्म-परीक्षणकी आवश्यकता) शीर्षक लेखसे लिया गया है।

२. महादेव देसाईके अनुसार यह बातचीत गांधी सेवा संघके २५ तारीखको आरम्भ होनेवाले वार्षिक अधिवेशनके तीन दिन पहले हुई थी।

३. देखिए "हमारी असफलता", पृ० ४५०-५२।

४. साधन-सूत्रके अनुसार।

५. १९३० में; देखिए खण्ड ४३।

६. देखिए खण्ड ५७, पृ० ३७८-८१।

७. साधन-सूत्रके अनुसार।

५१३. प्रस्तावना[1]

कलकत्ता
२४ मार्च, १९३८

सर अब्दुल्ला सुहरावर्दी द्वारा संकलित पैगम्बरके वचनोंको मैंने काफी रुचिसे पढ़ा है और मुझे उनसे बहुत-सी बातें जानने को मिली हैं। पैगम्बरके ये वचन न केवल मुसलमानोंकी, बल्कि समस्त मानव-जातिकी अमूल्य निधि हैं।

मैं तो संसारके सभी महान् धर्मोंकी सत्यतामें विश्वास रखता हूँ। जबतक हम अन्य धर्मोंको न केवल सहन करना, बल्कि अपने धर्मके समान उनका आदर करना भी नहीं सीख लेते तबतक इस पृथ्वीपर स्थायी रूपसे शान्ति स्थापित नहीं हो सकती। मानव-जातिके विभिन्न गुरुओंके वचनोंका आदर-भावसे अध्ययन करना ऐसे पारस्परिक सम्मानकी दिशामें एक कदम उठाना है।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
द सेइंग्स ऑफ मुहम्मद

५१४. पत्र: मुहम्मद अली जिन्नाको

सेगाँव, वर्धा [के पतेपर]
२४ मार्च, १९३८

प्रिय श्री जिन्ना,

आपके पत्रके लिए बहुत धन्यवाद। सेगाँव पहुँचने का अवसर मिलते ही मैं आपसे मिलने बम्बई आऊँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १६-६-१९३८

१. **सेइंग्स ऑफ मुहम्मद**की।

५१५. एक अपील[1]

कलकत्ता
२४ मार्च, १९३८

नजरबन्दों और राजनीतिक कैदियोंकी रिहाईके बारेमें जो बातचीत चल रही है, मुझे दुःख है कि मुझे उसे बीचमें ही रोकना पड़ रहा है, क्योंकि पूर्वनिश्चित कार्यक्रम के अनुसार मेरा डेलांग जाना जरूरी है। उम्मीद है कि मैं १ अप्रैलको वापस लौट आऊँगा और बातचीत फिर से शुरू कर दूंगा। मैं कार्यकर्त्ताओं और जनतासे अनुरोध करूँगा कि बातचीतके जारी रहते हुए वे किसी प्रकारका प्रदर्शन अथवा सभा आदि न करें। नजरबन्दों और कैदियोंसे भी मैं अनुरोध करूँगा कि वे धैर्यसे काम लें और यकीन रखें कि मैंने उनकी वांछनीय रिहाईका जो वचन दिया है उसे पूरा करने के लिए कोई कोशिश उठा नहीं रखूँगा।

[अंग्रेजीसे]
अमृतबाजार पत्रिका, २५-३-१९३८

५१६. तार : अमतुस्सलामको

बिरबोई
२५ मार्च, १९३८

अमतुल सलाम
मगनवाड़ी, वर्धा

तू निश्चय ही बम्बई जा सकती है।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०७) से।

१. गांधीजीने रातके आठ बजे कलकत्तासे डेलांगके लिए रवाना होनेके पहले यह अपील जारी की थी।

५१७. भाषण : ग्रामोद्योग प्रदर्शनीमें[1]

बिरबोई
२५ मार्च, १९३८

मेरी आवाज वहाँपर पहुँच सकती है? अगर पहुँच सकती है तो अपने हाथ ऊँचे करके मुझे बताइए। उधर जो खड़े हैं, वे भी सुन सकते हैं? (लोग हाथ ऊँचे करते हैं।) अच्छा अब चंद मिनटोंके लिए शांत रहिए। मेरी ऐसी शक्ति नहीं है कि आप लोगोंको ज्यादा कह सकूँ। आप जानते हैं कि भारतवर्षमें यह उड़ीसा मेरी प्रियतम भूमि है। जब मैं भारतवर्षमें आया, तब उड़ीसाकी कंगालियतका हाल सुना। अकालके हाल भी सुने। कुछ पैसे इकट्ठे करके ठक्कर बापाको यहाँ भेज दिया। वे इस पीड़ित प्रांतके सेवकके रूपमें आये, और उन्होंने अकाल-कष्टनिवारणके कामको संगठित किया। मुझे भी लगा कि अगर मैं उड़ीसाकी थोड़ी-बहुत सेवा कर सकूँ तो ऐसा करके मैं भारतकी ही सेवा करूँगा। इस तरह उत्कल मेरे लिए यात्राका एक धाम बन गया। इसलिए नहीं कि यहाँ जगन्नाथजी का एक विशाल मंदिर है। वह तो मेरे लिए खुला नहीं है, और इसका कारण यह है कि इसके दरवाजे हरिजनोंके लिए बंद हैं। मेरे लिए तो यह यात्रा-धाम इसलिए बना कि मैंने अस्पृश्यता-निवारणके पवित्र कार्यके लिए उड़ीसामें प्रवास करनेका एक नया ही तरीका सोचा था। मैंने सुन रखा था कि जो भाई अपनेको सनातनी मानते हैं वे मेरे अस्पृश्यता-निवारणके कार्यसे बहुत नाराज हैं। और वे हिंसात्मक तरीकोंसे इसे भंग करनेका प्रयत्न भी करना चाहते हैं। मैंने अपने दिलमें कहा कि अगर उनके मनमें सचमुच ऐसी बात है, तो मुझे रेलगाड़ी और मोटरकी मुसाफिरी छोड़कर पैदल ही प्रवास करके उनका कार्य सरल बना देना चाहिए। तीर्थयात्री भी तो मोटरों और रेलगाड़ियोंपर यात्रा नहीं करते। वे पैदल जाते हैं और ईश्वरका ध्यान करते हैं। यात्रामें तीर्थयात्रीकी जबानपर हमेशा भगवान्का नाम रहता है, और संसारके जंजालको भूलकर वे जगन्नाथके ध्यानमें अर्थात् जगत्की सेवामें मस्त रहते हैं। रेलयात्रामें इस तरह ध्यानावस्थित रहना कमसे-कम मेरे लिए शक्य नहीं है। अगर सनातनियोंके रोषके कारण हमारे लिए जगन्नाथपुरीमें ऐसी कठिनाइयाँ हों, तो क्या हम उनके डरसे भाग

१. गांधी सेवा संघके तत्त्वावधानमें आयोजित इस प्रदर्शनीका उद्घाटन प्रातः सवा आठ बजे गांधीजी ने किया। इसके पूर्व गोपबन्धु चौधरीने मंगल गीत गाया, और वल्लभभाई पटेल ने ध्वजोत्तोलनके पश्चात् प्रारम्भिक भाषण दिया। समारोहमें लगभग ५०,००० लोग उपस्थित थे। हिन्दीमें दिये गये इस भाषणकी संक्षिप्त अंग्रेजी रिपोर्ट महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) में भी प्रकाशित हुई थी; जिससे हिन्दी रिपोर्टको मिला लिया गया है।

जाये? भाग जाना तो सत्याग्रहीका काम नहीं है। हमें तो उनके रोपका सामना करना है। यह सब मैं मोटर या रेलगाड़ीमें बैठकर नहीं कर सकता था। इसलिए मैंने निश्चय किया कि मैं अपनी रही हुई हरिजन-यात्राको पैदल ही पूरा करूँगा।[1] जगन्नाथजी का भारतमें सबसे प्रख्यात मंदिर है। सुना तो था कि जगन्नाथके सामने कोई ऊँच-नीच नहीं है, और उसका प्रसाद सब लोग मिल-जुलकर एक-दूसरेके हाथसे लेते हैं। पर आज तो यह सिर्फ दंत-कथा रह गई है। आज इस तरहसे नहीं होता। जगन्नाथके द्वारपर से ही आज तो पंडा लोग हरिजनोंको धक्का देकर भगा देते हैं। मैंने कहा ये मेरे जगन्नाथ नहीं हो सकते। मेरे जगन्नाथके पास ऊँच-नीचका भाव नहीं हो सकता। वे ब्राह्मण-क्षत्रियोंके नाथ भले ही हों, जगत्के नाथ नहीं हो सकते। जबतक पुरी-मंदिरका द्वार हरिजनोंके लिए बंद है, मेरे लिए भी बंद है। मैंने जो यात्रा यहाँके कार्यकर्त्ता और ठक्कर बापाके साथ की थी, तबसे मेरा इस प्रांतके साथ घनिष्ठ संबंध है।

अब यह प्रदर्शनी देखकर मैं आया हूँ। उत्कल कंगाल है, यहाँके लोग अफीम पीते हैं। उत्कलके लोग आलसी हैं। विशेष प्रेमके कारण मुझको तो आप क्षमा करनेवाले हैं। किसी भी विशेषणका उपयोग मैं करूँ, तो आप बुरा नहीं मानेंगे। उत्कल अगर कंगाल है, तो उसका कारण उत्कलके निवासी हैं। वे अगर अपना आलस्य, और अफीमबाजी छोड़ दें, तो उत्कल एक सुंदर बगीचा बन सकता है। प्रदर्शनी देखकर मैं आया तो दिलमें प्रधान विचार यही आया कि किसी-न-किसी तरहसे अगर उत्कलके लोग आलस्य छोड़कर उद्यम करें, तो उत्कलवासियोंको कंगाल रहने की आवश्यकता नहीं होगी। उत्कलके हजारों निवासियोंको सिर्फ चावल खाकर रहने की जरूरत नहीं होगी। कितने उद्योग उत्कलमें हो सकते हैं, इसका पता प्रदर्शनी देखने से लग सकता है। जितने लोग यहाँ आ गये हैं, वे एक बार नहीं, अनेक बार प्रदर्शिनी देखें। जब यहाँपर अधिवेशन करना तय हुआ, तो किसीको यह पता नहीं था कि इसमें सरकारसे भी मदद मिलेगी। कार्यकर्त्ताओंसे तो मिलनेवाली थी ही, वे हमारे ही हैं। लेकिन यहाँकी सरकार भी हमारी है। वह हमारी मदद करे तो आश्चर्यकी बात नहीं है। हाँ, धन्यवादकी बात हो सकती है। सरकार और लोग दोनोंके प्रयत्नोंका संमिश्रण होनेसे यह जो चीज पैदा हो गई है, उसे अच्छी तरह देखकर अभ्यास करें। इतने नौजवान पड़े हैं, वे एक-एक चीजको लेकर अगर उसका अभ्यास करें, और उसे सीखें, तो आरामसे अपनी रोटी कमा सकते हैं। ईश्वरने मनुष्य और पशुमें भेद रखा है, और जैसा कि स्वर्गीय मधुसूदन दासने कहा था, अनेक भेदोंमें से एक यह है कि दोनोंके शरीर-अवयव भिन्न प्रकारके बनाये गये हैं। मनुष्य अपने पैरों, हाथों और उँगलियोंका बुद्धिमत्ता और कलापूर्ण ढंगसे उपयोग कर सकता है। इसलिए अगर आदमी पूरी तरह खेतीपर ही आधार रखेगा तो वह उँगलियोंसे काम नहीं लेगा, जो उसे ईश्वरने खास तौरपर दी हैं। हमारी मनुष्यता तो इसीमें है कि

१. मई १९३४ में; देखिए खण्ड ५७, पृ० ५०९-११।

हम अपनी उँगलियोंका उपयोग करें। इसके अलावा अकेली खेती हमें सहारा भी तो नहीं दे सकती। जबतक कि कोई दस्तकारी उसकी सहायतामें न हो, तबतक काम नहीं चल सकता। प्रदर्शनीमें हम देखते हैं कि मनुष्यके हाथ और उँगलियाँ क्या-क्या चीजें तैयार कर सकती हैं, और देशकी आमदनीको किस तरह बढ़ा सकती हैं। इसलिए मैं तो आप सब लोगोंसे कहूँगा कि आप इस प्रदर्शनीको एक बार नहीं, लेकिन बार-बार जाकर देखें। किसी एक दस्तकारीको चुन लें। उद्योग-संघकी हस्ती हरएक घरको कारखाना बनाने के लिए है। आप विद्यार्थी बनकर इस प्रदर्शनीमें जाकर देखें, और कुछ-न-कुछ सीखकर अपनी सेवाके साथ-साथ उत्कलकी भी सेवा करें।

गांधी सेवा संघके चतुर्थ वार्षिक अधिवेशन (डेलांग, उड़ीसा) का विवरण, पृ० २-३; और **हरिजन,** २-४-१९३८

५१८. भाषण : गांधी सेवा संघकी बैठकमें[1]

डेलांग
२५ मार्च, १९३८

मेरी आवाज आप सब बैठे हैं, वहाँतक सुनाई देती है? अगर सुनाई न देती हो तो कह दें। लोग ऐसा समझने लगे हैं कि मैं बीमार हूँ, इसलिए धीरे बोलता हूँ। यह बात नहीं है। मेरी यह आदत है। इसलिए यह प्रार्थना है कि जब आप ऐसा देखें कि मेरी आवाज धीमी हो गई है, तो मुझपर दया करनेके लिए उसे सहन न करें। जब मेरा शरीर अच्छा था, तब भी मैं जिस आवाजमें शुरू करता था, उसीमें समाप्त नहीं करता था। बोलते-बोलते अक्सर मैं भूल जाया करता हूँ कि मैं दूसरोंके लिए बोलता हूँ। तब मेरी आवाज अपने-आप धीमी हो जाती है, और याद आनेपर फिर जोरसे बोलने लग जाता हूँ। जब मेरा शरीर अच्छा था तब तो माइक्रोफोनका कोई उपयोग मुझे नहीं करना पड़ता था। आज भी मेरी आवाज धीमी होनेके कारण अगर आपको सुनाई न दे, तो मेरा यह कहना है कि वह दोष मेरा नहीं, बल्कि माइक्रोफोनका है। मुझसे कहा गया है कि माइक्रोफोनमें ऐसी ताकत है कि जितनी धीमी आवाज हो, उतने ज्यादा लोगों तक पहुँचती है। इसलिए माइक्रोफोनमें धीरे बोलना चाहिए। माइक्रोफोन चलानेवाले लोग भी हमारे ही हैं। अपना पेट भरने के लिए यह काम करते हैं। अगर मेरी आवाज आप तक न पहुँचे तो आप मुझे सावधान करें।

१. गांधीजी सायंकाल चार बजे वहाँ पहुँचे, और उन्होंने प्रारम्भिक अधिवेशनमें जो भाषण दिया उसका यह सार है।

आज मेरी स्थिति बड़ी दयाजनक है। मैं यहाँ आया तो सही, लेकिन न तो कार्यवाहक समितिमें भाग ले सकता हूँ, न सम्मेलनमें शामिल हो सकता हूँ। एक धर्माध्यक्ष बनकर बैठ गया हूँ और व्याख्यान दे देता हूँ। यह मेरे स्वभावके विरुद्ध है। मैं खुदको धर्माध्यक्ष नहीं मानता हूँ। सत्याग्रहका एक पुजारी हूँ और शोधक हूँ। इसमें आप मेरे साथ शामिल हैं। उचित तो यह है कि हम आपसमें विचारोंका लेनदेन करें। विचार करके किसी नतीजेपर पहुँच सकते हैं तो ठीक है; नहीं तो नहीं सही। आज अपंग बन गया हूँ तब भी जहाँतक ईश्वर मुझको पृथ्वीपर रखता है तो कुछ-न-कुछ ज्ञान-प्राप्ति तो हो ही जाती है। और मुझे इतना लोभ तो है ही कि जो चीज मुझमें पड़ी है, जो ज्ञान-प्राप्ति हो जाती है, वह आपको दे दूँ। सबसे पहले तो आप ही को देना चाहता हूँ। लेकिन कभी-कभी अधीराई पैदा हो जाती है। इस बार मैं जो कहना चाहता था, 'हरिजन' में आप देखेंगे।[1] बात तो कोई नयी नही है। लेकिन कुछ नये रूपमें दी गई है। मैं जो-कुछ कह रहा हूँ, उसमें अभिमानकी बू नहीं है—जो बात मेरे दिलमें पैदा होती है और आपके दिलमें नहीं होती, उसे आपको दे देनेके लिए मैं अधीर हो जाता हूँ। मैं अहिंसाकी पूजा करता हूँ और आप भी करते हैं। उसमें श्रद्धा तो आपमें से काफी लोग रखते हैं। मैं तो अहिंसाका पुजारी और उसका सेवक आज पचास बरससे हूँ। इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है। अभी सत्तर वर्ष पूरे हो जायेंगे। मेरी अहिंसाकी श्रद्धा और बुद्धिपूर्वक साधना चौदह-पन्द्रह वर्षकी उम्रसे चली आई है, तबसे अहिंसापर मेरी ज्ञानपूर्वक श्रद्धा है। और सत्यकी मेरी पूजा तो इससे भी पुरानी है। पचाससे भी अधिक वर्ष हुए, मैं अपना सब व्यवहार केवल सत्यपर निर्भर रखता आया हूँ। ऐसे नैष्ठिक आचारसे ही ज्ञान और विज्ञान होता है। पचास वर्षसे ऊपर जो आदमी सत्य और अहिंसाके अनुसार बराबर व्यवहार करता आया है, वह अगर यह दावा करे कि उसके पास यह एक चीज है, तो वह अभिमान नहीं कहा जा सकता। यही समझकर मैंने एक छोटा-सा लेख लिख दिया है।

डाक्टरोंने मना कर दिया है तो भी बिहार और यू० पी० में जो-कुछ हुआ उसके कारण मैं अपने-आपको नहीं रोक सका। इस बार भी आपको बहुत-सी बातें सुनाना चाहता हूँ। लेकिन अगर कोई मौका मिले और ब्लड-प्रेशर न बढ़े तो। आज तो मैं जो चीज मुझपर सवारी कर रही है, वही आपके सामने रखना चाहता हूँ। इस बारेमें आप खूब विचार करें।

उससे पहले तो किशोरलाल[2] जो एक चीज आपके सामने पढ़ेंगे, उसके विषयमें कहना चाहता हूँ। उनका व्याख्यान मैं पढ़ गया हूँ। अपंग होते हुए भी १२३ पृष्ठ लिखे हैं। चार भाग हैं। उनका खयाल है कि चार व्याख्यान हैं, चार रात्रिमें दे देंगे। उनमें से एक विभागमें उन्होंने हमारी त्रुटियों और अपूर्णताओंका सामान्य दर्शन

१. देखिए "हमारी असफलता", पृ० ४५०-५२।
२. किशोरलाल मशरूवाला, गांधी सेवा संघके अध्यक्ष।

कराया है। मैंने कहा कि इसमें से तीन चीजें दे दो। मेरे कहने से एक चीज छूट गई। मेरे दिलपर जो चीज असर कर गई उसीको आपके सामने रखूँगा।

गांधी सेवा संघका उद्देश्य तो सत्य और अहिंसा है। लेकिन यदि हम सत्य और अहिंसाका पालन केवल सरकारके साथ लड़ने में करें और अपने प्रान्त-प्रान्तके या खानगी व्यवहारमें न करें, तो क्या लाभ है? इसका तो यह मतलब हुआ कि गांधी सेवा संघके सदस्य भी सत्य और अहिंसाका परस्पर व्यवहारमें बुद्धिपूर्वक प्रयोग नहीं करते। मैं उस व्याख्यानका सार दे रहा हूँ। उनका कहना है कि गांधी सेवा संघमें चन्द आदमी हैं, उनमें भी अनबन हो जाती है तो आपसमें द्वेष-भाव रह जाता है। वैसे झगड़े तो दुनियाके अन्ततक चले ही जाते हैं। लेकिन हम नतीजेके बारेमें सावधान रहें। हमारा तो काम यह है कि हम प्रयत्नशील रहें। यदि कोई कहे कि महादेव पहले बड़ा गुस्सा करता था, बड़ा अभिमान करता था, लेकिन अब वह एक वर्षके पूर्वका महादेव नहीं रहा, अब वह बदल गया है, कुछ नम्र हो गया है। ऐसी प्रतीति केवल महादेवको नहीं, बल्कि दुर्गाको होती है और लड़केको होती है तो अहिंसाका प्रभाव बढ़ता जाता है। लेकिन अगर वह यह समझने लगे कि अब तो मैं बन गया हूँ और पहले जो विचारशीलता और सावधानता थी, उसे अगर वह अब भूल गया है, तो वह बहुत बड़ी गलती करता है। सत्य और अहिंसा-में यह एक अपूर्वता है कि आत्माकी खुराक प्रतिदिन सेवन करनी पड़ती है। वह उपनिषदोंने कहा है न कि यह तो तलवारकी धारपर चलने की बात है। मैंने दावा किया कि पचास बरससे ऊपरकी मेरी साधना है। अगर इससे मैं यह खयाल करूँ कि अब मुझे सावधान रहने की कोई जरूरत नहीं है, तो कहना होगा कि उसी समयसे मेरा अधःपात शुरू हो गया। मैं आप लोगोंको व्याख्यान देता हूँ तो अपनेको भी देता हूँ। मैं केवल आपके ऊपर असर डालने के लिए नहीं बोलता। मैं व्याख्यान देनेके लिए व्याख्यान नहीं देता। मेरी आत्मा जो बात बोलती है, वही मैं करता हूँ। यह व्याख्यान जो मैं आपके सामने दे रहा हूँ उसका असर मेरे ऊपर भी पड़ने-वाला है। यदि ऐसा न हो, तो मैं तृणवत् बन जाता हूँ। आप यह भी न समझें कि दोस्तोंके साथ बैठकर केवल अपना काम निकालने के लिए मैं इन शब्दोंका प्रयोग कर रहा हूँ। यदि हम अपने मित्रोंके साथके व्यवहारमें सावधान न रहें और सत्य और अहिंसाका पालन न करें तो केवल राज्यप्रकरणमें[1] उसका व्यवहार करना चालाकी है। चालाकीसे भी तो सत्य बोला जाता है। अंग्रेजोंकी 'ऑनेस्टी इज द बेस्ट पॉलिसी' (प्रामाणिकता सबसे बढ़िया नीति -- यानी मुत्सद्दीपना[2] है) वाली कहावत अच्छी नहीं है। मैं मुत्सद्दीपनके लिए अहिंसा और सत्य नही चाहता हूँ। मैं तो अन्तिम वस्तुकी बात करता हूँ। मैं दुनियाके साथ सत्यमय रहूँ, अहिंसक रहूँ और दुनिया उसके बदले मेरे प्रति घृणा करे और इस कारण मेरी श्रद्धा मिट जाये, तो मेरी अहिंसा एक

१. राजनीतिमें।
२. मुनीमगीरी।

निकम्मी चीज है। निरी उत्तम मुत्सद्दीगीरी है। उसे आप अन्तिम वस्तु न समझें। अगर वह ऐसी निकम्मी चीज नहीं है, तो दोस्तोंके बीच प्रेम होना ही चाहिए।

किशोरलाल और मैं दोनों साथ-साथ बैठे हैं। प्रेमका बदला प्रेमसे मिले, क्या तभी किशोरलाल मुझसे प्रेम करे? मैं वृद्ध हो गया हूँ, गुस्सा करता हूँ, कोई बात सुनने के लिए तैयार नहीं हूँ, तो क्या वह मुझे छोड़ दे? उलटे उसको तो नाराज नहीं होना चाहिए, अहिंसक रहना चाहिए, मुझपर दया करनी चाहिए। अहिंसा तितिक्षा और प्रेमकी मात्राको बढ़ाकर सत्यको सिखाती है। प्रेम सौदे और शर्तकी वस्तु नहीं है। जो अहिंसकके साथ अहिंसक रहता है, उसे अहिंसक कौन कहेगा? इसमें तो मनुष्य अपने स्वभावसे ही चलता है। जब खूनीके साथ लड़कर मैं मर जाऊँ तो दुनिया मुझे बहादुर कहेगी। लेकिन इस वाहवाहीके लिए मैं ऐसा नहीं करूँगा।

किशोरलालने अपने भाषणमें कुछ दृष्टान्त भी दिये थे। लेकिन मैंने वे काट डाले। हमें नामोंसे क्या वास्ता? मुझे डर था कि व्यक्ति और आदमियोंके नाम देनेसे असर बुरा भी हो। इसलिए मैंने नामों और दृष्टान्तोंको काट दिया। अब समझ लीजिए। हमें प्रान्तीयताको भी मिटाना चाहिए। यदि आन्ध्रवाले कहें कि आन्ध्र आन्ध्र[वासियों]के लिए है, उत्कलनिवासी कहें कि उत्कल उत्कलवासियोंके लिए है, तो इस तरह काफी प्रान्तीयता आ जाती है। सच तो यह है कि आन्ध्र और उत्कल दोनोंको देश और जगत्के लिए कुर्बान होनेके लिए तैयार होना है। और हिन्दुस्तानको जगत्की वेदीपर अपना यज्ञ करना है। यही इसकी सच्ची परीक्षा है। यह कोई मेरी नयी भाषा नहीं है। लेकिन प्रसंगवशात् स्मरण दिला दिया है।

हाल ही में इलाहाबाद, कानपुरमें जो घटनाएँ घटी हैं उनका मुझपर बड़ा असर पड़ा है। ऐसी बातोंसे हमें स्वराज्य नहीं मिलनेवाला है। सुभाष बाबू, मौलाना आजाद और दूसरोंसे मैंने चर्चा कर ली है। मेरा जो हरिपुराके बादका निदान है वह तो यही है कि अगर जैसा वहाँ देखा वैसा ही है, तो सारे दोष रहते हुए भी शायद मेरे जीतेजी हम पूर्ण आजादीको प्रत्यक्ष देख सकेंगे। अगर हम ज्ञानपूर्वक अपना काम कर सकें तो अंग्रेजोंको हमसे कहना होगा कि अब हम हार गये। हिन्दुस्तानमें एक ही शक्ति है कि जिसके साथ हम बात कर सकते हैं। वह शक्ति है कांग्रेस। अब हमारा कोई काम नहीं रह गया है। यदि लोग चाहें तो हमारी मदद ले लें। वे हमसे पूछेंगे कि अब हमसे आप क्या चाहते हैं? यह शक्ति हमारे अन्दर सत्य और अहिंसासे ही पैदा हो सकती है। अगर हम यह शक्ति एक सालमें अपने अन्दर पैदा कर लें तो सुभाष बाबूको बुलाकर वाइसरायको पूछना पड़ेगा कि आप हमसे क्या चाहते हैं? यूरोपमें अंग्रेजोंकी शक्ति और प्रतिष्ठा कम हो रही है इसलिए भी सरकार सुभाष बाबूको शायद बुलाये। पर वह बात मेरे दिलमें नहीं है। अहिंसक आदमीका कोई दुश्मन नहीं होता। लेकिन अपनेको जो दुश्मन कहता है, वह जब दुर्बल हो जाता है, तो अहिंसक मनुष्य उसपर दया करता है। वह उसकी आपत्तिमें उसपर सवारी नहीं करना चाहता। जब वह संकटसे मुक्त हो जाता है तभी अपनी लड़ाई शुरू करता है। मैंने तो दक्षिण आफ्रिकामें इसी तरह काम किया है। मैंने

देखा कि यू० पी० में, इलाहाबादमें ही नहीं, बल्कि मध्य-प्रदेशमें और दूसरी जगह भी यही हुआ। दंगे शान्त करने के लिए पुलिस और मिलिटरी (फौज) की भी मदद लेनी पड़ी। मैं यह नहीं कहना चाहता कि मन्त्रियोंकी गलती थी। बेचारा गोविन्द-वल्लभ पन्त करता भी क्या? मैं उसकी निन्दा नहीं करता हूँ। उसे तो मन्त्रीकी हैसियतसे काम करना था। उसने जो-कुछ किया, ठीक ही किया। गलती तो मेरी है। हरिपुरामें मैंने जो देखा, उससे मैंने जो परिणाम निकाला वह गलत था। मैं समझा था कि हम एक सालमें जो चाहेंगे ले सकते हैं। इतनी शक्ति हममें आ गई। लेकिन अब मैं महसूस करता हूँ कि वह गलती थी। मैं मानता हूँ कि आज वाइसराय अगर सुभाष बाबूको बुलाये, जवाहरलालको बुलाये या मुझे बुलाये और पूछे कि कहो क्या चाहते हो तो मैं कहूँगा कि मेरे पास ऐसा सामान नहीं है। हमारे पास आज तो जवाब देनेकी शक्ति ही नहीं है। यदि हम वाइसरायसे कहें कि पुलिस और मिलिटरीकी हमें कोई जरूरत नहीं, हम अपनी रक्षा कर सकते हैं। हमारे पास अहिंसाका शस्त्र पड़ा है। मुसलमान हमारे दोस्त हैं, पठान हमारे हैं। राजा लोगोंसे हम समझ लेंगे। सिखोंको निबाह लेंगे। तो वह कहेगा कि यह पागल है। सन् १९२० में यह बात नहीं थी। जब हम तैयार हो जायेंगे तो मुसलमान, राजा और जमींदारोंके साथ ज्ञानपूर्वक समझौता करने की शक्ति हमारे अन्दर पैदा हो जायेगी। आज हम न राजाओंको अपने वशमें रख सकते हैं और न जमींदारोंको, न मुसलमानोंको और न सिखोंको। और बातें छोड़ दीजिए। क्या स्वयं कांग्रेसके अन्दर ही हम सबको वशमे रख सकते हैं? नहीं। मैंने देखा है कि हम लोग कांग्रेसके दफ्तरपर कब्जा करने के लिए आपसमें लड़ते हैं। जिन लोगोंकी हस्ती भी कभी कांग्रेसमें नहीं थी, उनके नाम आज कांग्रेसमें देखता हूँ। खैर!

मैं सिर्फ यह कहना चाहता था कि अगर यही हालत रही तो एक वर्षमें तो क्या, हमें तीस वर्षमें भी स्वतन्त्रता नहीं मिलेगी। मुझे लगता है कि हम सत्यपूर्वक यह नहीं कह सकते कि हम इन सब लोगोंके साथ समझौता कर सकेंगे। और फिर भी अगर हमारे अन्दर सच्ची अहिंसा हो, तो हममे इन चीजोंको कहने और करने की ताकत होनी चाहिए।

इसलिए मैं आपसे पूछता हूँ कि क्या हमारी अहिंसा भीरुओं, अशक्त, निराधार, डरपोक लोगोंकी अहिंसा है? तब तो उसकी कोई कीमत नहीं है। अशक्तः सहजः साधुः। असमर्थ तो मजबूरन साधु होता ही है। लेकिन हम तो अहिंसाके सिपाही हैं, जो मौका आने पर कट भी जायेंगे। हमारी अहिंसा डरपोकोंकी निरी पालिसी नहीं है। लेकिन इसमे मुझे शंका है। मुझे डर है कि हम जिस अहिंसाका दम भरते हैं, वह कहीं निरी पालिसी तो नहीं है। यह सच है कि कुछ हदतक निर्बलके हाथमे भी अहिंसा काम दे सकती है। और इस तरह इस शस्त्रने हमारे हाथमें काम दिया भी है। परन्तु जब आदमी अपनी दुर्बलताको छिपाने के लिए या लाचारीके कारण अहिंसाका उपयोग करता रहे, तो वह उसे नामर्द बना देती है। ऐसा आदमी इतोभ्रष्ट और ततोभ्रष्ट है। वह आदमी नहीं रह सकता, हैवान तो

बन ही नहीं सकता। इससे तो हजार गुना अच्छा है कि हम शस्त्र-बल प्राप्त करने की कोशिशमें मरें। कायरताकी अपेक्षा बहादुरीके साथ शरीर-बलका प्रयोग करना कहीं श्रेयस्कर है। कमसे-कम हमने मर्द बनने की कोशिश तो की। वह हमारे पूर्वजोंका तरीका तो है। क्योंकि कुछ लोगोंका यह मन्तव्य है कि हमारे अर्थात् मनुष्योंके पूर्वज पशु ही थे। डार्विनका सिद्धान्त सही है या नहीं, इस विवादमें मैं नहीं पड़ना चाहता। लेकिन एक दृष्टिसे हम सब मूलतः तो शायद पशु ही रहे होंगे। और मैं यह मानने के लिए तैयार हूँ कि हमारा विकास धीरे-धीरे क्रमानुसार पशुतासे मनुष्यतामें हुआ है। इसीलिए शरीर-बलका नाम पशुबल है। हम पशुबलको लेकर तो पैदा हुए ही थे, इसलिए यदि हम उसको काममें लायें, तो कमसे-कम बहादुर तो रहेंगे। परन्तु हमारा मानवावतार इसलिए हुआ कि हमारे अन्तरमें जो ईश्वर बसता है, उसका साक्षात्कार हम कर सकें। पशुओंमें और हममें असली अन्तर यही है। यों तो साँप पेटके बल चलता है और हम अपने पैरोंसे चलते हैं। बैलके चार पैर हैं, मेरे दो हैं। हमें मनुष्यका शरीर मिला है। हम आहिस्ता-आहिस्ता सर्पादियोनिसे मनुष्य-योनिमें आये हैं। मनुष्यके शरीरके साथ हमें मनुष्यका बल यानी अहिंसाका बल भी मिला है। हम आत्माकी गूढ़ शक्तियोंका दर्शन कर सकते हैं। इसीमें हमारी मनुष्यता है। मनुष्यका स्वभाव अहिंसक है। लेकिन उसकी उत्पत्ति अहिंसासे नहीं। जब हम आत्माका दर्शन करते हैं तब हमारा मनुष्यत्व सिद्ध होता है। जब हम अपने मनुष्यत्वको सिद्ध करते हैं, तब हम परीक्षामें उत्तीर्ण हो जाते हैं। आज हमारी परीक्षाका समय है। ईश्वरका साक्षात्कार करने का अर्थ यह है कि हम भूत-मात्रमें उसे देखें। अर्थात् भूत-मात्रके साथ हम ऐक्य-साधन करें। यह मनुष्यका विशेष अधिकार है, और यही मनुष्य और पशुके बीचका भेद है। यह तभी हो सकता है जब कि हम स्वेच्छापूर्वक शरीर-बलका उपयोग त्याग दें। और हमारे हृदयमें जो अहिंसा सुप्त रूपसे पड़ी हुई है, उसका विकास करें। इस वस्तुका उद्भव सच्चे बलसे होगा। क्या हमारे अन्दर इस प्रकारकी बलवानकी अहिंसा है? अगर नहीं है, तो हमारी स्थिति त्रिशंकुके जैसी लज्जास्पद है। इससे अच्छा यह हो कि यह कहकर कि अहिंसा धर्मका अशक्य आदर्श है, हम उसे छोड़कर हिंसाको स्वीकार करें। पर अब दुर्बलकी अहिंसासे हम एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकते। अब यह चुनाव किये बिना चारा नही है। इसका फैसला आप लोग नहीं करेंगे तो कौन करेगा? आप जो उसे पालिसी न समझकर सिद्धान्त समझते हैं और उसके लिए जीते हैं तो आपपर बोझ आ जाता है कि आपकी संख्या छोटी क्यों न हो, आप सच्ची अहिंसाको अपने जीवनमे सिद्ध करें। अगर आपकी अहिंसा सच्ची है, महज दुर्बलताको ढाँकने के लिए नहीं है, तो किशोरलाल द्वारा बताये दोष पैदा ही नहीं हो सकते। यह मैं बीस सालसे कह रहा हूँ।

आप मुझसे पूछेंगे —— तो हम क्या करें? आप मेरी बातको भली भाँति समझ लें। आप कई बातें कर सकते हैं। उनमें से एक चीजको मै लेना चाहता हूँ। वह है हिन्दू-मुस्लिम गैरसमझी या द्वेष। हमारे बीच वैर-भाव बढ़ रहा है। इलाहाबादमें

जो चीज हुई, यू० पी० में आज जो हुआ, वही कल बम्बई और कलकत्तेमें भी हो सकता है। शायद कलकत्तेमें इलाहाबादसे अधिक बुरा हो सकता है। देशमें यह चीज नयी नहीं है, इसको हमने हल किया तो दूसरे मसले सहज हल हो जायेंगे। इसमें हमारी परीक्षा है। आप पूछ सकते हैं कि हम सच्चे अहिंसक होते तो इलाहाबादमें हमें क्या करना चाहिए था? मैं कहूँगा कि वहाँ गोविन्दवल्लभ पन्तका काम नहीं था। वह तो इलाहाबादकी कांग्रेस कमेटीका काम था। उसके पास दस हजार स्वयं-सेवक हो सकते थे। उनकी प्रतिज्ञाका मसविदा[1] मैंने इक्कीसके सालमें[2] पेश किया था। मैंने उसे अपने हाथोंसे बनाया था। कांग्रेसने मंजूर किया, खिलाफत कमेटीके सामने भी मैंने पेश किया। हकीम साहब सदर थे। हसरत मोहानीने विरोध किया। उन्होंने कहा आप तो मुसलमानोंको गुलाम बना देना चाहते हैं। वे कर्म और वचनसे अहिंसक भले ही रहें, लेकिन मनसे अहिंसक रहने की बात तो इस्लाममें नहीं है। आप तो मुसलमानोंके मनकी भी सरदारी लेना चाहते हैं। वहाँ पर जो उलेमा मौजूद थे वे मेरी बातको समझ गये। मौलाना आजाद तो बड़े चतुर आदमी हैं। वे तो पहले ही समझ चुके थे। मैंने कहा कि मैं खुद या किसी आदमीको मालिक नहीं बनाना चाहता। लेकिन अहिंसाको बनाना चाहता हूँ। अन्तमें उन्होंने प्रतिज्ञाका मसविदा मंजूर कर लिया। यह प्रतिज्ञा सत्रह साल पहले की है। फिर भी स्वयंसेवकोंका ऐसा दल आजतक हमने तैयार नहीं किया। प्रतिज्ञा तो कांग्रेसने रद नहीं की है। हमारा प्रस्ताव कांग्रेसके दफ्तरमें है। कृपलानीके पास पड़ा होगा। लेकिन वह तो दफ्तरमें पड़े रहने की चीज हो गई है। मेरी रायमें तो उसमें से एक शब्द भी काटनेकी जरूरत नहीं है। अगर हमारे पास इलाहाबादमें या दूसरी जगह ऐसा दल होता, तो हिन्दू-मुसलमान दंगे नहीं हो सकते थे। अगर हजार स्वयंसेवकोंका दल है, तो हजार एक ऐसे मुहल्लेमें चले जाते। सत्यकी तलवार और अहिंसाकी ढाल उनके पास होती। गुंडे हजार हैं, और हम एक हैं या दस है तो हम वहाँ जाकर मर जायें, कट जायें। हमने तो अहिंसाकी शपथ ले ली है। हिटलरके सिपाही काटने के लिए जाते हैं, तो हम कटने के लिए जायें। जैसे गुप्ता[3] चला गया। मैं तो ज्यादा पसन्द करता कि वह अकेला जाता। एक मुसलमान साथीको भी खोजने के लिए क्यों गया? इसमें उनकी निन्दा नहीं है। यह तो एक चीज है जो आपके सामने रख रहा हूँ। क्योंकि मैं तो अहिंसाका कलाकार हूँ, ऐसा मेरा दावा है। मैं कहता हूँ कि गुप्ताको अपने साथमें मुसलमानको लेनेकी जरूरत नहीं थी। लेकिन गुप्ता भी तो एक ही निकला। मैं जो चित्र आपके सामने खींच रहा हूँ, वह इससे कहीं दिव्य है। समझ लीजिए कि इलाहाबादके दंगेमें सरूप चली जाती और मैं सुनता कि वह उसे शान्त करते

१. देखिए खण्ड २२, पृ० १०६-८।
२. सन् १९२१ में।
३. पशुपतिनाथ गुप्त; देखिए पृ० ४५१।

हुए कट गई और लोगोंपर बिना क्रोधित हुए कट गई, तो मैं नाचता। मैं कहता लोग पागल हो गये हैं, लेकिन सरूप धन्य हो गई। वह कट गई। अगर हमारे पास एक तरहके दस-बीस हजार आदमी हों, तो क्या वे कुछ नहीं कर सकेंगे? और न हुए दस-बीस हजार तो भी क्या हुआ? एक रहे तो भी कट जायेगा। अगर एक भी और उसके दिलमें श्रद्धा है तो कट जाये। लेकिन पागलोंकी, बदमाशोंकी कदम-बोसी न करे। स्पार्टाका उदाहरण लीजिए। वे शस्त्रधारी थे तो थोड़े ही। मर गये लेकिन हटे नहीं। हमारे अन्दर उनसे बहुत ज्यादा बहादुरी होनी चाहिए। अगर हम यह समझते हैं कि एक हजार आदमियोंके बिना हम यह काम नहीं कर सकते तो हमारी अहिंसा कोई चीज नहीं है। अगर वह बहादुरी हमारे अन्दर नहीं है तो हम अहिंसाका नाम न लें, उसको कलंकित न करें। अहिंसा एक ऐसा शस्त्र है कि जिसके सामने तलवार काम नहीं कर सकती, और न कोई शक्ति काम कर सकती है। एक ओर एक करोड़ आदमी हों और दूसरी ओर अहिंसाका पुजारी अकेला खड़ा हो, तो भी वह यह नहीं कहेगा कि मैं शस्त्र-बलके अधीन हो जाऊँगा। वह बता देगा कि अहिंसाके सामने जहरीली वायु और दूसरे सारे शस्त्रास्त्र बेकार हैं। हिटलरके सामने आस्ट्रिया जिस तरह झुक गया, वैसा वह झुकेगा नहीं। इसलिए यह चीज मैं आप लोगोंके सामने रखना चाहता हूँ। यह सबसे पहली चीज है। आप इसे समझ लें और यहाँ इसपर बहस भी कर लें। यदि हम इस अहिंसापर अमल करें तो किशोरलालका काम बड़ा हलका हो जायेगा। पहले हम आपसके अपने व्यवहारसे देख लेंगे कि क्या हम दरअसल ऐसी अहिंसाके पुजारी हैं? और फिर उसी अहिंसाके बलपर मुसलमानोंको भी जीत लेंगे।

यह एक चीज कह दी है। ऐसे कार्यक्रम तो मेरे पास काफी पड़े हुए हैं। यह कार्यक्रम तो १७ वर्षसे पड़ा हुआ है, जिसके बारेमें हम अबतक बिलकुल बेखबर सोये रहे। उसका आपको स्मरण दिला दिया है। मेरी शक्ति आज जैसी है अगर ठीक वैसी ही रही तो मैं आपके सामने हाजिर हो सकता हूँ, और आप इसके बारेमें सवाल पूछ सकते हैं। मेरे लिए एक प्रश्न बड़ा गम्भीर है, मेरे दिलमें यही बात भरी है। अहिंसाकी इस चीजको मैंने प्रत्यक्ष रूपमें देख लिया है। अगर सत्रह सालमें भी हम इसे चरितार्थ नहीं कर सकते तो यह दोष मेरा ही है। मेरा खयाल है कि राज्यप्रकरणमें भी अहिंसा चल सकती है। बीसके सालमें मैंने कहा था कि हम अहिंसासे एक वर्षमें स्वराज्य ले सकते हैं। मैं फिर कहता हूँ कि अगर वह विशुद्ध सत्य और अहिंसाका ही प्रयोग होता तो मेरा विश्वास है एक वर्ष भी बहुत अधिक हो गया। अगर देश और कांग्रेस यह समझती है कि अहिंसासे स्वराज्य नहीं मिल सकता तो वे मेरा भले ही त्याग कर दें। इसका मतलब यह नहीं है कि वे आज ही हिंसाके लिए तैयार हैं। वे सत्य-असत्य, अहिंसा-हिंसा जब जो शक्य होगा तब उससे काम लेंगे। लेकिन वह मेरा कार्यक्रम नहीं होगा। यदि आपके अन्दर सचाई है और हम इस निर्णयपर पहुँचते हैं कि अहिंसा दुर्बलोंका शस्त्र है, तो हमें तो उसे फेंक देना है। अगर आप मानते हैं कि अहिंसक सेनाके द्वारा दंगोंको शान्त करना

खाली स्वप्न है, तो आपको इस निर्णयपर भी आना चाहिए कि स्वराज्य अहिंसा द्वारा प्राप्त होनेवाला नहीं है।

गांधी सेवा संघके चतुर्थ वार्षिक अधिवेशन (डेलांग-उड़ीसा) का विवरण, पृ० ५-१२

५१९. बातचीत : गांधी सेवा संघमें

डेलांग
२६ मार्च, १९३८

बापू : मैं कुछ कहने नहीं आया हूँ। कलवाली बातके विषयमें या दूसरे किसी विषयमें अगर कुछ पूछना चाहें तो पूछें। ऐसे ही बहस करने की तैयारी नहीं है।

अध्यक्ष : कलके विषयपर कृपलानीजी कुछ कहना चाहते हैं। उन्हें शुरू करने को आमन्त्रण देता हूँ।

कृपलानीजी : इलाहाबादका जो दंगा हुआ, उसके बारेमें कहना चाहता हूँ। जहाँ दो दल आपसमें लड़ते थे, वहाँ पुलिस पहुँच जाती थी, तो कांग्रेसवाले भी पहुँच जाते थे। जहाँ गफलतमें एक आदमी दूसरेके छुरी या चाकू भोंके देता था, वहाँ उस समय कांग्रेसवाला या सत्याग्रही कैसे पहुँच सकता था? वह यह कैसे जाने कि कब कौन छुरी चलानेवाला है। पहले कमसे-कम हिन्दू तो कांग्रेसवालों की बात मानते थे। मुसलमान तो हिन्दुओंसे जितनी नफरत करते हैं, उससे कहीं अधिक कांग्रेसवालों से करते हैं। जब-तब कांग्रेसवालों को भावुकतासे अपनी जानें खोते हुए देखकर उन्हें हिन्दू भी गालियाँ देते हैं। मेरे कहने का मतलब यह है कि आखिर हमारी नीतिमें कोई हिसाब भी है या नहीं? हम जान देना चाहते हैं हिन्दू-मुस्लिम एकताके लिए। परन्तु हमारे बड़े-बड़े नेताओंको यदि मुसलमान काट डालें तो उनके प्रति हिन्दुओंके दिलमें घृणा घटेगी या बढ़ेगी? कोई बड़ा आदमी अपनी आहुति दे तो क्या परिणाम ठीक उलटा नहीं होगा? कल बापू अपनी आहुति दें, तो मुझे विश्वास है कि मुसलमानोंको इस आसुरी हत्याके लिए हिन्दू कभी क्षमा नहीं करेंगे। दो हजार साल हिन्दू-मुस्लिम एकता नहीं हो पायेगी। यहूदियोंका क्या हाल हुआ? आज भी संसारके ईसाई उन्हें ईसा मसीहको सूलीपर चढ़ानेवाले समझकर उनसे घृणा करते हैं, उन्हें सताते हैं। बापूसे मेरी प्रार्थना है कि वे सोचें कि उनको अपनी आहुति देनेमें कोई हिसाब करने की जरूरत है या नहीं? परिणामोंका कोई विचार किये बिना अगर हम काम करेंगे तो हमारा उद्देश्य कभी सफल नहीं होगा।

बापू : कृपलानीने ये जो प्रश्न उठाये हैं, वे बहुत अच्छे हैं और आपके समझने लायक हैं। यदि हमारे पास इनके सन्तोषजनक उत्तर नहीं हैं या हमें नहीं

मिल सकते तो जैसा मैंने कल कहा था हमें अहिंसा छोड़ देनी होगी। कृपालानीकी जो उलझनें हैं, उनके उत्तर तो हैं, चाहे आपको या उनको सन्तोष भले ही न हो। यह जो हुल्लड़का तरीका है, कोई नया नहीं है। कई बरसोंसे यह चला आ रहा है। नयी बात तो यह है कि रास्ते चलते-चलते या अँधेरेमें छुरी भोंक दी जाती है। इलाहाबादमें दंगा किस तरहसे शुरू हुआ यह मैं नहीं जानता, लेकिन अगर इस तरहसे शुरू हुआ हो कि पचास आदमी इस तरफ खड़े हैं और पचास उस तरफ, तो हम अवश्य कुछ कर सकते हैं। हम वहाँ जाकर उनके बीचमें खड़े हो जायें और कट जायें। लेकिन जब दंगेके कारण दहशतका वातावरण सारे शहरमें फैल जाता है, तब लोग अपने-अपने मुहल्लोंमें बन्द रहते हैं। जो गुप्त तरीकेसे खून करना चाहते हैं, उनके लिए यह मानो निमन्त्रण हो जाता है। जब ऐसे गुप्त हमले होने लगते हैं, तो उस हालतमें हम क्या कर सकते हैं? यह कृपलानीका सवाल है। जब इस तरहसे खून होते हैं तब दुकानें बन्द हो जाती हैं। लोग बाहर नहीं निकलते। और एक-दूसरेके मुहल्लेमें जाना टालते हैं। बेचारे क्या वहाँ कत्ल होनेके लिए जायेंगे? कोई बहुत जरूरी कामसे या धोखेमें चला जाये या कोई मुसलमान गुप्त वेशमें किसी हिन्दू मुहल्लेमें घुस जाये तो बात दूसरी है। उस हालतमें वे कट जाते हैं। लेकिन कटने के लिए कोई नहीं जाते। कोई मरना नहीं चाहता। मेरा मन यह कहता है कि जब ऐसी स्थिति हो कांग्रेसका हर आदमी ऐसी तालीम ले ले कि जहाँपर छुरी मार-मारकर भाग जाते हैं, ऐसे मुहल्लेमे चला जाये। फ्रांस और जर्मनी-जैसे देशोंमें सबके लिए फौजमें दाखिल होना लाजिमी है। वहाँ मरने के लिए लोगोंको कानूनन तैयार होना पड़ता है। हमारे पास भी ऐसा एक दल हो जो दंगेके समय अपनी आहुति देनेके लिए तैयार हो, तो इन गुप्त हमलोंका भी इलाज हो सकता है।

कृपलानी : बापूजी यह तो शक्य है। कांग्रेसवाले दोनोंके मुहल्लोंमें जायें और जाते भी हैं, इलाहाबादमें गये भी हैं। लेकिन वे उस तरहसे सुरक्षित नहीं हैं, जैसे कि कोई ईसाई हो सकता है। सवाल यह है कि कांग्रेसमें आज इतनी ताकत पैदा हो गई है या नहीं? मरने की हिम्मत तो हमारे अन्दर है, हम डरपोक आदमी नहीं हैं। लेकिन हमारी तादाद कम है। इलाहाबादमें जो लोग मुसलमानोंके मुहल्लोंमें गये वे मरे या नहीं? गुंडोंने उन्हें कांग्रेसका खयाल करके छोड़ तो नहीं दिया। मेरा प्रश्न यह था कि कांग्रेसवालों के इस तरह कट जानेसे मुसलमानोंके प्रति हिन्दुओंके दिलमें द्वेष बढ़ेगा या घटेगा?

बापू : मुझे तो इतना बतलाना था कि इसका इलाज हमारे पास है। उस तरह हमारे दो-चार या पच्चीस [लोग] कट जायें तो अन्तमें उससे लाभ ही होगा। मेरी टीका बेकार तो नहीं है। इसमें कठिनाइयाँ हैं सो तो मैं महसूस करता हूँ। लेकिन जानने की बात यह है कि इसका इलाज हमारे पास है या नहीं है? अंग्रेज, जर्मन, फ्रांस, इटली क्या करते हैं? इसी तरहसे लड़ाईकी तैयारी करते हैं। कोई भी बल

पैदा हो जाये, तो उसका सामना करने का सामान तैयार रखते हैं। क्या हम उनसे कम सावधान रहें? हमारी अहिंसाकी लड़ाईकी तैयारी हम पूरी-पूरी न करें? क्या हम यह कहकर बैठे रहें कि हममें इतनी शक्ति नहीं है? यह बैठने की बात नहीं है। एक नया प्रयोग है। राजनीतिमें इसके पहले अहिंसाका प्रयोग नहीं हुआ। पुराने जमानेमें भी अहिंसा थी। लेकिन वह हमेशा व्यक्तिगत रही है। पीछे वे आदमी या तो पहाड़ोंमें भाग गये या देहातमें एकान्तमें पड़े रहे। सार्वजनिक हितमें उन्होंने कोई रस नहीं लिया। मैंने एक नया सिलसिला जारी किया है। जो अहिंसा व्यक्ति तक ही सीमित होती है वह परम धर्म नहीं है। अगर एक आदमी गुफामें पड़ा-पड़ा अहिंसाका पालन कर रहा हो तो मैं तो उसकी पूजा नहीं करूँगा। मेरे लिए वह अहिंसा कामकी चीज नहीं है। मैं उस अहिंसाका हिमायती हूँ, जिसका पालन दुनियादारीमें रहकर हो सकता है। एक आदमी संसारको छोड़कर अगर अहिंसाका पालन करे और मोक्ष पाये तो मुझे ऐसा मोक्ष नहीं चाहिए। मैं नहीं चाहता कि मैं अकेला मोक्ष पाऊँ, और दूसरे उससे वंचित रहें। दूसरोंकी सेवा करते-करते मुक्ति मिल सकती है। इसीलिए मुझे यहाँ आकर आपको समझाना पड़ता है। अब हम अपनी नीतिको अच्छी तरह समझ लें। अपनी खुदकी परीक्षा करें। जो-कुछ हमारी नीति है, उसे हम चाहे दूसरे नामसे पुकारें, लेकिन उसे समझ तो लें कि वह क्या है? अगर हम इस निर्णयपर पहुँच रहे हों कि अहिंसाकी यह नीति पहले कामकी चीज थी, लेकिन अब ऐसी नही है तो हमें साफ तौरपर ऐसा ऐलान कर देना चाहिए। कमसे-कम हम अपने आलस्य और अज्ञानका प्रदर्शन न करें। अगर हम मन.पूर्वक अपनी नीति निश्चित नहीं करेंगे तो हम अपने अज्ञान और भीतिका प्रदर्शन करेंगे। क्योंकि उस हालतमें अगर हम करोड़ों आदमियोंका एक दल तैयार कर लें तो भी इससे हमारी शक्ति नहीं बढ़ेगी। और इसमें मुझे खास आपत्ति तो यह है कि हम करोड़ोंका नुकसान करेंगे। ऐन मौकेपर भयका सामना करने के बदले अपने-अपने गाँवोंको भाग जायेंगे। करोड़ोंका इससे अधिक बुरा और क्या कर सकते हैं?

दूसरे लोग जो अहिंसाको नहीं मानते, वे मुझपर भी इलजाम लगायेंगे, आज भी लगाते हैं, अहिंसापर लगाते हैं, आपपर लगाते हैं। ऐसी अतिशयोक्ति करते हैं, ऐसी-ऐसी बातें कहते हैं जो मेरे ख्वाबमें भी नहीं थीं। कहते हैं इसने तो एक सम्प्रदाय बना रखा है। वे मानते हैं कि मेरे अहिंसाके शिक्षणसे हिन्दुस्तानका बहुत नुकसान हुआ है। और उनमें से कई तो यहाँतक कहते हैं कि हमारा वास्तविक बल अहिंसामें नहीं है। इस अहिंसाकी निष्क्रिय नीतिने तो हमें चौपट कर दिया है। उनकी दृष्टिसे जिस मनुष्यने इतना नुकसान किया है, वह तो एक काँटा-रूप बन गया है। उसे दूर करने के लिए चाहे जो उपाय काममें लाना उनकी नीतिके प्रतिकूल नहीं है। थोड़ी-सी अतिशयोक्ति भी हो गई तो भी वह उनके तत्त्वके विरुद्ध थोड़े हो सकती है? मैं उनको धन्यवाद देता हूँ, सो बात नहीं। दूसरोंके सामने और अपने दिलमें भी वही समझता हूँ। अगर मैं उनकी जगह होऊँ तो शायद मैं उनसे ज्यादा ज्वलन्त बन जाऊँ। लेकिन मेरे दिलमें जरा भी यह शंका नहीं कि मैं गलत राहपर

जा रहा हूँ। उलटे मेरी श्रद्धा दिन-ब-दिन उज्ज्वल ही होती जा रही है। यह कोई छोटी बात नहीं है। हमारे पास इसका इलाज है। उसे हमने पूरी मात्रामें नहीं आजमाया है। इलाज तो माकूल है, लेकिन जितनी मात्रामें उसे हमने आजमाया है वह बहुत कम है। हम जो अहिंसाका प्रयोग कर रहे हैं, उसे समझ-बूझकर नहीं कर रहे हैं। प्रस्तुत कर्त्तव्य तो यह है कि हम इस चीजको फिरसे अच्छी तरह आजमायें। लेकिन दिलमें ऐसा विश्वास होना चाहिए कि हमें विजय मिलेगी ही। हमारी सफलताकी परीक्षा यही है कि हमारी तरफसे कोई दंगा-फसाद न हो। अगर होगा तो हमें मान लेना होगा कि हम अहिंसासे स्वराज्य प्राप्त नहीं कर सकते। हमारे लिए स्वराज्यकी लड़ाई तो अहिंसक और हिंसक दलोंका सामना है। इसका मतलब यह नहीं है कि दूसरे सब आज ही तलवार लेने जा रहे हों। वे भी बहादुर हैं, और आज तो शान्तिमय उपायोंसे ही काम लेना चाहते हैं, जैसे साम्यवादी हैं। वे पुलिसकी मार खानेके लिए हमसे कम तैयार नहीं हैं। लेकिन हमारा रास्ता और उनका रास्ता एक नहीं है। वे कह सकते हैं कि हम सरकारके साथ शान्तिसे लड़ सकते हैं, लेकिन आपसके झगड़ोंमें नहीं। दूसरे लोग कहते हैं कि राजनैतिक झगड़ोंमें हम शान्तिसे काम ले सकते हैं, लेकिन हिन्दू-मुसलमानोंके झगड़ोंमें नहीं। लेकिन हम तो ऐसा नहीं कह सकते। हमारे सामने तो वह प्रश्न स्वराज्य प्राप्त करनेके प्रश्न जितना महत्त्व रखता है। अगर ऐसे दंगोंके मौकोंपर अहिंसा काम नहीं दे सकती, तो हमें तो अहिंसाके नामको भी भूल जाना है। लेकिन मेरा यह विश्वास है कि वह जरूर काम दे सकती है। देशमें जो तीसरी ताकत है, उसके सबबसे हम इस मसलेको हल नहीं कर सकते। इसलिए पहले तीसरी ताकतको परास्त कर लें, तब तकके लिए समझौता आपसमें कर लें और बादमें हिन्दू-मुसलमान आपसमें लड़कर फैसला कर लेंगे। यह सब मैं बीसके सालसे सुनता आया हूँ। तबसे मैंने इस प्रश्न पर विचार किया है। मैं इस बातको कभी नहीं मानूंगा। यह सच है कि हिन्दू-मुसलमानोंके झगड़ेका एक खास कारण तीसरी ताकतकी हस्ती है। लेकिन मैं यह नहीं मानता कि केवल उस तीसरी ताकतको परास्त कर देनेसे झगड़ा मिट जायेगा। आज तक अगर हम इसको नहीं बुझा सके हैं, तो अब वह समय आ गया है कि हमें नया रास्ता ढूंढ़ लेना चाहिए। मेरे पास तो स्वराज्य प्राप्त करने और हिन्दू-मुसलमान एकताका भी एक ही इलाज है। वह है सत्याग्रह। स्वराज्यके लिए तो हमने सरकारसे सत्याग्रहकी लड़ाई की, और उसमें कुछ कामयाबी भी हुई। नमकका सत्याग्रह किया,[1] सरकारको पैसा देना मौकूफ किया। लेकिन इस (हिन्दू-मुस्लिम प्रश्नके) बारेमें हमने अबतक लगभग कुछ नहीं किया। जो-कुछ किया वह कोई अहिंसाका खास मार्ग नहीं है। यूनिटी कांफरेंस कर ली। जिन्ना साहबसे बात कर ली। अली-बन्धुओंसे बात कर ली। एक-आध समझौता भी किया लेकिन ये कोई अहिंसाके मार्ग नहीं हैं। ये सारी बातें तो राजनीति की हैं। और फिर ये बातें चली भी तो नहीं।

१. १९३० में।

क्योंकि इनके पीछे कोई प्रत्यक्ष शक्ति नहीं थी। देखिए कि १९१६ में लखनऊका समझौता हुआ। लेकिन उसके बाद कोई बुलन्द पैक्ट नहीं हुआ। मैंने जिन्नाको लिखा कि मैं आपसे मिलने जा भी सकता हूँ।[1] लेकिन जाकर करूँ भी क्या? हिन्दू और मुसलमान दोनोंके दिलोंमें कांग्रेसके प्रति अनादर है। तब समझौतेसे कैसे सफलता मिल सकती है। आज अगर दंगेका मौका आ जाये और दोनों तरफके गुंडे यह कहें कि सफेद टोपीवालों को हम नहीं मारेंगे, हमारे दिलमें यह विश्वास है कि वे हम कांग्रेसवालों को मारनेवाले नहीं हैं, तब तो हम समझ सकते हैं कि हमने कुछ हासिल किया। हजार-दो हजार सच्चे अहिंसक सिपाही मिलें तो यह काम हो सकता है और न मिलें तो क्या है? हमारा यश केवल संख्यापर निर्भर नहीं।

अब हिसाबकी बात लेता हूँ। हिसाबके बिना तो मैं कुछ भी नहीं करता। क्योंकि मैं तो आदर्शोंको व्यवहारमें आजमानेवाला शख्स (प्रेक्टिकल विजनरी) हूँ। केवल कर्त्तव्यके लिए मरना भी तो एक चीज है। लेकिन यह तो अहिंसक सिपाही भी कर सकता है। मैं जो हिसाब करता हूँ उसका कारण दूसरा है। मैं चला गया, किशोरलाल चला गया, कृपलानी गया, और मैं मर गया तो शायद गुंडे बदल भी जायें। लेकिन जहाँ ऐसा न होगा शायद न भी जाऊँ। लेकिन श्रद्धावाले कहेंगे कि वह तो हिसाब करता है उसके पास श्रद्धा नहीं है। लेकिन एक मामूली हिसाब भी तो हमारे पास पड़ा ही है। जैसे वल्लभभाई बहुत काम करते हैं तो उन्हें कटने के लिए नहीं जाने दूँगा। मणिलालको भेजूँगा तो वह बेचारा मर जायेगा। जहाँतक हो सके वल्लभभाईको नहीं भेजूँगा। दूसरोंको भेजूँगा। इस तरह हम काम करें और हिसाब भी करें। ऐसा एक हिसाब मेरे पास है। लेकिन आखिर हजार-दो हजार अच्छे-अच्छे कांग्रेसवालों को फना होना पड़े तो मैं ऐसा नहीं समझूँगा कि हमने हिसाब नहीं किया। इतिहास हमें यह नहीं कहेगा कि हमने दीवानापन किया। मुझे तो ऐसा ही लगेगा कि हमने अपने व्रतका पालन ही किया। मुझे ऐसा विश्वास है कि इतिहास यही कहेगा कि अहिंसा बलवानोंका शस्त्र है। और उन लोगोंकी जिन सिद्धान्तों पर श्रद्धा थी उनके लिए उन्होंने अपनी जान तक कुर्बान कर दी। ऐसी अटूट श्रद्धा मेरे अन्दर है। हम कुछ आलसी और गाफिल रहे। इसलिए अहिंसाकी शक्तिको नहीं पहचाना। क्योंकि हममें भी श्रद्धा कम ही रही है।

मथुरा बाबू : उस जीसस क्राइस्टवाली बातका जवाब देना है?

बापू : उसे तो कृपलानीने उलटा कर दिया।

स्वामी : गुप्त हमलोंको मिटानेके लिए हम लोग क्या कर सकते हैं?

बापू : मैं मानता हूँ कि यह एक बड़ा पेचीदा सवाल है। इन हमलोंसे हम औरोंको नहीं बचा सकते। इसलिए खुद हमींको उनमें कट जाना चाहिए। कभी जो लोग कट जाते हैं, उनके कटने से ये हमले बन्द नहीं होते। इसका सबब यह है कि जो कट जाते हैं वे जान-बूझकर कटने नहीं जाते। और ज्यादातर गरीब लोग ही कटते

१. देखिए "पत्र: मुहम्मद अली जिन्नाको", पृ० ४३९-४०।

हैं। धनी, प्रतिष्ठित और दूसरे-दूसरे क्यों नहीं कटने के लिए जाते? एक-आध अन-जानपन में कट जायें सो बात दूसरी है। जब ऐसे गुप्त हमले और मारकाट होने लगे वहाँ हमें मुसलमानोंके मुहल्लोंमें जाना चाहिए। खासकर उन लोगोंके घर जाये जिन पर शक हो। शौकत अलीके पास चले जायें। अगर वे कहें कि यह तो गुंडोंका काम है, तो उनसे कहें कि हमारे साथ चलिए, उन गुंडोंके खिलाफ इश्तिहार निकालिए। इसी तरह मैं छोटानीके[1] पास चला गया था। गुंडोंके जो सरदार हैं, वे तो शक्ति रखते हैं न? इस दृष्टिसे मुस्लिम जनतासे सम्पर्क (मास कांटेक्ट) का अर्थ बिलकुल दूसरा हो जाता है। मुस्लिम जनताके सम्पर्कका असली मार्ग तो यह है कि हम उनके परिचय और सेवाके मौके खोजें। मुस्लिम जनताकी निरपेक्ष सेवा ही मुसलमानों के दिल जीतने का सबसे प्रशस्त और कारगर उपाय है। मै राज्यप्रकरणको रोककर भी इसे पहले करना चाहूँगा। लेकिन राज्यप्रकरणको रोकने की जरूरत नहीं है। मुसलमानोंकी सेवा और परिचयके मौके हमे अनायास ही कई मिल जाते हैं। उदाहरण के लिए, मैं रेलमें मुसाफिरी करता हूँ, महादेव भी करता है। रेलमें कई दफा मुसलमान भाई भी हमारे डिब्बेमें होते हैं। लेकिन हम उनसे कभी स्वयं प्रेरणासे बात नहीं करते। उन्हें खानेकी या दूसरी चीजें स्वीकार करने के लिए नहीं कहते। यह एक दृष्टान्त दिया। ऐसी और भी कई बातें हैं। यह-सब सुनकर आपमें से भी कुछ लोग शायद कहेंगे, कैसी बेवकूफीकी बात करता हूँ। जो ऐसा कहते हैं वे मुसलमानोंको विजातीय समझते हैं। मैं तो उन्हें अपनाना चाहता हूँ। यह हमारे दिलकी तब्दीलीका सवाल है। जो हमारे दिलम प्रेम और आदर है, उसको हम किस तरहसे प्रदर्शित करेंगे? मैं मानता हूँ कि काफी मुसलमान ऐसे भरे हैं, जो हिन्दुओंको काफिर मानते हैं, और उनसे मेल नहीं चाहते हैं। लेकिन सभी मुसल-मानोंके दिलमें छुरी नहीं है, बहुत-से यह भी माननेवाले हैं कि हिन्दू हमारे देशभाई हैं, और उनके साथ हिल-मिलकर रहने में ही दोनोंकी भलाई और तरक्की है। पर हम तो ऐसे मुसलमानोंसे भी न डरें, जिनके हाथों और दिलोंमें छुरी हो। हम उनके दिलोंको भी जीत लें। उनके लिए भी हमपर छुरी चलाना अशक्य हो जाये। आखिर क्या हम ही मनुष्य हैं और वे नहीं हैं? एक दिन मनुष्यताकी कद्र वे भी करने ही वाले हैं। हमारा इलाज उनकी समझमें किसी-न-किसी दिन जरूर आयेगा। यह सवाल हृदयकी एकताका है। राज्यप्रकरणकी सौदागरीसे थोड़ी देरके लिए झगड़े भले ही बन्द हो जायें, लेकिन दिल एक नहीं होनेवाला है। आप लोगोंमें से एक-एक आदमी से मैं यह कहता हूँ कि जिस देहातमें आप जाकर बसे हैं, वहाँ ऐसे फसाद हो जायें तो हमें वहाँ मर-मिटना है। समाजवादी और मुझमें यह बड़ा भारी भेद है। उनका सिद्धान्त यह है कि पहले सारी दुनियाको अपने खयालकी बना लें, और फिर सब लोग यह करें। एक-एकके आचरण करने की कोई बात उनकी योजनामें नही है। अहिंसाका मार्ग यह नही है। उसका प्रारम्भ व्यक्तिगत आचारसे हो सकता है। एक

१. मियाँ मुहम्मद हाजी जान मुहम्मद छोटानी।

हजार आदमियोंकी सेना हो तभी मेरे कामका प्रारम्भ होगा, ऐसी बात मैं नहीं कहता। मैं सेगाँवमें पड़ा हूँ। वहाँ ऐसी कोई घटना हो जाये, तो मुझे वहाँ जाकर कूद पड़ना चाहिए। वहाँसे पाँच मीलपर वर्धा है। वहाँ काफी मुसलमान हैं। वहाँ अगर कोई ऐसी बात हो गई तो और मान लीजिए कि जमनालालजी सुस्त बैठे हैं तो मुझे जाकर कूद पड़ना चाहिए। अब अगर कृपलानी मुझसे पूछें कि कुछ हिसाब भी कर लिया है? तो मैं कहूँगा यही मेरा हिसाब है। अगर मैं अकेला भी होऊँ तो भी मेरा धर्म हो जायेगा कि मैं मर मिटूँ। इसी तरहसे एक-एक आदमीका भी यही धर्म है। उसे तो मरने के लिए तैयार रहना है। हिन्दू-मुसलमानोंके दंगेमें मर जानेसे स्वराज्य मिलेगा या नही, यह सवाल हमारे दिलोंमें नहीं उठना चाहिए। हमारे लिए तो अहिंसाके रास्तेके सिवाय स्वराज्यका दूसरा रास्ता ही नहीं है। और मैं तो उम्मीद करता हूँ कि हमारे अन्दर वह ताकत पैदा हो रही है। अगर बीस सालसे जो काम हुआ वह अकारथ न गया हो तो।

कृपलानी : आपकी दृष्टिमें अहिंसा एक व्यक्तिगत आचारकी वस्तु भले ही हो, और उससे आपका अकेलेका उद्धार भले ही हो जाये, लेकिन उतनेसे आपको सन्तोष नहीं है। आप तो उसे समाज-सेवाका साधन भी मानते हैं। यही नहीं, बल्कि आप उसे एक सामाजिक शक्ति (सोशल फोर्स) भी मानते हैं। ऐसी हालतमें आपको गलत हिसाब करने का अधिकार नहीं है। आपको यह सोचना चाहिए कि आप कोई ऐसा काम न करें जिससे समाजको कोई लाभ न हो। आप कहते हैं कि मुझे जाकर कट जाना चाहिए। लेकिन आपको ऐसा सोचना चाहिए कि मुसलमान यदि ऐसे पागल हो जायें कि आपको भी मार डालें तो हिन्दू इस बातको दो हजार सालतक नहीं भूलेंगे। और मुसलमानोंको सारी मनुष्य जातिके वैरी समझेंगे। दो हजार सालके बाद भले ही वे उस बातको भूलकर एक हो जायें, लेकिन जहाँतक आपका सम्बन्ध है, यही कहना पड़ेगा कि इस तरह जान दे देनेमें आपने समाजकी दृष्टिसे गलत हिसाब किया। इस तरह हमको हरएक मामलेमें नफा-नुकसानका हिसाब करना होगा।

काका साहब : युवराजके आगमनके समय बम्बईमें जब दंगा हुआ,[1] तब तो आपने हिसाब किया था न? आप इसी खयालसे उस वक्त पारसी लोगोंको समझाने नहीं गये कि उसका असर अच्छा नहीं होगा।

बापू : मैं मानता हूँ कि मैंने हिसाब किया, और इस तरहका हिसाब तो मैं कर भी लेता हूँ। लेकिन कभी-कभी गलत हिसाब भी हो सकता है। गलती करने का अधिकार तो मुझे है न?

कृपलानी : अधिकार नहीं स्वभाव है। आप कुदरतके साथ जबरदस्ती करना चाहते हैं। धीरज नहीं रखना चाहते। मैं जानता हूँ कि मैं जो-कुछ कह रहा हूँ

1. नवम्बर १९२१ में।

इस दलीलकी आड़में कई लोग अपनी कायरता छिपायेंगे। लेकिन इसलिए हम कई बहादुरोंकी जानें नाहक दे देनेकी मूर्खता क्यों करें? हमें तो इन बातोंमें राष्ट्रीय दृष्टिसे हिसाब करना ही चाहिए।

काका साहब : लेकिन हिसाब आप करेंगे, या समाज या बापू?

जमनालालजी : न हम न बापू। राष्ट्र करेगा — याने वर्किंग कमेटी।

कृपलानी : मेरा मतलब यह है कि आपने जिन्नाको लिखा है, मैं वातावरण नहीं देखता। ऐसी हालतमें किसी दंगेके मौकेपर आप अकेले हों और कहीं वहाँ जाकर कूद पड़ना आपका धर्म बन जाये तो मेरी प्रार्थना है कि कृपया आप अपनी आहुति न दे दें।

बापू : यह हिसाब अप्रस्तुत है। आप मुझे या जवाहरलालको भूल जायें। आप अपना और देशका विचार करें। हमारा यह दावा है कि हम सारे देशके प्रतिनिधि हैं। लाखों कांग्रेसवाले देशके लिए मरने को तैयार हैं। उनका क्या कर्त्तव्य हैं। अगुआ अपना-अपना देख लेंगे। लेकिन सारे कांग्रेसवालों का जो कर्त्तव्य है, उसे मैं आपके सामने रख रहा हूँ। ईसा मसीहका जो दृष्टान्त दिया वह यहाँ लागू नही होगा। ईसाकी मृत्युसे जगत्पर कोई बुरा असर नही हुआ। और दूसरा फर्क यह है कि ईसा खुद होकर मरने नहीं गया था। वह तो मारा गया था। लेकिन फिर भी उसकी मृत्युसे उसके उपदेशोंका प्रचार अधिक ही हुआ। आप इन सारी बातोंको छोड़ दें। व्यक्तिगत रूपसे विचार करें। सामाजिक शक्ति पीछे आनेवाली चीज है। मैंने अपना उदाहरण इसी दृष्टिसे दिया है, अपने को नेता या सेनापति मानकर नहीं। जब वैसा मौका था, तब मैंने अपना सेनापतित्व भी सिद्ध किया है। उस वक्त मैंने हिसाब ही किया। लोग चिल्लाते थे कि वह बाहर क्यों नहीं निकलता? शायद मुझे डरपोक भी कहते थे। मै चुपचाप बैठा सुन रहा था। दूसरे क्या कहते हैं इसका विचार सेनापति नहीं करता। उस वक्त मेरे सरपर एक आन्दोलन चलाने की जिम्मेदारी थी। लेकिन आज तो हमको बड़े पैमानेपर मर मिटने का प्रयोग करना है। अबतक मैंने इस तरहका प्रयोग नहीं किया है। चाहे जो हो, कायरताको तो छोड़ ही देना है। अहिंसा लाचार और भीरुओंके लिए नहीं। इसीलिए मैंने एक आन्ध्र मित्रको लिखा था कि यदि तुम अहिंसात्मक रहकर बहादुरीसे मरना नहीं जानते, तो शरीर-बलसे प्रतिकार करो। भाग जाना तो नामर्दपन है। मैं तो आज भी मानता हूँ कि मैंने उसे सच्चा रास्ता बताया। अभीतक मैंने यह प्रयोग करके नहीं देखा कि बड़े पैमानेपर मरने से क्या होता है। मेरा उनसे यह कहना था कि आप तलवारसे लड़े इस बातका तो सबूत है। मेरा मतलब यह है कि मेरे पास इसकी कोई सिद्ध दवा नहीं है। मेरा जहन और दूसरे क्षेत्रोंका अनुभव मुझे एक नुस्खा सुझाता है, जो मैं समझता हूँ कारगर होगा। मैं अपनी अपूर्णता कबूल करने में शरमाता नहीं हूँ। परन्तु इतना बेशर्म भी नहीं हूँ कि उसे कबूल करके रुक जाऊँ। नित्य उसे दूर करने का यत्न करता रहता हूँ। इसी प्रयत्नका परिणाम यह चीज है, जो आज आपके सामने पेश कर रहा हूँ। अगर आपका हृदय इस बातको न

मानता हो तो आप इसे छोड़ दें। मेरा लिहाज न रखें। इस हिन्दू-मुसलमानके मामलेमें हमारा प्रेम बहस या शरीरबलसे सिद्ध नहीं होगा। अगर हमारा प्रेम हृदयगत चीज है, तो हमारा रास्ता तलवारका नहीं है। गालीका उत्तर हम गालीसे नहीं दे सकते और न घूँसेका घूँसेसे। प्रेमकी सच्ची परीक्षा तो यह है कि हम मरकर दूसरोंके अप्रेमका उत्तर दें। अब यह प्रयोग करने का मौका आ गया है। मैंने 'हरिजन' द्वारा और यहाँ रूबरू भी प्रत्यक्ष निमन्त्रण[1] दिया है। आप इस चीजको अपने व्यक्तिगत दृष्टिकोणसे देखें, जरूरत हो तो मुझसे जिरह करें और उसके बाद इस चीजको अपनी भाषामें रखें। मैंने इसका प्रयोग करके देखा है, और बादमें आपके सामने एक अकसीर दवाके रूपमें इसे पेश कर रहा हूँ, सो बात नहीं है।

जमनालालजी: इस प्रश्नपर अधिक चर्चाकी जरूरत है। बापूजी उसे जितना सरल मानते हैं वैसा वह नहीं है। उसमें कई बातोंका विचार करना आवश्यक है। हरएक आदमीका हर जगह उपयोग नहीं हो सकता। उसमें भी कुछ तारतम्य देखना जरूरी है। मेरा ही उदाहरण लीजिए। बनारसमें जब मारकाट चल रही थी, तब मैं वहीं था। मुझे एक निजी कामके लिए जहाँ दंगा हो रहा था, उस मुहल्लेमें जाना था। लेकिन वहाँके मित्रोंने मुझे मना किया और मुझे समझाया। उनकी दलीलें मुझे जँच गईं। और मैं नहीं गया। अब मुझे और आपको यह सोचना होगा कि मेरा करना सही था या गलत?

गांधी सेवा संघके चतुर्थ वार्षिक अधिवेशन (डेलांग-उड़ीसा) का विवरण, पृ० १८-२६

५२०. भाषण: गांधी सेवा संघमें

डेलांग
२७ मार्च, १९३८

अभी आप लोगोंने यह प्रस्ताव[2] सुन लिया है। मेरी कल्पना है कि इस प्रस्तावपर किसीको कोई आपत्ति नहीं होगी। मेरा काम तो आपको इस बारेमें सावधान करना और इसका अर्थ समझा देना है। मेरी आवाज तो पहुँचती है न?

१. देखिए "हमारी असफलता", पृ० ४५०-५१।

२. साम्प्रदायिक दंगोंके प्रतिकारके तरीके सुझानेवाला यह प्रस्ताव उपलब्ध नहीं है। बैठकमें अन्ततः निर्णय यह हुआ कि चूँकि साम्प्रदायिक झगड़ोंका अनुभव ऐसा नहीं है जिसके आधारपर कोई निश्चित राय कायम की जा सके या कामकी कोई योजना प्रस्तुत की जा सके, इसलिए यह प्रस्ताव पास न किया जाये। तथापि सदस्योंसे इस बातका ध्यान रखने का अनुरोध किया गया कि साम्प्रदायिक वैमनस्य को मिटाना तथा विभिन्न जातियोंके बीच मेल-जोलको बढ़ावा देना देशके हितमें आवश्यक है। उनसे गांधीजी के मार्ग-दर्शनमें इस दिशामें काम करनेका भी अनुरोध किया गया।

यदि आप कहें तो इसका अर्थ समझा दूँ। यह प्रस्ताव सारे हिन्दुस्तानके लिए नहीं है। वर्किंग कमेटीके लिए भी नहीं है। यह तो सिर्फ उनके लिए है, जो यहाँ आ गये हैं। और उनके लिए मुझे यह कहना है कि वे झगड़ेके वक्त जहाँ हों, चाहे एक हो या अनेक हों, चाहे साथी मिले या न मिले, जहाँ झगड़ा पैदा हो जाये, वहाँ उसे मिटाने के लिए अपनी जान तक देनेके लिए तैयार हो जायें। इसका मतलब सिर्फ यह नहीं है कि वे सिर्फ जान ही दे दें। जान तो वे सचमुच दे ही दें। लेकिन उन्हें सचमुच यह भी सोचना होगा कि मैं क्रोधवश होकर जा रहा हूँ या प्रेम से। अगर उनके दिलमें प्रेमकी भावना नहीं है, तो उनका जान देना भी बेकार होगा। आप इस चीजको अच्छी तरह समझने की कोशिश करें। मैं तो आपके सामने नम्रतापूर्वक कबूल करना चाहता हूँ कि मैं आपके लिए जो बोलता हूँ सो अपने प्रति भी कहता हूँ। क्योंकि मैं जो कहता हूँ उसे सोचता भी रहता हूँ। मैंने क्या किया, उसका अर्थ कहाँ तक जाता है, उसमें मेरा क्या फर्ज है? खाते हुए, पीते हुए, दूसरी बातोंकी बहस करते हुए यही मसला मुझपर सवार रहता है। कल ही मेरे सामने ऐसी-ऐसी बातें बड़ी हुईं कि मैं उनका बयान नहीं कर सकता और उसके लिए यह समय भी नहीं। किसी दूसरे मौकेपर कह दूँगा। मैं तो आज यह भी नहीं कह सकता कि हर हालतमें हमें क्या करना चाहिए। हमें जान देनेके लिए तो तैयार होना ही है। लेकिन इतना करने से हमारा काम पूरा नहीं होता। हमारी वृत्तिमें ज्ञान होना चाहिए। हमारा कर्म ज्ञानयुक्त होना चाहिए। हम किस प्रेरणासे काम करते हैं, उसका क्या नतीजा होगा, क्या यही सबसे अच्छा मार्ग है? या और भी इससे बेहतर रास्ता मिल सकता है? इस तरह विचार करना चाहिए। इसीमें से हमको सच्चा मार्ग मिल जाता है। हमको बुद्धिपूर्वक कार्यमें प्रवृत्त होना चाहिए। मैं इस तरहसे सोच रहा था तो मैंने देखा कि हमारे रास्तेमें काफी आपत्तियाँ पड़ी हैं। आप उन सबके लिए अगर मुझसे उपाय पूछें तो मैं अपनेको और आपको सन्तोषजनक उत्तर नहीं दे सकता। मैं यही कहूँगा कि यदि आप इन सिद्धान्तोंको मानते हैं तो आप भी मेरे साथ प्रयोग करें। तब रास्ता मिल ही जायेगा। यह प्रस्ताव आपके सामने है। इसपर आप खूब विचार करें और बादमें उसपर चर्चा करने के लिए तैयार रहें। क्योकि अगर अहिंसाके सिद्धान्तको फेंक नहीं देना है, तो ऐसे मौकेपर हमें क्या करना चाहिए इस बातका विचार करके हमें आज ही से उसकी तैयारी शुरू कर देनी है। आपको इस प्रस्तावको केवल मंजूर ही नहीं करना है, इसपर अमल भी करना है। आपको इसके लिए अनुकूल वायुमण्डल भी बनाना है। आप अपने सेवा-क्षेत्रके मुसलमानोंका एक मुहल्ला ढूँढ़ लें और वहाँ ऐसी आबोहवा पैदा करें। इस मुहल्लेमें और कुछ होगा तो आप इसके जिम्मेवार हो जायेंगे। हरएक आदमी सारे हिन्दुस्तानको अपना कार्यक्षेत्र नहीं बना सकता। हमें अपनी मर्यादाको तो पहचानना होगा। बम्बई-जैसे शहरमें तो आप सारे शहरका भी जिम्मा नहीं ले सकते। जिस एक मुहल्लेमें आप बसते हैं, वहाँ कितने मुसलमान हैं यह आप देखें, उनसे परिचय करें, उनकी सेवा करें, और जो-कुछ बन पड़े करें। वहाँ ऐसा एक भी मुसलमान बच्चा छूट न जाये जिसे

आप न जानते हों। हमें अपने मुहल्लेके एक-एक मुसलमानको सामने रखकर उसके दिलमें अपने प्रति विश्वास पैदा करना है। अगर हमने इस मसलेका भली-भाँति फैसला कर लिया तो दूसरे मसलोंको भी हल करने की शक्ति हमारे अन्दर आ जायेगी। क्योंकि यह सबसे बड़ा मसला है जो हमारे रास्तेमें ज्यादासे-ज्यादा रुकावट डाले हुए है। ऐसी सेवा तो सत्याग्रही ही कर सकेगा। उसे विशेषतया ऐसी सेवामें सबसे आगे रहना चाहिए। आप पूछ सकते हैं कि वह खास तौरपर कौन-सी सेवा कर सकता है? अगर आप सच्चे दिलसे इस प्रकारकी सेवा करते रहेंगे तो आपके मुहल्लेमें ऐसी वारदात नहीं होगी। और दूसरे मुहल्लेमे ऐसा मौका आ भी जाये और आप अकेले वहाँ जाकर झगड़ा मिटाने के लिए तैयार हो जायें तो आपके मुहल्ले के मुसलमान आपका साथ देंगे। कमसे-कम वे अपना मुहल्ला तो सँभाल लेंगे। आप दूसरी जगह जा सकेंगे और सो भी अधिक निर्भयता और आत्मविश्वासके साथ। आज तो मुझे भी पता नही कि यह सब काम किस तरह करूँगा। प्रस्ताव तो मैंने समझा दिया, लेकिन उसपर अमल करने के लिए किन्हें निमन्त्रण दूँ? इस कामके लिए जिनसे सहायता लेनी होगी उन्हें विश्वासकी तालीम देनी पड़ेगी। और केवल इतनेसे भी काम नही चलेगा। परीक्षाके समयके लिए हमको उन्हें तैयार भी करना होगा।

इसलिए मैंने आपको बतला दिया कि इस प्रस्तावपर हम किस तरह अमल करें। मेरे भाषणका जो दूसरा हिस्सा है वह एक बुलन्द प्रश्नसे सम्बन्ध रखता है। मैं आपको सावधान कर दूँ। आप सोच-समझकर उत्तर दें। उस प्रश्नको संक्षेपमें आपके सामने रखता हूँ:

सवाल यह है कि आपकी अहिंसा वीर पुरुषकी है या भीरु की? क्या वह अशक्तिमें से पैदा हुई है? अगर वह हमारी अशक्तिमें से पैदा हुई हो तो मेरा आग्रह है कि आप ऐसी चीजको फेंक दें। वह हमें अपंग और दुर्बल बनानेवाली है। यह तो उसका हरगिज ध्येय नही है। इसका मतलब यह नहीं है कि मैं आपको अभीसे तलवार लेनेके लिए कहता हूँ। दुर्बलोंकी युद्धकलामें भी अहिंसाके लिए स्थान है। लेकिन वह निःशस्त्र प्रतिकार मेरी अहिंसा नहीं है। आप उसे भी अपना सकते हैं। लेकिन उससे पहले जिस अहिंसाको मैं मानता हूँ उसका त्याग करना होगा। आज तो उस अहिंसाका बोझ मुझपर और आपपर है। खुल्लमखुल्ला उसे छोड़ देनेसे वह बोझ हट जायेगा।

हमने जिस अहिंसाको सिद्धान्त-रूपसे स्वीकार किया है, उसका कारण यह नहीं है कि हम निहत्थे हैं। वह तो वीर पुरुषोंकी अहिंसा है। मैं ५० सालसे इसका प्रयोग कर रहा हूँ तब भी आज मेरे पास सारे प्रान्तोंके लिए बने-बनाये जवाब नहीं हैं। जब मैं यह सोचने लगता हूँ कि यदि आज मैं स्पेनमें होता, चीनमें होता, आस्ट्रियामें होता, हिटलर उसपर धावा बोल देता, मैं आदमी और पैसा जाता हुआ देखता तो क्या करता? जब मैं यह सोचने लगता हूँ तो मेरा मस्तक डाँवाडोल हो जाता है। आप यह कह सकते हैं कि ५० सालके अनुभवके बाद भी जिसकी अहिंसा

में इतनी ही तरक्की हो पाई उसकी वह अहिंसा हमारी लड़ाईके किस कामकी? यदि आप ऐसा मानते हों तो आप उसे छोड़ दें। मेरे लिए तो उसे छोड़ने की बात नहीं है। मेरी तो श्रद्धा अचल है। मुझे यह अफसोस जरूर होगा कि ईश्वरने मुझे ऐसी स्पष्ट भाषा नहीं दी कि मैं अपने विचार दूसरोंको समझा सकूँ।

मेरा मतलब यह है कि हमारी अहिंसा उन कायरोंकी न हो कि जो लड़ाईसे डरते हैं, खूनसे डरते हैं; हत्यारोंकी आवाजसे जिनका दिल काँपता है। हमारी अहिंसा तो पठानोंकी अहिंसा होनी चाहिए। मैं पठानोंके साथ रहा हूँ। वह मरने-मारनेसे नहीं डरता। मैंने अपना उदाहरण इसलिए दिया कि एक पठानके लड़केके साथ अपनी तुलना करूँ। पठानका लड़का निडर होता है। कभी मारकाट हो जाये तो वह घरमें नहीं छिप जाता। उसे लड़ाईमें रस (मजा) आता है। वह यह खयाल नहीं करता कि कहीं मुझे चोट न आ जाये, कहीं मेरी हत्या न हो जाये। चोटका डर तो उसे छू भी नहीं गया है। मैंने तो यह देखा है कि उसके शरीरसे खूनके फव्वारे बहने लगते हैं, लेकिन वह नहीं डिगता। मैं यह नहीं कहता कि सारे पठान ऐसे हैं। पर ऐसे पठानोंको मैंने आँखोंसे देखा है। मेरे दिलमें जो पड़ा है वह यह है कि अहिंसाका प्रयोग करना ऐसे बहादुर आदमियोंका काम है। अभी तो मैं भी ऐसा नहीं हो पाया हूँ। मुझमें काफी भीरुता भरी हुई है। सत्याग्रहकी बात तो कहता हूँ, लेकिन मारकाटके मौकेपर पठानकी निर्भयता मेरे अन्दर नहीं होती। अगर ऐसे मौकेपर मुझे जाना पड़े तो दिल कहता है जान बच जाये तो अच्छा ही है। जबरदस्ती चला भी जाता हूँ तो छाती धड़धड़ाने लगती है। और मन-ही-मन मनाता हूँ कि कहीं मुझे कोई गोली या पत्थर नहीं लग जाये। बम्बईमें जब पहुँचा (१९२१ में) तो वहाँ पर मारकाट चल रही थी। पत्थर आ रहे थे, मैं इस सारे अनर्थसे बचना तो चाहता था, लेकिन करूँ क्या? असहयोग आन्दोलनका नेता था। विवश होकर चला गया। जी चाहता था कि कोई कहे कि 'घरमें बैठे रहो' तो क्या अच्छा हो! वहाँ पहुँचा तो लोग हुल्लड़ मचा रहे थे। मेरे साथ अनसूया-बहन थीं, वह तो बहादुर औरत है। मैं उसकी रक्षा क्या करूँ? लोग दीवाने हो रहे थे। देखा सामनेसे घुड़सवार आ रहे हैं। बहुत तो ४० होंगे, लेकिन ऐसी लापरवाहीसे घोड़े दौड़ाते आ रहे थे, मानों रास्तेमें एक भी आदमी न हो। उनके पीछे अफसरोंकी मोटरें भी आ धमकीं। मेरा तो कलेजा काँप रहा था। हम लोगों को फोर्ट जाना था। पायधुनी होकर, अब्दुल रहमान स्ट्रीट पहुँचे। वहाँ तो खूब जोरकी मारकाट चल रही थी। मेरी तो छाती धाड़-धाड़ शब्द कर रही थी। ब्लड-प्रेशर तो न मालूम कितना बढ़ गया होगा। घुड़सवार और फौजी अफसरोंके आते ही जो लोग अबतक हुल्लड़ मचा रहे थे, बेतहाशा भागे। मैं सारा किस्सा सुनाकर आपका समय लेना नहीं चाहता। मेरा मतलब यह है कि वह आप लोगोंके विचार करने का प्रश्न है। मैंने अपने डरपोकपन की बात सुनाई। पर वे लोग जो लाठी और छुरियाँ चला रहे थे, वे भी आखिर डरपोक ही निकले। मैंने तो अपनी छातीकी तुलना पठानके सीनेसे की। ऐसे निर्भय और वीरतासे भरे हुए आदमियोंका शस्त्र अहिंसा है।

इससे यह स्पष्ट हो जायेगा कि मुझे प्रयोग किस तरह करना चाहिए। यदि मेरे दिलमें सचमुच प्रेम-भाव है, अद्वैतभाव है तो वहाँ जानेमें घबराहट क्यों होनी चाहिए? छाती इस तरह क्यों धड़धड़ाने लगती है? इसका साफ अर्थ यह है कि मुझमें भी अहिंसा-वृत्ति इतनी मात्रामें नहीं पैदा हुई है कि मैं निर्भय और निःशंक बन जाऊँ। प्रेमसे पैदा हुई निर्भयता अहिंसाका एक सामान्य लक्षण है। अगर वह अबतक हमारे दिलोंमें नहीं आई है, तो उसे पैदा करने के लिए ही ये प्रयोग हैं। ऐसे प्रयोग करते-करते मृत्युका सामना हँसते-हँसते करने की शक्ति हमारे अन्दर पैदा हो सकेगी। लेकिन हमारी आदत बिगड़ी हुई है। जब सब तरफ शान्ति रहती है, तब हम ऐसे मौकोंके लिए तैयारियाँ नहीं करते। और ऐन मौकेपर किंकर्त्तव्य-विमूढ़ हो जाते हैं। यदि हम यह प्रयोग मनःपूर्वक और गम्भीरतासे न करना चाहते हों तो मैं आपसे नम्रतापूर्वक प्रार्थना करता हूँ कि आप इसे फेंक दें। मैं आपको यह भी बता देना चाहता हूँ कि सिर्फ बहस करने से आप इस सवालका फैसला नहीं कर सकते। दिल खोलकर वार्त्तालाप करने से एक हदतक बुद्धि अवश्य साफ हो जाती है। यह सच है कि अहिंसाके मामलेमें भी हमको बुद्धिका प्रयोग अन्ततक करना होगा। लेकिन मैं आपसे कह दूँ कि अहिसा केवल बुद्धिका विषय नहीं है। यह श्रद्धा और भक्तिका विषय है। यदि आपका विश्वास अपनी आत्मापर नहीं है, ईश्वर और प्रार्थनापर नहीं है, तो अहिंसा आपके काम आनेवाली चीज नहीं है। यदि दर-असल अहिंसा परम धर्म है, जैसाकि हम उसे मानते हैं तब तो उसे हर मौकेपर हर जगह काम देना ही है। इतनी शक्ति उसमें भरी ही हुई है। हम उसकी उस शक्तिको न पहचान सकें तो वह दोष हमारा है। अहिंसाकी पूरी-पूरी शक्तिको पहचानना या अहिंसाकी सम्पूर्ण शक्तिका साक्षात्कार करना हमारी साधनापर निर्भर है। यदि इसको आप मानते हैं और १७ वर्षकी साधनाके बाद आपमें अगर यह श्रद्धा पैदा हो गई कि स्वराज्य मिले या न मिले, दुनियाका चाहे कुछ भी हो, न हो, हमें तो यह एक चीज मिली है तो आप इसे ज्ञानपूर्वक आजमायें। साधना के साथ आपका ज्ञान भी बढ़ता जायेगा। लेकिन आप सर्वज्ञ नहीं होंगे। सर्वज्ञ तो अकेला ईश्वर ही है। ईश्वर ऐसा पागल नहीं है जो सबको सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान् बनने दे। हमारी अपूर्णताके कारण ही साधनाके लिए अवकाश है। ईश्वरने तो हमसे यह कहा है कि जब हम अपनी दुर्बलताको महसूस करते हैं और उसकी पनाह लेते हैं तो ईश्वर हमारा हो जाता है। 'निर्बलके बल राम' किसी संगीताचार्यका पद्य नहीं है, किसी अनुभवीका वस्तुनिदर्शक वाक्य है।

आपके दिलमें शंका या हिचकिचाहट हो तो आप इस प्रस्तावको मंजूर न करें। कमसे-कम एक रात्रि विचार करने के लिए लें। परमात्मासे अपनी बुद्धि प्रकाशित करने की प्रार्थना करें। यह प्रस्ताव बहुमतसे पास करने की चीज नहीं है। आपमें से एक आदमी भी उठकर यह कह सकता है कि मेरे अन्दर यह श्रद्धा नहीं है। तब भी उसे अहिंसाके मार्गपर चलने का अधिकार तो है ही। आप इसे बहुमतसे हरगिज पास न करें।

अब जमनालालजी का जो प्रश्न है कि अगर हम गांधी सेवा संघके सदस्य प्रधान-पद स्वीकार करें तो क्या हम गोलीका हुक्म नहीं दे सकते? आज इलाहाबादमें गोविन्द-वल्लभ पंत प्रधान है। वह हमारा सदस्य नहीं है। लेकिन क्या इसलिए उसमें अहिंसा कम है? मै तो उसे खूब जानता हूँ। लेकिन वह बेचारा कर ही क्या सकता था? मैं तो आपसे यह भी कहना चाहता हूँ कि अगर मै उसकी जगह होता तो मै भी ऐसा ही करता। मैं जब प्रधानपद लेता हूँ, तो अमन और नेकइन्तजामीके लिए मैं जिम्मे-दार हूँ। हाँ, प्रधानपद स्वीकारने से पहले मैं इस बातका विचार कर सकता हूँ। लेकिन गांधी सेवा संघके किसी सदस्यसे मैं तो यह नहीं कह सकता कि केवल इसी-लिए वह प्रधान न बने। मै जानता हूँ कि इसमे मेरी ध्वजा कुछ नीची होती है। लेकिन मेरी अहिंसा व्यवहार-क्षेत्रसे भाग थोड़े ही सकती है? मै तो व्यावहारिक समस्याओंको हल करते हुए अहिंसासे काम लेना चाहता हूँ। मेरे प्रधान होते हुए अगर हिन्दू-मुसलमान आपसमें लड़ने लगें और मैं यह समझूँ कि फौजको बुलाकर सिर्फ पाँच-सात आदमियोंको मारकर मै इस मारकाटको बन्द कर सकता हूँ तो मुझे व्यवस्थाके लिए यह करना पड़ेगा। कमसे-कम हिंसा करके इस हत्याको रोकने का हुक्म मुझको देना ही होगा।

यह सब आप ही को समझाने के लिए मैं अपना हृदय खोलकर कह रहा हूँ। इस रूपमें बाहरके लोग इसको सुनेंगे तो न मालूम क्या-क्या अर्थ निकालेंगे? यहाँ पर पत्रकार तो होंगे ही लेकिन वे अपने धन्धेको नहीं जानते। वे मुझपर नाराज न हों, मैं भी पत्रकार रहा हूँ। और मुझे भी रिपोर्टिंगका अनुभव है। लेकिन ये लोग तो केवल पेज भरने के लिए और सनसनी पैदा करने के लिए सच-झूठका विचार छोड़ देते हैं। इसलिए मैं साफ कह देना चाहता हूँ कि मेरी कोई चीज यहाँसे बाहर न जाये।

तो यह बीचमें दूसरी बात आ गई। अब पन्तकी स्थितिको लीजिए। उसके शहरमें हिन्दू-मुसलमान पागल हो गये हैं। एक-दूसरेको काट रहे हैं। लोगोंकी जान और माल सुरक्षित नहीं है। तो वह क्या कहेगा? क्या सोचेगा कि 'मैं अहिंसा का पुजारी तो हूँ लेकिन इस परिस्थितिका मुकाबला करने के लिए अहिंसात्मक रास्ता मुझे नही दिखता। मैं अहिंसासे पूछता हूँ। वह तो मौन लेकर बैठी है। पशु-शक्ति तो मुझमें भरी है। तो खैर, उसीसे काम लिया जाये। मैं नपुंसक तो नहीं हूँ, जो चुपचाप बैठा रहूँ। दुबारा फिर अहिंसाकी शरण लूँगा, और पशुबलका प्रयोग नहीं करूँगा। लेकिन फिर मौका आनेपर अगर अहिंसक मार्ग न मिले तो दुबारा भी ऐसा ही करूँगा।' पन्तको जाहिरा तौरपर कहना चाहिए था कि 'अहिंसाने कुछ न कहा। आप लोगोंने कोई मदद नहीं की और मुझे प्रधान तो बनाकर रखा ही है, तो मुझे जो सूझता है करूँगा।' आप मेरे मतलबको समझ तो गये होंगे। अब इस पहलूपर अधिक बहस करना बेकार है। और कोई सवाल आप पूछना चाहें तो पूछें।[१]

१. यहाँ राजेन्द्रप्रसादने पूछा कि हिंसाके इस वातावरणमें जबकि संघके सदस्योंमें भी आपसमें अहिंसाका भाव नहीं है, हम कहाँतक इस समस्याको हल करने के लिए तैयार हो सकेंगे।

सात मिनट बाकी हैं। इतने समयमें राजेन्द्र बाबूके सवालका जवाब दे दूँ।

उनका मतलब जैसा मैं समझा हूँ यह है कि अब तो आप हम सबको पहचानते हैं। हम जैसे हैं वैसे हमें जानकर आप कोई चीज रख दें, जिसे हम कर सकें। हम, रात-भर नहीं, दस रात भी सोचें तो भी तुम हमको जैसे जानते हो उससे अधिक हम नहीं जान सकते। इसलिए तुम जो कमसे-कम अपनी बात हो उसे रख दो। यही उनका सवाल है।

मैंने उपाय तो पहले ही बता दिया। राजेन्द्र बाबूने कहा है कि दस रात भी सोचने से कोई प्रगति नहीं होगी। मैं तो फिर भी कहूँगा कि आप रात्रि-भर सोचें। कल बता सकें तो बतायें। इसके लिए मैं हो सकता है आज मौन जल्दी ले लूँ। और कल जल्दी खोल दूँ। जिसमें आप रात-भर सोचकर कुछ चर्चा कल कर सकें। आपको सावधान करने की जो बात थी, वह मेरे भाषणके दूसरे हिस्सेमें है। पहले हिस्सेमें आप कमसे-कम जो कर सकते हैं उसीका उल्लेख मैंने किया है। मैंने कहा कि हम अपने गाँव या मुहल्लेमें सेवा-भावसे मुसलमानोंसे परिचय बढ़ायें। अपने मुसलमान दोस्तोंकी जमातमें वृद्धि करें। उनकी विशुद्ध भावसे सेवा करें, खुशामद करके नहीं। वे कहें कि यह दिला दो, वह दिला दो, तो हम इनकार कर दें। ज्ञानपूर्वक, निर्भय होकर बिना खुशामद किये हम जो अपना कर्त्तव्य समझते हैं उसका पालन करें। उदाहरणके लिए हम मुसलमान लड़कोंको इकट्ठा करें, उन्हें दूध पिलायें; चाहे उनके माँ-बाप भले ही शक करें, मुझे तो अपने बरतावसे सिद्ध करना है कि मैं उन्हें हिन्दू बनाने के लिए यह नहीं कर रहा हूँ। धीरे-धीरे उनका शक दूर हो जायेगा। लड़कोंको कमसे-कम हम पहचान तो लेंगे। मान लीजिए कि इतनेमें दंगा हो गया। तो इतने अनुभवके बाद हम निर्भयतापूर्वक उस मुहल्लेमें चले जायेंगे। इस विषयमें मुझे अनुभव कम है, श्रद्धा अधिक है। और अब तो शक्ति भी कम हो गई है। ऐसी बात नहीं होती तो मैं क्यों बेवकूफ जैसा बैठा रह जाता? एक मुहल्ला लेना और प्रयोग करना। फिर भी इतना तो अवश्य कहना चाहता हूँ कि यह प्रयोग आप करेंगे तो आपका विश्वास सौगुना बढ़ जायेगा। आपको अपनी शक्तिका पता चल जायेगा। हमारे पास एक ही शस्त्र है और वह अहिंसाका। उसका उपयोग बहुत होगा और बहुत तरहसे होगा। अनेक दूसरे-दूसरे उपचार आपको सूझेंगे। अहिंसक मार्गमें नये-नये शस्त्र आपके हाथमें आयेंगे, जिनका मुझे पता भी नही है।

गांधी सेवा संघके चतुर्थ वार्षिक अधिवेशन (डेलांग-उड़ीसा) का विवरण, पृ० ३६-४२

५२१. पत्र : अमृतकौरको

डेलांग
२८ मार्च, १९३८

मूर्खा रानी,

तुम्हारे दो पत्र मिले। बेशक, मिर्जा-सम्बन्धी पत्र-व्यवहारके विषयमें तुम्हें पूरा मार्ग-दर्शन मिलेगा। अनसूयाका[1] पत्र बिलकुल उसके अनुरूप ही है। एक समय तो वह जो-कुछ हुआ उससे सन्तुष्ट दीखती थी। शरीफने[2] तो सचमुच अच्छी सफाई पेश की है।

यहाँ बहुत ज्यादा गर्मी पड़ रही है—पिघला देनेवाली।

बा और साथके कुछ लोग पुरी गये हैं। आज रातको लौट आयेंगे।

तुम्हें यहाँकी प्रदर्शनी पसन्द आती। खूब सुव्यवस्थित है। कुल १२,००० से अधिक लोग इसे देखने आये।

लीलावती यहाँ है और कान्ति भी।

विजयसिंहके साथ तुम्हें कड़ाईसे काम लेना होगा। उसको लाड़ करने से काम नहीं चलेगा। मैं आशा कर रहा हूँ कि उसके विषयमें तुम्हारी धारणा सत्य सिद्ध होगी। तुम्हारे पिछले पत्रसे मैं कुछ परेशान हो गया था। गाँवोंमें अपनी कोशिशोंके परिणामको लेकर तुम जल्दबाजीसे काम न लेना और उससे हताश भी न होना। यह बड़ा कठिन कार्य है—विशेष रूपसे तब जब पैसे देकर काम कराना हो।

सिकन्दर हयातकी[3] ओरसे अभी तक कोई समाचार नहीं मिला है। मुझे अप्रैलमें बम्बईमें जिन्नासे मुलाकात करनी होगी।

स्नेह।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८५०) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ७००६ से भी।

१. अनसूया काले।
२. मध्य प्रान्तमें कानून और न्याय-मन्त्री।
३. सर सिकन्दर हयात खाँ, पंजाबके मुख्य मन्त्री।

५२२. पत्र : मीराबहनको

डेलांग
२८ मार्च, १९३८

चि० मीरा,

बस, एक क्षणका अवकाश मिला है। हम सब गर्मीके मारे पिघले जा रहे हैं। मेरा खयाल है कि यह मौसम मेरे लिए ठीक ही है, क्योंकि रक्तचाप १६०-९६ है। बा तथा साथके कुछ लोग पुरी गये हैं।

मुझे खुशी है कि तुम विजया और मुन्नालालकी मदद कर पा रही हो। यह भी अच्छा है कि मुन्नालाल स्वयं चाहता था कि तुम उसकी मदद करो।

हम कलकत्ता १ तारीखको लौटेंगे किन्तु हो सकता है ३१ को ही लौट जायें। तभी मुझे पता चलेगा कि हम सेगाँवके लिए कब रवाना हो सकते हैं।

यह अच्छा ही है कि [illegible] बम्बई चली गई है। अपने भाईकी निकटता से उसकी कुछ भरपाई हो जायेगी। और बम्बईका नम जलवायु उसे सम्भवतः अनुकूल भी रहेगा। आशा तो यही रखें।

लोग मुझे यहाँ यथासम्भव ज्यादासे-ज्यादा आराम दे रहे हैं।

तुलसी मेहर यहीं है और कान्ति भी। कान्तिको बहुत लम्बी छुट्टी मिली है। फ्राइडमैन[1] और उमादेवी[2] भी यहीं हैं।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३९८) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९९९३ से भी।

१ और २. मॉरिस फ्राइडमैन, एक पोलिश इंजीनियर तथा उनकी पत्नी, जिन्होंने अपना यह भारतीय नाम रखा था।

५२३. पत्र : प्रभावतीको

२८ मार्च, १९३८

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। तू व्यर्थ दुःखी होती है। तेरे जितना सुख किसे प्राप्त है? कई चीजें हमें धर्म समझकर करनी पड़ती हैं, उसमें दुःखकी क्या बात है? तुझे एकाएक भागना पड़ा, यह बात मुझे तनिक भी अच्छी नहीं लगी। लेकिन ऐसा बहुत-कुछ तो हमें इस जीवनमें करना ही पड़ता है। अब वहाँ तुझे क्या खास काम करना होता है? कलकत्तामें मुझे तीन दिन तो अवश्य ठहरना पड़ेगा, कदाचित् इससे भी ज्यादा ठहरना पड़े। कैदियोंके बारेमें जब कुछ निर्णय किया जायेगा तभी मुझे मालूम होगा। तू वहाँ पत्र लिखना। पता है: १ वुडबर्न पार्क, कलकत्ता। क्या तू जयप्रकाश-के साथ नहीं आ सकती?

मेरी तबीयत अच्छी रहती है। रक्तचाप कभी-कभी बढ़ जाता है, लेकिन बादमें सामान्य हो जाता है।

बाकी तो कान्तिने लिखा होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५१०) से।

५२४. पत्र : विजया एन० पटेलको

२८ मार्च, १९३८

चि० विजया,

तू समझती होगी कि तुझे तो मैं भूल ही गया हूँ? लेकिन मुझे आज ही छोटी-छोटी चिट्ठियाँ लिखने की फुरसत मिली है। तेरी गाड़ी ठीक चल रही जान पड़ती है। मैं जबतक आऊँ तबतक पूरी तरहसे स्वस्थ हो जाना। कटिस्नान और घर्षण-स्नान न छोड़ना। तेरी तबीयत यदि थोड़ी-सी भी खराब होने लगे तो तुरन्त फलोंका रस लेने लगना।

मैं ठीक रहता हूँ। गर्मी बहुत है। मुझे परेशानी नहीं होती। मैं नहीं लिखता इसलिए तू भी न लिखे, ऐसी बात तो नहीं है न?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७०७८) से। सी० डब्ल्यू० ४५७० से भी; सौजन्य : विजयाबहन एम० पंचोली

५२७. पत्र : शारदा चि० शाहको

डेलांग
२८ मार्च, १९३८

चि० शारदा,

आज मौनवार है और मुझे थोड़ी फुरसत भी है। यहाँ काफी गर्मी है। साथ अच्छा है। बा, लीलावती, मणिलाल और उसकी पत्नी सुशीला साथमें हैं। और लोग तो हैं ही। कान्ति बंगलोरसे आया है। तेरा पत्र यहाँ आना चाहिए था। अभी तो नहीं आया। कदाचित् कल आये। हम पहलीको अथवा ३१ तारीखको कलकत्ता पहुँचेंगे। मेरी तबीयत अभी तो अच्छी रहती है। खाना मैंने काफी कम कर दिया है। अब रक्तचाप १६०-९६ हो गया है।

प्रभावती पटना गई है और अमतुस्सलाम बम्बई।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९९२) से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला

५२८. भाषण : गांधी सेवा संघमें

डेलांग
२८ मार्च, १९३८

आज जिस तरहकी चर्चा मैंने अभी सुनी और जो दोपहरमें हुई, उसका संक्षिप्त ब्योरा किशोरलाल मुझे सुना रहे थे, उस सबको सुनकर मैं इस अभिप्रायपर आया हूँ कि यह प्रस्ताव आपके सामने न रखा जाये। आप यह न समझें कि यह केवल दो-चार भाइयोंकी बहसका परिणाम है। मैंने यहाँ जो चर्चा सुनी, उसका भी मुझ पर यही परिणाम हुआ है। इसका मतलब यह नहीं है कि जो इस चीजको मानते हैं, वे उसपर अमल न करें। मतलब इतना ही है कि इस विषयमें मेरा किसीसे कोई आग्रह नहीं है। लेकिन उस प्रस्तावमें जो सिद्धान्त है, उसके विषयमें आग्रह जरूर है। यह कोई कृत्रिम वस्तु नहीं है। अगर आप मेरी चीजको समझ गये हैं तो उस पर चलने से और अपनी शक्तिके अनुकूल कार्य करने से उस चीजका वजन और भी बढ़ जायेगा। सिर्फ प्रस्तावसे तो काम नहीं चलेगा। जमनालालजी की सूचनाको लीजिए। वे कहते हैं कि जहाँतक हमारे गांधी सेवा संघमें मुसलमान सदस्य नहीं आते तबतक इस तरहकी चेष्टा करना बेकार हो जायेगा। बात तो ठीक है, लेकिन जब

सेवा करेंगे और उस सेवाका असर होगा, मुसलमानोंसे घनिष्ठता होगी, तभी तो सच्चा रास्ता निकलेगा। जबरदस्ती एकआध-दो सदस्य बन भी जायें तो क्या होगा? मुसलमान समाजसे हमारा सेव्य और सेवक-सम्बन्ध बँध जाये तभी होगा। जमनालालजी जैसा कहते हैं, वही अबतक कांग्रेसने किया। कई मुसलमान सदस्य बना लिये। काम तो अच्छा ही हुआ। लेकिन उन्हें मना-मनाकर सदस्य बनाया। यह तो एक तरहकी खुशामद हुई और या तो राज्यप्रकरणी नीति[1] कह लीजिए। आज मैंने जो-कुछ कहा है, वह राज्यप्रकरणके लिए नहीं कहा है, चाहे उससे बढ़िया राज्यप्रकरणी परिणाम भले ही निकलें। आज तो मैंने यह बात केवल अहिंसाकी दृष्टिसे रखी है। अगर हम सचमुच शक्तिशाली अहिंसाका प्रयोग कर रहे हैं, तो हिन्दू-मुसलमानोंके बीच मैत्री कराने का प्रयत्न होना चाहिए। अबतक दोस्ती नहीं थी। सिर्फ खुशामदसे उन्हें जीतने की कोशिश हुई। उन सब चीजोंमें पालिसी थी। व्यवहार-दृष्टिसे दोस्ती रखी, जैसे व्यापारियोंकी व्यवहार-नीति होती है। अबतक इस मामलेमें हमने अहिंसाकी परीक्षा नहीं दी है। अगर आज हम अहिंसाका इम्तहान दे सकते हों, और उसमें उत्तीर्ण हो सकते हों, तो अहिंसाके साधनोंसे स्वराज्य प्राप्त करने के रास्तेपर हम हजारों कदम आगे बढ़ जायेंगे। अगर आप सचमुच यह मानते हैं कि अहिंसाके बिना स्वराज्यकी प्राप्ति नहीं होगी, तो आपको यह भी मानना होगा कि बिना हिन्दू-मुसलमानोंके ऐक्यके हमारा अहिंसक साधन असर नहीं करेगा। मैं जैसे-जैसे इस प्रश्नमें गहरा उतरता हूँ वैसे-वैसे मेरे सामने कई चीजें खड़ी हो जाती हैं। मैं तो बुद्धिसे काम ले रहा हूँ न? आजकल तो केवल बुद्धिपर ही भरोसा कर रहा हूँ, पर केवल बुद्धि पागल या नामर्द बना देती है। यही उसका काम है, ऐसी हालतमें निर्बलका बल तो राम ही होता है। मेरी [illegible] तो अहिंसाकी ही है। निर्बलता यह है कि मैं इस चीजको कैसे करूँगा उस निर्बलताको दूर करने के लिए अपना बुद्धिचातुर्य चला रहा हूँ। यह बुद्धिचातुर्य अगर सत्यके आधारको छोड़ दे तो मेरी अहिंसाकी दृष्टिको वह मैली कर देगा। क्योंकि अहिंसा भी तो सत्य है न? निरी व्यावहारिक बुद्धि तो सत्यका आवरण है। वह तो हिरण्यमय पात्र है, जो सत्यके रूपको ढक देता है।[2] तो ऐसी बुद्धिसे तो हजारों चीजें पैदा हो जायेंगी। उनमें से एक ही चीज बचायेगी — श्रद्धा। इसीलिए गंगाधररावने कहा कि वे कुछ कमजोरी महसूस नहीं करते। उनके लिए कमजोरीकी दलील थोथी है। लेकिन दूसरोंके दिलमें शक है कि क्या अहिंसासे यह बात होगी? कृपलानीने शंका उठाई थी कि जहाँपर व्यक्तिगत गुप्त हमले होते हैं, वहाँ हम किस नीतिसे काम लें? यह तो गोरिल्ला बन्दरोंकी लड़ाईका ढंग हुआ। जैसा अभी प्रभुदासने कहा। बनारसमें कुछ नहीं था, शान्ति थी। लेकिन सारनाथमें चार हिन्दुओंकी हत्या हो गई। अब हमारी अहिंसा यहाँ क्या काम दे? मैं कहता हूँ इसे जरा गहराईसे सोचिए। यह तो लड़ाई-

१. राजनीति।
२. ईशोपनिषद्, १५।

की योजनाका एक अंग है। आप कहते हैं वहाँ किसकी दोस्ती काम देगी? मैं कहता हूँ जरूर देगी। कोई दो-चार आदमी दीवाने बन गये, ऐसी बात थोड़े ही है? उसकी जड़ तो है इस बातमें कि वैसी आबोहवा है। लेकिन फिर भी आज तो मैं नहीं कह सकता हूँ कि हमारी सेवासे किस मात्रामें ये बातें बन्द होंगी। आप सेवाको सौदेकी चीज न बनाइए। अहिंसा ऐसे चलती ही नहीं। उसमें तो हम अपनी तरफसे निःशंक आचरण शुरू कर देते हैं। तारीख ६ अप्रैल, १९१९का उदाहरण लीजिए।[1] तब कांग्रेस कमेटियाँ कहाँ थीं? हमने तो एक संकल्प जाहिर कर दिया। लाखों-करोड़ोंने हमारी बातका उत्तर दिया। आप ही बताइए, यह बात कैसे बनी? सबको ऐसा लगा मानों कोई चमत्कार हो गया। लोगोंको ऐसा मालूम हुआ कि इसकी तहमें कोई जबरदस्त योजना होगी, पर योजना वगैरा तो कुछ नहीं थी। लेकिन उसके पीछे प्रार्थना तो काफी भरी थी। यही हाल दाँडी मार्चका हुआ। किसने उसका संगठन और आयोजन किया था? खुद मुझे पता नहीं था। केवल श्रद्धा थी। लेकिन मैं भी कहाँ जानता था कि भगवान् क्या करेगा? केवल विश्वास था कि यह चीज ऐसी बननेवाली है। आपके पास तो इस बातकी गवाही है कि उसकी कोई पूरी कल्पना मेरे पास नहीं थी। आखिर न मालूम कैसे वह चीज बन ही गई। अहिंसा तो ऐसे ही चलती है। आज हमें कमजोरी की बात याद आती है। दरअसल वह कमजोरी नहीं है। असली बात तो यह है कि अहिंसापर विश्वास नहीं। अविश्वास इस बातका है कि क्या अहिंसासे यह प्रश्न हल होगा? स्वराज्यके बारेमें तो करोड़ोंको यह भरोसा हो गया है। लेकिन हिन्दू-मुस्लिम ऐक्यके बारेमें हजार आदमी भी ऐसे नहीं मिलेंगे। हमें जरूरत इस बातकी है कि अहिंसामें हमारा विश्वास केवल स्वराज्यके साधनके रूपमें न हो, बल्कि स्वतंत्र रूपसे हो। अहिंसाकी दृष्टिसे चाहे स्वराज्य हो या न हो, हिन्दू-मुस्लिम एकता तो होनी ही है। हिन्दू-मुस्लिम एकता हमारे लिए स्वराज्यका साधन नहीं है। इसके लिए मैं आबोहवा भी नहीं पैदा कर सका हूँ। मैं जिस तरह इस चीजको मानता हूँ उस तरह हजार आदमी भी आज नहीं मानते। जैसे मैं यह कहता हूँ कि असत्य या हिंसासे स्वराज्य मिले तो मुझे नहीं चाहिए, उसी तरह मैं आज यह भी कहना चाहता हूँ कि अगर हिन्दू-मुस्लिम एकताके बिना स्वराज्य मिले तो मुझे ऐसा स्वराज्य भी नहीं चाहिए। क्योंकि मैं तो यह चाहता हूँ कि आजाद भारतमें न हिन्दू मुसलमानोंके मातहत हों न मुसलमान हिन्दुओंके। मैं तो सबको समान रूपसे देखना चाहता हूँ। शायद आपको इस सवालका यह पहलू कुछ नया-सा मालूम पड़े। अगर आपके लिए यह चीज नयी है तो मेरे लिए भी बिलकुल नयी है। कोई सीधा रास्ता नजर नहीं आता। सामने तमाम अँधेरा है। लेकिन इतना विश्वास जरूर है कि श्रद्धासे कदम बढ़ाऊँ तो मुकामपर पहुँच ही जाऊँगा। अगर आप यह समझते हैं तो इस चीजको बिना प्रस्तावके भी शुरू कर दें। एक दृष्टिसे यह प्रश्न स्वराज्यसे भी मुश्किल है। स्वराज्यकी आकांक्षा आज करोड़ों आदमियोंमें

१. देखिए खण्ड १५, पृ० १८२-१९५।

है। हिन्दू-मुस्लिम एकताकी तो मुट्ठी-भर आदमियोंमें भी नहीं है। इस सवालको हम स्वतन्त्र रूपसे हल करना होगा। इसमें कठिनाइयाँ बहुत हैं। क्योंकि हमें मुसलमानोंकी सेवा करते हुए उनका हित साधना है, उनकी खुशामद करके उनके स्वार्थको नहीं बढ़ाना है। जैसे प्रभुदासका दिया उदाहरण ही ले लीजिए। उसका करना मुझे बिलकुल पसन्द नहीं आया। अगर मुसलमान जमींदार जिद करे कि तुम होली न करो तो क्या मैं हिन्दुओंसे कहूँ कि तुम होली बन्द कर दो, क्योंकि वे बेचारे मेरी बातको मानते हैं? मैं तो हर्गिज ऐसा नहीं करूँगा। आप कहेंगे कि होली करना तो जमीनदोज होना है। मैं हिन्दुओंको यह बात समझाऊँगा कि वे इस तरह अपनी धर्मक्रिया बन्द न करें। मैं खुद जमींदारसे कहूँगा कि आओ मेरा कत्ल करो, मैं खुद तुम्हारे सामने होली जलाता हूँ। हिन्दुओंसे कहूँगा कि मुसलमानोंकी सरफोड़ी न करो। अपनी सरफरोशी करो। हम डरकर किसी चीजको नहीं छोड़ेंगे। जिस चीजका मुझे अधिकार है, और जिस चीजको मैं कर सकता हूँ, उसे मैं जरूर करूँगा। इसके लिए अहिंसक ढंगसे लड़ना पड़ा तो लड़ूँगा। मैं जिन्ना साहबसे दोस्ती करने चला गया। लेकिन इसलिए अगर मैं दब जाऊँ और अपने फर्जको अदा न करूँ तो वह मेरी दोस्ती ही नहीं है। यह तो कोई नया सिलसिला नहीं है। मुख्य बात यह है कि मित्रताका आधार सेवा हो। कोई मतलब या स्वार्थ न हो, जैसी मेरी छुटपनकी मित्रताका था। तब तो मैंने उस मुसलमान लड़केसे[1] जो दोस्ती की थी वह मांसाहारके लिए थी, और उसीके साथ खत्म भी हो गई। लेकिन अब तो मैं उन लोगोंसे सेवा करनेके लिए कह रहा हूँ, जो सेवाके भावसे दोस्ती करें और परिपक्व बुद्धिके होनेके कारण आत्मा और परमात्माको मानते हों। इस दोस्तीसे एकता सिद्ध होगी।

अब लड़कियोंकी बात आ जाती है। वे क्या करें? क्या मुसलमानोंका चेहरा देखकर डर जायें। डरना तो नहीं चाहिए। लेकिन उनका यह धर्म नहीं हो जाता कि वे दंगेके वक्त मैदानमें कूद पड़ें, या गुप्त हमलोंका शिकार बनें। हाँ, कोई मृदुला-जैसी लड़की हो तो बात दूसरी है। उसे किसीका डर नहीं लगता। उसे मुसलमान मार भी डालें तो परवाह नहीं है। जिनके अन्दर आत्मविश्वास है उन लड़कियोंको तो जाना चाहिए। लेकिन जो डरती हैं, जिनमें वह आत्मविश्वास नहीं है, वह हृदयबल नहीं है, वे न जायें। संशयात्मा विनश्यति।[2] अगर मैं शंकाशील होऊँ तो साँपको थोड़े ही स्पर्श कर सकता हूँ। जो स्त्रियाँ शंकाशील हों वे मुसलमानोंके सामने हर्गिज न जायें। ऐसे कई दृष्टान्त मेरे दिमागमें भरे हुए हैं। ये चीज आप समझ जायें इस तरह कहनेकी कोशिश की। आप यह न समझें कि यह सारी चर्चा अकारथ गई। मेरा दिमाग भी ज्यादा साफ हो गया है। आपने कई कठिनाइयोंकी तरफ मेरा ध्यान दिलाया है। उनके होते हुए भी इस चर्चाके बाद मेरा विश्वास बढ़ गया है कि हमें

१. शेख मेहताब; देखिए खण्ड १, पृ० ५ और खण्ड ३९, पृ० १९-२४।
२. भगवद्गीता, ४/४०।

यही करना है और करना होगा। हम कोई कमेटी वगैरा न बनायें। सब कोई अपनी-अपनी कमेटी हैं। सब अपने-अपने सरदार और अपने-अपने सिपाही हैं। जो सेवक है वही नायक है। जहाँ कोई आबोहवा न हो, वहाँ कमेटी बनाकर भी क्या होगा? मौका आनेपर दिमाग गुम हो जायेगा। असली बात तो यह है कि मस्तिष्कको — दिमागको साफ रखें। यह कोई किसीका मुकाबला करनेकी बात नहीं है। यह बात इस तरह नहीं चलनेवाली है। एक ही मामलेमें जो चीज एकके लिए धर्म हो सकती है, वही दूसरेके लिए अधर्म हो सकती है। हम अपनी आत्माको धोखा न दें, बुद्धिको कलुषित न करें। अहिंसाकी साधना करनी है, तो यम-नियमोंका पालन करना होगा। यह जो हमारे पूर्वजोंने कहा है वह बिलकुल सही है। मैं कोई नयी बात निकाल-कर नहीं दे रहा हूँ। पूर्वजोंकी चीजमें कितनी शक्ति भरी पड़ी है सो बताता हूँ। मैंने उन्हींकी पुस्तकोंसे यह चीज निकाली है। अहिंसाका अनुष्ठान बिना व्रत-पालनके नहीं हो सकता। इसका यह मतलब नहीं है कि अगर एक आदमी व्यभिचार करता है और शराब पीता है, इसलिए वह हिंसक ही है। लेकिन इतना जरूर है कि वह अहिंसाका निष्ठापूर्वक अनुष्ठान नहीं करता। हरएक चीजको हमें इसी दृष्टिसे परखना होगा। क्या यह चीज अहिंसाकी पोषक है या शोषक है। शराब तो मैं भी पी सकता हूँ, अगर वैद्य मुझसे कहें तो औषध समझकर। अगर हमारा यह आन्दोलन अहिंसाका पोषक है, तो हम कमसे-कम हिन्दू-हिन्दुओंका तो ऐक्य सिद्ध कर बतायें।

मैंने इस चीजको क्यों सीख लिया? क्योंकि दूसरी चीज जो मैं करना चाहता हूँ वह इसीमें से पैदा होगी। हिन्दू-मुसलमान एकताकी साधनाके बारेमें आप एक और चीजको बिलकुल न भूलें। इसमें हरएक धर्मकी परीक्षा हो रही है। हिन्दू-धर्ममें कोई विशेषता भले ही न हो, फिर भी असाधारणता तो होनी ही चाहिए। नहीं तो हिन्दू नाम ही कैसा आया? हिन्दू-धर्मकी वह असाधारणता क्या होली खेलने में है? क्या मुसल-मान धर्मकी असाधारणता छुरा भोंककर भाग जानेमें है? हिन्दू-धर्म क्या पशुता सिखाता है? और क्या पैगम्बरके धर्मने गुंडापन सिखाया है? मतलब यह कि आपको शुद्ध हिन्दू बनकर मुसलमानोंके पास जाना है, तबतक कोई ऐक्य नहीं हो सकता। मैं जानता हूँ ऐसे कई मुसलमान हैं, जो ऐसा मानते हैं कि जबतक हिन्दू कलमा न पढ़ेगा तबतक उसका उद्धार न होगा। लेकिन अगर हम अपने जीवनकी पवित्रता और आचरणकी श्रेष्ठतासे यह साबित कर दें कि बिना कलमा पढ़े ही हमारा उद्धार हो सकता है, तो हिन्दू-धर्मके प्रति उन मुसलमानोंमें भी बरबस आदर पैदा होगा। यह सच्ची एकता किसी पोलिटिकल समझौतेसे नहीं होनेवाली है। इस तरहके सौदेके पैक्ट फिजूल हैं। जरूरत है धार्मिक समझौतेकी, जिसमें कोई सौदेकी बात नहीं होती। उसके लिए वीरोंकी मित्रता, और सबलोंकी अहिंसा चाहिए। ऐसी अहिंसाके रास्तेमें घोर श्मशान भी आ जाये तो वह उसमें से निडर होकर गुजरेगी। मैं यह नहीं कहता कि मेरे अन्दर वह आ गई है। मैं तो हरएक चीजसे डरता हूँ। शायद मैं सबसे अधिक दुर्बल और डरपोक हूँ। लेकिन सच्ची अहिंसाका पुजारी तो हूँ। मैं कहता हूँ, जबतक हमारे अन्दर वीरोंकी अहिंसा नहीं आयेगी और सच्ची धार्मिकता

हमारे व्यवहारमें नहीं आयेगी तबतक मुसलमानोंमें हमारे धर्मके लिए आदर और हमारे लिए प्रेम कदापि नहीं पैदा होगा।

गंगाधरराव: प्रस्तावको वापस ले लेनेसे नतीजा अच्छा नहीं होगा।

बापू: ऐसी कोई बात नहीं है।

जमनालालजी: मैंने जो मुसलमान सदस्य बनाने की बात कही उसका एक खास मतलब है। मुसलमान कोई अनुचित बात करें तो उन्हें मुसलमान ही समझा सकता है, और हिन्दुओंको हिन्दू। लेकिन में देखता हूँ कि शरीफसे-शरीफ मुसलमान भी अपनी जमातकी हरकतोंके खिलाफ आवाज नहीं उठाते। और हम अगर उनकी हर-एक भली-बुरी बातका समर्थन करें तभी तक वे खुश रहते हैं। मैं इस हालतको बरदाश्त नहीं कर सकता। प्रभुदासने जो-कुछ किया उसका समर्थन मैं नहीं कर सकता। क्या मुसलमानोंसे दोस्ती करने के लिए हम डरके मारे बाजा बन्द कर दें? दोस्तीका मतलब यह नहीं है कि हम अन्यायके प्रतिकारको छोड़ दें। लेकिन कांग्रेस और गांधी सेवा संघकी नीति आजतक कुछ ऐसी ही रही है। मेरी रायमें खुशामद-से एकता या प्रेम नहीं हो सकता।

बापू: अगर हमारा यह खयाल हो गया है कि हमें मुसलमानोंके अन्यायको चुपचाप दब्बूपनसे सह लेना चाहिए तो वह बिलकुल गलत है। अगर मैंने आजतक यह नहीं कहा है कि उनके भी अन्यायका प्रतिकार करना चाहिए, तो लीजिए आज कहे देता हूँ। अब हमको मुसलमानोंसे भी कह देना चाहिए कि तुम अन्यायी हो और इसके लिए वे मारें तो मार खा लेनी चाहिए। प्रस्ताव तो हम इस विषयमें कुछ प्रयत्न और अनुभवके बाद करें। हो सकता है कि इस दिशामें प्रयोग करते हुए किसी-को कोई नयी प्रेरणा मिले। तब तो हम खास इसीलिए संघकी बैठक एक सालके दरमियान भी कर सकते हैं।

दास्तानेजी: यह प्रस्ताव नहीं, तो इसी तरहका कोई दूसरा प्रस्ताव जितनी हमारी श्रद्धा और शक्ति हो उसके अनुरूप करें।

बापू: हाँ, आप चाहें तो यह कर सकते हैं। लेकिन मेरी रायमें तो प्रयोग और अनुभवके बाद ही करना उचित होगा।

गांधी सेवा संघके चतुर्थ वार्षिक अधिवेशन (डेलांग-उड़ीसा)का विवरण, पृ० ५०-५५

५२९. पत्र : मीराबहनको

[२८ मार्च, १९३८ के पश्चात्][1]

चि० मीरा,

मैं यह कह सकता हूँ कि तुम अब मेरा काम कर रही हो। यह जानकर मुझे बड़ी तसल्ली हुई कि तुम अमतुस्सलामकी देखरेख कर रही थीं और उसे विदा करने के लिए गई थीं।

मेरी चिन्ता मत करना। मैं जितनी जल्दी हो सके उतनी जल्दी वहाँ पहुँचने की कोशिश करूँगा।

लीलावतीके साथ धैर्यसे काम लेना।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४२३) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० १००१८ से भी

५३०. भाषण : अखिल भारतीय चरखा संघके कार्यकर्त्ताओंकी बैठकमें

बिरबोई
२९ मार्च, १९३८

गांधीजी ने सुझाव दिया कि आठ घंटे प्रतिदिन काम करनेवाले कतैयोंको कमसे-कम आठ आने दिये जानेका प्रयत्न करना चाहिए। इस तरह उन्हें प्रतिमास कमसे-कम १५ रुपये मिल जायेंगे। महात्माजी ने यह भी कहा कि खादीका मूल्य इस प्रकार निर्धारित किया जाना चाहिए जिससे कि अमीरोंसे ज्यादा और गरीबोंसे कम पैसे लिये जा सकें। गांधीजी ने सदस्योंसे आग्रह किया कि वे उनके सुझावोंपर गम्भीरता से विचार करें।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ३०-३-१९३८

१. देखिए "पत्र : मीराबहनको", पृ० ४८४।

५३१. भाषण : गांधी सेवा संघमें

डेलांग
३० मार्च, १९३८

आजका दिन अधिवेशनका आखिरी दिन है। मुझे खुद पता नहीं था कि आज मैं कुछ बोलनेवाला हूँ। किशोरलालने कहा कि मुझसे आशा तो रखी जाती है। बादमें इच्छा भी हुई। मैं जो-कुछ कहना चाहता, उससे पहले एक सवालका जवाब दे दूँ।

एक प्रश्न पूछा गया है कि क्या समितिके हरएक सदस्यको सालमें १५०० घंटे प्रत्यक्ष गांधी सेवा संघके काममें नहीं देने चाहिए? यह सवाल जेठालालका है। चीज तो बहुत अच्छी है। लेकिन उसपर अमल नहीं हो सकता। आज तो हमें इस चीजके आग्रहको छोड़ ही देना चाहिए। जितना है उतना शारीरिक काम, मन और बुद्धिका काम नहीं, हरएकको करना चाहिए। लेकिन हम इतनी दूर नहीं जा सकते कि लोगोंसे ४ या ५ घंटे रोज कामकी आशा करें। यह कोई मजदूरोंका संघ नहीं है। बन जाये तो अच्छा है। लेकिन आज तो पढ़े-लिखे आदमियोंका संघ है। अगर समितिसे पाँच घंटे रोज काम लेना है, तो उससे पहले तो हमें देना चाहिए। ये लोग आज इतना समय भी कहाँसे लायें? इस देशमें तो यह मुसीबत है कि जो बड़े आदमी समझे जाते हैं उन्हें समय ही बहुत कम मिलता है। वल्लभभाई इतना समय कहाँसे दें? या तो हमें उनको निकाल देना चाहिए। लेकिन उनके सिवाय निभ भी तो नहीं सकता। हमको अपनी मर्यादा समझ लेनी चाहिए।

अब जो-कुछ मैं कहना चाहता हूँ उसके बारेमें कल तो मैंने यह तय कर लिया था कि इस विषयमें मौन ही रहूँ। लेकिन आज सवेरे विचार बदल गया। महादेवने कुछ कहकर मेरा रास्ता खोल दिया। महादेवसे मेरा निकटका सम्बन्ध है। इस विषयमें मैं कुछ नहीं कहना चाहता था। महादेवने कह दिया। अच्छा ही हुआ। जो-कुछ हुआ है, सो तो आप जानते ही हैं। आप चाहे चरखा संघ, देहाती धन्धे या हरिजनोंका काम करते हों, जो-कुछ काम आप करते हैं, वह तो केवल एक बहाना है। उस बहाने हम यह देखना चाहते हैं कि सत्य कहाँतक चल सकता है। अहिंसा हमको कहाँतक ले जा सकती है। हम अहिंसाके साथ उसको साध रहे हैं। लेकिन असली परीक्षा इसमें नहीं है। सबका निचोड़ तो यह हो जाता है कि उससे हमें आजादी प्राप्त हो। इसलिए हम इन सब प्रवृत्तियोंको चला रहे हैं। लेकिन अछूतपनका विचार हमको इस तरह नहीं करना चाहिए। हमको तो यह प्रार्थना करनी चाहिए कि अगर अछूतपन हिन्दू-धर्मका अंग है और वह नहीं मिट सकता तो फिर भले ही हिन्दू-धर्म ही मिट जाये। [illegible] धब्बा किसी कौमपर न रहे।

एक सालतक मैंने हरिजनोंके लिए दौरा किया। और भी कई बातें कीं। मुझसे कहा जाता है कि अछूत तो मन्दिरोंमें नहीं जाना चाहते। यह मान भी लिया जाये तो इसका कारण यह है कि हमने उन्हें ऐसा हैवान बना दिया है कि अब उन्हें मन्दिरों से कोई मतलब नहीं रहा। लेकिन उन्हें मन्दिरोंमें जानेकी दरकार नहीं है तो हमें उन्हें वहाँ जाने देनेकी होनी चाहिए। मैं वर्षोंसे चीख-चीखकर कह रहा हूँ कि जिस मन्दिरमें हमारे अछूतभाई नहीं जा सकते, वहाँ हम न जायें। क्या उस मन्दिरमें मेरी औरत, लड़की या माँ जा सकती है? हमारा कर्त्तव्य है कि उन्हें समझायें और यदि वे न मानें तो हमारा कर्त्तव्य है कि माताको भी त्यज दें और पिताको भी। हम दूसरोंसे बहस करते हैं, इसलिए जिसको हमने अपना धर्म मान लिया है, उसके लिए तैयार हो जाना चाहिए। कल जो-कुछ हुआ उससे मैं निस्तेज हो गया। मेरा दिमाग इस तरह गरम हो गया कि मानों नसें टूटने की नौबत आ गई। उस बातको जब सोचता था तो ब्लड-प्रेशर खूब बढ़ जाता। मुझे इसकी परवाह नहीं थी कि वह बढ़ रहा था। 'गीता' की भाषा जाननेवाले कहेंगे कि इन चीजोंका ऐसा असर नहीं होना चाहिए। मैं ऐसा नहीं बनना चाहता कि किसी चीजका असर मुझपर न पड़े। 'गीता' में त्रिगुणातीतके लक्षण मैंने पढ़े हैं। लेकिन वह तो आदर्श है। बाकी हम सब तो वहीं तक जा सकते हैं जहाँतक हमको सात्विकता ले जाये। अगर मुझपर किसी चीजका असर न हो तो मैं मूढ़ बन जाऊँगा। इसलिए कल मुझे इतनी सख्त चोट लगी। अगर इस तरह हमें सदमा न पहुँचे तो हम कोई काम नहीं कर सकते। इसका कारण यह नहीं है कि वे तीन औरतें चली गई, लेकिन यह कि उन्हें सही तालीम नहीं मिली। महादेव अपने धर्मको भूल गया। उसने सोचा उन्हें श्रद्धा है तो मैं खलल पहुँचाऊँ? उसने उस मूढ़ श्रद्धाको धर्म मान लिया। उसने यह नहीं सोचा कि वह जो बूढ़ा पड़ा है, उसके दिलपर क्या असर होगा, समाजपर क्या असर होगा। हमें अपने व्यक्तिगत धर्म और सामाजिक धर्मको समझ लेना चाहिए। मुझ पर क्या असर पड़ा? मैं निस्तेज हो गया। मेरा पोता कहता है कि 'अमृतबाजार पत्रिका' में लिखा है कि कस्तूरबाई वहाँ नहीं (गई) और बाहर खड़ी रहीं। सचमुच ऐसा होता तो मैं पाँच गज ऊँचा उछलता। लेकिन पचास साल मेरे साथ गृहस्थाश्रम करने के बाद वह वहाँ क्यों गई? और वे दूसरी दो औरतें[1] भी क्यों गईं? वे तो मेरी लड़कियाँ हैं? वह भी मेरी गलती है। उनकी इस कृतिसे हमारी आत्मिक शक्तिका ह्रास हुआ है। हमको इतनी सावधानी रखनी ही चाहिए। हम औरतोंको औरतें समझकर इन बातोंकी उपेक्षा करते हैं। यह अहिंसाका मार्ग नहीं है। यह जागृतिका विषय है। महादेवका काम था कि वह उन्हें समझाता और उनके न मानने पर मेरे पास लाता। मैं उनसे कहता कि मैं तुम्हारा धर्म-पिता हूँ, विधर्मी नहीं हूँ। धर्मपिता तभी हो सकता हूँ जब तुम्हारा और मेरा धर्म एक हो। उनका और मेरा अगर समान धर्म हो जाये तब तो मैं समाजको भी समझाऊँगा कि ऐसे

१. दुर्गा और वेलाबहन; देखिए "पत्र : महादेव देसाई को", पृ० ४९८-९९।

मन्दिरोंमें क्या पड़ा है? और अगर जाना ही है, तो वहीं तक जायें जहाँतक हरिजन जाते हैं। सिर्फ झाड़ू लगा देनेसे हरिजनोंके साथ तादात्म्य सिद्ध नहीं होता। जो मन्दिर सैकड़ों हजारों वर्षोंसे पवित्र गिने गये हैं, जहाँ चैतन्य-जैसे[1] महात्माओंने पूजा की है, जहाँ जानेके लिए हम तरसते हैं, वहाँपर भी अगर हम सिर्फ इसलिए न जायें कि हमारे हरिजन भाई नहीं जा सकते तो वह बड़ा भारी धर्मकृत्य होगा और अगर उन मन्दिरोंमें दरअसल ईश्वर है, जैसाकि हम मानते हैं, तो उसका प्रभाव पड़ने ही वाला है। वहाँ पण्डा आये थे। वे कहते थे कि आपके साथ हरिजन जा सकते हैं। ठीक ही है। उसका ईश्वर तो चाँदीका सिक्का है। इसलिए मैंने राजेन्द्र बाबूकी बहनको रोक दिया। कोई कहेगा मैंने अनुचित दबाव डाला। मैं कहता हूँ मैंने उसको अधर्मसे बचाया। मैंने यदि दस्तन्दाजी की है तो धर्मके नामपर की है। ये तीन औरतें चली गईं वैसे और भी कई लोग गये होंगे और जानेवाले होंगे। उनके लिए अपने हृदयके भाव प्रकट किये। इसके बाद भी जो अपने-आपको न रोक सकें उनके लिए मैं क्या कहूँ?

इस सवालका सम्बन्ध हिन्दू-मुस्लिम मसलेसे भी है। हमारे सामने अहिंसाका एक नया क्षेत्र पैदा हो जाता है। सनातनी तो कहते हैं कि छुआछूत हिन्दू-धर्मका अंग है। मुसलमान भी यही मानते हैं। वे कहते हैं कि हिन्दू-धर्ममें सिवा छुआछूत और बुतपरस्तीके और है ही क्या? लेकिन इस छुआछूतकी बू उन्हें भी लग गई है। वे भंगियोंको दूर रखते हैं। जब मुसलमान देखेंगे कि हमने छुआछूतको छोड़ दिया, मुसलमानोंके विरोधके लिए या राजकीय कारणोंसे नहीं, बल्कि आदमियतके लिए, तो उनपर भी असर पड़ेगा। वे कहेंगे कि ये लोग बुतपरस्त भले ही हों, लेकिन इनके बुतमें भी खुदा है। इसीलिए मैंने बुतपरस्तोंसे कहा कि तुम मुसलमानोंसे दोस्ती करो। यही बहादुरीकी अहिंसाका मार्ग है। मौलाना साहब भी शायद ऐसा ही मानते हैं कि गांधी तो जैसा कहता है वैसा ही है। लेकिन दूसरे हिन्दू छुआछूतसे शराबोर हैं। हमारी यह जिम्मेवारी है कि हम उनकी इस रायको बदल दें। क्या गांधी सेवा संघका कोई सदस्य यह भी कहेगा कि मेरे लिए एक धर्म और मेरी स्त्री और बहनके लिए दूसरा? यह न तो धार्मिक उदारता है और न अहिंसा ही। लोग हमें दाम्भिक समझेंगे। धर्म तो उत्कट श्रद्धाका नाम है। धर्मका निचोड़, उसका दूसरा नाम, अहिंसा है। उसमें यह ताकत है कि अंग्रेजके हाथसे उसकी तलवार गिर जाये। मुसलमानका गुंडापन धरा रह जाये। पंतजलिने कहा है कि अहिंसाके सामने हिंसा निकम्मी हो जाती है। अगर आजतक ऐसा नहीं हुआ है तो उसका कारण यह है कि हमारी अहिंसा दुर्बलों और भीरुओंकी थी।

गांधी सेवा संघके चतुर्थ वार्षिक अधिवेशन (डेलांग-उड़ीसा)का विवरण, पृ० ६५-६७

१. कृष्ण चैतन्य **गोस्वामी** जो गौरांग महाप्रभु के नाम से भी जाने जाते हैं, और जिन्होंने **बंगाल** में वैष्णव सम्प्रदाय **की स्थापना की थी।**

५३२. पुर्जा : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

[३१ मार्च, १९३८ के पूर्व][1]

मैंने ऐसे नही कहा मेरे साथ चल सकता नहीं मेरे साथ रह नही सकता। दूसरोंके घरमें हरेक कुटुंबी को नही ले जा सकता हूं।

मेरी तबीयत ऐसी नहीं है कि मैं ज्यादा काम कलकत्ते में कर सकुं। बिरलाजी बात करेंगे तो भी मै उसको वखत कम ही दूंगा।[2] सब तबीयतपर निर्भर है। शंकरलाल कहै वही करो। मै तो सेगांव जानेके बाद ही स्वस्थ हूआ अगर हूआ तो।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४७०) से।

५३३. भेंट : पत्र-प्रतिनिधियोंको

डेलांग

[३१ मार्च, १९३८ या उसके पूर्व][3]

डेलांगमें गांधीजी से पूछा गया कि प्रान्तोंमें कार्यवाहक गवर्नर नियुक्त करने के प्रश्नपर मन्त्रियोंका रुख क्या होना चाहिए। . . . गांधीजी ने कहा कि इसमें इस बातका खयाल रखा जाना चाहिए कि जो व्यक्ति जिस प्रान्तकी सेवामें हो उसे उसी प्रान्तका गवर्नर न नियुक्त किया जाये।

जो अधिकारी कलतक मन्त्रियोंके अधीन था, वही अचानक गवर्नर बन जाये, यह बात उन्हें अच्छी नहीं लगेगी, क्योंकि उन्हें सलाहके लिए अक्सर गवर्नरके पास जाना पड़ता है और कभी-कभी तो गवर्नर उनकी बैठककी अध्यक्षता भी कर सकता है। ऐसा गवर्नर तटस्थ भावसे काम नहीं कर सकता और न वह मन्त्रियोंके सम्मान और विश्वासका पात्र ही बन सकता है। मैं समझता हूँ, ऐसी नियुक्ति करने से पहले वाइसराय या भारत-मन्त्री काफी सोच-विचारसे काम लेंगे। मन्त्री अगर ऐसी नियुक्तियों का विरोध करते हैं तो वह उचित ही होगा, बल्कि विरोध उनका कर्त्तव्य होगा। मुझे नहीं मालूम कि ऐसी नियुक्तिपर विवाद नहीं खड़ा किया जा सकता।

१. ब्रजकृष्ण चाँदीवाला द्वारा गांधीजी को लिखे पत्र तथा इस पत्रके पाठसे भी लगता है कि यह पत्र डेलांगसे लिखा गया था, जहाँसे गांधीजी ३१ मार्च, १९३८ को रवाना हुए थे।

२. ब्रजकृष्ण चाँदीवाला गांधीजी के साथ बिड़ला मिल की मजदूर-समस्यापर बातचीत करना चाहते थे।

३. ३१ मार्च तक गांधीजी डेलांग में ही थे।

उपनिवेशोंमें तो मैंने प्रायः यह देखा है कि स्थायी गवर्नरोंके अभावमें सर्वोच्च न्यायालयों के मुख्य न्यायाधीश उनका काम करते हैं।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २-४-१९३८

५३४. पत्र : महादेव देसाईको

३१ मार्च, १९३८

चि० महादेव,

आज सवेरे-सवेरे यह कैसा उपहार! लेकिन जबतक मनुष्य एक भूल नहीं सुधारता तबतक वह एकके-बाद-एक भूल करता जाता है। तिसपर भी मैं हजारों भूलोंको सहन करूँगा; लेकिन तुम्हें कदापि नहीं त्याग सकता। भक्तके हाथों मरना श्रेयस्कर है और अभक्तके हाथों तरना भी डूबने के समान है। इसलिए तुम्हारे जानेका सवाल तो पैदा ही नहीं होता।

अब तुम्हारी भूलें बताता हूँ।

मैं दुर्गा और वेलाबहनको कोई दोष नहीं देता। बा ने तो प्रायश्चित्त कर लिया। उपवास करके नहीं बल्कि अत्यन्त सरलभावसे मेरे सम्मुख अपनी भूल स्वीकार करके। और इस तरह ५५ वर्षके हमारे सम्बन्धको उसने कल और भी अधिक पवित्र बना दिया।

लेकिन तुमने? दुर्गाके प्रति तुम्हारे अन्धे प्रेम अथवा तुम्हारी लापरवाहीने तुम्हें अधर्मके मार्गकी ओर जाने दिया। बादमें जब तुमने मेरा दुःख जाना तब बिना सोचे-समझे उपवास कर बैठे। कुविचार अथवा अविचारका उपचार उपवास नहीं है; सुविचार है। जब मुझे तुम्हारे उपवासकी बात मालूम हुई तब मैंने तुम्हें चेताया भी, लेकिन तुमने उपवास नहीं छोड़ा। मैंने तुमसे उपवास करने के बदले विचार करने के लिए कहा। लेकिन तुमने विचार नहीं किया। मुझसे समझने की कोशिशतक न की। मैंने कल तुमसे अत्यन्त प्रेमपूर्वक पूछा कि महादेव, मैंने जो तुमसे कहा है सो तुमने समझ लिया होगा। तुमने जो उत्तर दिया वह उचित न था; तुम्हारा आचरण तो उससे भी खराब था। मौलानाका भाषण सुनने जानेके अपने धर्मको छोड़ रोने लगे और फिर मेरे लिए एक मूर्खतापूर्ण कविता लिख डाली। रातको तुम्हें मौलानाके पास बैठना चाहिए था सो भी नहीं किया। एक मुसलमान की सेवा करने का जो अवसर हाथ लगा था तुमने उसका पूरा लाभ नहीं उठाया। मेरे कलके वचन अगर तुम्हारे गले उतरे होते तो आज तुम संघ [के कार्यकर्त्ताओं] को लेकर पुरी जाते और पुरीको हिला देते। शायद यह मेरे मनकी कमजोरी थी कि मुझे यह बात पहले नहीं सूझी। यदि तुम्हें अपना धर्म दिनके प्रकाश जैसा स्पष्ट दिखने

लगा है तो मैं तुम्हें एक दिनकी छुट्टी भी दे दूँ और यदि कोई व्यक्ति जानेको तैयार हो तो उसे तुम्हारे साथ जाने दूँ। यदि आज ही जाना सम्भव हो तो तुम्हें जाना चाहिए।

तुम मुझे 'इन्टरप्रेट' (मेरी व्याख्या) करते हो सो किसके आगे? वेलाबहनके आगे?

तुम्हारी कवित्व-शक्ति तुम्हें कई बार बहुत अन्धकारमें रखती है। तुम्हारे पत्रमें कायरताके अलावा और कुछ नहीं है। यदि तुम मेरा त्याग कर दोगे तो क्या फिर प्यारेलाल मेरे पास रहेगा? और प्यारेलालके जाने पर क्या सुशीला यहाँ रहेगी? उसकी असाधारण बुद्धि भला मेरे किस कामकी? ऐसी तीव्र बुद्धि मेरे पास व्यर्थ ही जा रही है, यह सोचकर कई बार मुझे दुःख होता है। लेकिन यह बात तुम्हें क्यों नहीं सूझती कि तुम्हारा त्याग करने पर इन सबका त्याग करना मेरे लिए सहज हो जायेगा। ये सब भाग जायेंगे। लीलावती तो पागल ही हो जायेगी। तथापि यदि नसीबमें यही है तो मैं यह भी सहन करूँगा। लेकिन तुम्हें अथवा किसी और को कमसे-कम मैं तो नहीं भगाऊँगा। यदि कोई भागेगा तो उसे रोकने की शक्ति भला मुझमें कहाँ? इस प्रकरणसे तुम्हारे अन्तरसे कविता प्रस्फुटित होनी चाहिए। यदि तुमसे भूल हुई हो तो उसे सुधारो। भूल न जान पड़े तो मुझसे समझो। मेरी भूल मालूम हो तो मुझे सुधारो। यह न तो रोनेका समय है और न उपवास करने का। तुम पढ़ना कम करो और मनन अधिक करो। यहाँ जो हुआ है उसका गहराई में उतरकर अध्ययन करो। सुशीला और प्यारेलालकी बुद्धिका तुम स्वयं उपयोग करो और अपना बोझ हलका करो। लीलावतीसे भी काम लो। यह प्रसंग मुझे यह बताता है कि तुम बाह्य प्रवृत्तियोंके बोझके कारण मनन कम करते हो और इसके परिणाम-स्वरूप 'इन्टरप्रेट' करने का काम भी कम होगा।

मैं अब और कितना लिखूँ?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

दुबारा नहीं पढ़ रहा हूँ। पत्र मैंने अभी-अभी खत्म किया है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५९४)से।

५३५. पत्र : लीलावती आसरको

३१ मार्च, १९३८

चि० लीला,

मैं आज नहीं बोल सकता, यह बात मुझे सालती है। लेकिन यही ठीक है। मैंने बा को कानमके बारेमें लिख दिया है। यदि वह तुम्हें अधिकार देती है तो कानमको अपने नियन्त्रणमें ले लेना। और यदि कानमको ले तो रसोई छोड़ देना। यदि जरूरी हो तो थोड़ी-बहुत मदद देना। नानावटीके साथ मिलना-जुलना, और बोलना कम करना तथा बिना विचारे कुछ न बोलना। गला फाड़कर मत चिल्लाना। नौकरोंको नौकर न समझकर छोटे भाई-बहन समझना। मीराबहनके साथ मधुर सम्बन्ध स्थापित करना। फिलहाल वह अच्छा काम कर रही है।

मुझे पत्र लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३७०) से। सी० डब्ल्यू० ६६४५ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

५३६. पत्र : अमतुस्सलामको

३१ मार्च, १९३८

चि० अमतुस्सलाम,

कैसी है? क्या सुशीला लिखती है वह मैंने लिखा नहिं माना जाये? तुम्हीने लिखा था कि मैं न लिखुं। सुशीला या कोई लिखे तो काफी है। अगर मन स्थिर रखेगी तो अवश्य शीघ्र अच्छी हो जायगी। मुझे ठीक है। बाकी सुशीलाके खतसे। तुमने काकड़े (टांसिल) कटवा डाले सो अच्छा किया।

मुझे लिखा करो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९८) से।

५३७. पत्र : कृष्णचन्द्रको

३१ मार्च, १९३८

चि० कृष्णचंद्र,

तुमारा खत मिला है। तुमको कुछ तनख्वा नहि दूंगा। आध्यात्मिक इ० वाचन के लिये समय दूंगा। सेगांवमे हि रखुंगा। प्रतिवर्ष गृहयात्रा करने में कुछ दिक्कत नहीं पाता हूं। वर्धा में कुछ कार्य निकल पड़ा तो वहां भेजुंगा। इस हालतमें आना है तो १५ अप्रील अथवा उससे भी पहले अगर मैं वहां पर पहूंच जाउं तो आ जाओ। इतना और भी याद रखो कि मेरा सेगांव-निवास कुछ अस्थिर है। चातुर्मासमें तो वहीं हूंगा। सेगांवमें सत्संग तो काफी पाओगे।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२९०)से।

५३८. पत्र : सरस्वतीको

३१ मार्च, १९३८

चि० सरस्वती,

तुमारे नहीं आने से बा को और मुझको बहूत दुःख हुआ, लेकिन क्या किया जाय। भगवान जैसे रखे ऐसे ही रहना चाहिये ना? मेरी उमीद है कि तुमको मैं जल्दी मेरे पास बुलाउंगा। गरमी सहन करेगी? अभ्यास करेगी? मुझे शीघ्र लिखो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१६६) से। सी० डब्ल्यू० ३४३९ से भी; सौजन्य : कान्तिलाल गांधी

५३९. भेंट: राजा पार्लाखिमेडीको

बिरबोई
३१ मार्च, १९३८

राजा साहबने[1] गांधीजी से अनुरोध किया कि जमींदारी-प्रथाके सम्बन्धमें कांग्रेसकी क्या नीति है, इसके बारेमें वे उन्हें बतायें।

गांधीजी ने तबीयत ठीक न होनेकी वजहसे मौन धारण कर रखा था, इसलिए उन्होंने कागजके टुकड़ेपर लिखा:

मुझे खुशी है कि आप आये हैं। क्या ही अच्छा होता कि मैं बोल सकता और मेरा स्वास्थ्य भी कुछ ठीक होता, ताकि मैं आपसे लम्बी बातचीत कर सकता। आपका यह कहना बिलकुल सही है कि मैं पुरानी जमींदारियोंका उन्मूलन नहीं करना चाहता। किन्तु सब कांग्रेसी ऐसा नहीं सोचते। इसका उपाय जमीदार भाइयोंके ही हाथमें है। वह कैसे हो सकता है, सो तो मैं लेखों द्वारा प्रकट कर चुका हूँ, फिर भी यदि आप चाहें तो मैं आपके मित्रोंसे मिलने के लिए कुछ समय खुशीसे निकाल लूँगा। लेकिन मैं उनसे कलकत्तामें नहीं मिल सकता। वहाँ मेरे लिए जितना काम है उतनेसे ही निबट पानेकी मेरी शक्ति अल्प है। इसलिए मैं आपसे केवल सेगाँव पहुँचने पर ही मिल सकता हूँ। अगर बीचमें ही मेरा स्वास्थ्य जवाब दे गया तो बात और है।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १-४-१९३८

१. उड़ीसाके भूतपूर्व मुख्य-मन्त्री।

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

भाषाओंका प्रश्न[1]

१. जिस क्षेत्रकी जो भाषा हो उस क्षेत्रमें उसी भाषामें सरकारी काम-काज होना चाहिए और राज्यकी ओरसे दी जानेवाली शिक्षाका माध्यम भी वही भाषा होनी चाहिए। यह उस क्षेत्रकी प्रमुख भाषा होनी चाहिए। इस प्रयोजनके लिए सरकारी तौरपर इन भाषाओंको मान्य किया जाना चाहिए: हिन्दुस्तानी (हिन्दी और उर्दू दोनों) बँगला, गुजराती, मराठी, तमिल, तेलुगु, कन्नड़, मलयालम, उड़िया, असमिया, सिन्धी और किसी हदतक पश्तो तथा पंजाबी।

२. हिन्दुस्तानी-भाषी क्षेत्रमें अपनी-अपनी लिपिके साथ हिन्दी और उर्दू दोनोंको सरकारी तौरपर मान्य किया जाना चाहिए। सरकारी सूचनाएँ दोनों लिपियोंमें जारी की जानी चाहिए। किसी अदालत या सरकारी दफ्तर को कोई भी व्यक्ति दोमें से किसी भी लिपिमें लिख सकता है, और जो ऐसा करे उससे दूसरी लिपिमें नकल पेश करने की अपेक्षा नहीं रखी जानी चाहिए।

३. हिन्दुस्तानी-भाषी क्षेत्रमें राज्यकी ओरसे दी जानेवाली शिक्षाका माध्यम चूँकि हिन्दुस्तानी होगी, इसलिए दोनों लिपियोंको मान्य किया जायेगा और दोनोंका इस्तेमाल होगा। हर शिक्षार्थी या उसके माता-पिता लिपिका चुनाव करेंगे। किसी शिक्षार्थीको दोनों लिपियाँ सीखने को मजबूर नहीं किया जायेगा, लेकिन माध्यमिक स्तरपर उसे उन्हें सीखने को प्रोत्साहित किया जा सकता है।

४. हिन्दुस्तानीको (दोनों लिपियोंमें) अखिल भारतीय भाषाके रूपमें मान्य किया जायेगा। इस प्रकार भारतके हर हिस्सेके हर व्यक्तिको किसी भी अदालत अथवा सरकारी दफ्तरको हिन्दुस्तानीमें (दोमें से किसी भी लिपिमें) लिखने की छूट रहेगी, और उसपर किसी दूसरी लिपि या भाषामें अपनी अर्जी वगैरहकी नकल भेजने का दायित्व नहीं होगा।

५. देवनागरी, बँगला, गुजराती और मराठी लिपियोंको एकीकृत करके एक ऐसी सामासिक लिपि तैयार करने की कोशिश की जायेगी जो छपाई, टंकन तथा आधुनिक यान्त्रिक युक्तियोंके इस्तेमालकी दृष्टिसे उपयुक्त हो।

१. देखिए पृ० ७।

६. सिन्धी लिपिको उर्दू लिपिमें मिला लेना चाहिए और उर्दू लिपिको जहाँतक सम्भव हो, सरल बना देना चाहिए और उसे छपाई, टंकन आदिकी दृष्टिसे उपयुक्त रूप देना चाहिए।

७. दक्षिणी लिपियोंको देवनागरीके निकट लाने की सम्भावनाका पता लगाया जाना चाहिए। अगर यह सम्भव न हो तो दक्षिणकी भाषाओं, अर्थात् तमिल, तेलुगु, कन्नड़ और मलयालमके लिए एक समान लिपि तैयार करने की कोशिश की जानी चाहिए।

८. लैटिन लिपिके जो अनेक लाभ हैं उनके बावजूद हमारी भाषाओंके लिए उसके अपनाये जानेकी बात सोचना — कमसे-कम फिलहाल तो — सम्भव नहीं है। इस प्रकार हमारी दो लिपियाँ होंगी: मिली-जुली देवनागरी-बंगला-गुजराती-मराठी लिपि; और अगर जरूरत हो तथा दक्षिण भारतीय भाषाओंकी लिपियोंको देवनागरी लिपिके निकट न लाया जा सके तो उनके लिए एक अलग लिपि।

९. हिन्दुस्तानी-भाषी क्षेत्रमें हिन्दी तथा उर्दूमें जो एक-दूसरेसे अलग हटने और अलग-अलग विकसित होनेकी प्रवृत्ति दिखाई देती है उससे चिन्तित होनेका कारण नहीं है, और न इनमें से किसीके भी विकासके मार्गमें कोई बाधा उपस्थित करनी चाहिए। जब भाषामें नये और गूढ़ विचार आने लगते हैं तब ऐसा होना किसी हद-तक स्वाभाविक हो जाता है। दोनोंमें से किसीका भी विकास भाषाको समृद्ध करेगा। बादमें जब विश्व-शक्तियाँ और राष्ट्रीय भावना उनकी दिशा पारस्परिक समंजनकी ओर मोड़ने लगेंगी तब वैसा समंजन भी अवश्य होगा, और जन-साधारणमें शिक्षाका प्रसार होनेपर किसी हदतक भाषाओंका मानकीकरण भी होगा और उनमें एकरूपता आयेगी।

१०. हमें इस बातपर जोर देना चाहिए कि भाषाएँ (हिन्दी, उर्दू और साथ ही अन्य भारतीय भाषाएँ भी) जन-साधारणकी ओर उन्मुख हों और उसीके शब्दोंमें बोलें। लेखकोंको जन-साधारणकी समझमें आ सकने लायक सरल भाषामें जन-साधारण के लिए लिखना चाहिए। उन्हें ऐसी समस्याओंपर लिखना चाहिए जिनका सम्बन्ध जन-साधारणसे हो। दरबारी और कृत्रिम शैली तथा अलंकृत भाषाका मोह छोड़ देना चाहिए और सरल तथा प्राणवान शैलीका विकास करना चाहिए। इसके अन्य लाभ तो हैं ही, इससे हिन्दी और उर्दूमें भी एकरूपता आयेगी।

११. हिन्दुस्तानीमें से बुनियादी अंग्रेजीकी तरह एक बुनियादी हिन्दुस्तानीका विकास किया जाना चाहिए। यह भाषा बहुत सरल होनी चाहिए, जिसमें व्याकरण बहुत कम हो और जिसका शब्द-भण्डार लगभग मात्र हजार शब्दोंका हो। यह भाषा अपने-आपमें सम्पूर्ण होनी चाहिए, साधारण बोलचाल और लिखने-पढ़नेकी दृष्टिसे पर्याप्त। लेकिन इसे हिन्दुस्तानीके ढाँचेके अन्दर होना चाहिए और इस भाषाके और अध्ययनके लिए प्रथम सोपानका काम करना चाहिए।

१२. बुनियादी [illegible] अलावा, हमें हिन्दुस्तानी (हिन्दी-उर्दू दोनों) में और सम्भव हो तो अन्य भारतीय भाषाओंमें भी इस्तेमाल करने के लिए वैज्ञानिक, तकनीकी, राजनीतिक तथा वाणिज्यिक शब्दोंका चुनाव कर लेना चाहिए। जहाँ जरूरी हो वहाँ

ऐसे शब्द विदेशी भाषाओंसे लेकर ज्यों-के-त्यों अपना लिये जाने चाहिए। हमारी अपनी भाषाओंके अन्य शब्दोंकी सूची तैयार की जानी चाहिए, ताकि सभी तकनीकी तथा इस तरहके अन्य विषयोंके सन्दर्भमें हमारा शब्द-भण्डार सुनिश्चित और समरूप हो।

१३. राज्य-प्रदत्त शिक्षाके क्षेत्रमें इस नीतिका पालन करना चाहिए कि शिक्षा शिक्षार्थीकी अपनी भाषामें दी जानी है। हर भाषाई क्षेत्रमें प्राथमिकसे लेकर विश्व-विद्यालय स्तरतक की शिक्षा प्रान्तीय भाषामें दी जायेगी। किसी विशेष भाषाई क्षेत्रमें भी यदि ऐसे विद्यार्थी काफी बड़ी तादादमें हों जिनकी मातृभाषा उस क्षेत्रकी भाषासे इतर कोई और भाषा है तो उन्हें प्राथमिक शिक्षा अपनी मातृभाषाके माध्यमसे प्राप्त करने का अधिकार होगा, बशर्ते कि ऐसे विद्यार्थियों तक किसी एक उपयुक्त केन्द्रसे पहुँचा जा सके। यह भी हो सकता है कि अगर ऐसे विद्यार्थियोंकी संख्या बहुत बड़ी है तो उन्हें माध्यमिक शिक्षा भी मातृभाषाके माध्यमसे ही दी जाये, लेकिन ऐसे सभी विद्यार्थियोंको, वे जिस क्षेत्रमें रहते हैं, उस क्षेत्रकी भाषा अनिवार्यतः पढ़नी पड़ेगी।

१४. गैर-हिन्दुस्तानी-भाषी क्षेत्रोंमें बुनियादी हिन्दुस्तानी माध्यमिक स्तरपर पढ़ाई जानी चाहिए। बुनियादी हिन्दुस्तानीकी लिपि क्या हो, इसका निर्णय सम्बन्धित व्यक्तिपर होगा।

१५. विश्वविद्यालय-स्तरकी शिक्षाका माध्यम सम्बन्धित भाषाई क्षेत्रकी भाषा होगी। हिन्दुस्तानी (दोमें से किसी भी लिपिमें) और कोई एक विदेशी भाषा अनिवार्य विषय होना चाहिए। अतिरिक्त भाषाएँ सीखने की अनिवार्यता उच्चतर तक-नीकी शिक्षा पानेवालों पर लागू करना जरूरी नहीं है, हालाँकि भाषाओंका ज्ञान उनके लिए भी वांछनीय है।

१६. विदेशी भाषाएँ तथा हमारी प्राचीन भाषाएँ पढ़ाने की व्यवस्था हमारे माध्यमिक विद्यालयोंमें की जानी चाहिए, लेकिन कुछ विशेष पाठ्यक्रमोंको छोड़कर, या विश्वविद्यालय-स्तरकी शिक्षाकी तैयारीके निमित्त जहाँ जरूरी हो ऐसे मामलोंके सिवा, शेषके लिए ये विषय अनिवार्य नहीं बनाये जाने चाहिए।

१७. प्राचीन तथा आधुनिक विदेशी साहित्यकी बहुत-सी कृतियोंका भारतीय भाषाओंमें अनुवाद किया जाना चाहिए, ताकि हमारी भाषाएँ अन्य देशोंकी सांस्कृतिक, साहित्यिक तथा सामाजिक प्रवृत्तियोंसे सम्पर्कका विकास कर सकें और इस सम्पर्कसे शक्ति प्राप्त कर सकें।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २१-८-१९३७

परिशिष्ट २

कोट्टापटम् ग्रीष्म-विद्यालय[1]

मलायामें मैंने अखबारोंमें एक छोटी-सी खबर पढ़ी, जिसमें कोट्टापटम्के ग्रीष्म-विद्यालयपर मद्रास सरकार द्वारा प्रतिबन्ध लगा दिये जाने और बादमें वहाँके विद्यार्थियों पर लाठी चार्ज किये जानेका जिक्र था। ऐसी कार्रवाई तो सविनय अवज्ञा आन्दोलन के दिनोंमें भी आश्चर्यजनक और निन्दनीय मानी जाती। इस समय इससे मेरे मनको गहरा आघात पहुँचा है। लौटकर यहाँ आनेपर मैंने मामलेकी और जानकारी प्राप्त की, लेकिन जो-कुछ मालूम हुआ उससे मेरा आश्चर्य और मनको लगे आघातकी तीव्रता तनिक भी कम नहीं हुई है। जिस प्रकार अन्धकारमें बिजली कौंधनेपर सहसा सब-कुछ दिख जाता है उसी प्रकार इस घटनाने नये संविधानके वास्तविक स्वरूपको और मद्रास मन्त्रिमण्डलके तौर-तरीकेको बिलकुल अनावृत करके रख दिया है। इस मन्त्रिमण्डलकी बात इसलिए कह रहा हूँ कि स्पष्टत. इन कार्रवाइयोंके लिए जिम्मेदार वही है। हम देखते हैं कि यह मन्त्रिमण्डल पुलिस-मन्त्रिमण्डल है, जो जनताके वाणी और संगठनके बुनियादी अधिकारोंका दमन करता है। इस मामलेमें वह पिछली सरकारसे जरा भी कम नहीं है। हम देख रहे हैं कि नये अधिनियमका अर्थ जनताके लिए क्या है। वही असह्य स्थिति कायम है, और हमसे जो मीठे-मीठे शब्द कहे जाते हैं वे सब नागरिक स्वतन्त्रताके आक्रामक दमनको या हमारे नौजवानोंके शरीरोंपर लाठियोंके प्रहारोंको रोकने में बिलकुल असमर्थ हैं। पहलेकी ही तरह नये मन्त्रियोंके अधीन भी लाठी शासनका सच्चा प्रतीक बनी हुई है।

कुछ और भी महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठते हैं। पुलिसके रिपोर्टरोंने ग्रीष्म-विद्यालयमें जबरदस्ती प्रवेश करने की कोशिश की। इसपर आपत्ति की गई, जो सर्वथा उचित था। हम पुलिसके रिपोर्टरोंको अपनी सार्वजनिक सभाओंमें आनेकी सुविधा देते रहे हैं, लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि हम अपनी समितिकी बैठकों और ग्रीष्म-विद्यालय आदिमें भी प्रवेश करने के उनके अधिकारको स्वीकार करते हैं। यह अधिकार कभी स्वीकार नहीं किया जा सकता। राजनीतिक तथा आर्थिक समस्याओंका अध्ययन करने के लिए भारतमें अनेक स्थानोंपर ग्रीष्म शालाओंका आयोजन किया जाता रहा है। यह एक अच्छी चीज है और मुझे विश्वास है कि यह आगे जारी रहेगा, क्योंकि अध्ययन और चर्चाके द्वारा ही हम अपनी समस्याओंको समझ सकते हैं और उनके हल का रास्ता ढूँढ़ सकते हैं।

१. देखिए पृ० २६-२७।

जो दूसरा प्रश्न उठता है उसका सम्बन्ध व्यक्ति या समूहके ऐसे आदेशको मानने से इन्कार करने के अधिकारसे है जिसे वह आपत्तिजनक मानता है। स्पष्ट है कि सविनय अवज्ञा चूँकि स्थगित कर दी गई है, इसलिए आदेशोंकी अवज्ञा वांछनीय नहीं है। जहाँ ऐसे आपत्तिजनक आदेश दिये जायें वहाँ शीघ्र ही उच्चतर समितियोंसे परामर्श किया जाना चाहिए। लेकिन कभी-कभी ऐसे प्रसंग भी आते हैं जब निर्णय तत्काल लेने पड़ते हैं, और ऐसे निर्णयोंका दायित्व व्यक्ति या समूह-विशेषपर होना चाहिए और उससे सम्पूर्ण संगठनको सम्बद्ध नहीं मानना चाहिए। मैं ऐसे आदेशोंके उदाहरणोंकी कल्पना बखूबी कर सकता हूँ जो व्यक्ति अथवा कांग्रेसके लिए इतने अप्रतिष्ठाजनक हों कि व्यक्ति स्वयं अपने दायित्वपर उनकी अवमानना करने का निश्चय करे। इसका सविनय अवज्ञासे कोई सरोकार नहीं है। यह व्यक्तिका सहज-स्वाभाविक अधिकार है। लेकिन इस अधिकारका प्रयोग बहुत सावधानीके साथ और इस तरह करना चाहिए जिससे हमारे सामने जो बृहत्तर प्रयोजन है उसका कोई अहित न हो, और साथ ही व्यक्तिको इस बातके लिए भी तैयार रहना चाहिए कि उसके ऐसे आचरणके औचित्य-अनौचित्यका निर्णय उसका संगठन कर सकता है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन एनुअल रजिस्टर, १९३७, जिल्द १, पृ० २२९

परिशिष्ट ३

जी० कनिंघमका पत्र[1]

गवर्नरका कैम्प,
पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्त
एबटाबाद
१७ अगस्त, १९३७

प्रिय श्री गांधी,

मुझे परमश्रेष्ठ वाइसरायका एक पत्र मिला है, जिसमें उन्होंने ४ अगस्तको आपके साथ हुई अपनी बातचीतका सार बताया है। मुझे मालूम हुआ है कि परमश्रेष्ठने आपको बताया, यदि आप पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्त आना चाहें तो उनका खयाल है, इसपर कोई आपत्ति नहीं होगी। मैंने अपने मन्त्रियोंके साथ इस विषयपर चर्चाकी और उनकी सहमतिसे आपको सूचित कर रहा हूँ कि आपके इस प्रान्तमें आनेपर कोई आपत्ति नहीं होगी। मैं जानता हूँ, परमश्रेष्ठने आपको बताया कि उन्हें आपसे यह कहना जरूरी लगता है कि आप अपने सीमा-प्रान्त-प्रवासके दौरान कबीलोंसे सम्बन्धित मामलोंमें किसी तरहकी दस्तन्दाजी न करें; मुझे मालूम हुआ

१. देखिए पृ० ७४-७५।

अंडमान-स्थित अन्य राजनीतिक कैदियोंकी ओरसे कहा है कि
अब उनका कोई सरोकार नहीं है और वह उन्हें नापसन्द है।
कहा है कि उन्हें इस बातका भान हो गया है कि यह नीति
श्यके लिए हानिप्रद है और उनका इरादा उससे कोई सरोकार
स वक्तव्यकी पुष्टि अन्य स्रोतोंसे भी की गई है।

ोंको देखते हुए समितिकी पक्की राय है कि अंडमानके राज-
ा कर देना चाहिए। समितिकी यह भी राय है कि अंडमानके
ंको वापस भेज देना चाहिए और दण्डितोंकी बस्तीकी तरह
बन्द कर दिया जाना चाहिए। यथेष्ट कार्रवाई करने में कोई
के परिणाम बहुत चिन्ताजनक हो सकते हैं।

के कैदियोंसे अपनी भूख-हड़ताल छोड़ देनेका अनुरोध करती है।

, सं० ६, सितम्बर १९३७। फाइल सं० ४/१५/३७, होम,
: राष्ट्रीय अभिलेखागार

परिशिष्ट ५

टिप्पणियाँ

"काफी जानकारी"[1]

ाभाओंके अध्यक्षोंको शायद सबसे पहले इस प्रश्नपर व्यवस्था
रायमें अंग्रेजीकी "काफी जानकारी" का मतलब क्या है।
रत सरकार अधिनियमका एक सबसे आपत्तिजनक खण्ड है —
ा गया है :

िधानमण्डलोंका सारा कामकाज अंग्रेजी भाषामें चलेगा।
सी एक सदन या दोनों सदनोंके कामकाजके संचालनके नियमोंमें
त बैठकोंके कामकाजके संचालनके नियम बनाये जायें तो उनमें
की जा सकती है कि जिस सदस्यको अंग्रेजीकी जानकारी न
काफी जानकारी न हो वह किसी अन्य भाषाका प्रयोग करे।

ले हिस्सेसे साफ नजर आता है कि यह अधिनियम अंग्रेजीसे
ान्य जनोंके लिए नहीं, वरन् उससे वाकिफ मुट्ठी-भर लोगोंके
ड़ोंका जो अपमान निहित है वह स्पष्ट देखा जा सकता है।
ा रखा गया है वह उस अपमानके जख्मपर लगाये गये मरहमके

३३।

समान है। हमारे अपने लोगों द्वारा बनाये गये अधिनियममें इस खण्डका प्रवर्ती हिस्सा अर्थात् प्रान्तकी भाषा अथवा हिन्दी-हिन्दुस्तानीका प्रयोग –– अनिवार्य कर दिया जायेगा और अनुज्ञात्मक उपबन्ध उन अभागोंके लाभके लिए रखा जायेगा जो अपने प्रान्त या राष्ट्रमें से किसीकी भाषा न जानते हों और इसलिए जिनके सामने किसी "अन्य भाषा" के प्रयोगकी मजबूरी हो। यह तो इस खण्डकी अलोचनाके तौरपर कहा।

लेकिन जो अध्यक्षके आसनपर विराजेंगे वे इस खण्डकी आलोचना नहीं कर सकते; उन्हें तो सदस्योंके लिए इसकी व्याख्या करनी पड़ेगी। अधिनियमके एक टीकाकारने एक कठिनाईका अनुमान पहलेसे ही लगा लिया है। उनका कहना है: "यह ऐसी सुविधा (अर्थात् उपबन्ध द्वारा दी गई सुविधा) है जिसका लाभ वे लोग नहीं उठा सकते जो अंग्रेजी तो जानते हों लेकिन राष्ट्रीय आत्म-सम्मानकी खातिर 'वर्नाक्युलर' भाषाके प्रयोगका आग्रह रखते हों।" यहाँ स्वयं टीकाकार द्वारा सही अंग्रेजीके प्रयोग अथवा "राष्ट्रीय आत्म-सम्मान" के फलितार्थोंको लेकर हम कोई विवाद नहीं करना चाहते। (अन्यथा उन्होंने आपत्तिजनक 'वर्नाक्युलर' शब्दका प्रयोग न करके "राष्ट्रीय भाषा" या "प्रान्तकी भाषा" शब्दोंका उपयोग किया होता)।

जो अधिनियम प्रत्यक्षतः इतना अपमानजनक है उसमें "राष्ट्रीय आत्म-सम्मान" जैसी चीज तो हो ही कहाँ सकती है? लेकिन इस बातको अलग रहने दें तो भी टीकाकारको "काफी जानकारी" शब्दोंके अर्थका विचार तो करना ही चाहिए था। क्या "काफी जानकारी" का मतलब थोड़ा-बहुत सतही ज्ञान, बल्कि कामचलाऊ ज्ञान भी है? अध्यक्ष भले ही "राष्ट्रीय आत्म-सम्मान" से काम न ले और अधिनियमकी अपमानजनक भावनाका प्रतिकार न करे, लेकिन वह उपबन्धकी उदार व्याख्या तो कर सकता है। ऑक्सफोर्ड [अंग्रेजी] शब्दकोशके अनुसार 'सफीशिएंट' (काफी)का अर्थ है 'एडिक्वेट, एनफ' (जरूरतके लिए काफी), पर्याप्त"। इसका मतलब "कंपीटेंट, ऑफ एडिक्वेट एबिलिटि ऑर रिसोर्सेज" (योग्य, पर्याप्त योग्यता या साधनवाला) भी है। 'एडिक्वेट' का अर्थ है –– जैसा प्रसंग हो उसको देखते हुए "जरूरतोंको पूरा करने लायक अनुपातमें"। अब सवाल उठता है: यहाँ जरूरतें क्या हैं? दो हैं –– एक तो यह कि विधानमण्डलके सदस्यके मनमें जो-कुछ भी है उसकी वह पर्याप्त अभिव्यक्ति कर सके; और दूसरी यह कि बाकी सदस्य, उसे जो-कुछ भी कहना है, सब समझ सकें। जहाँतक पहली जरूरतका सम्बन्ध है, क्या अंग्रेजी के साधारण ज्ञानके बलपर कोई इस भाषामें अपने विचार पर्याप्त रूपसे व्यक्त कर सकता है? यह लिखते समय विधान-सभाके उन नव-निर्वाचित सदस्यकी तस्वीर साफ-साफ उभर आती है जो एक बार गांधीजी के साथ यात्रा कर रही थी। जैसा कि हमें बादमें मालूम हुआ, सदस्याके पास विश्वविद्यालयकी दो डिग्रियाँ थीं, लेकिन अगर वे बुरा न मानें तो कहूँ कि उनमें अपने विचार पूरी तरह या सही-सही व्यक्त करने की क्षमता नहीं थी। वे बहुत सभ्य-सुसंस्कृत थीं, लेकिन उनमें इस गुणका अभाव था। वे अपनी बात पूरी तरह और सही-सही नहीं कह पा रही थीं, इतना ही नहीं; वे गांधीजी की बातें भी पूरी तरह और सही-सही नहीं समझ पा रही थी।

तब मैं इस अधिनियमके खण्ड ८५ के बारेमें नहीं जानता था, "ईश्वरकी कृपा है कि उन्हें विधान-सभामें अंग्रेजीमें नहीं बोलना पड़ेगा"। लेकिन अब उस खण्डकी जानकारी मिल जानेपर मेरे मनमें यह सवाल उठता है कि क्या उन्हें अंग्रेजीमें ही बोलना पड़ेगा, क्योंकि उनके पास तो विश्वविद्यालयकी दो उपाधियाँ हैं और उनके बारेमें ऐसा माना जाता है कि वे अंग्रेजी जानती हैं? मैं तो यही मानना चाहूँगा कि नहीं, उन्हें अंग्रेजीमें नहीं बोलना पड़ेगा। हमारे विधान-सभा सदस्योंको ऐसा कह देनेकी छूट होनी चाहिए कि उनके लिए अंग्रेजीमें अच्छी तरह बोल पाना सम्भव नहीं है, या कमसे-कम यह कि जितनी अच्छी तरह वे अपनी मातृभाषामें बोल सकते हैं उतनी अच्छी तरह अंग्रेजीमें नहीं। और यद्यपि उक्त बहनके पास दोहरी डिग्री है, फिर भी मेरे खयालसे उन्हें पूरी ईमानदारीसे ऐसा कह देनेका अधिकार है। मुझे विश्वास है कि बहुत-से अन्य सदस्य भी इन्हीं की-जैसी स्थितिमें हैं।

अब दूसरी ओर उतनी ही अहम जरूरतको लें, अर्थात् यह कि जो-कुछ एक सदस्य कहे उसे बाकी सभी सदस्य समझें। मुझे बताया गया है कि बम्बई विधान-सभामें ऐसे कमसे-कम बाईस सदस्य हैं जो अंग्रेजी बिलकुल नहीं जानते। जब उनका कोई सदस्य-बन्धु बहुत अच्छी या जैसी-तैसी अंग्रेजीमें भाषण कर रहा हो तब क्या उन्हें अपने कान बन्द करके बैठना चाहिए? मेरे खयालसे, उन्हें कमसे-कम इतना हक तो है ही कि जब भी अपनेको अंग्रेजीकी "काफी जानकारी" से लैस माननेवाला सदस्य बोले तो अंग्रेजी न जाननेवाले सदस्योंको अपना भाषण उस प्रान्तकी भाषामें समझा दे।

ये दोनों जरूरतें मुझे इतनी साफ लगती हैं कि जो भी अध्यक्ष इस उपबन्धकी उदार तो क्या, सही व्याख्या भी करेगा वह इनका ध्यान अवश्य रखेगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३१-७-१९३७

परिशिष्ट ६

के० एफ० नरीमानका वक्तव्य[1]

महात्मा गांधी और डी० एन० बहादुरजीने मुझपर विश्वास करके अपनी एक जाँचके निष्कर्षों और निर्णयकी एक नकल मुझे दिखाई, इसके लिए मैं उनका आभारी हूँ। मैंने उन्हें ध्यानसे पढ़ा है और मुझे उनको ऐसे न्यायाधीशोंके निष्कर्षोंके रूपमें स्वीकार करना चाहिए जो मेरी पसन्दके थे और जिन्हें मुझे अपना मित्र मानने का भी गौरव प्राप्त है। उन्हें अपना निर्णय प्रकाशित करने का अधिकार है, लेकिन उन्होंने उदारतापूर्वक कहा है कि यदि मैं ऐसी सार्वजनिक घोषणा कर दूँ कि मैं उनके निर्णयसे सन्तुष्ट हूँ तो वे उसे प्रकाशित नहीं करेंगे। तदनुसार मैं

१. देखिए पृ० २७५-७६। सम्भव है, इसका मसौदा गांधीजी ने ही तैयार किया हो; देखिए पृ० ३०७-८।

वैसी घोषणा करता हूँ और यह घोषणा करते हुए मुझे लगता है कि जनताके समक्ष एक वक्तव्य देना मेरा कर्त्तव्य है।

मुझे यकीन है कि १९३४ के चुनावके मामलेमें मैंने जिम्मेदार कांग्रेस-पदाधिकारीके रूपमें अपने कर्त्तव्यकी उपेक्षा की और कुछ मित्रोंको ऐसा मानने का अवसर दिया कि मेरी उपेक्षा अपने दायित्वकी गम्भीर [illegible] कोटिकी थी। १९३७ में बम्बई संसदीय दलके नेताके चुनावके मामलेमें मै खेदपूर्वक यह स्वीकार करता हूँ कि मैंने सामान्य स्थितिके विषयमें गलत अंदाज लगाया और कुछ विधायकों द्वारा दिये गये वक्तव्योंके आधारपर मैंने ऐसा माना कि मेरे साथ एक अन्याय हुआ है और इस अन्यायकी बात अपने मित्रों और कुछ समाचार-पत्रोंको भी बताई। फलतः बहुत कटुता फैली और सरदार वल्लभभाईपर कुछ समाचार-पत्रोंके माध्यमसे साम्प्रदायिक पूर्वग्रहसे प्रेरित होकर काम करने का भी आरोप लगाया गया। मैंने पहले भी सार्वजनिक रूपसे कहा है और अब फिर कहता हूँ कि यह आरोप सर्वथा निराधार था, और सरदारने जो-कुछ भी किया या नहीं किया वह सार्वजनिक कर्त्तव्यकी भावनाकी प्रेरणावश ही। मुझे इस बातका खेद है कि सरदारके खिलाफ इस आन्दोलनने कुछ व्यक्तिगत, बल्कि साम्प्रदायिक रूप भी ले लिया और मैंने एक ऐसे मामलेके सम्बन्धमें महात्मा गांधी और बहादुरजीका इतना ज्यादा समय लिया जिसे जनताको वास्तविकसे अधिक काल्पनिक कहने का अधिकार है।

इतना कह चुकने के बाद, जिसकी सेवा करने का दावा मैं इतने वर्षोंसे करता आया हूँ, उस जनताकी कुछ क्षतिपूर्ति करना मुझे अपना कर्त्तव्य लगता है। और मुझे लोगोंका विश्वास फिरसे पूरी तरह प्राप्त हो सके, इसलिए मैं सोच-समझकर अपना यह इरादा जाहिर करता हूँ कि आज मैं जिन पदोंपर आसीन हूँ उनपर अपनी वर्तमान कार्यावधिकी समाप्तिके बाद जिम्मेदारीके किसी भी पद या स्थानपर अपने दुबारा चुने जानेका प्रयास नहीं करूँगा। मै अपना यह निश्चय भी घोषित करता हूँ कि मैं पदोंसे अलग रहकर कांग्रेस तथा जनताकी सेवा करूँगा, ताकि आवेश और कटुताका वातावरण समाप्त हो सके तथा शान्ति और मेलजोल फिरसे स्थापित हो सके।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १७-१०-१९३७

परिशिष्ट ७

(क) मुहम्मद अली जिन्नाका लखनऊमें दिया गया भाषण[1]

१५ अक्तूबर, १९३७

मुस्लिम लीगका उद्देश्य भारतमें राष्ट्रवादी लोकतान्त्रिक सरकारकी स्थापना है। शब्दोंको लेकर बहुत विवाद खड़ा किया जाता है, जो ज्यादातर अज्ञान और अशिक्षित आम जनताको बहकाने के लिए होता है। पूर्ण स्वराज, स्वशासन, पूर्ण स्वतन्त्रता, उत्तरदायी शासन, स्वतन्त्रताका सार और औपनिवेशिक स्वराज्य-जैसे बहुत-से शब्दोंका इस्तेमाल किया जाता है। कुछ लोग पूर्ण स्वतन्त्रताकी बात करते हैं। लेकिन मुंहसे तो पूर्ण स्वतन्त्रताकी बात कीजिए और पकड़े रहिए १९३५ के भारत सरकार अधिनियम को, यह नहीं हो सकता। जो पूर्ण स्वतन्त्रताकी बात सबसे ज्यादा करते हैं उनका आशय इन शब्दोंके सच्चे अर्थसे अधिकसे-अधिक दूर होता है। क्या गांधी-इर्विन समझौता पूर्ण स्वतन्त्रताके अनुरूप था? पद स्वीकार करने और प्रान्तीय संविधानोंको कार्य-रूप देनेकी पूर्व-शर्तके रूपमें जो आश्वासन माँगे गये वे क्या पूर्ण स्वराजसे संगत थे, और आश्वासन देनेसे इन्कार कर दिये जानेके बाद पद स्वीकार करते हुए और जो संविधान ब्रिटिश संसद द्वारा बनाया गया और जिसे साम्राज्यवादी शक्तिने भारत पर थोप दिया उसको कार्यान्वित करते हुए जो प्रस्ताव पास किया गया वह क्या कांग्रेसकी नीति और कार्यक्रम तथा उसकी घोषणाओंके अनुरूप था? क्या किसी चीजको तोड़ने का मतलब उसे चलाते जाना है?

कांग्रेसका वर्तमान नेतृत्व, खासकर पिछले दस वर्षोंके दौरान, विशुद्ध रूपसे हिन्दुओंकी [illegible] नीतिके पालन और मुसलमानोंको अधिकाधिक नाराज करने के लिए जिम्मेदार रहा है, और चूँकि उसने अपने बहुमतवाले छह प्रान्तोंमें सरकारें बना ली हैं, इसलिए उसने अपनी कथनी, करनी और कार्यक्रमोंसे इस बातको और अधिक स्पष्ट कर दिया है कि मुसलमान उनसे किसी प्रकारके न्याय या उचित व्यवहारकी आशा नहीं कर सकते हैं। जहाँ-कहीं भी उनका बहुमत है और जहाँ-कहीं उन्हें सुविधाजनक लगा वहाँ उन्होंने मुस्लिम लीगसे सहयोग करने से इन्कार कर दिया और बिना शर्त आत्म-समर्पण करने और अपने प्रतिज्ञा-पत्रोंपर हस्ताक्षर करने की उससे माँग की। . . .

. . . हिन्दी भारतकी राष्ट्रभाषा होनी है और वन्देमातरम् राष्ट्रगान और यह सबपर थोपा जाना है। कांग्रेसके झण्डेकी आज्ञा सबको माननी है और उसका आदर सबको करना है। जो भी थोड़ी-बहुत सत्ता और दायित्व दिया गया है उसके

१. देखिए पृ० २८८। यहाँ केवल संक्षिप्त अंश ही दिये गये हैं।

दरवाजेपर कदम रखते ही बहुसंख्यक समुदायने स्पष्ट दिखा दिया है कि हिन्दुस्तान हिन्दुओंके लिए है। बात सिर्फ इतनी ही है कि जहाँ कांग्रेस राष्ट्रवादिताके नामपर यह-सब करती है, हिन्दू महासभा अपनी बात साफ कहती है।

यहाँ यह बता देना भी अनुचित नहीं होगा कि जो भयंकर परिणाम सामने आ सकते हैं उसके लिए ब्रिटिश सरकार भी कुछ कम जिम्मेदार नहीं होगी। यह बात साफ दिखा दी गई है कि गवर्नर और गवर्नर-जनरल, जिन्हें संविधानके अन्तर्गत अल्पसंख्यकोंको अभय रखने और सुरक्षा प्रदान करने के लिए विशेष अधिकार और दायित्व सौंपा गया है . . . उन अधिकारोंका उपयोग करने में नाकामयाब रहे हैं और इस तरह खुल्लमखुल्ला संविधानकी भावनाका तथा मुसलमान मन्त्रियोंकी नियुक्तिके निर्देशका गला घोटे जानेमें शरीक रहे हैं। इसके विपरीत वे मुसलमान मन्त्री नियुक्त करने की अपेक्षाकी पूर्तिके लिए चाहे जिन मुसलमानोंके नियुक्त कर दिये जानेकी कार्रवाईमें शरीक रहे हैं, हालाँकि वे अच्छी तरह जानते हैं कि वे मुसलमान प्रतिनिधियोंके या बाहर जनताके विश्वासभाजन नहीं हैं। . . .

कांग्रेस आला कमान विभिन्न स्वरोंमें बोलती है। एक राय यह है कि देशमें हिन्दू-मुस्लिम समस्या-जैसी कोई चीज है ही नहीं और न अल्पसंख्यकोंके प्रश्न-जैसी ही कोई बात है। आला कमानकी दूसरी राय यह है कि अगर मुसलमानोंके आगे कुछ टुकड़े फेंक दिये जाते हैं तो आज वे जिस असंगठित और असहाय अवस्थामें हैं उन्हे इतनेसे ही बसमें किया जा सकता है। . . .

अखिल भारतीय मुस्लिम लीगका ध्येय बेशक मुसलमानों तथा अन्य अल्पसंख्यक लोगोंके अधिकारों और हितोंकी प्रभावकारी ढंगसे रक्षा करना है। यह उसका बुनियादी और अनिवार्य सिद्धान्त है। कांग्रेस मुसलमान जनतासे सम्पर्क स्थापित करने के नामपर जो प्रयास कर रही है उसका उद्देश्य मुसलमानोंमें फूट डालना, उन्हें कमजोर करना और उनकी शक्तिको तोड़ डालना है और वह वास्तवमें मुसलमानोंको उनके जाने-माने विश्वस्त नेताओंसे अलग करना है। यह एक खतरनाक चाल है। इससे कोई गुमराह नहीं हो सकता। तरह-तरहकी चिकनी-चुपड़ी बातों, आकर्षक शब्दों और नारोंके बावजूद ये सब चालें कामयाब होनेवाली नहीं हैं। . . .

इसके बाद उन्होंने कांग्रेसको संविधान सभाकी [illegible]री माँगके खिलाफ चेतावनी दी और उन्हें इस बातका ध्यान रखने की नसीहत दी कि १९३५ के कानून में निहित अखिल भारतीय संघ-योजनापर अमल न होने पाये। उन्होंने फिलस्तीनके बारेमें ब्रिटिश साम्राज्यके रवैयेके खिलाफ भी ब्रिटिश सरकारको चेतावनी दी और अन्तमें मुसलमानोंसे अनुरोध किया कि वे किसी प्रकारका भय न रखें और अपने निर्णयोंके प्रति ईमानदार रहते हुए एकजुट होकर उनपर डटे रहें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन एनुअल रजिस्टर, १९३७, जिल्द २, पृ० ४०३-५

(ख) मु० अ० जिन्नाका पत्र[1]

५ नवम्बर, १९३७

प्रिय महात्मा गांधी,

यहाँ पहुँचने पर आपका १९ अक्तूबरका पत्र मिला।

जहाँतक तीथलसे पिछली मईमें लिखे आपके पत्रको प्रकाशित करने की बात है, मैं यह मानता हूँ कि उसे प्रकाशित करके मैंने कोई अनुचित काम नहीं किया है। लेकिन आपके पत्रका आशय जैसा मैंने समझा है उससे शायद कुछ अलग है। बेशक, जनताको अपनी सफाई देनेकी आपको पूरी छूट थी। उस पत्रमें इस तरहका कोई संकेत नहीं था कि यह प्रकाशनके लिए नहीं है जबकि यदि लेखकका इरादा पत्रको प्रकाशित करवाने का नहीं होता तो वह आम तौरपर उसमें ऐसा संकेत दे देता है।

और मैंने भी आपको जो सन्देश भेजा था वह व्यक्तिगत तो था नहीं। आपने अब भी यह नहीं बताया है कि मैंने आपका आशय समझने में या पत्रमें लिखी बात समझने में कहाँ गलती की है। आपने सिर्फ इतना ही लिखा है कि "मेरे दृष्टिकोण को लेकर आपको जो गलतफहमी हुई है उससे मेरे मन को बहुत आघात पहुँचा है।"

मुझे दुःख है कि आपने मेरे लखनऊमें दिये गये भाषणको युद्धकी घोषणा मान लिया है। यह तो विशुद्ध आत्मरक्षामें दिया गया था। कृपया आप उसे एक बार फिर पढ़ें और समझने की कोशिश करें। स्पष्टतः पिछले बारह महीनोंमें जो घटनाएँ हुई हैं उनसे आप अवगत नहीं हैं।

जहाँतक आपकी स्थिति एक "सेतु" या "शान्ति-स्थापक" के रूपमें सुरक्षित रखने का सवाल है, क्या आप ऐसा महसूस नहीं करते कि पिछले तमाम महीनोंको आपकी चुप्पीने आपको कांग्रेस-नेतृत्वके साथ एकरूप कर दिया है, यद्यपि मैं यह जानता हूँ कि आप उस संस्थाके चवन्निया सदस्य भी नहीं है?

अन्तमें, मैं खेदपूर्वक यह लिख रहा हूँ कि आपके पत्रमें कोई निश्चित या किसी तरहका रचनात्मक सुझाव नहीं है। मैं तो इतना ही मानता हूँ कि यह पत्र आपने पूरी सद्भावनाके साथ और व्यथित मनसे लिखा है। उस व्यथामें मैं भी आपका भागीदार हूँ।

हृदयसे आपका,
मु० अ० जिन्ना

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १६-६-१९३८

1. देखिए पृ० २८६।

परिशिष्ट ८

जवाहरलाल नेहरूका पत्र[1]

१४ नवम्बर, १९३७

प्रिय बापू,

महासमितिकी बैठकके बारेमें आपका लेख मैंने अभी पढ़ा। मैसूरके प्रस्तावके बारेमें आपने कहा है कि वह महासमितिके अधिकार-क्षेत्रसे बाहर था। यदि ऐसी बात थी तब तो उसपर चर्चा होने देनेका मुझे हक ही नहीं था और मुझे उसपर रोक लगा देनी चाहिए थी। मुझे किसी ऐसे संवैधानिक नियमकी जानकारी नहीं है, जिससे यह नतीजा निकलता हो और इस तरहका कोई नियम हो तभी ऐसे प्रस्तावको रोका जा सकता है जो मामूली तौरपर रखा जाये और महासमितिका बहुमत जिसका समर्थन करे। यदि संविधानको छोड़ दें तो भी मुझे कांग्रेस या महासमितिके पहलेके किसी ऐसे फैसलेका पता नही है, जिसमें यह कहा गया हो कि ऐसे मामलोंपर विचार नहीं होना चाहिए। ऐसा कोई प्रस्ताव होता तो भी मेरी समझमें नहीं आता कि वह महासमितिको किसी मामलेपर विचार करने से, यदि वह विचार करना चाहे तो, कैसे रोक सकता है, जबतक कि उस प्रस्तावको आचार-नियमोंमें शामिल न कर लिया जाये। महासमितिको किसी ऐसे प्रस्तावपर विचार करने की पूरी आजादी है, जो खुद उसके पास किये हुए किसी पिछले प्रस्तावके खिलाफ जाता हो। लेकिन अगर कोई आचार या कार्य-विधिका नियम है तो जबतक महासमिति उसे बदल नही देती तबतक उसपर अमल करना होगा। ऐसे किसी नियमका तो सवाल ही नहीं है; और मुझे तो किसी ऐसे प्रस्तावकी जानकारी नहीं है जिसमें कोई ऐसी नीति निर्धारित की गई हो जिसका मैसूर-प्रस्तावसे उल्लंघन हुआ है। हमारे जारी किये हुए पहलेके बयानोंमें उल्लेख किया गया है कि कांग्रेस रियासतोंमें दखलंदाजी न करने की नीतिका अनुसरण करना चाहती है। वे बयान स्वयं महासमितिको दखल देनेसे, यदि वह दखल देना चाहती हो तो, रोक नहीं सकते। मैं नहीं समझ सकता कि "अधिकार-क्षेत्रके बाहर" यह कानूनी मुहावरा यहाँ कैसे लागू किया जा सकता है।

एक और सवाल उठता है कि दखलन्दाजी क्या है? क्या किसी प्रस्तावमें किसी राज्यका जिक्र करना ही दखलंदाजी है? क्या नागरिक स्वतन्त्रताकी माँग अथवा दमनकी निन्दा दखलंदाजी है? यदि ऐसा है तो कांग्रेस खुद पिछले दो वर्षोंमें निश्चित और असन्दिग्ध रूपमें उसकी दोषी रही है।

महासमितिके मैसूरवाले प्रस्तावकी भाषा बहुत खराब है और मैं किसी भी सूरतमें नहीं चाहता था कि अभी महासमिति उसे पास करे। लेकिन इस मामलेमें

1. देखिए पृ० ३२७-२९।

मेरी भावनाओंसे कोई फर्क नहीं पड़ता। मुझे तो एक लोकतन्त्री सम्मेलनके अध्यक्षकी हैसियतसे काम करना पड़ता है। प्रस्ताव मैसूरमें दमनकी निन्दाका था। दमन कैसा भी हो तो क्या भविष्यमें राज्यके दमनकी निन्दा करने से भी हमें परहेज रखना है? अगर इस दमनमें खुद कांग्रेसपर हमला करना, हमारे झण्डेका अपमान करना या हमारे संगठनपर रोक लगा देना आदि बातें होती हैं तो क्या हम चुप रहें? इन बातोंकी सफाई हो जानी चाहिए, ताकि हमारे दफ्तर और हमारे संगठनको निश्चित रूपसे मालूम हो जाये कि हमें क्या ढंग अख्तियार करना है।

आपने कहा है कि महासमितिको कमसे-कम दूसरे पक्षकी बात सुने बिना यह प्रस्ताव पास नहीं करना चाहिए था। क्या आपके खयालसे हमारे लिए यह सम्भव है कि हम राज्योंमें जाकर जाँच करने के लिए समितियाँ नियुक्त करें? क्या रियासतें इसके लिए राजी होंगी? मैंने रियासतोंको कई मौकोंपर यह सुझाव दिया है—जाँच-समितिका नहीं, बल्कि इतना ही कि कोई व्यक्ति वहाँ जाकर दोनों ओर पूछताछ कर ले। इसको उन्होंने हमेशा ठुकराया है।

यह मैसूरवाला मामला लम्बे समयसे चला आ रहा है। कर्नाटक प्रदेश कांग्रेस कमेटीने इस मामलेमें कुछ कदम उठाये हैं। उसके मन्त्रीने मैसूरके दीवानसे लम्बी मुलाकात की है। मैंने दीवानको बार-बार लिखा है और उनके सामने बहुत-से निश्चित मामले रखे हैं। उन्होंने लम्बे जवाब दिये हैं, लेकिन मेरी रायमें राज्यकी नीतिको वे मुनासिब साबित नहीं कर सके है। महीनोंसे मैं मैसूरके कांग्रेसियोंको आज्ञा-भंग करने से रोकता रहा हूँ और किसीने आज्ञा-भंग की भी नहीं। हालमें नरीमान द्वारा किया गया आज्ञा-भंग इसका एकमात्र अपवाद है। अन्तमें कर्नाटक प्रांतीय कांग्रेस कमेटीने स्थितिपर विचार किया और मैसूरकी दमन-नीतिकी निन्दा की और आगेके लिए हमसे निर्देश माँगे कि उसे क्या करना चाहिए। इसलिए यह कहना सही नहीं कि महासमितिने सम्बन्धित पक्षकी बात सुने बिना या एक पक्षकी बात सुनकर किसीकी निन्दा की है। हमारे लिए जितने मामूली रास्ते खुले हुए थे, उन सबको हमने आजमाया।

यह सब मैं आपको इसलिए लिख रहा हूँ कि मैं खुद साफ तौरसे समझ लेना चाहता हूँ कि हमारी नीति क्या है। महासमितिने और मैंने जो रास्ता अख्तियार किया, उसपर आपने ऐतराज किया है। मैं अभी तक समझ नहीं पाया हूँ कि मैंने कैसे और कहाँ भूल की है और जबतक मैं यह समझ नहीं लेता तबतक अन्यथा आचरण नहीं कर सकता।

सप्रेम आपका,
जवाहरलाल

महात्मा गांधी
वर्धा (म० प्रा०)

[अंग्रेजीसे]
ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स, पृ० २५४-५६

परिशिष्ट ९

बंगाल सरकारकी विज्ञप्ति[1]

१८ नवम्बर, १९३७[2]

प्रान्तीय विधानमण्डलके पिछले सत्रमें बंगाल सरकारने परिस्थितिमें सुधार लानेके साथ-साथ नजरबन्दोंको उत्तरोत्तर रिहा करने की अपनी नीतिकी घोषणा की थी और ऐसा आश्वासन भी दिया था। ऐसे विशेष मामलोंपर अलगसे भी विचार किया जायेगा जिनके बारेमें इस आशयका पर्याप्त आश्वासन प्राप्त होगा कि ये नजरबन्द रिहा होनेपर अच्छा व्यवहार करेंगे। उन दिनों जैसी परिस्थिति थी, उसमें सरकारने सोचा कि सभी २,००० नजरबन्दोंके एकसाथ रिहा कर दिये जानेसे कुछ कठिनाई पैदा हो सकती है, और शायद फिर हिंसा भी भड़क उठे। सरकारकी क्रमिक रिहाईकी नीतिका प्रतिपादन ९ अगस्तको विधान-सभामें किया गया और सदनने उसका अनुमोदन कर दिया। इस नीतिके अनुसार बहुत बड़ी संख्यामें लोग रिहा किये जा चुके हैं और बहुत-से अन्य लोगोंको परिवर्तित ढंगके प्रतिबन्धोंके अन्तर्गत रखा गया है।

तबसे आम वातावरणमें एक शुभ परिवर्तनके निश्चित संकेत देखे गये हैं। कुछ नेताओंने हालमें जो-कुछ कहा है, उससे भी प्रकट होता है कि वे हिंसात्मक तरीकोंमें लोगोंका विश्वास डिगाने के लिए पूरा प्रयत्न कर रहे हैं। श्री गांधीने भी सरकारको यह आश्वासन दिया है कि अपनी [illegible] [illegible] शिक्षा देकर तथा उसके पक्षमें लोकमत तैयार करके बंगालकी राजनीतिक परिस्थितिमें सुधार लानेकी वे पूरी कोशिश करेंगे। उन्होंने यह भी कहा है कि नजरबन्दोंको आतंकवादका सहारा न लेने या उस प्रवृत्तिमें सहायता न देने अथवा भविष्यमें अन्य विध्वंसक कार्रवाइयोंमें कोई मदद न देनेपर राजी करने के लिए वे उनसे मिलने को तैयार हैं। इन परिस्थितियोंको ध्यानमें रखते हुए तथा वर्तमान स्थितिका अवलोकन करके सरकारने नजरबन्दोकी रिहाई या उनपर लगे प्रतिबन्धोंकी समाप्तिकी गतिको तेज करने का फैसला किया है और इसलिए उसने १,१०० कैदियोंको तत्काल रिहा किये जानेका आदेश जारी किया है। शर्त केवल यह रखी गई है कि ये लोग अपने पतोंमें होनेवाले परिवर्तनोंकी सूचना सरकारको देते रहें।

बाकी नजरबन्द ४५० से ज़्यादा नहीं हैं, जिनमें से बहुत-से कैम्पों और जेलोंमें हैं। सरकारका इरादा निकट भविष्यमें इनके मामलोंपर भी विचार करने का है।

१. देखिए पृ० ३४०-४२।

२. **स्टेट्समैन,** १९-११-१९३७ से।

श्री गांधीने कहा है कि वे अलग-अलग कैदियोंसे मिलकर बातचीत करने को तैयार हैं। वे यह काम लगभग चार महीनेमें करने का इरादा रखते हैं, और सरकार खुशी-खुशी उन्हें उसके लिए हर तरहकी सुविधा देगी। सरकारको आशा है कि तब जिन नजरबन्दोंसे मिलकर श्री गांधी उसे आश्वस्त कर देंगे उन्हें वह रिहा कर सकेगी। इस बीच सरकार अलग-अलग मामलोंमें ढील देनेके प्रश्नपर विचार करती रहेगी और अगर उसे उचित लगेगा तो वह पूरी रिहाईकी बातपर भी विचार करेगी।

आशा की जाती है कि जो नीति अब तय कर ली गई है उसके धीरे-धीरे विकसित होते जानेके फलस्वरूप अन्ततः इस परेशान करनेवाले और कठिन प्रश्नोंका समाधान मिल जायेगा। लेकिन इसकी सफलता जनता और जनमतको नेतृत्व देनेवाले लोगों द्वारा ऐसा वातावरण तैयार करने में प्रदान की गई सहायतापर निर्भर होगी जिसमें ध्वंसात्मक आन्दोलनोंको कोई प्रोत्साहन न मिले। सरकारकी नीति सदा यह रही है कि सार्वजनिक सुरक्षाकी रक्षा करते हुए नजरबन्दोंकी रिहाईकी नीतिको वह जितनी तेजीसे कार्यान्वित कर सकती है, करे। श्री गांधीने इस नीतिकी सफलताके लिए आवश्यक अनुकूल वातावरण तैयार करने में सहायता देनेकी जो पेशकश की है, सरकार उसका हृदयसे स्वागत करती है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २७-११-१९३७

परिशिष्ट १०

(क) महादेव देसाईका पत्र जवाहरलाल नेहरूको[1]

मगनवाड़ी, वर्धा
१९ नवम्बर, १९३७

प्रिय जवाहर भाई,

तुम्हारा ८ तारीखका पत्र मिला। सैम्युअलके आगमनके विषयमें मैंने तुम्हारी सब बात समझ ली और मैं पोलकको लिख रहा हूं कि यदि वे तुमसे मिलना चाहते हों, तो तुम खुशीसे मिलोगे।

जहाँतक अनूपचन्द शाहके प्रस्तावका सम्बन्ध है, तुमने गांधी सेवा संघके अस्तित्वके बारेमें उन्हें लिखकर बहुत अच्छा किया। अब मैं उन्हें लिख रहा हूँ।

मैसूर-सम्बन्धी प्रस्तावपर अपने लेखके[2] विषयमें बापू खुद तुम्हारे १८ तारीखके पत्रका उत्तर देते, परन्तु वे अपना जवाब लिखवा भी नहीं सके। वे इतने अधिक क्षीण हो गये हैं कि डाक्टरोंके ख्यालमें उन्हें परिश्रम करने देना खतरनाक होगा, परन्तु मैंने तुम्हारे पत्र का सार उन्हें बता दिया था। उन्होंने मुझसे कहा कि उनकी रायमें हस्तक्षेप न करने की नीतिका स्पष्ट भंग हुआ है। वे जानते हैं कि पहले भी

१. देखिए पृ० ३४३।
२. देखिए पृ० ३२७-२९।

कांग्रेसने हस्तक्षेपका अपराध किया है, परन्तु वे यह भी जानते है कि वह ठीक नहीं था और यदि उन्हें इसे बन्द करना अति आवश्यक प्रतीत न हुआ होता तो वे यह लेख न लिखते। उन्हें खुशी है कि तुम मानते हो कि प्रस्तावकी भाषा अच्छी नही थी और उन्हें भरोसा है कि यदि कार्य-समितिके अन्य सदस्य इस बातकी तरफ तुम्हारा ध्यान दिलाने की सावधानी रखते कि प्रस्ताव संस्थाके अधिकार-क्षेत्रके बाहर है तो तुम प्रस्तावपर हुए भाषणोंको रोक देते, क्योंकि वे भाषण प्रस्तावसे भी बुरे थे। बापू चाहते है कि मैं तुम्हें विश्वास दिला दूँ कि उनका इरादा तुम्हारी आलोचना करने का कभी नही था। तुम सिर तक काममें डूबे हुए थे और कार्य-समितिके साथियोंका फर्ज था कि वे इस ओर तुम्हारा ध्यान दिलाते। तुम इतने अधिक अनुशासन-प्रेमी हो कि उनकी सलाहकी उपेक्षा नहीं कर सकते थे, परन्तु बापूका विचार है कि वे लोग अपने कर्त्तव्यमें चूक गये।

बापूके दिमागमें जो भावना है, उसे मेरी यह नीरस और भोंडी भाषा व्यक्त नहीं कर सकती। जिस दिन[1] उनकी तबीयत बिगड़ी, इस प्रस्तावपर उन्हें बहुत गहरी चिन्ता थी, और आज भी जब वे इस मामलेपर बातचीत कर रहे थे तब उसी हालतमें मालम हुए। मैंने उन्हें रोक दिया और कहा कि उनके विचारोंको मै यथाशक्ति ज्यों-का-त्यों तुमतक पहुँचा दूँगा।

रक्त-चापमें इतना उतार-चढ़ाव रहता है कि डाक्टरोंके खयालमे बापूको अपने शरीरके साथ अपनी इच्छानुसार बरतने की बहुत छूट नहीं देनी चाहिए। वे एक पखवारेके भीतर कलकत्ता जाना चाहते थे, परन्तु वे स्वय मानते हैं कि यह असम्भव है। उन्होंने कमसे-कम उस समयतक बिस्तरमें ही पड़े रहने का वचन दिया है, जबतक कि खूनका दबाव एक पखवारे या इससे अधिक तकके लिए स्थिर न हो जाये।

तुम्हारा,
महादेव

[अंग्रेजीसे]
ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स, पृ० २४८-४९

(ख) महादेव देसाईका पत्र जवाहरलाल नेहरूको[2]

मगनवाड़ी, वर्धा
२ दिसम्बर, १९३७

प्रिय जवाहर भाई,

तुम्हारा २७ तारीखका पत्र मिला। मुझे आश्चर्य हुआ कि तुम लिख पाये और इससे भी अधिक आश्चर्य इसपर हुआ कि तुम इतने विस्तारसे लिख सके। तुमने जो-कुछ कहा है उसके औचित्यको मैं समझता हूँ। बात सिर्फ इतनी है कि तुम

१. १ नवम्बर को।
२. देखिए पृ० ३४३।

कोई तर्क नहीं चाहते, ऐसा मानकर मैंने तुम्हारे सामने कोई तर्क नहीं रखा, बल्कि जो-कुछ तुमने पत्रमें लिखा था उसको ध्यानमें रखकर सिर्फ बापूकी राय पत्रमें लिख दी थी।

बापूकी हालतमें कोई सुधार नही है और हम सब पत्र-व्यवहार उनसे दूर रख रहे हैं। परन्तु मैंने निश्चय किया कि डाक्टरोंके अन्यथा आदेशके बावजूद मुझे तुम्हारा पत्र उन्हे सुना देना चाहिए। उन्हें खुशी हुई कि मैंने पढ़कर सुना दिया और अगर उनके लिए जरा भी सम्भव होता तो वे जवाब लिखवा देते। परन्तु इसका तो प्रश्न ही नहीं था और मै ही अपनी भाषामें तुम्हें बताने की कोशिश करूँगा कि जब उन्होंने यह लिखा कि मैसूरवाला प्रस्ताव समितिके अधिकार-क्षेत्रसे बाहर है तब उनके दिमागमें क्या था। पता नहीं, तुम्हें याद हो या न हो कि बापूने यही बात कार्यसमितिमें भी कही थी। (उन्हें यही खयाल था और जमनालालजी से पूछने पर उन्होंने इसका समर्थन किया।) और उन्हें विश्वास था कि इस प्रस्तावकी इजाजत नहीं दी जायेगी। जब उन्हें मालूम हुआ कि वह पास हो गया है तो उन्हें आघात लगा।

अपने ही पत्रमें तुम स्वीकार करते हो कि प्रस्तावकी भाषा खराब थी, परन्तु कदाचित् तुम यह कहोगे कि इससे वह गैर-कानूनी नही हो जाता। बापू समझते हैं कि हो जाता है, क्योंकि उसमें ब्रिटिश भारतके लोगोंसे मैसूरके लोगोंकी भरसक सहायता करने की अपील की गई है। यदि इससे लखनऊके प्रस्तावकी[1] भावना भंग नहीं होती तो और क्या होता है? लखनऊवाला प्रस्ताव बहुत [illegible]के बाद निश्चित हुआ था और उसमें वह नीति प्रतिबिम्बित होती थी जिसकी घोषणा राजेन्द्र-बाबू ने १-८-३५ को की थी और जिसे १७-१०-३५ को महासमितिने मंजूर किया था। उस घोषणाका प्रासंगिक अंश यह था: "परन्तु यह समझ लेना चाहिए कि राज्योंके साथ लड़ाई जारी रखने का भार और दायित्व स्वयं राज्योंके लोगोंपर ही रहेगा। कांग्रेस तो राज्योंपर मित्रतापूर्ण और नैतिक प्रभाव ही डाल सकती है और यह प्रभाव जहाँ भी सम्भव होगा, जरूर डाला जायेगा। मौजूदा हालतमें कांग्रेसके पास और कोई सत्ता नही है, यद्यपि भारतके लोग चाहे अंग्रेजोंके अधीन हों या राजाओंके या और किसी सत्ताके, वे भौगोलिक और ऐतिहासिक दोनों दृष्टियोंसे एक और अविभाज्य हैं। विवादकी गर्मी में कांग्रेसकी मर्यादाको अक्सर भुला दिया जाता है। सही बात यह है कि और किसी नीतिसे सामान्य उद्देश्य ही विफल हो जायेगा।"

यह घोषणा उस समयकी प्रचलित नीतिको ही दोहराना था और लखनऊके प्रस्तावने अधिकसे-अधिक स्पष्ट शब्दोंमें यह कहकर कि "रियासतोंके अन्दर आजादीकी लड़ाई अपनी प्रकृतिसे ही ऐसी चीज है कि उसे रियासतोंके लोगोंको खुद ही चलाना है", उस घोषणाको कांग्रेसके एक कानूनका रूप दे दिया। मैसूरवाले प्रस्तावके समर्थकोंने कांग्रेसकी उस अपने-आप लगाई हुई मर्यादाको भुला दिया और कांग्रेसकी चिरस्वीकृत नीतिको भंग कर दिया।

१. अप्रैल, १९३६ के कांग्रेस-अधिवेशनमें पास किया गया प्रस्ताव।

कांग्रेसने हस्तक्षेपका अपराध किया है, परन्तु वे यह भी जानते हैं कि वह ठीक नहीं था और यदि उन्हें इसे बन्द करना अति आवश्यक प्रतीत न हुआ होता तो वे यह लेख न लिखते। उन्हें खुशी है कि तुम मानते हो कि प्रस्तावकी भाषा अच्छी नहीं थी और उन्हें भरोसा है कि यदि कार्य-समितिके अन्य सदस्य इस बातकी तरफ तुम्हारा ध्यान दिलाने की सावधानी रखते कि प्रस्ताव संस्थाके अधिकार-क्षेत्रके बाहर है तो तुम प्रस्तावपर हुए भाषणोंको रोक देते, क्योंकि वे भाषण प्रस्तावसे भी बुरे थे। बापू चाहते हैं कि मैं तुम्हें विश्वास दिला दूं कि उनका इरादा तुम्हारी आलोचना करने का कभी नहीं था। तुम सिर तक काममें डूबे हुए थे और कार्य-समितिके साथियोंका फर्ज था कि वे इस ओर तुम्हारा ध्यान दिलाते। तुम इतने अधिक अनुशासन-प्रेमी हो कि उनकी सलाहकी उपेक्षा नहीं कर सकते थे, परन्तु बापूका विचार है कि वे लोग अपने कर्त्तव्यमें चूक गये।

बापूके दिमागमें जो भावना है, उसे मेरी यह नीरस और भोंडी भाषा व्यक्त नहीं कर सकती। जिस दिन[1] उनकी तबीयत बिगड़ी, इस प्रस्तावपर उन्हें बहुत गहरी चिन्ता थी, और आज भी जब वे इस मामलेपर बातचीत कर रहे थे तब उसी हालतमें मालूम हुए। मैंने उन्हें रोक दिया और कहा कि उनके विचारोंको मैं यथाशक्ति ज्यों-का-त्यों तुमतक पहुंचा दूंगा।

रक्त-चापमें इतना उतार-चढ़ाव रहता है कि डाक्टरोंके खयालसे बापूको अपने शरीरके साथ अपनी इच्छानुसार बरतने की बहुत छूट नहीं देनी चाहिए। वे एक पखवारेके भीतर कलकत्ता जाना चाहते थे, परन्तु वे स्वयं मानते हैं कि यह असम्भव है। उन्होंने कमसे-कम उस समयतक बिस्तरमें ही पड़े रहने का वचन दिया है, जबतक कि खूनका दबाव एक पखवारे या इससे अधिक तकके लिए स्थिर न हो जाये।

तुम्हारा,
महादेव

[अंग्रेजीसे]
ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स, पृ० २४८-४९

(ख) महादेव देसाईका पत्र जवाहरलाल नेहरूको[2]

मगनवाड़ी, वर्धा
२ दिसम्बर, १९३७

प्रिय जवाहर भाई,

तुम्हारा २७ तारीखका पत्र मिला। मुझे आश्चर्य हुआ कि तुम लिख पाये और इससे भी अधिक आश्चर्य इसपर हुआ कि तुम इतने विस्तारसे लिख सके। तुमने जो-कुछ कहा है उसके औचित्यको मैं समझता हूं। बात सिर्फ इतनी है कि तुम

१. १ नवम्बर को।
२. देखिए पृ० ३४३।

कोई तर्क नहीं चाहते, ऐसा मानकर मैंने तुम्हारे सामने कोई तर्क नहीं रखा, बल्कि जो-कुछ तुमने पत्रमें लिखा था उसको ध्यानमें रखकर सिर्फ बापूकी राय पत्रमें लिख दी थी।

बापूकी हालतमें कोई सुधार नहीं है और हम सब पत्र-व्यवहार उनसे दूर रख रहे हैं। परन्तु मैंने निश्चय किया कि डाक्टरोंके अन्यथा आदेशके बावजूद मुझे तुम्हारा पत्र उन्हें सुना देना चाहिए। उन्हें खुशी हुई कि मैंने पढ़कर सुना दिया और अगर उनके लिए जरा भी सम्भव होता तो वे जवाब लिखवा देते। परन्तु इसका तो प्रश्न ही नहीं था और मैं ही अपनी भाषामें तुम्हें बताने की कोशिश करूँगा कि जब उन्होंने यह लिखा कि मैसूरवाला प्रस्ताव समितिके अधिकार-क्षेत्रसे बाहर है तब उनके दिमागमें क्या था। पता नहीं, तुम्हें याद हो या न हो कि बापूने यही बात कार्यसमितिमें भी कही थी। (उन्हें यही खयाल था और जमनालालजी से पूछने पर उन्होंने इसका समर्थन किया।) और उन्हें विश्वास था कि इस प्रस्तावकी इजाजत नहीं दी जायेगी। जब उन्हें मालूम हुआ कि वह पास हो गया है तो उन्हें आघात लगा।

अपने ही पत्रमें तुम स्वीकार करते हो कि प्रस्तावकी भाषा खराब थी, परन्तु कदाचित् तुम यह कहोगे कि इससे वह गैर-कानूनी नहीं हो जाता। बापू समझते हैं कि हो जाता है, क्योंकि उसमें ब्रिटिश भारतके लोगोंसे मैसूरके लोगोंकी भरसक सहायता करने की अपील की गई है। यदि इससे लखनऊके प्रस्तावकी[1] भावना भंग नहीं होती तो और क्या होता है? लखनऊवाला प्रस्ताव बहुत सोच-समझ लेनेके बाद निश्चित हुआ था और उसमें वह नीति प्रतिबिम्बित होती थी जिसकी घोषणा राजेन्द्र-बाबू ने १-८-३५ को की थी और जिसे १७-१०-३५ को महासमितिने मंजूर किया था। उस घोषणाका प्रासंगिक अंश यह था: "परन्तु यह समझ लेना चाहिए कि राज्योंके साथ लड़ाई जारी रखने का भार और दायित्व स्वयं राज्योंके लोगोंपर ही रहेगा। कांग्रेस तो राज्योंपर मित्रतापूर्ण और नैतिक प्रभाव ही डाल सकती है और यह प्रभाव जहाँ भी सम्भव होगा, जरूर डाला जायेगा। मौजूदा हालतमें कांग्रेसके पास और कोई सत्ता नहीं है, यद्यपि भारतके लोग चाहे अंग्रेजोंके अधीन हों या राजाओंके या और किसी सत्ताके, वे भौगोलिक और ऐतिहासिक दोनों दृष्टियोंसे एक और अविभाज्य है। विवादकी गर्मी में कांग्रेसकी मर्यादाको अक्सर भुला दिया जाता है। सही बात यह है कि और किसी नीतिसे सामान्य उद्देश्य ही विफल हो जायेगा।"

यह घोषणा उस समयकी प्रचलित नीतिको ही दोहराना था और लखनऊके प्रस्तावने अधिकसे-अधिक स्पष्ट शब्दोंमें यह कहकर कि "रियासतोंके अन्दर आजादीकी लड़ाई अपनी प्रकृतिसे ही ऐसी चीज है कि उसे रियासतोंके लोगोंको खुद ही चलाना है", उस घोषणाको कांग्रेसके एक कानूनका रूप दे दिया। मैसूरवाले प्रस्तावके समर्थकोंने कांग्रेसकी उस अपने-आप लगाई हुई मर्यादाको भुला दिया और कांग्रेसकी चिरस्वीकृत नीतिको भंग कर दिया।

१. अप्रैल, १९३६ के कांग्रेस-अधिवेशनमें पास किया गया प्रस्ताव।

अब मैं तुम्हारे दूसरे सवालपर आता हूँ। तुम कहते हो: "बापूने महासमितिके प्रस्तावोंसे सत्य और अहिंसाका भंग होनेका भी उल्लेख किया है। ये गम्भीर आरोप है और प्रमाणित किये जाने चाहिए" इत्यादि। स्वाभाविक है कि जब तुम यह लिख रहे थे तब बापूका लेख तुम्हारे सामने नहीं था। उन्होंने कहा है कि प्रस्ताव (मसानी का) और भाषण "सीमासे बाहर" थे। उन्होंने समझाया है कि वे कैसे सीमाके बाहर थे और फिर वे उनसे कहते हैं, "इस सम्बन्धमें जवाहरलाल नेहरूने अपने विस्तृत वक्तव्यमें जो-कुछ कहा है, उन्हें चाहिए कि वे उसका अध्ययन करें और उसे हृदयंगम करें।" उसके बाद यह वाक्य आता है: "मुझे विश्वास है कि आलोचकोंने अपनी आलोचनाओंमें सत्य और अहिंसाका त्याग कर दिया था।" यह बात खुद प्रस्तावकी अपेक्षा भाषणोंके सम्बन्धमें अधिक कही गई है। तुम्हें खुद कई वक्ताओं को रोकना पड़ा था और उन्हें सिद्धान्त और नीति तक ही सीमित रहने को कहना पड़ा था। श्री मसानीने कहा, "बहुत-से राजनैतिक कैदी छोड़ दिये गये हैं और पाबन्दियाँ हटा ली गई हैं, मगर कांग्रेसी प्रान्तोंमें अभीतक कुछ कैदी हैं।" क्या यह इस बातको प्रमाणित करने को काफी है कि मन्त्री लोग साम्राज्यवादका साथ दे रहे हैं या वे हक और सिकन्दर हयात खाँ-जैसे ही बुरे हैं? क्या यह कहना सच है कि दमनका सारा शस्त्रागार कायम है, जबकि कांग्रेस-मन्त्रियोंके पदारूढ़ होनेके दो मासके भीतर मोपला अत्याचार कानून उठा दिया गया? मैं और भाषणोंका उल्लेख नहीं करूँगा।

मैसूरवाले प्रस्तावके बारेमें बापूकी राय यह थी कि जब हमने खुद वहाँ जाकर कानून भंग किया तब मैसूर राज्यकी नीतिको दमननीति बताना असत्य है। "दमनकी घृणित कार्रवाइयाँ" और राज्यमें से गुजरनेवालों पर लागू करने के लिए छपे हुए आदेश तैयार रखना," यह सत्यको निदर्शित करनेवाली भाषा नहीं है।

तुम्हारे पत्रके बाकी हिस्सेकी बात यह है कि तुमने जो-कुछ कहा है उसकी बापू बड़ी कद्र करते हैं। सिर्फ इसीलिए कि बापू कहते है, किसी चीजको तुम्हारे मान लेनेका कोई प्रश्न नहीं हो सकता और अनुशासनका अर्थ यह कभी नहीं हो सकता कि "किसी मामलेमें किसीकी बात चुपचाप स्वीकार कर ली जाये।"

पता नहीं, तुम इससे पहले अखबारोंको अपना बयान जारी कर चुके हो या नहीं। लेकिन अगर जारी नहीं किया है तो इस पत्रके प्रकाशमें तुम शायद उसमें कुछ तब्दीली करोगे। इस पत्रका या इसके कुछ हिस्सोंका तुम जो चाहो सो उपयोग कर सकते हो, हालाँकि यह बापूका नहीं, मेरा पत्र है और मैं इसे बापूको दिखाये बिना डाकमें डाल रहा हूँ। अगर तुम्हें ऐसा लगे कि बयान ज्यों-का-त्यों चला जाये तो तुम उसे जारी करने को स्वतन्त्र हो, यानी तुम कह सकते हो कि तुम्हें उत्तर तो मिला मगर वह गले उतरनेवाला नहीं था और तुम्हें अपने ही अन्तःकरणके आदेशपर चलना चाहिए।

रही बात हमारे कुछ मन्त्रियोंके कामोंमें प्रकट होनेवाले सत्य और अहिंसाके भंगकी, सो बापू चाहेंगे कि तुम साफ-साफ और पूरी बात लिखो और उनकी हालकी

बीमारीकी परवाह न करो। कारण, वह भंग किसीके द्वारा भी किया गया हो, उसकी निन्दा करनी होगी और अगर हमारे मन्त्री सचमुच अपराधी हैं तो वे निकाल देने लायक हैं।

बंगालके मामलेमें तुम्हारा जो-कुछ कथन है वह सब बापूने समझ लिया है। तुमसे यह आशा न रखकर कि तुम इन रिहाइयों पर "हर्षोन्मत्त" हो उठोगे, वे तुमसे इतना ही पूछना चाहते थे कि जिस ढंगसे उन्होंने गवर्नरसे और मन्त्रियोंसे मुलाकात की और कैदियों तथा नजरबन्दोंके सवालपर चर्चा की वह तुम्हें पसन्द आया या नही।

स्नेहाधीन,
महादेव

[अंग्रेजीसे]
ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स, पृ० २६०-६२

परिशिष्ट ११

ख्वाजा नजीमुद्दीनका पत्र[1]

नकल

राइटर्स बिल्डिंग
कलकत्ता
२४ नवम्बर, १९३८

प्रिय श्री गांधी,

आपके पत्रके लिए बहुत धन्यवाद। आपकी अस्वस्थताके बारेमें जानकर दुःख हुआ। आशा है, आप जल्दी ही स्वस्थ हो जायेंगे।

हमारी रायमें आपका वक्तव्य काफी ठीक है और इसके लिए हमारा धन्यवाद स्वीकार करें। जहाँतक चार महीनेकी अवधिका सम्बन्ध है सरकारी विज्ञप्तिकी भाषा शायद कुछ ठीक नहीं है। निश्चय ही यह सरकारके दृष्टिकोणको ठीक स्पष्ट करता है — इस दृष्टिकोणको कि चार महीनोंके बाद ही बचे हुए नजरबन्दोंके बड़ी संख्यामें रिहा किये जानेके प्रश्नपर विचार किया जायेगा। लेकिन दूसरी ओर यह जनसाधारणको इस भ्रममें डालता है कि आप चार महीनोंके बाद ही इस मामलेको उठायेंगे।

आपने अपने पत्रमें लिखा है कि आपकी अनुपस्थितिमें श्री शरत बोसको नजरबन्दोंसे बातचीत करने की अनुमति दे दी जाये। मैं यह बात स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि इस सुझावके प्रति मेरा जो विरोध है वह व्यक्तिगत स्तरपर नहीं बल्कि सैद्धान्तिक स्तरपर है। सरकार आपको भारतके अन्य सभी राजनीतिक नेताओंसे अलग मानकर चलती है और इसलिए नजरबन्दोंसे सिवाय आपके किसी और के बातचीत करने से न आपका प्रयोजन सिद्ध होगा और न सरकारका। आपके हिजलीके

१. देखिए पृ० ३४६।

नजरबन्दोंसे मिलने के बाद सरकारने डॉ० विधानचन्द्र राय और श्रीमती सरोजिनी नायडूको राजबन्दियोंसे मिलने की अनुमति दी। डॉ० राय वहाँ राजनीतिक नेताकी तरह नहीं, बल्कि चिकित्सककी हैसियतसे गये, और श्रीमती सरोजिनी नायडूको हमने एक अपवादके रूपमें वहाँ जाने दिया। लेकिन जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मैं भविष्यमें और किसी भी राजनीतिक नेताको राजबन्दियोंसे मिलने देनेका इरादा नहीं रखता।

मैंने ऐसा माना था कि अलग-अलग राजबन्दियों या नजरबन्दोंसे आपका व्यक्तिगत सम्पर्क होना इसलिए आवश्यक है कि आप इस विषयमें आश्वस्त हो सकें कि सम्बन्धित व्यक्तिमें हुए हृदय-परिवर्तनके परिणामस्वरूप वह अहिंसाके सिद्धान्तोंका सच्चा अनुगामी बन गया है और अहिंसामें उसकी यह श्रद्धा सिद्धान्तपर आधारित है तथा इसके पीछे व्यक्तिगत या राजनीतिक लाभका कोई खयाल नहीं है। इस तरह यह आपके बीच कोई सौदेबाजीका मामला नहीं था। बेशक, आपके लिए यह जरूरी था कि आप अहिंसाके सिद्धान्तोंका स्पष्टीकरण करें और उन लोगोंको उन्हें स्वीकार करने को समझायें। लेकिन जहाँतक अलग-अलग कैदियोंका सम्बन्ध था, उनमें से हरएकको तो सिर्फ इतना ही कहना था कि उसका मन उन्हें स्वीकार कर चुका है या नहीं। आपके अलावा कोई और कैदियोंके साथ पत्र-व्यवहार करे या उनके साथ मुलाकात करे इस प्रश्नसे उपर्युक्त सरकारी दृष्टिकोणका सीधा सम्बन्ध है। अगर आपके और किसी राजबन्दी या नजरबन्दके बीच सीलबन्द लिफाफेमें पत्र-व्यवहार हो तो उसपर हमें कोई आपत्ति नहीं होगी, बशर्ते कि यह तय हो जाये कि आपको जो पत्र मिलेंगे वे आप किसी और को नहीं दिखायेंगे।

जबतक मैं गृह-मन्त्री हूँ, आप इस बातके लिए आश्वस्त रह सकते हैं कि सरकारी विज्ञप्तिकी भाषा चाहे कुछ भी हो, यदि इस बीच कोई अनहोनी न हुई तो हमने आपसमें जो तय किया था वह सब — इंशाअल्लाह — कार्यान्वित किया जायेगा।

"विध्वंसक आन्दोलन", इन शब्दोंकी आपने जो व्याख्या की है या इसका जैसा पल्लवन किया है उससे मैं सहमत हूँ। पत्रके सिर्फ उस हिस्सेपर हमारा मतैक्य नहीं है जिसमें ऐसे राजनीतिक बन्दियोंका उल्लेख है जो दोषी सिद्ध किये जा चुके है। आपको मालूम ही है कि दोष-सिद्ध राजनीतिक बन्दियोंके सिलसिलेमें भी कुछ कार्रवाई करने पर हम लोग सहमत हो गये थे। मैंने उसीके अनुसार उचित कार्रवाई करने के निर्देश दे दिये हैं। लेकिन सरकार इससे आगे और कुछ नहीं कर सकेगी।

आपने अपने पत्रके 'पुनश्च' वाले अंशमें जो लिखा है, उससे मैं सहमत हूँ।

कैदियोंकी वापसीका काम उसी योजनाके अनुसार होगा जैसाकि मैं आपको बतला चुका हूँ।

हृदयसे आपका,
के० नजीमुद्दीन

श्री मो० क० गांधी,
सेगाँव, वर्धा

अंग्रेजीकी नकलसे: बिड़ला पेपर्स; सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

परिशिष्ट १२

मु० अ० जिन्नाका पत्र[1]

नई दिल्ली
१५ फरवरी, १९३८

प्रिय श्री गांधी,

आपका ३ फरवरी, १९३८ का लिखा पत्र, जो पता बदलकर यहाँ भेजा गया है, मुझे मिल गया है। मैंने मौलाना साहबसे आपकी ओरसे जवाब न आनेकी शिकायत नहीं की थी। मैं तो उन्हें तथ्योंसे अवगत करा रहा था, क्योंकि उनकी इच्छा थी कि हम दोनों मिलें। खैर, आपका पत्र पाकर मुझे खुशी हुई। श्री खेरके द्वारा मैंने जो सन्देश आपतक भिजवाया था वह, जैसाकि मैं आपको अपने पिछले पत्रमें बता चुका हूँ, व्यक्तिगत नहीं था। यह तो जब श्री खेर आपसे मिलने वर्धा जा रहे थे तब मैंने यह कहा कि वे आपके सिवाय और किसीसे इसकी चर्चा न करें और अव्वल तो यदि आप खुद इस मामलेको अपने हाथमें लेना चाहें तो आधीसे अधिक लड़ाई जीत ली गई मानी जायेगी। बम्बई वापस आनेपर श्री खेरने मुझे बताया कि आपके लिए मेरे सन्देशका जवाब देना कठिन था, क्योंकि इसे और किसीको बताने या उसपर किसीकी सलाह लेनेकी छूट आपको नहीं थी।

इसपर मैंने उनसे कहा कि इसे गोपनीय रखने का इरादा नहीं है और आप तथा श्री गांधी बेशक आपसमें [illegible] करके मुझे बताइए कि कांग्रेसपर श्री गांधीका जैसा सशक्त और प्रबल प्रभाव है उसके सहारे वे इस समय कांग्रेसमें यह मामला उठा सकते है या नहीं। उसके बाद श्री खेर आपसे तीथलमें मिले और उसी क्षणसे यह मामला दो व्यक्तियोंके बीचका नहीं रहा: और वे आपसे उसका लिखित उत्तर लाये, जिसे मुझे प्रकाशित करना पड़ा, क्योंकि मेरे और बाबू राजेन्द्रप्रसाद तथा पण्डित जवाहरलाल नेहरूके बीच, जैसाकि आप जानते ही हैं, समाचार-पत्रोंमें विवाद चल रहा था और यह दिखाने की कोशिश की जा रही थी कि मैं हिन्दू-मुस्लिम समझौतेकी राहमें बाधा उपस्थित कर रहा हूँ। आपके पत्रपर 'गोपनीय' नहीं लिखा था, इसलिए मैंने उसे प्रकाशित करा दिया। और फिर मेरे यह कहने में हर्ज ही क्या है कि मैंने पहल करके आपसे बातचीत चलानी चाही और मुझे यह जवाब मिला है? आपको यह बात इतनी चुभी क्यों, यह मैं नहीं

१. देखिए पृ० ३९१-९२।

समझ पा रहा हूँ। आप कहते हैं कि मैं आपकी चुप्पीकी शिकायत करता हूँ। वह तो मैं करता ही हूँ। लेकिन फिर आप यह कहते हैं, "आप विश्वास कीजिए कि जिस क्षण भी मैं दोनों जातियोंके बीच मेल कराने के लिए कुछ करने की स्थितिमें होऊँगा, दुनियाकी कोई भी ताकत मुझे वैसा करने से रोक नहीं सकती।" अब, इससे मैं क्या निष्कर्ष निकालूँ? क्या मेरा यह समझना सही है कि अभी वह क्षण नही आया है?

लखनऊ अधिवेशनके भाषण और उसके बादके वक्तव्योंके बारेमें, जिन्हें आपने युद्धकी घोषणा माना है, मुझे फिरसे यही कहना है कि वह सब मैंने आत्मरक्षामें किया। जाहिर है कि कांग्रेसी समाचार-पत्रोंमें आजकल जो-कुछ चल रहा है, आपको उसका पता नहीं है। उनमें रोजाना मेरे विरुद्ध कितना दोषपूर्ण, गलत और झूठा प्रचार हो रहा है, यदि आपको इस सबका पता होता तो मुझे यकीन है कि आप मुझे दोष नहीं देते।

आप कहते हैं कि जब आप १९१५ में दक्षिण आफ्रिकासे लौटे उस समय सब मेरा उल्लेख एक कट्टरतम राष्ट्रवादी और हिन्दुओं तथा मुसलमानों दोनोंकी आशाके आधारकी तरह करते थे। इसके बाद आपने पूछा है: "आप क्या अब भी वही पुराने जिन्ना साहब हैं?" आगे आप कहते हैं "यदि आप हामी भरें तो आपके भाषणोंके बावजूद मैं आपकी बातपर विश्वास करूँगा।" आपको यह शिकायत भी है कि मेरे भाषणोंमें उस पुराने राष्ट्रवादी जिन्नाकी झलक नहीं मिलती। क्या आपका ऐसा कहना ठीक है? १९१५ में लोग आपका नाम किस तरह लेते थे और आज वे आपके बारेमें क्या कहते या सोचते हैं मैं इसका उल्लेख नहीं करना चाहता। राष्ट्रीयतापर किसी एक व्यक्तिकी इजारेदारी नहीं है; और आज की परिस्थितिमें इसकी व्याख्या करना भी बड़ा कठिन है: लेकिन मैं इस तरहकी बहसको और आगे नहीं बढ़ाना चाहता।

अपने पत्रके अन्तमें आपने लिखा है: "अन्तिम बात यह कि आपकी इच्छा है, मैं कोई प्रस्ताव लेकर आगे आऊँ। मैं घुटने टेककर आपसे यही विनती करूँगा कि मैं आपको जैसा समझता था, आप वैसे ही बन जायें। इसके सिवाय मैं और क्या प्रस्ताव कर सकता हूँ? किन्तु दोनों जातियोंमें एकताका आधार प्रस्तुत करनेवाला कोई प्रस्ताव आपकी ओरसे ही आना चाहिए।" मैं समझता हूँ आपने जो अपील की है वह न की होती तो कोई हर्ज नहीं था और न आपको घुटने टेककर मुझे वैसा बनने की नसीहत देनेकी जरूरत थी जैसा आपने मुझे समझा था। जहाँतक उन प्रस्तावोंको तैयार करने की बात है जो एकताका आधार होंगे, क्या आप ऐसा समझते हैं कि यह काम पत्र-व्यवहार द्वारा सम्भव है? विवादके मुख्य मुद्दे क्या हैं, यह तो आप भी उतनी ही अच्छी तरह जानते हैं जितनी कि मैं। मेरी रायमें तो इस समस्याको सुलझाने के उपाय और रास्ते सुझाने की जिम्मेदारी आपपर भी उतनी ही है जितनी मुझपर। यदि आप हृदयसे ऐसा चाहते हैं और आपको ऐसा लगता हो अब वह क्षण आ गया है और अपने पद और प्रभावके बलपर आप तत्परतापूर्वक इस

समस्याको निपटाने का काम हाथमें ले सकते हों, तो इसमें जहाँतक मुझसे मदद हो सकेगी, मैं करने को तैयार हूँ।

हृदयसे आपका,
मु० अ० जिन्ना

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १६-६-१९३८

परिशिष्ट १३

मु० अ० जिन्नाका पत्र[1]

नई दिल्ली
३ मार्च, १९३८

प्रिय श्री गांधी,

आपका २४ फरवरी, १९३८ का खत मुझे मिल गया है। तबीयत ठीक न होने के कारण इससे पहले जवाब न दे सका; क्षमा चाहता हूँ। आपके पत्रमें मुझे अनुकूलताका वह स्वर नहीं मिला जिसकी मुझे तलाश थी। अव्वल तो उससे यह नहीं मालूम हो पाया कि अब आप ऐसा मानते हैं या नहीं कि आपको प्रकाश दिख गया है और वह क्षण आ गया है, दूसरे, यदि आप ऐसा मानते हैं तो क्या आप तत्परतापूर्वक इस मामलेको अपने हाथमें लेनेको तैयार हैं, और तीसरी बात यह कि डॉ० अन्सारीकी मृत्यु हो चुकी है इसलिए अब मौलाना अबुल कलाम आजाद ही आपके मार्गदर्शक होंगे, आपके इस कथनसे प्रकट होता है कि आपके दृष्टिकोणमें कोई अन्तर नहीं आया है। यदि आपका रुख यही रहा तो आप फिर उसी भारी भूलको दोहरायेंगे जो आप पहले कर चुके हैं; मेरा मतलब उस प्रसंगसे है जब आपको इस कारणसे अपनी असहायावस्था व्यक्त करनी पड़ी थी कि डॉ० अन्सारी अपने जाहिर और कट्टर विचारोंकी वजहसे आपसे सहमत न हो पाये थे और आपको कहना पड़ा था कि आप तो रजामन्द थे लेकिन कर क्या सकते थे। यह, जैसाकि आप जानते हैं, आपके गोलमेज परिषद्में जानेसे पहले की बात है। और फिर गोलमेज परिषद् सम्मेलनमें आपने फिर वही भूल दोहराई, जब लग रहा था कि आप अस्थायी तौरपर कुछ शर्तोंको मानने को तैयार थे; लेकिन वहाँ भी आपने कहा कि आप विवश हैं क्योंकि — हिन्दू इससे असहमत हैं और आपको, कांग्रेसके प्रतिनिधिकी हैसियत से, इस बातपर कोई आपत्ति नहीं होगी यदि हिन्दू और मुसलमान आपसमें समझौता कर लें।

1. देखिए पृ० ४३०।

अब हम उस स्थितिपर पहुँच गये हैं जहाँ यह बात निर्विवाद रूपसे सिद्ध हो जानी चाहिए कि आप अखिल भारतीय मुस्लिम लीगको भारतके मुसलमानोंकी एक-मात्र और प्रातिनिधिक संस्था मानते हैं तथा दूसरी ओर आप देश-भरकी कांग्रेस और अन्य हिन्दुओंका प्रतिनिधित्व करते हैं। केवल इसी आधारपर हम लोग आगे बढ़ सकते हैं और समस्याके समाधानका कोई रास्ता ढूँढ़ निकाल सकते हैं।

मुझे आपसे मिलकर, बेशक, खुशी होगी, और यदि आपकी इच्छा हो तो पण्डित जवाहरलाल नेहरू या श्री बोससे भी मिलने में मुझे कोई ऐतराज नहीं है। जैसाकि आपको मालूम है, उनमें से किसी एकके आपसे फिरसे मशवरा किये बिना मामला अन्तिम रूपसे तय नहीं किया जायेगा। इसलिए मैं सबसे पहले आपसे मिलना पसन्द करूँगा। बहरहाल, मुझे दुःखके साथ कहना पड़ रहा है कि १० मार्चसे पहले मैं किसी भी हालतमें आपसे मिलने सेगाँव नहीं आ सकता। मुझे बम्बई जाना है और मैंने अपने दौरेके अन्य कई कार्यक्रम भी तय कर लिये हैं। लेकिन हम मुलाकातका कोई ऐसा समय और स्थान तय कर सकते हैं जो दोनोंके लिए [illegible] हो।

हृदयसे आपका,
मु० अ० जिन्ना

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १६-६-१९३८

सामग्रीके साधन-सूत्र

गांधी स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली : गांधी साहित्य और गांधीजी से सम्बन्धित कागज-पत्रोंका केन्द्रीय संग्रहालय तथा पुस्तकालय।

नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली।

राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली।

साबरमती संग्रहालय, अहमदाबाद : पुस्तकालय तथा संग्रहालय, जिसमें गांधीजी के दक्षिण आफ्रिकी तथा भारतीय कालसे सम्बन्धित कागजात रखे हैं।

'अमृतबाजार पत्रिका' : कलकत्तासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'बॉम्बे क्रॉनिकल' : बम्बईसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हितवाद' : नागपुरसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दुस्तान टाइम्स' : नई दिल्लीसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दू' : मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'स्टेट्समैन' : कलकत्तासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हरिजन' (१९३३-५६) : रामचन्द्र वैद्यनाथ शास्त्री द्वारा सम्पादित तथा हरिजन सेवक संघके तत्त्वावधानमें प्रकाशित अंग्रेजी साप्ताहिक, जिसका प्रथम अंक गांधीजी की देखरेखमें १ फरवरी, १९३३ को पूनासे प्रकाशित हुआ था।

'हरिजनबन्धु' (१९३३-५६) : चन्द्रशंकर शुक्ल द्वारा सम्पादित तथा हरिजन सेवक संघके तत्त्वावधानमें प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक जो १२ मार्च, १९३३ को पहली बार पूनासे प्रकाशित हुआ था।

'हरिजन-सेवक' (१९३३-५६) : वियोगी हरि द्वारा सम्पादित तथा हरिजन सेवक संघके तत्त्वावधानमें प्रकाशित हिन्दी साप्ताहिक जो २३ फरवरी, १९३३ को पहली बार दिल्लीसे प्रकाशित हुआ था।

(ए) 'बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स' (अंग्रेजी) : जवाहरलाल नेहरू; एशिया पब्लिशिंग हाउस, १९५८।

(द) 'लाइफ ऑफ महात्मा गांधी' (अंग्रेजी) : लुइस फिशर; जोनाथन केप, ३० बैडफोर्ड स्क्वेयर, लन्दन, १९५१।

'महात्मा : लाइफ ऑफ मोहनदास करमचन्द गांधी', खण्ड-४ (अंग्रेजी) : डी० जी० तेन्दुलकर तथा विट्ठलभाई के० झवेरी; ६४ वालकेश्वर रोड, बम्बई, १९५२।

'सरदार वल्लभभाई पटेल', खण्ड-२ (अंग्रेजी) : नरहरि द्वा० परीख द्वारा सम्पादित; नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, १९५६।

'सेइंग्स ऑफ मुहम्मद' (अंग्रेजी) : अल्लामा सर अब्दुल्ला अल-मैमून अलसुहरा-वर्दी द्वारा सम्पादित; जॉन मरे लि०, लन्दन, १९४१।
'आचार्य कृपालानीना लेखो' (गुजराती) : मगनभाई पी० देसाई द्वारा सम्पादित; गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद, १९३७।
'बापुना पत्रो - २ : सरदार वल्लभभाईने' (गुजराती) : मणिबहन पटेल द्वारा सम्पादित; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।
'बापुना पत्रो - ४ : मणिबहेन पटेलने' (गुजराती) : मणिबहन पटेल द्वारा सम्पादित; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।
'बापुना पत्रो - ६ : गं० स्व० गंगाबहेनने' (गुजराती) : द० बा० कालेलकर द्वारा सम्पादित; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९६०।
'मोटाना मान' (गुजराती) : कल्याणजी वी० मेहता, ईश्वरलाल आई० देसाई एवं हकूमत देसाई द्वारा संपादित; दक्षिण गुजरात यूनिवर्सिटी, सूरत, १९७२।
गांधी सेवा संघके चतुर्थ वार्षिक अधिवेशन (डेलांग, उड़ीसा)का विवरण; आर० एस० धोत्रे द्वारा प्रकाशित, वर्धा।
'पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद' : द० बा० कालेलकर द्वारा सम्पादित; जमनालाल बजाज ट्रस्ट, वर्धा, १९५३।
'बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष' : हीरालाल शर्मा; ईश्वरशरण आश्रम मुद्रणालय, प्रयाग, १९५७।
प्यारेलाल पेपर्स : श्री प्यारेलाल, नई दिल्लीके पास सुरक्षित कागजात।
महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी : स्वराज्य आश्रम, बारडोलीमें सुरक्षित।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(१ अगस्त, १९३७ से ३१ मार्च, १९३८)

१ अगस्त : गांधीजी सेगाँवमें थे।

३ अगस्त : दिल्लीके लिए रवाना।

४ अगस्त : दिल्ली पहुँचे।

अब्दुल गफ्फार खाँके सीमाप्रान्तमें जानेपर लगा प्रतिबन्ध हटाने के बारेमें वाइसरायसे बातचीत की।

५ अगस्त : सेगाँव वापस पहुँचे।

११ अगस्त : डी० के० मेहता और पी० बी० गोलेसे बातचीत की।

१२ अगस्त : डी० के० मेहता और पी० बी० गोलेसे बातचीत जारी।

वाइसरायसे उनकी भेंट की जो रिपोर्ट 'बॉम्बे सेंटिनल' में प्रकाशित हुई थी, समाचार-पत्रोंमें वक्तव्य देकर उसका खण्डन किया।

१६ अगस्त या उसके बाद : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको अण्डमानके कैदियोंकी भूख-हड़तालसे उत्पन्न स्थितिको सँभालने का हर सम्भव प्रयत्न करने का तार द्वारा आश्वासन दिया।

२० अगस्त : नरीमान-सरदार-विवादके बारेमें समाचार-पत्रोंको वक्तव्य देकर गवाहोंसे साक्ष्य माँगे।

२४ अगस्तके पूर्व : क्विलोनमें होनेवाले त्रावणकोर महिला सम्मेलनके लिए सन्देश भेजा।

२७ अगस्त : तार भेजकर अण्डमानके कैदियोंसे भूख-हड़ताल खत्म करने की अपील की।

२९ अगस्त : सातके सिवा बाकी सभी कैदियोंने भूख-हड़ताल स्थगित की।

३१ अगस्त : अण्डमानके कैदियोंके साथ हुए अपने पत्र-व्यवहारको समाचार-पत्रोंमें प्रकाशनार्थ देते हुए आशा व्यक्त की कि सभी कैदियोंको बिना शर्त रिहा कर दिया जायेगा।

१ सितम्बर : छोटेलाल जैनकी आत्महत्याका समाचार मिला; 'हरिजन' में लेख लिखकर उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित की।

३ सितम्बर : तार द्वारा अण्डमानके राजनीतिक बन्दियोंसे भूख-हड़ताल खत्म करने का अनुरोध किया।

८ सितम्बर : अण्डमानके कैदियोंसे तार द्वारा फिर अपील की।
वाइसरायको उनके बारेमें लिखा।
तिरूचेनगोडु तालुका राजनीतिक सम्मेलनके लिए सन्देश भेजा।

११ सितम्बर के पूर्व : रविशंकर शुक्ल, ओवेन और डी'सिल्वा आदि शिक्षा-शास्त्रियोंसे बातचीत की।

११ सितम्बर : अण्डमानके कैदियोंको तार भेजकर उनसे अनुरोध किया कि "भूख-हड़ताल स्थगित करके देश-भरकी चिन्ता दूर कीजिए"।

१३ सितम्बरके पूर्व : विलियम बी० बेंटनको भेंट दी।

१४ सितम्बर : रवीन्द्रनाथ ठाकुरके स्वास्थ्यके विषयमें जानकारी देते रहने के लिए नीलरतन सरकारको तार दिया।

१५ सितम्बर : समाचार-पत्रोंको वक्तव्य देते हुए सरकारसे अण्डमानके कैदियोंको रिहा करने की अपील की।
न्यायमूर्ति मडगाँवकरसे मिले।

२४ सितम्बर के पूर्व : कर्नाटक एकता संघ, बेलगाँवको सन्देश भेजा।
अण्डमानके कैदियोंने भूख-हड़ताल स्थगित की।

२५ सितम्बर : 'हरिजन' में उड़ीसाके बाढ़-पीड़ितोंके लिए सहायताकी अपील जारी की।

१ अक्तूबर : विक्रम संवत्के अनुसार गांधीजी का जन्म-दिन मनाया गया।

२ अक्तूबर : अपने ६९वें जन्म-दिनपर लन्दनकी फ्रेण्ड्स ऑफ इंडिया सोसाइटीको सन्देश भेजा।

६ अक्तूबर : समाचार-पत्रोंके जरिये जन्म-दिनपर शुभकामनाएँ भेजनेवालों के प्रति आभार व्यक्त किया।

१४ अक्तूबर : डी० एन० बहादुरजी नरीमान-सरदार-विवादपर अपना निर्णय सुनाने सेगाँव आये। गांधीजी ने उसपर सहमति देते हुए टिप्पणी की।

१६ अक्तूबर : नरीमान-सरदार-विवादपर समाचार-पत्रोंको वक्तव्य दिया।

१७ अक्तूबर : समाचार-पत्रोंको वक्तव्य देते हुए अण्डमानके कैदियोंसे भूख-हड़तालका पुनः सहारा न लेनेकी अपील की।
'हरिजन' में लेख लिखकर मणिलाल कोठारीके प्रति श्रद्धांजलि अर्पित की।

२२ अक्तूबर : वर्धामें शिक्षा परिषद्की अध्यक्षता की। आचार्य प्रफुल्लचन्द्र रायसे मिले।

२३ अक्तूबर के पूर्व : दुकान-कर्मचारियोंके सम्मेलनके लिए सन्देश भेजा।

२३ अक्तूबर : शिक्षा परिषद्में भाषण दिया।

२५ अक्तूबर : सेगाँवसे रवाना।

२६ अक्तूबर : सुबह कलकत्ता पहुँचे।

तीसरे पहर कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठकमें भाग लिया।

रवीन्द्रनाथ ठाकुरसे मिले और उनसे बंगालके साम्प्रदायिक तनावके बारेमें बातचीत की।

२७ अक्तूबर : कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठक जारी।

बंगालके प्रधान मन्त्री और उनके मन्त्रिमण्डलके तीन मन्त्रियोंसे अण्डमानके कैदियों और अन्य बन्दियोंके रिहा किये जानेके बारेमें बातचीत की।

२८ अक्तूबर : नीलरतन सरकारसे मिले।

'वन्देमातरम्' पर कांग्रेस कार्य-समितिने वक्तव्य दिया।

२९ अक्तूबर : बंगाल और पंजाबके राजनीतिक पीड़ितोंके शिष्टमण्डलको भेंट दी।

३० अक्तूबर : अलीपुर केन्द्रीय जेलमें अण्डमानके कैदियोंसे मिले।

१ नवम्बर : अण्डमानके कैदियोंकी रिहाईके लिए चलाई जा रही वार्ताके विषयमें समाचार-पत्रोंके लिए वक्तव्य जारी किया।

डाक्टरोंकी सलाहपर वर्धा जानेका कार्यक्रम रद्द किया।

२ नवम्बर : नरीमान-सरदार-विवादपर कांग्रेस कार्य-समितिने प्रस्ताव पास किया और उसे समाचार-पत्रोंके लिए जारी किया।

४ नवम्बर : गांधीजी ने सीमाप्रान्तकी यात्रा स्थगित की और अब्दुल गफ्फार खाँको तारसे सूचना दी।

७ नवम्बर : शामको भूतपूर्व नजरबन्दोंसे बातचीत की।

९ नवम्बर : बैरकपुरमें तीसरे पहर गवर्नरसे मिले।

समाचार-पत्रोंको वक्तव्य दिया।

११ नवम्बर : सुबह नीलरतन सरकारसे मिले।

१२ नवम्बर : प्रेसीडेंसी जेलमें देवलीके नजरबन्दोंसे मिले।

१६ नवम्बर : तीसरे पहर फजलुल हक, ख्वाजा नजीमुद्दीन, बी० पी० सिंह राय, ढाकाके नवाब हबीबुल्ला, एच० एस० सुहरावर्दी और नीलरतन सरकारसे मिले।

१७ नवम्बर : सुबह सर जॉर्ज कैम्पबेल और आर्थर मूरसे मिले।

ख्वाजा नजीमुद्दीन, नीलरतन सरकार और बी० पी० सिंह रॉयसे फिरसे बातचीत की।

दोपहरको १२-५० बजे कलकत्तासे रवाना।

तीसरे पहर चार बजे खड़गपुर पहुँचे।

पाँच बजे शामको हिजलीके नजरबन्द शिविरमें गये।

'यूनाइटेड प्रेस' को भेंट देते हुए बंगाल सरकारसे हुई बातचीतपर टिप्पणी करने से इन्कार किया।

१८ नवम्बर: शामको वर्धा पहुँचे।

२१ नवम्बर: बंगाल सरकारकी विज्ञप्तिपर समाचार-पत्रोंको वक्तव्य दिया।

२७ नवम्बर: 'आचार्य कृपालानीना लेखो' की प्रस्तावना लिखी।

६ दिसम्बर: डॉक्टरोंकी सलाहपर डॉसेगाँवसे बम्बईके लिए रवाना।

७ दिसम्बर: बम्बई पहुँचे और जुहूमें ठहरे।

१४ दिसम्बर: आगा खाँ और उनके पुत्रसे मिले।

२१ दिसम्बर: रीवाँ-नरेशसे मिले।

१९३८

२ और ३ जनवरी: कांग्रेस कार्य-समितिसे विचार-विमर्श किया।

५ जनवरी: राजेन्द्रप्रसादसे बातचीत की।

७ जनवरी: च० राजगोपालाचारीसे मिले।

शामको बम्बईसे रवाना होनेसे पहले विक्टोरिया टर्मिनसपर पत्र-प्रतिनिधियोंको भेंट दी।

८ जनवरी: सेगाँव पहुँचे।

१० जनवरी: सरूपरानी नेहरूका निधन।

जवाहरलाल नेहरूको तारसे शोक-सन्देश भेजा।

११ जनवरी: पंजाब जेलके राजनैतिक बन्दियोंको भूख-हड़ताल खत्म करने के लिए तार दिया।

१४ जनवरी: समाचार-पत्रोंके द्वारा पंजाबके कैदियोंसे भूख-हड़ताल तोड़ देनेकी अपील की।

१५ जनवरीके पूर्व: न्यू एजुकेशन फेलोशिपके डॉ० जिलिएकस तथा अन्य सदस्योंसे बातचीत की।

१८ से २० जनवरी: लॉर्ड लोथियनसे बातचीत की।

"लॉर्ड लोथियन और जिम्मेदार राजनयिकों" के लिए सन्देश दिया।

२३ जनवरी: सुभाषचन्द्र बोसके लन्दनसे कराची पहुँचने पर उनका स्वागत करते हुए तार दिया।

२४ जनवरी: विधानचन्द्र राय और नीलरतन सरकारसे बातचीत की।

२ फरवरी: सुभाषचन्द्र बोससे बातचीत की।

३ से ५ फरवरी: वर्धामें हुई कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठकमें भाग लिया।

८ फरवरी या उसके पूर्व: जॉन डी बोअरसे बातचीत की।

८ फरवरी: हरिपुराके कांग्रेस-अधिवेशनमें शामिल होनेके लिए सेगाँवसे रवाना।

९ फरवरी : हरिपुरा पहुँचे।

ना० मो० खरेकी विधवा लक्ष्मीबाईके प्रति समवेदना प्रकट की।

१० फरवरी : खादी और ग्रामोद्योग प्रदर्शनीका उद्‌घाटन किया।

११ फरवरी : सफाई स्वयंसेवकोंके समक्ष भाषण दिया।

१२ फरवरी : प्रदर्शनी देखने गये।

१३ फरवरी : पशुपालन और डेरी-संचालनसे सम्बन्धित प्रदर्शनी देखने गये।

१५ फरवरी : पूर्व आफ्रिकी भारतीय शिष्टमण्डलके मन्त्री अमीनको भेंट दी। स्वयंसेवकों के सामने भाषण दिया।

बिहार और सं० प्रा०के मन्त्रिमण्डलोंने त्यागपत्र दिया।

१६ फरवरी : खादी और ग्रामोद्योग प्रदर्शनीमें भाषण दिया।

मन्त्रिमण्डलीय संकटके बारेमें समाचार-पत्रोंके लिए वक्तव्य जारी किया।

१७ फरवरी : तुषारकान्ति घोषसे मिले।

१८ फरवरीके पूर्व : मन्त्रिमण्डलोंके त्यागपत्रपर प्रस्तावका मसविदा तैयार किया।

१८ फरवरी : त्यागपत्रसे सम्बन्धित प्रस्तावपर कांग्रेस कार्य-समितिमें चर्चा हुई।

'डेली हेराल्ड' और 'टाइम्स' के प्रतिनिधियोंको भेंट दी।

१९ फरवरी : कांग्रेस-अधिवेशनमें शरीक हुए।

२० फरवरी : पंजाबके कैदियोंसे भूख-हड़ताल समाप्त करने का अनुरोध करते हुए शामलालको पत्र लिखा।

२१ फरवरी : कांग्रेस-अधिवेशन समाप्त।

२२ फरवरी : स्वयंसेवकोंके सामने भाषण दिया।

मन्त्रिमण्डलोंके त्यागपत्रोंपर गवर्नर-जनरलने वक्तव्य दिया।

२३ फरवरी : गांधीजी सेगाँव पहुँचे।

गवर्नर-जनरलके वक्तव्यका प्रत्युत्तर देते हुए समाचार-पत्रोंके लिए वक्तव्य जारी किया।

२४ फरवरी : मु० अ० जिन्नाको व्यक्तिगत रूपसे बातचीत करने का निमन्त्रण दिया।

४ मार्च या उसके पूर्व : शामलालको तार भेजकर पंजाबके कैदियों द्वारा भूख-हड़ताल तोड़ने के निर्णयपर उन्हें बधाई दी।

४ मार्च : शान्तिकुमार मोरारजी और गगनबिहारी मेहतासे मिले।

८ मार्च : मु० अ० जिन्नाको पत्र लिखकर बम्बईमें मिलने के लिए अपनी सहमतिकी सूचना दी।

११ और १२ मार्च : वल्लभभाई पटेलसे बातचीत की।

१५ मार्च : सेगाँवसे रवाना।

१६ मार्च : सुबह कलकत्ता पहुँचे।

१८ मार्च : 'न्यूज क्रॉनिकल' के वरनन् बार्टलेटसे मिले।
बंगाल विधानसभाके हरिजन सदस्योंसे बातचीत की।
तीसरे पहर २ बजे से शामके ५-२५ तक ख्वाजा नजीमुद्दीनसे बातचीत की।

१९ मार्च : सुभाषचन्द्र बोस और अबुल कलाम आजादसे विचार-विमर्श किया।
तीसरे पहर कृपक प्रजा पार्टीके सदस्योंसे मिले।

२० मार्च : इंडिपेंडेंट प्रजा पार्टीके सदस्योंसे मिले।
बंगालके कांग्रेसी नेताओंसे विचार-विमर्श किया।
तीसरे पहर ३ बजे ख्वाजा नजीमुद्दीनसे मिले।

२२ मार्च : राजनीतिक बन्दियोंकी रिहाईके बारेमें गवर्नरसे मिले।
शामको रवीन्द्रनाथ ठाकुरसे मिले।
इलाहाबादके दंगोंके बारेमें लेख लिखा और उसमें कांग्रेसियोंसे अपनी अहिंसाका विश्लेषण करने और अहिंसक स्वयंसेवकोंकी सेना खड़ी करने का अनुरोध किया।

२३ मार्च : शामको कलकत्ताके लॉर्ड बिशपसे मिले।

२४ मार्च : 'द सेइंग्स ऑफ मुहम्मद' की प्रस्तावना लिखी।
जनता और राजनीतक कैदियोंसे अपील की कि कैदियोंकी रिहाईसे सम्बन्धित वार्ताके समाप्त होनेतक वे संयमसे काम लें।
रातको ८ बजे कलकत्तासे रवाना।

२५ मार्च : डेलांग पहुँचे।
गांधी सेवा संघके चतुर्थ अधिवेशनमें भाषण दिया।
गांधी सेवा संघ प्रदर्शनीका उद्घाटन किया।

२६ मार्च : गांधी सेवा संघकी बैठकमें भाषण किया।

२७ मार्च : गांधी सेवा संघमें साम्प्रदायिक दंगोंको रोकने के लिए अपनाये जानेवाले उपायोंसे सम्बन्धित प्रस्तावके बारेमें बोले।

२८ मार्च : गांधी सेवा संघमें भाषण।
कस्तूरबा, दुर्गा देसाई आदि पुरीके मन्दिरमें दर्शनार्थ गईं।

२९ मार्च : पुरी मन्दिरके मुख्य पुजारी गांधीजी से मिलने आये।
शामको गांधीजी ने अखिल भारतीय चरखा संघकी बैठककी अध्यक्षता की।

३० मार्च : गांधी सेवा संघमें कस्तूरबाके पुरी मन्दिरमें दर्शनार्थ जानेके बारेमें बोले।

३१ मार्च या उसके पूर्व : प्रदेशोंमें कार्यकारी गवर्नरोंकी नियुक्तिके बारेमें समाचार-पत्रोंको भेंट दी।

३१ मार्च : पार्लाखिमेडीके राजाको भेंट दी।

शीर्षक-सांकेतिका

१६ मार्च : सुबह कलकत्ता पहुँचे।

१८ मार्च : 'न्यूज क्रॉनिकल' के वरनन् बार्टलेटसे मिले।

बंगाल विधानसभाके हरिजन सदस्योंसे बातचीत की।

तीसरे पहर २ बजे से शामके ५-२५ तक ख्वाजा नजीमुद्दीनसे बातचीत की।

१९ मार्च : सुभाषचन्द्र बोस और अबुल कलाम आजादसे विचार-विमर्श किया।

तीसरे पहर कृषक प्रजा पार्टीके सदस्योंसे मिले।

२० मार्च : इंडिपेंडेंट प्रजा पार्टीके सदस्योंसे मिले।

बंगालके कांग्रेसी नेताओंसे विचार-विमर्श किया।

तीसरे पहर ३ बजे ख्वाजा नजीमुद्दीनसे मिले।

२२ मार्च : राजनीतिक बन्दियोंकी रिहाईके बारेमें गवर्नरसे मिले।

शामको रवीन्द्रनाथ ठाकुरसे मिले।

इलाहाबादके दंगोंके बारेमें लेख लिखा और उसमें कांग्रेसियोंसे अपनी अहिंसाका विश्लेषण करने और अहिंसक स्वयंसेवकोंकी सेना खड़ी करने का अनुरोध किया।

२३ मार्च : शामको कलकत्ताके लॉर्ड बिशपसे मिले।

२४ मार्च : 'द सेइंग्स ऑफ मुहम्मद' की प्रस्तावना लिखी।

जनता और राजनीतक कैदियोंसे अपील की कि कैदियोंकी रिहाईसे सम्बन्धित वार्ताके समाप्त होनेतक वे संयमसे काम लें।

रातको ८ बजे कलकत्तासे रवाना।

२५ मार्च : डेलांग पहुँचे।

गांधी सेवा संघके चतुर्थ अधिवेशनमें भाषण दिया।

गांधी सेवा संघ प्रदर्शनीका उद्घाटन किया।

२६ मार्च : गांधी सेवा संघकी बैठकमें भाषण दिया।

२७ मार्च : गांधी सेवा संघमें साम्प्रदायिक दंगोंको रोकने के लिए अपनाये जानेवाले उपायोंसे सम्बन्धित प्रस्तावके बारेमें बोले।

२८ मार्च : गांधी सेवा संघमें भाषण।

कस्तूरबा, दुर्गा देसाई आदि पुरीके मन्दिरमें दर्शनार्थ गईं।

२९ मार्च : पुरी मन्दिरके मुख्य पुजारी गांधीजी से मिलने आये।

शामको गांधीजी ने अखिल भारतीय चरखा संघकी बैठककी अध्यक्षता की।

३० मार्च : गांधी सेवा संघमें कस्तूरबाके पुरी मन्दिरमें दर्शनार्थ जानेके बारेमें बोले।

३१ मार्च या उसके पूर्व : प्रदेशोंमें कार्यकारी गवर्नरोंकी नियुक्तिके बारेमें समाचार-पत्रोंको भेंट दी।

३१ मार्च : पार्लाखिमेडीके राजाको भेंट दी।

शीर्षक-सांकेतिका

विविध

सांकेतिका

आ

इ

भ

य

र

स